॥ श्रीः ॥

चौखम्बा अमरभारती ग्रन्थमाला

११



श्रीवर-कृत

जैन-राजतरङ्गिणी

(तरंग १ तथा २)

(आलोचनात्मक भूमिका, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक अध्ययन, तथा हिन्दी अनुवाद सहित)

लेखक

डॉ० रघुनाथ सिंह

एम. ए, एल. एल. बी, पी-एच डी, डी लिट्,
एफ आर ए. एस (लन्दन)

खण्ड १



चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी

१९७७

प्रकाशक   चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन, वाराणसी
मुद्रक   वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी
संस्करण   प्रथम, वि० सं० २०३३
मूल्य   [illegible]

चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० १३८, वाराणसी-२२१००१
(भारत)

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० ८, वाराणसी-२२१००१
(भारत)

CHAUKHAMBA AMARABHARATI GRANTHAMALA
11



JAINA-RAJATARANGINI

of

SRIVARA

(Taranga I & II)

(Translation with critical introduction, historical, cultural and geographical notes in Hindi)

By
Dr. Raghunath Singh
M.A , LL B , Ph D , D Litt
F. R. A. S. (London)

Part 1

Chaukhamba Amarabharati Prakashan
Varanasi-221001 (India)

Publisher
Chaukhamba Amarabharati Prakashan
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Post Box 138, Varanasi–221001 (India)
1977



First Edition
1977
Price Rs 425–00

Also can be had of
Chowkhamba Sanskrit Series Office
Oriental Publishers & Book-Sellers
Post Box No 8
K. 37/99, Gopal Mandir Lane, Varanasi-221001
(I N D I A)

भारतीयपरम्परागतनारीधर्मपरिपालनपरायणाया.,

ऐहिकसुखदु खावस्थाप्रभावितान्त करणाया ,

अस्मद्धर्मपत्न्या ,

श्रीमत्या लीलावतीदेव्याः

प्रीतये

इद पुस्तकप्रसूनम्

संकेत-सूची

अ०	अध्याय
अक०	अकबर नामा
अग्नि०	अग्निपुराण
अथ०	अथर्व वेद
अनु०	अनुशासन पर्व
अमर०	अमरकोश
अयोध्या०	अयोध्या काण्ड रामायण वा०
अरण्य०	अरण्य काण्ड रामायण वा०
अर्थ०	अर्थशास्त्र कौटिल्य
अल्बेरुनी०	अल्बरुनीज इण्डिया
आ०	आदि पर्व
आ०पु०	आदिपुराण
आई०-ई०	इण्डियन एपिग्राफिक
आइन०	आइने अकबरी जरेट
आजम०	वाकयात कश्मीर
आप०ध०	आपस्तम्ब धर्मसूत्र
आश्व०	• आश्वमेधिक पर्व
ई०-आई०	इपिग्राफिका इण्डिका
इण्ड०एण्टी०	इण्डियन एण्टीक्वेरी
उ०	उर्दू अनुवाद पीरहसन
उत्तर०	उत्तरकाण्ड वा०
उत्तर मी०	उत्तरमीमांसा
उद्योग०	उद्योग पर्व
ऋ०	ऋग्वेद
ऋतु०	ऋतु संहार
क०	कलकत्ता संस्करण राज०
कम्ब्रि०	कम्ब्रिहेन्सिव हिस्ट्री
कर्ण०	• कर्ण पर्व
कलि०	कलिगताब्द
कल्ह०	कल्हण राजतरंगिणी लेखक
कसीर०	जी०डी० एम० सूफी
का०	कादम्बरी
काम०	कामन्दक
का०सू०	कामसूत्र
काव्य०	काव्य रचना
कि०	किष्किन्धा काण्ड रामायण वा०
कु०	कुमार सम्भव
कू०	कूर्म पुराण
कैम्ब्रिज०	• कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया
ख०	खण्ड
गी०	गीत गोविन्द
गीता०	भगवद् गीता
जै०सि०	जैनसिद्धान्त कोश
जैन०	श्रीवर राज० लेखक
जोन०	जोनराज राज० लेखक
तबक्कात०	तबक्काते अकबरी
ता०रशीदी	मिर्जा हैदर दुघलात कृत
ता० हसन	तारीख पीरहसन कश्मीर
तीर्थ०	तीर्थ संग्रह साहेबराम
त्रि०सार	त्रिलोक सार
दत्त०	जोगेशचन्द्र दत्त अनु० राज०
दुर्गा०	दुर्गाप्रसाद रा०
द्र०	द्रष्टव्य
द्रो०	द्रोण पर्व
नाट्य०	नाट्यशास्त्र
नारद०	नारद स्मृति
निज्जर०	पंजाब अण्डर सुल्तान
नृसि०	: नृसिंह पुराण
नै०	नैषध
परमू०	डा० आ० म०, हिस्ट्री आफ मुसलिम रूल इन इण्डिया
परा०	पराशर माधवीय
पाण्डु०	पाण्डुलिपी
पीर०	पीर गुलाम हसन ता० कश्मीर

पु०	पुराण	रघु०	रघुवश
प्रा०	प्रायश्चित सार	रशीदी०	तारीखे रशीदी
फिरिश्ता	मुहम्मद कासिम ब्रिग्गस	रा० स०	राजतरगिणी सग्रह लेखक
फो०	फोलियो	ला०	वैली आफ कश्मीर लारेन्स
ब०	बम्बई सस्करण राज०	लिंग०	लिंग पुराण
ब० शा०	बहारिस्तान शाही	लोक०	लोकप्रकाश क्षेमेन्द्र कश्मीर स०
बाल०	बालकाण्ड रामायण वाल्मीकि	लौ०	लौकिक या सप्तर्षि वर्ष
बा०-रा०	वाल्मीकि रामायण	वन०	वन पर्व
ब्रह्म०	ब्रह्म वैवत पुराण	वाइन०	जी०टी० वाइन्स ट्रेवेल्स
ब्रह्म०	ब्रह्माण्ड पुराण	वाज०	वाजसनेयी सहिता
बृहत०	बृहत सहिता	वायु०	वायुपुराण
भविष्य०	भविष्य पुराण	विक्र०	विक्रमाक देवचरित
भा०	भागवत पुराण	विलसन०	हिन्दू हिस्ट्री ऑफ कश्मीर
भीष्म०	भीष्म पर्व	विष्णु०	विष्णुपुराण
भृति०	भृति हरिशतक त्रयम्	विष्णुधर्मो०	विष्णु धर्मोत्तर पुराण
म०	महाभारत	वैकट०	क्रोनोलोजी आफ कश्मीर वेंकटाचालम
मत्स्य०	मत्स्यपुराण	शक्ति०	शक्ति सगमतन्त्र
मनु०	मनुस्मृति	शा०	शान्तिपव
महा०	महावश	शिशु०	शिशुपाल वध
मा०	मातग लौली	शुक०	शुक राजतरगिणी लेखक
मार्क०	मार्कण्डेय पुराण	श्रीकण्ठ०	श्रीकण्ठ चरित
माहा०	माहात्म्य	समय०	समयमातृका क्षेमेन्द्र
माल०	मालवकाग्नि मित्र	सभा०	सभा पर्व
मुद्रा०	मुद्रा राक्षस	सर्वा०	सर्वावतार
मूर०	मूरक्राफ्ट ट्रेवेल्स इन हिमालयन प्रोविन्सेज आदि	वै०	वैशेपिक दर्शन
		श०	शकुन्तला नाटल
मेघ०	मेघदूत	स्कन्द०	स्कन्ध पुराण
मोहबुल०	मोहबुल हसन, कश्मीर अण्डर सुल्तान्स	स्तीन०	क्रोनिकल्स ऑफ किंग्स ऑफ कश्मीर
मौ०	मौसल पर्व	हर०	हरचरित चिन्तामणि
म्युनिख०	म्युनिख पाण्डुलिपि तारीख कश्मीर	हसन०	हसन बिन अली कश्मीरी
याज्ञ०	याज्ञवल्क्य स्मृति	ह०व०	हरिवश पुराण
योगवा०	योगवासिष्ठ रामायण	हैं०मल्लिक	हैंदरमल्लिक चादुरा

नोट—१ १ ४७ जहाँ पुस्तक का नाम नहीं है, उसे श्रीवर राजतरगिणी समझना चाहिए।
२ १०१ ,, ,, ,, तरग दो
३ ६० ,, , ,, तरग तीन
४ ११२ ,, ,, ,, तरग चार
राजतरगिणी जहाँ केवल रा० सकेत है उसे कल्हण कृत राजतरगिणी समझना चाहिए।

विषय-सूची

धरातल

● ग्रन्थ कथा :

दशक बीता। भाष्यों की कक्षा शेष हुयी। आठ खण्डों की गाथा शेष हुयी। पृष्ठों की कहानी शेष हुयी। दूसरों की गाथा गाकर। दूसरों की कहानी जगाकर। अपनी कहानी बन्द कर। दूसरों की कीर्ति गुनगुना-कर। अपनी शेष कर। दूसरों का यश जीवित कर। अपना शेष कर।

लेखनी शान्त हुयी। परिश्रान्त उंगलियोंने विश्रान्ति ली। ग्रन्थों की शृंखला विदा हुयी। कागजों का रंगना रुका। अपना भार उतरा। मन हलका हुआ। बीतता-बीत गया। रह गया, उनका साक्षी बन कर।

दुनिया रूठी। राजनीति रूठी। लक्ष्मी रूठी। पद के साथी रूठे। उनकी रूठी लहरों में तैरता गया। डूबता गया। उतराता गया। खिंचता गया। भारती की ओर। लगा एकाकी किनारे।

स्मृतियों ने झकझोरा। आकर्षणों ने झकझोरा। मोह ने झकझोरा। सबने झकझोरा। जिसने पाया। उसने झकझोरा। प्राक्तन संस्कार मुसकुराया। हाथ फैला न सका। जबान खोल न सका। लड़खड़ा न सका। गिर न सका। दुनिया हँसी। समाज हँसा। साथी हँसे। मैं खतम हो गया।

आँखें खुलीं। सहमती हुई। छिपती हुई। कतराती हुई। लेकिन देखा। खतम हुये, हाथ फैलाने-वाले। खतम हुये, जबान खोलनेवाले। खतम हुयें, बिकनेवाले। खतम हुये, खरीदनेवाले। खतम हुये, उठनेवाले। खतम हुये, गिरानेवाले। यह खतम, खात्मे की ओर न ले जा सका।

सूरज छिपता है। अन्धेरा होता है। बिजली बिगड़ती है। अन्धेरा होता है। दीपक बुझता है। अन्धेरा होता है। दुनिया में अन्धेरा होता है। बाहर अन्धेरा होता है। भीतर अन्धेरा होता है। लेकिन अन्धे को न अंधेरा है, न उजाला।

दो आँखें खुली रहती है। देखती है। चमकती हैं। मन्द पवन बहता है। धूल उड़ती है। आँखें बन्द होती है। पद, लोलुप ग्रहण लगता है। खुली आँखें नहीं देखती। स्पर्धा ज्वाला लपलपाती है। खुली आँखें फिर जाती है।

उज्ज्वल हीरा भस्म होता है। चमकता सोना भस्म होता है। यौवन भस्म होता है। सुन्दर काया भस्म होती है। भस्म बन जाता है, त्रिनेत्र का त्रिपुण्ड। उद्घोषित करता—सत्व, रज, तम, उत्पत्ति, स्थिति, संहार; ब्रह्मा, विष्णु, महेश; द्रष्टा, दृश्य, दर्शन, इडा, पिंगला, सुषुम्ना, ऋग, यजु, साम, धर्म, अर्थ, काम, मन, वाणी, कर्म, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, अ, ऊ, म, भूत, वर्तमान, भविष्य, प्रात, मध्याह्न, सायं, वात, पित्त, कफ; हड़, बहेड़ा, आँवला, गंगा, यमुना, सरस्वती, स्वर्ग, मर्त्य, पाताल, क्षय, स्थान, वृद्धि; क्रोध, मोह, लोभ; बुद्ध, संघ, धर्म, पिता, पुत्र, पवित्रात्मा का रहस्य।

तीसरी आँख है। देखती है। एक आँख से। दो से हटकर। द्वैध से हटकर। द्वैत से कटकर।

दुविधा से हटकर। करती है, करुणा का दर्शन। करती है, अपना दर्शन। दर्शनों के उलझनों से हटकर। त्रिगुणों से हटकर। त्रिजगत से हटकर। त्रिशक्ति से हटकर। उसमें सब कुछ मिलता है। जो मिल सकता है। जो अपना है। जो स्वाती जल है। गंगा जल है। मेघ जल है। उसे छोड़ सागर जल कौन ले ?

स्वाभिमान जीवन है। दैन्य मृत्यु है। स्वाभिमान आशा है। दैन्य निराशा है। स्वाभिमान भविष्य है। दैन्य वर्तमान है। स्वाभिमान संघर्ष है। दैन्य पलायन है। स्वाभिमान दिन है। दैन्य रात है। स्वाभिमान विश्वास है। दैन्य प्रवंचना है। स्वाभिमान अचल है। दैन्य चंचल है। स्वाभिमान अनुशासन है। दैन्य फिसलन है। स्वाभिमान ऊर्ध्व गति की पराकाष्ठा है। दैन्य अधोगति की चरम सीमा है। स्वाभिमान उत्थान सोपान है। स्वाभिमान प्रेरणा है। दैन्य उत्साह का अभाव है। स्वाभिमान पुरुषत्व है। दैन्य क्लीबता है। अनजाने स्वाभिमान ने मुझे पकड़ लिया। बाँध लिया। बन्धन में सुख मिला। वह सुख मिला। जो वैभव त्यागने पर, कमण्डल में मिलता है।

सरस्वती या लक्ष्मी :

काया, जीर्ण होती चली गयी। जीर्ण काया से, सरस्वती उपासना की ओर, जितनी त्वरित गति से बढ़ता गया, लक्ष्मी उससे भी अधिक त्वरित गति से विमुख होती गई। सरस्वती की धारा मरुस्थल में शीतल हिमालय से चलकर लोप होती है। लक्ष्मी की धारा हरी-भरी सुहावनी भूमि में लोप होती है। सरस्वती की धारा, लोप होने-होते शताब्दियाँ बीत जाती हैं। किन्तु लक्ष्मी की धारा मुहूर्त मात्र में लुप्त होती है। चपल लक्ष्मी, साथ त्यागने पर, उलटकर ताकती नहीं, दरिद्रता गले मढ़ती है। किन्तु सरस्वती से कहती जाती है, कहती रहती है, जीवन के उदात्त गुणों को। पंकिल भूमि से उज्ज्वल कमल निकलता है। सरोवर में हंस विहरता है। परमहंस होने पर, शरीर पर एक सूत न होने पर, मानव सरस्वती की वाणी सुनता है। उनमें पाता है, अपना रहस्य, जगत का रहस्य, जीवन का रहस्य। और लक्ष्मी ? उनका वाहन उलूक ? वह रात्रिचर है। हिंसक है। अशुभ है। घिनौना है। क्रूर है। वैसा ही है, जैसा पूँजीपति। जैसा राजकोश उपासक। जैसा जगत को, जड़ रुपये से खरीदने वाला, घोर मनुष्य।

राज्य का राजकोश राज्य के सप्तांग में एक है। एक शक्ति है। सरस्वती एक राज्यांग नहीं बन सकी। लक्ष्मी रत्नभार से दबी है। स्वर्ण मुकुटों से वेष्ठित है। उसके उपासक रत्नों से, आभूषणों से, मुद्राओं से, दबे है। किन्तु रत्न स्वर्णादि जीवनशून्य है। चकाचौंध पैदा करते हैं। उनमें अनुप्राणित करने की शक्ति नहीं होती। विनिमय के साधन है। खरीदे और बेचे जाते है। लूटे और उड़ाये जाते है। उनमें स्थिरता नहीं है। उनकी स्थिरता भौतिकता पर है। शक्ति क्षीण होते ही। लक्ष्मी लात मार कर, बिछुड़ जाती है। पाद प्रहार से मनुष्य हीन हो जाता है। जड़ता भी जड़ हो जाती है। विराग अंकुरित होता है। हृदय अंकुरित होता है। उत्साह अंकुरित होता है। स्फूर्ति अंकुरित होती है। ज्ञान-विज्ञान अंकुरित होते है। सभी वाद्य में, सत्व संगीत में, सात्विक भावनाएँ उठती है। तम तिरोहित होता है। सत्व उठता है। सत्व के साथ मानवता उठती है। निःसन्देह, इस दशक में सरस्वती के दर्शन मिलते रहे।

श्रम अपना था। निःसंकोच उपयोग कर सकता था। अर्थ की समस्या विषम थी। कोई लिपिक नहीं था। सहायक नहीं था। टाइपिस्ट रखने की स्थिति में नहीं था। अपने हाथों करना था। नोट बनाता था। प्रारूप तैयार करता था। अन्तिम रूप देने में एक ही विषय कई बार कागज काला करते थे। प्रूफ देखना सरल काम नहीं था। उसे भी देखता रहा। हस्तलिखित कागजों के गठ्ठर तैयार हो गये थे। उन्हें

देख कर सिहर उठता हूँ। इतना परिश्रम इस जीवन में अकेले अब न हो सकेगा। गठ्ठरो को बस्तो में सुला दिया। उनसे छुट्टी मिली।

राजनीति से अवसर प्राप्त, राजनीतिज्ञो के समान, अवसरवादियो के अवसर समाप्त होने के समान, अतीत की सुखद स्मृतियो में घूमते रहना लम्बी साँस लेते रहना, पुरानी बातो को दुहराते रहना, आत्म-श्लाघा करते रहना, पदप्राप्ति की अभिलाषा बनाये रखना, मेरी प्रकृति के अनुकूल नही पडा। मैं सन् १९२१ से ही जेलयात्रा करते, राजनीतिक उधेडबुन में रहते, आशा-निराशा में झूलते, दुःख-सुख, भाव-अभाव, उतार-चढाव में रमने का आदी हो गया हूँ। दश वर्ष के लम्बे काल में अपने लिये, अपने सुख प्रसाधान के लिये, मैंने न तो मुख खोला और न किसी ने मुझे स्मरण करने की कोशिश की। जैसे-जैसे दिन बीतता गया, मेरी दुनिया सकुचित होती गयी।

किसी का उपकार करने की स्थिति में नहीं था। किसी पर अहसान करने की स्थिति मे नही था। राजनीतिक अधिकार रहित था। पचास वर्ष के लम्बे राजनीतिक जीवन के साथी, जेल के साथी, मेरे प्रति एक प्रकार से उदासीन हो गये थे। 'मैं भी राजनीतिक पीडित या स्वतन्त्रता सेनानी' की पेंशन लकर, उनकी श्रेणी में बैठ नही गया, यह बात उन्हे अखरती थी। उनकी पक्ति, उनके वर्ग के बाहर था। बनारस में दो ही चार जेलयात्री शेष रह गये थे, जिन्होने पेंशन लेकर जनता की गाढी कमाई पर, सुखद जीवन निर्वाह करना पसन्द नही किया। सत्ताधारियो की लम्बी कतार में बैठना, हाँ में हाँ मिलाना, उनके अनुग्रहो से अनुगृहीत होना, गँवारा नही किया। मैंने देश के लिये काम किया था। उसके लिये त्याग किया था। उसका पुरस्कार प्राप्त कर, अपने कुटुम्ब के लम्बे सन् १८८८ ई० से होते, गतिशील राजनीतिक जीवन में एक ऐसी कडी नही जोडना चाहता था, जो किसी प्रकार अशोभनीय मानी जाती।

● प्रयोजन :

राजतरगिणी शृखला में श्रीवर कृत जैनराजतरगिणी तृतीय राजतरगिणी है। कलकत्ता तथा बम्बई मुद्रित सस्करणों में तृतीय राजतरगिणी शीर्षक है। जैनराजतरगिणी नाम श्रीवर ने ग्रन्थ का स्वय रखा है (१.१.१८)। अस्तु ग्रन्थ का शीर्षक जैनराजतरगिणी है।

प्रारम्भ मे कल्हण राजतरगिणी भाष्य एव अनुवाद की मेरी योजना थी। अन्तिम काश्मीरी हिन्दू शासिका कोटा रानी के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियाँ है। भ्रान्ति के शमनार्थ मैंने जोनराज का अध्ययन आरम्भ किया। अध्ययन का फल जोनराजतरगिणी भाष्य एव अनुवाद है। जोनराज के भाष्य तथा अनुवाद पश्चात् श्रीवर तथा शुक भाष्य एव अनुवाद की योजना बनायी। यह भाष्य साहित्यिक एव काव्य दृष्टि की अपेक्षा ऐतिहासिक, भौगोलिक एव सामाजिक दृष्टि से लिखा गया है। अग्रेजी मे ग्रन्थ लिखता, तो महत्व, बिक्री तथा प्रसिद्धि अधिक होती। मेरी मातृभाषा हिन्दी है। विदेशी भाषा में लिखना अच्छा नही समझा। सम्भव है, कालान्तर में अग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत करने का प्रयास, मै या मेरे पश्चात् कोई महानुभाव करें, तो वे विश्व के कोने-कोने में ग्रन्थ पहुचाने का श्रेय प्राप्त करेंगे। मैं स्वय अनुवाद करने में असमर्थ हूँ। जीवन के बचे वर्ष तत्व चिन्तन में व्यतीत करना चाहता हूँ।

● पाठ :

कलकत्ता (सन् १८३५ ई०) तथा बम्बई (सन् १८९६ ई०) दो सस्करण नागरी में मुद्रित हैं। राज तरगिणी को प्रकाश में लाने का श्रेय श्री मूर क्राफ्ट इगलिश पर्यटक को है। उसी से प्राप्त पाण्डुलिपि के आधार पर कलकत्ता सस्करण हुआ है। श्री पीटरसन् द्वारा सम्पादित बम्बई सस्करण श्री दुर्गा प्रसादजी का

है। कलकत्ता संस्करण मूल के अत्यन्त समीप है। पुरानी संस्कृत शैली स्वीकार की गयी है। मूल जैसा प्राप्त था, उसे बंगदेशीय पण्डितों के सहयोग से एशियाटिक सोसाइटिक ने बैपटिस्ट मिशन प्रेस कलकत्ता में मुद्रित कराया था। मुद्रण कला आज से १५० वर्ष उतनी विकसित नहीं थी, जितनी आज है। अतएव कुछ त्रुटियाँ मुद्रण के कारण रह गयी हैं। परन्तु वे नगण्य हैं।

दुर्गा प्रसाद जी ने अपने संस्करण में कुछ सुधार किया है। किन्तु खण्डाकार 'अ' का उन्होंने प्रयोग नहीं किया है जो कलकत्ता संस्करण में है। 'श' तथा 'स' 'ष' तथा 'ख' तथा 'व' व तथा 'ब' के कारण अनेक त्रुटियाँ परिलक्षित होगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ का पाठ कलकत्ता संस्करण पर आधारित है। बम्बई संस्करण से सहायता ली गयी है। जहाँ श्री दुर्गा प्रसाद ने पाठ शुद्ध या सुधार किया है, उसे यथास्थान स्वीकार किया है। कलकत्ता संस्करण में पंक्तियों की संख्या दी गयी है। श्लोक संख्या नहीं है। संस्कृत मूलग्रन्थों में श्लोक संख्या नहीं मिलती। मैंने अनेक पाण्डुलिपियाँ देखी हैं। उनमें श्लोकों की क्रम संख्या पूर्वापर का विचार कर विद्वानों ने कहीं-कहीं दो तथा कहीं तीन पदों की श्लोक संख्या से बना दी है। उनके कारण प्रकाशित ग्रन्थों की श्लोक संख्याओं में अन्तर पड़ना स्वाभाविक है। कल्हण राजतरंगिणी में सबधी स्टीन तथा दुर्गा प्रसाद ने श्लोकों की क्रम संख्या दी है। श्रीवर का संस्करण स्टीन ने नहीं किया है। अतएव दुर्गा प्रसाद ने ही सर्वप्रथम श्लोकों की क्रम संख्या दी है। श्री दत्त ने श्रीवर का अनुवाद किया है। उनमें न तो श्लोक संख्या दी गयी है और न श्लोकानुसार अनुवाद किया गया है। उसे छायानुवाद कह सकते हैं।

श्री कण्ठ कौल संस्करण तथा प्रस्तुत संस्करण में कुछ स्थानों में श्लोक के पदों की क्रम संख्या में व्यतिक्रम है। उनका यथास्थान संकेत किया है। मैंने भारत में प्राप्य पाण्डुलिपियों से सहायता ली है। उन पाण्डुलिपियों को न तो महत्त्व दिया है और न आधार माना है, जो सन् १८३५ ई० के पश्चात् की हैं। हाथ से प्रतिलिपि करने में मूल की जितनी बार प्रतिलिपि की जायगी, उतनी बार उसमें कुछ न कुछ त्रुटि रह जायगी। कलकत्ता संस्करण के पश्चात् की प्रतिलिपियाँ कलकत्ता संस्करण की प्रतिलिपि मात्र हैं। काशी में आज भी रामायणी लोग हाथ से लिखी सांची पत्राकार में रामायण की प्रतिलिपि स्वयं या करा कर पढ़ते हैं।

राजतरंगिणी का महत्त्व बढ़ा, तो हाथ से बने कागज पर, देशी कलम और स्याही से प्रतिलिपियाँ लिखी गयी। उन्हें मूल पाण्डुलिपि करार देकर, बेचा तथा प्रयोग किया गया है। वे अनेक पुस्तकालयों की शोभा हैं। काशी में ही इस प्रकार की कम से कम तीन पाण्डुलिपियाँ वर्तमान हैं।

तत्कालीन संस्कृत तथा उसकी लेखन शैली को बदलकर उसे आधुनिक संस्कृत का कलेवर देना अनुचित है। इसका अधिकार मुझे या किसी लेखक को नहीं होना चाहिए। मूलरूप नष्ट हो जाता है। यद्यपि अर्थ एवं भाषा की दृष्टि से सुधार हो जाता है। परिवर्तन, संशोधन एवं परिवर्धन से तत्कालीन संस्कृत रूप तथा उसकी शैली का बोध नहीं होता। वास्तविक स्थान पाद टिप्पणी किंवा पाठभेद में होना चाहिए। मैंने इनका उल्लेख पाद टिप्पणियों में किया है। कलकत्ता तथा बम्बई संस्करणों की पंक्तियों तथा श्लोकों की क्रम संख्या स्थान-स्थान पर दे दिया है। अनुसन्धानकर्त्ताओं एवं लेखकों को कलकत्ता एवं बम्बई संस्करणों से, सन्दर्भ प्राप्ति में कठिनाई नहीं करनी पड़ेगी।

संस्कृत ही नहीं फारसी पाण्डुलिपियों में भी यही बात घटी है। एक ही ग्रन्थ की अनेक पाण्डुलिपियाँ विश्व में बिखरी हैं। हाथ से लिखने के कारण उनमें कुछ न कुछ अन्तर पड़ जाता है। कौन मूल है, यह भी निर्णय करना कठिन होता है। प्रतिलिपिकार प्राय प्रतिलिपि का समय न देकर, मूल का समय देते

है। इस त्रुटि के कारण प्रतिलिपियो तथा मूल के समय निर्धारण में कठिनाई होती है। हसमते काश्मीर की एक पाण्डुलिपि काशी विद्यापीठ में है। दूसरी एशियाटिक सोसाइटी में है। यह निर्णय करना कठिन है कि कौन मूल है।

नामवाचक शब्द :

व्यक्ति तथा स्थानवाचक नामों को इटालिक या सादे टाइप अथवा पद के टाइपो से भिन्न देने की प्रथा श्री स्तीन ने अपने कल्हण राजतरंगिणी संस्करण सन् १८९२ ई० में चलाई है। उसका अनुकरण श्री कण्ठ कौल मुद्रित संस्करण में किया गया है। मैंने मूल का अनुकरण किया है। मूल में एक ही अक्षरों को जिस प्रकार लिखा गया है, उसी प्रकार दिया है। भिन्न अक्षरो में नाम देने से पढने तथा खोजने में सुविधा होती है। उसका समाधान अन्त में दिये नामानुक्रमणिका से हो जाती है। एक ही पद में भिन्न अक्षरो के प्रयोग से शंका हो सकती है कि मूल लेखक ने भी यह आधुनिक शैली अपनायी थी। मूल अपने मूल रूप में पाठको के सम्मुख उपस्थित किया जाय। इस दृष्टि से चाहकर भी व्यक्ति तथा स्थानवाचक नामो को भिन्न अक्षरो में नही दिया है। सर्वश्री स्तीन तथा श्री कण्ठ कौल ने नामानुक्रमणिका नही दिया है अतएव भिन्न अक्षर शैली मुद्रण से नाम पढने या पूछने में कुछ सुविधा हो जाती है।

संस्कृत लेखकों ने मुसलिम नामो को संस्कृत में लिख कर उनका किंचित सन्धि-समास आदि की दृष्टि से संस्कृतीकरण कर दिया है। फारसी तथा अरबी नामों का उच्चारण भिन्न-भिन्न कालो में भिन्न रूपो में होने लगा था। अरबी तथा फारसी ने कुछ अपभ्रंश का रूप ले लिया था। यही कारण है कि एक ही नाम का अक्षरविन्यास भिन्न-भिन्न ग्रन्थकारों ने भिन्न-भिन्न रूप से किया है। उनके वास्तविक नामों को पाद टिप्पणियो में देने का प्रयास किया है। कुछ लेखको ने नाम के इस भेद में भी पाठभेद खोजकर अपने परिश्रम की सार्थकता प्रकट करने की कोशिश की है।

संशोधन :

कलकत्ता संस्करण में खण्डाकार 'ऽ' का प्रयोग किया गया है। सर्वश्री स्तीन तथा दुर्गा प्रसाद ने 'ऽ' का प्रयोग नही किया है। मूल का अनुकरण किया है। कलकत्ता और स्तीन के कल्हण तरंगिणी संस्करण में ३५ वर्षों का अन्तर है। मालूम होता है। वंग पण्डितो ने खण्डाकार 'ऽ' आधुनिक शैली के अनुसार जोड़ दिया है।

कलकत्ता संस्करण में 'ऽ' है, अतएव उसे यथावत् रखा गया है। कलकत्ता संस्करण में 'व' तथा 'ब' के भेद का ध्यान नहीं रखा गया है। 'ब' तथा 'भ' में भी भेद कम किया गया है। उसे प्रस्तुत संस्करण में सुधार लिया है। इसी प्रकार 'श' तथा 'स' एवं 'ष' तथा 'ख' में तत्कालीन लौकिक उच्चारण के आधार पर पाठ कही-कही मिलता है। उसे भी सुधारा गया है। 'मीर' का 'मेर' 'ज' का 'ज्ज' 'ज्य' लिखा मिलता है। उसे ठीक कर लिया है। श्लोक के अन्त में आये अनुस्वार को "म्" के रूप में कर दिया गया है, क्योकि यही पूर्ण शुद्ध है। मुसलिम नामो का संस्कृतीकरण श्रीवर ने किया है। उन्हें उनके मूल रूप में रखने का प्रयास अनुवाद तथा कही-कही पाठ में किया है।

मुद्रण की अशुद्धियाँ तत्कालीन मुद्रण की प्रारम्भिक अवस्था के कारण हुई हैं। मुद्रणकला आज उन्नत है। अतएव मुद्रण की त्रुटियो का आधुनिकीकरण किया गया है। उन्हें पाठभेद मानना संगत नही है। तत्कालीन मुद्रण प्रणाली दोषी नही है। व्याकरण की दृष्टि से जो अशुद्धियाँ मिली हैं, उन्हें यथासम्भव ठीक किया है।

● **सन्दर्भ :**

सन्दर्भ ग्रन्थों का उल्लेख पाद-टिप्पणियों में है। जैन राजतरंगिणी के अन्य भाष्यों का अनुकरण प्रस्तुत ग्रन्थ के भाष्य, अनुवाद शैली में किया है। स्थानों का मूल तथा प्रचलित नाम, भौगोलिक स्थिति के साथ दिया है। अर्थ तारतम्य करने के लिये, अतिरिक्त शब्दों को कोष्ठों में रखा है। जहाँ अपने अनुवाद से स्वयं सन्तोष नहीं हुआ है, वहाँ दो या तीन अनुवाद दिये हैं। श्री दत्त का छायानुवाद यदि ठीक नहीं लगा है, तो उसका उल्लेख कर दिया है।

● **अनुक्रमणिका :**

श्लोकानुक्रमणिका देने की प्रथा संस्कृत ग्रन्थों में है। उसीका अनुकरण कर भाष्यों के श्लोकों की श्लोकानुक्रमणिका दी गयी है। श्लोकों की संख्या संस्करणों में एक समान नहीं है। कलकत्ता, दुर्गा प्रसाद तथा श्री कण्ठ कौल के संस्करणों की श्लोक संख्यादि भिन्न हैं। पाठों तथा पदों में अन्तर नगण्य है। श्लोकानुक्रमणिका से श्लोक निकालने में सुविधा होती है। साथ ही नामानुक्रमणिका आधुनिक शैली के अनुसार दिया गया है। भविष्य के संस्करणों में स्पष्ट संख्या परिवर्तन, संशोधन तथा प्रत्यानयन के कारण घट-बढ़ सकती है। इसका अनुभव मैंने कल्हण राजतरंगिणी के प्रथम खण्ड के द्वितीय संस्करण में किया है। एतदर्थ नामानुक्रमणिका में श्लोकों की संख्या दी गयी है। इससे पृष्ठ तथा श्लोक दोनों एक साथ मिल जाते थे। श्लोक संख्या से पृष्ठ खोजने में कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि प्रत्येक पृष्ठ में जितने श्लोक हैं, उनकी संख्या पृष्ठ के ऊपर ही पृष्ठ संख्या के ठीक सामने दूसरी तरफ दे दी गयी हैं।

● **पुस्तकालय**

मेरे कुटुम्ब में सन् १९०५ ई० से लोग जेल जाते रहे हैं। यह जेल जाने का क्रम सन १९४५ ई० तक चलता रहा। लाखों लोगों को ताम्रपत्र मिला। मुझे या मेरे कुटुम्ब को किसी ने स्मरण नहीं किया। मैं एक टुकड़े ताम्रपत्र का अधिकारी नहीं समझा गया। सत्तारूढ़ दल में नहीं था। अतएव मुझे तंग, परेशान एवं अपमानित करने में सत्ताधारी गौरव का अनुभव करते थे।

इस लम्बे काल में मेरा समय संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा वहीं के भारतीय पुरातत्व विभाग के पुस्तकालयों में बीतने लगा। जाड़ा, गर्मी, बरसात, तीनों कितनी ही बार आये और चले गये। पसीना बहाता भागता, ठिठुरता, तीनों स्थानों से इतना चिपक गया कि न तो वे मुझे छोड़ते थे और न मैं उन्हें।

तीनों स्थानों की यात्रा में परिवहन खर्च बढ़ गया। मध्याह्न पूर्व संस्कृत और मध्यान्हान्तर काशी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में समय बीतता था। इन दस वर्षों में चेतन की अपेक्षा, जड़ पुस्तकें ही मित्र रह गयी थीं। मित्रता में, राजनीतिक होड़, अर्थ लाभ पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष एवं स्पर्धा की गुंजाइश नहीं थी। सन् १९२१ से १९६७ के लम्बे काल के पश्चात्, यही एक ऐसा समय आया था, जिसमें राजनीतिक सामाजिक, दार्शनिक वाद-विवादों, दलबन्दियों के उथल-पुथल से छुट्टी मिली थी। शान्ति का अनुभव हुआ था।

कष्ट इतना ही था। किसी पाठशाला, स्कूल, कालेज अथवा विश्वविद्यालयों से सम्बन्धित न होने के कारण अनेक पुस्तकें मुझे घर लाने के लिए नहीं मिल सकती थीं। उन्हें पढ़ने के लिए वहीं जाना पड़ता था। मुख खोलने पर पुस्तकालय के अधिकारी सुविधा दे सकते थे। यह अच्छा नहीं लगा। किसी बात के लिए मुख नहीं खोला, जीवन के इस सन्ध्या काल में, प्रतिष्ठा को ठेस लगने का भय, मूर्तमान

सामने खड़ा होकर, मार्गावरोध कर देता था। निश्चय किया। याचना, आज तक नहीं किया। अब क
करूँ ? बात कहने को रह जायगी। मर गया। हाथ नही पसारा। याचना नही की। अहसान नही लिया

प्रतिदिन की इस लम्बी दौड में, कष्ट का अनुभव होता। सवारी नही मिलती। घण्टो रुक
पडता। काशी विश्वविद्यालय मोटर बस पर, दो-एक बार गया। परिचित भीड़ में आदर भाव से स्थान
देते थे। स्वय खडे हो जाते थे। यह मुझे अच्छा नही लगा। बस की यात्रा त्याग दिया। रिक्सा मिल
था। महँगा पडता था। अखरता था। आमदनी कुछ नही थी। सब खर्च ही खर्च था।

कुछ किताबें आवश्यक थी। प्रारम्भ से ही पढने का शौक था। अपने पुस्तकालय में तीन हज
पुस्तकें थी। लगभग एक हजार कानून की किताबें और जनरल थे। कानूनी जनरलो की कीमत पाँच गु
बढ गई थी। केवल सीरीज कायम रखने के लिए, उनका खरीदना बन्द कर दिया। व हमारे लिये उपयो
भी नही रह गई थीं। हजारो रुपये प्रति वर्ष खर्च हो जाते थे। पुस्तकें बडी होती थी। अनुपात से उन
कीमत भी बढी थी। अर्थाभाव के कारण अनेक पुस्तको से वंचित रहा। अनेक पुस्तकें भारत में अप्रा
थी। उन्हें विदेशों से मगाने में छ मास लग जाते थे।

काश्मीर सम्बन्धी प्रचुर साहित्य एव सामग्रियाँ हैं। बिखरी हैं। विदेशो में पाण्डुलिपियाँ है। उन
दर्शन दुर्लभ है। भारत से बाहर उन्हें देखने एव पढने का अवसर नही मिल सका। उससे कठिन थ
राजपुरुषो के यहाँ हाजिरी देना। राज-कर्मचारियो के यहाँ चक्कर लगाना, गिडगिडाना, अपमानित ह
उपेक्षित होना। विदेशी मुद्रा प्राप्ति की परेशानी, उसके लिए सरकारी कार्यालयो म ठोकरें खाते रहने
अपेक्षा, चुप होकर बैठ रहना अच्छा समझा।

उपेक्ष

किसी विश्वविद्यालय के माध्यम से पुस्तकें माइक्रो फिल्म मँगाने का मैं अधिकारी नही था। तथापि म
मित्रता के कारण मित्रों ने मँगा दिया था। उनसे कुछ काम निकाला है। द्वितीय संस्करण यदि अ
जीवित काल में हो गया, तो भविष्य के खण्डों को पूर्ण करने का प्रयास करूँगा।

एक बडी आश्चर्य की बात है। काश्मीर पर इतना लिखने, इतना समय एव धन बर्बाद करने
पश्चात भी, साहित्यिक-जगत, सरकारी-जगत, काश्मीरी जगत, किसी ओर से किसी प्रकार का न
प्रोत्साहन मिला और न किसी ने इस काम में रुचि दिखाई। जैसे यह काम मेरा ही था।

दोष किसी का नही परिस्थितियो का है। काश्मीर मुसलिम-बहुल प्रदेश है। संस्कृत भाषा।
हिन्दी के प्रति पाँच प्रतिशत काश्मीरी पण्डित तथा जम्मू क्षेत्र के हिन्दी भाषा-भाषियों की रुचि है। प्रस
ग्रन्थ काश्मीर से सम्बन्धित है, जब काश्मीरियो को इसमें रुचि नही है, तो दूसरो का न होना क्या आश
है ? मैंने ऐसा विषय चुना। जिसका सम्बन्ध एक मृत इतिहास से है, जिसके लिय गौरव का अनुभव क
वाले विरले हैं।

मैंने जाने या अनजाने कलम उठाई। काम पूरा करना था। बीच में छोडकर, भागना कायरता थ
इसके लिये अपनी आर्थिक बरबादी सहा हुई। कोई पुस्तक की स्तुति करता है या निन्दा, यह मेरे चिन
का विषय नही है।

प्रकाशन के लिए प्रकाशको के यहाँ चक्कर लगाता रहा। कुछ को छोडकर सभी प्रकाश
सरकारी प्रश्रय प्राप्त, सरकारी सहायता प्राप्त, विश्वविद्यालयों के प्रश्रय प्राप्त थे, उनकी दूकानद

थी। रद्दी भी लेखकों से कागज या धन प्राप्त कर, छापने के आदी थे। वही पुस्तक प्रकाशित करना चाहते थे, जिसमें बद्दो से, किसी प्रकार भी अधिक से अधिक लाभ की आशा थी। इसके लिए उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। उनकी दृष्टि व्यवसायी। वे घर लुटाने नहीं बैठे थे। उनके और लेखकों की दृष्टिकोणों के जमीन-आसमान का अन्तर था।

सरकार की तरफ से लेखकों को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक योजनायें बनी। योजना अखबारों में धूम धाम से छपती थी। प्रचार का ढिढोरा पिटता। किन्तु उनकी सीमा कुछ प्रिय पात्र तक सीमित रह जाती थी। उनका दर्शन समाचारपत्रों में, सरकारी विज्ञप्तियों में, पुस्तकों के होते उद्घाटन समारोहों के छपने समाचारों में मिलता था। मेरे जैसे प्यासे लेखक, आकाश की ओर देखते, टक लगाये, प्यासे रह जाते थे। एक बूँद का सहस्रांश भी भूलकर मुख में नहीं पड़ सका।

भारत में अनेक हिन्दी समितियाँ हैं। अनेक प्रकाशन संस्थायें सरकारी एवं अर्ध सरकारी हैं। मैंने पत्र लिखा। एकाध ने असमर्थता प्रकट की। शेष न पत्रों को रद्दी की टोकरी में सुला दिया। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने चार फार्म सन् १९६८ ई० में छापे, उसके पश्चात् टका-सा जवाब दे दिया।

किन्तु मनुष्य एवं शासन ही सब कुछ नहीं है। एक अव्यक्त शक्ति और है। अनजाने कार्य करती है। योजना स्वयं बनाती है। स्वयं प्रेरणा देती है। कार्य करवाती है। निःसन्देह उसी अव्यक्त शक्ति की योजना से पुस्तकें प्रकाशित हो सकी हैं। दूसरा संस्करण भी होने लगा है।

लेकिन जिन्हें लिखा था, उनकी निद्रा भंग न हुई। उनके फाइलों में पत्र उत्तर की प्रतीक्षा में पड़े-पड़े, निराशाग्नि में या तो जल गये, अथवा आँसू बहाते अपने ही आँसू में गल गये। हाँ—संस्थाओं तथा व्यक्तियों की तरफ से, मुफ्त प्रति भेजने के लिए पत्र यथा-क्रम अवश्य मिलते थे। उसमें भी डाक खर्च मुझे ही वहन करने की बात होती थी। सबका उत्तर देना मेरी सामर्थ्य के बाहर की बात थी।

संस्कृत एवं काशी विश्वविद्यालय

लिखने-पढ़ने का सर्वोत्तम साधन काशी है। संस्कृत तथा काशी विश्वविद्यालय के पुस्तक भण्डार पूर्ण हैं। व्यक्तिगत तथा कई संस्थाओं एवं विद्यालयों के पुस्तकालय भी हैं। पुस्तकें कोई भी प्राप्तकर, बैठकर पढ़ सकता है। इस सुविधा से मेरा काम बहुत हलका हो गया। निश्चित समय पहुँचने और लौटने के कारण जीवन सयमित हो गया। कुछ पुस्तकालयों के पुस्तकाध्यक्षों ने मेरे काम में रुचि लेकर, प्राप्य सामग्रियों की सूचना तथा उन्हें सुलभ कर, वास्तव में सरस्वती के सच्चे, उपासक रूप में अपने को प्रकट किया है। संस्कृत विश्वविद्यालय के पुस्तकाध्यक्ष श्री डॉ० लक्ष्मीनारायण तिवारी तथा काशी विश्वविद्यालय के सर्वश्री हरदेव शर्मा तथा उपपुस्तकाध्यक्ष श्री एम० एन० राघव हैं। उन लोगों ने खोज-खोजकर, कश्मीर सम्बन्धी ग्रन्थों को मुझे देने का प्रयास किया है। इस सीमा तक सहायता किये हैं कि स्वयं पुस्तक निकालकर, देते थे। उनसे कभी उऋण नहीं हो सकता।

दुनिया में अर्थ एवं पद ही महत्त्व नहीं रखते। इसका अनुभव मैंने किया। जिनपर मुझे कभी अहसान नहीं किया, जिनका उपकार नहीं किया, जो अपरिचित थे, उनसे सबसे अधिक सहयोग एवं सहायता मिली है। वे सभी साधारण व्यक्ति थे। अपनी ६७ वर्ष की अवस्था में बिना किसी पारिश्रमिक, घर से पैसा खर्चकर, पढ़ना और लिखना, उनके सरल हृदय को अपील करता था, वह हर तरह की सहायता के लिए, सर्वदा तत्पर रहते थे। यह भावना मैंने पुस्तकालयों के निम्नवर्गीय कर्मचारियों में

देखा है। उन्हें जैसे मेरे इस ढलती उम्र में लगन से कार्य करते देखकर, दया आती थी। वे अपनी सहानुभूति का परिचय, दो-चार मधुर शब्द बोलकर, देते थे।

● एकाकी :

मैं अकेला हूँ। किसी के जीवन निर्वाह का मुझपर भार नहीं है। घर पर सभी सुविधायें, जो इस शरीर को चलाने के लिए आवश्यक थीं, उपलब्ध थी। इसमें मेरी स्त्री सहायक थी। हमारा विवाह सन् उन्नीस सौ छब्बीस ई० में ही हा गया था। वह मुझसे छ वर्ष छोटी है। पठित नही है। काशी नगर की ही रहने वाली है। मेरे मकान औरङ्गाबाद से उसका मकान गोवर्धन सराय दो फर्लाङ्ग से अधिक नही है। विवाह में लेन देन का प्रश्न तत्कालीन प्रथा के अनुसार नही उठा था। दोनो ही कुटुम्ब कुलीन, सनातन धर्मावलम्बी तथा जमीन्दार थे। देशी घी, देशी चीनी, देशी वस्त्र, देशी वस्तुओ का प्रयोग होता था। बाजारू बनी चीजों का प्रयोग वर्जित था। बीमारी में औषधि भी वैद्य की होती थी। इस सस्कार में मेरी स्त्री पली थी। उसका वह सस्कार अभी कायम है।

बिना स्नान किये भोजन नही बनाना चाहिए, लघु शका पश्चात् हाथ पैर धोना, दीर्घ शका पर, स्नान करना, किसी का स्पर्श भोजन तथा पानी नही पीना, जौ, चना, गेहूँ आदि धोकर पिसाना, बरतनों को माजकर चमकाना, आदि आचार सहितायें हमारे घर में रूढ हो गई है। कुत्ता, बिल्ली, जानवरो का स्पर्श होते ही, स्नान करना आवश्यक है।

मैं छूआछूत नही मानता। सामाजिक कार्य कर्त्ता होने के कारण, मुसलमान और हरिजन का स्पर्श होता था, यह बात ज्ञात होने पर, मेरा स्पर्श किया, पानी और भोजन घर में कभी कोई नही करता था। दिल्ली ससद में मैं चुन कर गया। वहाँ बगला मिला। सफाई करने वाला प्रतिदिन आता था। दिल्ली तथा पश्चिम भारत में स्पर्शास्पर्श का विचार नगण्य है। भगी ने एक बालटी छू दिया। वह बड़ी-बड़ी नाराज हुई। बालटी अपवित्र हो गई। घर से निकाल कर फेंक दी गई। सफैया का आना और जाना केवल पुरीषालय तथा, पनारो की नालियो तक सीमित रह गया। घर में प्रवेश निषेध था। इस प्रकार न जाने कितने बरतन घर और दिल्ली में फेंक दिये गये थे। दिल्ली का सफैया नाराज नही हुआ। उसने हँसकर कहा—'बाबू यह उनका धर्म-कर्म है। इससे क्या होता है।' भंगी के प्रेम में कमी नहीं हुई। उसे भोजन तथा अन्य सामान पूरा मिलता था। उसमें कभी शिथिलता नही हुई, जो आधुनिक युग के घरों में कठिन है।

हमारे क्षेत्र के हिन्दू-मुसलमान सभी किसी न किसी काम से दिल्ली आते थे। उनके साथ एक दिन मुझे चाय पीते हुए, मेरी स्त्री ने देख लिया। उस दिन से हमारा पारस्परिक स्पर्श भी छूट गया। लेकिन स्नेह एव भक्ति मे कमी नही हुई। वह निरन्तर बढती गयी। मुझे यह अनायास का ब्रह्मचर्य जीवन सुखकर लगा।

मैं इतना लिख सका, शान्ति से कार्य कर सका, उसका श्रेय मेरी स्त्री को है। वही मकानो का किराया वसूल कराती थी। खेती कराती थी। गाँवो पर जाती थी। वहाँ से अन्न लाती थी। मकानों की मरम्मत कराती थी। टैक्स देती थी। हमारे लिए कपडा, साबुन, तेल, कागज, स्याही आदि सभी खरीद कर मगवाती थी। इस प्रकार मुझे सासारिक झझटों से छुट्टी मिल गई थी। मुझे किसी बात की आवश्यकता का अनुभव नही हुआ।

प्रात काल आसन प्राणायाम करने के पश्चात, ठीक छह बजे दो प्याला चाय, साढे नौ बजे दिन भोजन, पाँच बजे साय दो प्याला चाय तथा रात्रि में दूध मिल जाता था। प्रात- या साय काल कलेवा या

नाश्ता कभी जीवन में नहीं किया। अतएव उसकी चिन्ता या इच्छा नहीं थी। बाहर कुछ खरीदकर, खाने, की आदत नहीं था। पान, सुरती, बीडी सिगरेट या किसी प्रकार के व्यसन की आदत नहीं थी। उनसे दूर सर्वदा रहा हूँ। जन्म से ही शुद्ध निरामिष हूँ। घर में गाय रखना धर्म का अंग है। उससे शुद्ध दूध तथा घी मिल जाता है। खेती से अन्न, गुड, खांड आदि आ जाते हैं। बाजार से तरकारी के अतिरिक्त, और कुछ नहीं खरीदना पड़ता है।

जीवन व्यवस्थित हो गया। लिखने और पढने के लिये पर्याप्त समय मिला। किसी प्रकार की सांसारिक चिन्ता न थी। मन स्वस्थ था। पुरानी स्मृतियाँ आकर, कभी तंग करती, तो उनकी सीमा मन ही तक रह जाती।

● निराशा :

घर में स्वदेशी का सन् १९०५ और खद्दर का सन् १९२० से व्यवहार होता है। दो जोड़ा धोती और दो कुरतों से वर्ष बीतता है। शरीर की चिन्ता मेरी स्त्री और मन की चिन्ता मेरे वश की बात थी। समाचार पत्र पढ़कर, राजनीतिक घटनाओं के चिन्तन में उलझता, आशा-निराशा में झूलता रहता। शिपिंग बोर्ड की चेयरमैनी, समुद्रों के सामरिक एवं व्यापारी जहाजों की गणना, उनका अध्ययन अब भी करता हूँ। नोट बनाता हूँ। देशों के नवपरिवहन तथा नवशक्ति की जिज्ञासा का अभ्यस्त हो गया हूँ। विश्व के देशों की प्रगति और भविष्य पर विचार करता रहता हूँ। मुझे जीवन में दुःख केवल एक बात का रहा है। सैनिक तथा व्यापारिक दोनों जहाजों का विशेषज्ञ होने पर, लोगों के यह जानने पर, किसी ने किसी प्रकार की जिज्ञासा मुझसे संसद से हटने के पश्चात नहीं की। वह जैसे संसद की देन थी। संसदीय जीवन के साथ समाप्त हो गयी। इस प्रकार की स्थिति भारत में ही शायद सम्भव है।

हिन्दुस्तान जिंक लि० सरकारी संस्थान उदयपुर का कारखाना अपनी अध्यक्षता काल में निर्माण कराया। अपने समय में चलाया। प्रथम वर्ष में लाभ दिया। लेकिन वहाँ से हटना पड़ा। मैं सत्तारूढ दल में नहीं था। स्वतन्त्र विचारक था। दल का पुछल्ला बनना पसन्द नहीं था। दल का खजाना भरना मेरे प्रकृति और बूते के बाहर की बात थी। कलकत्ता तीन मास में एक बार युनाइटेड कामर्शियल बैंक लि० के संचालक बोर्ड की बैठक में जाता हूँ। उस समय कलकत्ता मैदान के समीप विशाल गंगा नदी और उस पर चलने जहाजों तथा स्टीमरों को देखता रहता हूँ। मेरे जहाजों के अध्ययन को, जैसे यह अन्तिम अध्याय है।

● एक साथी :

सन् १९७० से सन् १९७६ ई० मध्य मेरा साथी, कुत्ता टोपू था। अनजाने मेरे यहाँ आया। अनजाने चला भी गया। उसने मेरा साथ अवसरवादियों के समान नहीं त्यागा। रात में द्वार पर सोता था। दिन में घूम-घाम कर पास आ जाता था। रखवाली करता था। रात में मैं दूध पीता था। उसके लिये आध सेर अलग [illegible] आता था। हम दोनों साथ ही पीते थे। वह पीकर, तृप्त होकर, दो चार बार जीभ बाहर निकाल कर, सिंह आसन पर बैठ कर, मेरी ओर जिस कृतज्ञता से देखता था, वह कृतज्ञ दृष्टि मनुष्यों में दुर्लभ है।

अकस्मात एक दिन वह नीचे लगभग १० बजे दिन उतरा। मैं खाकर अखबार पढ़ रहा था। आँगन में वह दो एक बार घूमकर, बिना शब्द किये, बिना रोये, बिना भूंके, बिना आह खींचे, पैर पसार दिया।

मर गया। मुख खुल गया। जबडे से बाहर दन्त पंक्ति निकल आयी। आगन से मेरी साली राजकुमारी बोली—'टीपू न जाने कैसा हो गया।' मैं नीचे आया। देखते ही बोल उठा—मर गया। आँखें भर आयी। पास बैठ गया। गगा जल मँगाया। उसके मुख में तुलसी दल के साथ छोड दिया। मैं जीवन में रोया नही था। आज रोया। उसे देखता रोया। यह सोचकर रोया। इसे अब न देख सकूँगा। ससार से चल दिया। इसी तरह मैं भी एक दिन चल दूँगा।

कफन में लपेटा। सगडी पर रखा। फूल-माला चढाया। परलोक यात्री को करबद्ध प्रणाम किया। मेरा एक नौकर रामजनम है। गगा प्रवाह करने उसे लेकर चला। सगडी चली, दक्षिण ओर। जब तक सगडी दिखायी देती रही, भरी आँखो देखता रहा। इसलिये देखता रहा। उसे अब न देख सकूँगा। मेरे साथ न रह सकेगा। सगडी गली के मोडपर लोप होने लगी। अजलिबद्ध कर उठ गये। प्रणाम किया। चिन्तन करते हुये। शायद मरने पर उससे भेंट होगी। मरने पर जहाँ सब जाते हैं। वही वह भी गया होगा। वहीं मैं भी पहुँचूँगा। वहाँ उससे मिलूँगा। उसका प्रेम पाऊँगा। स्नेह पाऊँगा। यह आशा, इस करुण काल में सुखकर लगी। आज भी, उसे याद करता हूँ, मन भर आता है। आँखें श्रद्धाजलि देती है। मन रोकर कहता है—कही यह स्नेह, मुझे मनुष्यो से मिला होता?

●

एक कुटुम्ब :

इस दशक में एक कुटुम्ब से परिचय हुआ। यहाँ मुझे सहृदयता मिली। स्नेह मिला। ससार से विरक्त, स्नेह त्यागता है। प्रेम बन्धन शिथिल करता है। जगत से उपराम लेता है। किन्तु जगत से यह पलायन की प्रवृत्ति अच्छी नहीं है। सघर्षों से भागना कायरता है। गृहस्थ जीवन में रहकर, दैनिक जीवन के सघर्षों में रहकर, जगत के हास-विलास, भोग-रोग, गरीबी-अमीरी, सुख-दु ख, आशा-निराशा में रहकर, प्राणियो का जो पालन करता है, पद-पद पर वैयक्तिक सुखों को तिलाजलि देकर, कुटुम्ब के लिये क्षण-क्षण त्याग करता है, उस गृहस्थ से बढकर, भला इस दुनिया में कौन त्यागी होगा?

मुझे गृहस्थी पसन्द है। गृहस्थ का भरा-पुरा घर देखता हूँ। मन प्रसन्न हो आता है। जिस घर में, विवाद नहो, कलह नही, दूसरों के लिये आदर, आरतो के लिये करुणा, कष्ट उठाकर दूसरों के कष्टों को दूर करने की प्रवृत्ति, देखता हूँ, तो सुख मिलता है। यदि भरे-पुरे घर में लक्ष्मी के स्थान पर, सरस्वती की पूजा होती है, तो सरस्वती की वाणी गूँजती है, घर पवित्रता से भर उठता है।

जहाँ एक प्राणी दूसरे प्राणी का जहाँ आहार नही होता, जहाँ अन्न ही भोज्य है, जहाँ निरामिष वातावरण में मुक्त प्राण वायु मिलती है, वह घर नही पवित्र भूमि है। जहाँ स्त्री गृहिणी है, मधुर भाषिणी है, जहाँ *अतिथि सेवा यज्ञ है, जहाँ गृहिणी सरस्वती की प्रतीक है, वह घर सरस्वती का जागृत मन्दिर है। जहाँ* बाल-गोपाल खेलते हैं। माता-पिता स्नेह रखते हैं, जहाँ भय केवल कहानी है, वह घर पुण्य स्थली है।

श्री लल्लनजी गोपाल के इस कुटुम्ब से, राजतरंगिणी भाष्य प्रणयन काल आरम्भ से सम्पर्क रहा है। उन्ही के प्रेरणा पर, राजतरगिणी मुद्रण का कार्य आरम्भ किया गया था। उनके यहाँ लम्बे दश वर्ष तक प्राय प्रति दिन विचार गोष्ठी होती रही है। चाय मिलती थी। मिष्ठान्न मिलता था। अकेली गृहणी श्रीमती कान्ती देवी, बच्चो की सेवा करती थी। उन्हें पढाती थी। भोजन बनाती थी। विश्वविद्यालय में पढाती थी। इतने व्यस्त जीवन के पश्चात, अतिथि सत्कार का उनमें अप्रतिम उत्साह, आगन्तुको के प्रति सहृदयता, देखकर, कोई भी इस गृहस्थ जीवन के वातावरण पर मुग्ध हो उठेगा। स्वय लल्लन की पी-एच० डी० होते हुए विलायत की शिक्षा प्राप्त कर, भारतीय नारी अनुरूप व्यवहार, आज कल की पढी लिखी महिलाओ के

लिये आदर्श अनुकरणीय उदाहरण उपस्थित करता है। जिस घर में सात्वी नारी हो। वह घर नही मगल आवास है। मगल मन्दिर है। पवित्र स्थान है। सती का जागृत गृह है।

श्री लल्लनजी स्वय लन्दन के पी-एच० डी० हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय में कला सकाय के डीन हैं। विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी के सदस्य हैं। भारतीय पुरातत्व विभाग के अध्यक्ष हैं। किन्तु उनमें विद्या गर्व के स्थान पर सरलता पद गौरव के स्थान पर पद मर्यादा का निर्वाह और न जाने कितने अमित गुण हैं। मैं जो कुछ लिख सका यह विशाल ग्रन्थ समाप्त कर सका सबका श्रेय उन्हीं को है। इस दशक के अधिकाश सायकाल उनके यहाँ विचार विमर्श ग्रन्थावलोकन, अप्रकाशित अनुसन्धान ग्रन्थपठन में लग है। उनसे जब परिचय हुआ तो वे रवीन्द्रपुरी में रहते थे। तत्पश्चात ईट पर ईट बैठती गुरुधाम में निजी मकान के रूप में परिणत हो गयी। उनके पुत्र सर्वश्री उत्पल पुष्कल, पकज नीरज एव सरसिज माँ की गोद से खेलते-खलते मैदानों में खलने लगे और मरी पुस्तकें भी पत्राकार से खण्डाकार होती गयी। इतना लम्बा काल एक कुटुम्ब में, मर जैसे अपरिचित विजातीय वयस्क का कैसे बीत गया यह स्वत एक अनुसन्धान का विषय है। उनके प्रति उनके कुटुम्ब के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के लिये कृतज्ञता शब्द लघु लगता है।

● **एक स्नेही**

एक कुटुम्ब और है। श्री बलरामदास जी जौहरी पुत्र श्री जमुनादास जौहरी प्रिन्सप स्ट्रीट कलकत्ता। यहाँ मेरा प्रवास काल बीतता था। उदयपुर जिंक लिमिटेड (सरकारी) सस्थान के अध्यक्ष होने पर, पद में एक दिन उनके यहाँ ठहरना था। कम्पनी का विशाल कार्यालय कलकत्ता कैनिंग रोड पर था। मोटर, नौकर, चाकर एयर कण्डीशन आतिथ्य स्थान, सब कुछ आधुनिक प्रसाधनों से पूर्ण सज्जित था। वहाँ मैं पहली बार गया। श्री बलराम जी को मालूम हुआ। वे अपने यहाँ चलने के लिए बोले। मैं उनके सत्कार स्नेहभाव से दब गया। उसी समय उनके दो कमरे वाले फ्लैट में पहुँच गया। युनाइटेड कमर्शियल बैंक का डाइरेक्टर होने पर वर्ष में एक बार सचालक मण्डल की बैठक में भाग लेने कलकत्ता आता था। इस प्रकार प्रतिसप्ताह बलराम जी के यहाँ ठहरना होता था। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रमिला देवी ने जिस सौजन्यता से आतिथ्य किया है, वह वर्णनातीत है। मैं आज भी युनाइटेड कमर्शियल बैंक लिमिटेड पुरानी कम्पनी का डाइरेक्टर हूँ। वर्ष में चार या पाँच बार जाना होता है। यह एक अति कोमल सूत्र है। जिसके कारण अबतक मैं उस आतिथ्य से वचित नही हुआ हूँ। समस्त राज तरगिणी प्रणयन काल में इस कुटुम्ब से सम्बन्ध पूर्वक बना रहा। वहाँ ठहरने पर पाण्डुलिपियों को ठीक करता था। श्रीमती प्रमिला देवी के सरल स्वभाव से इतना प्रभावित था कि मैं भोजन न खाने पर भी, उनके यहाँ भात खाता था। प्रात एव साय काल जलपान न करने पर भी करता था। उनके स्नेहमय आतिथ्य के कारण मुझे कभी न कहने का साहस नही हुआ। वह हमारे नियम से इतनी परिचित हो गई थी कि ९ वर्षों के लम्बे काल में मुझे कभी कुछ माँगना नही पड़ा। हमारे समय से चाय आ जाती थी। समय पर पानी मिल जाता था। समय पर खाना मिलता था। मैंने एक क्षण के लिए भी अनुभव नही किया। अपने घर से बाहर हूँ। उनके पुत्र चि० राजीव जौहरी ९ वर्षों से बढ़कर १८ वर्ष के हो गये और कुमारी नीरज जौहरी १० वर्ष से बढ़कर १९ वर्ष की जैसे वय प्राप्त करती गई हमारी राजतरगिणी का भी उसी प्रकार आकार बढ़ता गया। उनका काशी का प्रतिष्ठित कुटुम्ब है। यह गुजराती परिवार लगभग ४५० वर्ष पूर्व काशी में गुजरात के भड़ौच जिला, ग्राम माड से आकर आबाद है। इसी कुटुम्ब के व्यवसाय की एक शाखा कलकत्ता में है। परिवार ने विशिष्ट महत्वपूर्ण स्थान काशी के सामाजिक जीवन में बना लिया है। उनके प्रति आभार प्रकट करना आभार शब्द मुझे छोटा लगता है।

एक त्यागी :

कोई घर-गृहस्थी त्यागने से त्यागी नही होता। सुस्थिर गृहस्थ, सन्त, विरागी, वनवासी से कही ऊँचा होता है। वह सासारिक मायाजाल में रहते, पद्मपत्र तुल्य माया जल से अलग रहता है। श्रीमहावीर त्यागी से परिचय होने के पूर्व उनके ज्येष्ठ भ्राता श्री धर्मवीर त्यागी से सन् १९२१ ई० काशी में सम्पर्क हो गया था। वह गणित के विद्वान हैं। प्रथम श्रेणी में विश्वविद्यालय से पास कर गान्धी जी के असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित हो गये थे। तत्कालीन विश्व प्रसिद्ध गणितज्ञ स्व० डॉ० गणेश प्रसाद के प्रिय शिष्यों में है। विद्यालय त्याग के पश्चात् उन्होंने पुनः अध्ययन नही आरम्भ किया।

श्री महावीर त्यागी से मेरा परिचय सन् १९२६ ई० में हुआ। कांग्रेस में हम दोनों ही कार्य करते थे। वह देहरादून निवासी थे। वही उनका कार्य क्षेत्र था। उत्तर प्रदेश की दो विरोधी सीमाओं पूर्व-पश्चिम में रहने पर भी हमलोगों का सम्पर्क प्रदेशीय कमेटियों तथा अखिलभारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशनों में हो जाया करता था। हम दोनो गान्धी वादी थे। अतएव यह मित्रता कभी शिथिल नही हुयी। ससद में आने पर हमारा कार्य क्षेत्र और विस्तृत हो गया।

त्यागी जी का जीवन उनके नाम के अनुरूप है। ग्राम धनवरसी, जिला मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश में दिसम्बर ३१ सन् १८९९ ई० में उनका जन्म हुआ था। तत्पश्चात् देहरादून, रैन बसेरा में उनका आवास हो गया। सन् १९२० ई० में प्रथम विश्वयुद्ध के सम्बन्ध में पूर्वी इरान में सैनिक अधिकारी थे। वही से उन्होंने असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के लिए मनावृत्ति से इस्तीफा दे दिया। उनका कोर्ट मार्शियल हुआ। सैनिक सेवा से उन्हें निवृत्त कर, उनकी मासिक वृत्ति, संचित धन आदि जब्त कर, बलूचिस्तान से निर्वासित कर दिया गया। लगभग साढ़े सात वर्ष उन्होंने देश के लिए कारावास का जीवन व्यतीत किया है। इनकी पत्नी तथा कन्या ने भी आन्दोलन में भाग लेकर, जेल जीवन व्यतीत किया है। उत्तर प्रदेश विधान सभा के सात वर्ष सदस्य रहने के पश्चात् भारतीय संविधान सभा के सदस्य चुने गये। उनकी स्वर्गीय पत्नी को भी विधान सभा की सदस्या होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समय से सन् १९७६ तक ससद के सदस्य निरन्तर बने रहे। केन्द्रीय भारतीय सरकार में राजस्व, सुरक्षा, पुनर्वास आदि अनेक विभागों के मन्त्री सन् १९५२ से १९६६ तक बने रहे। ताशकन्द समझौता से सहमति न होने के कारण मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दिया।

उनके जैसा, त्यागी निर्भीक, स्पष्टवक्ता, शिष्ट, परिहास प्रिय तथा हाजिर जवाब एवं दूरदर्शी होना दुर्लभ है। लम्बे राजनीतिक एव विधायकत्व काल में कोई उनकी ओर उँगली आजतक नही उठा सका। वह गरीब के गरीब रह गये। उनका दामन गन्दा नही हुआ। उनका जीवन कलक कालिमा से रहित है। सबसे बडी बात, उनका अपने ऊपर स्वय अनुशासन है। अपने ५० वर्षों के लम्बे काल में उनमें किसी प्रकार क्या चारित्रिक दोष मैंने नही देखा। मित्रधर्म पालन जानते हैं। मित्रो ने उनका साथ त्याग दिया परन्तु उन्होंने कभी मित्रो का साथ नही त्यागा। उनके रहन-सहन व्यवहार आचार-विचार में परिस्थितियों ने, पदो ने, कभी अन्तर नहीं आने दिया। जन्मजात शुद्ध शाकाहारी है। जिसके कारण हमारी उनकी मित्रता अनायास हो गयी।

उनके जैसे दृढ़ संकल्प मनुष्य कम मिलते हैं। भारत विभाजन के समय जिस समय समस्त देश साम्प्रदायिकता की अग्नि में झुलस उठा, उस समय उन्होंने सम्प्रदायों में शांति स्थापनार्थ भारत में स्वयं सेवको का विशाल संगठन किया, जो त्यागी पुलिस फोर्स के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उन्हें राजनीति में दलबन्दियों के कारण, वह स्थान नही मिल सका, जिसके वे पात्र थे और है।

कश्मीर आज भारत के साथ है। उसमें एक बड़ा योगदान श्री महावीर त्यागी को है। स्वर्गीय श्री प० जवाहर लाल से बच्चा के समान उनकी बराबर कहासुनी होती थी। लोग खड़, उनका तमाशा देखते थे। रफी अहमद किदवाई के वे दाहिन हाथ थे। अप्रासंगिक होने के कारण वहाँ उसका लिखना उचित नहीं है।

सन १९७२-१९७६ ई० दिल्ली में वर्ष में दो-एक बार के प्रवास काल में उनके यहाँ मैं ठहरता था। राज तरंगिणी के कुछ सन्दर्भ ग्रन्थों को उनके यहाँ रख दिया था। दिल्ली के संसदीय तथा पुरातत्व विभाग के पुस्तकालयों में जो नोट बनाता था, उन्हें त्यागी जी के यहाँ बैठकर लिखता था। उनकी कन्या श्रीमती उमादेवी का आतिथ्य भूलना कठिन है। इस परिश्रम काल में उनके दोनों बाल नाती सर्वश्री नानू तथा गिरीश के कारण स्वाभाविक वार्तालाप में दिमाग हलका हो जाता था। मैं गौरवान्वित हूँ, ऐसे महापुरुष का आतिथ्य प्राप्त कर।

समर्पण :

अर्धनारीश्वर के उपासक, राजतरंगिणी कारा पर किये गये, इस अन्तिम भाष्य को मैंने अपनी अर्धाङ्गिनी श्रीमती लीलावती देवी का समर्पण किया है। उस मैंने आदर्श भारतीय नारी रूप में देखा है। मेरी अनेक पराधीन तथा स्वाधीनता कालीन जेल यात्राओं तथा जेल में लम्बे जीवन व्यतीत करने पर भी उसने कभी स्वप्न में भी विरोध भाव नहीं प्रकट किया। न उसे प्रसन्नता हुई और न दुःख। निरपेक्ष घर गृहस्थी का काय देखती रही। एक पुत्र की माता कुछ घण्टों के लिए बनी। तत्पश्चात् सन्तान रहित होने पर भी उसे कभी निःसन्तान होने का दुःख नहीं हुआ। उसे तीन-चार खद्दर की धोतियाँ पर्याप्त थी। आभूषण वस्त्रादि लेने या पहनने की उसकी कभी रुचि नहीं हुई। असग्रही थी। लोभ से बहुत दूर थी। दान-पुण्य, लागो को खिलाने-पिलाने, आतिथ्य सत्कार में उसे रस मिलता था। मैं कहाँ जाता हूँ, क्या करता हूँ उसने कभी जिज्ञासा नहीं की। दिल्ली के लम्बे प्रवास में, कठिनता से दो तीन बार वहाँ गयी थी। उसे दिल्ली पसन्द नहीं आयी। उदयपुर में तीन वर्ष रहा। एक बार भी वहाँ नहीं गयी। गंगा स्नान तथा देवताओं के दर्शन में रुचि थी। मैं जो कुछ लिख सका, उसमें उसका सबसे बड़ा योगदान इसलिये है कि उसने मुझ घर गृहस्थी की चिन्ता से मुक्त कर दिया था। जेलों में कभी मुलाकात भेंट करने नहीं गयी। उसे बाहर निकलने में संकोच होता था। परदे की यह हालत थी कि विवाह के सोलह वर्ष पश्चात तक मुझे उसे पहचानना कठिन था। पुरानी प्रथा के अनुसार पुरुषों का अलग मकान या आवास होता था। घर में बड़ो के सामने, पति से बात करना, उसके सामने निकलना, अनुचित समझा जाता था।

एक बार दिल्ली में स्वर्गीय श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन मेरे बंगले पर आये। उनसे घरेलू व्यवहार था। मैं अपनी स्त्री के साथ बैठा था। उससे बातें कर रहा था। टण्डन जी कमरे में आ गये। वह तुरन्त पलङ्ग के नीचे चली गयी। पलङ्ग पर बैठे हम और टण्डन जी घण्टो बात करते रहे। वह चुपचाप दम साधे पड़ी रही। टण्डन जी एक बार दो संसद सदस्यों स्वर्गीय सर्वश्री हरिहर नाथ शास्त्री एवं लाला अचिन्त्यराम की पत्नी को उसे देखने के लिए भेजा। उनके सामने न हुयी। दूसरे दिन टण्डन जी संसद में चर्चा करते रहे—मैंने कभी न देखा और सुना कि स्त्री भी स्त्री से परदा करती है।

वह स्पर्शास्पर्श का कड़ाई से पालन करती है। बिना हाथ पैर धोए कोई घर में खाना नहीं खा सकता। वह स्वयं भोजन बनाती है। बरतन नौकरानी के साफ कर जाने पर, स्वयं उन्हें जल से धोती है। घर का बर्तन सर्वदा चमकता रहता है। उन्हें देखकर मन प्रसन्न होता है जैसे उसकी उज्ज्वल पवित्रता बरतने में उतर आती है। यद्यपि मैं अकेला हूँ परन्तु घर पर तीस चालीस व्यक्तियों का भोजन बनता

है। सम्बन्धियों के लडके हमारे यहाँ रहकर, पढते हैं। बाहर से लोग आते-जाते है। इतने मनुष्यो का भोजन रोज वह गत पचास वर्षों से बनाती हैं परन्तु कभी परिश्रम की शिकायत न की। हम लोग निरामिष है। उसका सादा भोजन स्वादिष्ट एव रुचिकर होता हैं।

आधुनिक महिलायें इसे, जडता प्रतिक्रिया वादिता और दकियानूसी मानेंगी। परन्तु इस परम्परा में अमोघ शक्ति है। इसे भारतीय नारियों ने लाख-लाखों वर्षों से भारत की इस अमोघ शक्ति को बचा रखा है। उसने उन्हें शक्ति तो दी है देश को भी शक्तिहीन होने से बचाया है।

उसे लगभग आठ वर्षों से पेट में टयूमर था। उसने कालान्तर में कैन्सर का रूप ले लिया। सितम्बर सन् १९७६ ई० में उसे कुछ दर्द मालूम हुआ। रामकृष्ण मिशन काशी में उसे दिखाया। कैन्सर की बात मालूम हुई। उससे न कहकर, स्पताल में भरती होने की बात कही गयी। वह स्पताल में भरती होने से बचने लगी। घर का काम-काज यथावत् करती रही। स्पताल में जाने का दिन निश्चित हो गया। उसने दो दिनों का समय और माँगा।

गगा स्नान करने गयी। देवताओं का दर्शन किया। गोदान किया। अन्नदान किया। गृहस्थी में जिसका जो कुछ देना-पावना था समाप्त किया। स्पताल में भरती होने के दिन पूर्ववत् भोजन बनाया और लोगों को खिलाया। आपरेशन होने के एक दिन पूर्व, मैं उससे मिलने गया। उसने प्रणाम कर, गलतियों के लिए क्षमा माँगा। मैंने बहुत पूछा। कोई इच्छा है? उसने केवल यही कहा। हमारी कोई इच्छा नही है। कुछ रुपया रखा है। उससे क्रिया-कर्म करा दीजिएगा?

सितम्बर १४ सन् १९७६ का दिन था। तीन दिनो से लगातार घोर वर्षा हो रही थी। बादल गरज रहे थे। बिजली कडक रही थी। किसी को उसके जीने की आशा नही थी। ज्योतिषियो ने, हस्त रेखा-विदो ने, जो अपने कुटुम्ब के हित चिन्तक थे, मित्र थे, आशा त्याग दिये थे। मैंने न आशा त्यागा था। न निराश हुआ। आपरेशन के समय वह शान्त थी। एक बार समझ लिया गया। वह आपरेशन टेबुल पर अन्तिम स्वाँस ले लेगी। किन्तु कुछ ही समय पश्चात् उसमें नव शक्ति उत्पन्न हो गयी। सफल आपरेशन हुआ। लगभग दो किलो का पत्थर जैसा कठोर मास का लोथा पेट से निकला। बच्चेदानी में कैंसर फैल चुका था। वह भी साफ किया गया।

डाक्टरो को आशा नही थी। वह जीवित रह सकेगी। किन्तु कुछ दिनो में आशातीत सुधार होने लगा। एक प्रतिशत भी किसी प्रकार का शारीरिक उत्पात नही हुआ। इन सारी परिस्थितियों में न तो वह घबडाई न उसे चिन्ता हुई। वह जीवित रहेगी या मरेगी। स्पताल में भरती होने के दिन से प्राइवेट केबिन में मेहतारानी, भगी सबका आना बन्द हो गया। घर के ही लोग स्नानघर, आदि साफ करते थे। किसी गैर हिन्दू तथा अस्पृश्य दाई का आना वर्जित था।

बात यहाँ तक बढ गयी थी। कुछ दाइयाँ दवा पिलाने के पहले कहा करती थी—वे ब्राह्मणी है। तथापि उसने स्पताल का जल ग्रहण नही किया। गगा जल आता था। वही पीती थी। पका अन्न बिना स्नान किये कैसे खाया जाता अतएव फल ही एक मात्र आहार रह गया। डाक्टरो का कोई भी आदेश इस दिशा में कार्य न कर सका। आज यह भूमिका लिखते समय वह स्वस्थ है। चलती है। घूमती है। डाक्टरों के लिए यह स्वास्थ्य लाभ आश्चर्य का विषय है। अनुसन्धान का विषय है। उसके लिए भगवान की शक्ति है। जिस पर उसे अटूट विश्वास है। स्पताल की कोई भी दाई या व्यक्ति उसके स्पर्शा-पृश्य, खान-पान आदि से कभी नाराज नही हुआ। परिस्थितियो में अडिग रहना, स्वत. महान् शक्ति की परिचायक है। वह दूसरो के आदर का कारण बन जाता है।

पद्मभूषण ठाकुर जयदेव सिंह संगीत एवं दर्शन शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् हैं। श्रीवर ने तत्कालीन राग, रागिनी, एवं वाद्यों का प्रचुर उल्लेख किया है। कितने ही संगीत शास्त्र के पण्डितों से जिज्ञासा किया। कोई अध्ययन कर विषय पर प्रकाश न डाल सका। नई दिल्ली से ठाकुर साहब से परिचय था। वह संगीत विभाग आकाशवाणी के निर्देशक थे। उनसे चर्चा किया। सहज सहृदयता से श्रीवर लेकर अध्ययन किया। जहाँ मेरी पहुँच नहीं थी। रागों एवं वाद्यों के तत्कालीन एवं वर्तमान रूपों पर प्रकाश डाला है। ठाकुर साहब का वर्तमान जीवन राजर्षि अनुरूप है। वे हमारे महाल औरङ्गाबाद वाराणसी के पास सिद्धगोर मुहल्ला में काशीवास करते हैं। काशी के आध्यात्मिक जीवन पर उनके अपने स्वयं विचार है। वे कहा करते हैं। काशी में एक प्रकार की स्पन्दन का अनुभव होता है। काशी का निवासी स्वतः अध्यात्म के पास पहुँचता है। मैंने इस पर कभी ध्यान नहीं दिया था। तत्पश्चात् बाहर से आने वालों से सम्पर्क स्थापित किया। जिज्ञासा किया। कितने ही लोगों ने उत्तर दिया है। काशी में एक प्रकार की शान्ति है मुसलमानों ने उसे दूसरे शब्दों में कहा—यहाँ खामोशी महसूस होती है। अन्य ही पहुँचे लोगों ने बताया। उन्हें यहाँ से फकीरों, सन्तों की सुगन्धि मिलती है। यहाँ जन्म से ही, तथा कुटुम्ब के लम्बे ३०० वर्ष के निवास से काशी के जीवन से अभ्यस्त हो गया हूँ। इसलिए काशी के नैसर्गिक रूप को पहचान नहीं सका था। मैं ठाकुर साहब के प्रति सादर आभार प्रकट करता हूँ।

पुस्तक प्रस्तुत करने में श्री पशुपति प्रसाद द्विवेदी आचार्य, एम० ए० प्राध्यापक, उत्तर रेलवे कालेज वाराणसी का आभारी हूँ। उनका सहयोग अन्य राज तरंगिणियों के समान, इस रचना काल में मिलता रहा है। उनका संस्कृत ज्ञान विगत दश वर्षों से गम्भीर होता गया है। उनके पारिश्रम एवं व्यवहार में समय अन्तर डालने में असमर्थ हो गया है। उनके सुशील स्वभाव एवं शोधक प्रवृत्ति के कारण मुझे, राहत मिलती रही है। उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

श्री विट्ठल दास जी चौखम्बा संस्कृत सीरीज ने अपनी स्वाभाविक सहृदयता से प्रकाशन का भार उठाया है। इसके लिए उनका कृतज्ञ हूँ। पुस्तक का प्रूफ श्री प्रेम नारायण शर्मा चौखम्बा ने देखा है। सर्वश्री अवधाल नारायण सिंह तथा माधव प्रसाद शर्मा प्रूफ पहुँचाने तथा लाने में जो सहायता प्रदान किये हैं, वह स्तुत्य है। वर्द्धमान मुद्रणालय के मालिक श्री चि० राजकुमार जैन घर जैसा कार्य समझ कर, पुस्तक मुद्रण करने की कृपा की है। मैं उक्त सभी महानुभावों का आभारी हूँ, जिनके सहयोग बिना कार्य पूर्ण होना कठिन था।

अन्त में उस अव्यक्त शक्ति को नमस्कार करता हूँ। जिसकी प्रेरणा से मैं इस कार्य में लगा। कितनी ही बार पुनः राजनीति में प्रवेश करने की इच्छा हुई परन्तु उस अव्यक्त शक्ति ने मुझे दुनिया से अलग रखकर, कार्य में रत रखा। उसकी कृपा से समस्त आठों खण्डों का कार्य समाप्त हुआ, अन्यथा मुझमें शक्ति तथा धैर्य कहाँ था?

औरंगाबाद, वाराणसी नगर,
९ नवम्बर सन् १९७६ ई०

—रघुनाथ सिंह

उद्‌गम

● **जैन तरंगिणी** :

राज तरंगिणी रचना परम्परा में जैन राज तरंगिणी का तृतीय स्थान है। इसके पूर्व कल्हण एवं जोनराज ने राजतरंगिणियो का प्रणयन किया था। श्रीवर पूर्व कालीन परम्परा का निर्वाह करता है। ग्रन्थ का शीर्षक राजतरंगिणी देता है। पूर्व दोनों राजतरंगिणियो और प्रस्तुत रचना में भेद प्रकट करने के लिए, जैन शब्द जोड़ दिया है।

श्रीवर ने इतिपाठ के अतिरिक्त ग्रन्थ का पूरा नाम और कही नही लिखा है। प्रारम्भ में वह केवल इतना लिखता है—'इसी जोनराज का शिष्य मैं श्रीवर पण्डित राजावली ग्रन्थ के शेष को पूर्ण करने के लिए उद्यत हूँ' (१ १ ७) तरग तीन में वह ग्रन्थ का नाम जैन राजतरंगिणी न देकर, केवल राजतरंगिणी लिखता है—'अपने आँखो से देखे तथा स्मरण किये गये, राजाओ की विपत्ति वैभव, आदि विकृतियो के कारण, यह राजतरंगिणी किसमें वैराग्य नही उत्पन्न करेगी ?' (३ ४)

श्रीवर राज कवि था। सुल्तान जैनुल आबदीन के प्रश्रय में वृद्धि प्राप्त किया था। स्वामी के प्रति आभार प्रकट करने के लिए, राजतरंगिणी के साथ सुल्तान जैनुल आबदीन का संक्षिप्त नाम 'जैन' जोड दिया है। तत्कालीन जगत के राज कवियो की यही परम्परा रही है। 'विक्रमाक देवचरित', 'पृथ्वीराज विजय', 'कुमारपाल चरित' 'पृथ्वीराज', विसलदेव' रासो आदि ग्रन्थ इसके ज्वलन्त उदाहरण है। जैनुल आबदीन के नाम पर जैन नगर, जैन दुर्ग, जैन कुल्या, जैन कदल, जैन गगा, जैन ग्राम, जैन गिर, जैन लका, जैन वाटिका, जैन सर आदि रखे गये थे। उस शृखला में राजतरंगिणी के साथ जैन जोडकर, उसने परम्परा का अध्याय जैसे बन्द किया है।

श्रीवर सुल्तान जैनुल आबदीन को जैन नृपति (३·४०२, ४ ४७३) जैन भूप (२ १२७, ३ १३८, १४१, ५५६) जैन नृप (४ ५४, २:३०, ३ १५३, १५४) जैन महीपत (२ १३२, ३ २६५) आदि 'जैन' शब्द से सम्बोधित करता है।

जैनुल आबदीन के जीवन काल में उसके नाम पर, संस्कृत में 'जैन तिलक' (१:३ ३४) 'जैन प्रकाश' (१ ४ ३८) 'जैन विलास' आदि काव्यों की रचनाएँ की गयी थी।

● **राजकवि** :

श्रीवर राज कवि था। राज कवि की वन्दना करता है। (१ १ ३) कवि की वन्दना वह पुन करता है—'भूतकालीन जिस राज्य वृत्तान्त को अपनी वाणी की योग्यता से वर्तमान करता है, वह योगीश्वर कवि वन्दनीय है।' (३:२)

सुल्तान जैनुल आबदीन ने श्रीवर का लालन-पालन, पुत्रवत किया था। सुल्तान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते, वह लिखता है—"तत् तत् गुणों के आदान तथा एव सम्पत्ति के प्रदान पूर्वक ग्राम, हेमादि अनु-

ग्रहों से सुल्तान द्वारा पुत्रवत वर्धित किया गया। अतएव उसके असीम प्रसाद की निस्कृति (विस्तार) की अभिलाषा से, उसके गुणों द्वारा आकृष्ट मन होकर, मैं उसके वृतान्त का वर्णन करता हूँ।" (१ १:११-१२)

श्रीवर सुल्तान की सेवा में था। उसका वह स्पष्ट उल्लेख करता है—'जिस नृप की जीविका का भोग, प्रतिग्रह एवं अनुग्रह प्राप्त किया, श्रीवर पण्डित ऋणमुक्त होने के लिये, उसका वृत वर्णन करता हूँ।' (३ ३) श्रीवर आभ्यासिक कवि है। उसने गुरु जोन राज से शिक्षा प्राप्त किया था। साहित्य साधना का अभ्यास किया था। उसकी रचना मौलिक है।

राजतरंगिणी :

तरंगिणी शब्द कल्हण के पूर्व भी संस्कृत साहित्य में प्रचलित था। कल्हण ने सर्वप्रथम राजतरंगिणी शब्द का प्रयोग इतिहास रचना के लिए किया है। कल्हण के महाकाव्य के कारण, राजतरंगिणी शब्द प्रसिद्ध होकर, पुरानी तरंगिणी शीर्षक ग्रन्थों का महत्त्व कम कर दिया।

जोन राज ने कल्हण की राजतरंगिणी से प्रेरणा ली थी। तरंगिणी के सूखे प्रवाह को दो शताब्दियों पश्चात पुनः प्रवाहित किया। उसके कारण धारा सूखने नहीं पायी। कल्हण ने कलियुग के प्रारम्भ से सन् ११४९ ई० का इतिहास प्रथम राजतरंगिणी में लिखा था। सन् ११४९ ई० से सन् १४५९ ई० का इतिहास जोन राज ने द्वितीय राजतरंगिणी में लिखा है। सन् १४५९ ई० से १४८६ ई० का इतिहास श्रीवर ने तृतीय अर्थात् जैनराज तरंगिणी रूप में प्रस्तुत किया है। चौथी राजतरंगिणी श्री प्राज्य भट्ट ने लिखा है। वह अप्राप्य है। उस राजतरंगिणी में सन् १४८६ [redacted] सन् १५१३ ई० का इतिहास है। उसके विषय में कोई नवीन सूचना अभी तक नहीं मिली है। उस ग्रन्थ के प्राप्त होने पर ही, साधिकार उसके विषय में कोई मत व्यक्त किया जा सकता है।

अन्तिम अर्थात् पचम राजतरंगिणी का रचनाकार शुक है। प्राज्य भट्ट की राजतरंगिणी न मिलने के कारण, उसे चौथी राजतरंगिणी की संज्ञा कुछ लेखकों ने दी है। कलकत्ता तथा बम्बई संस्करणों में शुक राजतरंगिणी को प्राज्य कृत, चौथी राजतरंगिणी मानकर, गलतियाँ की गयी हैं। उसे चौथी राजतरंगिणी मानना संगत नहीं है।

शुक ने शाहमीर वंश की पतनावस्था देखा था। उसने सन् १५१३ ई० से १५३८ ई० का इतिहास लिखा है। वह काव्य तथा कथावस्तु की दृष्टि से राजतरंगिणियों में चौथा ही स्थान रखती है।

श्रीवर ने ग्रन्थ-कथा प्रसंग में ग्रन्थ का नाम 'जैन' राजतरंगिणी नहीं दिया है। केवल इति पाठ में 'जैन' शब्द राजतरंगिणी के पूर्व लिखा है। कुछ पाण्डु लिपियों में केवल राजतरंगिणी शीर्षक है।

श्रीवर के गुरु जोन राज ने अपने ग्रन्थ का नाम राजतरंगिणी रखा था। शुक ने भी ग्रन्थ का नाम राजतरंगिणी रखा है। श्रीवर क्यों 'जैन' नाम लिखा है? कोई कारण होना चाहिए। श्रीवर के समय 'जैन विलास' 'जैन चरित', 'जैन तिलक' आदि ग्रन्थों की रचनाएँ हुई थी। उनमें केवल जैनुल आबदीन का ही चरित्र वर्णन है।

उक्त ग्रन्थों के समान अपने ग्रन्थ की विशेषता दिखाने के लिए श्रीवर ने 'जैन' राजतरंगिणी नाम रख, उन ग्रन्थों की पंक्ति में श्रेष्ठ स्थान लेना चाहता था। यहाँ एक तर्क उपस्थित किया जा सकता है। प्रथम तरंग में लिखता है। वह जैनुल आबदीन और उसके पुत्र का चरित्र वर्णन करना चाहता था। जैन राजतरंगिणी का नाम तभी सार्थक माना जाता, जब उसमें केवल जैनुल आबदीन का वर्णन होता।

शीर्षक से ही ग्रन्थ का परिचय तथा रचना का उद्देश्य मालूम होता है। परन्तु श्रीवर ने चार सुल्तानो का वर्णन किया है। ऐसी परिस्थिति में 'जैन' वश का इतिहास हो जाता है, न कि केवल जैनुल आबदीन का।

श्रीवर ने इतिपाठ पाचवें सुल्तान फतहशाह के राज्य प्राप्ति के समय लिखा था। फतहशाह के राज्य प्राप्ति का वर्णन विस्तार के साथ लिखता है।

उसके अन्तिम इतिपाठ में पाठ भेद बहुत अधिक मिलते हैं। कुछ प्रतियों में केवल राजतरगिणी और कुछ में जैन शब्द जुडा है। इसलिए क्रम एव परम्परा को देखते हुए, इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 'जैन' शब्द कालान्तर में लिपिको ने जोड दिया है।

राजतरगिणियो का ऐतिहासिक महत्त्व है। उनमें प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री है। कल्हण राजतरगिणी के सातवें के उत्तरार्ध एव आठवें तरग का प्रत्यक्षदर्शी है। सातवें तरग के अन्तिम चरण तथा पूरे आठवें तरग की घटनाओ का अर्थात् सन् १०९८ से ११४९ ई० के वर्षों के इतिहास का उसे प्रामाणिक ज्ञान था। उसके इतिहास की प्रामाणिकता, उसके प्रत्यक्ष दर्शी होने के कारण है।

कल्हण की राजतरगिणी काश्मीर का गौरव उपस्थित करती है। जोन की राजतरगिणी काश्मीर की पतनावस्था का भयकर दृश्य उपस्थित करती है। श्रीवर की राजतरगिणी सुख से दुख की ओर ले जाती है। शुक में शाहमीर वश के पतनावस्था का चित्रण है। जोनराज सन् ११४९ से १३८९ ई० की घटनाओ का प्रत्यक्षदर्शी नही है। परन्तु सन् १३८९ ई० से सन् १४५९ ई० सत्तर वर्ष की घटनाओ का प्रत्यक्षदर्शी है। इसी प्रकार श्रीवर सन् १४५९ से १४८६ ई० २७ वर्षो, प्राज्य भट्ट सन् १४८६ से १५१३ ई० २७ वर्षो और शुक सन् १५१३ से १५३८ ई० अर्थात् २५ वर्षो के घटनाओं एव इतिहास के प्रत्यक्षदर्शी हैं। कल्हण जोनराज, श्रीवर, प्राज्य भट्ट, एव शुक सबने मिलकर प्रत्यक्षदर्शी रूप में २०० वर्षो का इतिहास लिखा है। इस रचना की ऐतिहासिकता एव सत्यता में अविश्वास करना अनुचित होगा।

राजतरगिणी शब्द उसकी व्युत्पत्ति तथा उसके इतिहास आदि के विषय में लेखक कृत कल्हण राजतरगिणी प्रथम खण्ड की भूमिका पृष्ठों ४५-४९ तथा १७-२१ जोन कृत राजतरगिणी में प्रकाश डाला गया है। उसे पुन लिखना पुनरुक्ति दोष है।

•

ग्रन्थ योजना

श्रीवर ने राजतरगिणी चार तरगो में विभाजित किया है। प्रथम तरग सात सर्गों में विभाजित है। परन्तु तरग २, ३, एव ४ में सर्ग नही है। कल्हण की राजतरगिणी तरगो में विभाजित है। जोनराज ने तरगों एव सर्गों में राजतरगिणी विभाजित नही किया है। प्राज्य भट्ट के विषय में कुछ नही कहा जा सकता। शुक राजतरगिणी भी तरगो में विभाजित है। श्रीवर ने कल्हण के समान तरगो में ग्रन्थ विभाजित करने के साथ ही साथ प्रथम तरग को सात सर्गों में विभाजित किया है। विषय प्रतिपादन की दृष्टि से श्रीवर का वर्गीकरण उचित है।

•

इतिपाठ

श्रीवर ने राजतरगिणी लिखने की दो योजनाएँ बनाई थी। प्रथम योजना के अनुसार, उसने प्रथम तरग एव दूसरी योजना के अनुसार द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ तरग की रचना किया था। श्रीवर के प्रत्येक सर्ग एव तरग के इतिपाठ में वर्णित विषय का निर्देश किया है। आधुनिक रचना शैली के अनुसार सर्ग किंवा तरग अथवा अध्याय का विषय शीर्षक में लिख दिया जाता है। पुराकालीन सस्कृत साहित्य में अध्याय किंवा

सर्ग का शीर्षक इतिपाठ में वृत्त की शैली थी। प्रथम सर्ग में मल्लशिला युद्ध वर्णन, द्वितीय में दुर्भिक्ष वर्णन तृतीय में आदमखान निर्वासन तथा हाजीखान सयोग, चतुर्थ में पुष्प लीला, पचम में क्रमशर यात्रा, षष्ठ में चित्रोपचय शिल्प वर्णन तथा सातवें सर्ग में प्रथम तरग का प्रतिपाद्य विषय जैन शाहि वर्णन लिखा है। इसी प्रकार द्वितीय तरग के इतिपाठ में हैदर शाह राज्य वृत्तान्त, तृतीय में हसन शाह राज्य वृत्तान्त तथा चतुर्थ में फतिह शाह राज्य प्राप्ति वर्णन हैं।

कल्हण ने इतिपाठो में तरगो के प्रतिपाद्य विषयो को नही लिखा है। उसने केवल तरंग समाप्ति लिखकर छोड दिया है। जोनराज ने मेरे मत से स्वय इतिपाठ नहीं लिखा है। उसमें भी केवल तरग समाप्त लिखकर तरग बन्द किया गया है। श्रीवर ने अपने पूर्व राजतरगिणीकारों कल्हण तथा जोनराज की अपेक्षा शीर्षक किंवा प्रतिपाद्य विषय लिखकर, पुरातन शैली को और विकसित किया है। शुक ने प्रथम तरग के इतिपाठ में 'महम्मदशाहराज्यभ्रंशो नाम प्रथमस्तरग लिखकर, श्रीवर का अनुकरण किया है। शुक ने द्वितीय तरग का इतिपाठ लिखा ही नही है। अतएव प्रतिपाद्य विषय किंवा शीर्षक नही दिया गया है।

कल्हण तथा श्रीवर के इतिपाठो में अन्तर है। कल्हण ने पिता तथा अपने नाम का उल्लेख और परिचय इतिपाठों में दिया है। अष्टम तरङ्ग के इतिपाठ में कल्हण अपने तथा अपने पिता के परिचय के साथ ही साथ राजतरगिणी को महाकाव्य की सज्ञा भी दिया है। किन्तु श्रीवर तथा शुक ने केवल अपने नाम ही इतिपाठ में लिखे है। उसमें अपने वश, पिता का नाम, परिचय तथा रचना काव्य या महाकाव्य है, न लिखकर, केवल राजतरगिणी रचनाकार लिखकर, तरग समाप्त किया है।

नाम :

श्रीवर ने इतिपाठों में अपना नाम श्रीवर लिखा है। कुटुम्ब अथवा कुल का परिचय नही देता। पिता का भी कही नाम नही दिया है। इसी प्रकार जन्मस्थान के विषय पर भी कुछ प्रकाश नही डालता। उसने सुल्तान हसन के प्रसग में अपना नाम केवल श्रीवर लिखा है। इससे पता चलता है कि वह केवल श्रीवर नाम से ही पुकारा जाता था। उसके नाम के साथ कोई उपाधि नही थी। (३ २६३) शुक ने श्रीवर का उल्लेख करते हुए उसका नाम केवल श्रीवर लिखा है। इससे प्रकट होता है कि राजानक जोनराज के समान वह राजपदवी विभूषित कवि नही था। (शुक १ ६)

इतिपाठों के प्रारम्भ में उसने अपनी सज्ञा श्रीवर पण्डित दी है। पण्डित शब्द केवल जाति का सूचक है। कल्हण ने भी अपने नाम के साथ पण्डित लिखा है (१ १:७)। इससे प्रकट होता है कि श्रीवर ब्राह्मण था। हिन्दू था। शिवभक्त था, अर्द्धनारी की वन्दना से यह स्पष्ट होता है।

उसके वर्णन से प्रतीत होता है। श्रीनगर का निवासी था। श्रीनगर का अत्यधिक वर्णन किया है। श्रीवर अपने गोत्र, उपजाति के विषय में कोई सूचना नही देता। इतिपाठ में वह केवल पण्डित श्रीवर ही लिखता है। इससे प्रकट होता है। कल्हण अथवा जोनराज के समान किसी ख्यात वश का नही था। साधारण ब्राह्मण कुल का था।

जन्म मृत्यु :

जन्म के विषय में कुछ पता नही चलता। उसका जन्म कब हुआ था। मृत्यु का अनुमान लगाया जा सकता है। चतुर्थ तरग के प्रणयन के पश्चात् उसकी मृत्यु हुई थी। श्रीवर ने चतुर्थ तरग में अन्तिम बार लौकिक सवत् ४५६२ सन् १४८६ दिया है। जोनराज तथा शुक अपनी रचना के अन्त में इतिपाठ नही

लिखे हैं। जिसमे प्रकट होता है। ग्रन्थ बिना समाप्त किये ही उनकी अकस्मात् मृत्यु हो गई थी। श्रीवर ने अन्तिम चतुर्थ तरंग का इतिपाठ लिखा है। कल्हण अपने इतिपाठ में राजतरंगिणी समाप्ति की सूचना तरंग समाप्ति के साथ देता है। शुक के उल्लेख से पता चलता है कि जोनराज तथा श्रीवर ने मिलकर ६२ वर्षों के इतिहास की रचना की थी।

श्रीवर ने सन् १४८६ ई० तक का इतिहास लिखा है। उसमें ६३ वर्ष घटा देने से सन् १४२४ ई० होता है। जैनुल आबदीन सन् १४१९ और १४२० ई० में सुल्तान हुआ था। श्रीवर ने अपने को जोनराज का शिष्य लिखा है। श्रीवर ने जोनराज की मृत्यु का समय १४५९ ई० दिया है। जोनराज का शिष्य बाल्यावस्था में ही श्रीवर रहा होगा। जोनराज की ख्याति पृथ्वीराज विजय भाष्य, किरातार्जुनीय, श्रीकण्ठ भाष्यो के कारण तत्कालीन संस्कृत जगत् में हो गयी थी। श्रीवर की मृत्यु सन् १४८६ ई० के समीप और उसकी आयु ६०, ७० वर्ष मान ली जाय तो, उसका जन्मकाल सन् १४१० ई० के पश्चात् ही ठहरता है। अनुमान के आधार पर जन्म काल सन् १४१०=१५०० ई० के अन्दर मान सकते हैं। तरंग समाप्ति की बात फतिहशाह राज्य प्राप्ति चतुर्थस्तरंग लिखता है। तरंग एवं राजतरंगिणी समाप्ति में अन्तर है। तरंग समाप्ति की बात लिखता है। जैन राजतरंगिणी समाप्ति की सूचना नहीं देता। इससे यह प्रकट होता है कि श्रीवर ने ग्रन्थ समाप्त नहीं किया था। उसे अपने मृत्यु की आशंका नहीं थी। वह अपने मृत्यु काल पर्यन्त के राजाओं का चरित लिखना चाहता था। जोनराज तथा शुक ने भी यही किया था।

श्रीवर के ग्रन्थ लिखने की योजना कल्हण के निकट है। जोनराज तथा शुक की जो भी योजना रही हो, उसकी पूर्णता का दर्शन नहीं मिलता। वे ऐसे कवियों की रचनाएँ हैं, जो लिखते-लिखते अकस्मात् शान्त हो गये थे। अथवा इस योग्य नहीं थे कि, इतिपाठ आदि लिखकर, ग्रन्थ की पूर्णता या समापन करते। श्रीवर ने योजनाबद्ध रचना की है।

उसने ऐतिहासिक महत्वपूर्ण घटनाओं एवं विषयों को सर्ग एवं तरंग बद्ध किया है। एक सुल्तान का चरित्र एक तरंग में लिखा है। प्रथम तरंग में जैनुल आबदीन, द्वितीय में सुल्तान हैदर शाह, तृतीय में सुल्तान हसनशाह तथा चतुर्थ में महम्मद शाह के राज प्राप्ति एवं समाप्ति का इतिहास लिखकर, प्रत्येक तरंग को अपने में पूर्ण बना दिया है। कल्हण ने प्रत्येक वंश का इतिहास एक-एक तरंग में पूर्ण किया है। जोनराज ने यह शैली नहीं अपनाया है। शुक ने श्रीवर की शैली की अपेक्षा जोनराज की शैली का अनुकरण किया है। श्रीवर ने जोनराज की अपेक्षा कल्हण की वर्णन शैली का अनुकरण किया है।

चतुर्थ तरंग के पश्चात् भी अपने जीवन पर्यन्त श्रीवर राजतरंगिणी रचना क्रम जारी रखना चाहता था। चतुर्थ तरंग में राजतरंगिणी समाप्त न लिखने से यह स्पष्ट हो जाता है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि श्रीवर की मृत्यु फतहशाह के प्रथम राज्यकाल के प्रथम चरण में हुई थी। फतहशाह का प्रथम राज्यकाल सन् १४८६ से १४९३ ई० है। फतहशाह के पश्चात् महम्मद शाह द्वितीय का राज्यकाल सन् १४९३ ई० से सन् १५०५ ई० है। यदि सन् १४९३ ई० तक श्रीवर जीवित रहता, तो अपने रचना एवं तरंगों की योजनानुसार, पंचम तरंग फतहशाह राज्यकाल समाप्ति तक अवश्य लिखता। उक्त कारणों से यह अनुमान लगाना तथ्यपूर्ण होगा कि श्रीवर की मृत्यु सन् १४८६ के पश्चात और सन् १४९३ ई० के पूर्व हुई थी। सात वर्षों में किस वर्ष मृत्यु हुई थी कोई प्रमाण नहीं मिलता। यदि प्राज्य भट्ट की राजतरंगिणी मिल जाय, तो सम्भव है, इस विषय और श्रीवर के जीवन पर, कुछ और प्रकाश पड सकता है। श्रीवर के पश्चात् प्राज्य भट्ट ने सन् १५१३ ई० का इतिहास लिखा है।

शुक लिखता है श्री जोनराज एवं विद्वान् श्रीवर ने बासठ वर्ष यावत् दो मनोरमा राजावली ग्रन्थ ग्रन्थित किये थे। (शुक १ : ६) जोनराज की मृत्यु सन् १४५९ ई० में हुई थी। श्रीवर अन्तिम लौकिक वर्ष ४५६२ = सन् १४८६ ई० देता है। इसी समय मुहम्मद शाह प्रथम बार राज्यच्युत और फतहशाह प्रथम बार काश्मीर [redacted] सुल्तान हुआ था।

● शिक्षा :

श्रीवर स्वयं लिखता है राजतरंगिणी रचना करते हुए विद्वान् जोनराज ने ३५वें वर्ष (लौ० ४५३५ = सन् १४५९ ई०) शिव सायुज्यता प्राप्त किया। इसी जोनराज का शिष्य मैं श्रीवर पण्डित राजावली ग्रन्थ के शेष को पूर्ण करने के लिये उद्यत हूँ।" (१ : १ : ६, ७) 'कहाँ मेरे उस गुरु का काव्य और कहाँ मन्दमति मेरा वर्ण मात्र की समानता से अकोल क्या कर्पूर हो सकता है ?" (१ : १ : ८) इससे स्पष्ट हो जाता है कि श्रीवर का गुरु जोनराज था।

द्वितीय राजतरंगिणी का रचनाकार राजानक जोनराज संस्कृत साहित्य का प्रकाण्ड विद्वान् था। तत्कालीन राज्य की सर्वश्रेष्ठ उपाधि राजानक पदवी से विभूषित था। जैनुल आबदीन सुल्तान का राजकवि था। उसने मङ्खक कृत श्रीकण्ठ चरित, अज्ञात कविकृत पृथ्वीराज विजय, तथा भारविकृत 'किरातार्जुनीय' जैसे संस्कृत महाकाव्यों की टीका की थी। जोनराज सिद्धहस्त लेखक था। काव्य व्यञ्जना जानता था। उसने राजतरंगिणी में अलंकारों का यथा स्थान सुन्दरतापूर्वक प्रयोग किया है।

जोनराज काव्य मर्मज्ञ था। रामायण, महाभारत, भास, बाण, कालिदास, जयानक, आदि कवियों की रचनाओं का अध्ययन किया था। ज्योतिष, दर्शन आदि का गम्भीर विद्वान् था। श्रीवर उसी महाकवि का शिष्य था। उसे इस बात का गौरव था। जोनराज का शिष्य था। श्रीवर ने जोनराज की शिष्य परम्परा का निर्वाह राजतरंगिणी की रचना कर किया है। श्रीवर की महत्ता इसी से प्रकट होती है कि वह जोनराज की महत्ता स्वीकार कर, उसके प्रति, अपने गुरु के प्रति, आभार एवं आदर प्रकट करता है।

● राजतरंगिणी ज्ञान :

जोनराज के पास पुस्तकालय था। साहित्य एवं इतिहास ग्रन्थों का संग्रह था। जोनराज ने स्वयं काश्मीर के ३१० वर्षों का इतिहास लिपिबद्ध किया था। उसने कल्हणकाल से अपनी मृत्युकाल का इतिहास लिखा था। कल्हण की राजतरंगिणी का अध्ययन श्रीवर ने अपने गुरु के पास अवश्य किया होगा। उसका गुरु स्वयं इतिहास लिख रहा था। उसके पास तत्कालीन इतिहास ग्रन्थों का होना अनिवार्य था। श्रीवर के समय जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी का प्रणयन किया था। उन दिनों शिष्य गुरु की सहायता करते थे। गुरु के निवासस्थान पर, उनका अधिक समय व्यतीत होता था। यह परम्परा काशी में बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों तक मेरी जानकारी में प्रचलित थी।

श्रीवर ने कल्हण कृत राजतरंगिणी से उपमा तथा अपने ग्रन्थ के लिये इतिहास सामग्री ली है। उसने ललितादित्य, जयापीड आदि राजाओं का उल्लेख किया है। ललितादित्य के इच्छा पत्र (वसीयत नामा) का भाव वह उद्धृत करता है—'यहाँ के नृपति सर्वदा अपना भेद रक्षित रखे, क्योंकि चार्वाकों के समान इन लोगों को परलोक से भय नहीं होता। ललितादित्य की निर्धारित इस नीति का जो उल्लंघन कर, परस्पर वैर करते हैं, वे मन्त्री नष्ट हो जाते हैं।' (३:२९७–२९८) द्रष्टव्य : रा० ४:३४२–३५९) श्रीवर एक राजतरंगिणी की ओर सूचना देता है।

उसके समय दश राजाओ के चरित के साथ सस्कृत में एक और राजतरंगिणी ग्रन्थ था। उसका अनुवाद सुल्तान जैनुल आबदीन ने फारसी में कराया था—'सस्कृत भाषा में लिखी गयी दश राजाओ का ग्रन्थ राजतरगिणी को फारसी भाषा द्वारा पढने योग्य कराया।' शाहमीर से जैनुल आबदीन काल तक दश सुल्तान हुए हैं। जोनराज ने दश सुल्तानो का वृत्तान्त लिखा है। यदि यह जोनकृत राजतरगिणी होती तो, रचनाकार अपने गुरु जोनराज का उल्लेख इस प्रसग में श्रीवर अवश्य करता। जोनराज की राजतरगिणी में २४ राजाओ एव सुल्तानो का चरित्र लिखा गया है। सम्भावना यही है कि इस राजतरगिणी का रचनाकार कोई और व्यक्ति था। मूल ग्रन्थ तथा उसका फारसी अनुवाद अभी प्रकाश में नही आया है। शुक इस ग्रन्थ का उल्लेख नही करता।

● अध्ययन :

श्रीवर ने शास्त्रों एव विविध विद्याओ का गम्भीर अध्ययन किया था। उसके ग्रन्थ अवलोकन से, सगीत शास्त्र, भरत का नाट्य शास्त्र, धर्मशास्त्र, वैशेषिक दर्शन, योग दर्शन, कल्पशास्त्र, मोक्षोपम साहित्य, चार्वाक तथा कला मूलक ग्रन्थो के अध्ययन का आभास मिलता है।

श्रीवर बृहद् कथा, गीत गोविन्द, योग वासिष्ठ, आदि पुराण, हाटकेश्वर सहिता का राजतरगिणी में उल्लेख करता है। सुल्तानो का उन्हें पढकर सुनाया करता था। (३ १, १ ५:८०, १ २:८४, १ ५:८४, १ ५:८६, १ ४ १८, ३ ५४३, २५७, १ ५ ८०, १:७ ३३, २.:५७) इससे प्रकट होता है कि उसने उनका अध्ययन किया था।

● गीतागाधिपति :

काश्मीर के दसवें सुल्तान हसन शाह के समय श्रीवर गीत, नाटक, आदि का अधिकारी था। उसे 'गीतागाधिपति' की उपाधि मिली थी। वह स्वय लिखता है—'सुल्तान ने गायक वृन्द को मेरे सम्मुख उपस्थित करो'—इस प्रकार मुझ गीतागाधिपति को आदेश दिया। वाद्य सहित, वहाबदीन, आदि वृन्द गायकों को स्थापित कर, नाम ग्रहण पूर्वक, सबका निवेदित किया (३ २४०—२४१) श्रीवर राजकवि के साथ ही साथ सगीत, नृत्य, गान, नाटक विभाग का अधिकारी था। वही इन सबका प्रबन्ध करता था। उसी के निदेशन पर, इस राजकीय विभाग का कार्य होता था।

वह स्वय लिखता है—'उस समय मुझसे गीत गोविन्द के गीतों को सुनकर, राजा में गोविन्द भक्ति से पूर्ण कोई अपूर्व रस उत्पन्न हुआ। उस समय हम दोनो के मजुल गीतनाद की कुज में होने वाली प्रतिध्वनि राजगौरव वश वहाँ के किन्नरों द्वारा अनुगीत सदृश प्रतीत हो रही थी।' (१:५ १०१, १०२) गीतगोविन्द भक्ति रस मय गीत काव्य है। अनेक स्वर एव लयो में गाया जाता है। काशी में पहले गीत गोविन्द गायक सस्वर गाते थे। आजकल आधुनिक सगीत के चक्कर में लोग पुरातन राग एव शास्त्रीय सगीत भूल गये हैं।

श्रीवर लिखता है—'जहाँ पर वापीगत हस शब्द व्याज से मानो समीपस्थ गान करते थे। गायको के गीत की प्रशसा करते थे। (१ ५ ८) जहाँ पर इन्द्र के समान शत्रु को नीचा कर, सुखपूर्वक, गन्धर्व विद्या का आनन्द लेते हुए, सब दिन व्यतीत करता था' (१ ५ ९)। श्रीवर ने संगीत विद्या का स्थान-स्थान पर तरगिणी में उल्लेख किया है। उसे सगीत के सब अगो का पूर्ण ज्ञान था। वह लिखता है—'राजा के सम्मुख कर्णाट के गायकों ने केदार, गौड, गान्धार, देस, बगाल, तथा मालव राग गाया।' (३ २४५) श्रीवर अनेक रागों का उल्लेख करता है। उससे प्रकट होता है। वह सगीतज्ञ था। सगीत शास्त्र का ज्ञाता मात्र नही

गुरु लिखता है यो जोनराज एवं विद्वान श्रीवर ने बामठ वष यावत दो मनोरमा राजावली ग्रन्थ प्रन्थित किय थ। (गुरु १ ६) जोनराज की मृत्यु सन् १४५९ ई० में हुई थी। श्रीवर अन्तिम लौकिक वर्ष ४५६२ = सन १४८६ ई० देता है। इसी समय मुहम्मद शाह प्रथम बार राज्यच्युत और फतहशाह प्रथम बार काश्मीर का सुल्तान हुआ था।

शिक्षा

श्रीवर स्वय लिखता ह राजतरंगिणी रचना करत हुए विद्वान जोनराज न ३५वें वर्ष (लौ० ४५३५ = सन् १४५९ ई०) शिव सायुज्यता प्राप्त किया। इसी जोनराज का शिष्य मैं श्रीवर पण्डित राजावली ग्रन्थ के शष को पूर्ण करने के लिय उद्यत हूँ। (१ १ ७) कहाँ मेरे उस गुरु का काव्य और कहाँ मन्द मति मेरा धर्म मात्र की समानता से अकोल क्या कपूर हो सकता है?' (१ १ ८) इससे स्पष्ट हो जाता है कि श्रीवर का गुरु जोनराज था।

द्वितीय राजतरंगिणी का रचनाकार राजानक जोनराज संस्कृत साहित्य का प्रकाण्ड विद्वान था। तत्कालीन राज्य की सवश्रेष्ठ उपाधि राजानक पदवी से विभूषित था। जैनुल आबदीन सुल्तान का राज कवि था। उसने *मंखक कृत श्रीकण्ठ चरित, अज्ञात कविकृत पृथ्वीराज विजय तथा भारविकृत* किरातार्जुनीय जैसे संस्कृत महाकाव्यों की टीका की थी। जोनराज सिद्धहस्त लेखक था। काव्य व्यञ्जना जानता था। उसने राजतरंगिणी म अलंकारों का यथा स्थान सुन्दरतापूर्वक प्रयोग किया ह

जोनराज काव्य ममज्ञ था। रामायण महाभारत व्यास बाण कालिदास जयानक आदि कवियों की रचनाओं का अध्ययन किया था। ज्योतिष दर्शन आदि का गम्भीर विद्वान् था। श्रीवर उसी महाकवि का शिष्य था। उसे इस बात का गौरव था। जोनराज का शिष्य था। श्रीवर ने जोनराज की शिष्य परम्परा का निर्वाह राजतरंगिणी की रचना कर किया है। श्रीवर की महत्ता इसी से प्रकट होती है कि वह जोनराज की महत्ता स्वीकार कर उसके प्रति अपने गुरु के प्रति आभार एव आदर प्रकट करता है।

राजतरंगिणी ज्ञान

जोनराज के पास पुस्तकालय था। साहित्य एव इतिहास ग्रन्थों का संग्रह था। जोनराज ने स्वय काश्मीर के ३१० वर्षों का इतिहास लिपिबद्ध किया था। उसने कल्हणकाल से अपनी मृत्युकाल का इतिहास लिखा था। कल्हण की राजतरंगिणी का अध्ययन श्रीवर ने अपने गुरु के पास अवश्य किया होगा। उसका गुरु स्वय इतिहास लिख रहा था। उसके पास तत्कालीन इतिहास ग्रन्थों का होना अनिवार्य था। श्रीवर के समय जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी का प्रणयन किया था। उन दिनों शिष्य गुरु की सहायता करते थे। गुरु के निवासस्थान पर उनका अधिक समय व्यतीत होता था। यह परम्परा काशी म बीसवीं शताब्दी के प्रथम दो दशकों तक मेरी जानकारी में प्रचलित थी।

श्रीवर ने कल्हण कृत राजतरंगिणी से उपमा तथा अपने ग्रन्थ के लिय इतिहास सामग्री ली ह। उसने ललितादित्य जयापीड आदि राजाओं का उल्लेख किया है। ललितादित्य के इच्छा पत्र (वसीयत नामा) का भाव वह उद्धृत करता है— यहाँ के नृपति सवदा अपना भेद रक्षित रखे, क्योंकि चार्वाकों के समान इन लोगों को परलोक का भय नहीं होता। ललितादित्य की निर्धारित इस नीति का जो उल्लंघन कर परस्पर वैर करते हैं वे मन्त्री नष्ट हो जाते हैं। (३ २९७–२९८) द्रष्टव्य रा० ४ ३४२–३५९) श्रीवर एक राजतरंगिणी की ओर सूचना देता ह।

उसके समय दश राजाओं के चरित के साथ संस्कृत में एक और राजतरंगिणी ग्रन्थ था। उसका अनुवाद सुल्तान जैनुल आबदीन ने फारसी में कराया था—'संस्कृत भाषा में लिखी गयी दश राजाओं का ग्रन्थ राजतरंगिणी को फारसी भाषा द्वारा पढ़ने योग्य कराया।' शाहमीर से जैनुल आबदीन काल तक दश सुल्तान हुए हैं। जोनराज ने दश सुल्तानों का वृत्तान्त लिखा है। यदि यह जोनकृत राजतरंगिणी होती तो, रचनाकार अपने गुरु जोनराज का उल्लेख इस प्रसंग में श्रीवर अवश्य करता। जोनराज की राजतरंगिणी में २४ राजाओं एवं सुल्तानों का चरित्र लिखा गया है। सम्भावना यही है कि इस राजतरंगिणी का रचनाकार कोई और व्यक्ति था। मूल ग्रन्थ तथा उसका फारसी अनुवाद अभी प्रकाश में नहीं आया है। शुक इस ग्रन्थ का उल्लेख नहीं करता।

● **अध्ययन :**

श्रीवर ने शास्त्रों एवं विविध विद्याओं का गम्भीर अध्ययन किया था। उसके ग्रन्थ अवलोकन से, संगीत शास्त्र, भरत का नाट्य शास्त्र, धर्मशास्त्र, वैशेषिक दर्शन, योग दर्शन, कल्पशास्त्र, मोक्षोपम साहित्य, चार्वाक तथा कला मूलक ग्रन्थों के अध्ययन का आभास मिलता है।

श्रीवर बृहद् कथा, गीत गोविन्द, योग वासिष्ठ, आदि पुराण, हाटकेश्वर संहिता का राजतरंगिणी में उल्लेख करता है। सुल्तानों का उन्हें पढ़कर सुनाया करता था। (१ १, १ ५:८०, १ २:८४, १ ५:८४, १ ५:८६, १ ४ १८, ३ ५४३, २५७, १ ५ ८०, १ ७ ३३, २:१५७) इससे प्रकट होता है कि उसने उनका अध्ययन किया था।

● **गीतांगाधिपति :**

काश्मीर के दशवें सुल्तान हसन शाह के समय श्रीवर गीत, नाटक, आदि का अधिकारी था। उसे 'गीतागाधिपति' की उपाधि मिली थी। वह स्वयं लिखता है—'सुल्तान ने गायक वृन्द को मेरे सम्मुख उपस्थित करो'—इस प्रकार मुझ गीतागाधिपति को आदेश दिया। वाद्य सहित, वहावदीन, आदि वृन्द गायकों को स्थापित कर, नाम ग्रहण पूर्वक, सबको निवेदित किया (३ २४०–२४१) श्रीवर राजकवि के साथ ही साथ संगीत, नृत्य, गान, नाटक विभाग का अधिकारी था। वही इन सबका प्रबन्ध करता था। उसी के निर्देशन पर, इस राजकीय विभाग का कार्य होता था।

वह स्वयं लिखता है—'उस समय मुझसे गीत गोविन्द के गीतों को सुनकर, राजा में गोविन्द भक्ति से पूर्ण कोई अपूर्व रस उत्पन्न हुआ। उस समय हम दोनों के मंजुल गीतनाद की कुंज में होने वाली प्रतिध्वनि राजगौरव वश वहाँ के किन्नरों द्वारा अनुगीत सदृश प्रतीत हो रही थी।' (१:५ १०१, १०२) गीतगोविन्द भक्ति रस मय गीत काव्य है। अनेक स्वर एवं लयों में गाया जाता है। काशी में पहले गीत गोविन्द गायक सस्वर गाते थे। आजकल आधुनिक संगीत के चक्कर में लोग पुरातन राग एवं शास्त्रीय संगीत भूल गये हैं।

श्रीवर लिखता है—'जहाँ पर वापीगत हंस शब्द व्याज से मानो समीपस्थ गान करते थे। गायकों के गीत की प्रशंसा करते थे। (१ ५ ८) जहाँ पर इन्द्र के समान शत्रु को नीचा कर, सुखपूर्वक, गन्धर्व विद्या का आनन्द लेते हुए, सब दिन व्यतीत करता था' (१ ५ ९)। श्रीवर ने संगीत विद्या का स्थान-स्थान पर तरंगिणी में उल्लेख किया है। उसे संगीत के सब अंगों का पूर्ण ज्ञान था। वह लिखता है—'राजा के सम्मुख कर्णाट के गायकों ने केदार, गौड, गान्धार, देस, बंगाल, तथा मालव राग गाया।' (३ २४५) श्रीवर अनेक रागों का उल्लेख करता है। उससे प्रकट होता है। वह संगीतज्ञ था। संगीत शास्त्र का ज्ञाता मात्र नहीं

था। स्वयं कुशल गायक एवं वीणावादक था। संगीत सम्बन्धी शंका समाधान करता था। वह स्वयं लिखता है—'सभा में स्वनिर्मित, अनुगीत करते, उस गायक से सन्तुष्ट होकर, सुल्तान ने उसे प्रचुर सुवर्ण प्रदान किया। प्रबन्ध गीत में दक्ष, वह किसी समय सुल्तान के सम्मुख सर्व लीला नामक प्रबन्ध देशी भाषा में गाया। अनभिज्ञता के कारण सुल्तान ने उसका लक्षण से पूछा। शीघ्र ही मैं भरत शास्त्र आदि का उदाहरण देकर, पद, पाठ स्वरों, एवं ताल रागों से मनोहर, षडंग युक्त, उसे (गीत) सुनाया। उदार हृदय राजा सुनकर मुग्ध हो गया।'

उसके गीत का भग वैवस्य जानकर, सुल्तान ने मुझसे कहा—'गीत का दर्प करने वाले, इसके साथ सभामध्य वाद करो।' 'ऐसा हो'—यह कहने पर, दोनों में वाद (शास्त्रार्थ) कराया। सभा में वाद होने पर, गीत ग्रन्थ का अवलोकन करने से और मुझसे प्रबन्धों को सुनकर, आश्चर्यान्वित वह गदन से बोला—'अहो! काश्मीरी!! तुम, शास्त्र वेत्ता एवं चतुर हो'—इस प्रकार कहकर, मुझे आलिंगन किया और स्पष्ट कहा—तुम मेरे गुरु हो। उस वाद विजय से प्रसन्न सुल्तान ने शीघ्र ही मुझे कौशेय वस्त्र प्रदान कर, परमानन्दित किया। (३ २५९–२६२)

उक्त उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है। श्रीवर संगीतशास्त्र का गम्भीर विद्वान् माना जाता था। काश्मीर में तथा राजदरबार में उसकी ख्याति थी। वह काश्मीर में भरत नाट्यम शास्त्र, संगीत विद्या पारंगत, सर्वश्रेष्ठ विद्वान् था। भारत की किसी भी संगीत परम्परा के विद्वानों से वाद विवाद में समर्थ था। उसने काश्मीर का गौरव बढ़ाया था। उसकी इस विलक्षण बुद्धि एवं गरिमा के कारण सुल्तानों ने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। सुल्तान हसन स्वयं संगीत विशारद था, उसे अपना गुरु मान लिया था। सुल्तान ने स्वयं गीत काव्य रचना फारसी एवं हिन्दुस्तानी भाषा में की थी। जिसमें उसकी सब प्रशंसा करते थे। (२.२१४) श्रीवर ने, प्रतीत होता है, संगीत, गीत, एवं नृत्यादि का जो वातावरण उपस्थित किया था, उससे काश्मीर मण्डल प्रभावित हुआ था। देश एवं विदेश के गीत एवं संगीतज्ञों का काश्मीर केन्द्र एक आकर्षण हो गया था।

नृत्य

श्रीवर संगीत के अतिरिक्त नाट्यशास्त्र एवं नृत्यकला विशारद था। उसने नाट्यशास्त्र एवं नृत्य के हाव-भावों का वर्णन किया है। काश्मीर में नाटक प्राचीन काल से प्रचलित थे। मुस्लिम शासन होने पर भी नृत्य एवं गान, जनता भूल नहीं सकी थी। श्रीवर वर्णन करता है—'जहाँ पर द्रष्टा एवं गायक भी अन्तःकरण से उत्सुक, अलंकार सहित, प्रबन्ध के ज्ञाता तथा सिद्धान्त युत में प्रख्यात थे, जहाँ पर नाना ग्राम गत षाड् स्वर, राग से मनोहर रस पूर्ण गीत तथा युवतियाँ शोभित थीं। लोग कला कलाप के वेत्ता, मान से मुक्त मन, विद्याविद्, संशय रहित तथा रंग मंच के प्रति रंगान रुचि रखने वाले थे। (१ ४ ६–८)

'वहाँ पर वह लोग प्रति ताल, एक ताल आदि बहुताल विभूषित तारा, तारा का ज्ञान (हाव-भाव) प्रकट करते थे। लास्य ताण्डव, नृत्य को जानने वाले नैनोत्सव एवं कामदेव का अस्त्र मूलउत्सवा नाम्नी गायिका किसके लिये मनोरंजक नहीं हुई। उनचास भावों तथा उतने ही तालों का प्रदर्शित करती थे पात्री स्त्रियाँ मूर्तिमती सदृश शोभित हो रही थी।' (१ ४:८, ११)

'रंगमंच पर दीपित, वे दीपमालायें देखने की इच्छा से आगत, नागों के फण पर स्थित मणिगण सदृश शोभित हो रहा थी। (१ ४ १६) श्रेष्ठ नटों ने कृष्ण चन्द्रावली राजरूप सुन्दर अभिनय द्वारा सुल्तान में उसे देखने का कौतूहल उत्पन्न कर दिया।' (३ २३२) श्रीवर अपने समय के कुछ नर्तकियों का वर्णन

करता है—'रत्नमाला, दीपमाला, रूपमाला नाम्नी लासिकाएँ हाव, भाव से मनोहर नृत्य की। झम्पा, कम्पा से आकुल अग्रसर होती, सरसता की धारा से सर्वांगो से मनोहारिणी, प्रारम्भ किये गये अभिलिखित नृत्य के अनन्तर, तरल शोभायमान होते, हाव-भाव एव अनुभाव से पूर्ण, उत्कण्ठा उत्पन्न करने वाले, कण्ठ से निकले, निरन्तर प्रस्रित, प्रचुर गीत प्रपञ्चों वाली, तिलक एव रत्नों की माला से युक्त, सुरम्य शरीर वाली, यह पात्री कैसी भली लग रही है? मुनियो का मद तथा प्रेक्षका की आनन्द पात्री, नवीन लयो की विधात्री, रूप लावण्य की धात्री, सुललितगात्री, शुद्ध सगीत, गुणगणमणि पात्री, केवल रूपमाला पात्री थी। जिसका मुख पूर्ण चन्द्र ही है। विधाता न सम्पूर्ण पर्वों से अवशिष्ट, जिसे यहाँ रख दिया। इस (मुख) की कान्ति से सूखा हुआ, अमृत बिन्दु सी मानो, नासिकाग्र पर स्थित, मौक्तिक के ब्याज से शोभित हो रहा है। इन नर्तकियो के कर्ण एव शिर पर गुथे, लटकते, मुक्ताफल के ब्याज से लगता है कि मुख चन्द्र से लावण्यामृत की बूँदे निकल पड़ी है।' (३:२४७-२५१)

अर्धनारीश्वर की वन्दना करते हुए श्रीवर अपनी नृत्य कला का ज्ञान प्रकट करता है—'यह दक्षिण पाद नर्तन की इच्छा से जहाँ पर आधार देता है, वही पर सचार सस्कार वश, वामचरण पग देना चाहता है। इस प्रकार सन्ध्या समय, जो मण्डलाकार शोभित पदकारी नृत्य करते है, वह भगवान् अर्धनारीश्वर सुखभाव प्रदान करे।' (२ २)

● **वीणावादक**

कोई केवल गाना जानता है, कोई केवल नृत्य जानता है, कोई केवल वादन जानता है, कोई केवल कवि होता है, कोई केवल गीतकार होता है, कोई केवल दार्शनिक होता है, कोई केवल सगीत एव नृत्य शास्त्र का ज्ञाता होता है, परन्तु स्वत गायक एव नर्तक नही होता। परन्तु श्रीवर में उक्त सभी कलायें एव गुण विद्यमान थे। शास्त्रीय सगीत को गन्धर्व विद्या के अन्तर्गत माना जाता था। सुल्तानो के काल में शास्त्रीय सगीत प्रचलित था। श्रीवर गन्धर्व विद्या पारङ्गत था।

श्रीवर कुशल वीणावादक था। वह जिस प्रकार कण्ठ सगीत में प्रवीण था, उसी प्रकार वाद्य वादन कुशल था। वह केवल वीणा वादक ही नही था परन्तु अन्य विदेशी एव देशी वीणा वादको से प्रतियोगिता भी करता था। श्रीवर अपने वीणा वादन के प्रसग में स्वय वर्णन करता है—खुरासान से आगत मल्ला वादक ने कूर्म वीणा वादन द्वारा महीपति का अतुल अनुग्रह प्राप्त किया (१:४ ३२-३३)। म्लेच्छ वाणी में गीत कारक मल्लाज्य ने सुल्तान का उसी प्रकार अनुरंजन किया, जिस प्रकार नारद इन्द्र का। सर्व गीत विशारद एवं तुम्ब वीणा पर मैंने नवीन गीत आरम्भ कर, कौशल किया। मेरे साथ अन्य भी नृपाग्रगामी जाफराण आदि वीणा के साथ दुष्कर तुरुष्क राग गाये। सभा में हम लोगो के बारह राग के गीत गाते समय वीणा एव कण्ठ से निकलते स्वर मानो प्रीति मे ही एक हो गय थे।' (१:४ ३२-३५) सुल्तान हैदरशाह एव हसनशाह स्वय वीणा वादक थे। सगीतज्ञ थे—'गीत गुणा का सागर खोजा अब्दुल कादिर का शिष्य मुल्ला ओदक सुल्तान हैदरशाह के वीणा वादन का गुरु था। मुल्ला ओदक स कूर्म वीणादि वाद्यो के गीत कौशल प्राप्त कर, जीवन पर्यन्त सुल्तान तन्त्रीवादन के बिना क्षण भर नही रहता था। (२ ५७) सुल्तान स्वय वीणावादकों को भी शिक्षा देता था।' (२.५८)

श्रीवर न म्लेच्छ वीणा, तुम्ब वीणा, कूर्म वीणा, एव मोद वीणा चार प्रकार की वीणाओ का उल्लेख किया है। इनके भेद पर यथा स्थान प्रकाश डाला गया है। श्रीवर दस तन्त्र की वीणा बनाने का उल्लेख करता है। इस वीणा की सज्ञा वह मोद वीणा स देता है—'पिता से अधिक गुणी मल्ला (मुल्ला)

हुसन ने भी दस दन्त्रियों की मोद वीणा बनायी। राजा के आदेश पर तुम्ब वीणा धारी मैंने भी, पारसी गीत की कौशल पूर्वक भाषा गीत भावयो प्रदर्शित की'। (२:२३५, २३६) श्रीवर के वीणा वादन की कुशलता इसी से प्रकट होती है कि पारसी तथा भाषागीत का वीणा पर कुशलता पूर्वक गाता था।

● संगीतज्ञ :

श्रीवर के कारण काश्मीर के सुल्तानों की ख्याति संगीत विद्यासंरक्षकों के रूप में हो गई थी। देश तथा विदेश से संगीतज्ञ मान, प्रतिष्ठा, आश्रय, अर्थ एवं संरक्षण हेतु काश्मीर में आने लगे थे।

काश्मीर में गन्धर्व विद्या का अर्थ शास्त्रीय संगीत से लिया जाता था (१:५:९) सर्वगुण सागर अब्दुल का शिष्य तुज्य राग, ताल आदि समन्वित, सरस गायक जैनुल आबदीन को प्रसन्न करता था। (१:४:११) हसन शाह के समय इसी प्रकार गीत काव्य कला में प्रख्यात रुदन विदेश से काश्मीर में आया था। (३:२५४, २५५) वह प्रबन्ध गीत में दक्ष था। उसने 'सर्वलीला' नामक प्रबन्ध देशी भाषा में गाया था। (३:२५६) तत्कालीन काश्मीर में श्रीवर के कारण शास्त्रीय संगीत को जो मान्यता मिली, उससे काश्मीरी संगीत विदेशी संगीत पद्धति के समक्ष उभड़कर सामने आई। विदेशी संगीत ने चाहे काश्मीरी संगीत को प्रभावित किया हो, परन्तु उसका उन्मूलन नहीं कर सका। श्रीवर भारतीय संगीत की रक्षा के लिए शास्त्रार्थ वाद एवं स्वयं गाकर, भारतीय संगीत का मस्तक ऊँचा करता था। काश्मीर की ख्याति उसके शास्त्रीय संगीत के कारण भारतवर्ष के राजाओं में फैल गई थी। गायक रुदन (गायक) से संगीतशास्त्र विषयक शास्त्रार्थ श्रीवर ने किया था। (३:५५९) श्रीवर के विजय से प्रसन्न होकर, हसन शाह ने कहा—'अहो काश्मीरी भी, तुम सर्वशास्त्र वेत्ता एवं चतुर हो।' यह कहकर, राजा ने श्रीवर को आलिङ्गन कर, उसे अपना गुरु घोषित किया। (३:२६६) श्रीवर को प्रचुर सम्पत्ति दिया। (३:२६३)

इसका परिणाम यह हुआ कि काश्मीर के सुल्तानों ने स्वयं केवल प्रश्रय ही नहीं दिया स्वयं निपुण शास्त्रीय संगीत के गायक हो गये। जैनुल आबदीन स्वयं गीत गोविन्द गाता था। उसका पुत्र कुशल वीणा वादक था। उसके पौत्र ने विदेश से गायकों को बुलाया था—'प्रचुर राजश्री से सम्पन्न प्रसन्न नवयुवक नृपति गीतवेत्ता वर्ग को लाकर, संगीत रसिक हो गया।' (३:२३०)

सुल्तान जैनुल आबदीन, उसके पुत्र सुल्तान हैदर तथा पौत्र हसन स्वयं संस्कृत, समझते थे। बोलते थे। संगीत शास्त्र का अध्ययन करते थे। संगीतज्ञों के साथ गाते थे। रस मर्मज्ञ थे। कलाविद् थे। (३:२३७) श्रीवर सुल्तान हसन के गायन का वर्णन करता है—'जिससे तरु समुल्लसित होते हैं, मृग वश में हो जाते हैं, देवता गण यज्ञ में उतरते हैं, जो कि मूर्ख, विद्वान्, बालक, वृद्ध के दुःख-सुख में प्रीतिकर होता है, वह श्रीनाद नामक रस मेरे लिए प्रिय हो।' उस समय सुल्तान ने मधुर कण्ठ से राग के एक अलाप में बहुत से राग वाले सूत्र एवं ऊँचे गीत गाकर, हम लोगों को चकित कर दिया। (३:२३८, २३९)

सुल्तान हसन के पिता सुल्तान हैदर के विषय में श्रीवर लिखता है—'गीत गुणों का सागर अब्दुल कादिर का अन्तेवासी वीणावादक मुल्ला ओदक सुल्तान का गुरु था। इससे कूर्म वीणादि वाद्यों का गीत-कौशल प्राप्तकर, जीवन पर्यन्त सुल्तान तन्त्री-वादन के बिना क्षणभर नहीं रह सकता था। व्यंजन धातुओं द्वारा तन्त्रीवाद्यविशेषज्ञ तथा वादन में प्रवीण सुल्तान स्वयं वीणावादकों को भी शिक्षा देता था।' (२:५६-५८)

राणा कुम्भ स्वयंवीणा वादक एवं शास्त्रीय संगीत का प्रख्यात विद्वान् था। उसने 'संगीतराज' ग्रन्थ की रचना की थी। गीत गोविन्द पर 'रसिक प्रिया' विशद टीका लिखी थी। राणा कुम्भ का

काश्मीर सगीत की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक था। मुल्तान को भेंट भेजा था—'राणा कुम्भ ने नारी कुंजर नामक वस्त्र भेजकर, उस देश के उत्तम स्त्रियो के हृदय के कौतूहल को दूर किया।' (१ ६ १३)

ग्वालियर के राजा डूगर सिंह सगीत प्रेमी थे। उन्होंने अपने राज्य में सगीतज्ञों के प्रश्रय की जो परम्परा चलाई थी, वह अक्षुण भारतीय स्वाधीनता के पूर्व तक स्थित थी। तानसेन आदि प्रसिद्ध सगीतज्ञ ग्वालियर की देन हैं। काश्मीर सुल्तान के संगीत प्रेम एव प्रश्रय से आकर्षित होकर, उन्होने भी सुल्तान को भेंट भेजा था—'गोपालपुर (ग्वालियर) के राजा डूंगर सिंह ने गीत, ताल, कला, वाद्य, नाट्य लक्षणों से युक्त सगीत शिरोमणि एव सगीत चूडामणि नामक गीत ग्रन्थ विनोद हेतु सुल्तान के लिए भेजा (१:६:१५) सगीत चूडामणि चालुक्य वशीय महाराज जगदेकमल्ल (सन् ११३४-११४३) सगीत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उनकी राजधानी कल्याण थी। सगीत चूडामणि बृहद् ग्रन्थ के रचनाकार थे।

● रबाब

रबाब वाद्य की जन्मभूमि काश्मीर है। जो लोग रबाब को इरानी अथवा मध्य पश्चिम एशिया का वाद्य मानते हैं। उनका भ्रम श्रीवर दूर करता है—'रबाब वाद्य का रचना कर्त्ता बहलोल आदि गायकों ने तत् तत् प्रकार से कनकवर्षी सुल्तान की कृपा से क्या नहीं प्राप्त किया?' (२.५९) काश्मीर में आज भी रबाब वादन सर्वप्रिय है। काश्मीर के रबाबिया भारतवर्ष में प्रसिद्ध हैं।

● ज्योतिष ज्ञान

प्राचीन शैली के पण्डित, षट्शास्त्र, के साथ ही साथ ज्योतिष का अध्ययन करते थे। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि उसने फलित एव गणित दोनों का ज्ञान प्राप्त किया था—'सभी प्राणियों के लिए ३६वाँ वर्ष भयकारी होता है। महाभारत में पाडुवंशिया के विनाश होने से प्रसिद्ध है?' (१.२:८) वह पुनः लिखता है—'राजा द्वारा पूछे जाने पर ज्योतिषियो ने पाशु वृष्टि से इस वर्ष दुर्भिक्ष होना कहा।' (१:२:१०) ग्रहा तथा नक्षत्रो के फल तथा उनके गति प्रभाव का वर्णन श्रीवर ने किया है। ज्योतिषी होने के कारण श्रीवर ज्योतिष में विश्वास करता था। योग, लग्न, मुहूर्त आदि की घटनाओ का कारण माना है। जैनुल आबदीन के पुत्र मुगल बादशाह शाहजहाँ के पुत्रो के समान परस्पर सघर्ष रत हो गये थे। उसका भी कारण वह ज्योतिष को ही देता है—'निश्चय ही जातक योग के कारण पुत्रों से सुल्तान दुःखी हुआ, क्योकि उसके सुत स्थान में पाप दृष्ट भौम था।' (१ ९:२६४) 'सूर्य की सक्रान्ति क्रूर दिनो में हुई थी। उससे प्रजा के भविष्य में क्रूर फल की उत्पत्ति तथा विनाश का भय उत्पन्न हो गया था। (१:७ १६) आकाश में द्वितीया के चन्द्रमा का उत्तान होकर दिखाई पडना राजा के परिवर्तन द्योतक सदृश था (१ ७ १८)।' श्रीवर राजा तथा मन्त्रियों की गणना करता था। वह वही कर सकता था, जो प्रतिदिन के कार्यों में गणना एव ग्रहो की स्थिति का ज्ञाता होता था। वह लिखता है—'मगल वर्ष (राजा मगल) का वह मास, वर्णाचार का विपर्यास एव पुर श्री के निर्वासन हो जाने पर, निवास क्षयकारी हुआ।' (३ २९१) इसी प्रकार वह राहु की उपमा देता है—'राहु की छाया की तरह बढता आधिपत्य करने लगा।' (३ ४३८) ग्रहण की तरफ यहाँ सकेत किया गया है। ग्रहण जिसने ध्यानपूर्वक देखा है, वही इस श्लोक के अर्थ एव भाव को समझ सकता है। राहु क्रूर किंवा पाप ग्रह है। उसकी उपमा पुन श्रीवर ने दी है—'शस्त्राधिपत्य के अनुचित निग्रह एव अनुग्रहों के कारण, ग्रहो में राहु के समान, उन (मन्त्रियो) में वह क्रूर हो गया।' क्रूर ग्रह का श्रीवर और उल्लेख करता है—'क्रूर ग्रह के समान अलीशेर और हैदर उसके मुख, बाहु एव कपाल पर प्रहार किये और उसे विवश कर दिये।' (४ ६००) ग्रहों के प्रभाव के विषय में श्रीवर लिखता है—'कभी प्रसन्न होकर, सार्वजनिक सुख पैदा

करता है, कभी कुटिल होकर जनता को ईति भीति में चकित कर देता है। इस प्रकार संसार को परिवर्तन पूर्वक नीचा-ऊँचा, फल देने वाले ग्रह के समान आश्चर्य है, विधि की गति विचित्र होती है।' (४.७२२) हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही शुभ लग्न में कार्य आरम्भ करते थे। यात्रा के लिए लग्न का विचार करते थे। मुस्लिम बहुल देश हो जाने पर भी काश्मीर में पूर्व ज्योतिष संस्कारों का लोप नहीं हुआ था—'पुनः मार्गेश शुभ लग्न में निकल पड़ा और खान के बल भेदन का उपाय सोचने लगा।' (४.५३०)

काश्मीर में ज्योतिष का अधिक प्रभाव था। मान्यता थी। सप्तग्रहों के अनुकूल, सातों दिन वस्त्रादि विभिन्न रंगों के धारण किये जाते थे—'सप्तग्रहों के अनुकूल सातों दिन, उसी वर्ण के वस्त्र से शोभित होने वाले बहराम, सुल्तान के समान, अष्ट योग प्राप्त करने वाले, उनकी भी तुच्छ जन की दशा हुई—लक्ष्मी को धिक्कार है।' (४.६२९)

● आयुर्वेद ज्ञान :

श्रीवर चाहे कुशल वैद्य न रहा हो परन्तु उसे आयुर्वेद का ज्ञान था। तत्कालीन पण्डित परम्परा के अनुसार प्रत्येक पण्डित को सभी शास्त्रों का कुछ न कुछ अध्ययन करना पड़ता था। श्रीवर ने आयुर्वेद एवं चिकित्सा सम्बन्धी, जिन बातों का उल्लेख किया है, उनसे उनका आयुर्वेद ज्ञान प्रकट होता है। उनका उपयोग उपमा के प्रसंग में किया है—'कुधुन के व्यसन के कारण सप्त प्रकृति से समृद्ध वह महामल्लक पुर सप्तधातु पूर्ण शरीरवत् नष्ट हो गया।' (१.७.६६) श्रीवर अपने आयुर्वेद ज्ञान का परिचय देता है—'क्योंकि सप्त धातु सम्बन्ध देह सदृश, सप्तांग ऊर्जित, राज को त्रिदोष के समान मेरे इन तीनों पुत्रों ने सन्दूषित कर दिया है।' (१:७.११०) इसी समय दोष के समान अयुग तीनों पुत्रों ने धातु सदृश, सप्त प्रकृति युक्त, देश को दूषित कर दिया।' (१.७.१८५) जैनुल आबदीन के अन्तिम अवस्था का सजीव वर्णन करता आयुर्वैदिक उपमा दी है—'मालूम पड़ता है, लक्ष्मी सदन, उसके बदन पर स्वेद परम्परा निकलती, भाग्य तरंगिणी के प्रवाह सदृश शोभित हो रही थी। निश्चय ही उसके जीवन रूपी रत्न का हरण करने से भीत तुल्य प्राण वायु, आयु का अपहरण करते हुए, क्षण मात्र के लिए गति तेज कर दी (१.७.२१८)।' सुल्तान की बीमारी का निदान भी श्रीवर करता है—'निरन्तर पान करने से राजा हैदरशाह का देह, बल एवं छवि क्षीण हो गयी थी। वह वात और शोणित रोग से ग्रसित हो गया था।' (२.१६०)

उस समय आजकल के समान, औषधि एवं वैज्ञानिक चिकित्सा के साथ ही साथ, लोग मन्त्र एवं योग का भी आश्रय रोग शान्ति के लिए लेते थे। सुल्तान हैदरशाह की बीमारी में भी योगी से सहायता ली गयी थी—'कोई योगी चिकित्सक, उसके विश्वस्त लोगों की बात न मानकर, विष से उग्र प्रभाव वाले औषध के प्रयोग से उसे कष्ट देने का प्रयास कर रहा था।' (२:१७१) विश्व के बड़े से बड़े व्यक्तियों को भी उनके अन्तिम काल में उचित चिकित्सा नहीं मिल सकी है। उनके पारिषद कुसंस्कारों के चक्कर में पड़कर, मृत्यु को और निकट बुला देते हैं। हसनशाह जैसे विद्वान् संगीतज्ञ के अन्तिम काल का वर्णन श्रीवर करता है—'स्वामी को देखने नहीं देते थे, स्त्रियाँ ही अन्दर जाती थीं। तत् तत् गारुडिकों के कहे गये, मन्त्र पाठ का निषेध करते थे। वैद्यों की कही चिकित्सा को अन्यथा कर देते थे। वहाँ भी अपने द्वारा बनायी गयी, खाने के लिए गुलिका (गोली) देते थे।' (३.५४७-५४८) सुल्तान की बीमारी बढ़ती गयी। राज्य प्रासाद में स्त्रियों का प्रभाव था। उस स्थिति का श्रीवर वर्णन करता है—'उस समय में वैद्य गारुडिक एवं दुष्टकर्मा हूँ—गर्व करने वाले रम्य भट्ट को स्त्री वैद्यों ने बुलाया।' (३.५५०)

भरत शास्त्र :

श्रीवर ने भरत शास्त्र का अध्ययन किया था। वह इस विषय का अधिकारी किंवा प्रमाण माना जाता था। सन्देह होने पर, शंका समाधान करता था। उल्लेख मिलता है—'अनभिज्ञता के कारण राजा ने उसका लक्षण मुझसे पूछा। शीघ्र ही मैंने भरत शास्त्र (नाट्यशास्त्र) आदि का उदाहरण दिया। उन पद, पाठ, स्वरो एवं ताल रागो से मनोहर, षडज युक्त, उस गीत को सुनकर, उदार हृदय सुल्तान मुग्ध हो गया।' (३ २५७, २५८)

दर्शन ज्ञान :

सुल्तान जैनुल आबदीन को श्रीवर ने 'दर्शन नाथ' कहा है। सुल्तान जैनुल आबदीन को मोक्षोपम संहिता श्रीवर सुनाता था—'ससार दु ख की शान्ति के लिए अनेक रात्रियों में 'श्री मोक्षोपम' संहिता सुनाया।' (१·७ १३२) मैंने अपने कण्ठस्वर की भंगिमा से, उसका वृत्त परिवर्तन करके व्याख्या की, जिससे राजा क्षणभर के लिए, शोक रहित हो गया।' (१ ७·१३३) जैनुल आबदीन को श्रीवर योग वासिष्ठ पढकर सुनाता था। उसका भाष्य करता था। मोक्षोपाय के लिए प्रसिद्ध वाल्मीकि मुनि कृत वासिष्ठ ब्रह्म दर्शन को राजा ने मेरे मुख से सुना। शान्त रसपूर्ण मेरी व्याख्या सुनकर राजा स्वप्न में भी उसी प्रकार उसका स्मरण किया जिस प्रकार कामुक कान्ता के हाव-भाव किया करता है। (१ ५·८०-८१) भाष्य से सुल्तान इतना प्रभावित हुआ था कि उसने स्वयं योग वासिष्ठ के आधार पर 'शिकायत' नामक पुस्तक की रचना की थी।' इस प्रकार सोचते हुए राजा ने फारसी भाषा में सर्व लोगो के निन्दा रूप अर्थ को प्रकट करने वाला 'शिकायत' नामक काव्य लिखा।' (१ ७:१४६) सुल्तान हैदर शाह को भी दर्शन श्रीवर समझाता था। वह लिखता है—'पुराण धर्म शास्त्रों को तथा मोक्षोपाय आदि संहिताओ को सुनते हुए, राजा (सुल्तान) रातो में जागता रहता था' (२ २१५) जैनुल आबदीन के पौत्र तथा हैदर शाह के पुत्र का श्रीवर प्रिय पात्र था। उसे गीत तथा शास्त्र सुनाता था। वह लिखता है—'हसनशाह ने षड् दर्शनो का स्वयं अध्ययन किया था।' (३ २२) दर्शनो में श्रीवर ने वैशेषिक एवं योग के सिद्धान्तो एवं सूत्रो का उल्लेख किया है। प्रतीत होता है। अन्य दर्शनों के समान उक्त दोनो दर्शनों का उसने विशेष अध्ययन किया था। (३ १) नास्तिक दर्शनकारो में उसने केवल चार्वाक का उल्लेख मात्र किया है। चार्वाको को परलोक से भय नही होता। श्रीवर उन्हें अच्छी दृष्टि से नहीं देखता। श्रीवर मुसलिम सुल्तानो का राजकवि था। मुसलिम नास्तिको को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। मुसलिम परलोक में विश्वास करते हैं। शैव भी लोक एवं परलोक का विचार करते हैं। परन्तु जिन्हें परलोक का भय नही, उन्हें किसी भी धर्म कर्म का भय नही होता।

श्रीवर ने क्रमश काश्मीर के तीन सुल्तानो, जैनुल आबदीन, हैदरशाह एवं हसनशाह को दर्शन एवं शास्त्रों को व्याख्याता रूप में सुनाया था। उन्हें प्रभावित किया था। उनमें कट्टरता के स्थान पर, सहिष्णुता एवं उदारता भाव अंकुरित किया था। सिकन्दर बुत शिकन द्वारा प्रचारित, क्रूर एवं कट्टर, उग्र सम्प्रदायवाद के स्थान पर, उदार मौलिक धर्म एवं निरपेक्ष नीति की ओर सुल्तानों का विचार प्रवाह मोड दिया था। इस प्रकार अपने राज्य की महान् सेवा की थी।

योग :

श्रीवर ने योग दर्शन का स्पष्ट उल्लेख न कर, उसके सिद्धान्तो का स्थान-स्थान पर परिचय दिया है। उसका योग दर्शन में प्रवेश था। उसने योगियों का जहाँ वर्णन किया है, वहाँ उसके शब्दों में श्रद्धा एवं भक्ति प्रगट

होती है। उसने कलेवर परिवर्तन का भी वर्णन किया है—'वन में प्रवेश कर, उन लोगों ने कौतूहल पूर्वक, एक नर-कंकाल देखा, जिसके पास दीवाल स्थित था। वह नर चिरकाल तक तपस्या कर, योग सिद्धि प्राप्त कर, सर्प के कंचुक के समान गुफा में शरीर त्याग दिया था।' (१:१.५३) जैनुल आबदीन की योगियों के प्रति भक्ति वर्णन करता है—'जहाँ पर सहस्रों योगियों के शृंगनाद को बार-बार सुनने के कारण, मानों मानस नाग ने भी चक्षु को बन्द कर लिया था। वह अन्न नहीं, वह मास नहीं, वह सस्य नहीं, वह फल नहीं, वह भोग नहीं, जिन्हें राजा ने भोजन के समय नहीं खिलाया। योगियों की मद-मत्तता के कारण, कहे गये तीन प्रकार की अश्लीलता को भक्ति के कारण, राजा ने सहा, जो सामान्य लोगों के लिये भी असह्य थी। (१:३:४८-५०) द्वादशी के दिन सुन्दर कन्था, तम्बूरा, मुद्रा, दण्डादि देकर, योगियों को भारवाहक बना दिया था। (१ ३ ५२) एक स्थान पर योगियों के पात्र पूजा हेतु जैन वाटिका नामक अन्न सत्र भोगों के कारण विस्मयावह था। पुष्करिणी मध्य, योगी चक्र के अन्दर प्रतिबिम्बित चन्द्रमा भी, जहाँ स्वाद की लिप्सा से ही आता था। राजा ने सहस्रों योगियों को आँख मूँदने तक, भोजन कराकर निष्कम्प कर दिया, फिर तृप्ति एवं समाधि से क्या लाभ ? (१ ५ ४६-४८) जहाँ पर आनन्द निर्भर, योगियों का भोजन *के श्रम से निकलने वाला पसीना, राजा को प्रसन्न करता था। योगियों के हाथों से लिप्त दधि-पूर्ण भोजन* के छल से मानो, वही योग योग से शशिकला का स्राव हो शोभित हो रहा था।' (१ ५ ५२-५३)

श्रीवर गोरक्ष संहिताकार योगी गोरक्ष का उल्लेख करता है। उससे प्रकट होता है कि श्रीवर का झुकाव गोरक्ष योग पद्धति की ओर था (१ १.३१)। योगी गोरक्ष नाथ हठयोग के आचार्य थे। गोरक्ष नाथ जी नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक माने जाते हैं। काश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने आदर के साथ अपने ग्रन्थों में गोरक्ष के गुरु मत्स्येन्द्र नाथ का उल्लेख किया है।

• रामायण-महाभारत :

रामायण तथा महाभारत का श्रीवर ने अध्ययन किया था। उसने सर्वाधिक उपमाएँ रामायण तथा महाभारत की घटनाओं से दी हैं। राम के सेतुबन्ध (७:३:१८) रावण पर राम की विजय (१ ३ ३७), जैनुल आबदीन का राम की तरह विजय कर लौटना, (१ १:१९) लंका, (१ ५ ३५,३९) विष्णु अवतार, (१ ५ १०४) रघुनन्दन, (१ ७:१०६) राम के समक्ष परशुराम का आगमन, (४.२६७) रावण एवं सन्मार्ग, (३ ४८२) परशुराम का क्षत्रिय संहार, (२ १०२) राम का वन गमन, वालि सुग्रीव प्रसंग, राम-रावण युद्ध, (४ ५४३) गंगावतरण (१ ५.२४) आदि अनेक प्रसंगों का वर्णन किया है। जिससे प्रकट होता है कि श्रीवर ने रामायण का गम्भीर अध्ययन किया था।

महाभारत से उसने कौरव पाण्डव युद्ध, यदुवंश संहार (१ २:८) जैनुल आबदीन की उत्तरायण काल में मृत्यु, (१ ७ २२४) कृष्ण का युद्ध के लिए सन्नद्ध होना, (१ १ १४१) खाण्डव वनदाह, (३:२८७) गरुड, (१:१ १०२) द्रोणाचार्य, भीष्म, कृपाचार्य, कर्ण, दुर्योधन, शल्य, कौरव (१ १ ६६) पार्थ, (१:१:३०) यादव वृत्तान्त, (१:७ १६३) दुर्योधन के साथी शल्य द्वारा सहायता प्राप्त, धर्मराज के प्रति विद्रोह, कर्म एवं कलह, धृतराष्ट्र वंश का अवसान, कौरवों तुल्य पराजय आदि उपमा देकर, काव्य का सौष्ठव बढाया है। (४.३४१) कौरव पाण्डव की उपमा उसने सैयिदों तथा काश्मीरियों के दो दलों से दी है। लिखता है —'इस प्रकार हैबत खाँ के बढ़ने पर, युद्ध के लिए सन्नद्ध बुद्धि, सैयिद, पाण्डवों के ऊपर, कौरवों के समान, उद्योग शील हो गये (४ १६४)'

• पुराण :

श्रीवर ने, प्रतीत होता है, पुराणों का कम अध्ययन किया था। उसने पुराणों से बहुत कम उपमा एवं उदाहरण

दिया है। उसने आदि पुराण का उल्लेख किया है। (१ ५ ८८) आश्चर्य है, श्रीवर ने नीलमत पुराण तथा उसके विषय के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा है। यद्यपि कल्हण तथा जोनराज दोनों ने नीलमत पुराण तथा तत्सम्बन्धी गाथाओं का उल्लेख किया है। नील मत पुराण के हरांशज एवं सतीसर प्रकरण का उल्लेख किया है। परन्तु दोनों प्रकरण कल्हण की राजतरंगिणी में भी वर्णित हैं।

● **शिक्षक :**

श्रीवर को जैनुल आबदीन ने पुत्रवत पाला था। श्रीवर का आदर, उसका पुत्र हैदरशाह करता था। हैदरशाह ने हसन शाह का शिक्षक श्रीवर को नियुक्त किया था। श्रीवर स्वयं लिखता है—'राजा ने आदर कर, मुझको उस (राजकुमार) हसनको प्रदान किया और मैं प्रतिदिन पुस्तक लेकर बृहत कथा का आख्यान सुनाता था।' (२ १५७) श्रीवर तीन सुलतानों का प्रिय पात्र रहा है। तीनों ही सुल्तान उसे स्नेह एवं आदर से देखते थे। उनका मनोरंजन दर्शन, साहित्य, इतिहास के अतिरिक्त, अपने गीत एवं पदों से करता था।

● **व्याख्याता**

श्रीवर स्वयं अपने लिये व्याख्याता शब्द का प्रयोग करता है। (१ ७ १३२-१३३) श्रीवर सुल्तानों को दर्शन शास्त्र पढ़ाता था। दर्शन एवं शास्त्रों की व्याख्या करता था। संगीत शास्त्र सम्बन्धी विद्वानों से शास्त्रार्थ करता था। दर्शनों आदि की व्याख्या से दुरूह स्थलों को बोधगम्य बनाता था। श्रीवर आजकल व्यासों के समान पेशेवर, कथा वाचक अथवा व्याख्याता नहीं था। उसका स्तर बहुत ऊँचा था। जन्म से ही राजसभा में रहने के कारण, पठित तथा बहुश्रुत था। विचारणीय विषयों पर उसके मत का महत्त्व होता था। उसके मतों का मूल्य था।

श्रीवर लिखता है—'मोक्षोपाय के लिये प्रसिद्ध वाल्मीकि मुनि कृत वासिष्ठ ब्रह्म दर्शन राजा ने मेरे मुख से सुना। (१ ५ ८०) शान्तरस पूर्ण मेरी व्याख्या सुनकर, राजा स्वप्न में भी, उसी प्रकार उसका स्मरण किया, जिस प्रकार कामुक कान्ता के हाव-भाव क्रियाओं का।' (१ ५ ८१) राजा मेरी व्याख्या सुनने से स्मृत एवं अपने अवस्था के सूचक, इस प्रकार बहुत से श्लोकों को पढ़ा। (१ ७ १३६)

● **भाषा :**

हिन्दू राज्यकाल में काश्मीर की राजभाषा संस्कृत थी। स्त्रियाँ सुसंस्कृत काव्यमय भाषा बोलती थीं। महिलायें कविता करती थीं। भरत नाट्य शास्त्र के आधार पर मनोरंजन एवं नाटकों का आयोजन होता था। शास्त्रीय संगीत होता था। संस्कृत काश्मीरी भाषा की आत्मा थी।

मुसलिम काल में फारसी प्रचार के साथ काश्मीरी भाषा में फारसी तथा अरबी शब्दों का बाहुल्य हो गया। सिकन्दर बुत शिकन के पश्चात्, काश्मीर की पुरानी धारा को वेग से एक ओर मोड़कर, उसे मुसलिम भाषा में प्रवाहित करने का कठोर प्रयास किया गया। परन्तु जनता धर्म के समान तुरन्त भाषा बदलने में असमर्थ थी।

बोलचाल तथा पठन-पाठन की भाषा संस्कृत थी। श्रीवर ने जैनुल आबदीन, हैदरशाह तथा हसन शाह को संस्कृत पठित, विद्वान् रूप में चित्रित किया है। वे संस्कृत बोलते थे। संस्कृत साहित्य में रुचि लेते थे। शास्त्रीय संगीत को प्रोत्साहित करते थे। श्रीवर लिखता है—'राजा श्रीहर्ष हुआ, उस समय कविता के राज्य में जो लोग थे, वे सब कवि हुए थे, अधिक क्या कहूँ? वे रसोइयाँ, स्त्री एवं बोझा ढोने वाले ही

वर्षों न रहे है। आज भी उनके बनाये पद प्रति घर में हैं। राजा यदि गुणी एवं विद्या रसिक होता है, तो, लोक भी वैसा ही हो जाता है।' (१:५:६४)

संस्कृत का प्रसार, उसका प्रभाव, विदेशी मुसलमानों को अखरता था। विदेशी मुसलमानों की काफी बड़ी संख्या काश्मीर में हो गयी थी। काश्मीरी एवं गैर काश्मीरी का प्रश्न उठ खड़ा होता था। सुल्तान जैनुल आबदीन ने लोगों का ध्यान विद्यानुराग की ओर लगाकर, उन्हें एक दूसरे को समझने के लिये प्रेरित किया था। इसके लिये उसने देशी एवं विदेशी ग्रन्थों का अनुवाद कराया। श्रीवर लिखता है—'जो जिस भाषा में प्रवीण हैं, वह उसी भाषा द्वारा उपदेश ग्रहण कर सकता है, लोक में सब लोग नाना भाषा एवं लिपि नहीं जानते हैं (१.५.८२) अतएव संस्कृत भाषा आदि तथा फारसी भाषा में विशारद जनों द्वारा भाषा विपर्यय (अनुवाद) से तत् तत् सब शास्त्रों को निर्मित कराया। (१.५.८०) धातु वाद, रस ग्रन्थ एवं अन्य शास्त्रों में उक्त गुणों को अपनी भाषा का अक्षर पढने के कारण यवन भी जानते हैं।' (१:५:८४) संस्कृत भाषा में लिखी गयी दश राजाओं का ग्रन्थ राजतरंगिणी को फारसी भाषा द्वारा पढने योग्य सुल्तान ने कराया। (१.५:८४) सुल्तान की युक्ति से म्लेच्छ लोग बृहत्कथा, तथा हाटकेश्वर संहिता, पुराणादि अपनी भाषा में पढते हैं' (१.५.८६)।

चौथा सुल्तान मुहम्मद शाह केवल आठ वर्ष की अवस्था में सिंहासन पर बैठा था। उसके ज्ञान एवं पाण्डित्य के विषय में श्रीवर ने कुछ नहीं लिखा है। मन्त्रियों का प्राबल्य हो गया था। मन्त्री दल बदल के शिकार हो गये थे। हसन शाह के पश्चात् कला साहित्य आदि की तरफ देश की रुचि न होकर अन्तर्द्वन्द्व एवं संघर्षों में लग गयी। भारतीय तथा विदेशी मुसलमानों का प्रचुर प्रवेश काश्मीर में होने लगा। वे साहित्य, कला एवं दैनिक जीवन को प्रभावित करने लगे।

शास्त्रीय संगीत के स्थान पर भाषा में भी गीत लिखे जाने लगे—'प्रबन्ध गीत में दक्ष, वह किसी समय राजा के समक्ष सर्व लीला नामक प्रबन्ध देशी भाषा में गाया।' (३.२५६)

सुल्तान हैदर शाह के समय से फारसी एवं हिन्दुस्तानी भाषा में गीत काव्य की रचना होने लगी थी—'सुल्तान ने फारसी एवं हिन्दुस्तानी भाषा में गीत काव्य की रचना की थी। जिसने कौन लोग उसकी प्रशंसा नहीं कर रहे थे।' (२.२१४)

जैनुल आबदीन ने स्वयं 'शिकायत' ग्रन्थ की रचना की थी। वह फारसी में लिखा था। इस समय संस्कृत का स्थान फारसी लेने लग गयी थी। यद्यपि भाषा में संस्कृत शब्दों का ही बाहुल्य था।

संस्कृत का स्थान फारसी भाषा नहीं ले सकी परन्तु काश्मीरी भाषा की नवीन रूप-रेखा बनने लगी। काश्मीरी भाषा के लिए सत्रहवीं शताब्दी तक भाषा या देश भाषा शब्द प्रचलित था। श्रीवर ने भाषा एवं देशभाषा दोनों का उल्लेख किया है। श्रीवर ने अप्रचलित शब्दों का प्रयोग किया है। वे शुद्ध परिष्कृत संस्कृत शब्द नहीं हैं। फारसी-अरबी नामों का संस्कृतकरण किया गया। असंस्कृत शब्दों का प्रयोग प्रचुर मिलता है—जैसे टोपी। (३.५५७) भाषा के अतिरिक्त, काश्मीर में स्थानीय बोलियाँ भी बोली जाती थी। उनमें पुगुली, किश्तवाड़ी, डोग, सिराजी, रामबनी, रिआसी आदि हैं। सिरामपुर से बाइबिल का प्रथम काश्मीरी भाषा का अनुवाद प्रथम संस्करण शारदा लिपि में ही प्रकाशित हुआ था। कालान्तर में फारसी, रोमन लिपि और काश्मीरी भाषा में अनुवाद प्रकाशित हुये थे। सन् १४०० से १५५० ई० में काश्मीरी

भाषा एवं साहित्य एक रूप लेने लगे। श्रीवर ने प्रबन्ध काव्य का बहुत उल्लेख किया है। यह प्रबन्ध का प्रथम काल माना जा सकता है। उसकी सर्वांगीण उन्नति हुई सन् १५५०-१७५० ई० मध्य।

काश्मीरी साहित्य में गीत-गान तत्व का समावेश हुआ। हिन्दी, फारसी, भाषा में गीत सुने और गाये जाने लगे। जिनका स्पष्ट उल्लेख श्रीवर ने किया है। इसे गीत या द्वितीय काल काश्मीरी भाषा का मान सकते है।

तत्कालीन काश्मीरी अनेक भाषाओं के समन्वय एवं मिश्रण की परिणाम थी। उस पर सीमान्तवर्ती, दरद तथा कोहिस्तानी भाषा का भी प्रभाव है। कुछ विद्वान् काश्मीरी की जननी इबरानी या हिब्रू का मूल मानते है। उनका मत वैसा ही है, जैसा काश्मीर का नाम बाग सुलेमान तथा शंकराचार्य का तख्ते सुलेमान रखना है।

काश्मीरी पण्डितो का पत्रा या जन्तरी आज भी प्रतिवर्ष शारदा लिपि में प्रकाशित होता है। यद्यपि सस्करण सख्या कम होती जा रही है। कुछ विद्वान् शारदा की जननी ब्राह्मी लिपि को मानते है।

शारदा लिपि के साथ काश्मीरियों का धार्मिक एवं ऐतिहासिक सम्बन्ध है। काश्मीर का नाम शारदापीठ तथा शारदा देश प्राचीन ग्रन्थो में मिलता है। शारदा काश्मीर की अधिष्ठात्री देवी है। इसी कारण काश्मीर की लिपि का नाम देश एव देवी के नाम पर, शारदा पड़ा था। इसका प्रचार उत्तर पश्चिम भारत काश्मीर, पजाब तथा सिन्ध में था। आधुनिक शारदा, टाकी, लण्डा, गुरुमुखी, डोगरी, चमोली तथा कोची आदि लिपियों की मूल प्राचीन शारदा लिपि है। चम्बा एव सेगुल में प्राप्त दसवी तथा ग्यारहवी शताब्दी के शिलालेखो में शारदा लिपि के प्राचीन रूप का दर्शन होता है।

श्रीवर के समय लिपि शारदा थी। पन्द्रहवी शताब्दी तक काश्मीर में शारदा लिपि प्रचलित थी। फारसी लिपि का प्रसार सुल्तान जैनुल आबदीन के समय हुआ था। सुल्तान मुहम्मदशाह के समय यवन अर्थात फारसी लिपि राजकीय कार्यों में प्रवेश करने लगी। राजकीय पत्र व्यवहार फारसी में होने लगे। श्रीवर लिखता है। 'इस प्रकार लेख का अर्थ विचार कर, मार्गेश आदि महान् लोग यवन (फारसी) लिपि में लिखा इस प्रकार का पत्र भेजे।' (४ १५३)

फारसी भाषा का भी श्रीवर को कुछ ज्ञान था। वह लिखता है—'फारसी भाषा के काव्य में प्रजाओ के दोष के लिए, जो कहा गया है, वह शाप (दण्ड) श्रीमद जैन राजा के देश में फलित हुआ।' (२ १३२) सुल्तान लोग स्वय इस काल में फारसी, काश्मीरी तथा हिन्दुस्तानी में गीत काव्य आदि की रचना करने लगे थे। सस्कृत का स्वत. राज कार्य एवं सर्वसाधारण की बोल चाल की भाषा में लोप होने लगा।

मुगलों ने फारसी लिपि स्वीकार की। अरबी लिपि नही अपनाया। अरबी धार्मिक कार्यों, यथा मसजिदो में सुभाषित अथवा कब्रो पर स्मारक लिखने के लिए प्रयोग में लायी जाती थी। मुगल दरबार में बढते ईरानी उमराओ के प्रभाव से फारसी लिपि मुगलों ने स्वीकार कर ली थी। फारसी सरकार की अन्तर्देशीय भाषा हो गयी। मुगलो का काश्मीर में शासन हुआ, तो फारसी लिपि का प्रचार राजकीय स्तर पर किया गया। मुसलमान लोग जो शारदा लिपि में कार्य करते थे, उन्होने फारसी लिपि पढना और पढाना आरम्भ किया। मुगलो के पश्चात् अफगान शासन काल में भी फारसी लिपि का ही प्रभाव था। अफगानिस्तान में फारसी लिपि प्रचलित थी। उसी लिपि में कारोबार होते थे। सिखों के समय फारसी लिपि यथावत् बनी रही। डोगरा शासन में नागरी लिपि का प्रचार बढा।

हिन्दू मुस्लिम साम्प्रदायिक वैमनस्य के कारण फारसी लिपि मुसलमान तथा नागरी और शारदा हिन्दुओं की लिपि समझी जाने लगी। फल हुआ। मुसलमानों ने शारदा लिपि त्यागकर पूर्णतया फारसी लिपि अपना ली। आज काश्मीर की जनता फारसी लिपि तथा उर्दू जबान में काम करने लगी है। यद्यपि नागरी तथा हिन्दी प्रचार में कुछ प्रगति हुई है। स्वतन्त्रता पूर्व, साम्प्रदायिक विष वमन के कारण, हिन्दू काश्मीरी और मुसलिम काश्मीरी में नाम मात्र लिये भेद हो गये थे। उनमें शब्द प्रयोग एवं उच्चारण की दृष्टि से अन्तर है।

साम्प्रदायिकता का प्रभाव जातियों पर भी पड़ा है। काश्मीर में चार लिपियाँ प्रचलित हो गयी हैं। सबसे अधिक प्रचार फारसी लिपि का है। शारदा का प्रयोग बहुत कम होता है। किस्तवार के लोग टाकरी लिपि का प्रयोग करते थे। परन्तु आजादी के पश्चात् हिन्दुओं में प्राय नागरी लिपि में कार्य आरम्भ हो गया है। किस्तवार में भी शारदा तथा टाकरी का स्थान देवनागरी लेती जा रही है।

● काव्य या महाकाव्य :

काव्य या महाकाव्य के सिद्धान्तों पर 'कल्हण' तथा 'जोन' राज तरंगिणी भाष्यों में विस्तृत प्रकाश डाल चुका हूँ। कल्हण एवं जोन राजतरंगिणी महाकाव्य हैं। श्रीवर की राजतरंगिणी काव्य मात्र है। यद्यपि श्रीवर स्वयं लिखता है–'काव्य गुण चर्चा के कारण नहीं, अपितु राज वृत्तान्त के अनुरोध से, सज्जन लोग मेरी वाणी को सुने और अपनी बुद्धि से जोड़े।' (१:५) कवि का सौजन्य है कि वह अपने काव्य को स्वयं काव्य नहीं मानता। काव्य गुण चर्चा ही वह प्रकट करता है। श्रीवर अपने ग्रन्थ को काव्य मानता था। 'भावी जनों की स्मृति के लिये यह रचना की है। अन्य पण्डित उस पर ललित काव्य की रचना करें। श्रीवर यह कामना करता है'। (३.६) वह अपनी रचना को काव्य तो मानता, परन्तु ललित काव्य नहीं मानता। उसने स्वयं अपने ग्रन्थ को इतिहास वर्णन लिखा है।

इतिहास भी कल्हण एवं जोनराज कृत राजतरंगिणी के समान काव्य हो सकता है। साहित्यिक दृष्टि से श्रीवर की राजतरंगिणी उच्च कोटि की रचना है, जिसका दर्शन कल्हण तत्पश्चात् जोनराज कृत तरंगिणियों में प्राप्त होता है। श्रीवर स्वयं कवि, इतिहासज्ञ, ज्योतिषी, नृत्य, गीतकार एवं गायक था। उसने संगीत, नाट्य शास्त्र नृत्य आदि कलाओं पर प्रकाश डाला है।

ग्रन्थ में काव्य प्रतिभा मिलती है। इसमें गुरुत्व है, गाम्भीर्य एवं मर्यादा है। वस्तु प्रतिपादन की सरलता एवं पद लालित्य की विशेषता है। वह घटनाओं का वर्णन संयत एवं गम्भीर भाषा में करता है। उसकी दृष्टि कहीं संकुचित एवं पूर्वाग्रह पूर्ण नहीं मालूम पड़ती है। श्रीवर ने जैनुल आबदीन का स्वर्ण युग एवं मुहम्मदशाह का गृहयुद्धों से जर्जरित, अराजक काश्मीर को भस्म होते देखा था। वह सैयिद एवं खान बिल्जय का प्रत्यक्षदर्शी था। उसकी भाषा घटनानुसार बदलती गयी है।

श्रीवर भाव व्यंजना के लिये अलंकार, रस एवं उपमाओं का प्रयोग चातुरी से किया है। शैली में गरिमा है। शैली उदात्त है। पदों में औचित्य है। प्रतिभा है। उपमाओं का नवीनीकरण है। ज्योतिष, आयुर्वेद तथा संगीत शास्त्र के आधार पर उपमाओं का चयन है। श्रीवर रस एवं अलंकारों में पाठकों को न तो उलझाता है और न स्वयं उलझता है। घटनावलियों को सरल सुस्पष्ट भाषा में उपस्थित करता है। उनके समझने में कठिनता नहीं होती। अपना पाण्डित्य पद में तथा भाव व्यंजना में अवश्य दिखाया है। उसके पदों में ओज है। रस है। प्राण है। उसका काव्य प्रबन्ध काव्य है। पात्रों का

वैज्ञानिक चित्रण है। वैराग्य तथा अध्यात्म स्थान स्थान पर झलकता है। उसके अनेक पद सूक्ति संग्रह में संकलित करने के योग्य हैं।

अनुवाद :

प्रस्तुत अनुवाद की शैली वही है, जिसका अनुकरण मैंने कल्हण तथा जोनराज एवं शुक में किया है। प्रत्येक पद का अनुवाद, जिसमें क्रिया मिल गयी है, एक ही पद में किया गया है। यदि क्रिया दूसरे पद में मिली है, तो पद तोडकर, अनुवाद किया गया है। उन शब्दों, जिनका श्रीवर के समय में क्या अर्थ होता था, निश्चित प्रामाणिक नही मालूम हुआ है, उन शब्दों को यथावत् रख दिया गया है। क्रिया, वचन, एवं लिंग का मूल-रूप में अनुवाद किया गया है। अर्थ भाव के साथ किया है। पूर्वापर प्रयोग का ध्यान रखकर सीमा के बाहर, न जाने का भरसक प्रयास किया है।

कितने ही तत्कालीन शब्द अप्रचलित हो गये हैं। उनका वह अर्थ आज नही है जो उस समय था। संस्कृत पदों में अप्रचलित शब्दों के कारण कठिनाई होती है। कल्हण का अनुवाद परिष्कृत संस्कृत शैली होने के कारण, करना सरल है, परन्तु जोनराज तथा श्रीवर के अनुवाद में कठिनाई का बोध हुआ है। अनुवाद समझने के लिये काश्मीर का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक ज्ञान होना आवश्यक है।

श्रीवर की राजतरंगिणी का यह प्रथम अनुवाद है। विश्व की किसी भी भाषा में प्रथम है। अनुवाद में कठिनता का सामना करना पड़ा है। यह प्रथम भाष्य एवं टिप्पणी है। मैंने भविष्य के अनुवादकों एवं भाष्यकारों के लिये मार्ग प्रशस्त किया है। अनुवाद की रोचकता बढ़ाने के लिये अपनी तरफ से कुछ नही जोडा है। अर्थ स्पष्ट करने के लिये, जहाँ शब्दों की आवश्यकता हुई है, उन्हें कोष्ठ में रख दिया है। मूल भाव तथा रचना को अछूता रखने का प्रयास किया है। जिन पदों के दो अर्थ होते हैं, उन दोनों को रख दिया है। पाद टिप्पणी में ऐतिहासिक व भौगोलिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व की सामग्रियों को देने का प्रयास किया है। प्रमाण के अभाव में अपना निश्चित मत किसी विषय अथवा स्थान निरूपण में न देकर, उन्हें यथावत् छोड दिया है। भविष्य के रचनाकार अनुसन्धानों द्वारा इस को पूरा करेंगे।

इतिहास :

श्रीवर ने कल्हण एवं जोनराज कृत राजतरंगिणी पढ़ी थी। इतिहास लिखने की पृष्ठभूमि इस अध्ययन से तैयार हो गयी थी। श्रीवर की रचना सीमा बहुत ही मर्यादित है। जोनराज ने सन् १४५९ ई० तक का इतिहास लिखा था। उसके पूर्व का इतिहास कल्हण ने लिखा था। श्रीवर ने ललितादित्य का इच्छा पत्र (३ २९८) बुप्पदेव (४.४१३) आदि की बातों को लिखकर, यह प्रमाणित किया है, कि उसने अपने पूर्व लिखी कल्हण तथा जोनराज की राजतरंगिणियों का गहन अध्ययन किया था।

इस परिस्थिति में श्रीवर या तो 'जैन विलास' 'जैन तिलक' 'जैन चरित, के समान समकालीन सुल्तानों का चरित ग्रन्थ लिखता अथवा अपनी प्रतिभा किसी काव्य ग्रन्थ रचना में प्रकट करता। जैनुल आबदीन के चरित के सम्बन्ध में तत्कालीन कवियों के कई चरित ग्रन्थ लिखे जा चुके थे। श्रीवर के लिये जैनुल आबदीन के के सम्बन्ध में लिखने के लिये बहुत सीमित सीमा रह गयी थी। उसके गुरु ने जैनुल आबदिन के विषय में वह सब कुछ लिख दिया था, जो कुछ लिखा जा सकता था। जैनुल आबदीन का केवल ११ वर्षों का इतिहास श्रीवर लिख सकता था। सन् १४१९ से १४५९ ई० का विस्तृत इतिहास जोनराज लिख चुका था। श्रीवर के समकालीन जैनुल आबदीन, हैदर शाह, हसन शाह एवं मुहम्मद शाह सुलतान थे। हैदर शाह ने २ वर्ष, हसन शाह

ने, २१वर्ष तथा बालक मुहम्द शाह ने २ वर्ष तक राज्य किया था। उक्त सुल्तानों का राज्य काल स्वल्प था। उनके जीवन काल में कोई महत्वपूर्ण घटनायें नहीं घटी थी। केवल पारस्परिक संघर्ष कुछ हुआ था। अतएव उसने किसी एक सुल्तान के विषय म न लिखकर, २७ वर्षों का आँखो देखा इतिहास लिखना उचित समझा।

श्रीवर पूर्वकालीन इतिहास नहीं लिख रहा था। इसलिये वह पूर्वकालीन इतिहास ग्रन्थों तथा अपने इतिहास सामग्री के विषय में कुछ प्रकाश नहीं डालता। आँखो देखा इतिहास लिखा है। उसे किसी सहायक ग्रन्थ अथवा अन्य बाह्य स्रोतों की आवश्यकता नहीं थी। उसका सम्बन्ध बाल काल्य से ही सुल्तानों के साथ था। उसका पुत्रवत पालन जैनुल आबदीन ने किया था। तत्कालीन सूक्ष्म से सूक्ष्म बातें विस्तार के साथ उसे मालूम थीं। जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात, हैदर शाह की उस पर कृपा थी। सुल्तान हसन शाह, उसे अपना गुरु मानता था। उसे इतिहास प्रणयन सम्बन्धी सभी बातें ज्ञात थी। यही कारण है। श्रीवर का वर्णन विस्तृत है। तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि परिस्थितियों का उसकी रचना में सजीव चित्रण मिलता है। उसने अपने अनुभव एवं ज्ञान के कारण जीवनमय वर्णन किया है। उसने प्रथम तरंग में जैनुल आबदीन के उत्तरार्द्ध जीवन, तरंग द्वितीय में हैदर शाह, तरंग तृतीय में हसन शाह और चतुर्थ तरंग में सात वर्षीय शिशु सुल्तान मुहम्मद शाह के दो वर्षों के शासन में सैयिद, एवं खान विप्लव के साथ ही साथ, फतह शाह की राजप्राप्ति का वर्णन किया है।

यह इसी से प्रकट है कि जैनुल आबदीन के ११ वर्षों का ८२० श्लोकों, हैदर शाह के २ वर्षों का २१९ श्लोकों, हसन शाह के १२ वर्षों का ५६४ श्लोकों तथा मुहम्मद शाह के २ वर्षों का ६५६ श्लोकों में वर्णन किया है। कल्हण ने लौकिक संवत् ६२८ = कलि ६५३ से लौकिक संवत् ४२२५ वर्ष अर्थात् ३५९७ वर्षों का इतिहास ७८३०, जोनराज ३०० वर्षों का इतिहास ९७६ श्रीवर २७ वर्षों का इतिहास २२४१ तथा शुक ने २७ वर्षों का इतिहास ३९८ श्लोकों में लिखा है। उक्त आँकड़ों से प्रकट होता है। श्रीवर ने विस्तार से इतिहास रचना की है। तत्कालीन किसी घटना का बिना उल्लेख किये नहीं छोड़ा है। यह केवल एक प्रत्यक्षदर्शी के लिये ही सम्भव था। उसका यह ऐतिहासिक संस्मरण इतिहास जगत् की अमूल्य निधि है। उसके विश्लेषण एवं गम्भीर अध्ययन से भारतीय तथा काश्मीर सीमान्त की अनेक अज्ञात बातें ज्ञात हो सकती हैं। श्रीवर का इतिहास प्रादेशिक है। जोनराज एवं शुक के समान है, काश्मीर का शुद्ध इतिहास है। उसका इतिहास वर्णन आधुनिक इतिहास वर्णन शैली के बहुत समीप है।

● **इतिहास या संस्मरण :**

भूतकाल की बातें इतिहास में लिखी जाती है। कल्हण ने भूतकालीन तथा समकालीन राजाओं का वृत्तान्त लिखा है। जोनराज भी कल्हण के समान भूतकालीन तथा समकालीन सुल्तानों का वर्णन लिखा है। उक्त दोनों राजतरंगिणीकार भूत एवं वर्तमान दोनों कालों के राजाओं का इतिवृत्त लिखे थे।

श्रीवर एवं शुक ने वर्तमान इतिहास लिखा है। समकालीन राजाओं का इतिवृत्त वर्णन किया है। भूतकालीन किसी राजा का वर्णन उनमें नहीं मिलता। अपनी आँखों देखी बातें लिखी हैं। उसका उद्देश्य आँखों देखा इतिवृत्त लिखना था। भूत एवं वर्तमान में जितना अन्तर है, उतना ही भूत एवं वर्तमान इतिहास लिखने के दृष्टिकोणों में अन्तर है। वर्तमान इतिहास के पात्र एवं द्रष्टा उपस्थित रहते हैं। वे इतिहास की आलोचना-प्रत्यालोचना कर सकते हैं। विरोधी बातें होने पर, इतिहासकार विपत्ति में पड़ सकता था। राज्य कृपा से वंचित हो सकता था।

श्रीवर एवं शुक की राजतरंगिणियाँ सस्मरण काव्य कही जायगी। वे सस्मरण की परिभाषा के निकट हैं। उन्होंने जो कुछ देखा, सभी को लिपिबद्ध किया है। तथापि उन्होंने राजतरंगिणी परम्परा का निर्वाह करते हुए, अपने ग्रन्थों को इतिहास का रूप यथा शक्ति देकर, उसे इतिहास बनाया है।

भूतकालीन इतिहास के विवादास्पद होने पर बचत हो सकती है। परन्तु वर्तमान इतिहास लिखना, खतरे से खाली उस समय नही था।

श्रीवर की रचना सस्मरण के अधिक निकट कही जायगी। सस्मरण लिखन की प्रथा सस्कृत साहित्य में नही मिलती। अपन विषय में सस्कृत कवि कम लिखते हैं। एक प्रकार से लिखते ही नही। सस्मरण आत्म चरित के अन्तर्गत आता है। आत्म चरित एव सस्मरण में अन्तर है। आत्मचरित में रचनाकार अपना जीवन वृत्त लिखता है। कथा का प्रमुख पात्र स्वय होता है। सस्मरण में रचनाकार अपने समय की घटनाओं का वर्णन करता है। आँखो देखा इतिहास लिखता है। सस्मरण, लेखक जो स्वय देखता है, अनुभव करता है, उसी का वर्णन करता है। उसके वर्णन में उसको अनुभूति एव सवेदनायें रहती हैं। सस्मरण जीवनी नही है। अन्य व्यक्तियो के विषय में जो लिखा जाता है, वह जीवनी के निकट है।

श्रीवर ने स्वय लिखा है कि वह राजावली ग्रन्थ लिख रहा था। उसकी राजतरंगिणी इतिहास एवं सस्मरण का मिश्रण है। आज वह भूतकालीन बात होने के कारण इतिहास है। और समकालीन इतिवृत्त होने के कारण सस्मरण मात्र है। उसमें दोनों की झलक मिलती है। सस्मरण के निकट होते भी, उसे इतिहास माना गया है। इस इतिहास का क्रम उसके नाम से प्रकट होता है। राजतरंगिणी नाम ही काश्मीर इतिहास क लिय रूढ हो गया है।

● इतिहास प्रयोजन

श्रीवर रचना का कारण उपस्थित करता है। प्रथम कारण जोनराज क छोडे काम को पूरा करना था। 'इसी जोनराज का शिष्य, मैं श्रीवर पण्डित, राजावली ग्रन्थ के शेष को पूरा करने के लिये उद्यत हूँ' (१ १:३)। वह अपने गुरु जोनराज के सन्दर्भ में पुन लिखता है—'किसी कारण से मेरे गुरु ने नही कहा (लिखा) था, उस अवशिष्ट वाणी को यथामति कहूँ(लिखूँ)गा।' (१ १:१६)

द्वितीय कारण, वह अपने समय के सुल्तानों का वृत्तान्त लिखकर, उनके ऋण से उऋण होना चाहता था—'सज्जन लाग राजवृत्तान्त के अनुरोध से, न कि काव्य गुणो की इच्छा से, मेरी वाणी सुनें। अपनी बुद्धि से योजित करें (१ १.९) अथवा सुल्तानो के वृत्तान्त स्मरण हेतु यह श्रम किया जा रहा है। ललित काव्य की रचना अन्य पण्डित करें। (१ १ १०) तत् तत् गुणो के आदान तथा स्वसम्पत्ति के प्रदान पूर्वक, ग्राम, हेम आदि अनुग्रहो से सुल्तान द्वारा पुत्रवत् (मैं) सम्वर्धित किया गया (१ १ ११) अतएव उसके असीम प्रसाद की निष्कृति (निस्तार) की अभिलाषा से, उसके गुणों द्वारा आकृष्ट मन होकर, मैं उसका वृत्तान्त वर्णन करता हूँ।' (१ १ १२) वह पुन सुल्तान द्वारा प्रदत्त प्रतिष्ठा, दान, सम्मान से उऋण होने की बात लिखता है—'आत्मज सहित इस नृप के राज वर्णन से (राज्य प्राप्ति) प्रतिष्ठा दान, सम्मान, विधान एव गुणो से निष्कृति प्राप्त को जा सकती है।' (१.१.१७)। कल्हण की राजतरंगिणी का उद्देश्य उपदेशात्मक के साथ ही साथ कलि से सन् ११४८-११४९ का इतिहास उपस्थित करना था। जोनराज का उद्देश्य, कल्हण के क्रम को जारी रखते हुए, अपने समयतक का इतिहास सुल्तान जैनुल आबदीन के आदेश पर प्रस्तुत करना था।

कल्हण एवं जोनराज से सर्वथा भिन्न श्रीवर के इतिहास लिखने का प्रयोजन था। वह एक कुशल राजकवि के समान अपने स्वामी की कृपाओं उपकारों का बदला उनके चरित्र, उनके इतिहास उनकी कीर्ति को लिखकर अमर कर चुकाना चाहता था।

प्रतीत होता है। श्रीवर जैनुल आबदीन तथा हैदरशाह के वृत्तान्तों का वर्णन करना चाहता था। उसकी यही प्रारम्भिक योजना प्रतीत होती है। क्योंकि प्रथम तथा द्वितीय तरंग में उनका क्रमशः वृत्तान्त वर्णन किया गया है। द्वितीय तरंग के प्रारम्भ में वह अपनी रचना का कारण उपस्थित नहीं करता।

तरंग तृतीय तथा चतुर्थ उसकी दूसरी योजना है। वह समझता था। उसका स्वतः हैदरशाह के राज्यकाल में ढलती उम्र के कारण अवसान हो जायगा। हैदर शाह का राज्यकाल इतना लम्बा होगा कि वह ग्रन्थ की समाप्ति तक शायद ही जीवित रह सकेगा।

तृतीय तरंग के प्रारम्भ में वह इतिहास लिखने का पुनः कारण उपस्थित करता है—जिस नृपति (हसन शाह) की जीविका का भोग किया प्रतिग्रह एवं अनुग्रह प्राप्त किया श्रीवर पण्डित अपने को ऋण मुक्त होने के लिये उसका वृत्तान्त वर्णन कर रहा हूँ। (३ ३) तृतीय तरंग का नायक सुल्तान हसन शाह है। श्रीवर को सुल्तान अपना गुरु मानता था। उसने श्रीवर पर अनुग्रह किया था। अतएव यह स्वाभाविक है कि श्रीवर ने हसन शाह के वृत्त वर्णन की योजना द्वितीय तरंग लिखने के पश्चात बनायी थी।

चतुर्थ तरंग में वह प्रथम तथा तृतीय तरंग के समान इतिहास लिखने का कारण उपस्थित नहीं करता। हसन शाह का ही पुत्र मुहम्मद शाह था। अतएव बालक सुल्तान के पिता के अनुग्रह का स्मरण कर उसके वृत्तान्त लिखने की योजना बना ली। उसकी लेखनी मुहम्मद शाह के राज्यच्युत होने तथा फतह शाह के राज्य ग्रहण करने के साथ ही विश्राम करती है। यदि श्रीवर फतहशाह के राज्यकाल में जीवित भी रहा होगा तो उसने लिखने का प्रयास इसलिये न किया होगा कि फतहशाह का उस पर कोई अनुग्रह नहीं था। उसके स्वामी के पुत्र को फतहशाह ने राज्यच्युत किया था। राज्य उत्तराधिकार से नहीं बल्कि षड्यन्त्रों एवं सेना के बल पर प्राप्त किया था। अतएव फतहशाह के प्रति उसका अन्य चारों सुल्तानों के समान आदर एवं स्नेह न होना स्वाभाविक है।

समकालीन इतिहास ज्ञान

श्रीवर ने समकालीन सीमान्त तथा भारत के राजाओं के विषय में कुछ सूचनायें दी है। आधुनिक अनुसन्धानों से वे ठीक उतरी हैं। कुछ का निश्चित पता अभी नहीं मिल सका है। आशा की जाती है। अनुसन्धान होने पर उनकी ऐतिहासिकता सिद्ध होगी। सिन्धु के सुल्तान कासिम खान (१ ७ ४० १ ७ २०३), ग्वालियर के राजा डूंगर सिंह (१ ६ १४) राजपुरी के जयसिंह (२ १४५) मद्र के राजा माणिक्य देव, (१ १ ४७ २ १०७) काष्ठवाट के राजा दौलतसिंह (४ २ ११), मेवाड के राणा कुम्भ (१ ६ १३), ग्वालियर के राजा की मृत्यु पश्चात् वहाँ के राजा कीर्ति सिंह दिल्लीपति बहलोल लोदी (१ ६ १७), खुरासान पति अबूसैद (१ ६ २४) गुजरात के सुल्तान महम्मद (१ ६ २५) मद्रमण्डल के राजा अजयदेव (३ ११८) राजपुरी के शृंगारसिंह (४-४१०) मद्र देशस्थ परशुराम (४ २६६) भोट्टन राजा भीमवर (४ २१७) का नाम श्रीवर देता है। इनके अतिरिक्त सिन्ध देश (२ १४८) शाहिभंग (४ २११) पचनद जसरथ तथा उसके पुत्र शाहमसूद (१ ७ ६५), गौड (बंगाल) मालव्य (मालवा) (१ १ १०) सुराष्ट्र (सौराष्ट्र) (१ ६ १७) दिल्लीपति बहलोल लोदी (१ ६ १९७), इब्राहीम लोदी, वाम्दर पाल (१ ५९१) तथा मक्का, गिलान मिस्र (१ ६ २६) इराक के सुल्तानों (१ ७ २९) का उल्लेख बिना उनका नाम दिये करता है।

श्रीवर ने विदेशों के तत्कालीन सुल्तानो का भी उल्लेख किया है। इतिहास से उनकी प्रामाणिकता सिद्ध हो चुकी है—उनमें विशेष उल्लेखनीय खुरासान के सुल्तान अबूसैद है। पचनद के राजा ने ताजिक छोडा सुल्तान को भेंट किया था। वह सुल्तान का मित्र था (१ ३ ६)।

मुगलो और जमू के राजा में युद्ध हुआ था। उसमें सुल्तान जैनुल आबदीन का ज्येष्ठ पुत्र बहराम खाँ राजा के पक्ष से लडता मारा गया था। यह बात इतिहास से सिद्ध हो चुकी है। (२ १०।

समकालीन रचना

नोत्थ सोम ने 'जैन चरित' (१ ४ ३७) योध भट्ट ने 'जैन प्रकाश' (१.४ ३८) भट्टावतार न 'जैन विलास' (१ ४ ३०) जैनुल आबदीन ने 'शिकायत' (१ ७ १नै६) लिखा था। 'सर्वलीला' प्रबन्ध देशी भाषा में गात ग्रन्थ था (३ २५६)। परन्तु उसके रचनाकार पर श्रीवर प्रकाश नही डालता।

रचनाकाल

श्रीवर ने राजतरंगिणी एक साथ नही लिखी है। प्रथम दो तरग उसने एक साथ लिखा था। प्रथम तरग में लिखता है। जैनुल आबदीन एव उसके पुत्र हैदर शाह का वृत्तान्त वर्णन करना चाहता था। प्रथम, द्वितीय एव तृतीयतरग श्रीवर ने मगलाचरण एव वन्दना के साथ आरम्भ किया है। परन्तु चतुर्थ तरग में वन्दना नही की गयी है। चतुर्थ तरंग तृतीय तरग का रचना क्रम है। तृतीय तथा चतुर्थ तरगो का एक वर्गीकरण किया जा सकता है। उसमें हसन शाह तथा मुहम्मद शाह का वृत्त वर्णन है।

श्रीवर प्रथम तथा तृतीय तरगों में ग्रन्थ लिखने का उद्देश्य उपस्थित करता है। परन्तु द्वितीय एव चतुर्थ तरगो में ग्रन्थ की योजना तथा उसके प्रणयन का कारण उपस्थित नही करता। प्रथम तथा द्वितीय तरग इसलिये एक ओर तृतीय तथा चतुर्थ तरग दूसरे वर्ग में रखा जा सकता है। प्रथम तथा द्वितीय तरग की रचना का एक काल तथा तृतीय एव चतुर्थ तरग की रचना का दूसरा काल है। प्रथम तरग में चार सुल्ताना के इतिहास वर्णन का उल्लेख, न कर केवल नृप एव आत्मज शब्द का प्रयोग करता है। नृप से तात्पर्य जैनुल आबदीन तथा आत्मज से अर्थ पुत्र सुल्तान हैदर शाह से है। प्रथम तरग में उसने जैनुल आबदीन के जोनराज द्वारा लिखित शेष वर्णन पूरा करने के लिय लेखनी उठायी थी। उसके रचना का समय सन् १५५९ ई० के पश्चात् है। उसकी योजना चाहे जोनराज के छोडे कार्य को पूर्ण करने की क्यो न रही हो परन्तु योजना समयानुसार परिवर्तित होती गयी। जैनुल आबदीन के बारह वर्षों का इतिहास लिखना चाहता था। उसन (श्लोक १·१ १७) में–'सात्मजस्य नृपस्य' लिखा है। तात्पर्य है। नृप के राज्य का वर्णन, उसके पुत्र सहित करना चाहता था। वहाँ उसने द्विवचन शब्द नृप के लिये नही प्रयोग किया है। इसका अर्थ है कि प्रथम योजना केवल एक नृप जैनुल आबदीन का चरित्र वर्णन मात्र था। उसे वर्णित कर, वह उसके पुत्र का भी वर्णन करना चाहता था। यदि हैदर शाह उस समय सुरतान होता, तो नृप शब्द द्विवचन में लिखता। आत्मज मात्र न लिखता। इससे प्रकट होता है कि प्रथम तरग का आरम्भ उसने जैनुल आबदीन के समय किया था।

सर्वं प्रथम वह शक सवत् १३८६ = लौकिक = ४५४० = सन् १४६४ का उल्लेख करता है (१ १ ७६)। निष्कर्ष निकलता है कि उसने इस समय के पश्चात् ही रचना कार्य में हाथ लगाया था। उसने जैनुल आबदीन क अन्तिम समय का विस्तार के साथ वर्णन किया है। उसने जोनराज की मृत्यु सन् १५५९ के पश्चात् सन् १५६४ ई० का उल्लेख करता है। सन् १४६४ ई० के पश्चात् वह पुनः पीछे सन्

१४५२, १४६०, १४६३, १४५९, १४५७, १४३९, १४६४, १४६३ तथा १४७० ई० क्रम से दिया है। द्वितीय तरंग के पश्चात् संवत् का क्रम ठीक चलता है। इससे प्रकट है कि श्रीवर ने सन् १४६४ ई० के पूर्व रचना में हाथ नहीं लगाया था। जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात् सन् १४७० ई० से वह घटना क्रम सन् वार देता है। इस प्रकार इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि श्रीवर ने राजतरंगिणी लिखना सन् १४६४ ई० के पश्चात् प्रारम्भ किया था। प्रथम तरंग निससन्देह उसने जैनुल आबदीन की मृत्यु पश्चात् लिखा था। जैनुल आबदीन के पुत्र हैदर शाह की मृत्यु सन् १४७२ ई० में हुई थी। उसने केवल दो वर्ष शासन किया था। इससे प्रकट होता है कि उसने द्वितीय तरंग की रचना सन् १४७२ ई० के पश्चात् की थी। श्रीवर ने चाहे लिखने का क्रम जैनुल आबदीन के समय आरम्भ किया हो, परन्तु प्रथम तरंग का समापन सुल्तान की मृत्यु पश्चात् हुआ था।

तृतीय तथा चतुर्थ तरंग एक साथ लिखा गया था। इसका आभास तरंग तीन के तृतीय श्लोक से मिलता है। वह लिखता है—'जिस नृपति की जीविका का भोग किया, अनुग्रह एवं प्रतिग्रह प्राप्त किया, मैं श्रीवर पण्डित अपने को ऋण मुक्त होने के लिये उसका वृत्त वर्णन करूँगा।' (३:३) सुल्तान ने उस पर जो उपकार किया था, उससे उऋण होने की भावना से ग्रन्थ रचना में उसने पुनः हाथ लगाया था। तृतीय तथा चतुर्थ तरंगों में वर्ष क्रम बिल्कुल ठीक दिया गया है। कहीं व्यतिक्रम नहीं हुआ है। पूर्व घटना का वर्णन न कर, सन् १४७२ ई० से सन् १४८६ ई० तक की घटनाओं का क्रम से वर्णन किया है। इससे प्रकट होता है। हसन शाह की मृत्यु के पश्चात् तृतीय तरंग लिखने में हाथ लगाया और सन् १४८६ में समाप्त किया। तृतीय तथा चतुर्थ तरंग सन् १४८४ के मध्य दो मास कृष्णाजन्म नवमी से १४८६ की रचना है। इस प्रकार प्रथम तथा द्वितीय तरंगों का रचना काल सन् १४७० ई० के पश्चात् तथा सन् १४७२ ई० के लगभग हुआ था।



मंगलाचरण :

कल्हण, जोनराज एवं शुक ने प्रत्येक तरंगों के आरम्भ में मंगलाचरण एवं वन्दना लिखी है। श्रीवर के इस व्यतिक्रम का यही कारण है कि प्रथम तरंग का मंगलाचरण लिखकर, द्वितीय तरंग और तृतीय तरंग का मंगलाचरण लिखकर चौथे तरंग को तृतीय तरंग का रचना क्रम मान लिया है।

श्रीवर ने तरंग प्रथम तथा तरंग तृतीय में मंगलाचरण लिखा है। तरंग दो सद्याचार बिना मंगलाचरण के आरम्भ किया गया है।

कल्हण ने मंगलाचरणों में यश, जय, रक्षा, पाप क्षय एवं प्रसन्नता की कामना की है। जोनराज ने मंगलाचरण में लोक के सद्भाव एवं सम्पत्ति की कामना की है। उस ने मंगल कामना के लिये, किसी देवी या देवता का स्मरण नहीं किया है। उसने लोक कल्याण की कामना की है। श्रीवर जोनराज का शिष्य है। उसने कल्हण, जोनराज के मंगलाचरण को पढ़ा था। उनके दर्शन का ज्ञान था।

कल्हण प्रत्येक तरंग का आरम्भ अर्धनारीश्वर की वन्दना से किया है। जोनराज ने कल्हण का अनुकरण कर, अर्धनारीश्वर की वन्दना की है। श्रीवर कल्हण एवं जोनराज का अनुकरण करता अर्धनारीश्वर की वन्दना किया है। श्रीवर के पश्चात् शुक ने भी अर्धनारीश्वर की वन्दना की है। चारों राजतरंगिणी कारों ने अर्धनारीश्वर की आराधना की है। किन्तु चारों का दृष्टिकोण भिन्न है।

कल्हण हिन्दू कालीन कवि था। काश्मीर स्वतन्त्र था। राजभाषा संस्कृत थी। संस्कृत काव्य का कश्मीर केन्द्र था। दर्शन, योग एवं तन्त्रों का केन्द्र था। कल्हण राजकवि नहीं था। किसी का आश्रित नहीं था।

किसी को प्रसन्न करने के लिये, उसने लेखनी नही उठायी थी। परन्तु जोनराज, श्रीवर तथा शुक तीनों ही मुसलिम कालीन कवि है। तीनों राजकवि थे। तीनों सुल्तानो के आश्रित थे। तीनों ने पतनोन्मुख काश्मीर का दर्शन किया था। कल्हण तथा अन्य तीनों राजतरंगिणीकारो के दृष्टिकोणो में कालान्तर के कारण भेद होना स्वाभाविक है।

जोनराज सुल्तान को कुछ कम प्रसन्न करने की इच्छा रखता था। उसके समय काश्मीर की जनता हिन्दू से मुसलमान हुई थी। मन्दिर टूटे थे। उसने मन्दिरों की गरिमा देखी थी। उनका खँडहर होना देखा था। जोनराज की भाषा में वेदना है। उसे वह अपने काव्य प्रवाह में भी भूल नही सका है।

श्रीवर तथा शुक काश्मीर का प्राचीन वैभव नही देखे थे। उन्होंने मन्दिरों के ध्वंसावशेषों को देखा था। हिन्दुओं का उत्पीडन देखा था। दमन देखा था। परिस्थितियो ने उन्हें भाग्यवादी बना दिया था। इसकी झलक श्रीवर के मगलाचरण एव रचना में मिलती है।

श्रीवर ने मगलाचरण में विचित्र कामना की है। वह भगवान् से कामना करता है। अर्धनारीश्वर अद्वैत भावना दे। श्रीवर के मगलाचरण से स्पष्ट प्रकट होता है। वह अद्वैतवादी था। अद्वैत दर्शन से प्रभावित था। श्रीवर का यह अद्वैत वाद, यह एकेश्वर वाद, तत्कालीन मुसलिम एकेश्वर वाद के कठोर सिद्धान्तों से प्रभावित है। श्रीवर भी अन्य काश्मीरियो के समान था। उसने प्रथम तथा तृतीय तरगो के मगलाचरण में शिव को नमस्कार किया है।

● **कवि बन्दना :**

प्रत्येक राजतरंगिणीकार ने कवि बन्दना की है - 'पदन्यास के कारण मनोहारी, क्षीर-नीर विवेकी, वे राजकवि वन्दनीय है, जो सरस शब्दों के कारण प्रख्यात हुए है। अनित्यता रूप अन्धकार से युक्त, स्वामी शून्य, इस महीतल पर, काव्य दीपक के अतिरिक्त, कौन अतीत वस्तु को प्रकाशित कर सकता है? ब्रह्मा जिन राजाओ के नश्वर शरीर की रचना करता है, इन्ही के कीर्तिमय शरीर को जगत् में कल्प पर्यन्त जोनराज स्थायी करता है।' (१:१ ६-५)

श्रीवर ने कल्हण के निम्नलिखित भाव को दूसरे शब्दो में रख दिया है—'सुधा धारा को भी मात करने वाले कवियो का गुण वन्दनीय है। जिनके कारण उनकी तथा दूसरो की यश काया स्थिर रहती है।' (रा १:३) कल्हण और लिखता है—'जिन राजाओ की छत्रछाया में पृथ्वी निर्भय रही, वे राजा भी जिस कवि कर्म के बिना स्मृति पथ पर नही आते, उस कवि कर्म को नमन है।' (रा १ ४६)

जोनराज कवि की वन्दना नही करता। परन्तु राजाओ के जीवित रहने का कारण कवि को देता है—'तदुपरान्त देशादि दोष अथवा उन (राजाओ) के अभाग्यो के कारण किसी कवि ने वाक्य सुधा से अन्य नृपों को जीवित नही किया' (श्लोक ६)। वह और लिखता है—'मैंने राज उदत कथाओ का सूत्रपात मात्र किया है, (अब) इस विषय में चतुर कवि शिल्पी रचना करें।' (श्लोक १७)

शुक ने भी कवि बन्दना की है—'सुन्दर पदों से शोभन, अविरल अनुप्रास युक्त, शुभ्र नाना प्रकार के अर्थो से अनुगत, मान्य सुकवियों के ललित भावों से अन्वित, श्लोकों के रचनाकार, तर्क वितर्क से कुशल मति, कवि का प्रमाणन्वित वाक्यवन्द है, जिसकी क्रान्ति से नृपों की कीर्ति, वस्तु रचना, सब ओर से देदीप्यमान हो उठती है।' (१४) तरग तृतीय के मगलाचरण में श्रीवर पुन कवि की बन्दना करता है—'भूतकालीन जिस राज वृत्तान्त को अपनी वाणी की योग्यता से वर्तमान करता है, वह योगीश्वर कवि वन्दनीय है।' (३२)

राजतरंगिणीकारों ने कवि प्रशंसा की परम्परा का निर्वाह किया है। जोनराज का कवियों के प्रति ताप प्रकट होता है। दोष देता है। उन्होंने राजाओं का जीवन वृत्त क्यों नहीं लिखा ? अतएव जोनराज ने कवियों की स्पष्ट रूप से वन्दना नहीं की है।

उद्देश्य :

चारों राजतरंगिणीकारों के रचना का उद्देश्य भिन्न है। कल्हण का उद्देश्य राजतरंगिणी को इतिहास के साथ उपदेशात्मक ग्रन्थ बनाना था। वह स्वयं लिखता है—'उसकी राजतरंगिणी भविष्य के राजाओं का मार्ग निर्देशन करेगी' (रा १ ३१) जोनराज का उद्देश्य सर्वथा भिन्न था—'राजपथिकों के दर्प ग्लानि से समुत्पन्न, ताप परम्परा को हरने के लिये, भविष्य में फलप्रद काव्य द्रुम समरोपित किया है। (श्लोक ८) कवियों के उपयोग्य मेरी वाणी स्वान्त्य सिद्ध के लिये ही है।' (श्लोक १६) उसकी रचना का तात्कालिक कारण जैनुल आबदीन के सर्वाधिकारी श्री शीर्य भट्ट का आदेश था। वह लिखता है—'सभी धर्माधिकारों पर नियुक्त, दयालु श्री शीर्य भट्ट के मुख से सादर आज्ञा प्राप्त कर, इस समय राजावली को पूर्ण करने के लिये, अपनी बुद्धि अनुरूप, मेरा यह उद्यम है, न कि कवि होने की अभिलाषा।' (श्लोक ११, १२) जोनराज का उद्देश्य काश्मीर के इतिहास को अपने समय तक पूर्ण करने के साथ ही साथ, सुल्तान जिसका वह राजकवि था, आदेश पालन, करना था।

श्रीवर ने जोनराज की शेष रचना को पूर्ण करने के अतिरिक्त अपना उद्देश्य स्पष्ट किया है—'सज्जन लोग राज वृत्तान्त के अनुरोध से, मेरी वाणी सुनें और अपनी बुद्धि से योजित करें। अथवा नृप वृत्तान्त के स्मरण हेतु, श्रम किया जा रहा है। ललित काव्य की रचना अन्य पण्डित करें (१.१ ९,१०) किसी कारण से मेरे गुरु (जोनराज) ने जिसे नहीं कहा (लिखा) था, उस अवशिष्ट वाणी को यथा मति कहूँगा (लिखूँगा)। (१ १ १६) अनेक विपत्तियों तथा वैभव के स्मरण से, जैन तरंगिणी किसमें वैराग्य नहीं पैदा कर देगी।' (१ १:१८)

श्रीवर तत्कालीन राजनीति से खिन्न हो गया था। पिता-पुत्र, भाई-भाई के संघर्षों ने काश्मीर की सुव्यवस्था बिगाड़ दी थी। स्वार्थपरता, पद लोलुपता, अर्थ मोह ने मनुष्य को पशु बना दिया था। किसी पर विश्वास करना कठिन था। श्रीवर को इस स्थिति से स्वयं विराग हो गया था। उसने अपने विरक्त भाव को स्थान स्थान पर व्यक्त किया है—'कल्पान्त तक, स्थिरता की आशा से, कोटि-कोटि धन देकर, जो निर्माण किया गया, वह जलकर भस्म हो गया।' (४ ३२७)

दृष्टिकोण :

श्रीवर निरपेक्ष चिन्तय विद् था। दूसरा कुछ, उस काल में हो भी नहीं सकता था। हिन्दुओं का स्तर समाज में ऊँचा नहीं था। राजनीति में स्थान नहीं था। सुल्तान सैयिदों तथा विदेशी मुसलमानों से प्रभावित थे। विदेशी भाषा अरबी तथा फारसी पढ़ने-पढ़ाने पर बल दिया जाता था। हिन्दुओं की स्थिति अच्छी नहीं थी। श्रीवर यद्यपि धर्म निरपेक्ष था, तथापि उसने विचारों को स्वतन्त्रतापूर्वक प्रकट किया है। उसने हिन्दू आचार-विचार, संस्कार एवं परम्परा का गर्व करते हुए, समर्थन किया है। आलोचना प्रत्यालोचना नहीं करता। परन्तु अपनी बात स्पष्ट सरल शब्दों में निर्भीकता पूर्वक व्यक्त करता है। वह अपने आश्रयदाता सुल्तानों से भयभीत नहीं था। जहाँ उनकी प्रशंसा करना चाहिए था, वहाँ प्रशंसा किया है। जहाँ आलोचना की आवश्यकता पड़ी है, कटु आलोचना में संकोच नहीं किया है। उसका दृष्टिकोण उदार है। वह व्यर्थ की

आलोचना-प्रत्यालोचना एवं विवादों में नहीं उलता । इसका अभाव जोनराज तथा शुक में मिलता है। वे अपने आश्रयदाता सुल्तानों के धार्मिक विषयों पर कुछ व्यक्त न कर, उससे बचना चाहते थे ।

श्रीवर ने अपने विचारों को दृढ़ता पूर्वक प्रकट किया है। उसने सुल्तानों तथा मुसलिम धर्म के रीति रिवाजों की आलोचना भी की है। वह मृतक संस्कार के संदर्भ में स्पष्ट बलवती भाषा में गाड़ने की अपेक्षा दाह संस्कार को अच्छा मानकर, उसका समर्थन किया है। उसका तर्क आज भी मान्य है। जगत दाह संस्कार की ओर, ईसाई, शिन्तो, कनफ्यूसस अथवा मुसलिम धर्मानुयायियों के होने पर भी बढ़ रहा है। श्रीवर लिखता है—'जो अपने देह में स्थित, अपने आयु की अवधि जानता है, और मित्रता के कारण अन्तक, जिसके आधीन होता है, उसी के लिए शवाजिर कर्म करता उचित है, म्लेच्छों का यह दुर्व्यसन मात्र है, यह मेरा मत है। (२ ९०) प्रत्येक सामान्य जन सैकड़ों हाथ भूमि घेरने में रत रहता है और दूसरे का प्रवेश यत्न पूर्वक नहीं होने देता, क्या उसे लज्जा नहीं आती ? मुसलिम शास्त्रों में सुना गया है कि यदि शव भूतल पर छोटी शिलायें स्थापित कर दी जाँय, तो उसके परलोक जाने पर सुख मिलता है। अहो ! आश्चर्य है !! इस लोभ के माहात्म्य पर, जो कि जीवित की तरह मृत भी शवाजिर के व्याज से, भूमि का आवरण (घेराव) करते है। अन्य (हिन्दू) दर्शन का आचरण ही श्रेष्ठ है, जहाँ हस्त मात्र भूतल पर, नित्य करोड़ों दग्ध होते है, तथापि वह उसी प्रकार खाली रहता है। इस प्रकार प्रसंग वश, यहाँ जो अनुचित निन्दा की है, मुसलमान लोग उसे क्षमा करेंगे, क्योंकि कवि की वाणी निरंकुश होती है।' (२:९०-९७)

वैराग्य :

श्रीवर ने चारों तरंगों में चार उद्देश्य किंवा कामना की है। प्रथम तरंग का स्थायी भाव जोनराज के शेष इतिहास अर्थात् जैनुल आबदीन के अपूर्ण चरित्र को पूरा करना था। राज्य वृत्तान्त के अनुरोध से वह अपनी वाणी पाठकों को सुनाना चाहता है। सुल्तान ने उस पर जो उपकार किया था, उसकी निष्कृति के लिये रचना पर, तत्पर हुआ था। द्वितीय तरंग में मुख्य भाव की कामना की है। तृतीय तरंग की रचना जिस सुल्तान की जीविका का भोग किया था, उससे उऋण होने के लिए, हसन शाह का चरित लिखा है। परन्तु तृतीय एवं चतुर्थ तरंग का स्थायी भाव वैराग्य है। वह लिखता है—'अपनी आँखों से देखे, स्मरण किये गये, राजाओं के विपत्ति, वैभव आदि विकृतियों के कारण यह राजतरंगिणी किसमें वैराग्य नहीं पैदा करेगी।' (३ ४) श्रीवर ने बहराम खाँ के कारागार में उठते उद्गार, मन्त्रियों एवं सेनानायकों की स्वार्थ परता, काश्मीरियों एवं सैयिदों के रक्त रंजित घटना क्रमों, क्रूरता की पराकाष्ठा, घमण्डी धनिकों का शोषण और आततायियों का पीड़क होना, वंशजों के रक्त से हाथ रंगना, पद च्युत होते ही श्रीहीन हो जाना, स्वार्थ के लिये नाना प्रकार के कुकर्म, विभव का लोप, पराभव का कष्ट, किंचित् स्वार्थ पूर्ति के लिये, आचरण का त्याग आदि घटनाओं के कारण तृतीय तथा चतुर्थ तरंग में पद पद पर वैराग्य उत्पन्न होता है। जैनुल आबदीन भी अपने पुत्रों के व्यवहार से जीवन से, ऊब गया था। वह कहता है—'देह रूप यह कुटीर, जो केश रूप तृणों से आच्छादित है, जीर्ण एवं छिद्रयुक्त हो गयी है, मन रूपी मुनि को यह रुचिकर नहीं लग रही है।' (१ ७१ ४४)

कल्हण का, स्थायी भाव शान्त रस है। जोनराज का स्थायी करुण रस है। श्रीवर में वीर-शृंगारादि भाव सभी रसों का दर्शन मिलता है परन्तु वैराग्य भावना सर्वदा परिलक्षित होती है। जीवन के संघर्ष, स्वार्थ लोलुपता, ऐश्वर्य एवं लक्ष्मी की चचलता आदि के कारण श्रीवर के वर्णन से मन में विराग उत्पन्न होता है।

भूगोल :

श्रीवर को काश्मीर के भूगोल का ज्ञान था। परन्तु काश्मीर के बाह्य देशों का उसे वास्तविक ज्ञान नहीं था। काश्मीर के बाहरी स्थानों का वर्णन उसने सुनकर लिखा है। उनके सम्बन्ध में विशेष परिचय नहीं देता। उसने कल्हण के समान पर्यटन नहीं किया था। मद्र का उल्लेख किया है। परन्तु मद्र भूखण्ड का परिचय नहीं देता।

प्राचीन संस्कृत नाम, जो उस समय प्रचलित थे, लिखा है। अनेक स्थान प्राचीन तथा रूप एवं नाम ग्रहण कर लिये थे। श्रीवर उनका तुलनात्मक परिचय नहीं देता, ताकि उन स्थानों का निश्चय किया जा सके। उसने प्राचीन स्थान के नामों में—अवन्तिपुर (१ ४ ४,३.४२), अर्धवन (३.४२५,४'४८), इक्षिका (२ ११,३ २५), सूरपुर (१ १ १०,), सूरपुर अम्बवन (३ ४२७), सुप्त सुमन (१ १ १२४), मल्लशिला (१ १ ७,४ ४५६), पर्णोत्स (१ ७ ८०,२०८,२ ९८), अभ्यन्तर कोट (१.७ ८१), विपुशाटा (१ ७ २०५), सुय्य पुर (१ ३ ९१,१ ७ २०७), अमृत उपवन (२'४२), बलाटप मठ (२ १४०), सुय्याश्रम (३ ३४७), खेरी (४ १८७,४४८,४५५), क्षिप्तिका (३'१८६), कराल (३:१९१,४:४५७), वैश्रवणगिर (३ ५११), देवसर (३.१०३) बहुरूप (३१५७), दिल्लीपुर (१ १५८), दुग्धाश्रम (३:१७१,४:१०९), कर्कोट द्रंग (३'४५७), काष्ठील (४ २४०), काष्ठवाट (४ २११), कालीधारा (४ २१८), कुमार सर (१ ५ १०६), कुलोद्धरण नाग (३ १७८), क्रमसर (१:५ ९६), १ ५:१), क्रमराज (३ ४१), क्षेम गौरीश्वर (१ ६१ ७३), जयापीड पुर (१ ३ ३३ ३७,४ ५३५), त्रिपुरेश्वर (१ ५ १५३५७), दामोदर उद्र (४ ६१५) दिद्दा मठ (३:१७१), द्रंग (४ ५७७), दुग्धाश्रम (४ १०९), नागाम (४:३४७), नीलाश्व (४ १००), नौबन्धन (१ ५ ८८,१०५), पद्म पुर (४.३४२), परिहास पुर (४ ३५०), पुराण दशक स्थान (४.२५१), पूर्वाधिष्ठान (४ २८८), प्रद्युम्नाचल (१ ७ १०४), मेदा या मेद (४:८९२), मार्गिला : (४ १०७,४:६१४), मक्षिकाश्रम (४ ३४९), मडवराज (४.४४३), लाष्ट विहार (४.१२१,१८९), लंका (१.५.३४), लम्बादरी (१ ३ ८), वामपार्श्व (४ २३९), विजयेश (२ १७८), विश्वप्रस्थ (४ ९७,१९१ ६३८,१ ७ ३), शमाला (४ १०७), सतीसर (४ १९) समुद्र मठ (४ १२०), समुद्र कोट (१ ५ १३), सिन्धु संगम (१ ५:५५), स्या पर्वत (१ ७'३,१ ५:३६) सुरेश्वरी (१ ४:३३,४०), स्कन्द भवन (४ १२२), हस्तवालिका (४:२५२), एवं हस्तिकर्ण (१ ५ ५५), का नाम दिया है।

श्रीवर कुछ नवीन स्थानों का नाम देता है। जिनमें कुछ का पता लग गया है और कुछ का मूल स्थान अज्ञात है। उनका यथा स्थान वर्णन किया गया है। अनेशा (३ १८२), अमृत वाटी (४ ३५), अलाभ पुर (४ ३१५), कुटी पाटीश्वर (२ १५३), कुद्दान पुर (१ ३ ८४), कुतुबुद्दीन पुर (४ १४५), कुद्दन पुर (१ ८०), गुम्भिकाद्द्वार (४:४६१,४.५ २७), गुलिका वाटिका (३ २७६), ग्रहण (४:४०९), जैन नगर (४:१२०), ज्वाल द्रामड (४'४०४,३९६), ज्यमाल मैरुग (३ ५११), डुल्ल पुर (३:५५), द्रामगामा (४:४६३), धारा तीर्थ (३ ९३), नैपुर (४:१२१), पंचपद्धर (३:१०१,४ २१२), पूगामठ (४ २६१), पान्नुआ (४ ३०४), बहवो विषय (४ १३४), बाल्मेश्वर (२ १४५), ब्रह्म मण्डल (५ ५६९), भैरवगल (४ ५२४, ५८४), मल्लिकपुर (४:१८९) मुक्ता मूल नाग (४ ६३), मावरी (३ ५४), मृगवाट (३ १९८), रत्न पुर (१ ७ १३) रुद्रवन (४ १२५), रुद्र विहार (४ १३५), लक्ष्मी पुर (२ १४), लुडभट्ट विहार (४:१७५), वितुम्या नाड (४ ६१,६६,६७), शस्त्र गल (४ २१७), सत्तोपुस्टा (३ १८६), सात दैवत (६:१६), सग्राम (३ २५), सालीर (१:७ २५०), सिन्धु वाट (१:१ ५१), हेलाम्पुर (१ ३:४२), कत्तवाड (४.६०४), कम्पवाट (४ ६'४), कल्याणपुर (४:४६२,५००), काचगल (४.५८६), क्षेमराज्यपुर (३'४१), स्नान मठ

(४ ६३), (४५५६) जुहिलामठ, (४ ६१), चक्कवाद (४ ४६४), चटिकासार (४:६१३), छुन्दानक (४ ३७१), जम्म वाट (४ ५६६) तारवल (१ ७ २), दीनार कोट (२ १४८), दुर्गापुर (१ ३ २१,) नन्दपुर (४ ११८), मगलादेवी (२ १४८), मगलमाड (४ ५१२), मानस नगर (१ ३ ४८) सिकन्दर पुरी (२ ४२), सिद्धपुरी (१ ५ ४३), सुप्रसन्नमन (१ १ ११४), सुमनो वाट (२ १२१,४ २६२), का उल्लेख किया है।

श्रीवर ने सीमान्त तथा भारतवर्ष के देश प्रदेश के कुछ प्राचीन तथा कुछ अपने समय के प्रचलित नाम दिये हैं। उनका विस्तृत विवरण नहीं देता। उनका यथास्थान वर्णन किया गया है। प्राचीन देशों में अभिसार (१ ५ २२) उत्तरा पथ (४ ३३६), किन्नर (१ ६ ७), गान्धार (३ २४५), गुर्जर (१ ६ २५), गौड (१ २५ १ ६ १०, ३ २४५) जालन्धर (४.४०६), दर्वाभिसार (१ ५ २२), पचनद (१ ६ ६), पाचाल (३ ४२), भुट्ट (३ २२), मद्र (२ ६८), माण्डव (१ ६ १०), वाराणसी (१ ५ ४०) विष्णु पर्वत (१ ५ ९.८), सिन्धु देश (१ ७ ३४४७,२०५,४ १०९) सुराष्ट्र (१ ६ १७) स्यालकोट (३ ३४०) का उल्लेख किया है।

विदेशों के भी कुछ नाम दिये हैं—इराक (१ ७ ५९) खुरासान (१ ४ ३२,१ ६ २५), गिलान (१ ६ २६), ताजिक (१ ६ ६), दरद (१ ३ ९५), मक्का (१ ४ ३२), मिस्र (१:६ ३१)।

अप्रचलित नामों में—गोपालपुर (१ ६ १४), भोप देश (१ ४ ५०), भिम देश (१ १ १७,२ १४८), तुरुष्क देश (४ ४२७), शाहिभग (४ २१२) नाम दिया है। जिनका पता अन्य स्रोतों से खोजना पडता है।

नदियों में ज्यलम'—झलम = वितस्ता (२ १५१), महासरित (१ ४ २९ ३ २७६,७७,१ ५ ५७), विशोका (१ ३ ८,१३,१५,३९), तिलप्रस्था (१ ५ ३५) तथा सिन्धु का नाम देता है। यहाँ प्रथम बार झेलम का उसके प्रचलित वर्तमान नाम से लिखा है।

काश्मीर मण्डल के स्थानों का सामान्य ज्ञान श्रीवर को था। उसने जितना बडा ग्रन्थ लिखा है, उसके अनुपात से भौगोलिक परिचय बहुत कम दिया है। उसने जिन स्थानों का नाम दिया है, उसमें कुछ को छोडकर, शेष का पता लग जाता है। उसका भौगोलिक वर्णन ठीक है। सीमान्त तथा बाह्य देशों का न तो उसने भौगोलिक वर्णन किया है और न उनका परिचय देता है। वे सम्भवतः उस समय इतने प्रचलित नहीं थे कि उनके परिचय देने की आवश्यकता होती।

निर्माण

श्रीवर के काल में निर्माण बहुत हुए थे। उनमें प्रमुख—जैन तिलक (१ ३.३४), हेलापुर (१ ३ ४३), जैन सर (१ ६.१), नवीन राजनिवास-अमालीश्वरपुर (१ ३ ४४), कुल्या निर्माण (१ ५ १२८), जैन नगर में राजधानी निर्माण लौ० ४५१५ = सन १४३९ ई० (१ ५ ४), ग्राम निर्माण (१.५ १३), सरोवर निर्माण (१ ५ ३०), कुलोद्धरण नाम पर राजगृह निर्माण (१ ६ ३), बारहमूला में नवीन आवास निर्माण (१ ७ ४२) दिद्दामठ नदी तटपर राजधानी निर्माण (३ १७१), मुल्तखातून द्वारा मदरसा निर्माण (३ १७५), श्रीनगर में खानकाह निर्माण (३ १७७), अनेक्षा उद्यान में गृह निर्माण (३ १८२), सुय्यपुर में राजधानी (३ १८१) तथा विजयेश्वर में नदी तट पर राजगृह का नवीनीकरण किया गया (३ १७९)। कुलोद्धरण नागपर राजवास का जीर्णोद्धार (३ १७८) अग्निदग्ध सुय्यपुर का नवनिर्माण (१ १९५), (१ ७ ४३), लहर राजवास का जीर्णोद्धार (१.५ १३,१४) किया गया था, आयुक्त अहमद के पुत्र नौराज आयुक्त ने नवीन मठ के साथ नगर में शिल्पिका तथा नवीन शैलसेतु निर्माण कराया (३ १८८)। ताजभट्ट ने कराल देश में जैनपुरी के मध्य मठ निर्माण कराया (३ १९१)। राजा ने बलाढ्य मठ के अन्दर खानकाह (३ १९३)

तथा अपनी जन्मभूमि में नवीन विहार बनवाया (३ १९३–१९४)। उसने मण्डल में मठ अग्रहार मसजिद विहार एवं गृह पत्नियों से तीस-तीस प्रतिष्ठाएँ कीं (१-१९५)। आयुक्त अहमद ने मसजिद, हुजरा एवं खानकाह बनवाया (१ १८४) क्रिय डामर ने जैन नगर में सुन्दर सत्र वाला मसजिद, हुजरा सहित खानकाह बनवाया (३ १९७)। बोधा खातून ने मृगवाट में दग्ध मठ का नवीनीकरण किया (३:१९८)। रिगक और नुत्यक ने क्रमराज्य में दो मठ निर्माण कराया (३१९०)। मोमरा खातून ने जैन नगर में नवीन मठ बनवाया (३ १९९)। अयराज, राजपुरी वंशीय ने सिकन्दरपुर के निकट नवीन खानकाह निर्माण कराया (३ २०१)। फेर ठक्कुर ने विजयेश्वर नदी तट पर मठ निर्माण कराया (३.२०२)। हिन्दू तथा बौद्धों द्वारा भी एक निर्माण का पता चलता है। सव्य माण्डपति ने विजयेश्वर में विहार बनवाया, जो धर्म संघादि उपहार से बौद्ध मार्ग सदृश शोभित था (३:२०३)। लक्ष्मभैर आदि श्रेष्ठवणिकों ने भीम स्वामी गणेश का शैलमय नवीन प्रसाद निर्माण कराया (३ २०४)। छिछली भूमि पर राजा ने सरोवर खुदवाकर, उसमें कमल, शृगाट (सिंघाड़ा) भोजनोपयोगी पादप लगवाये।

जातियाँ :

श्रीवर ने जातियों के विषय में बहुत लिखा है। मुसलमान हो जाने पर भी हिन्दू जाति-पात छोड़ न सके थे। अपने पूर्व जाति एवं उपजाति का पुछिल्ला साथ लगाये रखे। जातियों में खश (४ ११३,२१२,४९४, ६५०), चक (१.१ ४०,४ ५८५), आभीर (१ १:२५), किरात (१ ५ ५८,३.२९०), दरद (१:३ ९५), किन्नर (१ ५:१०,१ ६:७), राजपूत (४:४६५,५२७), सैयिद (३ १६०), तुरुष्क तथा काश्मीरी थे। काश्मीरियों में अनेक उपजातियाँ, ठक्कुर (१ १:४४,३ ४६३,४'१०४), डामर (१:१ ९४,१३३), प्रतिहार (१ १ ९२,१५१), राजानक (१ १ ८८), मार्गेश (१:१ ९२,१५२), सैन्यी (१:१ ९४,१३३), लवण्य-लुन (१ ३ ६९,७०), डोम्ब (४:१६९,४७४), चाण्डाल (१ १ ३८,४ ९१), नायक (४'४१५,४४२), रावत्र (२ ३१२,४ ३३९), आयुक्त (२ १७३,१८१,३.३७०,३८०,३९४,४००) के अतिरिक्त सिद्ध थे (३.५०९) जातियों का उल्लेख श्रीवर ने किया है। उनका विस्तार के साथ यथास्थान वर्णन मिलेगा। हिन्दुओं में केवल एक ही जाति ब्राह्मणों का उल्लेख मिलता है। उनमें राजानक तथा भट्ट ब्राह्मण वर्गों का बहुत उल्लेख है।

धर्म :

श्रीवर के समय काश्मीर मुसलिम बहुल प्रदेश था। मुसलिम धर्म में सुन्नी एवं शीया दोनों सम्प्रदाय थे। सूफियों की भी महत्ता थी। चक जाति शीया थी। शेष सम्प्रदाय सुन्नी एवं उनके उप सम्प्रदाय थे। मुसलिम सूफियों के अतिरिक्त ऋषियों, दरवेशों एवं पीरों की भी परम्परा थी।

हिन्दू—जाति प्राय शैव मतावलम्बी थी। उनमें तन्त्र तथा वैष्णव मत का भी कुछ प्रचार था। हिन्दुओं के मुसलमान हो जाने पर भी, पुरातन धार्मिक संस्कार जनता में व्याप्त थे। श्रीवर ने चतुष्पाद धर्म का बहुत उल्लेख किया है। हिन्दुओं में सनातन धर्म पर आस्था बनी थी। हिन्दुओं में मूर्तिपूजा प्रचलित थी। सिकन्दर बुत शिकन के प्रतिमा भग के पश्चात् भी जैनुल आबदीन के समय प्रतिमाएँ स्थापित की गयी। गृहों में गृह देवताओं की पूजा होती थी (१.३ १७)।

बौद्ध—बौद्ध धर्म भारत में लोप हो गया था। फिर भी भारत के सीमान्त प्रदेशों में किसी न किसी रूप में प्रचलित था। सुदूर पूर्व में बंगला देश के पूर्वीय खण्ड, भारत के उत्तर, भूटान, सिक्किम, नेपाल,

लद्दाख में आज भी है। काश्मीर में बौद्ध एवं हिन्दू धर्म एक साथ माना जाता था। जनता भगवान् बुद्ध की पूजा अवतार रूप में करती थी।

श्रीवर के वर्णन से प्रगट होता है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में कुछ बौद्ध धर्मावलम्बी काश्मीर में थे। जनता शेष भारत के समान बुद्ध भगवान् की पूजा भूल नहीं सकी थी। श्रीवर का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है—'सभ्य भाण्डपति ने विजयेश्वर में विहार बनवाया, जो धर्म सधादि उपहार से, बौद्ध मार्ग सदृश शोभित हुआ।' (३ २०३) श्रीवर स्वयं प्रत्यक्षदर्शी था। अतएव उसका वर्णन अविश्वनीय नहीं है। लद्दाखी बौद्ध काश्मीर के खण्डित बौद्ध उपासना स्थलों पर शताब्दियों तक आते रहे। जैसे जरूसलम में यहूदी पुराने टूटे, मन्दिर की दीवाल पर, जाकर माथा, इसराइल राष्ट्र बनने के पूर्व टेकते थे। पूर्वकाल की स्मृति में आँसू बहाते थे। जिसके कारण दिवाल का नाम ही वीपिंग वाल हो गया था। भारत में भी मथुरा के जन्म स्थान, अयोध्या के जन्मभूमि तथा काशी में विश्वनाथजी के भग्न मन्दिर ज्ञानवापी में पूजा और यात्रा आज भी की जाती है।

तन्त्र—तन्त्र पुरातन दार्शनिक धर्म का स्थान ले रहा था। यह क्रिया तन्त्रों के उदय के साथ काश्मीर में आरम्भ हो गयी थी। शैव, वैष्णव, गाणपत्य, सौर आदि अनेक तन्त्रों की शाखा प्रशाखाओं का केन्द्र काश्मीर था। तन्त्र के विकास में काश्मीर ने यथेष्ट योगदान किया है। श्रीवर ने गण चक्रोत्सव आदि तान्त्रिक क्रियाओं का उल्लेख किया है (१ ३ ४६)।

निर्माण—पूर्वकालीन देवस्थान खानकाह मसजिद, हुजरा, मदरसा, जियारत आदि में परिणत कर लिये गये थे (३ १९४) श्रीवर मुसलिमों द्वारा विहार, मठ आदि निर्माण का उल्लेख करता है, तो उनका अर्थ मुसलिम धार्मिक निर्माणों से लगाना चाहिए। श्रीवर ने इसे स्वयं लिखा है—'गोला खातून नाम की रानी, जो राजमाता थी। उसने भी मदरसा नाम से विशाल धर्मशाला का निर्माण कराया' (३ १७५)।

सुल्तान जैनुल आबदीन के पश्चात् राज्य की सहिष्णु नीति पुनः बदल गयी। मुसलिम शरियत के अनुसार नवीन देवस्थानों का निर्माण नहीं किया जा सकता था। परन्तु प्राचीन की मरम्मत की जा सकती थी। तथापि कुछ उदाहरण मिलते हैं। हिन्दुओं ने निर्माण कार्य किया था। वे अपवाद मात्र हैं।

धर्म विपर्यय के परिणाम के विषय में श्रीवर लिखता है—'इस देश में अब लोग प्रवचना द्वारा (धन) सञ्चय करते हैं और उत्-उत धर्म विपर्यय के कारण अपनी मायावी निस्सारता प्रकट कर देते हैं, उस समय विविध प्रकार के उपद्रवों से उत्पन्न तूफान, अग्निदाह, प्रचण्ड हिमपात से घोर शीत एवं रोगादि प्रजा को पीड़ित करते हैं' (३ २६९)।

०

हिन्दू

काश्मीरी मुसलमान हिन्दू रीति रिवाज को तिलाञ्जलि नहीं दे सके थे। वे पुराने रीति रिवाजों को मानते थे। सुल्तान जैनुल आबदीन स्वयं हिन्दू रीति रिवाज को मानता था। उत्सवों में भाग लेता था। विजयेश्वर आदि की यात्रा भी करता था। शारदापीठ जो अब पाकिस्तान में है, वहाँ की भी यात्रा किया था। उसने दीप मालिका (१'४'१३,१ ४ ४१) चैत्रोत्सव पुष्पलीला (१ ४ २) यात्रा (१ ५ १२) नागयात्रा (१ ३ ४६) वितस्ता जन्म (३ ५३) आदि में भाग लिया था। जैनुल आबदीन के पश्चात् भी राजकुटुम्ब रीति रिवाज को मानता रहा। श्रीवर वर्णन करता है—'हिन्दुओं के आचार रूपी कमल के लिये, रवि प्रभा सदृश, उसे स्मरण कर, सब लोग उस गोला खातून के लिये रुदन किये' (३ २१६)।

सामाजिक स्थिति :

समाज अवनति की ओर बढ रहा था। चरित्र का लोप हो रहा था। भ्रष्टाचार व्याप्त था। जैनुल आबदीन के समय काश्मीर जितना ही उठा था, उसकी मृत्यु के पश्चात् उतना ही गिरने लगा। जैनुल आबदीन काल का वर्णन करते श्रीवर लिखता है—'जैनुलआबदीन के राज्य में प्रजा षड्दर्शन रत, स्वधर्म निरत, आतंक रहित एवं ईति भय मुक्त थी।' (४ ५०२) सिकन्दर बुत शिकन के अत्याचार एवं धर्मोन्माद के कारण हिन्दुओं की स्थिति अत्यन्त बिगड गयी थी। जैनुल आबदीन ने पिता की नीति त्यागकर, सहिष्णु नीति स्वीकार किया था। श्रीवर लिखता है—'कुछ समय पूर्व पृथ्वीपति सिकन्दर ने यवनों से प्रेरित होकर, समस्त पुस्तकों को, तृणाग्नि के समान पूर्णरूप से जला दिया। उस समय मुसलमानों के तेज उपद्रव के कारण, सब विद्वान् समस्त पुस्तकें लेकर, दिगन्तर (विदेश) चले गये। अधिक क्या वर्णन करें, इस देश में ब्राह्मणों की तरह सभी ग्रन्थ, उसी प्रकार कथा शेष रह गये, जिस प्रकार हिमागम के समय कमल। सुमनो-वल्लभ नृप (जैनुल आबदीन) ने पृथ्वी को भूषित कर, उसी प्रकार सबको नवीन बना दिया, जिस प्रकार वसन्त ऋतु भ्रमरों को' (१ ५ ७५-७८)।

जैनुल आबदीन के समय देश विकसित था। आर्थिक व्यवस्था सुदृढ थी। उसके परिश्रम का लाभ, उसके पुत्र तथा पौत्रों ने उठाया। विदेशी आक्रमणों से निरापद होने के कारण सौराज्य से सुखी लोगों में विवाहोत्सव, सुन्दर भवन, नाटक,यात्रा,मगल कार्यो, के अतिरिक्त दूसरी चिन्ता नही होती थी। (१.१७०) फल यह हुआ कि समाज गिरता गया। उस राजा के स्वर्ग गत होने पर, इस मण्डल में आचार-विचार नष्ट हो गया (४ ५०३)।

दुर्बल सुल्तान स्त्रियों के चक्कर में पड गये थे। श्रीवर लिखता है कि हसन शाह का राज्य स्त्री के आधीन देखकर, सशोक लोग यह श्लोक पढते देखे गये—'बिना नायक वाले का विनाश हो जाता है, शिशु जिनका नायक होता है, उनका नाश होता है, स्त्री नायक वालों का विनाश होता है और बहुनायक वालों का नाश होता है।' (३ ४७३-४७४) राजप्रासाद में स्त्रियों की इतनी प्रधानता हो गयी थी कि हसन शाह की बीमारी का वृत्तान्त वर्णन श्रीवर करता है—'स्वामी को देखने नही देते। स्त्रियाँ ही अन्दर जाती थीं, तत्-तत् गारुडिकों के कहे गये, मन्त्र पाठ निषेध करते थे। वैद्यों की ही चिकित्सा को अन्यथा कर देते और अपने द्वारा बनायी गयी, खाने की गुलिका देते थे।' (३ ५४७-५४८) स्त्रियाँ वैद्यो आदि का प्रबन्ध करने लगीं थीं—'इस समय में वैद्य गारुडिक एवं दुष्टकर्मा हैं, कहने वाले, रूप भट्ट की स्त्री वैद्यों ने बुलाया।' (३:५५०)

मद्यपान :

मद्यपान मुस्लिम तथा हिन्दू दोनों में प्रचलित था। मधुशालायें थी। वहाँ सुरापान होता था। श्रीवर वर्णन करता है—'वे मधुशाला में मण्ड, मत्स्य, कुण्डों से मधु पीकर, साँड के समान, मद से उद्दण्ड होकर, स्वामियों से भाण्ड मजाने लगे। (१.३.७३) बजारों से चावलों को, घरों से वस्त्रों को, वीटिकाओं से पद्य को लेकर, उन बलकारियों ने स्वयं भोग किया।' (१:३:७४) उक्त उद्धरणों से प्रकट होता है कि मधु-शालायें थीं तथा वीटिकाओं पर भी शराब बिकती थी। काश्मीरी यद्यपि मुसलमान हो गये थे, उनके लिए शराब पीना हराम था, तथापि शराब का जितना प्रसार इस काल में हुआ, उतना पूर्व काल में नही था।

सुल्तान जैनुल आबदीन उत्सव या भोज के समयकादम्बरी, (सुरा), क्षीर, व्यञ्जनादि से परिपूर्ण कर, सब लोगों का इच्छानुसार भोजन कराता था। भोजन (१:३.४७) तथा स्वयं पान क्रीडा करता था।

(१:४:४४) मद्यपान की बुराई श्रीवर करता है—'चषक में मद्य, जो लाल रंग धारण करता है, मानो मद्यपान में प्रवृत्त लोगों के हृदयरक्त से ही रक्त वर्ण होता है।' (१ ७:६७) जैनुल आबदीन अति मद्यपान का घोर विरोधी था। उसका पुत्र हाजी खाँ (हैदरशाह) अत्यन्त मद्यपान करता था। उसे समझाते हुए, सुल्तान ने कहा—'यादव सहार, अनेक राजाओं का नाश, मलिक जसरथ, शाहमसोद, सभी अपनी प्रतिष्ठा तथा सम्मान खोकर समाप्त हो गये थे।' (१ ७ ६३-६५) सुल्तान अपने पुत्र हाजी खाँ को उपदेश देता है—'शरीरधारियों के लिए इस मद्य के समान कोई शत्रु नही है, सेवित शत्रु हितकारी होता है और अति सेवित मद्य मार डालता है। सुरा में मदमत्त जन, जो अनुचित कार्य करते है, उन्मत्त भी वह नही करेगा, क्योंकि वह उससे भागता है। मद्यरूप वैताल हास्य एव रोदन क्रिया युक्त, हृदय में प्रवेश करके, क्षण भर में किनके प्राणो का हरण नहीं कर लेता ?' (१ ७:६८-७०)

हाजी खाँ जब हैदरशाह के नाम से जैनुल आबदीन के पश्चात् सुल्तान हुआ, तो मद्यपान खुलेआम आरम्भ हो गया। सुल्तान जब खुलकर, शराब पीता था, तो जनता में मद्यनिषेध नीति चल नही सकती। श्रीवर उस समय की अवस्था का उल्लेख करता है—'मद्य लीला व्यसन के कारण, बाह्य देश के समान, उस राज्य में भी अगूर के समान, गुड से बने सुरा का प्राचुर्य हो गया था। सर्व भोग पराङ्मुख राजा के मद्य के प्रति रसिक हो जाने पर, खाँड आदि ईख के विकार सुलभ नही रह गये, शीरा (शराब) हो गये। (२ ५४-५५) हैदरशाह की मृत्यु का तात्कालिक कारण सुरापान था—'उसी अवसर पर, मानो मृत्यु से प्रेरित होकर, राजा भृत्यो के साथ मद्यपान करने के लिए, राजप्रासाद पर चढा। वहाँ पुष्कर सौध के अन्दर, काँच मण्डप में लीला पूर्वक दौडते हुए, गिर पडा। नाक से बहते रुधिर से वह विसुध हो गया। भृत्य उसको काँख में हाथ डालकर, शयन मण्डप में ले गये। नष्ट छाया दर्पण तुल्य, वह शयन पर पड गया।' (२ १६८-१७०)

हैदरशाह के पश्चात् सुल्तान हसनशाह के समय श्रीवर पान लीला (३ २६) का वर्णन करता है। तत्कालीन समाज में सुरा पान फैशन हो गया था। जनता मुक्त रूप से मदिरा सेवन करती थी। सुल्तान खुले दरबार में मदिरा पीता था। नर्तकियों के हाथो से मद पात्र प्रसन्नतापूर्वक लेता था—'इस प्रकार प्रशसा करते हुए, नवयुवक राजा ने लीला मित्रो के साथ, उन (नर्तकियों) से मद्यपात्र ग्रहण किया।' (३ २५२) सुल्तान अपने मन्त्रियों आदि के साथ पान लीला करते थे। मदमत्त हो जाते थे। एक दूसरे पर वृष्णियो के समान वाक् बाण प्रहार करते थे। (३:३६६, ३६७) इससे प्रकट होता है, सुल्तान खुलकर मद पान करता था। उसका अनुकरण दरबारी तथा जनता करती थी। मुहम्मदशाह के समय सैयिद विप्लव के प्रसग में श्रीवर के लेख से प्रकट होता है कि मदिरा पान जनता में व्याप्त था।

● शकुन :

श्रीवर ने शकुनो का बहुत उल्लेख किया है। काश्मीरी शकुन एव अपशकुन पर विश्वास करते थे। जनता मुसलमान हो जाने पर भी पूर्व हिन्दू सस्कार त्याग नही सकी थी। मुहम्मद बालक सुल्तान था। अभिषेक के पश्चात् प्रदर्शित सामग्रियों में केवल धनुष पर ही हाथ रखा। धनुष शुभशकुन माना जाता है। शाकुनिको ने इसका अर्थ लगाया कि उसके राज्य काल में युद्ध होता रहेगा। (४.५) जैनुल आबदीन के विरुद्ध आदम खाँ ने जब सघर्ष का विचार किया तो, फिर्य डामर एव ताज तन्त्री ने कहा—'कल्याण मगलकारी शकुन नही है। देश एव पर्वत दुर्गम है। वह तुम्हारे पिता है। इसलिये हमलोगों के युद्ध का समय नही है।' (१:१:१०४)

फतह खाँ काश्मीर में जब राज्य प्राप्ति के लिए प्रवेश किया, तो उसका सामना करने के लिए सुल्तान मुहम्मद सहित जहाँगीर मुसिक स्थान में शिविर लगाया।

जहाँगीर स्वयं शकुनविद् था। श्रीवर उसके सन्दर्भ में लिखता है—'उसके अश्वारोहण के समय अश्व त्रस्त हो गया। क्रोध से निष्ठुर, वह शकुन जानकार, होने पर भी, क्षण भर नहीं ठहरा।' (४ ५२८)

● **अपशकुन :**

श्रीवर ने अपशकुनों का अत्यधिक वर्णन किया है। उससे शकुन शास्त्र के गम्भीर अध्ययन का बोध होता है। उसके अनुसार निम्न लिखित अपशकुन होते हैं। घटना क्रम से उनका वर्णन कर प्रमाणित किया है कि अपशकुन का प्रभाव पड़ता है—रात्रि में केतु दिखाई देना (१ १ १७४), धूल वर्षा से दुर्भिक्ष पड़ना (१ १ १०, १ ३ ३), कुत्तों का रोना (१ ७ १४) एक पक्ष में चन्द्र एवं सूर्य ग्रहण का लगना (१ ७ १५) उल्लू का बोलना (१ ७ १७ १८), भूकम्प (२ ११४) घोड़ी का युगल बच्चा होना (२ ११८), कुतिया से बिडाल बच्चा होना (२ ११९), दिन में सिंह आदि हिंसक पशुओं का भ्रमण (२ ११९), सदानन्दी वृक्ष का फल्युक्त होना, अनार वृक्ष का राजगृह के समीप जड़ से फूलना (२ १२०), वस्त्र पर रुधिर वर्षा (२ १२१), चाल्ह पक्षी द्वारा मार्गावरोध (३ ३७६), अश्व का पैर से छाती पीटना, आँसू बहाना (३ ३७७), सर्प का रास्ता काटना (३ ५२९, ४ ७२), रात्रि में भैंसा देखना, आसन्न मृत्यु (३ ५५१) यमवाह महिष देखना (३ ५५५), घोड़पर चढ़ते समय रकाब टूटना (४ ३०) रात्रि में उल्कापात, बार बार भूकम्प (४ २१४, ३५९) आदि।

● **गोवध**

काश्मीरी मुसलमानों में गोवध प्रचलित नहीं था। विदेशी मुसलमान व्यापारी, विदेशी सैयिद तथा तुर्क मुसलमानों का काश्मीर में प्रवेश हो गया था। उनकी स्थिति दिन पर दिन मजबूत होती गई। सख्या बढ़ती गई। काश्मीरी मुसल्मानों के विरोधी थे। काश्मीर में काश्मीरी मुसलमान तथा विदेशी मुसलमानों में संघर्ष की स्थिति सर्वदा आसन्न रहती थी। उनका यथा स्थान उल्लेख किया गया है।

काश्मीरी मुसलमानों में गोवध निषेध सस्कार मजबूत था। वे हिन्दू आचार विचार रखते थे। काश्मीर पर आने वाली अनेक विपत्तियों का कारण काश्मीरी गोवध मानते थे। श्रीवर ने इसका विस्तार से वर्णन किया है— किसी समय, जन्म से हिन्दू आचार वाले, पौर वणिको ने जो मौसुल (मुसलिम) वल्लभ थे, नगर में गोवध किया। (३:२७०) उन दुराशयो ने जहाँ पर गायों की हत्या की थी और उनका मांस खाया था, वह विहार, वह नगर, शुद्धि हेतु स्वयं को अग्नि में डाल दिया।' (३ २७१) अर्थात् उस स्थान तथा नगर में अग्नि लग गई और गोमास खाने वाले स्थान सहित, नगर सहित भस्म हो गये। 'देश में अकस्मात सैकड़ों उत्पातो से युक्त, विघ्नपात से दु सह नैऋत्य दिशा की वायु उठी। (३ २७२) पचपन (लौ० ४५५५ सन् १४७९ ई०) वर्ष प्रवरशपुर (श्रीनगर) के अन्दर गौ सौनिको (गोवधिको) के आपणों (बाजारों) के समीप से अकस्मात् अग्नि उत्पन्न हुई। (३·२७५) मारी तट के एक भाग में स्थित वह (अग्नि) गुटिका वाटिका तक फैल गई। क्षण भर में नगर भूमिदाह से दग्ध अरण्य सदृश हो गया। (६ २७६) अग्नि फैलते फैलते सिकन्दर द्वारा निर्मित बृहन्मसजिद (ईदगाह) तक स्वत पहुँचकर, उसे भी भस्म कर डाला—'कल्पाग्नि से निदग्ध, विश्व की ज्वाला पुंज का भ्रम करते हुए, (वह) क्षण मात्र में भित्ति मात्र रह गई।' (३ २८५)

मुहम्मद शाह के राज्यकाल में सैयदो के क्रूर गो वध की उपमा देत, श्रीवर लिखता है—'घर में जिस प्रकार गा का वध करन से पाप का भय नहीं हुआ था, उसी प्रकार सैयिदो के वध में मद्रों को घृणा नही हुई।' (४ ५०) सैयिदों न ही अत्याचार नही किया, उनके सेवक भी काश्मीरियों को चिढाने के लिए गोवध करत थ— विरोधियों का घर लूटते तथा उनका धन अपहरण करते, सैयिद भृत्य गोवध आदि के द्वारा प्रजाओ में भय व्याप्त कर दिये थ।' (४ १२४)

काश्मीरी एव सैयिदा के युद्ध में भी गो वध का प्रश्न खडा हो गया था। काश्मीरियो को आतकित करन के लिए गोवध आदि का भय सैयिद दिलात थ। सैयिद विप्लव काल में युद्ध के समय काश्मीरियो के सन्धि प्रस्ताव का उत्तर देत सैयिदो न कहा— तुरुष्को का किस वस्तु की घृणा है? हम लोग सर्व भाम भोजी है। जब तक पुरुष पशु गोमास पर्याप्त है, तब तक स्थित रहेंग।' (४ २४५)

सैयिदों क पराजय का कारण श्रीवर देता है—'उसके भृत्यो ने देश को लूटा था, नगर मैं गावध किया था। श्रीवर गावध पर अपना मत व्यक्त करता है—'उस राजा के स्वग गत हान पर, इस मण्डल में आचार विचार नष्ट हो गय और प्रजा के दुराचार से ही लोगो का विनाश हुआ—यह मेरा मत है। (४ ५०३) जैसा कि कुछ वणिको न हिन्दुआचित अपना आचार त्याग कर पुर में मारकर, गोभक्षण किय।' (४ ५०४) जैनुल आबदीन न गोहत्या राज्यादेश से बन्द करा दिया था।

● पक्षी हत्या

काश्मीरियों में पक्षिया की हत्या या उनका शिकार खलना वर्जित था। परन्तु विदेशी सैयिद बाज पालत थे। बाज स शिकार करत थ। पक्षिया का मास खाते थ। पक्षियो की हिंसा करत थे। उनके भृत्य भी पक्षिया की हिंसा में रुचि लेते थ। श्रीवर दु ख प्रकट करता है— सतीसर (काश्मीर) में पक्षियों की जा निश्चल सुखद स्थिति थी उनकी उस स्थिति को मास की आशा स, श्येन एव भृत्या न दूर कर दिया। (४ १९) अपन पक्षी (श्येन बाज) से पक्षिया को पकडन वाल अपन पीछ भोग्य सम्पत्ति युक्त स्वात्न्त्र्य प्राप्ति से गर्वान्ध, (व) काश्मीरियों का अनादर करन लग।' (४ २२) 'उसके भृत्यो न देश को लूटा, नगर में गोवध किया था, मानो भृत्यो के अपराध क कारण ही उनकी यह दशा हुई।' (४ ३०९)

● पाप

श्रीवर न पाप-पुण्य का देश तथा मनुष्य की उन्नति अवनति का कारण बताया है। पाप क परिणाम के विषय में लिखता है—'जो जिस प्रकार अर्जित किया गया, शीघ्र ही शत्रुओ न, उसी प्रकार (उसे) अपहृत कर लिया। पाप द्वारा अर्जित सम्पत्तियाँ चिरकाल तक घरो म नही रहती।' (४ ३८८) फतहशाह के राज्य प्राप्त करन पर, निन्दित पाप का फल इन तीनों को मिला यह उनके मरन के समय श्रीवर के अनुसार लोगो न देखा। सुल्तान तथा खान की सना में सन्धि नही हुई उसका भी दोष श्रीवर प्रजा का पाप देता है (४ ५१९) पाप के प्रक्षालित करन के विषय म सुन्दर युक्ति देता है— विद्या तीथ पर शास्त्रज्ञ, सत्य तीथ पर साधुजन, गगा तीथ पर सब मुनिजन, अध्यात्म तीथ पर योगी, लज्जा तीथ पर कुल युवतियां, दान तीथ पर वदान्य (उदार), धारा तीथ पर धरणापति पाप का प्रक्षालित करत हैं। (३ ९३)

● पुण्य

पुण्य के कारण राज्य की उन्नति होती है। उसका उल्लेख श्रीवर करता है— क्षमाशील स्वामी, कृतज्ञ, एव गर्व रहित मन्त्री का सयोग प्रजाओं के पुण्य स बहुत दिना पर देखा गया।' (३ ३४)

श्रीवर पुनः लिखता है— मंगल वर्ष का वह मास वर्णाचार का विपर्यास एवं पुरश्री के निर्वासन हो जाने पर निदाघ क्षयकारी हुआ। अथवा पूर्व कर्त्ताओं के पुण्य क्षय हो जाने पर नवीन कर्त्ताओं के निर्माण कीर्ति हेतु विधि (इस प्रकार) करता है। (३ २९१ २९२) श्रीवर बलवती भाषा में लिखता है— निश्चय ही पुण्य के बिना अभिलाषाएँ पूर्ण नहीं होती। (१ ७।१९८)

शाप

श्रीवर ने शाप को बहुत महत्त्व दिया है। शाप का परिणाम होता है। उसने तत्कालीन काश्मीरी जनता के मनोभावों को प्रकट किया है। मुसलिम दर्शन शाप में विश्वास नहीं करता परन्तु काश्मीरी मुसलमानों में यह संस्कार आज से तीन सौ वर्ष पहले पूर्णरूपेण विद्यमान था। सुल्तान जैनुल आबदीन अपने पुत्र को शाप देता है— तुम्हें धिक्कार है जो कि तुमने मुझे त्यागकर दूसरे का पिता स्वीकार किया। हे मूढ़!! मेरे वचन का जो उल्लंघन कर, जो दृष्टि को है उसका शीघ्र ही नाश होगा, इसमें सन्देह नहीं है। (१ ७ ९५ ९६) मेरे द्वारा जो सुतादि हैं वे भी चिरकाल तक स्थित नहीं रहेंगे धान्यफल का भोग कर क्या शलभ (टिड्डी) नष्ट नहीं हो जाते? (१ ७ ११७) इस समय युक्ति से इस जीवन के निकल जाने की इच्छा करता हूँ जिससे सब पुत्रों का मनोरथ पूर्ण हो जायगा। (१ ७ ११८) इस प्रकार उद्विग्न एवं दुःखी सुल्तान जप परायण होकर श्वास लेते हुए शाप दिया— उनकी स्मृति मात्र शेष रह जायगी। (१ ७ १७१)

जैनुल आबदीन ने अपने मन्त्रियों तथा सभासदों को भी राज्य में अराजकता फैलाने के कारण शाप दिया। वह शाप भी सुल्तान के मृत्यु के पश्चात् फलित हुआ— श्री जैन भूपति की जो भव्यकारक सभा थी, वह सब एक ही वर्ष में उसके शाप से स्वप्नवत् हो गयी। (१ ७ २७४)

पुत्र हैदरशाह को भी जैनुल आबदीन ने शाप दिया था। श्रीवर पुत्र हैदर खाँ के मरने का कारण पिता का शाप देता है— 'निश्चय ही पितृशाप एवं तत् तत् पाप से दूषित वह जल्दी से हिम पुंज के समान विलय हो गया।' (२ २०७)

श्रीवर पाप परिणाम का भी वर्णन करता है। वह खुली घोषणा करता है। शाप का फल होता है। उसने वचनों कठिन है—'अथवा वह पिता (सुल्तान) का शाप ही उसके लिए फलित हुआ जो अपने देश में आने पर भी (आदम खाँ) परदेश में मरा। (२ ११२)

श्रीवर शाप की मान्यता फारसी ग्रन्थों के आधार पर देता है कि हिन्दुओं के समान मुसलमानों में भी शाप का परिणाम होता है— फारसी भाषा के काव्य में प्रजाओं के द्रोह के लिए जो कहा गया है वह शाप श्रीमत् जैन सुल्तान के देश में फलित हुआ।' (२ १३२)

जैनुल आबदीन के शाप के विषय में श्रीवर और लिखता है— कुछ लोग कहते थे यह पिता का शाप से विमूढ़ हो गया था (३ ८) जैसा कि किसी समय पिता से विवाद होने पर कहा— बहुत बार तुम्हें युद्ध में देखा है तो जहाँ मैं युद्ध के लिये समय नहीं था तथा दीन एवं खग धारा चाह रहा था वहाँ तुम बहुत घमण्डी थे क्या नहीं? दुष्ट बुद्धि तुम्हारे उत्पादन योग्य नेत्रों को देख रहा हूँ अतः शीघ्र ही नष्ट एवं पश्चात्ताप युक्त होगे। (३ ९४ ९६) कालान्तर में भाई द्वारा ही बहराम खाँ की आँखें निकाल ली गयीं। श्रीवर परिणाम पर, दुःख प्रकट करता है— स्वामित्व नष्ट हुआ भृत्य मार गये नया पराभव प्राप्त हुआ, शृंखला बद्धों से बन्धन विरुद्ध नेत्रपातन की व्यथा हुई। इस प्रकार वह अन्धा राजपुत्र चिरकाल तक अपने दुःख का स्मरण करते हुए पुरानी कथाओं में भी अपने समान किसी को नहीं माना।

(३:११९,१२०) इस प्रकार तीन वर्ष तक महान् दुःख का अनुभव कर, दुःख से अस्थि पंजर शेष मात्र शरीर, वह कष्ट पूर्वक उसी में विनष्ट हो गया।' (३·१२३), जैनुल आबदीन सुल्तान ने अपने विरोधियों को शाप दिया था। उसका परिणाम उन्हें भुगतान पड़ा। श्रीवर लिखता है—'उस जैन भूपति का वह विनाश-का शाप, राज्य का अहित चाहने वालों लोगों के कुल पर, हाथ फैलाया।' (३ १४९) बहराम खाँ का नेत्रोत्पाटन जोन राजानक के कारण हुआ था। प्रजा ने उसे शाप दिया था। उस शाप का फल जोन राजानक को भोगना पड़ा। श्रीवर लिखता है—'जोनराजानक, बहराम खाँ के नेत्रोत्पाटन के कारण, अपने शरीर को प्रजा के शाप का पात्र बना लिया' (४:३६९) जहांगीर कारागार में दुःखी होकर, अपने विरोधियों को शाप दिया—'यदि मैं सुविशुद्ध हूँ, तो मेरा द्रोह करने वाले य मार्गेश, ताज भट्टादि थोड़े ही दिनों में इसका फल पायें।' (३:४१८) श्रीवर लिखता है—' बन्धन में स्थित, दुःख से दग्ध, इस प्रकार जो कहा, शीघ्र उसका फल देखकर, लोग आश्चर्य किये।' (३ ४१९)

प्रजादोष :

देश पर विपत्ति आदि आन का कारण प्रजा का दोष श्रीवर देता है। प्रजा के पुण्य से जिस प्रकार, देश में समृद्धि होती है, उसी प्रकार, देश की दुर्दशा भी प्रजा के दोष के कारण होती है। 'उस राजा के स्वर्ग गत होने पर, इस मण्डल में आचार-विचार नष्ट हो गया और प्रजा के दुराचार से ही लोगों का विनाश हुआ—यह मेरा मत है।' (४ ५०३) यदि राजा को दुःख होता है, तो उसका कारण भी प्रजा का दोष ही है—'दुष्ट पुत्रों से, जो वह (जैनुल आबदीन) व्यथित हुआ, यह हम लोगों का भाग्य विपर्यय ही है। इस प्रकार मार्ग में रुदन एवं क्रन्दन पूर्वक, पुरवासियों की वाणी सुनकर, पाद दाह की व्यथा से पीड़ित भी नृप नगर से निकल पड़ा।' (१:३ १०५) यदि देश में बाढ़ आ जाती है, फसलें नष्ट हो जाती हैं, तो उनका भी कारण प्रजा का दोष ही है—'पुराणों में प्रसिद्ध, शोकनाशिनी, विशोका नदी प्रजा के भाग्य-विपर्यय के कारण, उस समय विपरीत अर्थ वाली हो गयी थी।' (१ ३ १५) 'प्रजा के भाग्य विपर्यय के कारण सब लोगों को कष्ट देने के लिये छवि हीन होकर आतुर राजा कल्पान्त के सूर्य सदृश अस्त होने लगा।' (१:७ २१५)

सुल्तान हैदर शाह के बुरे कर्मों का कारण भी प्रजा का भाग्य विपर्यय श्रीवर बताता है—'दुष्ट मन्त्रियों द्वारा प्रेरित, मद से चेतना रहित, राजा प्रजाओं के भाग्य विपर्यास के कारण, अविवेक पूर्ण कार्य करने लगा।' (२:४१) श्रीवर मुसलिम रचनाओं का भी उल्लेख करता है कि वे भी उसके सिद्धान्त का समर्थन करती हैं। (२:१३२)

जोनराज ने देश दोष का कारण प्रजा के भाग्य विपर्यय को माना है। (श्लोक ५९७) कल्हण ने भी इस सिद्धान्त को स्वीकार किया है। (रा: १:३२५, २ ४५, ४ ६२०)

अन्त में श्रीवर लिखता है—'पत्र, पुष्प तथा फल से सुन्दर वृक्ष, एवं तरल तरंगों से युक्त नदियाँ, शब्द युक्त पिक आदि जो होते हैं, वे हिम ऋतु में क्रमशः शीर्ण, शुष्क एवं मूक हो जाते हैं। काल विपर्यय से क्या नहीं होता ?' (४ ६३५)

भाग्य :

श्रीवर भाग्यवादी है। मुसलिम दर्शन किस्मत सिद्धान्तों से अछूता नहीं है। उसने भाग्य को घटनाओं, दुर्भाग्य एवं सौभाग्य का कारण माना है। प्रथम सर्ग में श्रीवर ने अपना विचार प्रकट किया है। हाजी खाँ (सुल्तान हैदर शाह) जब अपने पिता के विरुद्ध राज्य प्राप्तिकी लालसा और उसे राज्यच्युत कर स्वयं सुल्तान

बनन के लिये काश्मीर में प्रवेश किया। शूरपुर पहुँच गया। सुल्तान भी ससैन्य वहाँ पहुँचा। युद्ध के पूर्व पुत्र के पास सन्देश भेजा—'मेरे आदेश के बिना किस लिये देश में आये हो? अपने भाग्योदय के बिना बल से किमन राज्य प्राप्त किया है।' (१ १ १२) पुन वह दुहराता है—'विनाश उपस्थित होने पर, अभागो को पुत्र के प्रति विपरीत एवं परसेवक पर विश्वास बुद्धि हो जाती है। (४ ३९१)

प्रिय उपदेश सुनने में कष्टप्रद लगते है, गत भाग्य प्राणियो को उपदेश की वाणी सुनने में अप्रिय लगती है और विपत्ति के उदय के समय मैंने क्यो नही सुना? इस प्रकार दुःखी होते हैं।' (१ ७ ७५)

पुण्यात्मा एवं परोपकारियो को भी भाग्य नही छोडता। 'तरुवरो के सदृश, अति उन्नत फलप्रद वितत (विस्तृत) एवं उन्नत शाखाओ से युक्त द्विजप्रियता के कारण ख्यात शुभ मार्ग पर स्थित, सर्वजनोपयोगी, पृथ्वीश्वरो को, दुष्ट वायु, समान विधाता नष्ट कर देता है (१ ७ १-४) बुद्धि भी भाग्यकी अनुसरण करने लगती है। बुद्धि बदल जाती है।' (१ ७ १९९) जैनुल आबदीन के पश्चात, जब प्रजा सतायी जाने लगी, तो उसने राजा की मृत्यु का कारण दैव को दिया—'क्या हम लोगो के रक्षक वृद्ध राजा को दैव ने मार डाला?' (२ १३४) श्रीवर इसी सिद्धान्त का दृष्टान्त के साथ प्रतिपादन करता है—'राम यदि घर से वन न गये होते, और बालि द्वारा पद अपहृत कर लिये जाने पर सुग्रीव क्रोध से न लडता, तो रावण द्वारा प्रताडित होकर (राम) लंका पहुचकर, युद्ध मे शत्रुओ को मारकर, विजेता राम कैसे होते? विधाता ही कल्याण के लिये सुख एवं दुःख दोनो संयोग उपस्थित करता है।' (४ ५४३)

मनुष्य सोचता कुछ है होता है कुछ। योजना बनाता है। योजना अकस्मात् समाप्त हो जाती है। परिश्रम करता है। व्यर्थ हो जाता है। जिस कार्य में हाथ लगाता है। विफलता होती है। जैसे कोई अव्यक्त शक्ति कार्य करती है। इसका वर्णन सुन्दर भाषा में श्रीवर करता है—'शीघ्र ही पूर्ण पदवी प्राप्त कर ली, यह शत्रु वशीभूत कर लिया गया, अभीष्ट काल मेरे घर आ गया, भृत्य वर्ग धर्म युक्त हो गये, इस प्रकार वैभव से गर्वीला मनुष्य जब तक सोचता है तब तक, उसके विरुद्ध हुआ विधाता, स्वप्नवत् सब नष्ट कर देता है।' (३ ४०९)

'उद्यान में चचरीकों के समान महोदधि में कुल्याओ के समान, स्त्रियाँ एवं सम्पत्तियाँ भाग्यशाली के पास जाती हैं।' (३ १६६) 'सूर्यवार के दिन नृपालय को नही जाना चाहिए—तुम्हारे साथ द्रोह होगा—'इस प्रकार स्वप्न में पिता के कहने पर भी दैवविमोहित होकर वह चला गया।' (४ २९) मनुष्य की मृत्यु निश्चित है, ललाट रेखा मे वह लिखी है। श्रीवर इसमें अटूट विश्वास करता था—विधाता के विधान के अनुसार प्राणी का मरण निश्चित है उसी प्रकार अवश्यम्भावी को कौन अन्यथा करने में समर्थ हो सकता है?' (४ १५२)

विधाता के प्रतिकूलता के विषय में लिखता है—जबतक राजा एवं प्रजा पर विधाता प्रतिकूल रहता है तब तक दायाद (उत्तराधिकार) से उत्पन्न दुःख स्थिति सैकडो उपायो से दूर नही होती, दुष्ट व्याधि (मानसिक कष्ट) शरीर के विनष्ट कर दिये जाने पर औषधियो के प्रयोग से जड जमाये रोग, कैसे दूर हो सकते हैं?' (४ ५५१) भावी को कोई नही रोक सकता। इस मत पर श्रीवर दृढ है—'बाण वर्षा भय, अश्व रोककर, मसोद नायक ने प्राण त्याग कर दिया। भावी कौन लाँघ सकता है?'(४ ५९७)

बहराम खा ने अपने लीला के लिए जिस राजवास को बनवाया था, वही उसके बन्धन के लिये काम आया। भवितव्यता का कौन जान सकता है?' (३-१२२) उसी राजवास में उसने राज सुख प्राप्त किया। ऐश्वर्य

भोगा और वही वह वन्दी बना, वही उसकी आँख फोडी गयी और वही तीन वर्ष यातना भोग कर मर गया।

श्रीवर बलवती भाषा में लिखता है—'विधाता बलवान् होता है न कि पुरुष।' (४ ३४६) 'विधाता के प्रतिकूल होने पर, राजपुरुष, पाप, पुण्य, दक्षता पर अपना दूषण, स्तुति कुछ नही समझता।' (४ ३८९) 'विधाता के विपरीत कहां गति है।' (४ ३९४)

'जब तक मनुष्य एक कार्य को चिन्ता त्यागता है, तब तक विधाता, उसके लिये दूसरी चिन्ता का विषय उपस्थित कर देता है। पूर्णिमा आने पर चन्द्रमा को कृशता समाप्त होते ही, कान्ति के हरणकर्ता ग्रहण का भय उपस्थित हो जाता है।' (४ ४००)

श्रीवर भाग्य को ही मानव की उन्नति-अवनति का कारण मानता है—'कल्पना से परे, विचित्र काकतालीवत् वायुपुंज जिस प्रकार सहज किसी वृक्ष को गिरा देता है और गिरने योग्य को उठा देता है उसी प्रकार विधाता भी किसी प्रवृद्ध पुरुष को अनवसर हो, अवनति के गत में गिरा देता है और किसी गिरने योग्य को उन्नत कर देता है।' (४ ४९७)

विधाता के विषय में लिखता है—'कभी प्रसन्न होकर, सार्वजनिक सुख पैदा करता है कभी कुटिल होकर, जनता को इति भीति से चकित कर देता है, इस प्रकार ससार को परिवर्तन पूर्वक नीचा, ऊँचा, फल देने वाले, ग्रह के आकाश गति के समान, आश्चर्य है, विधि की गति विचित्र होती है ?' (४ ५२२)

श्रीवर एक और उदाहरण उपस्थित करता है—'आश्चर्य है तीन बार आने से भी हैदर शाह, जो कार्य नही कर सका, वह विधिवश, हीनबल होने पर भी फतह खाँ ने कर लिया।' (४ ६१८)

इसी प्रकार श्रीवर लक्ष्मी किंवा सम्पदा का भी वर्णन करता है—'प्रजाओ के विनाश हेतु उस देश के कष्टप्रद दुष्टो ने प्राण रहित आदम खाँ को लक्ष्मी एव भाग्य से वंचित कर दिया।' (१ ३ १००) श्रीवर उदाहरण देता है—'ज्येष्ठ (आदम खाँ) शौर्य एव सेना युक्त होकर भी, तथा जन्म भूमि प्राप्त करके भी, घन प्रपच प्राप्त कर लिया, किन्तु प्रयत्न करने पर भी, वह समुचित रूप से राज्य नही प्राप्त कर सका। निश्चय ही भाग्य के बिना वाञ्छित अर्थ की सिद्धि नही होती' (२ १११) इस भाग्यवाद को श्रीवर इतना दूर तक खीचकर ले गया कि युद्ध में स्थित सेना भाग्य से नियन्त्रित होकर, युद्ध नही करती—'गरम होते मार्गेश, स्फुरित युद्धेच्छुक लोग, उनके भाग्य से नियन्त्रित सदृश होकर, उन लोगो से युद्ध न कर सके।' (३.३८८)

धूमकेतु

धूमकेतु या केतु तथा उल्कापात का क्या प्रभाव देश, राजा तथा प्रजा पर पडता है, इसका उल्लेख श्रीवर ने बहुल किया है—'सुखी राजा का अपने जनो से विरोध होना शाप है, जो कि विकसित होते रूप नलिनी के लिये हिमपुंज, लोक के विनाश हेतु उदित महाक्षयकारी धूमकेतु एव विघ्न में लग दुष्ट उलूको के लिये निशान्धकार है।' (१ १ १७४)

'रात को उत्तर दिशा में ईति (अतिवृष्टि अनावृष्टि आदि) के आगमन के लिय सेतु तथा सर्वजन क्षय के हेतु धूमकेतु दिखाई दिया।' (१ ७ १०) धूमकेतु अनिष्ट का सूचक होता है—'पूर्व दिशा की ओर आकाश में अनिष्ट सूचक, विस्तृत पुच्छ केतु (पुच्छल तारा) उदित हुआ। बहराम खाँ ने उसे पहले देखा। (२ ११६) उसका दूर तक विस्तृत काल कुन्त सदृश, पूँछ को दिन में भी, पश्चिम दिशा की ओर स्फुरित

होवे, लोगों ने देखा।' (१:११७) कुछ ही समय पश्चात् बहराम खाँ बन्दी बनाया गया। उसकी आँखें फोड़ दी गयी। बन्दीगृह में तीन वर्ष लम्बा जीवन व्यतीत कर वहीं मर गया।

संस्कार :

धर्म परिवर्तन के पश्चात् भी काश्मीरी मुसलिम जनता का पूर्व संस्कार बना रहा। वे भूत-प्रेत में विश्वास करते थे। सुल्तान हैदर शाह काष्ठ मण्डप में गिर गया। आघात के कारण कालान्तर में मृत्यु हो गयी। किन्तु उसकी मृत्यु का कारण जनता ने भूत उपद्रव मान लिया। श्रीवर लिखता है—'इस प्रकार कुछ लोग कहते हैं—'उन्नत स्तम्भ वाले मण्डप में वेताल रहता था। उग्र क्रोध करके, उसी ने अपनी कृपाण से राजा को खण्डित कर दिया।' (२ २०२)

श्रीवर देवताओं के कोप का वर्णन करता है। पूर्वकाल में कुछ देवता, जिन्हें सैय्यदों ने जलाया और लूटा था, उनके कोप के कारण सैय्यदों को विजय नहीं हुई— किन्तु पहले देश के कुछ देवता लूटे एवं जलाये गये थे अतः कुपित वे देवता, उन सैयिदों को विजय के लिये कैसे बुद्धि देते।' (४ १९३)

पुल टूट जाने के कारण उभय पक्षों की सेना वितस्ता में डूब गयी। उसका कारण वितस्ता नदी का क्रोध दिया गया है—'निश्चय ही वितस्ता रूप धारिणी, शारदा देवी ने उनके अधर्म के क्रोध से, दोनों सेनाओं का ग्रास कर लिया।' (४ १९६)

उत्तरायण :

हिन्दू मुसल्मान दोनों ही उत्तरायण के समय शुभ कार्य एवं मृत्यु के लिये अच्छा मानते थे। जैनुल आबदीन के मृत्यु प्रसंग में श्रीवर लिखता है—'सुल्तान ने ४४९६ (लौ०) वर्ष के, उत्तरायण काल के अन्त, ज्येष्ठ मास में राज्य प्राप्त किया और उसी मास के साथ अन्तर्हित हुआ।' (१ ७ २२४)

सती :

काश्मीर में सती प्रथा प्रचलित थी। कुलीन स्त्रियाँ सती होने में गर्व का अनुभव करती थीं। सिकन्दर बुत शिकन ने सती प्रथा बन्द कर दी थी। जैनुल आबदीन ने सती प्रथा बन्द न कर सती होने वाली की इच्छा पर छोड़ दिया था। जैनुल आबदीन के पश्चात श्रीवर तथा शुक दोनों को राजतरंगिणियों में सती होने का उल्लेख नहीं मिलता। उससे प्रकट होता है। सती प्रथा काश्मीर में लुप्त हो गयी थी। श्रीवर लिखता है—'बाह्य देश की नीति के अनुसार जहाँ पर नारियाँ चितारोहण कर, प्रिय का अनुगमन करती थीं और राजा उन्हें वारित नहीं करता था।' (१ ५ ६१)

शवदाह

श्रीनगर का प्राचीन श्मशान वितस्ता तथा मारी संगम पर था। कल्हण के समय जिस मारी वितस्ता संगम पर श्मशान था, वहीं पर श्रीवर के समय भी था। संगम पर दाह करना पुण्य एवं मुक्तिप्रद माना जाता था—'नगर में मृतकों का दाह करने से स्वर्ग प्रद, वह मारी संगम, वितस्ता के संग से प्रख्यात हो गया। (१ ५:५६) दाह समय पर, शेष पाल पचवारिक भृत्य, पुरवासियों से शवदाह का शुल्क ग्रहण करते थे। (१ ५ ५७) एक समय अपने पिता की मृत्यु पर मैंने सुल्तान से शुल्क की बात कही, तो उन किरातों को दण्ड देकर, शव शुल्क निवारित कर दिया (१ ५ ५८) उसी समय से नगर में उस स्थान पर, दर्शन द्वेषी म्लेच्छों के हृदय के साथ विमानी (सामान्य) जन जलाये जाते थे।' (१.५ ५९) सिकन्दर बुत शिकन के समय

शव यात्रा तथा शवदाह पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। अस्थियो को प्रवाहित करने की आज्ञा नही थी। प्रतिबन्ध हटने पर, श्रीवर प्रसन्न शब्दो में वर्णन करता है—'हम लोग प्रतिबन्ध रहित हो गये'—इसलिये मानो शिविका नाच रही थी, जिनके साथ में छत्र लिये एवं वाद्य ध्वनि करने वालो को किन लोगों ने नही देखा ?' (१:५:६०)

हिन्दुओं की अन्त्येष्टि क्रिया भारतवर्ष में शास्त्रानुसार होती है। कही-कही लौकिक कुछ रीति रिवाज भी थे। उनका यथास्थान वर्णन किया गया है।

अन्त्येष्टि एवं शोक :

मुसलमान लोग कब्र में शव दफन करते हैं। शव यात्रा की प्रथा हिन्दू मुसलमान दोनों में थी। शिविका का प्रयोग हिन्दू एव मुसलमान दोनो करते थे। जैनुल आबदीन के प्रसग में श्रीवर लिखता है—'करणी रथ पर स्थित, शव पर चलते, छत्र एव चामर के व्याज से मानों शोक के ही कारण, सूर्य एव चन्द्रमा आकाश में स्खलित हो रहे थे। (१ ७ २२२) जो शव एव शिव हो गया था, उसे रोते मन्त्री छत्र एव चामर से शोभित करके, शिविका में शवाजिर (कब्रिस्तान) ले गये।' (१.७ २२६) मुसलमानो में मृत्यु पश्चात् रोने की प्रथा नही है। परन्तु हिन्दू प्रथा के अनुसार, उस समय लोग रोते थे। शोक मनाते थे—'रोते पुर-वासियों के कारण उत्पन्न, तीव्र रोदन की ध्वनि से, मानो अत्यधिक शोक के कारण, दिशाएँ ही आक्रन्दन से मुखरित हो उठी।' (१:७:२२८) जैनुल आबदीन की मृत्यु के समय लोगो के शोक रुदन आदि का वर्णन श्रीवर करता है इसी प्रकार पुत्र सुल्तान हैदरशाह की मृत्यु पर भी कहता है—'उसके सेवक, स्वामी के अनुग्रह का स्मरण करके, वक्षस्थल पीटकर, रुदन कर रहे थे, जिससे दिशायें मुखरित हो रही थी।' (२:२१२) नरेश्वर को कर्णीरथ (तावूत) स उठाकर, एक वस्त्र से परिवेष्ठित कर, पिता (सिकन्दर बुत शिकन) के पास भूगर्भ (कब्र) में रख दिया। अपने मुस्लिम आचार के कारण, मुखावलोकन करके, सब लोग मुट्ठी भर मिट्टी डाले।' (१ ७ २३२)

मरने पर दान करने की प्रथा थी। हिन्दू लोग महापात्र को दान देते हैं। गरीबो को भोजन कराते है। सुल्तान हैदरशाह ने कब्रिस्तान में ही, पिता को मिट्टी देने के पश्चात, सालौर ग्राम ग्रीष्म ऋतु में लोगो को पानी पिलाने के लिए दान किया था। इसी प्रकार अनेक पोसरो अर्थात् प्याऊ चलाने के लिए भूमि दान किया। (१ ७ १५०, १५१) सुल्तान हैदरशाह की स्त्री तथा सुल्तान हसनशाह की माँ गोला खातून की मृत्यु पर, उसके स्मरण एव पुण्य हेतु—'सुल्तान ने उस (माता) के पुण्य समृद्धि के लिए, उसके धन द्वारा शाहेभ-दीनपुर (शहाबुद्दीन पुरी) के अन्दर नवीन विशाल नौका पुल बनाने का आदेश दिया। (३:२१९) सुल्तान ने अपनी माता के पुण्य के लिए दान भी किया। बीमारी के समय दान पुण्य करने की प्रथा प्रचलित थी। ब्राह्मण और मुसलमान दोनो को दान दिया जाता था। परन्तु हसनशाह की मृत्यु पर सैयिदो ने दान ब्राह्मणो को न देकर, केवल सैयिदो को दिया। शोक काल में काला वस्त्र पहनने की प्रथा मुसलमानों में थी। उल्लेख मिलता है कि हसनशाह अपनी माता की मृत्यु क पश्चात् सात दिन तक शोक मनाया और काला वस्त्र धारण किया। (३:२१७, २१८) हसनशाह की मृत्यु के समय भी सात दिनों तक शोक मनाया गया था—'प्रात प्रात' आकर सात दिनो तक, सैयिदो ने रुदित ध्वनि से निश्रित करके वेदो (कुरान शरीफ) का अध्ययन किया।' (३:५५९)

कब्र के ऊपर तत्पश्चात् एक बडा सुन्दर गढा शिला खण्ड रख दिया गया। (१ ७:२५६) शुक्रवार के दिन लोग सुल्तान के कब्र पर एकत्रित होते थे।

सुल्तान हैदरशाह की अन्त्येष्टि के प्रसंग में श्रीवर लिखता है—'नगर को निष्कंटक जानकर, निःशंक वह राजपुत्र शिविकारूढ़ पिता को शवाजिर में ले गया। एक वस्त्र से आच्छादित उस शव को मंजूषिका से निकालकर, वहाँ (उसके) पिता के चरण के समीप भूगत (कब्र) में डाल दिया। सब लोग उस मिट्टी मात्र जानकर उसका मुखावलोकन किये और उस पर मुट्ठीभर मिट्टी डाले। गर्त (कब्र) को भरकर एक मध्योन्नत शिला स्थापित कर दिया। लोगों को यह सूचित करने के लिए कि युद्ध में वह कठोर था (२ २०८-२१२) सुल्तान जैनुल आबदीन और हैदरशाह के समान हसनशाह के मरने पर भी कब्र पर पत्थर लगाया गया था— इस प्रकार लोगों ने शवाजिर में प्रस्तर की रचना मात्र से अवशेष स्थित नृप समुदाय के प्रति शोक प्रकट किया।' (३ ५६३)

सुल्तान हसनशाह का मृत्यु लौकिक ४५६० = सन् १४८४ ई० में हुई थी। उसकी मृत्यु पर समस्त जनता ने आक्रन्दन किया था। मृत्यु के दिन उसकी शव यात्रा आरम्भ हुई— प्रातःकाल छत्र चामर युक्त, यान पर आरोपित कर, सेवक सहित सब सैयिद लोग पितृ शवाजिर ले गये। जैनुल आबदीन की मृत्यु पर जनता उस प्रकार दुःखी नहीं हुई, जिस प्रकार इसकी मृत्यु पर शरण रहित होने पर दुःखी हुई।' (३ ५५५, ५५६)

केवल एक वस्त्र के साथ सुल्तान जैनुल आबदीन तथा हैदरशाह को दफन किया गया था। नरेश्वर (जैनुल आबदीन) को पर्यंक से उठाकर तथा एक वस्त्र से परिवेष्ठित कर पिता के पास भूगर्भ (कब्र) में रख दिया। (१ ७ २८१) हैदरशाह के प्रसंग में भी एक वस्त्र का उल्लेख है— एक वस्त्र से आच्छादित उस शव को मंजूषिका से निकाल कर वहाँ (उसके) पिता के चरण के समीप भूगत (कब्र) में डाल दिया। (२ २०९)। परन्तु हसनशाह के प्रसंग में प्रचुर वस्त्र का उल्लेख श्रीवर करता है— प्रचुर वस्त्र पूर्ण उस शव के पत्थर पर मन्त्रियों ने मस्तक पर बठन, सुन्दर उद्बन्ध एवं उज्वल टोपी लगायी।' (३ ५५७) टोपी लगाने का यह लौकिक रिवाज इस समय से आरम्भ होता है। फतहशाह की मृत्यु पर अली हमदानी की टोपी उसकी इच्छानुसार उसके सर पर लगाकर दफन किया गया था।

मुसलमानों में मरसिया अर्थात् शोक गीत गाने की प्रथा है। यह प्रथा अरबी एवं फारसी पद्धति पर आधारित है। उर्दू में दिवंगत की याद में मरसिया लिखा जाता है। प्रारम्भ में मरसिया हजरत इमाम हसन एवं हुसेन की स्मृति में लिखे जाने के कारण प्रसिद्धि पाया था। कालान्तर में मरसिया पढकर शोक प्रदर्शन सुल्तानों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए भी किया जाने लगा। मुहर्रम के समय मरसिया पढ़ते और गाते हैं। दिवंगत के गुणों का बखान करते हैं।

श्रीवर पर तत्कालीन अरबी फारसी तथा देशी भाषा के मरसिया की छाप उसके शोक शैली पर लिख पदों में मिलते हैं। जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात् हाजी खाँ अर्थात् हैदर शाह से शोकोद्गार श्रीवर ने प्रकट कराया है। यह तत्कालीन मरसिया साहित्य का प्रभाव प्रतीत होता है। (१ ७ २३६-२४९) हैदर शाह की मृत्यु पर मुहर्रम में जिस प्रकार छाती पीटकर मरसिया पढ़ते शोक प्रकट करते थे, उसी प्रकार श्रीवर ने शोक प्रकट करने का दृश्य उपस्थित किया है। (२ २१२) इसी प्रकार सुल्तान हसनशाह की मृत्यु पर श्रीवर ने कुछ पद लिखे हैं। (३ ५५४-५६३)

उत्तराधिकार

शाहमीर वंश में उत्तराधिकार अनियमित क्रम से चला। शाहमीर का पुत्र जमशेद सुल्तान हुआ। जमशेद के पश्चात् उसका भाई अलाउद्दीन सुल्तान हुआ। अलाउद्दीन के पश्चात् उसका प्रथम पुत्र शिहाबुद्दीन

सुल्तान हुआ। शिहाबुद्दीन का उत्तराधिकार उसका भाई कुतुबुद्दीन ने प्राप्त किया। कुतुबुद्दीन के पश्चात् उसका पुत्र सिकन्दर बुत शिकन, तत्पश्चात् उसका पुत्र अलीशाह और अलीशाह के पश्चात् उसका भाई जैनुल आबदीन और जैनुल आबदीन के पश्चात उसका पुत्र हैदरशाह और हैदरशाह के पश्चात् उसका पुत्र हसन शाह और हसन शाह के पश्चात् उसका पुत्र मुहम्मद शाह सुल्तान बना था। जोनराज एवं श्रीवर ने इन्हीं सुल्तानों का वर्णन किया है।

उत्तराधिकार किसी सिद्धान्त पर शाहमीर वंश में नहीं होता था। जिसकी शक्ति होती थी, वह उत्तराधिकारी बन बैठता था। शाहमीर वंश के सुल्तान अल्लाउद्दीन, कुतुबुद्दीन, जैनुल आबदीन, अलीशाह, शमसुद्दीन (द्वितीय) हसन शाह ने अपने भाइयों से राज्य प्राप्त किया था। नव सुल्तान जमशेद, सिकन्दर, अलीशाह, हैदरशाह, हसनशाह, एवं मुहम्मद, इब्राहीम, नाजुक तथा हबीब शाह अपने पिता के उत्तराधिकारी हुए थे। शाहमीर वंश में जैनुल आबदीन के पश्चात् हैदरशाह, हसनशाह मुहम्मद शाह ने क्रमशः पैतृक उत्तराधिकार प्राप्त किया था। जैनुल आबदीन ज्येष्ठ पुत्र के उत्तराधिकार की मान्यता स्वीकार करता है परन्तु राज्य हित की दृष्टि से ज्येष्ठ पुत्र के उत्तराधिकारी होने की सहमति नहीं देता। (१:७:१०३) अपने तीनों पुत्रों के अयोग्य होने पर, उसने उत्तराधिकार का निश्चय न कर कहा—'जीवन पर्यन्त मैं स्वयं राज्य किसी को न दूँगा। मेरे मरने पर जिसके पास बल हो, वह प्राप्त करे, यही मेरा मत है' (१:७:१०९)

हसन शाह के उत्तराधिकार के समय, उसका पितृव्य बहराम खाँ, राज्य लेना चाहता था। बहराम खाँ ने अपना अधिकार प्रकट करते हुए, सब सचिवों को बुलाकर बोला—'पिता का क्रमागत राज्य मुझ पुत्र के लिये ही उचित है। ज्येष्ठ होने पर भी, राज्य प्राप्ति प्रयत्नशील, यह कनिष्ठ पितृव्य, कौन होता है।' (३.४४) श्रीवर लिखता है—'पितृव्य के आगमन से विह्वल राजा (हसन शाह) सुय्यपुर पहुँचा। सब सचिवों को बुलाकर, सभा मध्य कहा—'पिता का क्रमागत राज्य मुझ पुत्र के लिये ही उचित है। ज्येष्ठ होने पर भी राजप्राप्ति प्रयत्नशील यह कनिष्ठ पितृव्य कौन होता है? पृथ्वी वीर भोग्य वसुन्धरा होने पर, दोनों में यह कौन सी नीति है? युद्ध द्वारा विजयी (काश्मीर) मण्डल का अधिकारी है।'

उत्तराधिकार ज्येष्ठ को ही मिलता है। इस प्रकार राज्य का उत्तराधिकारी हैदर शाह था न कि बहराम खाँ। बहराम खाँ यद्यपि आयु में अधिक था परन्तु यह कोई कारण उसके उत्तराधिकारी होने का नहीं था। क्योंकि उत्तराधिकार ज्येष्ठ पुत्र को पिता के पश्चात् जाता था। (३:४४, ४५) हसन अपने पिता का एक मात्र ज्येष्ठ पुत्र था। उत्तराधिकार बड़े भाई से छोटे भाई को न जाकर, पुत्र को मिलना चाहिए। यदि कोई शक्ति से भी अधिकार करना चाहे, तो उसका यह कार्य नियमतः उचित नहीं कहा जायगा। बहराम खाँ जब पराजित हो गया, तो उसे धर्म विजय कहा गया और उससे यही कहा गया—'दैव द्वारा दिया गया, इस क्रम प्राप्त राज्य का भोग कीजिये। भाग्य ने इस धर्म विजय को फलित किया है' (३.७५)

हसन शाह मरने लगा, तो मुहम्मद शाह की उम्र केवल सात वर्ष की थी। हसन शाह ने स्वयं मृत्यु काल आसन्न देखकर, आदेश दिया था कि राज्य का उत्तराधिकारी आदम खाँ का पुत्र बनाया जाय अथवा रानी की इच्छानुसार कार्य किया जाय। रानी ने अपने पिता सैयिद को सलाह दी कि युवा बहराम खाँ के पुत्र को सुल्तान तथा ज्येष्ठ पुत्र मुहम्मद को युवराज पद पर अभिषिक्त किया जाय। हसन शाह की रानी ने भी बहराम के पुत्र को ही राजा बनाना चाहा। (३:५६४) किन्तु सैयिदों ने तीन

निन बीत जाने के पश्चात् हसन खाँ के पुत्र मुहम्मद खाँ को राज्य देने का निश्चय किया। हसन की रानी तथा मुहम्मद शाह की माता सयद वंश की थी। सयिदों ने राज्य में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए हसन शाह के ज्येष्ठ पुत्र को राज्य देने का निश्चय किया। उसे काश्मीर का सुल्तान बना दिया।

श्रीवर उत्तराधिकार एवं राज्य प्राप्ति की लालुपता हेतु होने संघर्ष एवं युद्धों तथा उनसे होते देश की दुर्दशा देखकर दुःखित होकर मार्मिक शब्दों में अपना विचार प्रकट करता है।— ईति आतंक आदि दुःखों के साथ (रहकर) इस देश में जीना अच्छा है किन्तु (इस देश में) राजा के सवनाशकारी बहुत सन्तानें न हों। (१ ३ १०१) श्रीवर अपने मत का पुनः समर्थन उदाहरण के साथ करता है— जब मलिक जसरथ द्वारा बाँधकर सुल्तान अलीशाह मार डाला गया भ्रातृद्रोह वश काश्मीरियों का महान विनाश हुआ उसी प्रकार पुत्र द्रोह के कारण इस जन राज्य को देखा जा रहा है। राजा के घर विनाशकारी बहुत सन्तति न हों। (१ ३ १०७)

मृगया

शिकार खेलने की प्रथा काश्मीर में प्रचलित थी। शिकार में शिकारी कुत्तों तथा बाज का भी प्रयोग किया जाता था। जैनुल आबदीन के दुर्बल होने पर उसके समय ही उसके पुत्र मनमौजी अनुशासनहीन होकर शिकार खेलने लगे थे— प्रचुर भय के प्रति उदासीन शास्त्र के प्रति नहीं अपितु काम शास्त्र के प्रति रसिक केवल मृगया में आसक्त होकर कुत्तों द्वारा चमत्कार करता था। सरोवर अथवा अरण्य में जहाँ कहीं भी रहते उस मृगया रसिक के लिए रात्रि दिन सम्पन्न हो गई थी। अन्य नीचता क्या कही जाय जिसके भृत्य छद्म व्यापारी के समान बाज द्वारा पक्षी समूहों को एकत्रित कर नगर में विक्रय करते थे। (१ ३ ६३ ६४) श्रीवर ने म्लेच्छों की हिंसा की निन्दा की है। म्लेच्छ विदेशी मुसलमान अथवा उनसे उत्पन्न सन्तानें था। उनकी उपमा अन्नकी जलप्लावन से देता है जो देश का नाश कर अकाल की स्थिति उत्पन्न करते हैं— सम्पन्न पशु गाय प्राणी गृह धान्यादि का हरण कर्ता वह जलपूर (बाढ़) म्लेच्छों के हिंसा सदृश भयप्रद हो गया था। (१ ३ १२)

जल तथा वन में शिकार खेलने की प्रथा थी। जल में पक्षियों तथा वन में पशुओं के शिकार द्वारा जीव हत्या काश्मीर में विदेशी सयिदों ने चलायी थी— मृगया रसिक सयिद लोग उसी प्रकार के उस राजा को भी मास मास में विषय राष्ट्र आदि के मृग समूहों को मारने (शिकार) के लिए ले गये। (३ ५०) सयिदों एवं सैन्य के साथ राजा जहाँ जहाँ निवास किया वे दिन में पीडित होते जनों के आक्रन्दन से मुखरित हो उठा। (३ ५०३) राजा की सेना पर्वत पर चारों दिशाओं में एकत्र बद्ध होकर जहाँ पर निवास की वहाँ पर प्राणी छटपटाने के शोक से अति निष्ठुर वाणी एवं प्रचुर क्रन्दन ध्वनि उठती थी। (३ ५०४) वहाँ पर अत्यन्त सुन्दर एवं शान्तपूर्ण पर्वत हिंसक कटकों से उसी प्रकार आक्रान्त हो गये जिस प्रकार दुर्जनों से साधुजन। (३ ५०५) उनको वहाँ आया देखकर सयिद बहुत प्रसन्न हुए जिनकी जीभ बाहर निकली थी और स्फुरित होते रक्त से जिनका मुख मलिन था और जो श्वानों से आवृत थे। (३ ५०७) मोटे ताजे हमलावरों को हर लो और दबले बच्चों को मत मारो —मानो इस बहुत के लिये ही बच्चों सहित वे मृग राज के सम्मुख आये थे। (३ ५०८) क्रन्दन पूर्वक आयी एवं रुधिर से भीगी उन हरिणियों को मारकर निर्दयी सयिदों ने उनके गर्भ से भूमि भर दिया (३ ५१२) उनके वध से तृप्त न होकर उन पर्वतों को मृग रहित करके सायंकाल श्रान्त उस राजा ने घास समूहों की बस्ती को आक्रान्त करने का आदेश दिया। (३ ५१३)

श्रीवर मृगया द्वारा निर्दोष जीव हत्या का विरोधी था। वह धिक्कारता है—'राजा के मृगयाव्यसन को धिक्कार है, जो कि फल नहीं मांगते, मृगों के व्याज से, लोगों का ही स्पष्ट रूप से शिकार किया जाता है, (३:५१८) जहाँ पर पशुओं के समान सैकड़ों बार मृग समूहों को बांध (घेर) कर मारा जाता है वह मृगया विनोद हेतु है, तो वधिक कर्म और क्या है? (३:५१९) अश्वारोहियों का यह श्रम सचल लक्ष्य पर तो स्पृहणीय है किन्तु धनुर्धारियों का बद्ध मृग पर क्या यह शराभ्यास प्रशंसनीय है?' (३:५२०) श्रीवर मृगया का विरोधी नहीं है परन्तु वह पशुओं का घेर कर मारने, उन्हें अपनी रक्षा का बिना अवसर दिये, हत्या करने का विरोधी है। इसीलिये उक्त श्लोक में 'सचल लक्ष्य' का उल्लेखकर, मृगया पर पुनः विचार प्रकट करता है—'क्षत्रियों को तृणभोजियों को आनन्दमयी मृगया करनी चाहिए, अत्यन्त व्यसन युक्त नहीं, अति सर्वत्र गर्हित होता है। (३:५२१) महापद्मसर तीर एवं गिरि के मृग समूहों का राजा ने आकर उसी तरह वध से निःशेष कर दिया, (३:५२२) इत्यादि कुछ अनुचित मृगया दोष किया, जिसे देखकर, भावी मृगया प्रेमियों को भय होना चाहिए।' (३:५२३)

श्रीवर इस प्राणि हिंसा का परिणाम राजा की बीमारी तत्पश्चात्, उसकी मृत्यु का कारण लिखता है—'आखेट करके, राजधानी पहुँचकर, राजा का शरीर ग्रहणी (संग्रहणी) रोग से अस्वस्थ हो गया। (३:५२४)' कुछ लोगों ने कहा—'मृगया दोष से देवता कुपित हो गये, जिससे वहीं पर, उसे अतिसार रोग का आरम्भ हुआ।' (३:५२)

राजा बीमारी के पश्चात् भी मृगया से विरत नहीं हुआ। वह सर्जोत्सव के लिये जा रहा था। मार्ग में सर्प ने रास्ता काट दिया। उसने सर्प की हत्या बाणों से कर दी।—'वहाँ से शीघ्र ही भृत्य सहित नौकारूढ़ होकर, दिनभर उत्कण्ठा दूर करने के लिये, बाजों द्वारा पक्षियों का वध किया। (३:५३४) बाजों ने पक्षियों को पकड़कर, सुल्तान के सम्मुख ढेर लगा दिया। (३:५३५) वहाँ से लौटकर, राजा ने उन सैयिदों को छोड़ दिया और शय्या पर स्थित रहकर, मैं स्वस्थ नहीं हूँ, इस प्रकार से अपना रोग रानी को ज्ञात करा दिया। (३:५३६) बीमारी से सुल्तान उठ न सका। उसकी दुःखान्त मृत्यु हो गयी।' (३:५५४)

मुहम्मद शाह के शासन काल में बाजों से शिकार करना एक व्यसन हो गया था। (४:१६) परिणाम यह हुआ कि स्त्री एवं श्येन लीला व्यसन में राज वर्ग लगकर काश्मीर की अवनति का मार्ग प्रशस्त किये।

सैयिदों के नाश का कारण अनावश्यक शिकार द्वारा जीव हत्या श्रीवर बताता है। काश्मीरी और सैयिदों का विचार तथा मन नहीं मिलता था। इसका भी संकेत श्रीवर इस पशु एवं पक्षि हत्या को देता है, जिसके कारण सैयिदों एवं काश्मीरियों में दलबन्दी हुई। विनाशकारी संघर्ष किंवा विप्लव हुआ। उस विप्लव में काश्मीरी विजयी हुए। सैयिदों का नाश हो गया। सैयिदों की जीव हिंसा के विषय में श्रीवर लिखता है—'पहिले ही धकुनापैनो लोग, नवीन भूपाल (मुहम्मद शाह) को लेकर, नाव से वितस्ता नाड़ गये। (४:२१) अपने पक्षि (श्यन–बाज) से पक्षियों को पकड़ने वाले, अपने पीछे भाग्यान्न सम्पत्ति युक्त, स्वतन्त्र प्राप्ति से गर्वान्ध (वे) काश्मीरियों का अनादर किये, (४:२२) माना पुनः न आने के लिये पक्षियों का नाश कर एक बार अपने लोगों (सैयिदों) से मिलकर मन्त्रणा किये।' (४:२४)

जैनुल आबदीन के समय पशु–पक्षी हत्या, शिकार आदि केवल व्यसन अथवा खेलादि में करना वर्जित किया गया था। हैदर शाह के समय जबतक राजदरबार में काश्मीरी सामन्तों एवं कुलीनों का प्राबल्य था, निरर्थक पशु एवं पक्षी हत्या वर्जित थी। काश्मीर की पुरातन परम्परा का पालन किया जाता

था। सैयिदों का प्राबल्य जब राजदरबार में मुहम्मद शाह की माता एवं हसन शाह की सैयद वंशीय रानी के कारण हो गया तो काश्मीर की पुरानी परम्परा का विदेशी होने के कारण सैयिद पालन नहीं करने लगे जिससे जनता एवं सैयिदों के बीच खाई पड़ती चली गयी जो सैयिदों के नाश का कारण हुआ।

● क्रूरता :

काश्मीरी स्वभावतः क्रूर नहीं होते। हिंसा की प्रवृत्ति उनमें नहीं होती। उनकी प्रकृति की यह देन है। प्रकृति उन पर दयालु है। काश्मीर धन धान्य सुन्दर एवं जल पूर्ण है। उत्तम पर्वतों से यदि आवृत है तो समतल मैदान भी है। प्रकृति ने उन्हें सब कुछ दिया है जो मिलना चाहिए था। इस वातावरण के प्राणी, विचारशील होते हैं। रचनात्मक प्रवृत्ति होती है। प्रकृति जिस देश एवं प्रदेश में क्रूर होती है वहाँ मानव को दैनिक जीवन के लिये घोर परिश्रम एवं संघर्ष करने वाला बना देती है। क्रूर प्रकृति में पग-पग पर लड़ना पड़ता है। प्रकृति से दया की आशा नहीं होती। वहाँ का प्राणी स्वभावतः उग्र संघर्षशील एवं क्रूर होता है।

शाहमीर वंश के शासन होने पर शनैः शनैः काश्मीर में विदेशियों का प्रवेश होने लगा जहाँ प्राकृतिक वातावरण राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टियों से कठोर था। खुरासान तुर्किस्तान सीमान्त पर्वतीय प्रदेशों के लोगों का काश्मीर में प्रवेश होने लगा। मुसलिम शासन होने के कारण उन्हें सुविधा मिलने लगी। काश्मीर में मुसलमानों की आबादी कम थी। हिन्दुओं से मुसलमानों ने राज्य लिया था। अतएव सुल्तान अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिये मुसलिम समर्थक जनता चाहते थे। अतएव काश्मीर में अबाध गति से विदेशी मुसलमानों का प्रवेश होने लगा। कालान्तर में वे ही कश्मीर के मुसलमानों के लिये समस्या बन गये। वे काश्मीरी रहन-सहन एवं प्रकृति से परिचित नहीं थे। उनके आगमन के साथ हिंसा एवं क्रूरता ने काश्मीर में प्रवेश किया जो पहले अज्ञात थी। कुछ क्रूर घटनाओं का वर्णन पूर्व शाहमीरी वंश के इतिहास में मिलता है परन्तु वे अपवाद मात्र हैं। तत्कालीन काल तथा उसके पश्चात् होने वाली क्रूरताओं के अनुपात में नगण्य हैं।

धार्मिक क्रूरता सिकन्दर बुतशिकन तथा अलीशाह के समय चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। परन्तु काश्मीर के मुसलिम बहुल होने पर जो क्रूरता पहले हिन्दुओं पर होती थी वही क्रूरता आपस में एक दूसरे पर होने लगी। राज्य लिप्सा पद प्राप्ति आर्थिक शोषण, उत्तराधिकार के लिये संघर्ष एवं सार्वजनिक क्रूरता का अध्याय खुल गया।

जैनुल आबदीन काल में क्रूरता का दर्शन नहीं मिलता। परन्तु उसके अत्यन्त दुर्बल हो जाने पुत्रों के राज्य लिप्सा के कारण क्रूरता ने भी पदार्पण किया। आदम खाँ का उसके अनुज हाजी खाँ से शूरपुर में संघर्ष हुआ, तो शूरपुर में बारात लेकर आये बारातियों को निरपराध मार डाला। (१ १ १६४)

हाजी खाँ (हैदर शाह) जब पिता के साथ युद्ध करने आया तो पिता ने ब्राह्मण दूत पुत्र के पास भेजा। दूत की बात सुनते ही हाजी खाँ के सैनिकों ने उसका कान काट लिया। दूतों पर क्रूरता का यह प्रथम उदाहरण मिलता है। (१ १ १२७) हाजी खाँ स्वयं इस क्रूर कर्म को देखकर लज्जित हो गया था। (१ १ १२८) संघर्ष से परेशान होकर, दयालु जैनुल आबदीन में भय प्रदर्शन का भूत प्रवेश कर गया था—'राजा ने नगर में जाकर संग्राम में मृत वीरों के छिन्न मस्तक पंक्तियों से मुण्डागार (मीनार) का निर्माण कराया।' (१ १ १७१)

जैनुल आबदीन के पश्चात् क्रूरता अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। हैदर शाह का विश्वासपात्र मुख्य पूर्ण नापित था। वह लोगों का अंग विच्छेद करा देता था। यह उसके लिये साधारण बात हो गयी था।

(२:४६६) उसने ठक्कुरादि जैनुल आबदीन के विश्वासपात्रो को आरो से चिरवा दिया। (२ ४८) मार्ग से अनायास लोगो को पकडकर, पाँच छ व्यक्तियो को एक साथ सूली पर चढवा दिया। (७४८) वैदूर्य भिषग को दूषक एवं परपक्षगामी जानकर हाथ, नाक और ओष्ट पल्लव कटवा लिया। (२ ५०) शिख ज्यादा नोनक आदि सभ्रान्त पाँच छ व्यक्तियो की जीभ, नाक एव हाथ कटवा दिया। लोग इतने आतंकित हो गये थे कि भय से स्वयं वितस्ता में डूबकर, भीम एव जज्ज के समान प्राण विसर्जन कर देते थे। (२:५३) राजा स्वय क्रूर हत्या के लिये प्रेरणा देता था। उसने हसन आदि की हत्या के लिये आदेश दिया—'उन्हें प्रात काल युक्ति पूर्वक लाकर वध कर देना चाहिए।' (२:७४) हसन जिसने राजा का तिलक किया था वह तथा मेर काक आदि पाँच छः व्यक्ति राजदरबार में बहुमूल्य आस्तरण पर बैठे थे। राज्यादेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। उसी समय राजा ने उनका अचानक वध करा दिया। (२ ७८) विद्या व्यसनी, गुणी, अहमद, जब राजगृह में छिप रहा था, उसी समय अकस्मात् उसे मार डाला गया। (२ ८१) राजप्रासाद प्रागण में अहमद आदि उच्च पदाधिकारी एव मन्त्रीगण मारे गये। उनका शव उनके कुटुम्बियो का नही दिया गया। श्रीवर लिखता है—'अनाथ सदृश उन लोगो को चाण्डालो ने रात्रि में वहाँ से ले जाकर, प्रद्युम्न गिरि (शारिका पर्वत) क पाद मूल में भूगर्त (कब्र) म निवेशित कर इष्टिका (ईंटो) से ढक दिये। (२ ८८)

सुल्तान हैदर शाह कितना क्रूर था इसी से प्रकट होता है—'राजा राजप्रासाद पर आरूढ होकर, अपने पाँचगृहो का जलते हुए देखकर, सन्तुष्ट हाकर, पान लीला करन लगा।' (२:१४२) यह रोम सम्राट् नीरो की क्रूरता का स्मरण दिलाता है, जो जलत रोम को दखकर प्रसन्न होकर, गान लगा था।

हसन शाह के समय क्रूरता और तीव्र हो गयी। हसन शाह ने जैनुल आबदीन के पुत्र बहराम खाँ की आँख फाड दी। बहराम खाँ को आँखो पर पहले रुई रक्खी गयी। तत्पश्चात् गर्म लोहे की शालिका, आँखो में धँसा दी गयी, उस समय, किसी दिन के राजसुख भोगने वाले, बहराम खाँ को जो पीडा हुई, उसका वर्णन श्रीवर करन में अपन को असमर्थ पाता है। (३ १०७–१०८) अभिमन्यु प्रतिहार की प्रेरणा पर हसन शाह ने बहराम खाँ का नेत्रोत्पाटन कराया था। कुछ ही समय पश्चात् अभिमन्यु प्रतिहार सुल्तान का कोपभाजन बन गया। बन्दी बना लिया गया। श्रीवर लिखता है—'बहराम के जैसी अति दु सह व्यथा हुई थी, उसने भी नेत्रोत्पाटन द्वारा वैसी व्यथा का अनुभव किया। वह दूसरे द्वारा कही नही जा सकती।' (३ १३०–१३३)

सैयिदो के अत्याचार की कहानी अत्यन्त भयकर है। वे मानवता एव क्रूरता की सीमा पार कर गये थे—'वैद्य पण्डित यवनेश्वर को सैयिदो ने मारकर, उसके चन्दन लिप्ताग वाले मस्तक को, राजपथ पर रख दिया। (४:१८५–१८६) सैयिदो ने कटे शिरो राशि को वितस्ता तटपर, काष्ठो पर रखकर, उनके द्वारा जनता में भय उत्पन्न करने के लिये दीपधर सदृश काष्ट रख दिये।' (४ १९७–१९८)

शव वितस्ता में फेंक दिये जाते थे। वे फूल जाते थे। तैरते दुर्गन्ध करते थे। महापद्मासर (उलर लेक) में बहते चले जाते थे। उनका अन्तिम संस्कार करने का भी कोई विचार नही करता था। (४:१९९) वितस्ता के दोनों तटो पर आने वाली स्त्रियों को, बाणों से बिद्धकर अंग विदीर्ण कर देना, साधारण बात थी। (४:२०६) वितस्ता तटपर, रोक कर, प्रति दिन दो तीन व्यक्तियो को सूली पर चढा देते थे। सम्भ्रान्त, सामन्तों एवं सैनिक पदाधिकारियो के शव लावारिसो तुल्य सडको पर फेंक दिये जाते थे। श्रीवर करुण वर्णन करता है—'रुई की गद्दी पर रखे, उपधान के स्पर्श का उत्तम सुख प्राप्त करने वाले,

सुन्दर शृङ्गार परिपूर्ण वे भूमि पर नग्नावस्था में काक, कुक्कुट, वृकों के भोजन बनते, खाये गये। मेदा, मांस, मज्जा से निकलते कृमियों सहित तथा दुर्गन्ध युक्त देखे गये। (४:१००)

मल्लिपुर से लोष्ट विहार तक सड़क पर इन्धन समूह के समान शव रखे हुए थे। इसी प्रकार के पुन एक दृश्य का श्रीवर वर्णन करता है—समुद्र मठ से लेकर, पूर्वाधिष्ठान तक, मार्गों में इन्धन के गट्ठर के समान निर्वस्त्र शव पड़े हुए थे। (४ २८८) अधिकारियों का वध बिना न्याय किये ही कर दिया जाता था। उनके शवों के साथ क्रूरता की जाती थी।

'राजप्रासाद के प्रांगण से चाण्डालों ने गुल्फों में रस्सी बाँधकर उन्हें (ताज एवं याशक) को खींचा, उनके शरीर के अंग मल युक्त हो गये थे। वे कुत्तों के भोजन बने।' (४.६९) सैनिकों के पराजित होने पर, उनका मस्तक काटकर, उन्हें डण्डों पर टाँग दिया जाता था—'साहसी वीर तैरकर शीघ्र नदी पार चले गये, फिर छेदन कर, उन् उन् लोगों को मार कर, वितस्ता तट पर ही, उन्हें दण्ड पर आरोपित कर दिये।' (४ ११०)

सबसे दयनीय दशा बहराम के पुत्र युसुफ की हुई। वह निरपराध था। बन्दी था। तीन वर्ष बन्दी जीवन के पश्चात् उसके पिता बहराम की मृत्यु हो गयी। पिता की मृत्यु पश्चात् भी बन्दी बना रहा। इसी बीच राज्य में दो विरोधी दल हो गये। एक दल राजानक आदि ने बहराम के पुत्र युसुफ को परनाले के मार्ग से बन्दीगृह से मुक्त किया। (४:७६) सामने शत्रु सेना थी। युसुफ दुर्बल था। आगे-पीछे कहीं जाने में समर्थ हीन था। अलीशाह ने सन्देह किया। विरोधी दल राजनीतिक लाभ उठाने की दृष्टि से युसुफ को मुक्त किया था। अलीशाह ने राजपुत्र युसुफ को आश्वासन दिया। सुरक्षित रहेगा। किन्तु अलीशाह ने श्रीवर के शब्दों में उसे इस प्रकार मारा जैसे हरिण को सिंह मारता है। (४:७८) क्षण मात्र के लिए नहीं विचार किया। युसुफ तीन वर्षों से ऊपर कारागार में था। उसने किसी का कुछ बिगाड़ा नहीं था। उसका एक मात्र दोष था। वह राजवंश में उत्पन्न हुआ था। वह अपनी इच्छा से बन्दीगृह से मुक्त नहीं हुआ था। मुक्त होते ही उसकी हत्या कर दी गयी। अनाथ युवक चौबीस वर्षीय (४:८६) राजपुत्र युसुफ, समझ न सका, वह क्यों मुक्त किया गया और उसकी क्यों हत्या की जा रही थी। इस प्रकार की अनेक घटनाएँ प्राय उन दिनों काश्मीर में घटा करती थी। उनके लोग आदी हो गये थे। (४.७६-७८)

श्रीवर कितना मार्मिक वर्णन करता है—अच्छा है, मनुष्यों का जन्म सामान्य घर में हो, दुःखप्रद राजगृह में न हो, सामान्य जन अरुचिकर एवं छोटे वस्त्र के एक भाग पर, शयन कर लेते हैं, किन्तु राजा (राजयुगल) सुन्दर एवं बड़े देश में भी नहीं समाते।

प्रतिमा भंग :

सिकन्दर बुतशिकन के समय देश में प्रतिमाएँ भंग कर दी गयी थी। कोई ग्राम नहीं था, जहाँ मूर्तियाँ नहीं तोड़ी गयी, जहाँ जबर्दस्ती लोग मुसलिम धर्म में दीक्षित न किये गये। अलीशाह ने सिकन्दर बुतशिकन के हिन्दूउत्पीडन उत्पाटन एवं संहार नीति को जारी रखा। जैनुल आबदीन के शासन काल में हिन्दुओं को कुछ राहत मिली थी। मन्दिरों के जीर्णोद्धार का भी आदेश दिया था। बाहर से हिन्दू-बुलाकर, पुनः काश्मीर में आबाद किये गये थे। परन्तु हैदर शाह का शासन होने पर, हिन्दुओं का उत्पीडन, एवं दमन आरम्भ हो गया—'राजा (सुल्तान) ने द्विजों को पीडित करने का आदेश दिया। राजा ने अजर, अमर, बुद्ध आदि सेवक ब्राह्मणों के भी हाथ, नाक कटवा दिये। उन दिनों भट्टों के लूटे जानेपर, जातीय वेश त्यागकर,

मैं यह नही हूँ, 'मैं यह नही हूँ' इस प्रकार कहने लगे। म्लेच्छो की प्रेरणा से राजा ने बहु खातक प्रमुख इष्ट देवो की, मूर्तियों को तोडने का आदेश दिया। गुण परीक्षा के कारण जैन राजा ने जिन लोगो को भूमि दी थी, उनसे उनके अधिकारियो न अकारण ही हृत कर लिया। (२ १२३-१२७)

हैदर शाह के पश्चात् उसका पुत्र हसन शाह सुल्तान हुआ। उसक समय में प्रतिमा भग का क्रम जारी रहा—'राजा ने अर्ध निष्पन्न प्रतिष्ठा, को निलुण्ठित कर, नगर में पिता के पुण्य के लिये खानकाह निर्मित कराया।' (३:१७७) भारतवर्ष में भी जहाँ मन्दिर नष्ट किये जाते थे, वहाँ जियारत, खानकाह, मसजिद अथवा कब्रिस्तान बना दिया जाता था। यह क्रम जैनुल आबदीन क पश्चात् पुन जारी हो गया।

दण्ड

सुल्तान निरकुश था। उसपर किसी सभा, परिषद् आदि का बन्धन नही था। उसकी इच्छा ही उसका न्याय था। किसी को अनायास बिना न्याय का अवसर दियें, बिना इन्साफ किये, दण्ड देना, साधारण बात थी। पूर्ववती हिन्दू राजाओ तथा सुल्तानो क न्याय के विषय में विशेष चर्चायें की गयी हैं। परन्तु श्रीवर ने अपने समकालीन हैदर शाह, हसन शाह तथा मुहम्मद शाह की न्यायप्रियता के विषय में कुछ नही लिखा है। जैनुल आबदीन न्यायप्रिय सुल्तान था। इसमें सन्देह नही है।

किसी को कारागार में रख देना, साधारण बात थी। क्रोधित होकर, सुल्तान हसन ने अवतार सिंह आदि को बिना न्याय किये, कारागार में रख दिया। (३:१००) अनेक प्रतिहार गण सुल्तान का कोप भाजन होने पर, कारागार में रख दिये गये। तत्पश्चात् उनकी आँखें फोड दी गयी। (३ १३१) दो वर्ष जेल में रहकर, वही बहराम खा की तरह मारे गये। (३:१३५) बहराम खा का पुत्र युसुफ था। वह निर्दोष था। पिता के कारण, राजवशीय होने के कारण, बन्दी बना दिया गया। वह निर्दोष, मुक्त होते ही, मार डाला गया। सेनाधिकारिया एव मन्त्रियो को भी इसी प्रकार, बिना विचार, कारागार में डाल दिया जाता था। (३ ३९९)

सम्पत्ति हरण सामान्य बात थी। सुल्तान असन्तुष्ट होने पर, किसी दिन के प्रिय पात्रो, मत्रियों एव सामन्तो की सम्पत्ति बिना विचार, हरण कर लेता था। (३ १४८) सुल्तान किसी के सम्मुख उत्तरदायी नही था। निरकुश था। मत्री भी सत्ता पाकर निरकुश हो जाते थे। विरोधियो किंवा जिनपर किंचित मात्र शका होती थी, उन्हें निर्वासित कर दिया जाता था। (३ १५५)

काल गणना :

श्रीवर पहला समय सप्तर्षि ४५३५ = सन १४५९ ई० जोनराज की मृत्यु का देता है। ४५४६ सन् १४७० ई० = सप्तर्षि लौकिक सवत ४५४६ जैनुल आबदीन की मृत्यु का उल्लेख करता है। सन् १४५९ से १४७० ई० के मध्यवर्ती काल में समयों के घटना क्रमो से लौ० ४५३८ = १४६२ ई० (१ ३ २), लौ० ४५३९ = सन् १४६३ ई० (१ ५ ३९), लौ० ४५३९ = सन् १४६३ ई० (१:५:८९) लौ० ४५४० = १४६४ ई० (१:१ ७६, १ १:७७) दिया है। इनक बोच उसने लौ० ४४९६ = सन् १४२० ई० (१ ७ २२४), लौ० ४५१५ = १४३९ ई० (१ ५:४), लौ० ४५२८ = १४५२ ई० (१ ७ ८६,१ ३:९३), लौ० ४५३३ = १४५७ ई० (१ ३:११५), लौ० ४५३५ = १४५९ ई० (१ ३:२३) लौ० ४५३६ = सन् १४६० ई० (१ ३ २), लौ० ४५३८ = सन् १३६२ ई० (१ ३:२), तथा लौ० ४५३९ = सन् १४६३ ई० दिया है।

लौकिक या सप्तर्षि सवत् ४५४६ = सन् १४७० ई० के पश्चात् श्रीवर ने काल गणना, क्रमानुसार

ता है। उसकी काल गणना ठीक है। उसने जिस संवत वर्ष का उल्लेख घटनाओं के सन्दर्भ में किया है, वे अन्य स्रोतों से भी प्रमाणित होते हैं। सन् १४७० ई० के पश्चात उसने लौ० ४५४८ = सन् १४७२ ई० (२ २०१) लौ० ४५५० = सन् १४७४ ई० (३ १०१) लौ० ४५५४ सन् १४७८ ई० (३ २२६), लौ० ४५५५ = सन् १४७९ ई० (३ २७१) लौ० ४५६० = सन् १४८४ ई० (३ ५४४ ४०२) लौ० ४५६१ = सन् १४८५ ई० (४ ४००) तथा लौ० ४५६२ = सन १४८६ ई० (४ ५७६ ५८० ५२७) दिया है। उसकी काल गणना ठीक मिलती है।

● अन्नसत्र

प्राचीन हिन्दू राजाओं की अनेक प्रथाएँ सुल्तानों ने जारी रखीं। जैनुल आबदीन ने त्रिपुरेश्वर (१ ५ १५), वाराह क्षेत्र (१ ५ १६) पद्मपुर (१ ५ २० विजयेश्वर (१ ५ २१) नूरपुर (१ ५ २२) मतापुण्य (२ १८६) जैन वाटिका (१ ५४६) में मनुष्यों तथा वितस्ता सिन्धु संगम पर मछलियों के लिए अन्नसत्र खोला था। श्रीवर लिखता है— 'वितस्ता सिन्धु संगम पर अन्नसत्र से तृप्त मत्स्यों से छोटी मछलियों को अभयदान मिल गया।' (१ ५ १७) बड़ी मछलियों का पेट इतना भर जाता था कि वे छोटी मछलियों को नहीं खाती थीं।

हसन शाह के समय सिंह डामर ने मसजिद में अन्न-सत्र स्थापित किया था— उस सिंह डामर ने जैन नगर में सुन्दर सत्र वाली मसीद (मसजिद) और हुजिरा (हुजरा) से सुन्दर खानकाह निर्मित कराया। (३ १०७) मुसलिम विद्यार्थियों के लिए खानकाह में भोजन का प्रबन्ध होता था। मसजिदों में अन्न सत्र की व्यवस्था थी।

● अभिषेक

सुल्तान सिंहासनासीन होने पर अभिषेक नाम रखते थे। शाही खाँ का अभिषेक नाम जैनुल आबदीन, हाजी खाँ का हैदर शाह, मुहम्मद खाँ का मुहम्मद शाह था। हिन्दुओं में भी अभिषेक नाम रखा जाता था।

श्रीवर ने जैनुल आबदीन के अन्तिम वर्षों का इतिहास लिखा है। किन्तु अन्य तीनों सुल्तानों हैदर शाह, हसन शाह एवं मुहम्मद शाह के अभिषेक का वर्णन किया है। उनसे तत्कालीन अभिषेक प्रथा पर प्रकाश पड़ता है।

राज्याभिषेक के दिन नगर में दीपमालिका होती थी। नगर सजाया जाता था। उत्सव होता था। (२ ४) राजधानी अर्थात् राजप्रासाद प्रांगण में स्वर्ण सिंहासन अथवा रजत आसन रखा जाता था। जैनुल आबदीन का सिंहासन त्रिकोणीय था। (१ ५ १०) सुल्तान सिंहासन पर बैठता था। अनुज एवं आत्मज तथा अन्य सम्बन्धी उसके पार्श्व में रहते थे। राज्याधिकारी शुभ्र वस्त्र पहनते थे।

काश्मीर के सुल्तानों का अभिषेक हिन्दू एवं मुसलिम दोनों पद्धतियों से होता था। इस अवसर पर होम किया जाता था। स्नान किया जाता था। सिंहासनस्थ सुल्तान का तिलक होता था। हैदर शाह का तिलक हसन कचिल ने किया था। मुसलिम के पश्चात् हिन्दू रीति से अभिषेक किया जाता था। हिन्दू रीति के अनुसार उस पर छत्र एवं चमर लगता था। सिकन्दर बुत शिकन के पूर्व सुल्तान मुकुट धारण करते थे, तत्पश्चात् मुकुट का स्थान ताज ने ले लिया। अन्य उच्च पदस्थ तथा प्रियगण भी राजा का तिलक करते थे। (२ २०६)

इस अवसर पर सम्बन्धियों को जागीर दी जाती थी। हैदर शाह ने अपने कनिष्ठ भ्राता बहराम खाँ

को नाग्राम की जागीर दी थी। (२ १०) अपने पुत्र को कमराज एवं इंचिश का स्वामी बनाया था। (२ ११) उसके प्रिय पात्र रावत्र एवं लोलक आदि अतुल प्रसाद अभिषेक के अवसर पर प्राप्त किये थे। (२ १२) सुल्तान के अन्य सेवक भी अपने पूर्व सेवा पुरस्कार स्वरूप में उच्च एवं निम्न ग्राम प्राप्त किये। (२:१३) युवराज की भी घोषणा की जाती थी। हसन को सुल्तान ने युवराज बनाया था। अन्य दरबारियों तथा अधिकारियों को उनके पद के अनुसार, उपहार, खिताब, खिलअत देकर, सम्मान किया जाता था।

सीमान्त के राजगण तथा काश्मीर मण्डल के सामन्त आमन्त्रित किये जाते थे। आज भी प्रथा है। मित्र देशों के राजा, राष्ट्रपति अथवा प्रतिनिधि अभिषेक में भाग लेते हैं।

आगत राजाओं का उनके पदानुरूप, अलंकार उपहार आदि देकर, सम्मान किया जाता था। हैदर शाह के अभिषेक के समय राजपुरी के राजा तथा सिन्धु पति उपस्थित थे। मन्त्री, सेनापति, पुरगामी, सुवर्ण-कटारी तथा सुन्दर कमरबन्दों से सुशोभित दरबार में उपस्थित रहते थे। सबको वस्त्र आभूषण आदि दिया जाता था। (२:१४-१८)

हसन शाह का अभिषेक भी प्रायः इसी प्रकार किया गया था। निर्मल वस्त्र धारण कर राजा सिंहासन पर बैठा था। मल्लेक तथा आयुक्त अहमद ने राजा का तिलक किया था। सुल्तान पर स्वर्ण कुसुमों की वृष्टि की गयी थी। अभिषेक के समय हिन्दू राजा के समान मन्त्र के साथ जल एवं पुष्प से अभिषेक किया जाता था।

हसन के समय रजत आसन रखा गया था। स्वर्ण मुसलिम विधि, सहितानुसार हराम माना जाता है। अतः सैयिदों के प्रभाव के कारण स्वर्ण के स्थान पर रजत सिंहासन रखा गया। आसन किंवा सिंहासन पर छत्र लगा था। अभिषेक काल में होम किया गया था। बाजा बजते थे। स्थान लाल एवं श्वेत ध्वज मालाओं आदि से खूब सजाया जाता था। पूर्व काल में मालूम होता है, वस्त्र दिया जाता था। परन्तु श्रीवर ने हसन के अभिषेक काल में कौशेय अर्थात् रेशमी वस्त्र भृत्यों एवं पदाधिकारियों को देने का उल्लेख किया है। (३ ८-१३)

मुहम्मद खां सात वर्ष का बालक था। उसका अभिषेक नाम मुहम्मद शाह रखकर सिंहासन पर बैठाया गया। वह रजत के सिंहासन पर बैठा। छत्र लगाया गया। शुभ्र अंशुक पर, छपे कुमकुम से लोहित कान्ति वाले परिधान में सैयिद भावी द्रोह के कारण निकले हुए रक्त से सिक्त सदृश शोभित हो रहे थे। (४ ७) सुल्तान का कनिष्ठ भ्राता होस्सन बाल नृपति के समीप अभिषेक के समय था। बाजा बज रहा था। राजप्रासाद के प्रांगण में अभिषेक उत्सव आयोजित था। उस उत्सव में सैयिदों ने परिधान प्रसाधनों द्वारा समस्त नृप अनुचरों को सन्तुष्ट किया। (४:१०-१२)

अपने पिता हैदर शाह के समान हसन शाह ने भी आयुक्त मल्लेक अहमद को सग्राम तथा नाग्राम (३ २४), आयुक्त नौरुज को इंशिका (३ २०), जागीर तथा सबको कौशेय वस्त्र दिया। (३.१६, १७) जान राजानक आदि भी पूर्व मतानुसार छोटे-बड़े ग्राम जागीर में पाये। (३:३०) सुल्तान ने अपने बालसखा ताज-भट्ट को अपना दूत इसी समय नियुक्त किया। (३ २८) आयुक्त अहमद सचिव नियुक्त किया गया। (३ २३) इस समय बन्दियों को कारागार से मुक्त कर, उन्हें भट्ट देश में निष्कासित कर दिया गया।

युवराज :

जैनुल आबदीन ने ज्येष्ठ पुत्र आदम खां को युवराज बनाया। वह युवराज पद पर पाँच या छः वर्षों तक

बना रहा। (१ २ ५) काश्मीर के सुल्तान हिन्दू प्रथानुसार, युवराज नियुक्त करते थे। जमशेद ने अपने कनिष्ठ भ्राता अलाउद्दीन सुल्तान कुतुबुद्दीन ने हसन, मुहम्मद शाह ने शाह सिकन्दर को युवराज बनाया था। युवराज ज्येष्ठ पुत्र या कनिष्ठ भ्राता प्राय बनाये जाते थे। युवराज नियुक्त करने का एक मात्र अधिकार सुल्तान का था। जैनुल आबदीन ने प्रथम युवराज अपने कनिष्ठ भ्राता महमूद, तत्पश्चात् आदम खाँ, (१ २ ५) और अन्त में हाजी खाँ (१ ३ ११७) को नियुक्त किया था। हैदर शाह के समय में ही विद्रोहियों ने बहराम खाँ को सिंहासन तथा भतीजा हसन शाह पुत्र हैदर शाह को युवराज बनाने का प्रस्ताव रखा था। किन्तु बहराम खाँ ने प्रस्ताव ठुकरा दिया। (२.१८९)

मन्त्री

जैनुल आबदीन के समय मन्त्रिसभा थी।' (१ ७ ५२) आधुनिक मन्त्रिमण्डल के समान थी। सुल्तान मन्त्रि-सभा में बैठता था। विचार विनिमय होता था। परन्तु मन्त्री की सलाह मानने के लिए सुल्तान बाध्य नहीं था। राजा मन्त्रिसभा में अपने कुटुम्ब के विषय तथा कुल सम्बन्धी बातों पर भी विचार और मत जाहिर करता था। (१ ७ ५८) जैनुल आबदीन मन्त्रि सभा का आदर करता था। मन्त्रीगण सुल्तान के राज्य त्याग तथा उत्तराधिकारी बनाने के लिए भी सलाह देते थे। (१ ७ १००) जैनुल आबदीन को जब सलाह दी गयी कि वह किसी एक पुत्र को अधिकार दें, तो वह सलाह मानने से इन्कार करते हुए, उत्तर दिया—'श्रेष्ठ (पुत्र) श्रेष्ठ है, किन्तु उसमें कार्पण्य है। अतएव उसके कारण इस प्रकार के सेवक नहीं रहेंगे कि राज्य दृढ हो सके। मध्यम अतीव दाता है। इसके पास प्रद्युम्नाचल सदृश धन होते, इसके व्यय में कर्ष मात्र अवशिष्ट नहीं रहेगा। दुष्टबुद्धि कनिष्ठ पापनिष्ठ है, शीघ्र ही सभा नष्ट हो जायगी। (१ ७ १०३-१०५) इससे प्रकट होता है कि मन्त्रि-सभा को सुल्तान कितना महत्त्व देता है।

जैनुल आबदीन के पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र के राजत्व काल में स्थिति बदल गई। मन्त्री शक्तिशाली होते गये। मन्त्री पद प्राप्त करने के लिए, परस्पर संघर्ष होने लगे। सुल्तान निरपेक्ष हो गये थे। मन्त्री इच्छानुसार कार्य करते थे। सुल्तान नहीं, मन्त्री निरंकुश थे। उनके वैमनस्य एवं संघर्ष के कारण काश्मीर मण्डल की दुर्दशा हो गई। उस पर दुःख प्रकट करता श्रीवर लिखता है— हिम मार्ग, इस मण्डल में यद्यपि भूपालों के दुर्व्यसन से उत्पन्न दोष नाश करने में समर्थ होते हैं किन्तु परस्पर मन्त्रियों के वैर से समुत्थित दोष क्षण मात्र में समस्त राज्य को नष्ट कर देते हैं। (३.२९५) समुदाय से शोभित सप्तधातु का अंग से युक्त शक्तिसमृद्धि सुभग (राज्य या शरीर) यद्यपि भव वीर्य कार्य में सक्षम रहता है किन्तु जहाँ पर वातादि दोष सदृश परस्पर ईर्ष्या महामन्त्री होते हैं, वहाँ राज देह के समान, शीघ्र गल जाते हैं (३ २९६) असाध्य रोग, महाविष, ज्वालायुक्त सर्प एवं अग्नि इतना भयकारी नहीं होता, जितना कि इस देश में मन्त्रियों का द्वेष भयकारी हुआ है।' (३ ३०२)

मन्त्रियों ने स्वार्थों के कारण देश की राजनैतिक परिस्थिति विषाद दी थी। उनकी निष्ठा किसी के प्रति नहीं थी। उलटते हुए लोकतन्त्र के समान दल-बदल साधारण बात थी। श्रीवर इस दशा पर दुःख प्रकट करता है—'अधिक क्या कहा जाय, दिन में जो लोग स्पष्ट रूप से सैयिदों के पास रहते थे, वे निर्लज्ज काश्मीरी सेना में दिखाई पड़े। नियन्त्रण रहित लोग यहाँ से आते, वहाँ से जाते, इस प्रकार शिथिल आज्ञा वाले, उस बालक राजा के समय विप्लव उठ खड़ा हुआ।' (४ २२८-२२९)

सचिवों के सन्दर्भ में श्रीवर लिखता है—'गुणहीन, मध्यस्थ एवं शत्रु से स्वार्थी व्यवस्था करने वाले सचिव, एक तरफ हो जाते हैं, तब राजश्री नौका के समान डूब जाती है।' (४ ६०३) श्रीवर चेतावनी

देता है—'काश्मीर के प्रभावशाली लोगो में जब अपना मतभेद हो जाता है, तो राज्य नष्ट हो जाता है और वहिर्देशीय कौन से सम सुख नही होते ? लूट एव दाह के कारण लोग दुःखी होते है और धन देखते है। धीर एव वीर युक्त होकर भी, सेना नष्ट हो जाती है और शत्रु सम्पत्ति खोजता है। (४ ४५२)

सभा

मुसलिम काल में देखा गया है कि पूर्व राजाओ की राजधानी सामर्थ्य होने पर, सुल्तान बदल देते थे। दिल्ली इसी प्रकार कितने हो वार बसाई गई थी। मन्त्री बदल दिये जाते थे। नवीन सुल्तान अपनी इच्छानुसार मन्त्रियो का चयन करता था।

सिंहासनासीन राजा की सभा पुत्र या उत्तराधिकारी अथवा राज्य हड़पने वाले का विरोध करती है, राजा का साथ देती है अतएव पुत्र, उत्तराधिकारी अथवा राजहर्ता, जब शक्ति में आता है, तो पुरानी सभा, मत्री एव पदाधिकारी बदल देता है। उन्हें अपराधी मानता है। क्योंकि उन्होने उसका विरोध किया था ? जैनुल आवदीन ने विरोधी होने के कारण सभा को शाप दिया था। वह सभा भव्य थी, किन्तु एक ही वर्ष में समाप्त हो गई। (१·७ २७४)

हैदर शाह ने शासन प्राप्त करने पर, पिता जैनुल आवदीन की सभा समाप्त कर दी—'कार्यों में विशारद एव योग्य पिता की जो सभा थी, राजा ने पूर्व अपकार का स्मरण कर, मद समाप्त कर दी।' (२ १०३)

हसन शाह के समय मन्त्री-सभा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। राजा मन्त्रि सभा में विचार विमर्श करता था (३ ५०) हसन शाह के समय में सभा पनप नही सकी। श्रीवर लिखता है—'मुसलमान राजाओ को जो सभा थी, वह सब थोड़े ही समय में स्वप्नोपम हो गयी।' (३ १४१) सुल्तान राजसभा किंवा मन्त्रि-परिषद् की उपेक्षा करने लगे। देश में किसी प्रकार के आतक की आशका न होने पर, सुल्तान व्यसनी हो गये। रसिक हो गये। सभा भी राज-काज के स्थान पर रसिक हो गयी। (३ १६९) सभा अनेक विषयो पर विचार प्रकट करती थी। मन्त्रिसभा में कला विद्, सगीतज्ञ आदि गुणी जन रहते थे—'राजा हम्सनेन्द्र सगीत में निपुण था। इस प्रकार एक-एक गुण से पूर्ण प्रसिद्ध नृप मण्डली को लोगो ने इस मण्डल में देखा'। (३ २६७) किन्तु जब राजसभा में राग-द्वेष उत्पन्न होता है, तो वह देश का सर्वनाश कर देती है—'आश्चर्य है सर्वनाशक, यह द्वेष-पिशाच राजसभा में उत्पन्न हुआ और कोई मन्त्री उसे जीत नही सका।' (३·३०१)

मुहम्मद शाह शिशु राजा था। श्रीवर ने उसका राज्य काल केवल दो वर्ष देखा था। उसके समय में सभा नाम मात्र थी। उसमें कोई स्वतन्त्रता पूर्वक विचार प्रकट नहीं कर सकता था—'यदि धर्म बुद्धि से कोई दीन रक्षा हेतु प्रवृत्त हुआ, तो राजसभा में ही, वह उनके (मन्त्रियो) के दुरुत्तरों से अभद्रता का पात्र बनता था।' (४ ३७६) इससे प्रकट होता है कि राजसभा में जनता विज्ञप्ति काल में विज्ञप्ति करती थी। विचार प्रकट करती थी। मन्त्री उसपर अपना मत या उत्तर देते थे। इस समय सभा दुर्बल हो गयी थी। उसका ढाँचा मात्र शेष रह गया था। इस सभा की दयनीय स्थिति का वर्णन करते हुए श्रीवर लिखता है—'जो प्रमुख भागी लोग राजसभा में देखे गये थे, वे भी, बिना शस्त्र के, लोगों के समान अपूर्व सन्त्रास पूर्वक आये।' (४ ४७८)

मोक्षपत्र (खते रुखरात) :

काश्मीर में हिन्दू राजाओं के समय से ही यातायात एवं आवागमन पर नियन्त्रण था। राज्य की सुरक्षा दृष्टि से यह व्यवस्था की गयी थी। यह व्यवस्था कुछ समय पूर्व तक प्रचलित थी। सुल्तानों के समय काश्मीर में आने के लिये राज्य अनुमति आवश्यक था। बहिर्गमन के लिये भी राजाज्ञा आवश्यक थी। दर्रों अथवा संकट किंवा द्वार पर आज्ञापत्र कड़ाई के साथ देखे जाते थे। मद्र के सैनिक काश्मीर में थे। उन्हें जाने के लिये कहा गया। उन्हें देखकर सत्ताधारी सैयिद शंकित हो बोले—'प्रतिमुक्त दिये जाने पर भी (तुम लोग) अपने देश को नहीं जा रहे हो? किसलिये आये हो?' इस प्रकार आगत उन लोगों को देखते ही हर्षपूर्वक सिंह भट्ट द्विज ने कहा। तुम लोगों से हमें मार्ग मुक्ति पत्र नहीं प्राप्त हुआ है। हम लोग कैसे जाँय?'—सैयिदों ने उत्तर दिया—'आज तुम लोगों को प्रतिमुक्त (मोक्ष) पत्र मिलेगा।' (४:४१-४२)

दल :

श्रीवर ने काश्मीर के तत्कालीन दलबन्दी का विस्तार से वर्णन किया है। राजानक, ठक्कुर, डामर, प्रतिहार, सैयिद खसों का संगठित दल था। इनके अतिरिक्त प्रतिहार, सैयिद मार्गे एवं चक (चकों) का सैनिक किंवा अर्ध सैनिक दल था। मद्रों का कोई दल नहीं था। लेकिन उनके सैनिक काश्मीर की राजनीति को प्रभावित करते थे। वे प्रायः काश्मीर के किसी न किसी दल की पक्ष से सहायतार्थ बुलाये जाते थे। सत्ता प्राप्ति के लिये वे परस्पर संघर्ष करते थे। इन दलों में जबतक, काश्मीरी थे, देश के लिये खतरा नहीं था। परन्तु काश्मीरियों का एक दल, दूसरे पर अधिकार एवं उन्हें पराजित करने के लिये विदेशी, मद्र, खस, तुरुष्क तथा सैयिदों से सहायता लेने लगा। जो लोग काश्मीर के किसी दल की सहायता करने के लिये आये थे, वे स्वयं सत्ता हस्तगत करने का षड्यन्त्र करने लगे। हिन्दू काल में डामर एवं लवण्यों का दल था। वे काश्मीरी थे। परन्तु मुसलिम काल में विदेशी मुसलमानों के आगमन तथा उनके उपनिवेश काश्मीर में बन जाने के कारण स्थिति सर्वदा विस्फोटक रहती थी। जैनुल आबदीन एवं उसके पुत्रों में संघर्ष के कारण एक ऐसा दल बन गया जिसकी निष्ठा किसी एक के साथ नहीं थी। वे दोनों पक्षों से धन तथा वेतन लेते थे। जैनुल आबदीन के अन्तिम चरण में दल बदल की अवस्था हो गयी थी—'आज जो अपने पास दिखाई दिये प्रातः (हाजी) खान के पास सुने गये, इस प्रकार सारस सदृश सेवक कहीं भी स्थिर नहीं हुए।' (१:७:१५२)

सैयदों ने राजवंश से सम्बन्ध कर लिया था। उनकी प्रधानता दरबार में हो गयी। प्रभाव बढ़ गया। सुल्तानों से जब उनकी कन्याओं के पुत्र होने लगे तो उन्होंने मन्त्रित्व आदि उत्तरदायित्वपूर्ण पद प्राप्त किया। काश्मीरियों को बातें अखरने लगी। सैयिदों का झुकाव काश्मीरियों की अपेक्षा विदेशी मुसलिमों तथा अपने विदेशी भाई-बन्दों की ओर अधिक था। काश्मीर में हसन शाह तथा मुहम्मद शाह के समय स्पष्टतया दो दल हो गये। दोनों सत्ता प्राप्ति के लिये एक दूसरे के खून के प्यासे थे। काश्मीर गृह-युद्ध ज्वाला में भस्म होने लगा।

श्रीवर लिखता है—'मार्गपति का एक पक्ष, ठक्कुरों का दूसरा, तीसरा राजानक का, दीप्ति में सब अग्नि के समान चमक रहे थे। (४:३५३) वह बालक राजा आत्मा के समान निष्क्रिय एवं साक्षी मात्र था। उस समय सम्पूर्ण राजतन्त्र मन्त्रियों द्वारा सम्पन्न होता था।' (४:३५४)

विदेशी :

हिन्दू काल से ही विदेशियों का आगमन काश्मीर में होने लगा था। सीमान्त अफगानिस्तान, फारस,

तुर्किस्तान, भारत में अनिश्चित स्थिति तथा राजनीतिक कारणों से काश्मीर में तुरुष्क शरण लेने लगे। हिन्दू राजाओं की सेना में भी विदेशी थे। विदेशी राजसेवक शाहमीर ने ही काश्मीर में मुसलिम राज्य स्थापित किया था। काश्मीर में विदेशियों के उपनिवेश थे। सैयिद विदेशी थे। उनकी आबादी बढ़ गयी थी। वे दिन-प्रतिदिन शक्तिशाली होते गये। काश्मीरी एवं विदेशी मुसलमानों का अन्तर प्रारम्भ में नहीं प्रकट होता था। सभी एक धर्मानुयायी थे। हिन्दुओं के विरुद्ध सब एक थे। काश्मीर के राजवंश में विवाह द्वारा विदेशियों ने प्रभाव बढ़ा लिया। विदेशी मुसलमानों के प्रति काश्मीरी मुसलमानों को प्रारम्भ में स्नेह था। उनके आगमन का स्वागत करते थे। परन्तु जैसे-जैसे दिन बीतता गया, स्थिति बदलती गयी। राजनीतिक स्वार्थों एवं शक्ति प्राप्ति की दृष्टि ने काश्मीरी तथा गैर काश्मीरियों में भेद उत्पन्न कर दिया।

हिन्दू जनता के मुसलिम हो जाने पर, हिन्दुओं का विरोध न होने पर, मुसलिम परस्पर विभाजित हो गये। काश्मीरी तथा गैर काश्मीरियों का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। अनेक विप्लवों एवं संघर्षों का जन्म हुआ। उनका यथा स्थान वर्णन किया है।

सैयिद

सैयिद वंश के विषय में ख्याति थी। वे पैगम्बर हजरत मुहम्मद के वंश परम्परा में थे। पहले जैनुल आबदीन ने आगत सैयिद नासिर आदि को पैगम्बर वंशीय पूज्य एवं महागुणी जानकर, उन्नतासन प्रदान कर, स्पर्शादि से अतुल सत्कार किया और जिन्हें अपनी पुत्री प्रदान कर सम्मान पूर्वक उन्हें राष्ट्राधिपति बना दिया। (३:१५३–१५४) राजा की पुत्री से विवाह के कारण, बहु रूप आदि राष्ट्राधिपत्य के नित्य सुख को भोगने वाले, चिरकाल तक नृपवत् आचरण करते रहे।' (३:१५७)

काश्मीर में द्विजों के प्रति आदर भाव था। द्विज अवध्य थे। विद्या के कारण पूजनीय थे। पठन-पाठन, पूजा-पाठ उनका कार्य था। जो ब्राह्मण मुसलमान हो गये, वे भी अपनी उपाधि भट आदि नहीं त्यागे। सैयिदों ने इस स्थिति से लाभ उठाया। पैगम्बर वंशीय होने से उनके प्रति आदर अवश्य था किन्तु साधारण जनता में वे पूजनीय एवं श्रद्धा के पात्र नहीं बन सके। सैयिदों ने घोषित किया। वे हिन्दू ब्राह्मणों के समान मुसलमान ब्राह्मण हैं। बात बन गयी। इससे उन्हें सर्वत्र आदर मिल गया। काश्मीरी हिन्दू ब्राह्मण जन्मना ब्राह्मण होने का गर्व करते थे। इसलिये मुसलिम धर्म में परिवर्तित हिन्दुओं को म्लेच्छ कहते थे। सैयिदों की स्थिति हिन्दू ब्राह्मणों तुल्य हो गयी थी। इस भाव को श्रीवर प्रकट करता है—'इन मारे गये, राज सैयिदों को जो द्विज हैं, मैं कैसे देख सकूँगा? इसलिये मानो क्रोध से रुष्ट होकर, सूर्य लोकान्तर चले गये।' (४:८८)

सैयिद अभिमानी हो गये। मर्यादा का उल्लंघन करने लगे। वंश परम्परा की तथाकथित पवित्रता के कारण, सुल्तानों ने उनकी कन्या ग्रहण की। जैनुल आबदीन की रानी बोधा खातून सैयिद वंशीय थी। (१:७:४७)

सैयिद उद्धत हो गये थे। जैनुल आबदीन ने कुछ सैयिदों को निष्कासित कर दिया। हसन शाह ने सैयिद जमाल आदि को उपद्रवी जानकर, पहले सम्पत्ति से वंचित किया। अनन्तर देश से निकाल दिया। सैयिद नासिर स्वयं देश त्यागकर, बाहर चला गया। सुल्तान की पुत्री से विवाह के कारण बहुरूप आदि राष्ट्राधिपत्य के सुखभोगी, जो चिरकाल तक नृपवत् आचरण करते थे, वे लोग भी दिल्ली आदि चले गये। बाहर जानेपर, वे सुखी नहीं रह सके, उनकी स्थिति बिगड़ती गयी। (३:१५५–१५८) सैयिद यद्यपि

काश्मीरियों के यहाँ विवाह आदि सम्बन्ध करते थे, परन्तु वे हिल मिल नहीं सके। काश्मीरियों की उपेक्षा करते थे।—'मार्गेश जहाँगीर ने अपनी बहन की प्रतिष्ठा में कमी देखकर, निर्मुक्ति पत्र (तलाक) दिलवा दिया।' (३ १६३)

रानी सैयिदों का पक्ष करती थी। राज्य प्रासाद में काश्मीरी एवं सैयिद दो पक्ष हो गये। सैयिद रानी का प्रश्रय पाकर, बली तथा राजकार्य में हस्तक्षेप करने लगे। यदि सैयिदों को कुछ कहा जाता, तो रानी क्रुद्ध हो जाती। श्रीवर लिखता है—'जहाँगीर मार्गेश ने एकान्त में राजा से एक बार कहा—हे! राजन्! निष्कासित सैयिद, जो इस निष्कण्टक राज्य में ले आये गये हैं, यह स्वयं अपना अनर्थ किया गया है। जिस प्रकार जैनुल आबदीन के पौत्र तुम, राज्य करने के योग्य हो उसी प्रकार उसका दौहित्र मियाँ मुहम्मद भी आ गया है। तुरुष्को में आश्वस्त मन वाले, वे सैयिद सर्वदा शंकनीय हैं। मांस पर गृद्ध की तरह, राज्य पर जिनकी सुन्दर दृष्टि रहती है। हे! राजन्! बहुभार्या वाले आपके लिये एक प्रिया के प्रति आसक्ति ठीक नहीं है। एक स्त्री में निरन्तर रत नृप की कौन प्रशंसा करेगा? हे! राजन्! यदि तुम स्त्री के आधीन न होते तो तुम्हारा सब कार्य सिद्ध होता। अतः हे! प्रभो! स्त्री वशवर्ती मत हो।' चपल राजा यह उपदेश सुनकर रात्रि में मोहवश सब बातें रानी से कह दिया। भयावह सर्पिणी के समान रानी क्रुद्ध होकर, पितृ (सैयिद) पक्ष में आदर भाव वाली, मार्गपति का अनिष्ट चिन्तन करने लगी। (३ ४४७–४५४) श्रीवर के अनुसार वे भिक्षुकों के समान काश्मीर में आकर, राज सम्मान प्राप्त कर सैयिद सम्पत्ति युक्त हो गये थे—'क्षणभोगी विदेशी जो इस देश में आये सम्पत्ति युक्त हो गये और गर्भ से निकले हुए के समान, आत्म चरित भूल गये। प्रजा पीडन करने लगे। इसी पाप भार से उनका वैभव नष्ट हो गया। सुल्तान द्वारा निष्कासित कर दिये। सरोवर से निकाले गये, मत्स्य के समान, प्राण नाश के भय से व्याकुल हो गये।' (३ १५९)

जैनुल आबदीन दूरदर्शी था। सैयिदों के खतरे को समझ गया। सैयिद यौन सम्बन्धों के कारण राज्य प्रासाद में प्रवेश पा चुके थे। उन्हें काश्मीर की संस्कृति सभ्यता में आस्था नहीं थी। उनके स्वार्थ एवं स्वनिष्ट दृष्टिकोण के कारण, जैनुल आबदीन उन्हें काश्मीर से निष्कासित करना चाहता था। परन्तु असफल रहा। हसन शाह ने उस कार्य को पूरा किया। 'जैनुल आबदीन सैयिद निष्कासन को नहीं सम्पन्न कर पाया, इसके पौत्र (हसन शाह) ने अनायास ही कर दिया—ऐसा लोगों ने कहा।' (३ १६८)

सैयिद काश्मीर से निष्कासित कर दिये गये—परन्तु मल्लिक दल पुनः सैयिदों को बुलाने का विचार करने लगा। उनके आगमन से उनका दल मजबूत हो जायगा। (३ ३३०) यह बात उनके मन में बैठ गई थी। सैयिद लोग दिल्ली में रहते थे। उनके पास काश्मीर आने के लिए संदेश भेजा। (३ ३३१) किन्तु काश्मीरी देशभक्त कुलीन वर्ग, तथा डोम्बों ने सैयिद आगमन का विरोध किया। (३ ३३४) सावधान किया उनके—आने से सर्वनाश होगा।

सैयिदों के आगमन की बात सुनकर, फिर्द डामर ने अहमद आयुक्त को सावधान किया—'तुम दुर्धर देश के कण्टक, तुरुष्कों के लिए अत्यधिक सहायक एवं यत्न पूर्वक निष्कासित सैयिदों को मत प्रवेश दो। (३ ३३७) उनके आने से सर्वनाश होगा (३.३३८) अपनी मृत्यु का कारण होगा।' (३.३४१) किन्तु आयुक्त ने बात नहीं मानी। सैयिदों ने काश्मीर में प्रवेश किया। मियाँ हुस्सन सर्व प्रथम सुल्तान के सम्मुख उपस्थित हुआ। (३:३४६) मल्लिक ने स्वीयाश्रम प्रदेश सैयिदों को जागीर में दिया। (३ ३४७) सैयिद हसन को सोपा देशाधिकार दिया गया। (३ ३४८) वही मल्लिक के नाश का कारण हुआ।

सैयिदों ने शान ही राजदरबार में अपना प्रमुत्व रानी के माध्यम से बढा लिया। ताजभट्ट की स्त्री के अपहरण की इच्छा से, उसे बन्दी गृह में डाल दिया। (३ ३५२-६०) सैयिदा ने भेद नीति से सुल्तान को आयुक्त के विरुद्ध कर दिया। सुल्तान न आयुक्त के प्रति अपनी नाराजगी, राज सभा में व्यक्त कर दी। (३ ३६९-३७१) सुल्तान न युसुफ खाँ को उसके अभिमावकत्व स हटाकर जोन राजानक के अभिभावकत्व में रख दिया। (३ ७७) सैयिदो की सहायता से ताजभट्ट न मुक्त होकर राजधानी का आगन रौंद डाला। (३ ३८२) राजप्रासाद का पश्चिम द्वार जला दिया। (३ ३८३) राजा न मल्लिक के पुत्र नोदज को कारा में डाल दिया। (३ ३९७) सैयिदो क पूण अधिकार प्राप्त करन की भमिका तयार हो गई। (३ ३९९) आयुक्त का सब धन हरण कर लिया (३ ४०१) जहाँगार न पश्चात्ताप किया। कारागार में जुग भट्ट उससे सुवण सग्रह राजा के लिए माँगन गया। क्रुद्ध होकर, उसन उत्तर दिया— दिशाओं में भाग हुए भयभीत सैयिदा को लाकर मैंन (उन्हे) सम्बंधित किया। इस राजा क कृतघ्न होन पर व ही मर द्रोही हो गये।' (३ ४१३)

सैयिदो का मन बढता गया। शोषण नीति अपनायी। सैयिदो के अधिकारी जन आनन्द पुष्प' दीनारलण्ड' की प्राप्ति आदि नामो से प्रजा पोडन पूवक धन सग्रह किय। (३ ४२२) सैयिदो न अधिकार प्राप्त होते ही, दूतो को भजकर सैयद नासिर आदि का बाहर से बुलाया। (३ ४२६) किन्तु नासिर काश्मीर में प्रवेश करत ही ज्वर से मर गया (३ ४२९)

राजमहिषी के भाग्य रूप सौभाग्य से सम्प्राप्त वैभव स अजित, सैयिद काश्मीरियो को तृण बराबर भी नही समझते थ। (३ ४२३) राजा उनक आदेशो का आँख मूद कर पालन करता था। (३ ४३४) राजमहिषी के कारण नारियो का प्राबल्य राज्य में हो गया। (३ ४३५) स्त्रियाँ राजा की अन्तरग हो गई न कि मन्त्री तथा सेवक। (३ ४७१) राज्य स्त्रियों के आधीन था। (३ ४७५)

सैयद तथा उनक अधिकारी घूस कौशल पूवक प्रजा पीडन तथा स्त्री व्यसन में लिप्त हो गय। (३ ४६) सैयिद अधिकारी राहू के समान समस्त मण्डल को आक्रान्त कर लिए। (३ ४७८) सैयिदो ने विरोधियों का सहार आरम्भ किया। (३ ४४४) सैयिद मियाँ मुहम्मद जैनुल आबदीन का दौहित्र था। *वह भी काश्मीर म प्रभाव विस्तार करने लगा। (४ ४४८) सैयिदों तथा भार्या के आधीन बुद्धि हीन* राजा भृत्य कार्यों में तटस्थ और व्यवहार विशृङ्खलित हो गया। (३ ४६९) काश्मीरी पुरुष रत्नो को सैयिदों ने उत्पाटित कर दिया। लोग प्राण रक्षा के लिए बाहर चले गये। सैयिदा और काश्मीरियो में स्पर्धा हो गई। (३ ४७७) श्रीवर लिखता है दुराग्रह से ग्रस्त सस्कार वाला वह मियाँ हस्सन विश्वस्तजनों के कहन पर भी रावण क समान, सन्मार्ग पर नही चला (३ ४८२)।' सैयिदो के कारण परशुराम आदि मद्र देशवासी अपन अनिष्ट का आशका कर काश्मीर देश से बाहर जान की आज्ञा माँग (३ ४९८)

सैयिदो ने राजा को दुर्बल बना दिया। राजकाय से मन हटाने के लिए मृग समूहो का शिकार हेतु उसे ले गय। (३ ५०३) श्रीवर एक काश्मीरी होन के कारण शोक प्रकट करता। सैयिदों के सेवकगण जनता के पशु तथा मद्य आदि अपहृत कर अपना घर भरन लगे। (३ ५१६) सैयिदो की अलग एक सभा मण्डली बन गई, जिसमें काश्मीरी नही थे। (३ ५३३)

सुल्तान हसन शाह मृत्यु-मुख हो गया। उसने सैयिद हस्सन को बुलाकर कहा— मैं जीवित नहीं रहूँगा। मेर शिशु राज्य योग्य नही हैं। बहराम खाँ का पुत्र बन्दी है। मेर पुत्रों की रक्षा नही

करेगा। अच्छा है। आदम खाँ के सन्तान (फतह खाँ) को लाकर अभिषिक्त करो। (३:५४०-५४१) अथवा आपकी यह कन्या (राजमहिषी) जो कहे, वह करो' (३:५४२) सैयिदा ने सुल्तान की इच्छा के विपरीत कार्य किया। आदम खाँ का पुत्र सैयिद वशीय कन्या से नहीं था। अतएव सैयिदों ने सुल्तान की मृत्यु के पश्चात् उसके और अपनी कन्या के पुत्र मुहम्मद खाँ को जिसकी उम्र केवल सात वर्ष थी, सुल्तान बनाकर, राजतन्त्र पर पूरा अधिकार कर लिया।

सैयिद विप्लव तथा खान विप्लव

श्रीवर दो विप्लवों का वर्णन करता है—खान विप्लव तथा सैयिद विप्लव। सैयिदा का विप्लव खान विप्लव की अपेक्षा अधिक भयकर था। सैयिदों का विप्लव लौकिक वर्ष ४५६० = सन् १४८४ ई०, वैशाख मास चतुर्दशी को हुआ था। सैयिदों ने काश्मीर पर अधिकार करने का प्रयास किया। वे सभी राजकीय स्थानों पर नियन्त्रण चाहते थे। काश्मीरी कुलीन तथा सामन्त वर्ग को यह बात खलने लगी। सैयिद एवं काश्मीरियों में संघर्ष छिड गया। एक दूसरे को मिटाने के लिए कटिबद्ध हो गये। सैयिदों को राजप्रासादीय समर्थन प्राप्त था। परन्तु केवल प्रासादीय समर्थन द्वारा सैयिद स्थिति सुदृढ करने में सफल नहीं हो सके। काश्मीरी जनता उनके कुव्यवहारों, गर्व एवं शोषण से ऊब गई थी। बहराम खाँ के चौबीस वर्षीय पुत्र युसुफ की अनायास हत्या कर दी गई। जनता क्षुब्ध हो गई। जनता की सहानुभूति सैयिदों ने खो दी।

सैयिदों ने सुल्तान पर कड़ा नियन्त्रण रखा था। बिना अनुमति अन्तःपुर में प्रवेश वर्जित था। (४:१५) सैयिद काश्मीरी विद्वान् एवं शास्त्रज्ञों की निन्दा करते थे। घर में वे कामिनियों से घिरे रहते थे। ऐश करते थे। बाहर बाज पक्षी से शिकार खेलते थे। (४:१६) दोषपूर्ण व्यवहार खलि क्रूराचारी, अभिमानी लोभ के कारण दुरूह यमदूत तुल्य कष्टदायक, दुःशीलता के कारण अधिकार अनभिगम्य, मात्सर्य युक्त, उन सैयिदों से प्रजाहित सब सेवक विरक्त हो गये। (४:१७) सैयिद काश्मीरियों को द्वेष दृष्टि से देखते थे। उनका अनादर करते थे। (४:२२) काश्मीरियों की जो भी पुरानी एवं प्रचलित मान्यतायें थी, उनके विरोधी थे।

सैयिदों के काश्मीरियों के विरुद्ध मन्त्रणा आरम्भ की। काश्मीरियों के विरुद्ध योजना बनने लगी। काश्मीरी सतर्क हो गये। मद्र निवासी काश्मीर में बड़ी सख्या में थे। वे भी शंकित हो गये। काश्मीरी और मद्र मिल गये। (४:२४) उनका मोर्चा सैयिदों के विरुद्ध बन गया। मद्रों ने इस विद्रोह का नेतृत्व किया। सैयिदों के विरुद्ध विद्रोह के लिये कृतसंकल्प हो गये। (४:२५)

षड्यन्त्र का पता रानी को लगा। सैयिदों को सतर्क किया। उद्धत सैयिदों ने बात अनसुनी कर दी। (४:२८-३०) काश्मीरी जान राजानक आदि ने मद्रों को भडका दिया। मद्र उत्तेजित हो गये। सैयिदों का वध करने का निश्चय किये। अमृतवाटी में सैयिद एकत्रित थे।

मद्र नेता परशुराम ने वहाँ प्रवेश किया। चतुष्क मण्डप पर स्थित, सैयिद आगत मद्रों को देखकर शंकित हो गये। (४:४०) सैयिदों का पक्षपाती सिंह भट्ट था। परशुराम ने सर्वप्रथम उसका वध कर दिया (४:४३)। सैयिद जब तक सावधान होते, मद्रों ने हमला कर उनका सफाया कर दिया। (४:४६) तीस सैयिद मार डाले गये। (४:४८) घर में जिस प्रकार गौ का वध करने से पाप का भय (सैयिदों) को नहीं हुआ था, उसी प्रकार सैयिदों के वध से मद्रों को घृणा नहीं हुई। (४:५०) उनकी लाशें नग्न अनाथ तुल्य पड़ी रही। राज प्रासाद के फाटक में आग लगा दी। मद्र सहित, विद्रोही दल, राजा के घोड़ों पर चढ़कर, मुक्तामूलक नाग के समीप पहुँच गया। वहाँ परस्पर मन्त्रणा हुई। निश्चय हुआ। सैयिदों से युद्ध

कर, दोष का भी काम तमाम कर दिया जाय। (४ ६३-६४) सुल्तान सैयिदों का पक्ष करता है रानी सैयिद कन्या होने के कारण सैयिदों का पक्ष करती है अतएव काश्मीरियों ने बहराम खाँ के पुत्र को बन्धन मुक्त कर दिया। सैयिद शंकित हो गये। किन्तु बहराम खाँ के पुत्र की अकारण हत्या कर दी गयी। (४ ७८) काश्मीर जनता उनके इस लोमहर्षण पूर्ण हत्या से क्रुद्ध हो गयी। लूटपाट होने लगी। सुभग एवं सुन्दर वेश युक्त होकर राज गृह में जो लोग प्रवेश किये थे जिनके घोडों की टापों से उठी धूली से भूमि अन्धकारमय हो गयी थी वे लोग ही दो तीन शिविकाओं में जीर्ण वस्त्र युक्त गिरते रक्त धारा सहित नृप गृह से निकले। (४ ९१)

सैयिदों ने वितस्ता नदी पर मोर्चेबन्दी की। जहलाल ठाकुर आदि काश्मीरियों ने नौका सेतु बन्ध काट दिया। काश्मीरी मद्रों से समझौता कर लिये। (४ ९६) सैयिदों ने विशप्रस्थ में शिविर लगाया। (४ ९७) सैयिदों की सत्ता काश्मीर मण्डल से समाप्त हो गयी थी। केवल श्रीनगर उनके अधिकार में था। (४ ९९) सैयिदों ने धन बल पर सेना संघठित करना चाहा जिन्हें कभी एक कौड़ी भी नहीं मिली थी। वे स्वर्ण एवं रुपया हाथ में लिये घूमने लगे। कारीगर और गाड़ीवानों ने भी सैयिदों से धन लेकर शस्त्र ग्रहण कर लिया। (४ ९९ १००) राजकीय अश्वों पर सैयिदों के नौकर सड़कों पर घूमने लगे। (४ १ ?)

काश्मीरी सामन्त पारस्परिक विरोध भूल कर सैयिदों से राज सत्ता प्राप्त करने के लिए एक सूत्र बद्ध हो गये। जाल डागर में काश्मीरी सेना एकत्रित हुई। नगर में मद्र लोगों ने अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली। यह समाचार फलतः हो चारों ओर से आकर सशस्त्र काश्मीरी संघठित हो गये। काश्मीरियों के पास धन नहीं था। कोशाभाव में वे धान्य संभार, नाविकों द्वारा मँगाकर वेतन देने लगे। (४ ११०)

काश्मीरी और सैयिदों की सेनाएँ वितस्ता के आर पार शिविर लगाये थीं। प्रतिदिन संघर्ष होता था। (४ ११२) इस उपद्रव काल में अवांछनीय तत्त्व उमड़ आये। लूट पाट एवं जनता को पीड़ित करने लगे। (४ ११०) सैयिदों ने रक्षार्थ पाँच हाथ चौड़ी खाई खुदवाई। (४ १२२) रुद्र राजानक के निकट एक दूसरी खाई खोदी गयी। नगर में लकड़ी का अभाव होने पर दिद्दामठ एवं रुद्र वन के गृहों से लकड़िया ले ली गयी। राज्य प्रासाद प्रांगण में अश्वारोही स्वच्छन्दता पूर्वक नित्य घूमते थे।

संघर्ष के साथ ही साथ घरों में आग लगाने का भी कार्यक्रम राजानक हुसेन ने आरम्भ किया। (४ १२२) उस समय पारस्परिक भय से नष्ट धैर्य सैयिदों एवं काश्मीरियों की सैन्य स्थिति काकतालीय न्याय जैसी हो गयी थी। (४ १२९) लोगों के मस्तक काटकर लाठी पर टाँग दिये जाते थे। (४ १३०) पद्मपुर आदि स्थानों में लूट मार होने लगी। विप्लव की अग्नि ग्रामों तक पहुँच गयी। एक पक्ष दूसरे के गृहों में आग लगा देता था। लहर आदि स्थान अग्नि दाह में भस्म हो गये। (४ १३५) काश्मीरियों ने जहाँगीर मार्गेश को सन्देश भेजा—विजय के लिए इच्छुक हम सब काश्मीर मण्डल में फैले हैं और पुर मात्र में अवशिष्ट वे सैयिद घिरे हैं। (४ १३९) वहाँ शीघ्र आकर राज्य की रक्षा करनी चाहिए। अन्यथा सैयिद पुत्र शिशु सुल्तान का राज्य नहीं स्थापित करेगा। (४ १४३)

जहाँगीर मार्गेश अविलम्ब पर्णोत्स (पुछ) मार्ग से सदल बल काश्मीर के लिए ही प्रस्थान किया। (४ १४४) उसके आगमन का समाचार सुनते ही सैयिद काँप उठे। (४ १४५) सैयिदों ने सन्धि का प्रस्ताव रखा। (४ १४६) फारसी लिपि में मार्गेश ने उत्तर दिया—बहराम खाँ आत्मज (युसुफ) राजपुत्र को किस लिये मारा गया ? (४ १५४) नुरुल्ला आदि के वध के कारण यहाँ किसका आप लोगों पर विश्वास होगा ?

और यहाँ शिशु राज का कोश लूट लिया गया है। राज द्वार पर केवल एक लोहे की घटिका मात्र शेष रह गयी है।' (४:१५५, १५६)

सन्धि के लिए सैयिदों को शर्त भेजा गया। दूतने कहा—'शिशु सुल्तान का जो धन अपहरण किया गया है। वह कोश में रख दे, शस्त्र त्याग दे, पश्चात् सन्धि की मन्त्रणा की जाय।' (४ १५९) सैयिदो ने काश्मीरियों के सन्धि शर्त का नहीं माना। (४:१६२) सैयिद कौरवों के समान, पाण्डव काश्मीरियों से, युद्ध करने के लिए सन्नद्ध हो गय। (४ १६४) काश्मीरी सेना सैयिदों से युद्धार्थ श्रीनगर पहुँची। (४.१६५) डोम्ब आदि इस स्थिति से लाभ उठाये। रण त्यागकर, लूट पाट करने लगे। (४ १६९) सैयिदों की विजय सन्देहास्पद हो गयी। तथापि वे युद्ध हेतु सम्मुख आये। (४ १७२, १७३) घोर युद्ध आरम्भ हुआ। युद्ध दर्शक पुरवासी भी मारे गये। (४ १८२) सैयिदों न ब्राह्मणो क घर स्थित परदेशियों का भी, यह कर मार डाला कि वे मद्र निवासी थे। (४:१८३) सैयिदों न वैद्य पण्डित यवनेश्वर का, जो घर में बैठा था, अकारण मार दिया। (४.१८५) लोगों को भयभीत करने के लिए उसका मस्तक राजपथ पर रख दिया गया। (४:१८७) मल्लिकपुर से लोष्ट विहार तक मृत शव इन्धन की लकड़ी की तरह पड़े थे। (४:१८९) सैयिदो का इस युद्ध में तात्कालिक विजय मिल गयी। सैयिदो ने वामप्रस्थ में बाजा बजाकर, विजयोत्सव मनाया। (४ १९१)

सैयिदो ने गलती की। काश्मीरियों का पीछा नहीं किया। काश्मीरी पुनः संघटित हो गये। दोनों सेनाओं का सामना हुआ। वितस्ता पुल टूट गया। दोनों पक्षों के अनेक सैनिक डूब मरे। (४ १९५) नागरिक युद्ध देखने आये। सैयिदो ने उनके सम्मुख छिन्न मुण्डराशि रख दी। (४ १९७) लट्ठों पर मुण्ड भयभीत करने के लिए लगा दिये गये। (४:१९८)

काश्मीरी हतोत्साहित नहीं हुए। पुनः चारों ओर से एकत्रित हो गये। समस्त काश्मीर मण्डल में सैयिदों के विरुद्ध लड़ने के लिए आह्वान किया गया। घनघोर युद्ध हुआ। वितस्ता में स्त्रियाँ जल भरने गयी थी। बाणो से उनका अंग विदीर्ण हो गया। वे वहीं मर गयी।

काष्टवाट के दौलत सिंह, मल्हड हम, शाहि भंग के राजपुत्र सिन्धुपति वंशीय, पयगह्लर के वीर, खश, म्लेच्छ एवं अन्य लोग भी आकर, घेरा डाल दिये। काश्मीरी विजय प्राप्त नहीं कर सके।

सैयिदों के आह्वान पर तातार खा ने तुरुष्क की सेना सहायतार्थ भेजी। (४ २१९) किन्तु काश्मीरियों ने युद्ध की नवीन योजना बनायी। काश्मीरी गुरला नीति का वरण किये। सैयिदों पर छापा मारकर, अश्व, शस्त्रादि अपहृत करते थे। (४:२२७) दो मास तक संघर्ष चलता रहा। कोई भी दल शिथिल नहीं हुआ। (४ २३१) एक दूसरे के सैनिकों को पकड़कर, शूली आदि पर चढ़ाकर मारने लगे।

काश्मीरियों का घेरा दृढ़ होता गया। उन्होंने सैयिदों को सन्देश भेजा—'केवल नगर में रहकर कितने दिन तक वे ठहरेंगे ? अन्न या सहायता नहीं मिलेगी।' सैयिदों ने उत्तर दिया –'अन्न की कमी से भूख की पीड़ा से, अथवा भय से, वहाँ से नहीं जायेंगे। तुरुष्कों को किस वस्तु से घृणा है ? हम लोग सर्व मांस भोजी हैं। जब तक पशु, गो मांस, पर्याप्त है, तब तक रहेंगे।

सैयिद बली थे। अतएव काश्मीरियों ने नीति से काम लिया। सेना को तीन भागों में विभक्त किया। मद्र सैनिकों ने विजय या वीर गति प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की। (४.२५०)

काश्मीरियों ने स्व पक्ष सैनिकों के पहचान के लिए उनके शिर पर पत्र शाखा रख दिया। दोनों ओर से काश्मीरी सैनिक होने के कारण पता नहीं चलता था। कौन किस पक्ष का सैनिक था। (४.२५४)

मद्र व्यूह बद्ध हो गये । सैयिदों से पुन युद्ध आरम्भ हुआ । (४ २६५) परशुराम ने युद्ध के प्रारम्भ में सामयिक भाषण दिया—'हे वीरो ! समर में प्रसन्नता पूर्वक युद्ध करो । पीछे मत हटो । ये निर्दयी सैयिद विजयी होगें, तो कोध के कारण सर्वस्व हर लेंगे । यदि विजय प्राप्त करोगे, तो अपने वैभव से सुख मिलेगा ।' (४:२८६) मद्रों और सैयिदो के मध्य घनघोर युद्ध होने लगा । मद्र एव काश्मीरी वीर एक साथ युद्ध रत थे । दोनो का लक्ष्य सैयिदो का पराभव था । (४ २७२) सैयिद सम्मिलित सेना के सम्मुख टिक नही सके । काश्मीरियों की विजय हुई । (४:२८५) समुद्र मठ से पुराधिष्ठान तक शत्रो के समूह इन्धन के समान पडे थे । (४ २८८)

१८ विहार में सैयिदो ने अग्निदाह किया था । इससे क्रुद्ध होकर मार्गपति ने बलाभपुर जलाने के लिये आग लगा दी । (४ ३१५) सैयिद हमदान का खानकाह भी अग्नि दाह में भस्म हो गया (४ ३१७) इस भयकर स्थिति में चाण्डालों ने नगर लूटा । (४ ३१८) दरिद्र अमीर और अमीर दरिद्र हो गये । (४ ३१९) युद्ध भूमि में पडे शवो पर जो आभूषण या कुछ द्रव्य थे, उसे भी लोगो ने लूट लिया । (४ ३२०) लुटेरें परस्पर लूट के लिए लडने लगे । मत्स्य न्याय प्रच्छन्न हा उठा । (४ ३२१) विटो ने कुमारी कन्याओं एव स्त्रिया के साथ बलात्कार किया । (४ ३२६) दस्यु लोग मदमत्त होकर लोगो को पीडित करने लगे । (४.३२८) कितने ही लोगो का सचित धन नष्ट हो गया । कितने बन्धु वियोग से दु खी हो गये । कितनो की भूमि जबर्दस्ती छीन ली गयी । (४ ३३३) सो में कोई एक सुखी था । लौ० ४५६० = सन् १४८४ ई०, के श्रावण मास में यह विजय प्राप्त हुई थी । इस युद्ध में लगभग दो सहस्र व्यक्ति मारे गये थे । (४ ३३२) श्रीवर उपसहार में लिखता है—'सैयिद वध से पहले अकुरित, क्रम से पल्लवित, पारस्परिक वैर वृक्ष, उस दिन फलित हो गया' । (४:३३३) आततायी पुरवासियो को दुःखी करते थे । लोगों की कृषि फल हर लेते थे । बार बार भूमि में फलयुक्त वृक्षों का इन्धन के लिये तुरन्त उच्छेद किया गया । इस प्रकार सैयिदों के द्रप के कारण चारों ओर प्रवरपुर में महान उपद्रव हुआ । (४ ३३४) काश्मीरियों द्वारा त्यक्त अली खा प्रमुख सैयिद नाम मात्र के लिये अवशिष्ट रह गये । (४ ३३५) मन्त्रियों न मरुतों के समान, उस वाल चन्द्र (सुल्तान) का, सैयिद रूप मेघ पुंज से रहितकर, पुरवासियो को आनन्दित किया । (४ ३४०) मन्त्रियों ने सब सम्पत्ति अपहृत कर, कुटुम्ब सहित अली खान आदि सैयिदो को मण्डल से निर्वासित कर दिया । (४:३४४) काश्मीरी मन्त्रियों के एक मत हो जाने पर, अविशंकित परशुराम सत्कार प्राप्त कर, अपने देश (मद्र) लौट गया । (४ ३४४) विधाता के विपरीत होने पर, कही गति नही है । (४ ३९४) शिशु सुल्तान सैयिदों के कठोर हस्त से मुक्त हुआ । (४ ४३९)

खानविप्लव

'पूर्व के सैयिद विप्लव की अपेक्षा खान का यह विप्लव बडा था । पाद रोग की अपेक्षा, गले का रोग अधिक भयावह होता है । (४ ४४५) यह विप्लव लौकिक वर्ष ४५६१ = सन् १४८५ ई० में हुआ था । (४ ४९९)

आदम खा का फतह खा पुत्र, जैनुल आबदीन का पौत्र तथा सुल्तान मुहम्मद खा का चाचा था । ज्येष्ठ पुत्र होने पर भी आदम खा राज्य प्राप्त नही कर सका । मझला भाई हैदर शाह सुल्तान बन गया । हैदर शाह के पश्चात् उत्तराधिकार उसी के वश में चलता गया । मुहम्मद शाह उसका पौत्र था । जैनुल आबदीन का प्रपौत्र था ।

फतह खा ने अपने पैतृक राज्य प्राप्त करने का सकल्प किया । आदम खा की मृत्यु मद्र मण्डल में हो हो गयी थी । वही फतह खा शिवरात्रि के दिन पैदा हुआ था । आदम खा राजा मद्र के पक्ष से युद्ध करता

मारा गया था। फतह खाँ नाना के घर पला था। तातार खाँ उसका रक्षक था। फतह खाँ कुछ दिनों तक जालन्धर में निवास किया था।

सैयिदों के भय से बहिर्गत मार्गेश जहाँगीर ने पितामह का राज्य प्राप्त करने के लिए फतह खाँ को पत्र लिखा। तातार खाँ की मृत्यु पश्चात उसके पुत्र हस्सन खाँ ने फतह खाँ का पालन पोषण किया था। फतह खाँ राज्य प्राप्ति हेतु काश्मीर मण्डल की ओर प्रस्थान किया। शृंगार उसे राजपुरी लाया। राजपुरी का राजा मार्गेश इब्राहीम से द्वेष रखता था। फतह खाँ को आश्रय दिया। राजानक ठक्कुर दौलत आदि डामर फतह खाँ से मिल गये। मसोद राजानक ने भी खान का पक्ष ग्रहण किया। (४ ४०९—४१४)

काश्मीर के अवांछनीय तत्त्व अपराधी ऋणी जो भृत्य के समान सेवक बना लिये गये थे चार विट एवं दरिद्र खान के आगमन से प्रसन्न हो गये। उन्हें लूट मार करने का सुन्दर अवसर दिखायी पड़ने लगा। (४ ४१६) राज्य वैभव एवं राजकीय पदलोलुप खान की सेवा में उपस्थित हो गये। (४ ४१७)

काश्मीर मण्डल का राजा शिशु था। सत्ता मार्गेश तथा मन्त्रियों में थी। लोभी चारों ओर से खान के पास अन्य आश्रय त्याग कर आने लगे। (४ ४१९) खान बढ़ने लगा। उसकी वार्ता सुनकर, लोग कम्पित हो उठे। खान ने पूर्व मार्गपति के पास खान के मन्त्रियों ने पत्र भेजा— आपके लेखा द्वारा तुरुष्क देश से इस खान को काश्मीर तुम्हीं लाये हो। हे मार्गपति! आप कुलस्वामी भी कैसे उपेक्षा कर रहे हैं? स्वयं किया हुआ पाप पश्चात्ताप के लिए कैसे हो गया? शिशु के ऊपर राज्य भार डाल कर, दूसरे लोग मण्डल का उपभोग कर रहे हैं। व्यवहारोचित एवं शुद्ध यह क्यों बाहर रहे? अथवा यदि मण्डल में उसका पितृभाग दे देते हो तो यह काश्मीर के बाहर ही स्थित रहकर और भीतर यह राजा बना रहे। यदि यह शर्तें स्वीकार नहीं हैं तो युद्ध में दोनों सेनाओं के वध का दोष आप पर होगा। (४ ४२७ ४३०)

मार्गेश ने उत्तर भेजा— काश्मीर भूमि पार्वती है वहाँ का राजा शिवांश है। कल्याणेच्छुक विद्वानों को दुष्ट होने पर भी उसकी उपेक्षा या अपमान नहीं करना चाहिए। इस देश में तपस्या द्वारा राज्य प्राप्त होता है न कि पराक्रमों से अन्यथा आदम खाँ आदि लोगों ने अपने क्रमागत राज्य को क्यों नहीं पाया? जिस क्रम से वह आया उसे त्यागकर राजा के रहते विघ्न हेतु उसे प्रवेश कैसे दिया जाय? यदि यह खान मेरा मत मानता है तो सर्वथा पूजनीय है। अरुण को अग्रसर कर उदयोन्मुख सूर्य पूजित होता है। कृतघ्न मात्र प्राप्त सम्पत्तियाँ चिर काल तक मनुष्यों के सुख के लिए नहीं होतीं अवश्य व्यसन युक्त भोग शरीर के रोग के लिए ही होते हैं। मैंने उसे राजा नहीं बनाया है। दूसरों ने उसे राजा बनाया है। मैं उसकी रक्षा कर रहा हूँ। क्या राजा को सैयिदों के हाथों से मुक्तकर, अब आप लोगों के हाथों सौंप दूँ? (४ ४३३ ४४०)

खान का प्रथम बार काश्मीर प्रवेश

खान की सेना ने काश्मीर में प्रवेश किया। साथ ही डोम्ब, तथा खसादि लूट मार पर तत्पर हो गये। मार्गों पर पथिक, चोरों द्वारा लूट लिये जाते थे। निर्बलों पर बलवान हावी हो गये थे। नृप रहित देश तुल्य अराजकता फैल गई। जनता अरक्षित थी। रक्षा हेतु निवास त्यागकर पशुधन आदि सहित दक्षिण चली गई। (४ ४४० ४६)

खान की सेना खारी तथा अधवन राष्ट्रों में प्रवेश की। खान की तात्कालिक विजय हुई। मार्गसिंह खान का सलाहकार था। उसके कारण बिना अवरोध खान काश्मीर पहुँच गया। मल्ल शिला पर शिविर लगाया। सैनिकों ने कराल देश के निरालम्ब निवासियों को लूट लिया।

पूर्व काल में सैयिदो के अभ्यस्त एव रसी वस्तुओ के लूटे जाने के अनुभवी, पुरवासी लोग भयभीत होकर, गृह सम्पत्ति को पुर से गाँवो में रख दिये। (४४१?) नगर में लूट होने लगी। नगरी मुषित वारागना सदृश, उत्तम नहीं रह गई। (४४६०) मार्गेश सुल्तान सहित गुसिकोड्डार में शिविर लगाया। (४.४३१) सेना को तीन भागो में विभक्त किया। (४.४३२) खान कल्याणपुर गया। मार्गेश ने उसका पीछा किया। खान भी खान मरुग स्थान पर स्थित हो गया (४४६२)

विचित्र स्थिति थी। खान पक्ष में काश्मीरी और विदेशी थे। सुल्तान पक्ष में केवल काश्मीरी थे। (४४६६) खान तथा सुल्तान की सेना में विकट युद्ध होने लगा। मार्गेश ने अद्भुत रणकौशल का परिचय दिया। काश्मीरी सेना पलायित हो गयी। परन्तु इस झूठा अफवाह के सुनते ही पुन लौटी। खान गिरफ्तार हो गया है। (४४८६) खान के शिविर में अव्यवस्था फैल गयी। शृगार सिंह आदि काश्मीरी सैन्य में उत्पन्न नवीन उत्साह देखकर, भाग खड़े हुए। पलायित सेना को खसों तथा डामरो न खूब लूटा। सघर्ष के पश्चात् जहाँगीर मार्गेश सुल्तान को साथ ले जमाल मरुग पहुँचा। (४५११) सन्देह पर, मगल नाड ग्राम जला दिया गया। (४.५१२) लोगो के पास तन ढकने के लिए वस्त्र नही रह गया। (४५१५) मार्गेश युद्ध में विजयी हुआ। श्रीनगर में विजयोत्सव मनाया गया। खान पक्ष में गये लोगों का दण्डित किया गया।

● **खान का द्वितीय बार प्रवेश :**

भैरव गल में स्थित, खान ने द्वितीय बार पुन काश्मीर प्रवेश का विचार किया। (४५२४) दो मास रहकर, सैनिको के साथ उसका पुन आगमन हुआ। शूरपुर पहुँचा। जहाँगीर मार्गेश सुल्तान सहित सामना हेतु आया। (४५२६) इसी समय का बन्धन मुक्त सेफ डामर खान से मिल गया। मुख्य सलाहकार बन गया। (४५४२)

मार्गपति ने पुन सन्धिहेतु खान के पास दूत भेजा। (४.५४८) खान की सेना में फूट पड गयी। खान भयभीत हो गया। सेना सहित पीछे हट गया। (४५५५) काश्मीर मण्डल की बुरी अवस्था थी। शासन व्यवस्था नही रह गयी थी। परस्पर ईर्ष्या-द्वेष के कारण, जो जिस चाहता, मार देता था। न्याय का दर्शन दुर्लभ था। नगर में डेढपल नमक का मूल्य २५ दीनार हो गया था। (४५७९)

● **खान का तृतीय बार कश्मीर प्रवेश**

लौकिक वर्ष ४५६२=सन् १४८६ ई० में खान ने काश्मीर में तृतीय बार प्रवेश का विचार किया। मार्गेश ने अपनी शक्ति ठीक न देखकर, कुटिल नीति अपनाया। (४.५८०) मार्गेश न हाजी खाँ के दौहित्र खान मार सिकन्दर का कम्पनाधिपति बनाया। स्थाम (सैनिक छावनी) में भज दिया। (४५८१) भैरव गलत स्थान पर खान पहुँच गया। मार्गेश शूरपुर में उसका मार्गविरोध करने के लिए सुल्तान के साथ पहुँचा। (४५८४) श्रावण मास में खान काचगल मध्य पहुँच गया। (४.५८६) खान तथा मार्गेश की सेना में कुछ सघर्ष हुआ। युद्ध में कुछ सैयिद सैनिक, जो सुल्तान के पक्ष में थे मारे गये। (४.५९१) गुसिकोड्डर में युद्ध हुआ। श्रीवर लिखता है—'न तो सैयिद के युद्ध में, और न खान के प्रथम युद्ध में वैसा भट क्षय नही हुआ, जैसा कि गुसिकोड्डार के युद्ध में हुआ।' (४५९३) इस स्थिति का लाभ उठाकर बली दुर्बलों को पीड़ित करने लगे।

खान के विदेशी सैनिको ने विद्रोह कर दिया। (४६०४) खान पुन लौट गया। झूठी अफवाह फैलायी गयी। सुल्तान की सेना ने खान को बन्दी बना लिया। (४.६०५) खान की सेना का साहस टूट

गया। खान तीसरी बार काश्मीर मण्डल में प्रवेश और बाहर निकल कर पर्णोत्स (पूछ) पहुंचा। मार्गेश चिन्तित हो गया। उसकी मन स्थिति का श्रीवर वर्णन करता है—'समय अधर्म बहुल हो गया है। सभी लोग द्रोह परायण है। राजा बालक है। मन्त्रि मण्डल स्वेच्छाचारी है। अपने लोग नियन्त्रणहीन है। खान पक्ष में जाने के लिए उत्सुक है। पुरवासी अनुराग एवं राजगृह कोश रहित हैं, सर्व सामर्थ्य रहित सत्ता मुझ वृद्ध के लिए नहीं रह गई है।' शस्त्राघात से चिन्तित मार्गेश अपने घर में दो मास तक पड़ा रहा।' (४:६०८-६१०)

● 　　**खान का चौथी बार काश्मीर प्रवेश :**

खान चटिका सार पर्वत से काश्मीर गये सैनिकों के साथ चौथी बार राज्य प्राप्ति की इच्छा से लौट आया। मार्ग के गाँवों में आग लगा दी गयी। यह स्थिति देखकर, खान पुनः सेना लेकर, युद्ध के लिए निकला। (४:६१४) थोड़ी सेना होने पर भी, काश्मीरी सेना को खान ने परास्त कर दिया। (४:६१९) देश में अराजकता फैल गई। खसों और डाकुओं ने जनपदों को लूटा। उनके भय से नगी स्त्रियाँ एवं पुरुष घर बार छोड़कर भाग गये। श्रीवर लिखता है—'गरजते हुए दुष्ट खश डाकुओं ने जनपदों को लूट लिया। उनके भय से सब कुछ त्याग कर नरनारी नग्न ही चली गई। मार्ग में भी पूर्वोपकार स्मरण कर बहुत से बर्बर लोगों की अबलाओं को मार डाला। वह राज विपर्यय कल्पान्त काल के सदृश अति भयकारी था। (४:६३३) नगर में धनियों के उस दुःसह सर्वस्व लुण्ठन के समय, दरिद्र अतिधनी एवं अतिधनी दारिद्रय के भागी हो गये। (४:६३४) पत्र, पुष्प, एवं फल से सुन्दर वृक्ष एवं तरल तरंगों से युक्त नदियाँ, शब्द युक्त पिक आदि जो होते है, वे हिम ऋतु में क्रमशः शीर्ण, शुष्क एवं मूक हो जाते है—काल विपर्यय से क्या नहीं होता? (४:६३५) उस राजा के बल सहित नष्ट हो जाने पर वे राज वल्लभ जन, वे सुन्दर स्त्रियाँ, वे सेवक, कथावशेष हो गये।' (४:६३६)

राजविपर्यय के समय, उस नगर में खसों ने दाह के अतिरिक्त सैयिदोपद्रव में होने वाले वध की अपेक्षा अधिक लूट की। (४:६४१) कुछ प्रधान वणिक्, जो करोड़ों के संग्रह से वंचित हो गये थे, वे तृण मात्र से अंगों को ढककर, प्राणों की रक्षा कर, स्थिर रहे। (४:६४२) 'यदि जीत होगी, तो तुम लोगों को तीन दिन तक लूट की छूट दूँगा, इस प्रकार विदेशियों द्वारा उत्कोच प्रलोभन देने पर, मन्त्री लोग सापेक्ष हो गये। (४:६४३) जिस प्रकार काश्मीरी बाहर आकर लूट किये थे, उसी प्रकार काश्मीर में विदेशियों ने किया। समय पर क्या-क्या देखा नहीं जाता?' (४:६४४)

कुछ लोगों ने धन सहित कुम्भों को जो पक्षियों के तालाबों में रक्षित किया था, उसे भी ले लिया (४:६४८) कुछ लोगों ने टूटे-फूटे भाण्ड एवं करण्ड आदि को घर में चारों ओर फैलाकर—'मैं लूट गया हूँ।' इस व्याज से खसों को भी ठग लिया। (४:६५०) नगर में धनिकों द्वारा गर्त में हर कदम पर, रखे गये, धनों से उस समय वसुन्धरा वास्तव में (वसुन्धरा) धन को धारण करने वाली हो गई थी। (४:६५२)

राजविपर्यय पर श्रीवर अपना मत व्यक्त करता है—'वह राजविपर्यय सार्वजनिक कोश रूप, सर्प को दूर करने के लिए डिण्डिम, (नगाड़ा-डुग्गी), दीपो प्राचीन सेवक रूप कमल वन के लिए हेमन्त काल का उदय, मूर्ति के दृष्टी रूप मधु गोलक (छत्ता) पर स्थित मधुमक्खी समूह के लिए धूमोद्गम तथा नृप सभा रूप उद्यान द्रुमावली के लिए वसन्त ऋतु था।' (४:६५४)

● 　　**पुष्प लीला :**

जैनुल आबदीन चैत्र मास में पुष्पलीला उत्सव हेतु पुत्रसहित नौकारूढ़, मडवराज्य गया। (१:४:४२) राजा

वितस्ता में नाव पर अवन्तिपुर और वहाँ से विजयेश्वर गया। (१ ४ ४) विजयेश्वर में उसने उत्सव में भाग लिया। वहाँ नाटक, संगीत, नृत्य, गान होता था। (१ ४ ५-११)

हैदर शाह के समय में श्रीवर पुष्पलीला का उल्लेख करता है। हैदर शाह भी मडव राज्य पुष्प लीला के लिये गया था। (२ ११४)

सुल्तान हसन शाह के पुष्प लीला का उल्लेख श्रीवर करता है—'राजा सैयिद सहित, कुसुम क्रीडा करने के लिये, भवनाप्म में उसी प्रकार गया, जिस प्रकार इन्द्र चैत्ररथ में। पुष्प लीला करके, नौका से आकर, महीपति ने मार्गेश नौरुज के साथ पान लीला की।' (३ ३६५,३६६)

सुल्तान मुहम्मद शाह शिशु था। गृह युद्ध आरम्भ था। अतएव पुष्प लीला का उल्लेख स्वल्प दो वर्षों के राज्यकाल में श्रीवर ने नहीं किया है।

पुष्प लीला के सन्दर्भ में विस्तार के साथ यथा स्थान वर्णन किया गया है। श्रीवर ने पुष्प लीला नामक चतुर्थ सर्ग, तरंग प्रथम में लिखा है। इससे प्रकट होता है, पुष्प लीला का महत्त्व काश्मीरी जीवन में था।

● **तोप-बारूद : आतिशबाजी**

जैनुल आबदीन के समय बारूद का प्रवेश काश्मीर में हुआ था। विदेशी शिल्पियों द्वारा बारूद बनाने की कला आयी। आतिशबाजी का रोचक वर्णन श्रीवर करता है—'अंगार क्षार, सोरा, चूर्ण आदि गन्धक औषध युक्त रागों से शिल्पियों द्वारा की गयी लीला ने दर्शकों का मनोरंजन किया। औषध पूर्ण नाल से निकलते, घने अग्निकण कुसुम से पूर्णलता का भ्रम उत्पन्न कर रहे थे। सलिलान्तर से निर्गत सर्पाकार अग्नि ज्वाला प्रेक्षक लोगों में त्रास, आश्चर्य एवं भय का उदय कर रही थी।' (१:४ १९-२१) उत्सव, शादी आदि के अवसर पर चर्खी, बाण, फुहारा, गुब्बारा, अनार, चादर आदि आतिशबाजियाँ छोडी जाती है। श्रीवर के समय इसका प्रवेश काश्मीर में हुआ था। अतएव उसने साहित्यिक वर्णन किया है। (१ ४:२१–२९)

गोली, गोला का भी इसी प्रकार श्रीवर वर्णन करता है—'शिल्पियों ने वज्र के विविध प्रकार प्रदर्शित किये। जिसमें धीरजनों के कम्पित करने वाली ध्वनि सुनी गयी। (१:१:७२) शिल्पियों द्वारा निर्मित तत् तत् धातु मय नवीन यन्त्र भाण्ड प्रकारों का सुल्तान ले आया।' (१.१:७३)

श्रीवर तोप निर्माण का समय भी देता है—'एकतालीसवें (लौ० ४५४१ = सन् १४६५ ई०) में इस यन्त्र भाण्ड का निर्माण किया। लोक में मौसुल (मुसलिम) भाषा में तोप और लोक में काण्ड नाम से प्रसिद्ध हुआ।' (१·१.७७)

आकाशीय बिजली को वज्र कहते है। बिजली कडक द्वारा जितना तीव्र घोष होता है, वैसा ही तोप आदि के छोडने से होता था। उसकी तुलना वज्र से कर, उसका नाम ही वज्र रख दिया गया था।

● **नौका युद्ध**

समुद्र में ही नाविक युद्ध नहीं करते थे, समुद्र में ही केवल जहाजों युद्ध नहीं होता था, काश्मीर में भी नाविक सेना थी। उसका अधिपति नाविकाधिपति कहा जाता था। सैय्यद-काश्मीरियों के संघर्ष प्रसंग में श्रीवर वर्णन करता है—'देव नामक शाकुनिक ने जो कि नाविकाधिपति था, नौका युद्ध द्वारा उत्तम वीरों का विनाश किया।' (४.१७३)

राजा :

मुसलिम राजनीतिशास्त्र देवाधिराज एवं धर्म निगडित राज्य में विश्वास करता है। राज्य एवं धर्म में अन्तर नहीं मानता। दोनों को एक तुला के दो पलड़े समझता है। मुसलिम राजशास्त्र धर्म निरपेक्ष राज्य सिद्धान्त स्वीकार नहीं करता। कुछ सुल्तान एवं बादशाह हुए हैं। उन्होंने राज्य को धर्म से अलग रखने का प्रयास किया है। भारत में अलाउद्दीन खिलजी ने इस दिशा में चलने का सर्वप्रथम प्रयास किया था। शेरशाह सूरी विद्वान् के साथ ही साथ व्यावहारिक व्यक्ति था। उसने भी लौकिक राज्य के आधार पर कार्य करने का प्रयास किया था। अकबर ने लौकिक राज्य के आधार पर राज्य का ढाँचा खड़ा किया था। किन्तु यह सब सुल्तान मुसलिम सुल्तानों की लम्बी परम्परा में अपवाद मात्र हैं।

काश्मीर में प्रारम्भ के कुछ सुल्तान लौकिक राज्य सिद्धान्त का अनुसरण किये थे। उस समय काश्मीर की जनता हिन्दू बहुल थी। सिकन्दर बुतशिकन तथा अलीशाह के समय काश्मीर का मुसलिमीकरण हो गया। अतएव हिन्दुओं पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध जजिया, आदि लगाये गये थे। सिकन्दर के पुत्र एवं अलीशाह का कनिष्ठ भ्राता जैनुल आबदीन के समय धारा बदली। लौकिक राज्य की झलक दिखाई पड़ने लगी। जनता की रुचि रचनात्मक कार्य एवं ज्ञानार्जन करने की ओर हुई।

जोनराज ने जैनुल आबदीन को अवतार माना था। (जोन ९७३) श्रीवर जोनराज का शिष्य था। वह भी जैनुल आबदीन को देव का अंश मानता था—'जहाँ पर कामदेव शिवांश राजा को जीतने के लिये, राजसभा के ब्याज से अपना बहुत रूप बनाकर, भावासक्त हो गया था।' (१ ४ ५) श्रीवर सुल्तान को शिवांश मानता था। आगे चलकर सुल्तान ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का अंश मान लिया। 'गिरती हुई जल-धारा के शब्द ब्याज से, ब्रह्मा, अच्युतेश एवं शिव के अंशभूत राजा से कुशल प्रश्न किये। (१:५ ९७) वास्तव में विष्णु अवतार उस राजा ने अपने पद पराक्रम का जानने के लिए भक्तिपूर्वक तीन बार प्रदक्षिणा की।'

जहाँ पर भी कहीं उपमा देने का अवसर मिला है, श्रीवर ने देवी शक्तिधारी पुरुषों से जैनुल आबदीन की तुलना की है। वह जैनुल आबदीन को युधिष्ठिर के समान धर्मात्मा, सत्यवादी एवं न्यायी मानता था। (१:६ ११) इसी प्रकार श्रीवर ने जैनुल आबदीन की तुलना रघुनन्दन से की है। (१:७ १३५) जैनुल आबदीन को उसने राम तुल्य राजा तथा धर्मराज सदृश न्यायी चित्रित किया है। (१ १:१९, २२)

अन्य सुल्तान हैदर शाह, हसन शाह एवं मुहम्मद शाह को देवांश अथवा अवतार नहीं मानता। मुसलमानों द्वारा मानने इस मान्यता को श्रीवर दुहराता है कि काश्मीर का सुल्तान शिवांश है। उस पर पराक्रम से नहीं तपस्या से विजय प्राप्त की जा सकती है। (४:३३१–३३४)

कल्हण का आदर्श राजा अशोक, कनिष्क, मेघवाहन है, दिग्विजयी राजा ललितादित्य एवं जयापीड है। जोनराज का आदर्श राजा शिहाबुद्दीन तथा जैनुल आबदीन है। श्रीवर का आदर्श राजा जैनुल आबदीन है। कला, संगीत, नृत्य, गान की दृष्टि से उसने हसन शाह का आदर्श राजा माना है। किन्तु श्रीवर राजा पर अति विश्वास का विरोधी है, वह लिखता है—'विभव के कारण प्रसिद्ध, प्रभावशाली, राजा का प्रिय पात्र हूँ, आत्मनिष्ठ इस मान को त्याग दो, गन्धर्व नगर, कुसुम्भ राग, वेश्या रस, नृपति की स्थिरता की आशा कहाँ से हो सकती है?' (३·४०८)

राजा का कर्तव्य :

भाग्यवादी होते हुए भी, श्रीवर राजा के कर्त्तव्यों का वर्णन स्थान-स्थान पर किया है। राजा को गुणी,

दानी ज्ञानियो का आदर करना चाहिए। उसने जैनुल आबदीन की इन गुणो के कारण प्रशसा की है—कल्प वृक्ष उस राजा के समीप भृगों के समान दूर दूर से सुन्दर शिल्प रचना करने वाले कौन शिल्पी नही आये ? (१ ३ २७)

जैनुल आबदीन शाह सच नही था। अपने पुत्रों से जब वह दुखी था तो मन्त्रियो [redacted] राजा से पूछा—[redacted] देव। यदि यही निर्णय है तो क्यो इस महान कोश की रक्षा कर रहे है ? जैनुल आबदीन का व्यावहारिक उत्तर ललितादित्य के वसीयतनामा का स्मरण दिला देता है—मेरा वह हेतु सुनिए जिससे यह पूर्ण कोश धारण किये हूँ। मेरे मरने पर मेरा राज्य यदि कोई मेरा पुत्र प्राप्त करेगा तो मेरे सचय से तृप्त होकर प्रजा का धन त्याग देगा। मुझे यह प्रजा पुत्र से अधिक रक्षणीय प्रतीत होती है। अतएव उस सचय से उसकी भावी पीडा का हरण करूँगा। राजा पूर्ण होने पर विलास करता है। रिक्त होने पर प्रजा पीडन करता है। तृप्त सिंह गुहा मे रमता है। क्षुधार्त वन के जन्तु वर्ग को खाता है। मेरे सग्रह के उपकार से, भावी पीडा रहित जन उत्तरकाल के ज्ञाता मेरी गर्हणा (निन्दा) नहीं करेगे। पूर्ण राजगृह से अन्य उपकारी पूर्ण होये यदि धन समुद्र से जल न ले जाते तो भूमि पर क्या बरसात ? सर्वसविकर राजा की जो सामग्री होती है वह चिरकाल से उत्पन्न होने वाले केवल धन के द्वारा होती है। वृक्ष से फल पत्र पुष्प जो कुछ निकलता है वह सब पृथ्वी के अन्दर रहने वाला रस गुण ही है।' (१ ७ ११९–१२६)

जैनुल आबदीन प्रजा की मनोवृत्ति एव आन्तरिक स्थिति जानने के लिए गुप्तचर रखता था—श्रीवर लिखता है—अपने एव दूसरे के वृत्तान्त का नित्य अन्वेषणकर्ता, उस राजा को गुप्तचरों द्वारा प्रजाओं का केवल स्वप्न वृत्तान्त ही अविदित था। (१ १ ३६)

राजा के विषय मे श्रीवर लिखता है—कोई सुकृति नृपति आत्मा सदृश होता है। उसे प्रजा उसी प्रकार प्रिय होती जिस प्रकार आत्मा को प्रकृति। उसी के सुख एव वृद्धि से सुखी एव उसी के दुख से दुखी होता है। (१ ३ ३२) जैनुल आबदीन ने पुत्रो के प्रजापीडन के कारण उनके त्याग का निश्चय किया था—सर्पों के समान मेरे पुत्रों ने राज्याग को डस लिया है। उनका त्याग ही एकमात्र उचित उपाय है। अन्यथा मुझे सुख नही। (१ ७ १४५)

जैनुल आबदीन का पुत्र हैदर शाह भी गुप्तचर रखता था। उनके द्वारा वह जनता की मनोवृत्ति जानने का प्रयास करता था। (२ २४) पुत्रवत प्रजा पालन राजा का कर्त्तव्य है।

हैदर शाह के राज्य की अधोवस्था देखकर श्रीवर लिखता है—इस देश मे पहले राजाओ द्वारा पुत्रवत रक्षित प्रजाओ को जिसने अधिकार प्राप्त कर कुकर्मों द्वारा अति दुखित कर दिया। (२ ४५) राजा का कर्त्तव्य प्रजा का पुत्रवत पालन करना है। हिन्दू और मुसलिम दोनो नीतियाँ इसे मानती हैं।

● राजशास्त्र

श्रीवर को राजशास्त्र का ज्ञान था। उसने अर्थशास्त्र एव स्मृतियों का अध्ययन किया था। उसने जिन प्राविधिक एव पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग किया है उनसे उसके ज्ञान एव गम्भीरत्व का पता चलता है। राज्य के सप्ताग सिद्धान्त की तुलना वह शरीर के सप्त धातु से कर, अपने पाण्डित्य का परिचय दिया है। उसका राज्यसिद्धान्त यहाँ पर शरीर राज्य सिद्धान्त से मिलता है—क्यों कि सप्त धातु सम्बद्ध, शरीर सदृश सप्ताग ऊर्जित राज को त्रिदोष के समान मेरे इन तीनों पुत्रों ने सन्दूषित कर दिया है। (१ ७ ११०) इसी समय दोष के समान अत्युग्र तीनो पुत्रो ने धातु सदृश, सप्त प्रकृति युक्त, देश को दूषित कर दिया।' (१ ७ १८५)

'समुद्र में सीमित सप्तांगानु या अंग से युक्त शक्ति समृद्धि, सुभग, (राज्य या शरीर) यद्यपि सर्व कार्य में सक्षम रहता है, किन्तु जहाँपर वातादि दोष सदृश परस्पर द्वेषी मन्त्री होते हैं, वह राज्य, शरीर के समान शीघ्र गल जाता है (२ २१६) सप्तांग सुभग यह राज्य मेरा है, यह जिसने कहा था, अन्तस्थिति में उसका अपना शरीर भी उसका नहीं हुआ। (३ ५६२) उसकी उद्वेजित कन्या सदृश, सप्तांग सहित राज्य सम्पत्ति, रिपु के पराभव करने न लिये ही मानों, उसके घर चली आयी थी।' (४ १४) महात्मा गान्धी ने राम राज्य की कल्पना की थी। श्रीवर ने जैनुल आबदीन के राज्य की तुलना रामराज से की है। (१.१.१९)

दूत :

प्राचीन काल के समान काश्मीर सुल्तानों के समय भी दूत भेजने की परम्परा थी। मुख्यतः युद्ध रोकने अथवा सन्धि करने या समझाने के लिये दूत भेजे जाते थे। दूतों का वर्णन जोनराज ने किया है। काश्मीर में प्रायः ब्राह्मण ही दूत कार्य करते थे। (जोन ४७०) यदि दूत विरोधी पक्ष द्वारा बन्दी बना लिया जाता अथवा उसे शारीरिक कष्ट दिया जाता था, तो यह राज्य के प्रति तथा राजा के प्रति किया गया अपमान माना जाता था। इसी प्रश्न को लेकर युद्ध भी हो जाता था। सुल्तान कुतुबुद्दीन के दूत के साथ बुरा व्यवहार किया गया, तो सुल्तान क्रोधित होकर अपराधियों को दण्ड देने पर तत्पर हो गया। (जोन ४७१) जैनुल आबदीन के दूत के साथ, उसके पुत्र हाजी खां के सेनानायकों ने दुर्व्यवहार किया तो, हाजी खां स्वयं लज्जित हो गया। (१ १ १२७—१२८) जैनुल आबदीन ने ब्राह्मण दूत की दुरवस्था देखी, तो युद्ध के लिये तुरन्त सन्नद्ध हो गया। (१ १ १४१) अन्य मुल्तानों के समय भी दूत सन्देह वाहक रूप सन्धि प्रस्ताव लेकर जाते थे। मान्यता थी। दूत के साथ सज्जनता का व्यवहार और उसका पद गौरव राष्ट्र का प्रतिनिधित्व रूप माना जाय। सुल्तान जैनुल आबदीन अपने विद्रोही पुत्र आदम खां के पास भी राजदूत भेजा था। (१;३ ७८)

हसन शाह सुल्तान होने पर अपने बाल काल के सेवक मल्लिक ताज भट्ट को दूत का अधिकार दिया। ताज भट्ट समग्र राज्य में विग्रह एवं निग्रह विषयों में राजा की जिह्वा सदृश हो गया था। (३ २७, २८)

देश के बाहर दूत भेजने तथा रखने की प्रथा थी। श्रीवर एक ऐसे दूत का वर्णन करता है, जो राज्य में ही रहता था। श्रीवर ने उस राजा की जिह्वा लिखा है। इससे प्रकट होता है कि सुल्तानों के समय इस प्रकार के दूत की भी नियुक्ति होती थी, जो राजा का विश्वास पात्र होता था। राजा के अन्तःकरण की बातें जानता था। उसका वचन राजा का वचन समझा जाता था। वह दूत के समान राजा का प्रतिनिधि देश में होता था। उसे फारसी इतिहासकार 'वकील' भी कहते हैं।

देश भक्ति

श्रीवर देश भक्त था। काश्मीर की शोभा का कल्हण ने वर्णन किया था। उसने सगौरव काश्मीर का वर्णन किया है। काश्मीर उसके लिये जन्म भूमि के साथ पथ्य भूमि थी। उसे अपने धर्म, संस्कृति एवं परम्परा का अभिमान था। दिग्विजयों के वर्णन प्रसंग में उसकी देश भक्ति मुखरित हो उठती है। काश्मीर के लिये उसकी श्रद्धा एवं भक्ति पूर्ण गरिमा के साथ प्रकट होती है।

जोनराज में देश भक्ति की उतनी भावना नहीं पाते, जितना कल्हण की राजतरंगिणी में मिलता है। उसकी देश भक्ति तत्कालीन परिस्थितियों के कारण दबी थी।

श्रीवर में देश भक्ति मुखरित हो उठी है। काश्मीर में काश्मीरी और विदेशी सैयिदों के दो दल हो गये थे। श्रीवर काश्मीरियों की खुल कर प्रशंसा करता है। काश्मीर के लिये त्याग की भावना लोगों में

जागृत करता है। काश्मीरियो को उठाता है। उसका इन स्थानो का वर्णन किसी देश भक्त के व्याख्यान का रूप ले लेता है।

श्रीवर सैयिदो तथा विदेशी तुरुष्को के विरुद्ध था, जिन्हें काश्मीर के आचार, विचार एव परम्परा में कोई आस्था नही थी। वह अपने धर्म के लिए गर्व करता था। उसे हिन्दू होने का गर्व था। वह मुसलिम दर्शन की बहुत बातो का विरोधी था। उसने इसकी चिन्ता मुहूर्त मात्र के लिए भी नही की कि वह मुसलिम शासित देश में निवास कर रहा था। सुल्तानो का राज कवि था। सुल्तान का गुरु था। जहाँ भी कही अवसर आया है, अपनी देश भक्ति का परिचय दिया है, जिसका अभाव जोनराज एव शुक में खटकता है।

कर

सुल्तान जैनुल आबदीन ने जैन गिर क्षेत्र में कर का अनुदान सप्तांश रखा था। उसने आदेशों को ताम्र पत्र पर अंकित कराकर सर्वसाधारण की जानकारी के लिए टँगवा दिया—'यहाँ पर मैंने धन से भूमि को सम्पन्न बनाकर कृषि पूर्ण कर दिया है। आप लोग सातवाँ अंश ग्रहण करें।' (१ १ ३७) फारसी लेखों से पता चलता है कि कुछ स्थानो पर खराज चार म से एक और कुछ स्थानो मे सात मे से एक भाग लिया जाता था। काश्मीर से बाहर जाने वाले लोगो को शुल्क देना पडता था। यह प्रथा प्राचीन थी। परन्तु जैनुल आबदीन ने शुल्क उठा दिया था। इसका आभास मिलता है। (१ ५ २२)

सुधार

अपराधियो के सुधार का प्रयास किया गया। जैनुल आबदीन ने चोर, चाण्डाल आततायियो के पैरो में बेडी डलवा कर, उनसे मिट्टी खोदने का कार्य कराया था। आज कल भी कारागारो में बन्दियो के एक पैर में लोहे का कडा डालकर, जेल से बाहर कृषि, खेत जोतने-बोने, पानी निकालने तथा निर्माण कार्य कराने पर लगाते हैं। 'उसने निवासियो को कृषि हेतु आदेश देकर चोर, चण्डाल, आदि के पैरों में शृखला बद्ध कराकर, पहरेदारो के नियन्त्रण में कार्य करने तथा उनसे बलात् मिट्टी का कार्य कराया।' (१ १ ३८)

सुल्तान जैनुल आबदीन ने राज्यादेशो को ताम्र पत्रों पर खुदवा कर, स्थान स्थान पर लगवा दिया था। गृहस्थो से कोई राजकर्मचारी एक कौडी भी अनियमित रूप से नही ले सकता था। (१ १:३७) सुल्तान के जिन न्यायाधीशो ने घूस लिया था, उनसे घूस दाता को धन वापस दिला दिया।

बेकार अर्थात् जीविका त्रस्त लोगो के लिये, जो चोरी आदि कर, अपनी जीविका चलाते थे, उनके लिए, वृत्ति प्रदान कर, उन्हें काम पर लगाया था। (१:१ ३९) कोई भी व्यक्ति राज्य में बेकार नही था। परिणाम हुआ कि लोग अपने कामो में लग गये। समाज में दुराचार, अनाचार स्वत दूर हो गया।

यदि एक राज्य में कोई जाति या वर्ग दुष्टता करता था, तो उन्हें जेलों में बन्द करने की अपेक्षा, उनकी भूमि हर कर, दूसरे स्थान पर, उन्हे भूमि देकर, आबाद किया जाता था। क्रमराज्य मे स्थित चक्र (चक) आदि दुष्टो की भूमि सुल्तान ने अपहृत कर, उन्हें वृत्ति प्रदान कर, मडव राज्य में रखा। (१ १.४०)

करुणा के साथ ही साथ सुल्तान में राजा का उग्र रूप भी था। उसकी तुलना धर्मराज (यम) से करते हुए श्रीवर लिखता है—'अपराध के अनुसार पापी शत्रुओ ने नरक यातनायें प्राप्त की। (१ १ २२) सुल्तान ताना शाह नही था। न्यायालय की व्यवस्था की थी। अपराध के अनुसार दण्ड दिया जाता था।

सुल्तान कठोर दण्ड का पक्षपाती नही था। सुधार वादी था। सरल दण्ड देकर, मात्र आततायी प्रवृत्तियों का परिवर्तित कर देना चाहता था। श्रीवर लिखता है—'राजा द्वारा नीति से ही तस्कर उपद्रव

शान्त कर दिये जाने पर, पथिक गृह के समान वन में भी सुख पूर्वक शयन करते थे। (१:१:४१) हसन शाह के काल में चोरी, लूट के साथ घर लूटने का दण्ड ही समाप्त हो गया था। (३ २०९)

दुर्भिक्ष काल में भ्रष्टाचारी वणिकों ने लोगो की अमूल्य सम्पत्ति लेकर, बहुत महगा धान बेचा था। सामान्य समय आने हा सुल्तान ने वणिको ■ उचित मूल्य दिलाकर, शेष धन वापस दिला दिया (१:२:३२)

इसी काल में सुल्तान न भाजपत्र पर लिखे गये ऋणी एव ऋणदाता की व्यवस्था को समाप्त कर दिया। (१ २.३४) दुर्भिक्ष का लाभ उठाकर, धनिकों न गरीबो से ऋण पत्र लिखा लिया था। आज भी दिहातो, में कुछ धन देकर ज्यादा रुपयो का ऋण पत्र लिखाते हैं। सादे कागज पर दस्तखत कराकर रख लिया जाता है। सुल्तान ने भाजपत्र पर इस प्रकार के लेखों की मान्यता समाप्त कर दी। क्योकि वे गरीब जनता एव प्राकृतिक कोप का लाभ उठाकर लिखाये गये थे।

● अभिभावक :

सुल्तान राजपुत्रो को किसी सामन्त, मन्त्री, किंवा किसी कुलीन वर्ग के व्यक्ति अभिभावकत्व में रख देते थे। सुल्तान जैनुल आबदीन अपने दो पुत्रो का अभिभावक दो ठाकुरों हस्सन एव हुस्सन को बनाया था। प्रत्येक पुत्र एक-एक ठाकुर के अभिभावकत्व में रहता था। (१ १:५९)

हसन शाह ने अपने पुत्र मुहम्मद, जो कालान्तर में सुल्तान मुहम्मद हुआ था, ताजी भट्ट के अभिभावकत्व में रख दिया था। (३:२२५) अपने दूसरे पुत्र होस्सन का मलिक नौरोज को दिया था। (३:३२७) युसुफ खा जोन राजानक के अभिभावकत्व में था।

● उत्सव :

सुल्तान जैनुल आबदीन वितस्ता जन्मोत्सव उत्साह से मनाता था। दीप मालिका होती थी। गाना, बजाना, नृत्य होता था। सुल्तान सजो नाव पर वितस्ता भ्रमण करता था। गीतो से तट गूंज उठता था। वितस्ता में दीप दान किया जाता था। तटो पर दीप मालिका सजती थी। काश्मीरी ललनायें वितस्ता पुलिन में पूजा करने आती थी।

समस्त रात्रि नृत्य, गीत एव संगीत में सुल्तान जैनुल आबदीन अपना जन्मोत्सव मनाता था। उस दिन देश विदेश से लोग आते थे। उन्हें उपहार एव पदवियाँ दी जाती थी। राजा के जन्म दिवस के उत्सव पर, राजपुरीय जयसिंह का राज तिलक किया गया था। (१ ३ ४०) इसी प्रकार चैत्रोत्सव मनाया जाता था। (१:४.२)

हैदर शाह का राज्य ग्रहणोत्सव प्रति वर्ष मनाया जाता था। (२ ४) सुल्तान लोग पुत्रो का जन्मोत्सव मनाते थे। हसन शाह ने लौकिक ४५५४ = सन् १४७८ ई० में पुत्र मुहम्मद का जन्मोत्सव धूमधाम से मनाया था। उत्सव से नृत्य, गान एव नाटक का आयोजन होता था। सामन्त, सचिव आदि को उपहार दिया जाता था। जनता भी मुक्त हस्त, उत्सव में भाग लेने वाले कलाकारो को दान देती थी। (३:२२७-२२९)

उच्च अधिकारी भी अपना जन्मोत्सव धूमधाम से मनाते थे। (३ ४०६) हिन्दू नाग यात्रा, चैत्रोत्सव तथा मुसलमान ईद उत्सव (३:२८६) मर्जोत्सव (३ ५३३) मनाते थे।

● वीरगति :

भारतीय मान्यता है। युद्ध क्षेत्र में वीरगति प्राप्त व्यक्ति स्वर्ग प्राप्त करता है। मुसलमान विश्वास करते हैं।

धर्म युद्ध करने वाले को बिहिश्त मिलता है। मुजाहिदों को जन्नत मिलता है। काश्मीर कीमु सलिम जनता इसमें विश्वास करती थी। जन्नत में वीरों को सुन्दर स्त्रियाँ मिलती हैं। उन्हें वहाँ ऐश्वर्य मिलता है। श्रीवर इस मान्यता का वर्णन करता है— उस रण प्रागण में अहमद प्रतीहार प्रमुख वीर लोग शौर्य प्रदर्शित करते हुए स्वर्गीय स्त्रियो के सुख भागी बने।' (४ १७८) किसी वीर सुन्दर युवक का मृत्यु पर काश्मीरी अगनायें शोक करता है— मृत उसके रूप का स्मरण कर पुर की अंगनायें कहती हैं ऐसा सुन्दर रूप हम कही नही देखती है। यह सुन्दर रूप मानुष स्त्रियो के योग्य नही, इसलिये देवियाँ स्वग ले जा रही हैं क्या, जो यहाँ मृत पडा है ? (४ १७९, १८०) वहाँ पर सुभटो के साथ युद्ध करते हुए कुछ संधिद भट पाठ छूटने के कारण स्वर्ग स्त्री सुख के भागी बने। (४ ५९१)

●

दर्शन

श्रीवर ने जैनुल आबदीन को दर्शन सुनाते हुए अपना विचार प्रकट किया है— आकाश वर्ण सदृश जाग्रत सज्जन व्यक्ति का, आकाश वर्ण सदृश उस भ्रम का, पुन स्मरण तथा विस्मरण कर जाना श्रेष्ठ है। ससार को दीघ कालिक स्वप्न सदृश अथवा दीघकाल का प्रिय दर्शन अथवा दीघकालिक मनो राज्य जानिये। यदि जन्म, जरा, मरण न हो, अथवा यदि इष्ट, वियोग का भय न हो, यदि ये सब अनित्य न हो तो इस जन्म में किसको रति नही होती ? जैसे जैसे निवृत्त होता है वैसे-वैसे मुक्त होता है। चारो ओर से निवृत्त हो जान से अणु मात्र दु ख का अनुभव नही करता।' (१:७:१३४ १३७)

सुल्तान के समय दर्शन का अध्ययन अध्यापन होता था। श्रीवर लिखता है—'षड् दर्शनो की क्रियायें जिसके वृत्त को उसी प्रकार अनुरंजित की जिस प्रकार सुमनो में आह्लाद दायिनी (छ) ऋतुएँ नन्दन को।' (१ १·२८)

●

सतीसर

श्रीवर के समय भी काश्मीर सतीसर नाम से ख्यात था। (१ १ ८५) श्रीवर देश का नाम काश्मीर न देकर सती देश देता है— निश्चय ही काली धारा के व्याज से भगवती काली, सती देश के हित इच्छा से उनका भ्रमण कर लिया।' (४ २१८)

फतह खान काश्मीर पर राज्य लेने की इच्छा से आक्रमण किया। सुल्तान मुहम्मद शाँ को हटाकर स्वय सुल्तान बनना चाहा। मार्गेश इब्राहीम बालक सुल्तान मुहम्मद शाह का अभिभावक तथा मन्त्री था। फतेह खान को सन्देश भेजा था। वह एतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। तत्कालीन काश्मीरी मुसलमान काश्मीर की परम्परा तथा उसके इतिहास में विश्वास करते थे—'भो! भो! मण्डल रक्षक, नृप सम्पत्तियो के भोक्ता एव सर्वथा हित कर्त्ता गण, पुराणोक्त, इस पर विचार करो—काश्मीर भूमि पार्वती है, वहाँ का राजा शिवा-शज है कल्याणोच्छुक विद्वानो को, दुष्ट होने पर भी उसकी उपेक्षा या अपमान नही करनी चाहिए, इस देश में तपस्या द्वारा राज्य प्राप्त होता है, न कि पराक्रमो से, अन्यथा आदम खान आदि लागो न अपने क्रमागत (राज्य) को क्यो नही प्राप्त किया ? चिरकाल तक अनौचित्य फलित नही होता।' (४·४३२·४३४)

●

दुर्भिक्ष

लौकिक ४५३६ = सन १४६० ई० में भयकर दुर्भिक्ष पडा। 'इस वर्ष चैत्र मास में अकस्मात आकाश से धूल वृष्टि हुई। दुर्भिक्ष काल का सन्देश वाहक था। छत्तीसवाँ वर्ष सबके लिए भयकारी होता है। क्योंकि इसी

वर्ष में यदुवंश का विनाश हुआ था।' ज्योतिषियों ने धूल वर्षा का फल दुर्भिक्ष बताया था। मार्गशीर्ष मास में भयंकर हिमपात हुआ। समस्त काश्मीर ने मानो शोक प्रतीक श्वेत वस्त्र धारण कर ली थी।

अकाल भयावह था। चोर घरों में स्वर्ण इत्यादि त्यागकर अन्न लेते थे। भीख माँगने वालों का झुण्ड घूमता था। शाक, मूल एवं फल का आहार कर, जनता जैसे प्रतिदिन व्रत करती थी। थोड़ा शाक तथा चावल पका कर, कुछ लोगों ने जीवन धारण किया।' चावल महँगा था। घी, नमक, तेल सस्ता हो गया था। काश्मीर धनधान्य पूर्ण देश था। यह बात केवल कहानी मात्र शेष रह गयी थी।

पूर्वकाल में तीन सौ दीनार में एक खारीधान मिलता था। दुर्भिक्ष समय में पन्द्रह सौ दीनार में एक खारीधान प्राप्त नहीं होता था। सुल्तान ने राज कोष द्वारा किसी प्रकार धान मँगाकर, प्रजा का पालन किया। श्रीवर इसमें उपमा देता है—'राजाओं के उपद्रवकाल में चोर, और अन्धकार में अभिसारिकायें तथा दुर्भिक्ष में धान्य विक्रेता लोग सन्तुष्ट होते हैं। (१.२.३१) जिन भ्रष्टाचारी वणिकों ने अधिक मूल्य पर धान बेचा था। सामान्य स्थिति लौटने पर सुल्तान ने उनसे धन पहले मूल्य पर वापस दिला दिया। (१.२.३२) दुर्भिक्ष काल में लोग अखरोट खाते थे। राजा ने उन्हें काम देने के लिए वृक्षों से तेल निकालने का आदेश दिया। (१.२.३३) इसी प्रकार ऋणों एवं ऋण दाता की व्यवस्था सुल्तान ने समाप्त कर दिया। (१.२.३४) धनिकों ने गरीबों की गरीबी का लाभ उठाकर, थोड़ा धन देकर, अधिक ऋण पत्र लिखा लिया था। उन्हें अवैधानिक करार दे दिया।

इस दुर्भिक्ष काल में काश्मीर मण्डल में चौसठ कलायें, शिल्प विद्या, सौभाग्य मद कुछ निष्प्रयोजन हो गया था। (१.२.३५) श्रीवर कितना सुन्दर लिखता है—'पद, वाक्य, तर्क, नवीन काव्य, कथा, गीत, वाद्य, रस नृत्य, कलायें तथा सुरभि प्रथम मदन वनितायें, भूखे को सुख नहीं देती।' (१.२.३६)

श्रीवर ने प्रथम तरंग के द्वितीय सर्ग का नाम दुर्भिक्ष वर्णन रखा है। प्रथम तरंग के सातवें सर्ग में श्रीवर ने काश्मीर में एक और दुर्भिक्ष का वर्णन किया है। अनावृष्टि के कारण काश्मीर तथा बाहरी देशों में घोर दुर्भिक्ष पड़ा। दूसरे देशों से क्षुधा पीड़ित दलों का काश्मीर में आगमन होने लगा। सुल्तान की जिज्ञासा पर वे आगन्तुक बोले—'हे, राजन्! अनेक देशों में वृष्टि के अभाव से चारों ओर से सबका अन्तकारी, काल सदृश दुष्काल उपस्थित हुआ है। (१.७.२१) भूख से पीड़ित कुत्ते आदि शून्य गृह स्थित, शव समूहों को निःशेष कर, एक दूसरे का मांस खाने लगे हैं। (१.७.२३) हे! राजन्! स्पर्श एवं जूठन के का जिनको प्रायश्चित करते देखा गया वे द्विजश्रेष्ठ भी सर्वभक्षी बन गये। (१.७.२४) सदय पदार्थ को देखने में असक्षम होकर विप्र स्त्रियाँ अशिव पका अन्न खाकर, अपने तथा अन्य को प्राणों रहित कर दी। (१.७.२५) ग्राम एवं पुर मानव शून्य हो गये। (१.७.२६) पृथ्वी पर क्षुधार्त उस भुखमरी (पट्ट) पन, पत्नी के प्रति प्रेम, पुत्र के प्रति स्नेह, पिता के प्रति दाक्षिण्य, भाव भूल गये। (१.७.२७)

'सुरत्राण का सुल्तान अकाल के कारण शत्रु भूमि में चला गया था। कोटि सैन्य युक्त उस अबूसैद को रण मध्य इराक के सुल्तान ने मार डाला। (१.७.२९) प्राण रक्षा हेतु उस युद्ध में हुए असंख्य तुरुष्कों एवं राजाओं का क्षय हुआ (१.७.३०) एक राजा दूसरे से अन्न के लिए युद्ध करने लगे। (१.७.३१) सुल्तान जैनुल आबदीन ने आगन्तुक इन क्षुधा पीड़ितों को रक्षा किया। (१.७.३३)

जल प्लावन :

काश्मीर के तीन घोर प्राकृतिक शत्रु थे—तुषारपात, जल प्लावन एवं अग्नि दाह। तीनों ही के कारण काश्मीर की समृद्धि अकस्मात् अवरुद्ध हो जाती थी। तुषारपात एवं जल प्लावन प्रकृति की क्रूर दृष्टि एवं

अग्निदाह कास्मीर में बने काष्ट के भवनों तथा आततायियों के कारण होता था। यदि एक स्थान पर अग्नि लगती थी, तो मुहल्ला साफ हो जाता था। अग्नि पर नियन्त्रण पाना कठिन होता था।

लौकिक : ४५३६ = सन् १४६० ई० में दुर्भिक्ष हुआ था। दो वर्ष बीतते-बीतते लौकिक ४५३८— सन् १४६२ ई० में वृष्टि के साथ आकाश से धूल वर्षा हुई। (१:३.३) भयंकर वर्षा होने लगी। पादप जैसे अश्रु विन्दु गिराने लगे। वितस्ता, लेदरी, सिन्धु, क्षिप्तिका ने अपनी उग्र बाढ से, तट भूमि डुबा दिया। जल प्रवाह कुपथगामी हो गया। वृक्षादि जड से उखडने लगे। पशु, पक्षी, प्राणी, गृह, धान्यादि सबका हरण जल प्लावन करने लगा।

विशोका नदी का जल विजयेश्वर में प्रवेश कर गया। घर डूब गये। विशोका ने अपना नाम गुण भूलकर चारो ओर शोक उत्पन्न कर दिया। वितस्ता पर सुल्तान जैनुल आबदीन द्वारा जैन कदल में निर्मित गृह पंक्ति, जलमग्न एवं भग्न हो गई। श्रीनगर में जल आ गया। उलर लेक (महापद्मसर) का जल दुर्गपुर के अन्दर प्रवेश कर गया। उलर लेक-जैसे ही, उसके समीप बाढ के कारण दूसरे सरोवर होने लगें थे। स्थानीय मकान जल में डूब गये। वितस्ता का प्रवाह उलट गया। कृषि जल में डूब गई। राजा नाव पर चढ़कर, बाढ का दृश्य देखने तथा प्रजा को आश्वासन देने के लिए भ्रमण करने लगा। जल से आबादी की रक्षा करने के लिए, सुल्तान ने जयापीडपुर के समीप, जैन तिलक नगर की स्थापना की।

● दुराचार :

समाज का जब पतन होता है, तो दुराचार फैलता है। समाज का पतन उसी समय होता है, जब जनता की बुराई के प्रति प्रतिरोधात्मक शक्ति समाप्त हो जाती है। जैनुल आबदीन अस्वस्थ रहने लगा। दुर्बल हो गया। उसके पुत्र उच्छृङ्खल हो गये। सुल्तान राज कार्य में उदासीन हो गया। ज्येष्ठ पुत्र आदम खाँ राजकीय गौरव एवं मर्यादाएँ समाप्त कर, व्यसनी हो गया। श्रीवर लिखता है—'अनिष्ट सदृश वह पापी जहाँ-जहाँ पर बैठा, वहाँ पीडित ग्रामीणों के आक्रन्दन से दिशाएँ मुखरित हो उठी। उपग्रह सदृश अति उग्र उसने प्रसाद एवं कठोरतापूर्वक, दान देकर दृढ की गई पृथ्वी को पद-पद पर अपहृत कर लिया। लोभ ग्रस्त उसने कहीं रीति से, कहीं भीति से, कहीं नीति से, विलोभित करता हुआ, बलात्कार पूर्वक, कितने धनों का अपहरण नहीं किया ? लोभ वश वह सामान्यजनों के समान लवन्यों के घर मित्रता का बहाना बनाते हुए जाकर उन लवन्यों को धन से ठग लिया। युक्ति पूर्वक लाई गई चार कुल भयभीत स्त्रियों को प्रताडित करते हुए, उसके सेवक समूह ने उसके कहने पर, ग्रामीणों को दण्डित किया। उस समय अति उग्र वह विनिग्रह स्थानों पर सावधान मति होकर तार्किक की तरह राष्ट्रियों के लिए दुर्जय हो गया। जिसके गृह में सुन्दर स्त्री, बहन, बेटी आदि थी, बलात् प्रवेश करके, उसके निर्लज्ज सेवकों ने भोग किया। (१.३६६-७३) *सुल्तान* अपने पुत्र तथा राज सेवकों का व्यवहार सुनकर, इतना दुःखी हुआ कि वह राजप्रासाद से लज्जा के कारण बाहर नहीं निकल सका।'

● डल लेक :

सर्व प्रथम श्रीवर ने 'डल' शब्द का प्रयोग किया है। एक स्थान पर केवल 'डल' (१·५:३२) और दूसरे स्थान पर 'डल सर' शब्दों का उल्लेख मिलता है। (४ ११८) प्रथम स्थान पर 'डल' का वर्णन करते समय, उसे अगाध सरोवर लिखा है। उसके पूर्व इसका नाम सुरेश्वरी सर था। ज्येष्ठ रुद्र समीपस्थ, सर से भी इसे अभिहित किया गया है। एक मत है कि 'डल' तिब्बती शब्द है। अर्थ निस्तब्धता अथवा खामोशी होता है।

श्रीवर डल के तत्कालीन रूप का वर्णन करता है। श्लोक (१ ५ ३२) में पुराना नाम 'सुरेश्वरी सर' लिखता है। जिससे इसका परिचय मिल जाता है। निश्चय हो जाता है। सुरेश्वरी सर का नाम ही डल सरोवर है।—'राजधानी तक वहाँ सुरेश्वरी का सरोवर है। उसमें निर्मलाकाश से चन्द्रमा सदृश नौकारूढ़ होकर, नित्य विचरण करता था। जिसमें अरत्रि (डाडा—चप्पा) रूप पत्र वाले, उड़ते हुए, पट से सुन्दर, शाकुनिकों से अन्वित, राजा के पोत पक्षिशावक सदृश, शोभित हो रहे थे। जहाँ पर त्रिपुरेश्वर से आयी, तिलप्रस्था नदी, मानो लंका को देखने के लिये उत्सुक होकर सुटक की ओर जाती है। छ कोश तक विस्तृत, श्री पर्वत भी, शेष स्नान के फल की प्राप्ति की इच्छा से, अपने संगम के व्याज से, मानो रात दिन स्नान करता है। जहाँ जल में प्रतिबिम्बित द्रुम शैवाल की तरह, पर्वत कच्छप की तरह, एवं नगरियाँ नाग लोक की तरह, लगती थी। लोग देखते थे कि चलते तृण एवं भूमि के नालि पुंज मानो कमलों की सुगन्धि प्राप्त करने के लिये आनत हो रहे हैं। युगल लंका (रूप लंक-सोन लंक) देखने के कारण अपने दो उदय भ्रम से, सूर्य मानों प्रतिवर्ष दो अयन करते हुए आते हैं। जिसके तट पर, तीर्थ पवित्र शोभित, मुक्ति एवं विमुक्ति प्रद सुरेश्वरी क्षेत्र वाराणसी से भी अधिक शोभित होता है। विहारों एवं अग्रहारों से सुकृत, कर्मठ मठों से श्रम निवारक, आश्रमों तथा राजनिवासों से स्वर्ग बना दिया था।' (१ ५ ३३—४१) सुल्तान ने सिद्धपुरी नामक प्रसिद्ध राजभवन का वहाँ निर्माण कराया था। (१ ५ ४३)

श्रीवर ने डल में तैरते खेतों का भी उल्लेख किया है। इससे प्रकट होता है कि पन्द्रहवीं शताब्दी के पूर्व भी डल में तैरते खेत थे। मैंने डल में इन खेतों को देखा है। श्रीवर का वर्णन आज भी सत्य है। तैरता खेत घास, फूस, लकड़ी आदि एकत्रित कर बनाया जाता है। घास फूस पर मिट्टी रख दी जाती है। उसी मिट्टी पर पौधे लगते हैं। खेतों को जल में खींचकर कहीं भी ले जाया जा सकता है। गत शताब्दी में तैरते खेतों की चोरी भी होती थी। श्रीवर लिखता है—'सब प्रकार के तृणों द्वारा प्रवाह का निर्धारण करने से उत्पन्न, सञ्चरणशील भूमि को राजा ने अपनी बुद्धि से उर्वरा एवं फलवती बनाया था। एक स्थान पर योगियों के पात्र पूजा हेतु जैन दाटिका नामक अन्नसत्र भोगों के कारण विस्मयावह था।' (१ ५ ४५,४६)

डल लेक समीपस्थ भूमि पर उस काल में शाली की खेती होती थी। आज भी होती है। (१:५ ५०) डल के तट गोपाद्रि गिरि के पश्चिमी छोर दुर्गा-गलिका से पहडूदवन (हरवान) तक डल के दक्षिणी तथा पूर्वीय तट पर पर्वतमाला चली गयी है। डल तथा पर्वत के मध्य संकीर्ण उपजाऊ समथल भूमि है। वहाँ पर मृग घूमते थे। उनके मृगया की ध्वनि सुनायी पड़ती थी। (१ ५।५१) डल के समीप ही वितस्ता में मारी संगम है। यहीं मृतकों का दाह संस्कार उस समय होता था। (१ ५ ५६) संगम पर हिन्दू नारियाँ सती होती थी। (१ ५ ६१) सुल्तान ने संगम पर एक विस्तृत विहार का निर्माण पुरवासियों की सुविधा के लिये कराया था। (१ ५ ६२) श्रीनगर में डल का तट सांस्कृतिक एवं सामाजिक जीवन का केन्द्र था। यहाँ पर सुल्तान ने छात्रशालायें बनवायी, जिनसे तर्क एवं व्याकरण का शब्द सुना जाता था। (१ ५.६५)

तीर्थयात्रा

सुल्तान जैनुल आबदीन पुराण सुनता था। एक समय उसने आदि पुराण में नौबन्धन तीर्थ यात्रा का वर्णन सुना। तीर्थ यात्रा के लिए उत्सुक हो गया। सुल्तान लौकिक ४५३९ = सन् १४६३ ई० पितृपक्ष के अन्तिम दिन यात्रा देखने की इच्छावश विजयेश्वर गया। (१ ५ ८८-८९) वहाँ रंग मण्डप देखकर, सेना सहित बान्दरपाल आदि राजा प्रसन्न हो गये। (१:५ ९१) अमावस्या के दिन वहाँ झुण्ड की झुण्ड महिलायें आयीं। (१.५:९३)

सुल्तान दोनो पुत्र हाजी खाँ तथा बहराम खाँ के साथ विजयेश्वर से प्रस्थान कर, तीन दिनों की यात्रा पश्चात् क्रमसर पहुँचा। (१ ५ ९५-९६) उसने धीवरो द्वारा चालित नौका पर श्रीवर तथा सिंह भट्ट को लेकर सरोवर (१ ५ ९९) तटपर, नौका बाँधकर, आगम से सिद्ध नौ बन्धन गिर का साक्षात्कार किया। (१ ५:१०५) सुल्तान कुमार सर तक पहुचा। (१ ५ १०६) नौ बन्धन की तीर्थ यात्रा समाप्त कर, श्रीनगर लौट आया। (१ ५ १०८) जोनराज ने सुल्तान जैनुल आबदीन के शारदी, विजयेश्वर, बारहमूला तीर्थ स्थानो की यात्रा का विस्तृत विवरण लिखा है।

मूल्यांकन .

श्रीवर शाहमीर वश के सुल्तानो का स्वय मूल्याकन करता है। वह आज भी सत्य है—'शैसदीन (शाहमीर) नयज्ञ (नीतिज्ञ), अलाभदीन (अलाउद्दीन) मन्त्री, शाहाबुद्दीन (सिहाबुद्दीन) विवेचक था। (३ २६४) श्री सैकन्धर (सिकन्दर बुत शिकन) यवन धर्म प्रेमी और अलीशाह दाता हुआ। (३ २६५) श्रीमान् जैनुल आबदीन भूपति सर्वशास्त्र प्रेमी तथा सर्वभाषा के काव्यो में विचक्षण था। राजा हैदरशाह वीणा एव मन्त्री वाद्य विशारद था। (३ २६६) राजा हस्सनेन्द्र (हसन) सगीत में निपुण था। इस प्रकार एक-एक गुण से पूर्ण प्रसिद्ध नृप मण्डली को लोगों ने इस मण्डल में देखा।' (३ २६७)

महिलाओ का स्थान

कल्हण ने महिलाओ को पुरुषो के समकक्ष स्थान दिया है। व राजाओ की अभिभावक थी। सिहासन को सुशोभित करती थी। कल्हण उन्हें आदर की दृष्टि से देखता है। वे पुरुषो के साथ सर्वत्र उत्सवो में भाग लेती थी। स्वजातीय विवाह प्रचलित था। परन्तु विजातीय विवाहो को मान्यता दी जाती थी। प्रारम्भिक मुसलिम काल में जोनराज के अनुसार हिन्दू एव मुसलमानो में विवाह सम्बन्ध होता था। हिन्दू मुसलिम कन्या नहीं ग्रहण करते थे। मुसलमान हिन्दू कन्याओ स विवाह करते थे। जैनुल आबदीन के पश्चात् हिन्दुओं में जाति बन्धन कठोर होता गया। अर्न्तजातीय विवाह प्रथा समाप्त हो गयी।

विवाह दूतों अथवा सम्बन्धियो के माध्यम स होता था। मुसलमानो में विवाह के समय पत्र लिखा जाता था। हिन्दुओ में विवाह सस्कार तथा पत्र भी लिखा जाता था। हिन्दुओं ने अपनी प्रथा कायम रखते हुए, मुसलमानी प्रथा भी स्वीकार कर ली थी। हिन्दू और मुसलमान दोनो की वरयात्रा होती थी। (१ १६४) विवाह उत्सव होता था। (३ २७०) बारात आती था। धूम धाम तथा भोज भात होता था। हिन्दुओ में स्त्री परित्याग किंवा तलाक प्रथा नही थी। मुसलमानो में तलाक प्रथा प्रचलित थी। तलाक के समय परित्याग चीरिका लिखी जाती थी।

जैनुल आबदीन के पश्चात् महिलायो का स्थान पीछे हटता गया। राज कुल का विवाह सैयिदो तथा विदेशी मुसलमानों में होने लगा। मुसलिम स्त्रियाँ नियमों एव विधियो का कठोरता पूवक पालन करती थीं। अतएव महिलाओं का उल्लेख नही मिलता। सुल्तानो की कन्याओ के नाम का पता भी नही चलता। केवल सैयद वशीय बोधा, हमात खातून तथा मोमरा खातून का उल्लेख मिलता है। वे सैयिद वशीय रानियाँ थी। उनका वर्णन श्रीवर न प्रासादीय षणयन्त्रो तथा प्रतिष्ठाओं के प्रसग में किया है। उत्तर मुसलिम काल में महिलाओ की स्वतन्त्रता लुप्त हो गई थी।

कुछ गायिका तथा नृत्य करने वाली स्त्रियों का नाम अवश्य श्रीवर देता है। परन्तु वे पेशेवर हैं। उनका कुलीन समाज में कोई स्थान नहीं था। हिन्दुओं में सती प्रथा का लोप हो गया था।

●

स्रोत

जोनराज कृत राजतरंगिणी भाष्य में जिन पुस्तकों का उल्लेख किया गया है व ही इस पुस्तक के स्रोत हैं। संस्कृत पुस्तकों की अपेक्षा फारसी पुस्तकें अधिक स्रोत का कार्य करती हैं। पाण्डुलिपियों की माइक्रोफिल्म रिसर्च विभाग जम्मू काश्मीर सरकार से प्राप्त हुई हैं। मूल संस्कृत पाण्डुलिपियाँ वाराणसेय संस्कृत तथा काशी विश्वविद्यालय से प्राप्त किया है।

श्रीवर अपने इतिहास का स्वयं प्रत्यक्षदर्शी स्वयं साक्षी था। आखों देखा इतिहास लिखा है। इस राजतरंगिणी में अन्य स्रोतों का महत्त्व नगण्य है। श्रीवर के पूर्व लिखे, इतिहास ग्रन्थ नहीं मिलते। उसकी समकालीन रचनायें भी नहीं मिलतीं। फारसी ग्रन्थ जो भी प्राप्य हैं उनका आधार स्वयं श्रीवर है। श्रीवर के अनुवाद के आधार पर ही फारसी इतिहास लेखकों ने अपनी रचनायें की हैं। पाठ की अशुद्धि तथा संस्कृत का ज्ञान न होने के कारण नामों के उच्चारणों में अन्तर पड़ गया है। तथापि फारसी रचनायें जिन स्थानों पर श्रीवर शान्त है, कुछ प्रकाश डालती है। इस विषय पर द्रष्टव्य है। जोनकृत राजतरंगिणी तथा शुक कृत राजतरंगिणी 'स्रोत' शीर्षक।

●

तरंग:

जैनुल आबदीन (सन् १४१९–१४७० ई० एक तरंग)

जैनुल आबदीन प्रथम बार सन् १४१९ ई० में सुल्तान बना था। परन्तु मार्गशीर्ष लौकिक ४४९५ = सन् १४१९ ई० में अली शाह ने कनिष्ठ भ्राता जैनुल आबदीन से राज्य वापस ले लिया। ज्येष्ठ सप्तर्षि किंवा लौ० ४४९६ = १४२० ई० में पुनः जैनुल आबदीन ने राज्य प्राप्त किया।

जोनराज ने जैनुल आबदीन के राज्यकाल का वर्णन सन् १४५९ ई० तक किया है। तत्पश्चात् १४५९ ई० से १४७० ई० का वर्णन श्रीवर ने लिखा है। ग्यारह वर्षों का इतिहास श्रीवर ने प्रथम तरंग के सात सर्गों में लिखा है। जोनराज ने ३९ वर्षों का इतिहास २२३ श्लोकों तथा श्रीवर ने ११ वर्षों का इतिहास ८०२ श्लोकों में लिखा है। श्रीवर का वर्णन सविस्तार है।

श्रीवर प्रारम्भ में ही सुल्तान की तुलना रघुनन्दन एवं धर्मराज से कर, उसकी प्रशस्ति वर्णन करता है। सुल्तान ने अनुद्विग्न मन, काव्य, शास्त्र श्रवण, गीत, न्याय एवं वीरता के चमत्कार से, काल यापन किया था। सुल्तान शाहमीर वंश का अन्तिम सुल्तान था, जिसने काश्मीर के बाहर सेना सहित अभियान कर विजय प्राप्त की थी। गुप्तचरों द्वारा प्रजा के सुख-दुःख का ज्ञान रखता था। सुल्तान के आदमखाँ हाजी खाँ, बहराम खाँ, एवं जसरथ पुत्र थे। जसरथ का बाल्यावस्था में देहान्त हो गया था। शेष तीनों पुत्र जीवनोपरान्त तक जीवित थे। आदम खाँ राज्य प्राप्त नहीं कर सका। जम्मू के राजपक्ष से यवनों द्वारा युद्ध में मारा गया। हाजी खाँ सुल्तान बना। बहराम खाँ को हाजी खाँ के पुत्र ने अन्धा बना दिया। कारागार में रख दिया। तीन वर्षों के पश्चात् उसकी मृत्यु हो गयी। आदम खाँ तथा हाजी खाँ में जीवन पर्यन्त द्वेष एवं संघर्ष की स्थिति बनी रही। सुल्तान ने पुत्रों में संघर्ष बचाने के लिये, आदम खाँ को काश्मीर से बाहर जाने का आदेश दिया था।

इसी समय देश में बारूद का प्रयोग आरम्भ हुआ। तोप का काश्मीर में लौकिक ४५४१ वर्ष = सन् १४६५ ई० निर्माण किया गया।

मुट्ठों को आदम खा जीत कर आया। तुरन्त दूसरे भ्राता हाजी खा को सुल्तान ने लोहराद्रि जाने की आज्ञा दे दी। परन्तु लौ० ४५२८ = सन् १४५२ ई० में राजत्र, लवन्यादि द्वारा प्रेरित खान पुनः काश्मीर आने का प्रयास किया। हाजी खा शोपुर मार्ग से राजपुरी त्याग कर काश्मीर आया। हाजी खा के विद्रोह तथा ससैन्य काश्मीर में प्रवेश की बात सुनकर, सुल्तान सामना करने के लिए ससैन्य प्रस्थान किया। मल्लशिला समीप दोनों पक्ष की सेनायें युद्धार्थ सन्नद्ध हो गयी। युद्ध के पूर्व सुल्तान ने पुत्र हाजी खा के पास दूत भेजा। हाजी खा के सैनिकों ने दूत का नाक-कान काटकर, उसे विरूप कर दिया। इस अभद्र एवं क्रूर व्यवहार को देखकर, सुल्तान क्रुद्ध हो गया। युद्ध के लिए निकला। युद्ध में खान हतोत्साह हो गया। प्राण रक्षा हेतु आर्तनाद करने लगा। रण में वीर धात्री पुत्र ठक्कुर हसन, हुस्सन, सुवर्णसिंह एवं

गगा वीर गति प्राप्त किय । सु तान न पत्र हाजी खा तथा उसके सैन्य का अन्भुत पराक्रम देखकर अपना पुनजन्म माना । यद्ध पश्चात हाजो खा पराङमुख हुआ । भिन्न देश चला गया । सुल्तान ने आज्ञा दी । पुत्र का कोई किसी भी अवस्था म वध न कर सुल्तान ससैन्य श्रीनगर लौट गया । सल्तान हाजी खाँ के स्थान पर आदम खाँ को प्राथमिकता देन का विचार किया । क्रमराज आदम खा को दे दिया ।

लौकिक सवत ४५३६ — सन १४६० ई० म दुर्भिक्ष पडा । मार्गशीर्ष में हिमपात हुआ । तेल घी नमक आदि अन्न से सस्ते हो गय थे । कन्द पर जीवन निर्वाह होन लगा । तीन सौ दीनार का एक खारी चावल मिलता था । पश्चात १५ सौ दीनार म भी एक खारी धान मिलना कठिन हो गया । सुल्तान न कोश के माध्यम से कुछ मास तक प्रजा की रक्षा की ।

लौकिक ४९३८ सन १४६२ ई० म घनघार वृष्टि हुई । जल प्लावन न फसल नष्ट कर दिया । नदियाँ उमड पडी वितस्ता का जल विजयश्वर म तथा महापद्मसर का दुग्धपुर म प्रवश किया । सल्तान न कृषकों तथा जनता की रक्षा की । सुल्तान ने बाढ से रक्षा के लिय स्थान-स्थान पर नगर ग्राम तथा आवासों निर्माण की योजना कार्यान्वित की ।

राजा जन्म दिवस का उत्सव उत्साह पूवक मनाता था । विदेश के राजाओ को भी सम्मान एव उपहार दिया जाता था । सगीत सभा म सुल्तान कनक वृष्टि करता था ।

सुल्तान न अन्न सत्र योगियों फकीरो एव गरीबो के क्षुधा शान्ति के लिय खुलवाया । योगियो का सुल्तान सत्कार करता था । सुल्तान वितस्ता जन्मोत्सव उत्साह से मनाता था । दीप मालिका होती थी । सगीत होता था । लोग दान पुण्य करत थे । स्त्रिया पूजा करती थीं ।

आदम खां न इसी समय काश्मीर पर ससैन्य आक्रमण किया । सुल्तान क मत्री अविश्वासी एव दुष्ट हो गय थ । व स्वार्थी किसी न किसी पुत्र को उभाडत थ । सघर्ष की प्ररणा देते थ । मत्री गण कुत्तों से शिकार करते थ । स्त्री व्यसन म थ । बाज द्वारा शिकार किया जाता था । आदम खाँ तथा उसके सैनिकों का सैनिक स्तर गिर गया । किसी की सुन्दर बहू-बेटी रक्षित नही थी । शराब का दौर चलता था ।

सुल्तान पुत्र के कुकृत्यो से दुखी हो गया । आशकित था । सैनिक तैयारी करने लगा । आदम खाँ के नगर म प्रवश किया । पिता पुत्र म युद्ध आसन्न था । सुल्तान विवश हो गया । हाजी खाँ को सहायताथ बुलाया । पिशुनों के कारण आदम खाँ और सुल्तान म पुन मनमुटाव हो गया । भयकर युद्ध हुआ । इस समय एक ऐसा वग पैदा हो गया था जो दोनो पक्षो से आर्थिक लाभ उठाता था । उनकी किसी के प्रति निष्ठा नहीं थी । सुल्तान ससैन्य सुय्यपुर पहुच गया । दोनों तटों पर पिता एव पुत्र की सेनायें स्थित हो गयी ।

हाजी खाँ पुछ से चलता काश्मीर मण्डल पहुच गया । सुल्तान के कारण कनिष्ठ पुत्र बहराम खाँ एव हाजी खाँ दोनों भाइयो में मित्रता हो गयी । आदम खाँ अकेला हो गया । काश्मीर त्याग दिया । विदेश चला गया । वह शाहिभग पथ से सिन्धु पार कर सिन्धुपति के पास पहुचा । सुल्तान लौकिक वष ४५३३ = सन् १४५७ ई० में प्रवश किया । हाजी खाँ का सुल्तान न युवराज बना दिया ।

हाजी खाँ एवं सुल्तान राजकाज तथा उत्सवा म भाग लेते थे । चत्रोत्सव म राजा पुष्प लीला की इच्छा स नाव द्वारा मडवराज गया । राजा अवन्तिपुर एव विजयश्वर क राजभवनों म निवास करता था । यात्राओं म रंगमच बनता था । नाटक होता था । नर-नारियों क साथ गान एवं नृत्य में समय व्यतीत होता था । आतिशबाजी होती थी ।

सुल्तान खुरासान के मुल्ला जादक से कूर्मवीणा, श्रीवर से तुम्ब वीणा वादन सुनता था। जाफराण आदि से दुष्कर तुरुष्क रागो से राजा मनोविनोद करता था। उस समय वीणा एवं कण्ठ का स्वर एक जैसा प्रतीत होता था।

नोत्थ सोम ने 'जैन चरित' लिखा था। वह राजा का निकटवर्ती था। देशी काश्मीरी भाषा का पण्डित बोध भट्ट न 'जैन प्रकाश' नाटक की रचना की थी। 'शाहनामा' में पारंगत भट्टावतार ने 'जैन विलास' नामक ग्रन्थ लिखा था। राजा वीणा, तुम्ब एवं रबाब वाद्यो का वादन सुनकर, प्रसन्न होता था। विद्वान् गायक एवं नृत्यो पर राजा कनकवर्षा करता था। पुष्प लीला समाप्त कर, राजा पुन श्रीनगर लौट आया।

राजा ने लहर दुर्ग की यात्रा की। उसने अनेक अन्नसत्र खोले। कृषि की उन्नति के लिये सुधार किये। चारो ओर धान की ढेरियाँ लगी दिखाई देती थी। कुल्या एवं नहरो से सिंचाई की प्रचुर व्यवस्था की गयी। छिछली भूमि में सरोवर खुदवाकर, कमल तथा सिघाडा लगाये गये। तैरते खेतों को भी उपजाऊ बनाया गया। मारी नदी को हस्तिकर्ण क्षेत्र में प्रविष्ट करा कर, सिन्धु वितस्ता संगम तक का क्षेत्र धान्यमय कर दिया। श्मशान में बिना शुल्क दिए लोग शव दाह करने लगे।

जैनुल आबदीन के समय विद्याओ की उन्नति हुई। सभी प्रकार की कलायें तथा विद्याएँ विकसित हुईं। बीनने के लिए तुरी तथा वेमा का प्रयोग किया गया। पुस्तको का अनुवाद किया गया। सर्वसाधारण का ज्ञान भण्डार भरने लगा। सिकन्दर बुतशिकन के समय जो लोग विदेशो में चले गये थे, वे पुन देश में बुलाये गये। पुराण, तर्क, मीमासा एवं अन्य ग्रन्थ बाहर से मँगाकर उनका अध्ययन आरम्भ किया गया। जो जिस भाषा के प्रवीण था, उसे उसी भाषा में पढाया जाता था। धातु वाद, रत्न ग्रन्थ, एवं कल्पशास्त्रो का अनुवाद किया गया। मुसलमान भी उनका अध्ययन करने लगे। वृहत्कथा सार एवं हाटकेश्वर संहिता का भी अनुवाद हुआ।

सुल्तान ने आदि पुराण, सुनकर, नौ बन्धन तीर्थ यात्रा लौकिक ४५३९ = सन् १४६३ ई० में की। इस यात्रा में उसके दोनो पुत्र हाजी खाँ और बहराम खाँ साथ थे। सुल्तान यात्रा कर, नाव से लौटा। नाव पर श्रीवर ने सुल्तान का गीत गोविन्द गा कर सुनाया।

सुल्तान की कीर्ति काश्मीर के बाहर फैल गयी थी। भारत तथा सीमान्त स्थित अनेक राजा उसे उपहार भेजते थे। पजाब के शासक ने ताजिक घोडा भेजा। मालवा तथा गौड के शासकों ने वस्त्र भेजा। सुल्तान ने भी सुन्दर भाषा में काव्य लिखकर द्रव्य सहित बदले में उनके पास भेजा। राणा कुम्भ ने कुंजर नामक वस्त्र भेजा। ग्वालियर के राजा डूगर सिंह ने 'संगीत शिरोमणि' 'संगीत चूडामणि' नामक ग्रन्थ भेजा। उसके पुत्र कीर्ति सिंह ने पिता का सम्बन्ध पूर्ववत् कायम रखा। सौराष्ट्र के शासक ने अश्व भेजा। बहलाल लोदी ने सुल्तान से मित्रता कर ली। खुरासान का सुल्तान अबूसैद ने घोडा और खच्चर भेजा। गुजरात के सुल्तान ने वस्त्र भेजा। गिलान, मिश्र, मक्का के सुल्तानों ने भी सुल्तान को भेंटें भेजी। बाहर से अनेक संगीत कलाकार, मसखरे, सभी प्रदान तथा द्रव्य प्राप्ति की आशा से काश्मीर प्रदेश आने लगे।

उल्का पात आदि अपशकुनो के कारण किसी अशुभ कार्य की सूचना मिलने लगी। अकाल के कारण अन्न प्राप्ति के लिए एक देश, दूसरे देश तथा एक सुल्तान दूसरे सुल्तान पर आक्रमण करने लगे। खुरासान के सुल्तान अबूसैद ने इराक के सुल्तान पर अन्न हेतु आक्रमण किया। युद्ध हुआ। अबूसैद बन्दी

बना। मार डाला गया। सुल्तान के जीवन के अन्तिम चरण में बोधा खातून उसकी पत्नी का अन्तकाल हो गया। वह सैयिद वंशीय थी।

सिन्धुपति सुल्तान का भगिनीपुत्र था। वह इब्राहीम लोदी द्वारा पराजित किया गया। मारा गया। राजा के विश्वस्त मन्त्री एवं साथी भी मारे गये। वह पथभ्रष्ट गज तुल्य हो गया। हाजी खाँ अत्यधिक मद पीता था। उसे अतिसार हो गया। सुल्तान ने पुत्र का मद्यपान से विरत करने की चेष्टा की, परन्तु विफल रहा।

मन्त्रियों ने आदम खाँ को विदेश से पुनः काश्मीर में राज्य करने के लिए आमन्त्रित किया। राजा उसका आगमन सुनकर भी, उदासीन रहा। हाजी खाँ का पुत्र हसन खाँ का आगमन सुनकर राजपुरी से पर्णोत्स पहुँच गया। चाचा और भतीजा में प्रचण्ड युद्ध हुआ। सुल्तान ने बहराम खाँ को उत्तराधिकार देना चाहा। परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया। आदम खाँ यद्यपि काश्मीर आया परन्तु आत्मरक्षा में समर्थ नहीं हो सका। पुत्रों का रक्तपात एवं राज्य लिप्सा देखकर, सुल्तान में विराग स्फुरित हो गया। वह धीवर से रात्रि में माक्षोपम संहिता सुनाता था। 'शिकायत' नामक फारसी भाषा में ग्रन्थ भी लिखा।

इस समय राजनैतिक स्थिति अस्थिर थी। किसी की किसी के प्रति निष्ठा नहीं थी। दल बदल का जोर था। प्रतिदिन दल बदल होता था। पुत्रों तथा परिवार वालों के व्यवहार से राजा खिन्न हो गया।

राजा के तीनों पुत्रों का एक दूसरे के प्रति अविश्वास था। राजा ने विरक्त होकर शासन मन्त्रियों को दे दिया। छाया में भी विश्वास करने से हिचकता था। (१:७१,३) रमजान मास आने पर, सुल्तान ने मांस भक्षण त्याग दिया। सुल्तान बीमार पड़ा। उसके रोग का निदान नहीं हो सका। सुल्तान ने भोजन त्याग दिया।

आदम खाँ पिता की बीमारी सुनकर, राज्य प्राप्त करने की कामना से जैन नगर गया। उसने एक दिन राजधानी में व्यतीत किया। कोरीश हुस्सन ने हाजी का पक्ष ग्रहण किया। मन्त्रियों द्वारा त्यक्त, हत भाग्य, आदम खाँ कुतुबुद्दीन पर जाकर, हतश्री हो गया। हाजी खाँ राजधानी प्रांगण में पहुँचा। घोड़ों पर अधिकार कर लिया। आदम खाँ के अधिकार की बात, सुनते ही, विपुलाटा मार्ग से आदम खाँ बाहर चला गया। हाजी खाँ का पुत्र हसन खाँ पर्णोत्स मार्ग से काश्मीर में प्रवेश किया।

सुल्तान अपना अन्तिम समय निकट जानकर, जैसे निश्चिन्त हो गया था। सुल्तान ने ज्येष्ठ मास द्वादशी लौ० ४५४६ = सन् १४७० ई० को प्राण त्याग किया। राजकीय सम्मान के साथ, स्वर्णरथ पर आरूढ़ कर, छत्र चामर सहित, ६९ वर्षीय राजा, को जिसकी दाढ़ी अभी भी काली थी, पैत्रिक हवाजिर (मजारयेसलातीन) ले गये। उसे एक वस्त्र में लपेटा गया। पिता सिकन्दर बुत शिकन के समीप दफन किया गया। कब्र पर एक दीर्घ स्फटिक शिला खड़ी कर दी गयी। मृत्यु पर दान पुण्य किया गया। उस दिन नगर में किसी के घर चूल्हा नहीं जला। समस्त काश्मीर मण्डल में किसी के घर से धूँआ निकलते किसी ने नहीं देखा। सुल्तान के आँख मूँदते ही, मानो सुल्तान की प्रभा स्वप्नवत् हो गयी। विद्या का पारखी, विद्वानों, कलाकारों का सम्मान, आदर, सत्कार तथा सहायक काश्मीर मण्डल में नहीं रह गया। (द्रष्टव्य = परिशिष्ट 'ण' जोनराज तरंगिणी : लेखक)

- **हैदरशाह' (सन् १४७०–१४७२ ई० द्वितीय तरंग)**

हाजी खाँ अभिषेक नाम 'हैदर शाह' नाम से काश्मीर का सुल्तान हुआ। उसने राज्य ज्येष्ठ प्रतिपद लौकिक ४५४३ = सन् १४७० ई० में प्राप्त किया। राजधानी के प्रांगण में स्वर्णसिंहासन पर आरूढ़ हुआ। उस समय

उसके समीप अनुज तथा आत्मज थे। सिंहासन पद कोशेश हस्सन ने पुष्प पूजा युक्त हैदर शाह का राज तिलक किया। पितृव्य बहराम खाँ का उसने नाग्राम की जागीर दी। पुत्र को क्रमराज्य तथा इक्षिका-दिया। पुत्र युवराज घोषित किया गया। राजपुरी, सिन्धुपति आदि निमन्त्रित राजाओं को, राजोचित श्री से अलंकृत कर, विदा किया। सैयिद नासिर का पुत्र मियाँ हस्सन बहुरूप आदि राष्ट्रों का स्वामी बनाया गया।

युवराज हसन शाह का विवाह मियाँ हस्सन की पुत्री से किया गया। इस प्रकार पिता, पुत्र तथा पितामह तीनों की रानियाँ सैय्यिद वंशीय हुई। भांगिल के मार्गेश जमशेद से लेकर, जहाँगीर मार्गपति को दिया गया।

हैदरशाह के राज्यकाल में पूर्ण नापित प्रभावशाली हो गया। दुष्ट मन्त्रियों की प्रेरणा पर, राजा अविवेक पूर्ण कार्य करने लगा। राजा वीणावादक था। वीणा वादन की शिक्षा भी देता था।

आदम खाँ राज्य प्राप्ति की लालसा से, मद्र देश से, पर्णोत्स पहुँचा। राजा को हस्सन कोशेश जिसने राज तिलक किया था, उस पर सन्देह हो गया। उसने उसके वध करने का संकेत किया।

प्रातः काल हस्सन कोशेश आदि राजभवन पहुँचे। छल से राजधानी मण्डप में उनकी हत्या करा दी गयी। हस्सन के पक्षपाती कारागार में डाल दिये गये। पुरानी मन्त्रिसभा समाप्त कर दी गयी।

आदम खाँ ने जब हस्सन कोशेश आदि की हत्या का समाचार सुना, तो जैसे आया था लौट गया। कनिष्ठ भ्राता, बहराम खाँ आदि प्रमुख व्यक्ति हत्या काण्ड देखकर, शंकित हो गये। सुल्तान ने भाई बहराम खाँ को सुरक्षा का विश्वास दिया।

मद्र राजा मणिक देव और मुसलमानों में युद्ध हुआ। आदम खाँ का मामा माणिक्य देव था। आदम खाँ मामा के पक्ष से लड़ता मारा गया। मुख पर बाण लगने से मृत्यु हो गयी। हैदर शाह ने बड़े भ्राता आदम खाँ का शव मँगाकर, श्रीनगर में उसकी माता के समीप दफन किया।

पिता जैनुल आबदीन के समान हस्सन शाह भी पुष्प लीला करने मडव राज्य गया। उसी समय वहाँ भूकम्प हुआ। आकाश में पुच्छल तारा सर्व प्रथम बहराम खाँ ने देखा। दिन में भी तारा दिखायी पड़ता था।

जैनुल आबदीन के समय ब्राह्मणों का दमन बन्द हो गया था। पूर्ण नापित अत्याचार से हिन्दू पीड़ित किये गये। ब्राह्मण लोग 'मैं भट्ट नहीं हूँ' 'मैं भट्ट नहीं हूँ' चिल्लाने लगे। प्रतिमा भंग की राजा ने आज्ञा दी। जैनुल आबदीन ने विद्वानों को भूमि आदि जागीर में दी थी, वे सब भी छीन ली गयी।

राजा के सेवक खुलेआम लूटपाट करते थे। राजा शय्या पर पड़ा करवटें बदलता रहता था। उसने राज कार्य में रुचि लेना त्याग दिया। लक्ष्मीपुर की राजधानी इसी समय जलकर भस्म हो गयी। बलाढ्यपुर समीपस्थ मकान भी जल गये। प्रसन्न होकर राजप्रासाद पर चढ़कर राजा घरों को जलते हुए देखा। पान लीला करने लगा। पिशुनों की पिशुनता पर राजा ने सेना सहित पुत्र को बाहर भेज दिया। हसन खाँ ने राजपुरी के राजा को पराजित किया। उसकी भगिनी से विवाह किया। दिनार कोट की सेनाओं ने हथियार रख दिया। मद्र, गक्खड़ तथा चिब देश के राजागण उसके आश्रम में आगये। हसन खाँ कुटी पाटीश्वर पहुँचा। भोग पालों का नगर जला दिया। बालेश्वर गिरि के पाद मूल में हसन खाँ की सेना पहुँच गयी। हसन खाँ काश्मीर से ६ मास बाहर रहकर, विजय करता रहा।

बहराम खाँ ने देखा। राजा व्यसनी हो गया है। मन्त्रियों एवं सामन्तों को आक्रान्त कर, निरंकुश काश्मीर मण्डल में भ्रमण करने लगा।

१३

सुल्तान निरन्तर पान के कारण दुर्बल एवं अतिसार रोग ग्रस्त हो गया। हसन खाँ ने आते ही, उच्छृंखल मन्त्रियों का नियन्त्रण किया। हसन खाँ पर सुल्तान इसलिये नाराज हो गया कि उसने फिरोज गवखुड को बन्दी बनाकर नहीं लाया। सुल्तान ने विजयी पुत्र हसन खाँ के निकट आने पर भी उसके प्रति अधिक आदर प्रकट नहीं किया।

राजा सेवकों सहित पान क्रीड़ा हेतु राजप्रासाद पर चढ़ गया। क्रीड़ा पूर्वक दौड़ने लगा। गिर पड़ा। नाक से रक्त निकलने लगा। बेहोश-सा हो गया। उसकी काख में हाथ डालकर, शयन मण्डप में सेवक ले गये। कोई योगी राजा की औषधि कर रहा था। उग्र औषधियों के प्रयोग से राजा की हालत और बिगड़ गयी। वह जलन से जलने लगा।

बहराम खाँ राज्य प्राप्ति प्रयास में लग गया। राजलक्ष्मी चाचा और भतीजा के बीच में झूलने लगा। राजा दिवंगत हो गया। आयुक्त अहमद ने सचिवों से मन्त्रणा कर, प्रस्ताव रखा। बहराम खाँ राज्य ग्रहण करें। हसन खाँ युवराज बना दिया जाय। अभागे बहराम खाँ ने प्रस्ताव ठुकरा दिया। राज्य प्राप्ति के लिए, जिन लोगों ने बहराम खाँ को प्रोत्साहित किया था, वे सहायक न हुये। बहराम खाँ की स्थिति बिगड़ गयी। आयुक्त अहमद ने सचिवों के साथ मन्त्रणा किया। राजपुत्र हसन को राज देने का निश्चय किया। बहराम खाँ नगर छोड़कर भाग गया। कश्मीर से बाहर चला गया। हैदर शाह लौ० ४५४८ = सन् १४७२ ई० में एक वर्ष दस मास राज्य कर वैशाख मास श्री पंचमी को दिवंगत हो गया। सम्बन्धी, मंत्री आदि शिविका रूढ़ सुल्तान का शव पिता के मजारिजर में ले गये। एक वस्त्र सहित दफना दिया गया। उस मिट्टी दी गई। कब्रपर एक सध्यातम शिला स्थापित की गई। हैदर शाह ने फारसी एवं हिन्दुस्थानी भाषा में गीत काव्य की रचना किया था।

• हसन शाह (सन् १४७२-१४८४ ई० तृतीय-तरंग) :

हसन शाह राजधानी सिकन्दरपुर से हटाकर पितामह के राजधानी जैन नगर में गया। राजा का आदर्श पिता नहीं, पितामह जैनुल आबदीन था। आयुक्त अहमद ने सिंहासनासीन हसन शाह का स्वर्ण कुसुमों से पूजा कर, राज तिलक किया। होम किया गया। वाद्य वादन हुआ। नगर ध्वजाओं से सजाया गया। ध्वजायें श्वेत बड़ी-बड़ी थीं। सेवक रत्नमय वस्त्रों का उपहार प्राप्त किये। पूर्वकाल में उन्हें इस अवसर पर रूई के वस्त्र दिये जाते थे। पिता तथा पितामह को राज्य प्राप्ति हेतु रक्त पात तथा संघर्ष करना पड़ा था। हसन शाह ने बिना रक्तपात क्रमागत राज्य प्राप्त किया।

हसन शाह ने षड दर्शनों का अध्ययन किया था। आयुक्त अहमद के नियन्त्रण में राज सत्ता थी। पुत्र नौरोज उसका सहायक था। द्वारपाल का कार्य करता था। मल्लिक अहमद का नाग्राम दिया गया। विदेश प्रवास काल में साथ रहने वाला ताज भट्ट राजा का अन्तरंग एवं द्वाराधिकार पद प्राप्त किया। जोन राजानक आदि भी पूर्व सेवा के अनुसार ग्रामादि प्राप्त किये। अभिषेक उत्सव की खुशी में बंदी मुक्त कर, भट्ट देश निर्वासित किये गये।

हसन शाह का आदर्श पितामह जैनुल आबदीन था। राज्य प्राप्ति के पश्चात् ही पितामह का आचार-विचार राज्य में प्रवर्तित किया। इसी समय बहराम खाँ राज्य प्राप्ति की लालसा से देशान्तर का उद्यम त्याग कर, युद्ध के लिए आया। उसे राजपुरुषों से सहायता की आशा थी। क्रमराज्य विजयेच्छा से पहुँचा। मन्त्रियों सहित राजा अवन्तिपुर में स्थित था। बहराम खाँ के प्रति गमन की वार्ता सुनकर, शीघ्र श्रीनगर लौट आया। पितृव्य के आगमन से राजा विह्वल हो गया। सुरपुर पहुँचा। फिर डामर एवं ताज भट्ट को बहराम खाँ के विजयार्थ राजा ने भेजा।

बहराम खाँ हुलपुर पहुँच गया। राजपुरुषो ने उसे आश्वासन दिया। राजपुरुष उसकी सहायतार्थ नही आये। बहराम खाँ निराश हो गया। पुत्र सहित बन्दी बना लिया गया। मुख पर बाण लगने के कारण पीडित तथा रक्तमय हो गया था। विजयोत्सव मनाया गया।

बहराम खाँ पुत्र सहित अपने ही निर्मित जैनगिर लीला प्रासाद में बन्दी बना कर रखा गया। उसकी आँखें फोड दी गयी। तीन वर्ष कारावास में रहकर, वही मर गया। उसका चौबीस वर्षीय पुत्र कारागार से बाहर निकलते ही मार डाला गया। राजा प्रसन्न मन नगर लौटा। प्रतिहार अभिमन्यु देवसर का स्वामी बन गया। लूट से धन संग्रह करने लगा। प्रतिहार अभिमन्यु का उत्कर्ष अहमद आयुक्त पक्ष सहन नही कर सका। उसे समाप्त करने का निश्चय, आयुक्त ने किया। तत्काल उसे बन्दी बनाने का अवसर नही मिल रहा था।

एक बार राजा स्वयं विजयेश्वर गया। उसे राजधानी लाया। वह आते ही बन्दी बना लिया गया। राज्य ने उसका सर्वस्व हरण कर लिया। पुत्र भी कारागार में डाल दिया गया। उसकी आँखें फोड दी गयी। उसने भी बहराम खाँ के समान दो वर्ष कारागार में नरक यातनायें भोगी। मर गया। पूर्ण नापित, मल्लिक जादा आदि चिरकाल बन्धन में रहकर, मर गये।

पूर्वकाल में सैयिद नासिर आदि को पैगम्बर वंशीय जानकर, जैनुल आबदीन ने उनका आदर किया था। अपनी पुत्री का विवाह कर उसे राष्ट्राधिप बना दिया था। सैयिद जमाल आदि उपद्रवियो को देश से निकाल दिया था। सैयिद नासिर भी देश बाहर, स्थिति अनुकूल न देखकर, चला गया।

सैयिद विवाह से सम्बन्धित होने के कारण बहुरूप आदि क्षेत्रो का, सुख भोगते थे। राजाओं के समान आचरण करते थे। हसन शाह ने उनके उद्धत स्वभाव के कारण उन्हें देश से निकाल दिया। कुछ दिल्ली में आश्रय लिये। कुछ इधर-उधर बाहर आबाद हो गये। मार्गेश जहाँगीर ने अपनी बेटी का विवाह सैयिद कुटुम्ब में कर दिया था। उसका अनादर हुआ। तलाक दिलाकर, ताज भट्ट से उसका विवाह कर दिया। जैनुल आबदीन सैयिदो को बाहर करने में असफल रहा परन्तु हसन शाह ने उनके निष्कासन में सफलता प्राप्त की।

देश में समृद्धि फैली। राज्य सुखमय था। जनता विवाहोत्सव, सुन्दर भवन रचना, नाटक, यात्रा आदि मगल कार्यों में समय व्यतीत करती थी। लूट-पाट, अराजकता देश से लुप्त हो गयी थी।

तोरमान कालीन पचीस मूल्य वाला दीनार हसन शाह के समय चलता था। उसका मूल्य कम हो गया था। सुल्तान ने नामयुक्त द्विदीनारी प्रवर्तित किया। राजा की माता का नाम गोल खातून था। उसकी मृत्यु अकस्मात् हो गयी। वह हिन्दू आचरण करती थी। सुल्तान ने काला वस्त्र धारण किया। शोक सात दिनों तक मनाया गया। हसन शाह को हयात खातून से मुहम्मद नामक पुत्र हुआ। पिता की मृत्यु के पश्चात् काश्मीर का सुल्तान हुआ। पुत्र का अभिभावक ताज भट्ट बना।

हसन शाह सगीतज्ञ एव कुशल गायक था। सगीतविद् उसके दरबार में चारों ओर से आते थे। मन्त्री जहाँगीर मार्गेश भी सगीतज्ञ था। काश्मीर में भांडो के प्रदर्शन का भी उल्लेख मिलता है। अनेक भाषाओं के ज्ञाता भांड थे। भड़ैती में हास्य रस को प्रमुखता होती थी। मुल्ला हसन ने दश तन्त्रियो वाली मोद वीण बनायी थी। श्रीवर भी तुम्ब वीण पर गायन एव वादन करता था। हसन शाह संस्कृतभाषी था। पद्य रचना करता था। उसका गीत सुनकर, लोग चकित हो जाते थे। अनेक रागो के विशेषज्ञों से उसका दरबार भरा रहता था। नर्तकियाँ शास्त्रीय नृत्य करती थी। रत्नमाला, रूपमाला, दीपमाला

नर्तकियाँ लास्य नृत्य में निपुण थी। राजा की संगीत प्रियता एवं मनीतज्ञों का आदर सुनकर, विदेशों से अनेक मायाविद् गायक राजसभा की शोभा बढ़ाते थे। देशी-भाषा में 'लीला' नामक प्रबन्ध गान भी होता था।

हसन शाह के समय गोहत्या विदेशी मुसलमानों तथा वणिकों द्वारा श्रीनगर में की गयी थी। जैनुल आबदीन के समय गोहत्या बन्द थी। गोहत्या के पाप से, जहाँ गोहत्या की गयी थी, जहाँ गोमांस भक्षण किया गया था, वह विहार, वह नगर सब भस्म हो गया। उत्पात होने लगे। गोवधिकों के बाजार में लौकिक ४५५५ = सन् १४७९ ई० में अनायास आग लग गयी। अग्नि गुलिका वाटिका तक फैल गयी। बड़ी मसजिद में भी आग लग गयी। उसे सिकन्दर बुतशिकन ने निर्माण कराया था। मसजिद की दिवाल मात्र शेष रह गयी थी। सब कुछ जलकर राख हो गया।

ईद के दिन वहाँ मुसलमान नमाज पढ़ते थे। बहराम खाँ के पंच आवास आदि गृह की भयंकर अग्नि, खाण्डव वन दाह की स्मरण दिलाती थी। उड़ते, जलते, भोजपत्र वितस्ता में तैरती नावों पर आकर गिरे। नावों में आग लग गयी। सहस्रों गृह उस दिन भस्म हो गये। भयंकर वायु चली। उल्लोलसर (उलर लेक) में सैकड़ों किरात अर्थात् माँझी डूब गये।

हसन शाह दुर्बल राजा था। मन्त्री हावी थे। मन्त्रियों के पारस्परिक मत्सर तथा द्वेष के कारण अव्यवस्था फैल गयी। राजादेश प्राप्त ताजभट्ट ने विदेशोंमें अभियान किया। काश्मीर का पुनः गौरव प्राप्त करने का प्रयास, विजया द्वारा किया गया। ताजभट्ट ससैन्य राजपुरी पहुँचा। अजयदेव आदि मद्र तातार खाँ का साथ त्याग दिये। उसमें मिल गये। स्यालकोट आदि दायकर्ता, दिल्लीपति बहलोल लोदी के लिये भी वह भयप्रद हो गया। सामन्तों को करदीकृत करता, काश्मीर लौट आया।

मलिक अहमद उसकी विजय तथा उत्कर्ष से ईर्ष्यालु हो गया। ताजभट्ट के नाश की चिन्ता करने लगा। हसन शाह ने कनिष्ठ पुत्र हुस्सन का अभिभावक नौरोज को बना दिया। ताजभट्ट से बदला लेने के लिये मलिक ने निष्कासित सैयिदों को पुनः काश्मीर आगमन का आमन्त्रण भेजा। गुप्तचरों ने सैयिदों के आगमन द्वारा सर्वनाश की चेतावनी दी। परन्तु ईर्ष्या से अन्ध एवं बधिर मल्लिक ने नेक सलाह की उपेक्षा कर दी। सैयिदों का प्रवेश काश्मीर में हुआ। जैनुल आबदीन, हैदर शाह तथा हसन शाह ने देश की सुरक्षा एवं शान्ति की दृष्टि से उन्हें निकालने का प्रयास किया था।

सैयिद हसन प्रवेश पाते ही, सिद्धादेशाधिकारी बन गया। आयाश्रम प्रदेश जागीर में प्राप्त किया। सैयिदों के प्रवेश के कारण, काश्मीरी त्रस्त हो गये। वे सैयिदों का भूतकालीन प्रजापीडक इतिहास नहीं भूले थे।

सैयिदों से काश्मीर मण्डल आक्रान्त हो गया। उन्होंने ताजभट्ट की पत्नीके हरण इच्छा की। उसे कारागार में डाल दिया। मल्लिक अहमद ने अपने मार्ग में पड़ने वाले सभी सम्भ्रान्त काश्मीरी सामन्तों का नाश कर दिया। राजा भी मल्लिक से विरक्त था। पान लीला के समय मलिक पुत्र नौरोज ने राजा का अपमान किया। राजा मल्लिक से चिढ़ गया। उसने मल्लिक तथा पुत्र की लीला समाप्त करने का निश्चय किया। मल्लिक सुल्तान के पुत्र का अभिभावक था। राजा ने मल्लिक को हटाकर, पुत्र का अभिभावक जोन राजानक का बना दिया।

राजा के आह्वानन पर ससैन्य शाहमी मार्गपति जहाँगीर शीघ्र ही श्रीनगर में आ गया। मल्लिक उसके आगमन का समाचार सुनते ही क्रुद्ध हो गया। अपशकुन होने पर भी दूसरे दिन, वह ससैन्य राज-

प्रासाद प्रागण में पहुँचा। मार्गपति जहाँगीर तथा मल्लिक दोनों की सेनायें आमने-सामने देखकर, राजधानी सभ्रम से चचल हो उठी। मल्लिक ने सैयिदों से मिलकर, नगर मध्य मोर्चाबन्दी कर ली।

राजानक जोनराज सहित, विजयी जहाँगीर ने ताजभट्ट को मुक्त कर दिया। राजधानी प्रागण रौंद डाला। ताजभट्ट के सैनिकों ने राजधानी का पश्चिमी द्वार जला दिया। उस अग्नि ने हसन राजानक के आवास पर्यन्त भवनों को जला दिया। राजप्रासाद के प्रागण में जलती अग्नि देखकर, राजसेवको सहित राजा भयभीत हो गया।

मल्लिक के सेवको ने उसका साथ त्याग दिया। वह पुत्रो सहित किंकर्तव्य-विमूढ हो गया। स्तब्ध खड़ा रहा। मल्लिक ने पुत्रों के प्राण भय के कारण, युद्ध का निषेध किया। राजा ने पूर्व सेवा का स्मरण कर, आयुक्त की रक्षा की। युद्ध में असमर्थ आयुक्त नत्यक आदि भुट्ट देश चले गये। उत्तर द्वार से विजयी, जयोद्धत जहाँगीर आदि गरजते हुए, नृपागण में प्रवेश किये। राजा ने पुत्र सहित मल्लिक को बन्दी बना लिया। उन्हें कारागार में डाल दिया गया। मलिक का सम्पत्ति हरण कर ली गयी। राजा ने जुगभट्ट को कारागार में उसके पास स्वर्ण राशि का पता पूछने के लिये भेजा। उसने अपनी पूर्व सेवाओ का स्मरण दिलाया। राजा को विज्ञप्ति भेजा।

सैयिदो का प्राबल्य हो गया। वे जनता का आर्थिक शोषणा करने लगे। जहाँगीर मार्गेश एव नोस राजानक श्री सम्पन्न हो गये। मियाँ हसन ने मल्लिक की पदवी प्राप्त कर नाग्राम आदि पर अधिकार कर लिया। मियाँ महम्मद को अर्धवन राष्ट्र दिया गया। दिल्ली से सैयिद नासिर को बुलाने के लिय दूत भेजा गया। धूरपुर अध्वन से पांचाल देव, पहुँचते पहुँचते नासिर ज्वराक्रान्त हा गया। पौत्री (रानी) जमात (राजा) एव सब मन्त्रीगण उससे मिले। वह दो दिन ज्वरग्रस्त रहकर, मर गया। इसी समय मल्लिक अहमद भी कारागार में मर गया। पुत्रीके भाग्य रूप सौभाग्य से सम्प्राप्त, विभव से ऊर्जित, सैयिद गण काश्मीरियों को पद पद पर उपेक्षा करने लगे। राजा भी सैयिदो का मुखापेक्षी हो गया। अधिकारी गण उत्कोच अर्थात् घूस ग्रहण करना धर्म, प्रजा-पीडन कौशल, स्त्रियो में व्यसन सुख, मानने लगे। राहु के समान सैयिद हसन काश्मीर मण्डल पर आक्रान्त हो गया।

सैयिदो ने छोटे एव बडे भौट्ट देश को जीतन के लिये जहाँगीर एव नासिर को भेजा। उन में एक ने विजय प्राप्त की और दूसरा बन्दी बन गया। युक्ति से अपनी रक्षा की। जहाँगीर ने राजा को सैयिदो से सतर्क रहने की सलाह दी। सैयद कन्या, रानी के पास से मुक्त होने के लिये, कहा।

किन्तु रात्रि में राजा ने अपनी रानी सैयिद कन्या से सब बातें बता दी। रानी सर्पिणी के समान क्रुद्ध हो गयी। जहाँगीर के अनिष्ठ की चिन्ता करने लगी। जहाँगीर समाचार पाते ही कर्कोट द्रग मार्ग से बाहर निकल गया। भौंगिला से कुटुम्ब सामग्री लेकर, वह दुर्गमार्ग से गमन किया। सैयिद से समन्वित राजा आयुक्त अहमद एवं जहाँगीर की अनुपस्थिति में अपने को पथभ्रष्ट सदृश अनुभव करने लगा।

सैयिदो तथा भार्या के आधीनबुद्धि राजा था। उसका व्यवहार विशृंखलित था। दिन पर दिन राजा की अन्तरग स्त्रियाँ होती गयी। मन्त्री और सेवको से दूर होता गया। काश्मीर की स्थिति बिगडती गयी। जहाँगीर मार्गेश ने पुन राजा को सावधान किया। मार्गेश के पत्र की बात जानकर, मियाँ हस्सन सर्प सदृश क्रुद्ध हो गया।

अनिष्ट की आशका से मद्र देशीय परशुराम आदि काश्मीर देश से जाने के लिये आज्ञा माँगने लगे। किन्तु तत्काल उन्हें पाथेय तथा मुक्तापत्र नहीं दिया गया। मद्रो में शंका घर कर गयी। सैयिदो से विरक्त

हो गये। सयिदों राजा के साथ शिकार खेलने जाने लगे। व्यर्थ मृगों तथा पक्षियों की हत्या में राजा को रुचि उत्पन्न कर दिया। शिकार काल में प्रजा के घरों से मद्य मांस पशु आदि अपहृत कर राजा सेवक उन्मत्त मनाने लगे।

शिकार से लौटते ही राजा संग्रहणी से बीमार पड़ गया। अस्वस्थ होने पर भी सुल्तान शकुनच्छा से सज प्रवेश गया। सयिदों के साथ उसने सर्जो सर में भोजन किया। नौकारूढ राजा बाजों द्वारा पक्षियों का शिकार करने लगा। सर्जो सर से लौटते ही राजा अस्वस्थ होकर शय्या पर पड गया।

दिन पर दिन राजा क्षीण होता गया। राजा का सुन्दर आकृति विवर्ण हो गयी। मृत्यु आसन्न देखकर मियाँ हुस्सन से कहा—मैं जीवित नहीं रहूँगा। मेरे शिशु राज्य योग्य नहीं है। बहराम खाँ का पुत्र बन्दी है। मेरे पुत्रों को रक्षित नहीं करना। अच्छा है युक्ति से आदम खाँ के पुत्र को लाकर अभिषिक्त करो। अथवा आपकी कन्या (रानी) जो कहे वही करना। मियाँ हुस्सन ने राजा को आश्वासन दिया। रानी ने अपने पिता से कहा—हम युवा बहराम खाँ के पुत्र को अभिषिक्त और युवराज पद पर ज्येष्ठ दौहित्र (मुहम्मद) को स्थापित करो। दो तीन द्रोहियों का वध कर डालो और सबका नाश न होने पाये। पत्नी की बात सुनकर मियाँ हुस्सन क्रोधित हो गया।

राजा के स्वास्थ्य लाभ के लिये दानादि किया गया परन्तु सभी दान द्विजभक्ति रहित सयिद गण प्राप्त किये। राजा राजप्रासाद में स्त्रियों से घिर गया। वे किसी को राजा का दर्शन नहीं करने देती थीं। गारुडिका के कहे गये मन्त्र पाठ का निषेध करती थीं। वैद्यों की बतायी औषधि नहीं देतीं। और अपनी बनायी गोलियाँ खिलाती थीं। राजा के साथ कुछ अनिष्ट किया गया है। यह धारणा काश्मीर में जोर पकडती गया। स्त्री वैद्यों ने दम्भ भट्ट गारुडिका को बुलाया। राजा लौ० ४५६० सन् १४८४ ई० वैशाख मास कृष्ण पक्ष नवमी को बारह वर्ष पाँच मास राज्यकर मर गया। प्रातःकाल छत्र चामर युक्त यानपर आरोपित कर सेवक सहित सब सयिद लोग राजा के पितृ शवागिर ले गये। वहीं उसे मिट्टी दी गयी। सात दिनों तक सयिद लोग अपने ग्रन्थों (कुरानशरीफ) का वहाँ पाठ करते रहे।

• मुहम्मदशाह (स० १४८४-१४८६ ई० (तरंग चतुर्थ)

हुसेन शाह एवं रानी के मतों की उपेक्षा कर सुल्तान की मृत्यु के तीसरे दिन सयिदों ने परस्पर मन्त्रणा कर मुहम्मद खान को शीघ्र राज्य सिंहासन पर बैठाने का निश्चय किया। मुहम्मद खाँ केवल सात वर्ष का बालक था। उसका अभिषेक नाम महम्मद शाह रखा गया। सिंहासन के समीप बहुत पदार्थ एवं सामान रखे थे। परन्तु बालक सुल्तान का हाथ धनुष पर पड़ा। शकुनविदों ने यह देखकर घोषणा की। मण्डल में सर्वदा युद्ध होता रहेगा।

भूपाल मुहम्मद रजत आसन पर बैठाया गया। श्वेत वस्त्र पर कुमकुम लोहित वर्ण छपे बिन्दुओं युक्त परिधान पहने सयिद लोग उपस्थित थे। वह जैसे भावी द्रोह के कारण निकले सिक्त रक्त सदृश लगते थे। कनिष्ठ भ्राता होस्सन खाँ नृप के समीप उसी प्रकार शोभित हुआ जिस प्रकार शुक्र के समीप बृहस्पति। दौहित्र सुल्तान हो गया इस गर्व से सयिद लोग फूले नहीं समाते थे। अभिषेक उत्सव में लोगों को उनके पदानुकूल राजधानी प्रांगणमें परिधान प्रसाधन दिया गया। सयिद लोग उन्मत्त होकर घर में स्त्रियों एवं बाहर द्यूत लीला के व्यसनी बन गये। सयिदों से राजसेवक एवं प्रजा विरक्त होने लगी। आत्म सम्मानी सेवकों ने मन्त्रियों का आदर नहीं किया।

काश्मीर मण्डल में धनी सुख पूर्वक विचरण करते थे। किन्तु सैनिकों के कारण राजा एवं भृत्यों

ने उस सुखद स्थिति का लोप कर दिया। राजा हसनकालीन गायक वृन्द अनायास शोक से मूक हो गये। सैयिदों द्वारा पद्मियों का नाश होने लगा। सैयिद परस्पर मन्त्रणा करते थे। उनकी नीति के कारण मद्र तथा काश्मीर शंकित हो गये।

मद्रों का नेता परशुराम था। उसने विद्रोह का निश्चय किया। एक समय हसन से उसकी पुत्री मेरा ने कहा—'हे स्वामी, रानी का कोई काय करना है। शीघ्र आइये।' रविवार के दिन नृपालय नहीं जाना चाहिये। उसने स्वप्न में देखा था। तथापि स्वप्न की उपेक्षा कर, वह नृपालय गया। वहाँ पर सैयद हसन भी आगया। जोन राजानक आदि ने मद्रों को उभाड दिया। सैयिद वधने पर वे तत्पर हो गये।

अमृत वाटी में सैयिदों को एकत्रित जानकर, परशुराम मद्रो के साथ पहुँचा। सैयिद के भृत्य-'मन्त्रणा हो रही है' कहकर, बाहर ही द्वारपाल ताजक द्वारा रोक दिये गये। ताजक ने सैयिदों से कहा। 'आपके भृत्य भोजन सामग्री लूट रहे हैं।' सैयिदों ने शास्त्रधारी भृत्यों को रोकने के लिये भेजा। इसी समय जोन राजानक वाटिका में दूसरे मार्गसे प्रवेश कर गया। ताज दौवारिक अश्वारूढ़ होकर, दूसरी तरफ घूमने लगा।

मद्रों को देखकर, सैयिद शंकित हुए। मद्रों का देखकर सिंह भट्ट ईर्ष्या पूर्वक कहा—'यहाँ किस लिये आये हो ?' उन्होंने उत्तर दिया—'प्रति मुक्त पत्र नहीं मिला है।' उत्तर मिला—'प्रतिमुक्त पत्र आज मिल जायेगा।' पाथेय की बात उठाकर, एकान्त देखकर, परशुराम ने सिंह भट्ट का वध कर दिया। सैयिद भयभीत हो गये। चतुष्मण्डपिका में सिंह भट्ट के गिरते ही, सैयिद उठ खड़े हुए। परशुराम ने वहीं उनका वध कर दिया। तुन्दिल सैयिद हसन द्वार पर ही सैकड़ो प्रहारों द्वारा मार गया। मियाँ हस्सन दिवाल लाँघकर, भागना चाहता था। उसका दोनो पैर काटकर मार डाला गया। तीस की संख्या में सैयिद तथा उनके साथी वहीं मारे गये। गोहत्या जिस प्रकार घर में करने से सैयिदों को पाप का भय नहीं हुआ, उसी प्रकार सैयिदों का वध करने में परशुराम एवं उसके मद्र साथियों को नहीं हुआ।

मृगया के पश्चात् जिस प्रकार कुरंग आदि का सैयिद अगच्छेद कर देते थे। उसी प्रकार मद्रों ने सैयिदों का अगच्छेद कर दिया। उनके शरीर पर पड़ा बहुमूल्य वस्त्र लुण्ठकों ने ले लिया। वे अनाथ सदृश नंगे भूमिपर पड़े रहे। सैयिदों के अनुचर एवं साथी भाग गये।

मियां मुहम्मद राजगृह ■ आकर युद्ध छेड दिया। राजद्वार जला दिया गया। राजप्रासाद लूटा जाने लगा। विद्रोही परशुराम आदि ने आग लगी देखा। वाटिका से निकलकर, राजधानी प्रांगण में आ गये। मद्र लोग राजकीय अश्वों को ले लिये। बाहर निकल गये। मद्र सुरक्षा की दृष्टि से अन्य काश्मीरी विद्रोहियों के साथ वितस्ता पार चले गये।

दूसरी तरफ मियाँ मुहम्मद ने द्वारपाल ताज एवं पाज का वध कर दिया। वे दोनो भाई थे। बहराम के पुत्र की हत्या कर दी गई। उसके शव को प्राप्तकर, उसकी माता ने तीन दिन तक, शव को रखकर, दफन कर दिया। वह जीवन पर्यन्त पुत्र के कब्र के पास रहकर, जीवन व्यतीत की। पाजभट्ट का भी वध कर दिया गया। विद्रोहियों का नदी पार गया सुनकर, अली खान आदि विद्रोहियों का पीछा किये। जल्लाल ठाकुर ने रक्षा की दृष्टि से नौका सेतु काट दिया। काश्मीरी लोग मद्रों से सुलह कर लिये। सैयिदों ने विजप्रस्थ में शिविर लगाया। सैयिदों ने प्रचुर धन देकर, कारीगर एवं ब्रामाणों को शस्त्र धारण करा दिया।

काश्मीरी तथा मद्र जो पार गये थे, जाल डामड में शिविर लगाये। नगर में मद्रों के साहस एवं पराक्रम का वृत्तान्त सुनकर, सब राष्ट्रों से शस्त्रधारी आने लगे। काश्मीरियों के पास कोश नहीं था।

अतएव काश्मीरी नाव से धान बाहर से लाकर सैनिकों के प्रवास वतन अदा किये। प्रतिदिन पाँच-सात लोग मरते थे। दोनों दलों में संघर्ष होता था।

सैयिद एवं काश्मीरियों के संघर्ष से चौथा तरंग भरा है। परिखा आदि तैयार कर नवीन रण कौशल के साथ संघर्ष होता रहा। इस युद्ध में क्रूरता का जो ताण्डव हुआ उसे देख एवं सुनकर मानवता लज्जित हो जाती है।

काश्मीरियों ने पक्ष मजबूत करने के लिए जहाँगीर मार्गेश को बुलाया। लेखों से प्रेरित होकर मार्ग पति ने पर्णोत्स मार्ग से काश्मीर में प्रवेश किया। उसका आगमन सुनकर सैयिद कोप उठे। सैयिदों ने सन्धि की इच्छा प्रकट की। मार्गेश ने फारसी लिपि में पत्र भेजा। आरोप लगाया— बहराम खां के के पुत्र की हत्या की गई। नुरुल्ला आदि का वध किया गया। शिशु राजा का कोष लूट गया। मन्त्रणा के पूर्व सैयिद शस्त्र त्याग दें। बाल राजा का कोष यथास्थान रख दिया जाय। काश्मीरी राजकाज पूर्ववत करें।

सैयिदों ने शर्त नहीं मानी। सन्धि वार्ता टूट गई। दोनों दलों में पुनः संघर्ष होने लगा। संघर्ष का लाभ उठाकर तस्कर डाम्ब आदि नगर में लूटपाट करने लगे। कभी सैयिद पक्ष जीतता तो कभी काश्मीरी। संघर्ष मध्य ही आकाश में एक दीप्त उल्का उत्पन्न हुई। वह ज्वाला पुंज उत्तर से दक्षिण जा रहा था।

सैयिदों ने पंजाब से तातार खां की सहायता प्राप्त की। तातार खां ने तुरुष्कों की सेना भेज दी। किन्तु वह सेना संघर्ष में नष्ट हो गई। दो सहस्र विदेशी सैनिक काश्मीरियों द्वारा मारे गये। वितस्ता के दोनों तटों पर काश्मीरी तथा सैयिद सेनायें थीं। दोनों में निरन्तर संघर्ष होता रहा। दोनों दलों में किसी की भी विजय में जनता को सन्देह था। काश्मीरियों ने तीन मार्गों से सैयिदों पर आक्रमण किया। संघटित सैन्य भेद करने का निश्चय किया। काश्मीरियों ने अपने तथा अन्य काश्मीरी सैनिकों में भेद जानने के लिए अपने सैनिकों के सिरों पर पत्र माला रख लिये।

मद्रों में व्यूह बद्ध युद्ध किया। घनघोर युद्ध के पश्चात सैयिद पलायित हो गये। सैयिदों एवं काश्मीरियों का यह संघर्ष लौ० ४५६० = सन् १४८४ ई० श्रावण मास, प्रतिपद को हुआ था। काश्मीरियों की विजय हुई। युद्ध में दो सहस्र सैनिक मारे गये। बाल राजा सैयिदों के शिकंजे से निकलकर काश्मीरियों के प्रभाव में आ गया।

विजय पश्चात श्री सैयिद हमदान खानकाह का जीर्णोद्धार हुआ। अली खाँ आदि सैयिदों की सम्पत्ति हरण कर, उन्हें काश्मीर से निर्वासित कर दिया गया। परशुराम काश्मीरी मन्त्रियों से सत्कृत होकर मद्र देश लौट गया।

जिन लोगों ने काश्मीरियों का पक्ष लिया था वे सैयिदों के चले जाने पर योग्यतानुसार सरकारी पद ग्रहण किये। जहाँगीर ठाकुर नामक के मियाँ हस्सन की सामग्री तथा उसके पुत्र ज्हर आदि की जागीर प्राप्त किये। जहाँगीर ने मांगिल राष्ट्र तक सूर्या आदि प्रमयों को ले लिया। सैफ डामर मठिकाश्रम आदि राष्ट्रों का स्वामी हुआ। उसके सहोदर भाई अन्य ग्रामादि लिये। जोन राजानक परिहासपुर का स्वामी बना। देश में ठाकुर डामर तथा राजानक तीन दल काश्मीरियों के थे। वे सब रचनात्मक कार्यों में लग गये।

सैयिदों के काश्मीरी रंगमंच से लुप्त होने पर काश्मीरी परस्पर लड़ने लगे। राजकर्मचारी पिशुन होते हैं। उन्होंने मन्त्रियों में परस्पर मन मुटाव उत्पन्न कर दिया। मार्गपति को वृद्धि एवं अधिकार बहुतों

को पसन्द नही आया। मार्गपति ने जब इस प्रकार की बातें सुनी, तो वह राजकार्य से विरक्त हो गया। क्रोधित होकर, तटस्थ रहने लगा। जोन राजानक मन्त्रियों में क्रूर हो गया। वह स्वार्थ सिद्धि के लिए जनता को पीडित करने लगा।

इसी समय यात्रा के लिए विदेश गये, एद राजनक एव ठक्कुर अहमद, मार्गेश के दर्शन ब्याज से श्रीनगर में प्रवेश किये। मार्गेश भयभीत हो गया। उसने सेफ डामर सहित विदेशी सैनिको को बुलाकर सशंकित रात्रि व्यतीत किया। दूसरे दिन अहमद ठाकुर ने जोन राजानक का वध कर दिया। सेफ डामर भयभीत होकर, शस्त्र समर्पित कर दिया। जल्लाल ठाकुर राजप्रासाद के प्रागण में था। द्वारपालों ने अन्त:पुर में उसका वध कर दिया। मसूद डामर आदि ने नौका पुल काट दिया। जाल डागर में पूर्वकालीन संघर्षके समान सेना शिविर लग गये।

आदम खाँ का पुत्र फतह खाँ था। वह राज्य प्राप्ति की लालसा से काश्मीर में लौकिक ४५६१ वर्ष = सन् १४८५ ई० श्रावण मास में प्रवेश किया। उसका जन्म मद्र मण्डल में शिवरात्रि के दिन हुआ था। आदम खाँ की मृत्यु माणिक्यदेव के पक्ष से लडते, तुरुष्को द्वारा हुई थी। मातामही के घर उसका लालन-पालन हुआ था। कालान्तर में तातार खाँ द्वारा रक्षित, कुछ दिन जालन्धर में था। सैयिदो के भय से बहिर्गत, जहाँगीर मार्गेश ने पितामह जैनुल आबदीन का राज्य प्राप्त करने के लिये, उसके पास छलपूर्ण पत्र भेजा। तातार खाँ की मृत्यु पर, उसके पुत्र हस्सन खाँ ने फतह खान का कुछ समय तक पालन-पोषण किया था।

फतह खाँ को शृंगारसिंह राजपुरी लाया। राजपुरी पति मार्गेश का द्वेषी था। जोन राजानक के मृत्यु पश्चात्, एद राजानक, ठक्कुर दौलत, आदि डामरो ने खान का पक्ष ग्रहण किया। मार्ग रक्षाधिकारी मसूद खाँ वैवाहिक सम्बन्ध से बद्ध होने पर भी, फतह खान का पक्ष ग्रहण किया। देश से जितने लोग निर्वासित थे, सब फतह खान से मिल गये। फतहशाह ने जहाँगीर के पास दूत भेजा। उसमें पत्र का स्मरण दिलाया गया। मार्गेश ने प्रति उत्तर भेजा—'काश्मीर भूमि पार्वती हैं। उसका राजा शिवांशज हैं। उस पर तपस्या द्वारा राज्य प्राप्त होता है, पराक्रम से नही। मुहम्मद शाह को दूसरो ने राज्य पर बैठाया हैं। मैं केवल उसकी रक्षा कर रहा हूँ।' जहाँगीर ने अविलम्ब मसूद से रक्षाधिकार लेकर, बहराम नायकादि को दे दिया।

दुर्व्यवस्था का लाभ उठाकर, खस, डोम्बादि देश और मडव राज्य में उपद्रव करने लगे। फतह खान से राजा की सेना युद्ध के लिये सन्नद्ध थी। पूर्व कालीन सैयिद विप्लव की अपेक्षा खान विप्लव बडा था। अधिक लोग चोरों द्वारा लूट लिए जाते थे। बलवान द्वारा निर्बल सताये जाते थे। देश में अराजकता व्याप्त हो गयी थी। लोग गोधन आदि लेकर, दक्षिण दिशा चले गये। उभय पक्ष की सेना खेरी एव अर्धवन राष्ट्र में प्रवेश की। सेना को प्रसुप्त जानकर, राज सेना शिविर पर, जेरक आदि ने आक्रमण किया। फतह खाँ विजय से प्रसन्न हो गया। भाग सिंह जिसके कारण फतहखान तुरुष्क देश से आया था, उस स्वपक्षी को किसी ने मार दिया।

फतह खाँ आगे बढकर, मल्ल शिला नामक स्थान पर, शिविर लगाया। उसके सैनिकोंने कराल देश में राज सैनिकों को परास्त कर, वहाके निवासियो को लूट लिया। मार्गपति ने बाल भूपति को साथ लिया। विजय के लिए प्रस्थान किया। नागरिक सम्पत्तियाँ लूट-पाट भय से नगर से हटाकर ग्रामों में रख दिये। नगर लूट लिया गया।

मार्गपति विदेशी सैन्य के गर्व मे, गुसिकोट्टार में शिविर स्थापित किया। सेना का तीन भाग किया। कल्याणपुर फतह खान गया है, सुनकर उस दिशा में प्रस्थान किया। दामयामा के समीप, खान मरग में फतह खान के समीप, स्थित हो गया। दोनों पक्षों में युद्ध आरम्भ हुआ। फतह खान के सैनिक विजय प्राप्त किये। किन्तु मूल मे मार्गपति के सम्मुख आ गये। मार्गपति वीरों ने हुसेन मीर आदि को पहचान लिया। भट्ट, गोरज सहित अनेक वीर मार्गपति के सैनिको द्वारा मारे गये। मार्गेश ने अपूर्व धैर्य एवं स्थिरता का परिचय दिया। उसके पक्ष के जो लोग तटस्थ होकर, दूर चले गये थे, मिथ्या घोषणा—'फतह खान बन्दी बना लिया गया है' सुनकर पुनः उससे मिल गये।

गवक आदि खान के शिविर को लूट लिये। शृंगारसिंह आदि वीर भागकर भैरवन मार्ग से अपने अपने स्थानो पर चले गये। राजपुरी सेना को अभयदान द्वारा गवक आदि ने रक्षा की। भागती सेना को खसों तथा डोम्बो ने लूटा। शीत एवं भूख से अनेक सैनिक मर गये।

फतह खाँ विवेकी पुरुष था। रणनीति जानता था। परन्तु उसके सैनिक उसमे अच्छे नही थे। कल्याणपुर के निकट दोनों सेनाओ में पुनः युद्ध हुआ।

जहाँगीर बाल राजा को लेकर, जमाल मरग गया। ताज भट्ट ने मगल नाड ग्राम जला दिया। काश्मीरियों ने दिग्विजय के समय काश्मीर के बाहर जिस प्रकार दाह एवं लुण्ठन कार्य किया था, वैसा ही काश्मीर में भी हुआ। फतहशाह का सफलता न मिली। त्रस्त एवं त्राण रहित हो गया।

दो मास पश्चात् फतह खान पुनः राज्य प्राप्ति की इच्छा से ससैन्य काश्मीर में प्रवेश किया। सूरपुर पहुँच गया। जहाँगीर तुरन्त बाल राजा का लेकर सेना सहित श्रीनगर से निकला। गुसिका स्थान पर उसने शिविर लगाया। रात्रि में गवक राजपुत्र शिविर से भाग गया। सूरपुर में जेरक आदि वीरों ने कारागार खोल दिया। बन्दी मुक्त हो गये। सेफडामर आदि विजयेश्वर पहुँचे। सेफडामर फतह खाँ के समीप पहुँच कर, उसके मन्त्रियों में श्रेष्ठ हो गया।

मार्गेश जहाँगीर ने सन्धि इच्छा से, फतह खाँ के पास सैद बहाव आदि प्रमुखों को भेजा। एव राजानक, रिग डामर, विद्वान केशव सन्धि के लिए राजपुरी पति का राजा के समक्ष ले गये। इसी बीच मार्गपति ने गदाय रावुत्र द्वारा शृंगार सिंह को आश्वासन एवं धन देकर फाड लिया। फतह खान के *अनुरागों द्वारा भेद बुद्धि के कारण राजपुरी पति हट गया। सेना सघर्षशील हो गई। गवक, शृंगार सिंह आदि* त्रस्त होकर, राजपुरी चले गये। फतह खाँ असफल होकर जैसे आया था, लौट गया। मार्गेश पीडा से व्याकुल तथा विरक्त दो मास अपने निवास में पड़ा रहा। मार्गेश को बुद्धि पुनः भ्रमित हा गई। उसने निष्कासित सैयिदों को सहायतार्थ बुलाया, जिन्हें निकाल चुका था।

फतह खाँ ने अम्ब वाट में रहते हुए, खसो का दमन किया। उसने जिस प्रकार सताइस विषयों को *काश्मीर में त्रस्त किया था, इसी प्रकार सिन्धुरी लागो को परेशान किया।* मद्र मण्डल के तुरुष्को को विह्वल कर दिया। उसने मद्र मण्डल जीतकर राजपुरी पति को दे दिया।

चैत्रमास में नायक के निवास स्थान पर फतह खाँ पहुँचा। फतह खाँ शत्रु संहार हेतु दृढ संकल्प था। पर्वत शिखर पर स्थित हो गया। इसी समय मार्गपति न बन्दी जेराक का वध कर दिया।

ज्येष्ठ मास में अनिष्ट की आशका से मार्गेश दुःखी हो गया। बाल नृप मल्ल शिला पर निवास करने लगा। इस समय नगर में महँगाई बढ़ गयी। पचीस दीनार का डेढ पल नमक मिलता था।

फतह खाँ लो० ४४६२ वर्ष=सन् १४८६ ई० में पुन काश्मीर विजय की आशा किया। फतह खाँ भैरव गलस्थान में पहुच गया। मार्गेश बाल राजा सहित मार्गावरोध के लिये शूर पुर पहुँचा। श्रावण मास में फतह खाँ ने पर्वत पार किया। काचगल मार्ग से बढा। गुसिकोट्टर स्थान में ताज भट्ट आदि का सैन पुंज, वायु के समान फतहखान के सैन्य सागर का क्षुब्ध कर दिया। मार्गपति शीघ्र सेना एव बाल नृप सहित युद्ध करने के लिय आया। कुछ सैयिद सैनिक मारे गये। गुसिकोट्टर में सैनिक हताहतों की सख्या सैयिद तथा फतह खाँ के प्रथम युद्ध से अधिक थी। लूट पाट होने लगी। सेफडामर तथा जहांगीर मर्गेश का सामना हो गया।

जहाँगीर घायल हो गया। मार्गपति का साथियो ने साथ त्याग दिया। परन्तु एक अश्व ने मार्गपति की रक्षा की। विदेशी सैनिको ने इसी समय विद्रोह किया। खान जैसे आया था, वैसे ही वापस चला गया।

इसका लाभ उठाया गया। अफवाह फैला दी गयी, फतह खाँ बन्दी बना लिया गया'। सैफडामर युद्ध विमुख हो गया। कुछ समय पश्चात वास्तविकता मालूम हुई। सैफ डामर शूर पुर मार्ग स फतह खाँ के पास पहुँचा। तृतीय बार भी काश्मीर विजय में फतह खाँ विफल रहा। वह पाछे हटता पूछ पहुँच गया।

मन्त्रियो एव सामन्तो की निष्ठा सन्देहास्पद थी। मन्त्रि मण्डल स्वेच्छाचारी था। जनता नियन्त्रण-हीन थी। फतहखान का पक्ष लेने के लिये सभी उत्सुक थे। पुरवासी अनुराग हीन थे। राजगृह कोश रहित था। मार्गेश शस्त्राघात की पीडा से व्याकुल था।

सैनिको के साथ फतह खाँ चौथी बार राज्य कामना से पटिकासार पर्वत से लौटा। मार्गेश ने गाँवो में आग लगी देखा। भीगिल त्याग कर, सेना सहित युद्धार्थ आया। बाल नृप के साथ सायदेवत पर, सेना स्थित किया। रात्रि काल में सैफ डामार ने आक्रमण किया। मार्गपति की सना भंग कर दिया। फतह खाँ के साथ कम सना थी। परन्तु काश्मीर सेना के मनोबल तोडने में सफल हो गया। सैफ डामर से अनिष्ट की आशका देखकर, मार्गपति नगर में आगया। नगर रक्षा की दृष्टि से वितस्ता पुल तोड दिया गया। पीरज प्रतिहारादि मडव राज्य से आये। राजा का पक्ष त्याग दिये। खान पक्ष का आश्रय ग्रहण किये। नोस-राजानक सहित मियां मोहम्द ने राजसेना से विद्रोह कर दिया। बहुन के पुत्र राजा की किंचित मात्र चिन्ता न की।

राजसेना नष्ट हो गयी। मार्गेश जहाँगीर भयभीत होकर, जल्लाल ठाकुर के यहाँ गया। एक भूमिगृहा में पहुँच कर जैसे स्मृति हीन हो गया। खसो ने जनपदो को लूट लिया। भयाकुल नर-नारी नगी भाग गयी। पूर्वापकार का स्मरण कर, बली लोगो की अबलाओं को मार डाला। दरिद्र लूट पाट से धनी तथा धनी दरिद्र हो गये। राजा के बल सहित नष्ट हो जाने पर, वे राजवल्लभ जन, वे सुन्दर स्त्रियाँ एव वे सेवक कथा दोप हो गये। (४६३६) वह राजा दो वर्ष सात मास नृपासन पर आसीन था। लो०-४५६२=सन् १४८६ ई० आश्विन मास द्वितीया को राज्याच्युत हुआ। फिर्य पाल ने मुहम्द शाह को विशप्रस्थ में पकडकर शत्रुगण को समर्पित कर दिया। राजधानी के प्रागण में, पदच्युत राजा की सम्पूर्ण वृत्ति निश्चित कर, रक्षा भार, डामरो को दिया गया।

उपद्रव के समय खसो ने दाह के अतिरिक्त खूब लूट-पाट की। करोडो के धनी वणिक, तृण से तन ढककरा लज्जा की रक्षा किये। 'यदि जीत हो गयी, तो तीन दिन तक लूट की छूट दी जायगी'—इस आश्वासन देने के कारण, मन्त्रीगण लूटपाट के समय निरपेक्ष बैठे रहे। जनता की रक्षा नही किया।

इस राजा विपर्य के सम्बन्ध में श्रीवर राज तरंगिणी का अन्तिम तीन श्लोक लिखता है—'वह राज्य विपर्यय सार्वजनिक कोशरूप सर्प को दूर करने के लिये नागाडा, द्वेषी प्राचीन सेवक रूप कमल वन के लिये हेमन्त का उदय, भूपति के पृथ्वी रूप भद्र गोलक (छत्ता) पर स्थित सरघा (मधुमक्खी) समूह के लिये धूमोद्गम तथा नव सभा रूप उद्यान के लिये वसन्त ऋतु था। अपने आचार विपर्यय या अन्याय से धनोपार्जन के कारण, सज्जनों के साथ द्रोह करने अथवा अच्छे लोगों के वर्ण शंकरता के कारण, शिशु राजा के सामर्थ्य अथवा मन्त्रियों के द्वेष के कारण, सुस्सल भूपति के राज्यकाल के समान, राज्य में प्रजा का यह उपद्रव हुआ। जिसने सैयिदों सघंष में रण रसिकता के कारण बन्धन में स्थित, लोगों को मुक्त कर दिया। जिस सिद्धादेश अधिकारी ने शत्रुओं को जीतकर, प्रसिद्ध प्राप्त की जिसने शत्रु समुदाय का नाश करके, राजा फतह के राज्य को विस्तृत कर दिया, डामरेन्द्र श्रेष्ठ सचिवपति, वह अद्वितीय सैफ मल्लिक विजयी हो।' (४:६५४-६५६)



श्रीवर वर्णित सुल्तान—प्रथम खण्ड

क्रम	राजक्रम	श्लोक	सुल्तान	राज्यकाल	पृष्ठ
१	८	१ तरंग	जैनुल आबदीन	सन् १४२०–१४७० ई०	१–२५१
२	९	२ तरंग	हैदर शाह	सन् १४७०–१४७२ ई०	२५२–३११

पाठ पुस्तक का आधार कलकत्ता संस्करण राजतरंगिणी है। श्री दुर्गाप्रसाद संस्करण तथा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय, हिन्दू विश्वविद्यालय एवं अन्य स्थानों से प्राप्त पाण्डुलिपियों से भी प्रस्तुत संस्करण में सहायता ली गयी है।

श्लोकानुक्रमणिका, नामानुक्रमणिका, शुद्धिपत्र तथा आधार ग्रन्थों की तालिका द्वितीय खण्ड में दी जायगी।

वंशावली (शाहमीर)

पार्थ

बभ्रु वाहन

कुरुशाह

ताहराल

(१) शाहमीर (शमसुद्दीन १)

(२) जमशेद (जयसर) | (३) अलाउद्दीन (अल्वेश्वर) = कम्पनेश्वर लक्ष्म की लक्ष्या | गुहरा कोटराज

पुत्र | कन्या = तैलाक शूर

(४) शिहाबुद्दीन = लक्ष्मी पुत्री अवतार शिर शाटक, शीर अशामक | (५) कुतुबुद्दीन (कुदेन, हिन्दल, हिन्द, हिन्दूशा) = पत्नी सुभटा | कन्या = पति कुरसा कम्पनेश्वर

हसन खाँ | अली खाँ

(६) सिकन्दर बुतशिकन = पत्नी (१) शोभा (२) मेरा | हैबत खान | कन्या = मुहम्मद

फिरोज (शोभा पुत्र) | महमूद (शोभा पुत्र) | (७) अलीशाह (मेरखान) (मेरा पुत्र) | (८) जैनुल आबदीन (मेरा पुत्र) = बोधा खातून | मुहम्मद खाँ (मेरा पुत्र)

आदम खान | (९) हैदर शाह (हाजी खान) | बहराम खान | जसरथ

(१२) फतह शाह | (१०) हसन शाह

सिकन्दर खान | हबीब खान | (१४) नाजुक शाह | (११) मुहम्मद शाह | हुसैन | युसुफ

हाजी हैदर | सलीम खान | (१३) इब्राहिम | (१५) शमसुद्दीन (द्वितीय) | (१६) इस्माइल शाह

(१७) हबीब शाह

जैनराजतरंगिणी

प्रथम खंड

अथ

श्रीवरपण्डितकृता

जैनराजतरंगिणी

प्रथमतरंगः

प्रथमः सर्गः

शिवायास्तु नमस्तस्मै त्रैलोक्यैकमहीभुजे ।
अशेषक्लेशनिर्मुक्तनित्यैश्वर्यदशाजुषे ॥ १ ॥

१ अशेष क्लेश, निर्मुक्त, नित्य ऐश्वर्य से युक्त, त्रैलोक्य महीभुज, उस शिव को नमस्कार हो—

प्रेम्णार्धं वपुषो विलोक्य मिलितं देव्या स स्वामिनो
मौलौ यस्य निशापतिर्नगसुतावेणीनिशामिश्रितः ।
आस्ते स्वाम्यनुवर्तनार्थमिव तत् कृत्वा वपुः खण्डितं
देयादद्वयभावनां स भगवान् देवोऽर्धनारीश्वरः ॥ २ ॥

उपोद्घात

२ प्रेम से स्वामी के शरीर का अर्धांग, देवी से मिला देखकर, नगसुता की वेणी रूप निशा से मिश्रित, निशापति स्वामी का अनुवर्तन करने के लिये ही मानो शरीर खण्डित कर, जिसके शिखर स्थित हैं, वह भगवान् देव अर्धनारीश्वर[1], अद्वैत[2] भावना दें ।

पाद-टिप्पणी

पाठभेद बम्बई में 'अथ श्रीवरकृता तृतीया तथा प्रथम तरंग के नीचे 'प्रथम सर्ग' लिखा मिलता है।

पाद-टिप्पणी

२ (१) अर्धनारीश्वर अर्धनारीश्वर की विभिन्न मूर्तियां भारतवर्ष तथा दक्षिण-पूर्व एशिया में मिलती हैं। एक प्रभावोत्पादक मूर्ति एलोरा के कैलाश मन्दिर में है। अब तक मिली सबसे प्राचीन मूर्ति मथुरा संग्रहालय में कुषाणकालीन प्रथम शताब्दी की है। यह पुरुष-प्रकृति के द्वैत रूप के स्थान पर अद्वैत का रूप है। जहाँ नर-नारी, शक्ति एवं शिव का रूप मिलकर एक हो जाता है। पुराणों की मान्यता के अनुसार शक्ति की उपासना करने के कारण शिव का अर्धनारीश्वर रूप हो गया है (ब्रह्मा० २ २७ ९८, ४ ५ ३०, ४४ ४८)। मत्स्य-पुराण में अर्धनारीश्वर के रूप तथा उनके वस्त्रों आदि का वर्णन किया गया है (मत्स्य० . ६० ३५, १९२ २८, २६० १-१०)। कथा है कि ब्रह्मा ने प्रजा उत्पत्ति के लिये तपस्या की। शंकर प्रसन्न

वन्द्यास्ते राजकवयः पदन्यासमनोहराः ।
ख्याता ये सरसैः शब्दैः क्षीरनीरविवेकिनः ।। ३ ।।

३ पदन्यास के कारण मनोहारी, क्षीर-नीर विवेकी, वे राजकवि[1] वन्दनीय हैं, जो सरस शब्दों के कारण प्रख्यात हुये हैं।

अनित्यतान्धकारेऽस्मिन् स्वामिशून्ये महीतले ।
काव्यदीपं विना कः स्याद् भूतवस्तुप्रकाशकः ।। ४ ।।

४ अनित्यता रूप अन्धकार से युक्त, स्वामिशून्य, इस महीतल पर, काव्य-दीपक के अतिरिक्त, कौन अतीत[1] वस्तु को प्रकाशित कर सकता है ?

येषां करोमि वपुरस्थिरमत्र राज्ञां
तेषामयं जगति कीर्तिमयं शरीरम् ।
आकल्पवर्ति कुरुते किमितीव रोषाद्
धाताहरद् ध्रुवमतः कविजोनराजम् ।। ५ ।।

५. मैं जिन राजाओं के नश्वर (अस्थिर) शरीर की रचना करता हूँ, यह उन्हीं के कीर्तिमय[1] शरीर को जगत में कल्प पर्यन्त स्थायी करता है। इसीलिये मानो क्रोध में विधाता ने कवि जोनराज[2] को हर लिया।

हुये। उनके शरीर से अर्धनारी-नटेश्वर उत्पन्न हुआ। (शिव : शत० : ३)। स्कन्द पुराण में कथा है कि महिषासुर-वध पश्चात शंकर प्रसन्न होकर पार्वती के पास अरुणाचल पर आये। पार्वती शंकर के वामाग में लीन हो गयी। वही रूप अर्धनारीश्वर है। (स्कन्द० : १ : २ : ३-२१)।

पाद टिप्पणी

३ (१) राजकवि : यहाँ राजकवि शब्द से राजहंस अर्थ प्रतिभासित होता है। पदन्यास अर्थात कदम रखने के कारण मनोहारी एवं नीर-क्षीर-विवेकी राजहंस जिस प्रकार प्रशस्य है उसी प्रकार युक्त कवि भी पदन्यास, शब्द विन्यास, शब्द रखना, कदम रखना, पग बढ़ाना। कवि चतुर है शब्दों को रखने और हंस चतुर है पगों के रखने में। हंस की चाल क्षीर-नीर-विवेकी उचित एवं अनुचित का विवेकी होता है। जोनराज राजकवि था। उसकी प्रशंसा श्रीवर ने (जैन० : ५, ६, ७) किया है। श्रीवर स्वयं राजकवि था। उसके समय तथा उसके पूर्व अन्य राजकवि हुये होंगे। उनका नाम नहीं देता। कल्हण निःसन्देह राजकवि नहीं था। प्राचीनकाल में राजा तथा सुलतान लोग अपनी सभा तथा दरबार में श्रेष्ठ कवियों को रखते थे। उन्हें राजकवि की उपाधि दी जाती थी। आज भी यह प्रथा प्रचलित है। राजकवि के स्थान पर राष्ट्रकवि शब्द प्रचलित हो गया है। ब्रिटेन में उन्हें 'पोएट लारिएट' कहते हैं।

पाद-टिप्पणी

४ (१) अतीत : कल्हण के (१ : ४) श्लोक के भाव की छाया उक्त श्लोक में मिलती है—
कोऽन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः ।
कविप्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः ।।

पाद-टिप्पणी :

५ (१) कीर्ति : 'कीर्तिमय शरीर' यही भाव कल्हण के श्लोक (रा० : १ : ३) में है। कल्हण ने 'यशःकाय' शब्द का प्रयोग किया है। कीर्ति का

श्रीजोनराजविबुधः कुर्वन्नराजतरङ्गिणीम् ।
शायकाग्निमिते वर्षे शिवसायुज्यमासदत् ॥ ६ ॥

६ राजतरंगिणी[1] की रचना करते हुए, विद्वान जोनराज ने ३५ वें वर्ष शिवसायुज्य प्राप्त किया ।

शिष्योऽस्य जोनराजस्य सोऽहं श्रीवरपण्डितः ।
राजावलीग्रन्थशेषापूरणं कर्तुमुद्यतः ॥ ७ ॥

७ इसी जोनराज का शिष्य मैं श्रीवर[1] पण्डित राजावली[2] ग्रन्थ के शेष को पूर्ण करने के लिये उद्यत हूँ ।

क्व काव्यं मद्गुरोस्तस्य क्व च मन्दमतेर्मम ।
वर्णमात्रेण मक्कोल घनसारायते कथम् ॥ ८ ॥

८ कहाँ मेरे उस गुरु का काव्य और कहा मन्दमति मेरा वर्णमात्र की समानता से मकोल (खड़िया) क्या कपूर हो सकता है ?

राजवृत्तानुरोधेन न काव्यगुणवाञ्छया ।
सन्तः शृण्वन्तु मद्वाचः स्वधिया योजयन्तु च ॥ ९ ॥

९ सज्जन लोग राज-वृतान्त के अनुरोध से, न कि काव्य-गुणो की इच्छा से, मेरी वाणी सुनें और अपनी बुद्धि से योजित करें ।

पर्यायवाची है । कल्हण तथा श्रीवर दोनो का भाव एक ही है । श्रीवर के पश्चात पचम राजतरगिणी के रचनाकार शुक ने 'कीर्ति' शब्द का प्रयोग किया है। उसने कल्हण तथा जोनराज दोना के भावो को श्लोक १ : १ ४ मे प्रकट किया है ।

पाद-टिप्पणी

पाठभेद बम्बई ।

६. (१) राजतरंगिणी जोनराज के ग्रथ का नाम श्रीवर 'राजतरंगिणी' देता है। जोनराज का इतिहास इसी शीर्षक से श्रीवर के समय प्रसिद्ध था। श्रीवर जोनराज का शिष्य था। उसकी बात साधिकार मानी जायगी ।

(२) पैंतीसवें वर्ष सप्तर्षि ४५३५ = सन् १४५७ ई० = विक्रमी १५१६ शक १३८१ । श्रीवर जोनराज की मृत्यु का निश्चित वर्ष देता है ।

पाद-टिप्पणी .

७ (१) श्रीवर श्रीवर स्वय स्वीकार करता है। जोनराज का शिष्य था । श्रीवर के इस उल्लेख से जोनराज के जीवन पर प्रकाश पडता है । जोनराज पुरातन-परम्परा के विद्वानो के समान शिष्यो को शिक्षा भी देता था । जोनराज अपने समय का निश्चय ही प्रकाण्ड विद्वान् था, अन्यथा श्रीवर जैसा राजकवि स्वय स्वीकार न करता कि वह जोनराज का शिष्य था ।

(२) राजावली जोनराजकृत राजतरगिणी का नाम श्रीवर ने यहाँ राजावली दिया है । शुक ने जोनराज तथा श्रीवर दोनो के ग्रन्थों का नाम 'राजावली' दिया है । वह स्पष्ट लिखता है—'श्री जोनराज एव विद्वान श्रीवर ने बासठ वर्ष यावत मनोरम दो 'राजावली ग्रन्थ' ग्रथित किये (शुक :

अथवा नृपवृत्तान्तस्मृतिहेतुरयं श्रमः ।
क्रियते ललितं काव्यं कुर्वन्त्वन्येऽपि पण्डिताः ॥ १० ॥

१० अथवा नृप-वृतान्त के स्मरण[1] हेतु यह श्रम किया जा रहा है। ललित काव्य की रचना अन्य पण्डित करें।

तत्तद्गुणगणादानात् स्वसम्पत्तिसमर्पणात् ।
पुत्रवद्वर्धितो राज्ञा ग्रामहेमाद्यनुग्रहैः ॥ ११ ॥

११ तत्-तत् गुणों के आदान तथा स्व-सम्पत्ति के प्रदानपूर्वक, ग्राम, हेम[1] आदि अनुगृहों से राजा द्वारा पुत्रवत् (मैं) संवर्धित किया गया।

अतो वाञ्छन्नमेयस्य तत्प्रसादस्य निष्कृतिम् ।
सोऽहं ब्रवीमि तद्वृत्तं तद्गुणाकृष्टमानसः ॥ १२ ॥

१२ अतएव उसके असीम प्रसाद की निष्कृति (निरन्तर) की अभिलाषा से, उसके गुणों द्वारा आकृष्ट-मन होकर, मैं उसका वृतान्त वर्णन करता हूँ।

एकया तद्गुणाख्यानं जिह्वया वर्ण्यते कियत् ।
रोमवत् कोटिशश्चेत् स्युस्तास्तदा मद्गिरः क्षमाः ॥ १३ ॥

१३ केवल एक जिह्वा से उसका गुणाख्यान कितना किया जा सकता है? रोमवत् यदि कोटि-कोटि जिह्वाएँ हों तब मेरी वाणी समर्थ हो सकती है।

सत्यं नृपाम्बरेऽमुष्मिन् विपुले विमलाशये ।
गुणतारापरिच्छेदे न शक्ता भारती मम ॥ १४ ॥

१४ विपुल एवं विमलाशय, इस नृपाकाश, जिसमें गुण ताराओं के विवक (सीमा निर्धारण विभाजन) करने में वास्तव में मेरी वाणी समर्थ नहीं है।

रा० : १ : ६)। जोनराज द्वारा लिखित राजतरंगिणी की जो प्रतिलिपियाँ मिली हैं, उनके इतिपाठ में 'राज तरंगिणी' ही लिखा है। राजावली से तात्पर्य इतिहास ग्रथा में है।

पाद टिप्पणी :

१० (१) स्मरण : श्रीवर पण्डित ने निरहकार भाव प्रकट किया है। वह अपने ग्रन्थ को काव्य नहीं मानता। उसकी कामना है कि सुयोग्य पण्डितजन इस राज-वृतान्त के आधार पर, ललित काव्य रचना द्वारा साहित्य भण्डार पूर्ण करें। वह अपने आश्रयदाता जैनुल आब्दीन का वृतान्त केवल इसलिए लिपिबद्ध कर रहा था कि ऐसा न हो कि वह भी अन्य राजाओं के समान विस्मृति-सागर में डूब न जाय, जिस शंका को कल्हण (१ : १४) तथा जोनराज (जोन : ४, ५, ६) दोनों ने प्रकट किया है।

पादटिप्पणी :

११ (१) हेम : श्रीदत्त ने होम यज्ञ अनुवाद किया है। यह पाठभेद के कारण हुआ है। 'हेम' का 'होम' भी पाठभेद मिलता है।

श्रीवर ने राजा के अनुग्रहों का वर्णन किया है। राजा श्रीवर को पुत्रतुल्य मानता था। उसने उसे सम्पत्ति ग्राम, सुवर्ण आदि देकर, अपना स्नेह प्रदर्शित किया था। दत्त का अनुवाद होम पूर्वाप्रसंगानुसार यहाँ बैठता नहीं।

तथापि सकलं चित्रपटान्ते त्रिजगद्यथा ।
श्रीजैनोल्लाभदीनस्य न्यस्यामि गुणवर्णनम् ॥ १५ ॥

१५ तथापि चित्रपट पर सम्पूर्ण त्रिजगत[1] की तरह, जैनोलाभदीन का गुण वर्णन अंकित कर रहा हूँ ।

केनापि हेतुना तेन प्रोक्तं मद्गुरुणा न यत् ।
तच्छेपवर्तिनीं वाणीं करिष्यामि यथामति ॥ १६ ॥

१६ किसी कारण से मेरे गुरु[1] ने जिसे नहीं कहा (लिखा) था, उस अवशिष्ट वाणी को यथामति लिखूँगा ।

सात्मजस्य नृपस्यास्य प्राप्यते राज्यवर्णनात् ।
प्रतिष्ठादानसम्मानविधानगुणनिष्कृति ॥ १७ ॥

१७ आत्मज[1] सहित इस नृप[2] के राजवर्णन से (राजप्राप्त) प्रतिष्ठा, दान, सम्मान, विधान एवं गुणों से निष्कृति प्राप्त की जा सकती है ।

स्वदृग्दृष्टमृतानेकविपद्विभवसंस्मृतेः ।
सूते कस्य न वैराग्यं नाम जैनतरङ्गिणी ॥ १८ ॥

१८ अपनी दृष्टि से दृष्ट, मृतों एवं अनेक विपत्ति तथा वैभव के संस्मरण से, जैन-तरंगिणी[1] किसमें वैराग्य नहीं पैदा कर देगी ?

पाद-टिप्पणी

१५ (१) त्रिजगत (१) स्वर्ग, (२) भू तथा (३) पाताल लोक ।

पाद-टिप्पणी

१६ (१) गुरु जोनराज ।

पाद-टिप्पणी

१७ भावार्थ राजा तथा उसके पुत्रों द्वारा प्राप्त प्रतिष्ठा, दान, सम्मान, विधान एवं गुणों से किस प्रकार उऋण हो सकता हूँ ?

(१) आत्मज हैदरशाह ।

(२) नृप जैनुल आबदीन ।

पाद-टिप्पणी

१८ (१) जैन-तरंगिणी श्रीवर स्वकृत राजतरंगिणी का नाम 'जैनतरंगिणी' लिखता है । कल्हण ने अपने ग्रन्थ का शीर्षक केवल राजतरंगिणी दिया है । जोनराज भी अपनी कृति का शीर्षक 'राजतरंगिणी' ही दिया है । श्रीवर ने सुलतान जैनुल आबदीन के नाम पर अपनी राजतरंगिणी का नाम 'जैनराजतरंगिणी' रखकर सुल्तान को प्रसन्न करने का प्रयास किया है । यह राजकवि के अनुरूप ही है । तत्कालीन संस्कृत तथा अन्य भाषा-कवि अपने संरक्षक, अभिभावक एवं राजा की स्मृति चिरस्थाई रखने के लिये राजा के नाम पर काव्य का नाम रखते थे । विल्हण ने 'विक्रमांकदेवचरित', चन्द ने 'पृथ्वीराज रासो', नरपति नाल्ह ने 'बीसलदेव रासो' (सन् १२८१ ई०), 'हम्मीर रासो' (सन् १२९३ ई०) आदि ग्रन्थ राजाओं के नाम पर श्रीवर के पूर्व लिखे जा चुके थे । मुसलमान कवियों ने भी बादशाहों, नवाबों, अभिभावकों एवं संरक्षकों के नाम पर रचनाएँ की हैं । उनमें न्यामत खाँ 'जान' का 'कायम रासो' प्रसिद्ध है ।

श्रीजैनोल्लाभदीनः स हत्वा शत्रून् दिगन्तरे ।
आगत्य पैतृके देशे राज्यं राम इवासदत् ॥ १९ ॥

१९ उस जैनुल आबदीन ने दिगंतर में शत्रुओं को मारकर, पैतृक देश[1] में आकर, राम[2] के समान राज्य प्राप्त किया ।

हृतावशिष्टां कोशेभ्यः स्वप्रबन्धोपयोगिनीम् ।
नानापदार्थसामग्रीं राजा कविरिवाचिनोत् ॥ २० ॥

२० राजा ने कवि के समान कोश[1] से अपहरण करने से अवशिष्ट, स्व प्रबन्धोपयोगी, नाना पदार्थ सामग्री को संग्रहीत किया ।

तद्राज्यमालिशाहस्य राज्यकालादनन्तरम् ।
अज्ञायि कैर्न ग्रीष्मान्ते मरौ श्रीखण्डलेपनम् ॥ २१ ॥

२१ अलीशाह के राज्य के अनन्तर, उसके राज्य को ग्रीष्मान्त[1] के मरुस्थल में श्रीखण्ड (चन्दन) लेप तुल्य, शीतलता का किसने अनुभव नहीं किया ?

पाद-टिप्पणी

१९ (१) पैतृक देश : कश्मीर मण्डल ।

(२) राम : अयोध्यापति राम से यहाँ तात्पर्य है। राम की उपमा जैनुल आबदीन से श्रीवर ने दिया है। जैनुल आबदीन को भ्राता अलीशाह के कारण देश त्यागना पड़ा था। उसने काश्मीर के बाहर अपने शत्रुओं को उसी प्रकार परास्त किया, जिस प्रकार राम ने अयोध्या के बाहर शत्रुओं को परास्त किया था। राम ने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर अयोध्या में लौटकर राज्य प्राप्त किया। वही जैनुल आबदीन ने किया था। राम तथा जैनुल आबदीन दोनों ने भाइयों से ही राज्य प्राप्त किया था, न कि पिता से। दोनों को राज्य के कारण अपना देश त्यागना पड़ा था। दोनों के देशत्याग के कारण उनके भाई थे। दोनों के ही कनिष्ट भ्राता लक्ष्मण तथा मुहम्मद खाँ उनके भक्त तथा आज्ञाकारी थे। जोनराज ने मुहम्मद खाँ को कलानिधि लिखा है। (जोन० : ९६६)।

पाद टिप्पणी

पाठ : बम्बई ।

२० (१) कोश : कोष शब्द यहाँ श्लेष है। एक अर्थ शब्दकोश, शब्दार्थसंग्रह, शब्दावली तथा दूसरा अर्थ रत्न भाण्डार गृह : खजाना, आगार होता है। जिस प्रकार कवि कोश से शब्द ग्रहण करता है, अपना शब्द भण्डार बढ़ाता है उसी प्रकार जैनुल आबदीन ने सामग्रियों का संग्रह कर, अपना कोश अर्थात् खजाना बढ़ाया ।

(२) प्रबन्ध : यह भी यहाँ श्लेष है। प्रबन्ध-काव्य पद्यबद्ध, सम्बद्ध, कथात्मक काव्य होता है। कथा-काव्य के अति निकट प्रबन्ध-काव्य होता है। कवि प्रबन्ध-काव्य की रचना करता है। दूसरा अर्थ राजप्रबन्ध एवं राज का प्रबन्ध करता है। राजा भी कोश अर्थात् अर्थ किंवा वित्त के आधार पर राज्य का प्रबन्ध करता है। कोशहीन राज प्रबन्ध नहीं चलता, नष्ट हो जाता है जैसे शब्द भाण्डार हीन कवि या काव्यकार काव्य रचना में असफल हो जाता है।

पाद टिप्पणी

२१ (१) ग्रीष्मान्त : ग्रीष्म ऋतु ज्येष्ठ एवं आषाढ़ मास होता है। मरुस्थल ग्रीष्म ऋतु में अत्यन्त

धर्मराजोपमात् तस्मात् तास्ता नरकयातनाः ।
अपराधानुसारेण पापाः केचिद् द्विषोऽभजन् ॥ २२ ॥

२२ धर्मराज[1] (यम) सदृश, उस (जैनुल आबदीन) से अपराध के अनुसार तत् तत् नर्क यातनायें कुछ पापी शत्रुओ ने प्राप्त किया ।

यो द्रव्यगुणसत्कर्मसमवायविशेषभृत् ।
असामान्योऽप्यधाच्चित्रं नानार्थपरिपूर्णताम् ॥ २३ ॥

२३ द्रव्य,[1] गुण,[2] सत्कर्म,[3] सामान्य,[4] विशेष[5] समवाय[6] युक्त जो राजा असामान्य होकर भी आश्चर्य है अनेक प्रकार के अर्थ मे परिपूर्ण था ।

तप जाता है । गरमी बढ जाती है । राजस्थान के मरुस्थल म उदयपुर से अजमेर होते दिल्ली आपाढ मास में आया हूँ । भयकर गर्मी पडती है । उस समय किंचित मात्र शीतलता का अनुभव सुखप्रद होता है । अलीशाह का राज्य सूहभट्ट के अत्याचार, उत्पीडन तथा गृहयुद्ध के कारण भयावह हो गया था । उसके गैर-काश्मीरी सेनानी काश्मीर में तप गये थे । उनके ताप से जनता त्रस्त हो उठी थी । जैनुल आबदीन का काल इस भयकर ताप के पश्चात् चन्दन लेप-तुल्य सुखकारी प्रतीत होता था । हितोपदेश में श्री-खण्ड शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है ।

'श्रीखण्ड विलेपन सुखयति' (हि० १ ९७) ।

पाद-टिप्पणी

पाठ बम्बई ।

२२ (१) धर्मराज यम का विशेषण धर्मराज धर्मपालक, न्यायकर्ता, न्यायाधीश आदि धर्म-पूर्वक राज एव न्याय करनेवाले के लिये विशेषण रूप में प्रयोग किया जाता है । युधिष्ठिर धर्मराज है । जैनुल आबदीन की तुलना श्रीवर धर्मराज से उसकी न्यायप्रियता के कारण करता है । धर्मराज किंवा मनुष्यों के कर्म के अनुसार, पापियो को उनके अपराध के अनुसार, नि सकोच दण्ड देते है । श्रीवर जैनुल आबदीन के सम्बन्ध में भी इसी ओर सकेत करता है कि उसने धमराज के समान पापी शत्रु अपराधियो को धर्मानुसार दण्ड दिया था । श्लोक १ १ ३६ में जैनुल आबदीन के गुप्तचर का वर्णन किया गया है । धर्मराज के भी गुप्तचर होते है । ऋग्वेद में उद्धरण मिलता है । यम के दो श्वान है । उन्हे चार आँखें होती है । वे यम के गुप्तचर है । लोगो के मध्य विचरण करते हुये उनके कार्यों का निरीक्षण करते है (ऋ० १० ९७ . १६) । इसी प्रकार उल्लू या कपोत यम का दूत माना गया है (ऋ० १० १६५ ५) । मानव अपने कर्मों के अनुसार स्वर्ग एव नरक भोगता है । उनका निश्चय धर्मराज करता है । (विष्णुधर्मोत्तरपुराण २ १०३ ४-६, पराशर-माधवीय २ ३ २०८-२०९, प्रायश्चित्तसार २१५, विष्णु० ३ ७, १९, ३५, ब्रह्मा० २ २९ ६५, ३ १३ ६७ ५९-७९) ।

पाद-टिप्पणी

२३ (१) द्रव्य श्रीवर ने वैशेपिकदर्शन के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है ।

'धर्मविशेष प्रसूताद् द्रव्य-गुण-कर्म-सामान्य-विशेषसमवायानाम पदार्थाना साधर्म्य-वैधर्म्याभ्या तत्त्वज्ञानान्नि श्रेयसम् (१ १ ४) ।' 'धर्मविशेष से उत्पन्न हुआ जो द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय पदार्थों का साधर्म्य और वैधर्म्य से तत्त्वज्ञान पैदा होता है, उससे मोक्ष होता है ।'

वैशेपिक ने पदार्थों का वर्गीकरण किया है । पदार्थ के दो वग है—भाव एव अभाव । भाव के दो वग 'सत्ता-समवायी' तथा 'स्वात्मसत्' है । सत्ता-समवायी

के भेद द्रव्य, गुण तथा कर्म एवं स्वात्मसत् के भेद सामान्य, विशेष एवं समवाय है।

द्रव्य की परिभाषा वैशेषिक सूत्र (१ १ ५) में की गयी है—'क्रिया गुणवत् समवायिकारणमिति द्रव्य लक्षणम्।' गुण तथा क्रिया जिसमें समवाय-सम्बन्ध से रहते हैं तथा समवायिकारण भी हो वही द्रव्य कहा जाता है। द्रव्य के नव भेद—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा एवं मन हैं। ('पृथिव्यापस्तेजो-वायुराकाश-कालो दिगात्मामन इति द्रव्याणि'—वै० १ १ ५)।

(२) गुण वैशेषिकदर्शन में २४ प्रकार के गुणों का परिगणन किया गया है—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, अदृष्ट, एवं संस्कार। गीता ने—'सत्व रजस्तम इति गुणा प्रकृति सम्भवा'—अर्थात् सत्व, रज एवं तम तीन गुणों को माना है।

रूपरसगन्धस्पर्शा संख्या परिमाणानि पृथक्त्व संयोगविभागौ
परत्वापरत्वे बुद्धय सुखदुःखे इच्छाद्वेषौ प्रयत्नाश्च गुणा —वै० सू० १।१।६।'

किन्तु महर्षि कणाद ने केवल १७ गुणों को वैशेषिकदर्शन में माना है। वैशेषिकदर्शन ने गुण की परिभाषा की है—द्रव्याश्रय्य गुणवान् संयोगविभागव्य कारण मनपेक्ष इति गुण लक्षणम्' वैशेषिक सूत्र (१:१ १६)। द्रव्याश्रितत्व, निर्गुणत्व एवं निष्क्रियत्व ही गुण के लक्षण हैं।

(३) कर्म वैशेषिक के अनुसार उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण एवं गमन पाँच वर्गों में कर्म का विभाजन किया गया है। वैशेषिक ने कर्म का पाँच भेद माना है—'उत्क्षेपणमवक्षेपण माकुञ्चन प्रसारणं गमनमिति कर्माणि (वै० १ १ ७)।'

(४) सामान्य तर्कसंग्रह ने सामान्य की परिभाषा की है—'नित्यमेकम नेकानुगत सामान्यम्' अर्थात् सामान्य एक है। नित्य है। अनेकानुगत है। मनुष्य अनेक हैं, परस्पर भिन्न रूप-गुण के हैं। परन्तु उनमें मनुष्यत्व सामान्य है। सामान्य के भेद पर सामान्य तथा अपर सामान्य हैं। वृक्ष अनेक हैं। किन्तु उनमें वृक्षत्व एक है। सामान्यरूप से सभी वृक्षों में अवस्थित है। कणाद ने कहा है—

'भावोऽनुवृत्तेरेव हेतुत्वात् सामान्यमेव'
—वै० सू० १।२।४॥

कणाद ने पुनः लिखा है—

'सदिति यतो द्रव्यगुणकर्मसु सा सत्ता'
—वै० सू० १।२।७॥

(५) विशेष कणाद ने विशेष के सन्दर्भ में लिखा है—

'अन्यत्र अन्त्येभ्यो विशेषेभ्य'—वै० सू० १।२।६॥

एक परमाणु (अथवा नित्य द्रव्य) से दूसरे परमाणु (अथवा नित्य द्रव्य) को भिन्न सिद्ध करनेवाला पदार्थ विशेष है। परमाणुओं के अनन्त होने के कारण विशेष भी अनन्त हैं। किन्तु एक विशेष से दूसरे विशेष को भिन्न सिद्ध करनेवाले किसी तत्त्व की आवश्यकता नहीं है। जैसे सूर्य इस जगत को भी प्रकाशित करता है और अपने आपको भी। उसी तरह विशेष परमाणुओं को भी परस्पर भिन्न सिद्ध करता है और अपने आपको भी। इसीलिए इसे अनेक विशेष कहा जाता है।

(६) समवाय कणाद ने समवाय की परिभाषा करते हुए लिखा है—

इहेदमिति यत कार्यकारणयो स समवाय
—वै० सू० ७।२।२६॥

समवाय दो पदार्थों—द्रव्य-गुण, द्रव्य-कर्म, द्रव्य-सामान्य, द्रव्य-विशेष, अवयवद्रव्य अवयविद्रव्य, गुण-सामान्य और कर्म-सामान्य के बीच का पारस्परिक सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध उन दो तत्त्वों के बीच माना जाता है, जिनमें से किसी एक को हम दूसरे से तब तक अलग नहीं कर सकते, जब तक वह वर्तमान है। इस प्रकार के दो पदार्थों को 'अयुतसिद्ध' कहा जाता है। यह संयोग सम्बन्ध, जो 'युतसिद्ध' पदार्थों तथा द्रव्य-द्रव्य के बीच ही रहता है, से सर्वथा भिन्न है। कणाद ने केवल उदाहरण के रूप में कार्य-कारण के

नेत्रोज्ज्वले लसद्धर्म्यशब्दाढ्ये कमलाञ्चिते ।
यस्य श्रीरवसन्नित्यं वदने सदनेऽपि च ॥ २४ ॥

२४ जिसके सुन्दर नेत्र एव सुरम्य शब्दो से पूर्ण कमलवत् बदन मे तथा चमकते रेशम एव मनोहारी शब्दो से सम्पन्न लक्ष्मी युक्त सदन मे, नित्य श्री निवास करती थी।

वङ्गालमालवाभीरगौडकर्णाटदेशगा ।
यत्कीर्ती रागमालेव बभूवामृतवर्षिणी ॥ २५ ॥

२५ बगाल[१], मालव[२], आभीर[३], गौड[४], कर्नाट[५], देशगामीनी जिसकी कीर्ति, रागमाला सदृश अमृतवर्षिणी हुई।

बीच के सम्बन्ध को समवाय कहा है। यह तो उन दो पदार्थों के बीच भी रहता है, जिनका आपस में कार्यकारणभाव नही है, जैसे द्रव्य (परमाणु) और सामान्य-द्रव्यत्व अथवा द्रव्य और विशेष।

समवाय के विषय में वैशेषिक दर्शन की दो और मान्यताएँ हैं—एक यह कि समवाय का प्रत्यक्ष नही होता है और दूसरी यह कि समवाय एक ही है, अनेक नही। सम्बद्ध पदार्थों की भिन्नता से समवाय में परस्पर भिन्नता, जो दीखती है, वह मात्र औपचारिक है।

इस श्लोक से यह भाव निकलता है कि वह राजा कणाद की चलाई परम्परा के परीक्षण की शक्ति भी रखता था। अन्ध-क्रियाहीन टीकाकारो ने पुरानी परम्परा से अनेक अनुपत्तियों को जन्म देने वाले, जैसा बौद्धों ने स्पष्ट कहा है, सामान्य पदार्थ को नही मान कर भी, अपनी उच्च विवेकशक्ति के कारण समाज में प्रतिष्ठित हो चुका था। इस वक्तव्य मे सक्षप मे, राजा की विचारशक्ति के उत्कर्ष पर प्रकाश डाला गया है।

कणाद के द्वारा प्रवर्तित वैशेषिक दर्शन इस पूरे जगत् की एक व्यावहारिक तथा प्रामाणिक व्याख्या करता है। जगत् के जड तथा चेतन पदार्थों को तर्क के आधार पर ■ पदार्थों—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय तथा अभाव को लेकर सात पदार्थों में विभाजित कर उसकी स्वाभाविक व्याख्या प्रस्तुत करता है। इसके प्रथम तीन पदार्थ तो वास्तविक हैं और शेष काल्पनिक। इन काल्पनिक पदार्थों के अस्तित्व को लेकर अन्य दार्शनिकों ने—विशेषत बौद्धों ने इसकी बडी आलोचना की है। किन्तु इस आलोचना से तो दर्शन की प्रतिष्ठा और बढती ही रही है। इसके पदार्थों में स्वाभाविकता तथा व्यावहारिकता को देख कर ही आलोचकों ने इसे यथार्थ की सज्ञा दी है। यदि सच पूछा जाय, तो यथार्थ का पूरा स्वरूप इसी दर्शन में प्रतिबिम्बित हुआ है, न्याय आदि दर्शनों मे नही। इसी जगत् के माध्यम से इससे ऊपर उठने की प्रेरणा प्रदान करना, इसकी सबसे प्रमुख विशेषता है। बहुत सम्भव है कि इसी के आधार पर इसे 'वैशेषिक' कहा गया है।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई

बगाल, मालव, आभीर, गौड, कर्नाट शब्द श्लेष है, उनका प्रयोग यहाँ देश एव राग दोनो अर्थों में किया गया है।

२५ (१) बगाल : वर्तमान बगाल प्रदेश तथा बगाल राग दोनो अभिप्रेत हैं। बगाल राग लुप्त हो गया है। पुण्डरीक विट्ठल अकबर के दरबार तथा बुरहानपुर के खान के यहाँ इस राग को गाते थे। यह मालव-गौड अर्थात् आधुनिक भैरव

राग के समकक्ष है। इसमें षड्ज स्वर ग्रह अंश और न्यास है।

(२) मालव : मालवा प्राचीन काल में मालवा अवन्ती के पूर्व तथा गोदावरी के उत्तर में था। कामसूत्र में अवन्ती तथा मालवा का वर्णन पृथक् रूप में किया गया है। वायु तथा मार्कण्डेय पुराणों के अनुसार पर्वताश्रयी है। ब्रह्म, वायु, कूर्म पुराणों ने उन्हें पारियात्र पर्वत के समीपस्थ लिखा है। पराशर तन्त्र मालव तथा मल्ल अलग मानता है। प्राचीन काल में मालवा गणतन्त्र था। सप्त मालव का उल्लेख पद्मपुराण में मिलता है। समुद्र गुप्त के प्रयाग स्तम्भलेख में मालवा का उल्लेख है। बौद्धकालीन षोडश जनपदों में एक है। मालवा के ग्रामों की संख्या ११८०९२ दी गयी है। उज्जैन मालवा की राजधानी थी।

सत्तरहवीं शताब्दी के संगीतज्ञ हृदय नारायण ने इस राग का वर्णन 'हृदयकौतुक' ग्रन्थ में किया है।

इनका वर्णन स्पष्ट है। मालवा राग की परिभाषा दी गयी है—

गमधाश्च मसौ रिसौ निधौ पसौ मगौ।
रिसौ निस्त स्वरैरेभिर्मालव परिगीयते॥

आधुनिक स्वर इस राग का है—

ग म ध प स रे स नि ध प स म ग रे स नि स। भट्ट माधव का मत है कि वह ग्राम राग है। षड्ज ही अंश ग्रह एवं न्यास है।

(३) आभीर : आभीर लोग एक समय हेरात तथा कन्दहार के मध्यवर्ती क्षेत्र अबीरवन में रहते थे। उनका वहाँ मूल स्थान मालूम होता है। भारत में राजस्थान मरुभूमि के उत्तर आबाद थे। एक आभीर राज दक्षिणा पथ में उत्तर-पश्चिम की ओर तृतीय शताब्दी में था। रामायण एवं ब्रह्मपुराण आभीरों को दस्यु मानता है। मत्स्यपुराण शक पुलिन्द चूलिका, यवन, कैवर्त के साथ रखता उन्हें म्लेच्छ मानता है। पद्मपुराण उन्हें हूण, किरात पुलिन्द पुक्कस यवन कणक के साथ रखकर उन्हें म्लेच्छों की सन्तान मानता है।

शक्तिसंगम तन्त्र में (३ : ७ : २०) आभीर देश को विन्ध्य शैल स्थित माना गया है। उसके दक्षिण कोंकण तथा उत्तर-पश्चिम ताप्ती नदी थी। यह काठियावाड तथा दक्षिण सौराष्ट्र से बहुत दूर नहीं था। प्रथम तथा द्वितीय शताब्दी में वे मरुभूमि के निवासी थे परन्तु कालान्तर में उनकी प्रगति दक्षिण दिशा की ओर हुई। तृतीय शताब्दी में आभीरों ने उत्तरीय कोंकण तथा नासिक के समीपवर्ती क्षेत्र में अपना राज्य स्थापित किया था। कामसूत्र (६ : ४ : २४) के अनुसार आभीरों का क्षेत्र कोट्टक अर्थात् थानेश्वर तथा कुरुक्षेत्र था। भागवत उन्हें सौवीर तथा अवन्ति मध्य रखता है।

एक मत है कि वर्तमान अहीर जाति ही प्राचीन आभीर जाति है। शकों के समान आभीर लोग हिन्दुस्तान के बाहर से आये थे। भारत के पश्चिमी, मध्यवर्ती एवं दक्षिणी भाग में आबाद हो गये। यह बलशाली तथा पुष्ट शरीर होते थे। वे नृत्य प्रिय थे। मेरे काशी की भूमि पर बहुत अहीर अबाद हैं। अपने बाल्यकाल में मैं देखता था। विवाह आदि के समय वे नगाड़ों पर नाचते थे। स्त्रियाँ भी नाचती थी। अब यह प्रथा लुप्त हो गयी है (इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस सन् १९५१ ई० आभीर पृष्ठ ९१)।

कामसूत्र में गुजरात के आभीर राज्य का उल्लेख है। जोधपुर शिलालेख में आभीरों के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। भिलसा 'विदिशा' तथा झाँसी के के मध्य में आभीरों का निवास स्थान था। प्रयाग के शिलास्तम्भ पर भी आभीर शब्द का उल्लेख है। महाभारत में उल्लेख है कि सरस्वती नदी शूद्र तथा आभीरों के क्षेत्र में जाकर लुप्त हो जाती है। यह क्षेत्र विनशन है। सिरसा के आसपास का भूखण्ड इसमें आता है। जयमङ्गला भाष्य में उन्हें कुरुक्षेत्र में निवास करते दिखाया गया है।

पतञ्जलि महाभाष्य तथा प्रयाग के समुद्रगुप्त के अभिलेख में आभीरों का उल्लेख किया गया है। विनशान नामक स्थान में जहाँ सरस्वती नदी मरुभूमि राजस्थान में विलीन हो जाती थी, आभीर निवास करते थे। अन्य स्थान पर आभीर को अपरात का निवासी बताया गया है। यह स्थान भारत का पश्चिमी तथा कोंकण का उत्तरी भाग माना जाता था। पेरिप्लस तथा प्तोलेमी के अनुसार सिन्ध नदी के अधोभागीय उपत्यका तथा सौराष्ट्र के मध्य उनका निवास स्थान था। एक मत है कि सिन्ध के अधोभागीय तथा राजस्थान के मध्य उनका निवास स्थान था। सौराष्ट्र का मैंने भ्रमण किया है। सौराष्ट्र की भूमि देखने पर वह जैसे राजस्थान की भूमिखण्ड का विस्तार ही प्रतीत होता है।

आभीर देश जैन श्रमणों के विहार का केन्द्र था। अचलपुर (एलिचपुर-बरार) इस देश का प्रसिद्ध नगर था। वहाँ कण्हा (कन्हन) तथा वेण्णा (बेन) नदी के मध्य ब्रह्मद्वीप नामक द्वीप था। तगरा (तेरा), जिला उस्मानाबाद इस देश का सुन्दर नगर था।

शक राजाओं के सेना में वे सेनापति पद पर कार्य करते थे। अनेक शिलालेखों में आभीरों का उल्लेख मिलता है। नासिक के शिलालेख में आभीर राजा ईश्वरसेन का उल्लेख मिलता है। भिलसा तथा झाँसी के मध्य अहीरवाड प्रदेश है। यह आभीर-वार का अपभ्रंश है।

प्राचीन जैन साहित्य में आभीर एवं आभीरियों की अनेक गाथायें लिखी मिलती हैं। दूसरी तथा तीसरी शती में अपभ्रंश भाषा आभीरों के रूप में प्रचलित थी और सिन्ध, मुलतान तथा उत्तरी पंजाब में बोली जाती थी।

मत्स्य तथा पद्मपुराण आभीरों का स्थान उदीच्य मानता है। वायु, ब्रह्माण्ड एवं मारकण्डेय-पुराण उदीच्य के साथ उन्हें दक्षिणापथ का निवासी मानता है। वामनपुराण उन्हें उदीच्य, मध्यदेश तथा दक्षिणा पथ में रखता है। विष्णु, कूर्म तथा ब्रह्म पुराण उनका स्थान अपरान्तक मानता है। भागवतपुराण, उन्हें सौवीर तथा आनर्त मध्य रखता है—

मरुधन्वमति क्रम्य सौवीराभीर योपरान्।
आनर्त्तान् भार्गवोपागाच्छ्रान्त वाहो मनाग्विभु ॥

संगीत शास्त्र में आभेरी, आभीरी तथा आभीरिका तीन रागों का उल्लेख मिलता है। किन्तु उनमें आभीरी प्रसिद्ध है। श्रीवर ने इसे आभीरी राग का उल्लेख किया है। छन्द बैठाने के लिये आभीरी के स्थान पर आभीर लिखा है। इस राग की परिभाषा की गयी है

शुद्ध पचम सभूता गमक स्फूर्णान्विता।
आभीरी गम हीना स्याद् बहुला पचमेन ॥

इस राग में शुद्ध पचम स्वर स्फुरित गमक लगता है। इस राग में 'ग' 'म' स्वर नहीं लगते। पचम स्वर का बहुल प्रयोग किया जाता है।

मातंग (पाचवी से सातवीं शताब्दी) काल से अबतक लिखे गये सभी ग्रन्थों में आभीरी = अहीरी = राग का उल्लेख मिलता है। मातंग ने आभीरी गीत का वर्णन किया है।

(४) गौड देश तथा राग दोनों हैं। गौड राग का उल्लेख हृदयकौतुक ग्रन्थ में है। यह राग अब प्रचार में नहीं है। इसकी परिभाषा की गयी है।

स री म पो स सो स श्व निपो मगो म री च स।
गौड षड्व रागस्तु कथ्यते रागवेदिभि
स रे म प स नि प म ग म रे स।

(४) गौड आधुनिक पठित वर्ग गौड से अर्थ बंगाली भाषा-भाषी क्षेत्र लगता है। मूलत गौड देश मुर्शिदाबाद जिला तथा मालदा जिला के धुर दक्षिणी भाग तक माना जाता था। ह्वेनसांग ने कर्णसुवर्ण देश तथा राजा शशांक की राजधानी

दोनों के लिये प्रयोग किया है। राजा शाशांक ने थानेश्वर के राजा राज्यवर्धन का सन् ६०५ ई० में वध किया था। बाण ने हर्षचरित में इसका उल्लेख किया है। चीनी पर्यटकों के वर्णन से प्रकट होता है कि प्रसिद्ध बौद्ध रक्तमृत्तिका विहार कर्णसुवर्ण के उपनगर में स्थित था। इस देश का क्षेत्रफल ७३० या ७५० वर्ग मील था। यह विहार इस समय रंगमाटी कहा जाता है। मुर्शिदाबाद से लगभग ११ मील दक्षिण है।

भविष्यपुराण में गौड देश के नामकरण के विषय में लिखा है कि यह देश गौड़ देवता के क्षेत्र पद्मा एवं वर्धमान नदियों के मध्य में है। उस पुण्ड्र देश के सात देशों में एक माना है। परम्परा के अनुसार गौड़ देश वर्तमान मुर्शिदाबाद जिला कुछ भाग नदिया हुगली और वर्दवान डिविजन बंगाल का था। पुण्ड्र देश पश्चिमी तथा उत्तरी बंगाल तथा विहार के कुछ पूर्वीय जिले थे। शक्ति संगम तन्त्र में जिसे हम मध्ययुगीय गौड़ कह सकते हैं गौड देश बंग तथा भुवनेश्वर के मध्य माना गया है। कुछ मुस्लिम इतिहासकारों ने पूर्वीय बंगाल को बंग तथा पश्चिमी बंगाल को गौड मानते थे। कुछ मुस्लिम इतिहासकारों ने गौड-बंग नाम भी दिया है।

बंगाल पर मुसलमानों का राज्य स्थापित होने पर बंगाल की राजधानी कभी गौड़ और कभी पाडुवा रही है। पाडुवा गौड से बीस मील दूर स्थित है। मुस्लिम काल में यहाँ के मन्दिरों आदि ध्वंसावशेषों से मसजिदें तथा जियारतों का निर्माण हुआ है। सन् १५७५ ई० में सम्राट अकबर के सूबेदार ने गौड़ के सौंदर्य पर मुग्ध होकर राजधानी पाडुवा से हटा कर गौड में स्थापित किया था। कालान्तर में महामारी के कारण नगर परित्यक्त कर दिया गया। तत्पश्चात तीन-सौ वर्षों तक नगर, जंगलों एवं खण्हरों के भयावन रूप में स्थित रहा। मुस्लिम काल के अनेक ध्वंसावशेष यहाँ बिखरे पड़े हैं। प्रसिद्ध सोना मसजिद प्राचीन मन्दिरों के ध्वंसावशेषों से बनायी गयी है। यह मसजिद पुराने टूटे दुर्ग में स्थित है। इस मसजिद की निर्माण तिथि सन् १५२६ ई० है। नसरत शाह की मसजिद सन् १५३० ई० का निर्माण है।

श्रीवर ने बंगाल एवं गौड दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। मुस्लिम काल में गौड का सूबा बंगाल थी। गौड उसकी राजधानी थी। (द्रष्टव्य टिप्पणी रा० ४ : ४६८ लेo।)

(५) कर्णाट : कर्णाट प्रदेश तथा राग दोनों हैं। कर्णाट प्रदेश के लिये द्रष्टव्य हैं परिशिष्ट 'ठ' कर्णाट राजतरंगिणी कल्हण खण्ड १ (श्लोक रा० १ : ३०० पृ० ११४)।

कर्णाट राग का हरिकाम्बोजी मेल का राग माना गया है। लोचन (पन्द्रहवीं शताब्दी) ने रागतरंगिणी नामक ग्रन्थ लिखा है। उसमें उल्लेख है। संगीत-पारिजात सत्रहवीं शती का ग्रन्थ है। उसने कर्णाट को कानड़ा राग माना है। उत्तर भारत में यह राग खम्माच कहा जाता है। भारत में मुसलिम शासन स्थापित होने के पश्चात रागों में एक सामता किंवा रूपता, आवागमन एवं सम्पर्क के अभाव में नहीं रह गयी थी। कर्णाट राग की परिभाषा की गयी है

शुद्धाः सप्त स्वरास्तेषु गांधारो मध्य मस्य चेत्।
गृह्णाति द धृता धीता कर्णाटी जायते तदा।
(लोचन रागतरंगिणी)

सा रे ग म प ध नि।

कुछ लोग कानड़ा को कर्णाट राग मानते हैं। संगीत-पारिजात में परिभाषा दी गयी है—

तीव्र गान्धार सम्पन्ना मध्यमाद् ग्राह धान्तिमा।
सांश स्वरेण संयुक्ता कानडी सा विराजते।

जिसमें गांधार तीव्र लगता है। मध्यमा स्वर पर ग्राह और धैवत पर न्यास होता है। षड्ज जिसका अंश होता है। वह कानड़ी अर्थात कानड़ा है।

भास्वान् राजा सदाचारो बुधः सधिषणो महान् ।
अधाद् विश्वग्रहाख्यातिमासन्नस्य ग्रहोचिताम् ॥ २६ ॥

२६ बुध (विद्वान), सधिषण (बुध युक्त), बृहस्पति सहित, महान, सदाचारी, भास्वान (सूर्य) राजा (चन्द्रमा) ने गर्भोचित विश्व ग्रह की ख्याति धारण किया।

यं सम्प्राप्य गुणाः सर्वेऽप्यलमन्नाधिकां श्रियम् ।
रात्रौ कुमुदवृन्दानि चिन्तामणिमिवोडुपम् ॥ २७ ॥

२७ रात्रि के चन्द्रमा को पाकर, कुमुद वृन्दो के समान, चिन्तामणि सदृश, जिस राजा को पाकर, सभी गुण अधिक सुशोभित हुए।

षड् दर्शनक्रिया यस्य वृत्तं समन्वरञ्जयन् ।
सुमनोरञ्जिताह्लादा ऋतवो नन्दनं यथा ॥ २८ ॥

२८, षट दर्शनो[1] की क्रियायें, जिसके वृत्त को उसी प्रकार अनुरंजित की, जिस प्रकार सुमनो से आल्हाददायिनी (षट) ऋतुयें नन्दन[2] को।

त्रिवर्गं प्रोज्ज्वलं दृष्ट्वा यस्मिंस्तद्रसिका इव ।
अवसञ्छक्तयस्तिस्रः सममेकमता इव ॥ २९ ॥

२९. प्रोज्वल त्रिवर्ग[1] को देखकर, उनकी रसिका (प्रेमिका) सदृश तीनों शक्तियाँ[2] एकमता सदृश जिसमे रहती थी।

भूपेऽर्थैः पूरयत्यर्थिसार्थं पार्थोपमेऽन्वहम् ।
आह्वानार्थमिवैतस्य यशः सर्वदिशोऽगमत् ॥ ३० ॥

३० पार्थ[1] सदृश राजा धन द्वारा याचकवृन्द को प्रतिदिन परिपूर्ण करता था, अतएव मानो उनका आह्वान करने के लिये ही इसका यश दिशाओ मे फैला।

पाद-टिप्पणी :

२८ (१) दर्शन आस्तिक एव नास्तिक दो विभागों में दर्शनो का वर्गीकरण किया गया है।

आस्तिक दर्शन—साख्य, योग, वैशेषिक, न्याय, मीमासा (पूर्वमीमासा) तथा वेदात (उत्तर-मीमासा) है। नास्तिक दर्शन भी ॥ है—चार्वाक (लोकायत), श्रोत्रान्तिक, वैभाषिक, योगाचार, माध्यमिक तथा अर्हत।

(२) नन्दन देवराज इन्द्र के उपवन का नाम है। सबसे सुन्दर स्थान एव वन या उद्यान माना गया है। पारिजात पुष्प के लिये प्रसिद्ध है। शाब्दिक अर्थ सुहावना प्रसन्न करनेवाला होता है—अभिन्नाश्छेदे पाताना क्रियते नन्दन द्रुमा (कु० २ ४१, रघु० ८ ४१)।

पाद-टिप्पणी :

२९ (१) त्रिवर्ग धर्म, अर्थ एव काम।

(२) शक्तियाँ प्रभु, मन्त्र एवं उत्साह-शक्ति।

पाद-टिप्पणी :

३० (१) पार्थ युधिष्ठिर की माता कुन्ती

शिल्पिनो विश्वकर्माणं गोरक्षं योगिनां गणाः ।
अवतीर्णं रसज्ञा यं नागार्जुनमिवाविदन् ॥ ३१ ॥

३१ जिसको शिल्पी विश्वकर्मा[१], योगिगण गोरक्ष[२] तथा रसज्ञ जन अवतीर्ण नागार्जुन[३] मानते थे।

का नाम पृथा था । उसके पुत्र युधिष्ठिर, भीम एवं अर्जुन के लिये पार्थ शब्द का प्रयोग किया गया है। कालान्तर में पार्थ शब्द अर्जुन के लिये रूढ़ हो गया। महाभारत में कर्ण के लिये भी एक बार 'पार्थ' शब्द का प्रयोग किया गया है, क्योंकि कर्ण भी पृथा-कुन्ती का औरस पुत्र था। यहाँ पर पार्थ का अर्थ कर्ण है। कर्ण महादानी प्रसिद्ध हैं, अतएव उसकी *तुलना जैनुल आबदीन से श्रीवर ने किया है।* (उद्योग पर्व १४५ : ३)।

पाद-टिप्पणी

३१ (१) विश्वकर्मा : ऋग्वेद में विश्वकर्मा का निर्देश देवता रूप में मिलता है (ऋ० १० : ८१–८२)। वैदिक साहित्य में सर्वद्रष्टा प्रजापति कहा गया है (वा० सं० १२ : ६१)। विश्वकर्मा ने पृथ्वी को उत्पन्न किया था। आकाश का अनावरण किया था। समस्त देवताओं का नामकरण किया था (ऋ० १० : ८२ : ३–४)। महाभारत में विश्वकर्मा को शिल्प प्रजापति कहा है (आदि : ६० : २६–३२)। ब्राह्माण्डपुराण में विश्वकर्मा को त्वष्टृ का पुत्र एवं मय का पिता माना है (ब्रह्माण्ड १ : २ : १९)। भागवत ने विश्वकर्मा को वास्तु एवं अंगिरस का पुत्र माना है (भा० ६ : ६ : १५)। विश्वकर्मा ने इन्द्रप्रस्थ, *द्वारका*, वृन्दावन, लंका, इन्द्रलोक, सुतल, *हस्तिनापुर* और गरुण के भवन का निर्माण किया था। विष्णु का सुदर्शन, शिव का त्रिशूल, इन्द्र का वज्र *तथा विजय* नामक धनुष बनाया था। विश्वकर्मा की कृति, रति, प्राप्ति एवं नन्दी नामक पत्नियों का उल्लेख मिलता है। इनके पुत्र मनु चाक्षुष थे। रति से काम, प्राप्ति से काम, नन्दी से हर्ष पुत्र भी थे। इनकी कन्या का नाम बर्हिष्मती था। उसका विवाह प्रियव्रत राजा से हुआ था। संज्ञा एवं छाया कन्यायें विवस्वत की पत्नियाँ थीं। तृतीय कन्या तिलोत्तमा का ब्रह्मा की आज्ञा से उत्पन्न किया था। इसने शिल्प-शास्त्र विषयक ग्रन्थ की रचना भी की थी। पूर्वजन्म में उसने घृताची अप्सरा को शूद्र कुल में जन्म प्राप्त करने के लिए शाप दिया था। उसने एक ग्वाले के गृह में जन्म लिया था। ब्रह्मा के कारण विश्वकर्मा को ब्राह्मण वंश में जन्म लेना पड़ा। ब्राह्मण पिता एवं ग्वाल माता के संसर्ग से दर्जी, कुम्हार, स्वर्णकार, बढ़ई आदि तत्र विद्या प्रवीण जातियों का जन्म हुआ (ब्रह्म वै० १ : १०)। आदिपुराण के अनुसार प्रभास वसु के पुत्र और रचना के पति हैं (आदि० ६६ : २६–२८)। उनके एक पुत्र का नाम विश्वरूप है (उद्योग० ९ : ३–४)। वृत्रासुर को भी इन्होंने उत्पन्न किया था (उद्योग० ९ : ४५–४८)।

(२) गोरक्ष : गोरक्षनाथ अथवा गोरखनाथ हठयोग के आचार्य थे। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक हठ योगपर 'गोरक्ष संहिता' नामक ग्रन्थ लिखा था। हठयोगियों में श्री आदिनाथ (शिव), मत्स्येन्द्र, शाबर, आनन्दभैरव, चौरंगी, मीननाथ, गोरक्षनाथ, विरूपाक्ष एवं बिलेशय संसार में जीवनमुक्त माने गये हैं। गोरक्षनाथ जी मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य थे। चार सिद्ध जालन्धरनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, कृष्णपाद तथा गोरक्षनाथ, चारों योगी नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक माने जाते हैं। *जालन्धरनाथ तथा उनके शिष्य कृष्णपाद* का सम्बन्ध कापालिक साधना से है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्येन्द्रनाथ तथा गोरक्षनाथ का व्यापक प्रभाव है। चारों योगी सम-सामयिक थे। मत्स्येन्द्रनाथ

तस्याग्रे योग्यतादर्शि यैः शिल्पकविकौशलात् ।
तथा प्रसादमकरोत् तत्परास्ते यथाभवन् ॥ ३२ ॥

३२ उसके समक्ष जिन लोगो ने शिल्प एव कवि कौशल मे योग्यता प्रदर्शित की, उन लोगो को उसने उसी प्रकार अनुगृहीत; कया, जिससे वे उसके प्रति और उत्साहित हुए ।

तथा जालन्धरनाथ गुरुभाई थे। दोनो की साधना-पद्धति एक दूसर से भिन्न थी।

काश्मीरा कवि आचार्य अभिनवगुप्त ने आदर के साथ मत्स्येन्द्रनाथ का उल्लेख किया है। उक्त-योगियों के काल के विषय में एक मान्यता नही है। एक मत है कि वह नवी शताब्दी के उत्तरार्ध में हुये थे। अभिनवगुप्त का समय सन् ९५०–१०२० ई० क मध्य निश्चित हो चुका है। अतएव मत्स्येन्द्र का समय सन् १०२० ई० के पूर्व ही रखा जायगा। तेरहवी शताब्दी में गोरक्षनाथ जी के स्थान गोरखपुर का मठ ध्वस्त कर दिया गया था। गोरक्षनाथ जी ने २८ ग्रथों की रचना किया था। यह निर्विवाद सिद्ध हो गया है। इनके अतिरिक्त ३८ ग्रन्थों के विषय में किम्वदन्तियां है। उन्ही की रचनायें है ।

गोरक्षनाथ जी द्वारा प्रचलित योगी सम्प्रदाय की १२ शाखायें है। पश्चिमी भारत में वे धर्मनाथी कहे जाते है। इस पथ के अनुयाई कान फाडकर मुद्रा धारण करते हैं। उन्हें कनफटा, दर्शनी तथा गोरक्ष-नाथी कहते है। वे गोरक्षनाथ को अपना आदि गुरू मानते है। दर्शन का अर्थ कुण्डल भी है। कान फाडकर उसमें कुण्डल पहनते हैं। विद्वानों का मत है। गोरक्षनाथ के पूर्व भी नाथ सम्प्रदाय था। नाथ आगमवादी नही हैं। शिव को अवतार मानते है। काश्मीरी अभिनवगुप्त ने मच्छद विभु का स्तवन किया है। गाया है कि गोरक्षनाथ ही महेश्वरानन्द है। काश्मीर में महार्थ मजरी नामक एक ग्रन्थ मिलता है। महेश्वरानन्द जी, महाप्रकाश (मत्स्येन्द्र-नाथ) के शिष्य थे। काश्मीरी ग्रन्थ अमरौघ शासन ग्रन्थ गोरक्षनाथ कृत माना जाता है।

गोरक्षपद्धति का योग के प्रति रुचि होने के कारण मैंने अध्ययन किया है। पातजल योग एव गोरक्षपद्धति में अन्तर है। पातजल योग क आठ अग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि है। किन्तु गोरक्षपद्धति में यम एव नियम को स्थान न देकर, केवल छ अग ही माने गये है। 'ह' का अर्थ है–सूर्य एव 'ठ' का अर्थ है–चन्द्रमा इनका योग हठयोग है। प्राण एव अपान वायु की सज्ञा सूर्य एव चन्द्र से दी गयी है। इनका ऐक्य करानेवाला जो प्राणायाम है, उसको हठयोग कहते है। अतएव हठयोग की साधना पिण्ड अर्थात् शरीर को केन्द्र मानकर परा शक्ति को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

जैनुल आबदीन कथा, मुद्रा आदि योगियों को दान करता था। इससे प्रकट होता है कि जैनुल आबदीन का झुकाव हठयोग की ओर था। श्रीवर इसीलिये उसे गोरक्षनाथ के समकक्ष रखता है।

(३) नागार्जुन बौद्धदर्शन शून्यवाद के प्रति-ष्ठापक तथा माध्यमिक बौद्धदर्शन के आचार्य थे। नागार्जुन के नाम से वैद्यक, रसायनविद्या, तन्त्र के ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं। इनका काल द्वितीय शताब्दी उत्तरार्ध है। दूसरे नागार्जुन सिद्धों की परपरा में हुए है। इनका काल आठवी तथा नवी शती था। यह पादलिप्त सूरि के शिष्य थे। वे रसशास्त्र पारगत थे। पारद से स्वर्ण बनाने में सफल हुए थे। श्रीवर का अभिप्राय दूसरे नागार्जुन रसज्ञ से है। क्योंकि नागार्जुन का विशेषण उसने रसज्ञ दिया है। जैनुल आबदीन भी लोगों को औषधि आदि देता था अतएव श्रीवर ने रसज्ञ आचार्य नागार्जुन से उसकी उपमा दी है।

काव्यशास्त्रश्रुतैर्गीतनृत्यतन्त्रीचमत्कृतैः ।
आजीवमनयत् कालं कार्यानुद्विग्नमानसः ॥ ३३ ॥

३३ उसने कार्यों से बिना उद्विग्न मन हुये, काव्यशास्त्र श्रवण तथा गीत, नृत्य एवं वीणा के चमत्कार से जीवन पर्यन्त काल-यापन किया।

न्याय्यं कुर्वन्ति शास्त्रज्ञाः कार्यभारं सुधीरतः ।
तेभ्यः क्षिप्त्वा च स्वे धर्मे तिष्ठतेत्येवमभ्यधात् ॥ ३४ ॥

३४ सुबुद्धिरत शास्त्रज्ञ 'न्याय करते हैं' अतः कार्यभार उन्हें समर्पित कर, 'अपने धर्म पर स्थित रहो' यह निर्देश दिया।

अवार्यवेगैः सततमाशुगैर्यस्य ताडिताः ।
आसन् वनदिगन्तेषु मशका इव शत्रवः ॥ ३५ ॥

३५ जिसके अवारणीय वेगशाली बाणों द्वारा ताडित शत्रु, मशक सदृश वन (अटवी) दिगन्तों में चले गये।

तस्य स्वपरवृत्तान्तं नित्यमन्विष्यतश्चरैः ।
केवलं स्वप्नवृत्तान्तो बभूवाविदितो विशाम् ॥ ३६ ॥

३६ अपने एवं दूसरे के वृतान्त का नित्य अन्वेषणकर्ता, उस राजा को गुप्तचरों[१] द्वारा प्रजाओं का केवल स्वप्न वृतान्त ही अविदित रहता था।

गृहं गृहस्थवृत्तस्य ध्यायतो नीतिशालिनः ।
अन्यायाच्चाशकद्धर्तुं काकिनीमपि कश्चन ॥ ३७ ॥

३७ नीतिशाली एवं ध्यानी गृहस्थ से अन्यायपूर्वक, कोई काकिनी (एक कौडी) भी नहीं ले सकता था।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई

३६ (१) गुप्तचर कौटिल्य ने गुप्तचर पर चार अध्याय लिखा है (१ : ११-१४)। कामन्दक (१२ : २५-४९) ने भी विस्तार से इस विषय पर लिखा है। उसने चर को गुप्तचर की संज्ञा दी है। कौटिल्य ने पञ्चसंस्था में उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक, तापस, सत्री तथा तीक्ष्ण नामक गुप्तचरों को रखा है। गुप्तचर राजा की आँख कहे गये हैं। ये राज्य में विचरण करते थे। कामन्दक ने 'चारचक्षुर्महीपतिः' अर्थात् गुप्त चार राजा की आँखें हैं, कहा है (१२ : ३८)। विष्णुधर्मोत्तर पुराण में भी 'राजा नश्चार चक्षुषा' (२ : २४ : ६३) तथा उद्योगपर्व में 'चारैः पश्यन्ति राजानः' (३४ : ३४) कहा गया है। जैनुल आबदीन का गुप्तचर संघटन इतना संगठित था कि उसे राज्य का सब वृतान्त ज्ञात हो जाता था।

सुलतान स्वयं रात्रि में भेष बदल कर, श्रीनगर की सड़कों पर लोगों की स्थिति जानने के लिये घूमता था (तारीख हसन : पाण्डु० १२२, हैदर मल्लिक : पाण्डु० १२१ बी०)।

पाद टिप्पणी

३७ (१) काकिनी = कौडी : विनिमय के लिये बीसवीं शताब्दी के द्वितीय शतक तक मुद्रा रूप

आदिश्य कृष्यै वास्तव्यान् श्वपचादीन् स तस्करान् ।
मृत्कर्माकारयद् बद्धपादायः शृङ्खलान् बलात् ॥ ३८ ॥

३८ उसने निवासियों को कृषि हेतु आदेश देकर चोर[1], चाण्डाल[2] आदि के पैरों को शृङ्खला-बद्ध कराकर, उनसे बलात् मृत (मिट्टी) का कार्य कराया।

न कः प्रवर्तते चौर्ये नीचो वृत्तिकदर्थितः ।
इति कारुणिको राजा तेभ्यो वृत्तिमकल्पयत् ॥ ३९ ॥

३९ जीविकाग्रस्त कौन से नीच चौरकार्य[1] में प्रवृत्त नहीं होते? अतएव कारुणिक राजा ने उनके लिये वृत्ति प्रदान किया।

में प्रचलित थी। एक प्राचीन मापदण्ड है जिसकी लम्बाई एक हाथ होती थी। सुल्तान ने कृषकों पर से अतिरिक्त कर हटा दिया, जिसके कारण राज-अधिकारी कृषकों को उत्पीडित करते थे (म्युनिख ७० ए०, तबक्काते अकबरी ३ ३४६)।

पाद-टिप्पणी

३८ (१) चोर द्रष्टव्य म्युनिख पाण्डु० ७२ ए० 'चोरों से सुलतान ने मिट्टी का काम लिया'।—उनसे मिट्टी ढुलवाया। आज भी जेल में कैदियों से मिट्टी तथा कृषि कार्य लिया जाता है। उन्हें जेल से बाहर राजकीय प्रतिष्ठानों में राजगीर, मिट्टी ढोने तथा अन्य कार्यों के लिये, उनके एक पैर में लोहे का कड़ा डालकर भेजा जाता है। कड़ा मे एक छोटी लोहे के मुद्रिका रहती है। उससे ध्वनि होती रहती है। यदि चोर भागे तो पकड़ा जा सकता है। आइने अकबरी में उल्लेख मिलता है कि सुलतान ने चोरों को बेडी पहना कर, काम पर लगाया (पृ० ४४०)।

(२) चाण्डाल चाण्डालों को कृषि कार्य पर लगाया। चाण्डाल, जरायम पेशा उत्तर भारत में माने जाते हैं। वे कही घर बनाकर नही रहते। उन्हें तथा मुसहरों को घरों में रहने की आदत डलाई जा रही हैं। सुल्तान ने यह सुधार कार्य आज से पाँच शताब्दी पूर्व किया था। जैनुल आबदीन के समय प्राय सभी हिन्दू मुसल्मान हो गये थे। धर्म परिवर्तन के पश्चात् भी जातिप्रथा बनी रही। जाति में ही विवाह आदि होता था। जाति के बाहर विवाह करना अपवाद था। समाज में सबसे निम्न श्रेणी में चाण्डाल तथा चमार थे। चाण्डाल चौकीदारी का काम करते थे। वे वध किये तथा युद्ध में मारे गये, लोगों का शव उठाते थे।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख मिलता है—सुल्तान चोरों की हत्या न कराता था, अपितु उसने आदेश दिया था कि उनके पाँवों में बेड़ियाँ डालकर उनसे भवन निर्माण का कार्य कराया जाय और उन्हें भोजन प्रदान किया जाय, (पाण्डु० ४३८)।

पाद-टिप्पणी

३९ (१) चौरकार्य श्रीवर ने आधुनिक राजनीतिक आदर्श सिद्धान्त लेखकों के समान लिखा है। मनुष्य का वातावरण एवं आवश्यकताएँ, उसे कुपथ की ओर प्रवृत्त करती है। जीविकाहीन व्यक्ति अपने कुटुम्ब के भरण-पोषण के लिये द्रव्य चाहता है। अपने कुटुम्ब में पहुँचता है, तो उसके बच्चे आदि उसे घेर लेते हैं। उनकी भूख वह नही देख सकता है। उसके तथा कुटुम्ब किंवा अपनी जीवन रक्षा के लिये चोरी करता है। समाज उसे अपराध मानता है। दण्ड देता है। परन्तु यह समस्या का निराकरण नही है। उसे दण्ड देकर, उस बन्दी बनाकर, उसके कुटुम्ब को असहाय बना दिया जाता है। उसके अपराध के कारण समाज केवल चोर

चक्रादीन् क्रमराज्यस्थान् दुष्टान् ज्ञात्वा स तद्भुवम् ।
हृत्वा मडवराज्यान्तर्दत्तवृत्तीन्न्यवेशयत् ॥ ४० ॥

४० क्रमराज्य[1] मे स्थित चक्र[2] आदि दुष्टो को जानकर, राजा ने उनकी भूमि अपहृत तथा उन्हे वृत्ति प्रदान कर, मडव राज्य मे प्रविष्ट किया ।

को ही दण्ड नही देता अपितु उसके कुटुम्ब को, उसके आश्रितो को दण्डित करता है । अपराध करता है कोई एक और परिणाम भोगता है कोई दूसरा । चोरी न करे, बेकार न रहे, अतएव चौरकर्म के मौलिक कारण को राजा ने समझकर, उसका मौलिक निराकरण किया । चोरों को जीविका देकर, उनकी बेकारी तथा उनकी विषम समस्या का हल किया । समाज में इस प्रकार सुल्तान ने मौलिक सुधार कर, दूरदर्शिता का परिचय दिया था ।

श्रीवर ने पुरातन सिद्धान्त को दुहराया है । शान्तिपर्व महाभारत (१ १६५ ११–१३), मनु (११ १६–१८) तथा याज्ञवल्क्य ने चोरी को दण्डनीय अपराध नही माना है । यदि कोई व्यक्ति तीन दिनों तक बिना अन्न रहे, तो उसे अधिकार था कि चौथे दिन कही से भी चाहे वह खेत, खलिहान अथवा घर हो, एक दिन के भोजन के लिये वस्तु चोरी कर सकता था । पूछने पर उस व्यक्ति को चोरी का वास्तविक कारण बता देना उचित है । व्यास (स्मृतिचन्द्रिका) ने विपत्ति के समय भोजन के लिये चोरी करना अपराध नही माना है ।

पाद-टिप्पणी

४० (१) क्रमराज्य कमराज = कामराज । काश्मीर उपत्यका हिन्दू काल में दो शासकीय भागों में विभाजित थी । उन्हें क्रमराज्य तथा मडवराज्य कहा जाता था । अकबर के समय अबुल्फजल ने भी इन्ही दोनो विभागों को माना है । जैनुल आबदीन के समय में भी यही स्थिति थी । क्रमराज्य में श्रीनगर से वितस्ता के अधोभागीय दोनों तटीय जिले आ जाते थे । जो वर्तमान काल में दोनों की विभाजन रेखा, शेरगढी राज प्रासाद है । मराज पूर्व तथा क्रमराज पश्चिम मे था ।

(२) चक्र = चक श्रीवर पूरा नाम नही देता । पीर हसन के वर्णन से कुछ प्रकाश पडता है—'इन्ही आयाम में पाण्डुचक, जो चक कबीला का सरदार था और अपनी कौम और खानदान सहित *तरहगाम से सकूनत करता था*, जब देखा कि जैनाशाह ने जैनागिर के बागात आबाद कर दिये हैं और कि अकसर औकात वही यह रहता है, तो इस ख्याल से कि बादशाह के यहाँ रहने से उसकी कौम को तकलीफ पहुँचेगी, अपने मददगार और साथियो की एक जमात के साथ रात के मौका पर शाही इमारतों को आग लगा दी । सुल्तान जैनुल आबदीन ने ज्योंही ये खबर सुनी, फौरन लश्करकशी के जरिया मौजा तरहगाम को जलाकर, खाक कर दिया और पाण्डुचक मय अपनी कौम-कबीला के दारदू की तरफ भाग गया । सुल्तान ने मुनहदिम इमारतों को अज सरे नौतामीर किया । पाण्डुचक ने दोबारा फुरसत पाकर इन इमारतों को आग लगा दी । और भाग गया ।'

काश्मीर में चकवंश ने राज्य किया था । उनका वर्णन शुक-राजतरंगिणी के प्रक्षिप्त भाग में है । अन्तिम चक राजा याकूब शाह (सन् १५८६–१५८८ ई०) से अकबर ने राज्य प्राप्त किया था । शाहमीर वंश के अन्तिम राजा हबीबशाह को सन् १५६० ई० में हटाकर, गाजीचक (सन् १५६०–१५६१ ई०) ने राज्य प्राप्त किया था । चक वंश का राज्य केवल ४० वर्षों काश्मीर में था । चक लोग कालान्तर में मुसलमान हो गये, तो उनका नाम चक पड गया, जो चक्र का अपभ्रंश है ।

तस्करोपद्रवे राज्ञा नीत्यैव शमिते सुखम् ।
गृहेष्विवाटवीष्वन्तः पथिकाः शेरते स्म हि ॥ ४१ ॥

४१ राजा द्वारा नीति से ही, तस्कर उपद्रव शान्त कर दिये जाने पर, पथिक गृह के समान वन में भी सुखपूर्वक शयन करते थे।

सत्ताप्रकृतिमध्यस्थो नित्यसर्वाङ्गवर्धन ।
स्वतन्त्रवृत्तिर्भूपालो रेमेनानापुरेषु सः ॥ ४२ ॥

४२ सत्ता प्रकृति के मध्यस्थ नित्य सर्वांगवर्धन स्वतन्त्र-वृत्ति भूपाल अनेक पुरों में आनन्द करने लगा।

मंदेहानहितान्निवार्य च भजन् पूर्वाचलाग्रोदयं
यो नित्य कमलाकरेषु रसिको बिभ्रत्प्रतापोच्चयम् ।
सङ्कोच कुमुदाशयेषु रचयन् पद्माकरोत्पूजितः ।
शस्य कस्य न दत्तलोक महिमा भास्वान् यशस्वी विभुः ॥ ४३ ॥

४३ अहित मन्देहों[१] को निवारित कर, पूर्वाञ्चल पर उदित होता, कमलाकरों के प्रति रसिक, तेज धारण करता हुआ, कुमुदाकरों में संकोच करता, पद्माकरों से पूजित, लोकमहत्वप्रद, यशस्वी एवं विभु भास्वान् किसके लिये प्रशंसनीय नहीं है?

धात्रेयाष्ठक्कुरा राज्ञो विभवश्रीमदोद्धताः ।
विस्फूर्तिहारिणोऽस्यासन् गजा इव निरङ्कुशाः ॥ ४४ ॥

४४ धात्रीपुत्र ठक्कुर[१] वैभव-श्री-मद से उद्धत होकर, निरंकुश गज सदृश, इस राजा के सुख-शान्ति-विनाशक हुए।

पाद-टिप्पणी

४३ (१) मन्देह : यह एक राक्षस वर्ग है। इनके विषय में कथा है। उदय पर्वत पर, उदित सूर्य का गतिरोध कर, तीन करोड राक्षस सूर्योदय के समय सूर्य पर आक्रमण करते थे। लोहित सागर में निवास करते थे। प्रातःकाल ऊर्ध्वमुख होकर, सूर्य से संघर्ष करने लगते थे। सूर्य मण्डल के ताप से सन्तप्त एवं ब्रह्म तेज से निहत होकर, समुद्र जल में पतित हो जाते थे। वहाँ से पुनर्जीवन प्राप्त कर, पर्वत शिखरों पर लौटते थे। उनका यह क्रम निरन्तर चलता रहता था (किष्किन्धा० ४० : ४१, विष्णु० २ : ४, १५)। कल्हण ने भी मन्देहों की उपमा दी है। (द्रष्टव्य रा० : ४ : ५३)। वे सन्ध्या करने एवं गायत्री मन्त्र जाप से नष्ट होते हैं (ब्रह्म० २ : २१ : ११०, वायु : १६३)। कुशद्वीप के शूद्रों का नाम है (विष्णु० : २ : ४ : ३८)।

पाद-टिप्पणी

४४ (१) ठक्कुर : इनका नाम हसन तथा हुसेन था। ये मुसलमान होने के पूर्व ठक्कुर राजपूत किंवा क्षत्रिय ठाकुर थे। मुसलमान होने पर भी अपनी पूर्व उपाधि ठक्कुर का प्रयोग, अपनी गौरव विशेषता दिखाने के लिये करते थे। आज भी अनेक मुसलमान वंश पूर्व उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में हैं, जो अपना वंश परिचय सरकारी कागजों में

श्रीमेरठक्कुरो ज्येष्ठः प्राड्विवेकपदोज्ज्वलः ।
तेषा मुसुलवृद्धोऽपि बभौ ग्रन्थगुणोज्ज्वलः ।। ४५ ।।

४५ ज्येष्ठ मीर ठाकुर प्राडविवेक[1] (न्यायाधीश) पद से भूषित हुआ और ग्रन्थ गुणोज्ज्वल वृद्ध मुसुल भी प्रसिद्ध हुआ ।

कष्टेन काष्ठवाटं स प्राप्तोऽवटपथात्ततः ।
हिमान्यन्यन्तरदग्धाड्घ्रिर्हिमान्यन्तरमासदत् ।। ४६ ।।

४६ कष्ट से अवट[1] (गत-गुफा) पथ से काष्टवाट[2] वह हिमानी मध्य पहुँचा । हिमानी से उसका चरण क्षत हो गया ।

स्थित्वा माणिक्यदेवाग्रे स मद्रस्यान्तरे चिरम् ।
चिब्मदेशं ततः प्राप किञ्चित्प्राप्तपरिच्छदः ।। ४७ ।।

४७ मद्र[1] देश स्थित माणिक्यदेव[2] के समक्ष बहुत दिन रहकर कुछ परिजनों को प्राप्त कर, चिब्म देश पहुँचा ।

राजपूत मुसलमान लिखाते है । जोनराज ने (श्लोक ६८८ ७१६ ७१७) शुक (१ ५२) तथा श्रीवर ने (३ ४६३ ४ १०४ ३५३, ३७८ ३७९ ४१२, ५३१) उनका उल्लेख किया है ।

पाद टिप्पणी

४५ (१) प्राडविवाक न्यायाधीश, धर्माध्यक्ष (राजनीति रत्नाकर १८) धर्म प्रवक्ता' (मनु० ८ २०) धर्माधिकारी (मानसोल्लास २ २ श्लोक ९३) को प्राडविवाक कहते हैं ।

प्राडविवाक अति प्राचीन नाम है (गौतम० १३ २६ २७ ३१ नारद १ ३५) । प्राड शब्द प्रच्छ धातु से बना है । इसी प्रकार विवाक 'वाक' से बना है । इसका अर्थक्रम से प्रश्न पूछना सत्य बोलना या सत्य का विश्लेषण करना है । प्रश्नविवाक शब्द इसी प्रकार बना है । वह शब्द वाजसनेयी संहिता तथा तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्रयुक्त किया गया है ।

(२) मुसुल मुसल्मान ।

पाद टिप्पणी

हिमान्यन्त का पाठ द्वितीय पद के द्वितीयचरण का सन्दिग्ध है ।

४६ (१) अवट पथ श्रीदत्त ने नाम वाचक शब्द वट पथ माना है (पृष्ठ १०२) ।

मैं श्रीनगर से होता किश्तवार गया हूँ । यह मार्ग कठिन है इस समय सडकों का सुधार तथा मार्ग प्रशस्त किया जा रहा है प्राचीन काल में मार्ग गर्तमय था । आज भी गर्तों से होकर मार्ग जाता है । रामायण में भी अवट पथ का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है । अवटे चापि मे राम प्रक्षिपेम कलेवरं अवटम निधीयते ।

(२) काष्टवाट किश्तवार ।

पाद टिप्पणी

पाठ बम्बई किन्तु मुद्र के स्थान मद्र' किया गया है जो उचित है ।

४७ (१) मद्र द्रष्टव्य पाद टिप्पणी श्लोक ७१४ जोनराजकृत तरंगिणी भाष्य लेखक ।

(२) माणिक्यदेव श्रीदत्त ने माणिक्यदेव का अनुवाद मणिक्यदेव स्थान किया है । माणिक्यदेव

तद्देशकालविषमावस्थाशतहतोऽपि सन् ।
स तत्र प्रेष्यवत् सैदपादशौचं समासदत् ॥ ४८ ॥

४८ वह सैकडो देश, काल एवं विषम अवस्थाओ से व्याहत होकर भी, वहाँ पर भृत्य सदृश सैद (सैय्यिद) ने पाद प्रक्षालन किया।

उद्गन्धतामयोत्पन्नस्फोटवैकृतशान्तये ।
वैद्यैर्वरत्राबद्धैकपादोऽभूज्जीवितावधि ॥ ४९ ॥

४९ उग्र गन्धवाले रोग से उत्पन्न फोडा के विकार[1] की शान्ति के लिये वैद्यो ने उसे जीवन भर एक पैर रस्सी[2] से बँधवाये रखा।

तत्रोपायान् बहून् कुर्वन् स्वदेशविभवाप्तये ।
यथाकथञ्चित् तत्रस्थः पञ्चवर्षः सोऽवसत् समाः ॥ ५० ॥
(अत पर किञ्चिद् ग्रन्थचरित कालवशात् छिन्न)

५० वहाँ अपने देश का विभव प्राप्त करने के लिये, बहुत उपाय करते हुए, यथाकथंचित वह पाँच वर्ष वहाँ स्थित रहा।

[इसके पश्चात का कुछ ग्रन्थ चरित कालवश छिन्न[1] हो गया है।]

स सिन्धुहिन्दुवाडादिदेशान् जित्वा बहिःस्थितान् ।
प्रतस्थे भुट्टदेशं स जेतुं सकटको नृपः ॥ ५१ ॥

५१ बाहर स्थित सिन्धु[1] एवं हिन्दुवाट[2] देश जीतकर, सेना सहित वह नृपति भुट्ट[3] देश प्रस्थान किया।

का उल्लेख तवकाते अकबरी में जम्मू के राजा के रूप में किया गया है। (पृष्ठ ४४७)

(३) भिम्बर : श्रीदत्त ने नाम भिक दिया है। उत्तर तैमूर तथा मुगलकालीन भारत में काश्मीर मण्डल के बाहर भीमवर जिला था। जम्मू से ५६ मिल दूर है। प्राचीन काल में प्रसिद्ध था। मुगल काल में काश्मीर जाने के मार्ग पर पड़ता था। उस समय यह चव या भिव राजाओं की राजधानी था। जम्मू को यदि मद्र देशान्तर्गत मान लिया जाय, तो श्रीवर के वर्णन के अनुसार काश्मीर के बाहर जम्मू से श्रीनगर आते समय, यह स्थान पडेगा। इस समय छम्ब, देवा, चकला मुनावर के अतिरिक्त पूरी तहसील पाकिस्तान के पास अनधिकृत रूप से है। द्रष्टव्य १ १ १६७।

पाद-टिप्पणी

४९ (१) विकार घाव मैं समझता हूँ कि यहाँ गलित कुष्ठ से अभिप्राय है। फोडा इतने लम्बे काल तक नही रह सकता। गलित कुष्ठ उन दिनो आधुनिक औषधियों के अभाव में मृत्यु के साथ ही शरीर का त्याग करता था।

(२) रस्सी पट्टी बाँधने से अभिप्राय है।

पाद-टिप्पणी

५० (१) छिन्न लिपिक अपनी तरफ से तत्कालीन जिस प्रति के आधार पर प्रतिलिपि कर रहा था। उसमें कुछ अश लुप्त था। श्रीवर स्वय अपने ही ग्रन्थ के विषय में नही लिख सकता था क्योकि उसके समय ग्रन्थ पूर्ण रहा होगा। यह मूल का अश नही प्रक्षिप्त मानना चाहिए।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

५१ (१, ३) सिन्ध तथा भुट्ट आइने अक-

वनमध्ये प्रविश्यैव नरकङ्कालपञ्जरम् ।
भित्तिस्थदीपमात्रे ते पश्यन्ति स्म सकौतुकम् ॥ ५२ ॥

५२ वन में प्रवेश करके भी उन लोगो ने कौतूहलपूर्वक एक नरककाल पंजर को देखा जिसके पास भीत पर दीप मात्र स्थित था।

तपस्तप्त्वा चिरं प्राप्य योगसिद्धिमसौ नृपः ।
फणीव कञ्चुकं पूर्वं गुहायामत्यजत् तनुम् ॥ ५३ ॥

५३ वह नृप चिरकाल तपस्या करके योगसिद्धि प्राप्त कर, सर्प के कंचुक[1] के समान गुफा में शरीर त्याग कर दिया था।

बरी में उल्लेख है—सुलतान ने सिन्ध और तिब्बत को जीता था (पृष्ठ ४३९)।

जोनराज की मृत्यु सन् १४५९ ई० में हो गयी थी। श्रीवर ने उसके पश्चात् का इतिहास लिखा है। यहाँ श्रीवर ने स्पष्ट लिखा है कि वे काश्मीर से बाहर स्थित थे। अतएव यह विजय सन् १४५९ ई० के पश्चात् हुई होगी। इस समय जैनुल आबदीन की आयु लगभग ५८ वर्ष की थी। उसकी मृत्यु ६९ वर्ष की अवस्था सन् १४७० ई० में हो गयी थी। श्रीवर जैनुल आबदीन के पूर्व की विजयों का उल्लेख करता है। उसने संवत् क्रमानुसार नहीं दिया है। पहला संवत् जोनराज की मृत्यु सन् १४५९ ई० तथा उसके पश्चात् १४६५, १४५२, १४६०, १४६२, १४५९, १४५७, १४३९, १४६९ तथा १४७० ई० दिया है। श्लोक तथा तरंग एवं घटनाक्रम के अनुसार वर्ष संवत् नहीं दिया गया है। जोनराज ने अवश्य लिखा है कि गान्धार, मद्र, सिन्ध के राजा सुलतान के आज्ञाकारी थे। जैनुल आबदीन के राज्यकाल के समय सिन्ध में जाम-सिकन्दर, जाम राजदान, जाम संजर तथा जाम निजामुद्दीन हुए थे। जामों का समय अनिश्चित है। परन्तु जैनुल आबदीन के प्रारम्भिक राज्यकाल में जाम सिकन्दर के होने की अधिक सम्भावना है।

(२) हिन्दुवाट हिन्दूवाटा स्थान सोपोर से १६ मिल उत्तर स्थित है। इस समय तहसील का सदर मुकाम है। अस्पताल तथा स्कूल है। श्रीनगर—टिथवाल सड़क पर है। श्रीनगर से ४६ मिल दूर है। यहाँ की लोइयाँ तथा पट्टू प्रसिद्ध है। एक मत है कि हिन्दूवाग ही हिन्दूवाट है। वाट का अपभ्रंश वाड़ा हो गया है। वाट शब्द दक्षिण-पूर्व एशिया में बहुत प्रचलित है। उसका अर्थ विहार या मठ होता है।

पाद-टिप्पणी :

५२ (१) नरककाल पञ्जर जोनराज ने सुलतान शहाबुद्दीन के प्रसंग में सुलतान के रक्षित कलेवर का उल्लेख किया है। जोनराज का अनुकरण करता, श्रीवर ने भी कलेवर परिवर्तन की बात दूसरे शब्दों में लिखा है (जोन० ४५४)। आइने अकबरी में अबुल फजल ने लिखा है कि सुल्तान किसी के भी शरीर में प्रवेश कर सकता था (पृष्ठ ४३९)।

तवकाते अकबरी में सुलतान के शरीर से आत्मा निकलने आदि के सम्बन्ध में उल्लेख किया गया है। उसे योगी माना है। शरीर से आत्मा निकालने और पुनः लौटा लाने की यौगिक क्रिया को 'सीमिया' नाम दिया है। तवकाते अकबरी के लीथो संस्करण में 'जिलक्षपिदन' और 'सिल्हवदन' एक पाण्डुलिपि में दिया गया है। 'सीमिया' के लिये 'समया', 'सीमीया' तथा लीथो संस्करण में 'हुमा' दिया गया है। यही शब्द अन्य स्थान पर पाण्डुलिपि में 'इल्फ सीमीया' 'सीमीयाअ' तथा लीथो संस्करण में 'इल्मसीमीया' लिखा गया है।

पाद-टिप्पणी :

५३ (१) कंचुक केंचुल = वस्त्र। श्रीवर ने

इत्याहुर्ज्ञानिनोऽन्ये वा ये बुद्ध्वा सत्त्वमूर्जितम् ।
तेषां प्रामाण्यमकरोत् स राजा च सविस्मयम् ॥ ५४ ॥

५४ इस प्रकार ज्ञानी अथवा अन्य जो लोग कहे, उस तथ्य को जानकर, राजा ने विस्मय-पूर्वक उनका विश्वास किया ।

ध्रुवं महानुभावत्वं विना व्यवहितं नृपः ।
जानीयात् कथमित्याह विद्वज्जन उदारधी ॥ ५५ ॥

५५ 'निश्चय ही महानुभावता के विना गुप्त वृतान्त को राजा कैसे जान सकता' इस प्रकार उदार बुद्धि विद्वजनो ने कहा ।

इत्युपोद्घात.

अथ राजवर्णनम्

ज्येष्ठमादमखानं च हाज्यखानं च मध्यमम् ।
बहमखानमनुजं पार्थिवोऽजीजनत्सुतान् ॥ ५६ ॥

राज्य वर्णन

५६ उस राजा ने ज्येष्ठ आदम[1] खाँ, हाज्य[2] खाँ तथा कनिष्ट बहराम[3] खाँ नामक पुत्रो को पैदा किया ।

गीता का भाव प्रकट किया है

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि सयाति नवानि देही ॥
(गीता २ २२)

पाद-टिप्पणी

५६. (१) आदम खाँ जैनुल आबदीन का ज्येष्ठ पुत्र था । सुल्तान ने इसे प्रारम्भ में युवराज बनाया, पुन पद से हटा दिया । इसने कभी राज्य नही पाया । हाजी खाँ जब सुल्तान बन गया, तो काश्मीर छोड कर भागा । मद्रप्रदेश की ओर युद्ध करता, शत्रुओ द्वारा मारा गया । इसकी लाश हाजी खाँ ने मँगा कर, उसके पिता के समीप दफन करवा दिया । आदम खाँ कभी राज्य नही प्राप्त कर सका । उसका पुत्र फतहशाह काश्मीर का बारहवाँ सुल्तान हुआ था । वह काश्मीर के सिंहासन पर तीन बार बैठा और उतारा गया । उसकी भी मृत्यु काश्मीर से बाहर हुई थी ।

तवकाते अकबरी में उल्लेख है—आदम खाँ सबसे बडा था किन्तु वह सर्वदा सुल्तान की दृष्टि में तुच्छ दृष्टिगत होता था (पृ० ४४१) ।

फिरिश्ता लिखता है—ज्येष्ठ पुत्र आदम खाँ को सर्वदा जैनुल आबदीन नापसन्द करता था ।

(२) हाजी खाँ हैदरशाह के नाम से काश्मीर का नवाँ सुल्तान था सन् १४७० ई० से १४७२ ई० तक काश्मीर का शासन किया था । फिरिश्ता लिखता है कि द्वितीय पुत्र हाजी खाँ को वह पसन्द करता था (४७१) ।

(३) बहराम खाँ सुल्तान जैनुल आबदीन का तृतीय पुत्र था । जैनुल आबदीन उसे अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था । उसने अपनी मूर्खता से पिता की आज्ञा ठुकरा दिया । हाजी खाँ की मृत्यु के पश्चात्, उसने राज्यसिंहासन प्राप्त करने

ज्येष्ठो लावण्यसौभाग्यसुभगैः प्राक्तनैर्गुणैः ।
जनकं रञ्जयामास चन्द्रमा इव वारिधिम् ॥ ५७ ॥

५७ लावण्य सौभाग्य से सुभग तथा प्राक्तन गुणो से ज्येष्ठ पुत्र ने पिता को उसी प्रकार प्रसन्न किया, जिस प्रकार चन्द्रमा वारिध को।

प्रत्यहं हाज्यखानः स कर्पूर इव सौरभैः ।
बाललीलायितैस्तैस्तैः स्वमुदात्तमजिज्ञपत् ॥ ५८ ॥

५८ वह हाज्य खाँ, तत् तत् प्रतिदिन बाल-क्रीडाओ में अपना उदात्त गुण, उसी प्रकार ज्ञापित करता था, जिस प्रकार सुरभि म कर्पूर।

तौ सुतौ सम्मतौ पित्रो रक्षणायाक्षिपन्नृप. ।
स्वधात्रेयतया स्वस्थो द्वयोष्ठक्कुरपक्षयो ॥ ५९ ॥

५९ माता पिता के प्रिय उन दोनो पुत्रो की रक्षा हेतु अपना धात्रीपुत्र होने के कारण स्वस्थ होकर, राजा ने दो ठक्कुरो[१] को अभिभावक बना दिया।

स्वपक्षस्थापनादक्षाः परपक्षेष्टखण्डनाः ।
तार्किका इव तेऽन्योन्यं धात्रेयाष्ठक्कुरा बभुः ॥ ६० ॥

६० तार्किक के समान, स्वपक्ष स्थापन मे दक्ष तथा दूसरे अभीष्ट पक्ष के खण्डन मे सक्षम, वे धात्रेय ठक्कुर[१] परस्पर खण्डन-मण्डन में रत रहे।

का प्रयास किया। मन्त्रियों ने उसे राजा बनाना इस शर्त पर स्वीकार किया कि हाजी खाँ के पुत्र हुसन खाँ को अपना युवराज बनाये। परन्तु इस बार पुन उसने सशर्त राजा होना स्वीकार नही किया। दो बार उसने राज्य का उत्तराधिकार ठुकरा दिया। हुसन खाँ के राज्यकाल में बन्दी बना लिया गया। अन्धा किया गया। बन्दीगृह में ही मर गया।

तबकाते अकबरी मे उल्लेख है —बहराम खाँ सबसे छोटा था। और उसे बहुत बड़ी जागीर मुल्तान मे दी थी।(४४१-६६०)। फिरिश्ता लिखता है—जैनुल आबदीन ने कनिष्ट पुत्र को बहुत जागीर देकर, उसे उसका शासक बना दिया था (४७१)।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में उल्लेख है: 'जैनुल आबदीन ने पहले अपने अनुज मुहम्मद को अपना उत्तराधिकारी (युवराज) बनाया। उसके पश्चात उसके पुत्र हैदर खाँ को विश्वासपात्र बनाकर, पिता के स्थान पर नियुक्त किया। परन्तु जब उसे तीन पुत्र हो गये, तो उसे उत्तराधिकार म वंचित कर दिया (३ २८२)।

पाद-टिप्पणी

५९ (१) ठक्कुर हुस्सन तथा हुसैन।

पाद-टिप्पणी

६०. (१) ठक्कुर द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ४४ तथा श्रीराजतरंगिणी भाष्य पादटिप्पणी श्लोक

सौदर्यस्नेहवृक्षस्य मूलच्छेदनकारिणः ।
तेऽन्योन्यगोत्रजद्वेषात् तयोरासन् समत्सराः ॥ ६१ ॥

६१ सहोदरता के स्नेह वृक्ष का मूलोच्छेद करने वाले, वे एक दूसरे के गोत्रोत्पन्नता के दोष से, उन दोनों के ऊपर इर्षा भाव बनाये रखे।

राजपुत्रास्त्रयस्तस्य गुणातिशयसुन्दराः ।
तत्कृतान्योन्यवैरेण समं वृद्धिं समाययुः ॥ ६२ ॥

६२ गुणो से अतिशय सुन्दर उसके वे तीनो राजपुत्र उनके किये गये पारस्परिक वैर के साथ वृद्ध हुए।

देहसमो देशोऽयं तस्यात्मसमो महीपालः ।
तस्मिन् ससुखे सुखितो दुःखिनि तस्मिन् सदुःखोऽसौ ॥ ६३ ॥

६३ यह देह के समान तथा राजा आत्मा के सदृश हैं, उसके सुखी होने पर सुखी तथा उसके दु खी होने पर, वह दु खी होता था।

अन्योन्यं सरुषो राजपुत्रयोर्मन्त्रिदुर्नयात् ।
अभूज्ज्येष्ठकनिष्ठत्वं प्रक्रियारहितं तयोः ॥ ६४ ॥

६४ मन्त्रियों की दुर्नीति के कारण, एक दूसरे के ऊपर क्रोध युक्त, उन दोनों राज पुत्रों मे प्रकृया रहित ज्येष्ठता एवं कनिष्ठता बनी रही।

श्रुत्वाथ पुत्रयोः वैरमन्योन्यं जातु भूपतिः ।
आह स्मादमखानं स विदेशगमनत्वराम् ॥ ६५ ॥

६५ किसी समय राजा ने दोनों पुत्रो' के पारस्परिक वैर को सुनकर, आदमखाँ से शीघ्र विदेश जाने की बात कही।

पाद-टिप्पणी

६५. (१) पुत्रो फिरिस्ता लिखता है – 'जब वे पुत्र युवक हुए, तो तीनो राजपुत्र परस्पर इर्ष्या करने लगे, और उनमें खुले विद्रोह की भावना दिखायी पड़ने लगी। राजा ने उचित समझा कि उन्हें अलग कर दिया जाय। अतएव उसने आदम खा को एक बड़ी सेना देकर, तिब्बत आक्रमण करने के लिये भेजा (४७१)।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'कुछ समय पश्चात् सुलतान के पुत्र परस्पर विरोधी हो गये और उनमें संघर्ष उत्पन्न हो गया। आदम खा जो उनमें ज्येष्ठ था, एक बड़ी सेना के साथ काश्मीर त्याग कर, छोटे तिब्बत पर आक्रमण करने के लिये प्रस्थान किया (४४२ = ६६२-६६३)।'

(२) वाह्यदेश : काश्मीर से बाहर के देशो के लिये श्रीवर ने वाह्यदेश की संज्ञा दी है।

युक्तमुक्तं न गृह्णासि कुपुत्र यदि मद्वचः ।
मानप्राणधनध्वंसी प्रत्यूहस्तेऽन्यथा भवेत् ॥ ६६ ॥

६६ हे ! पुत्र !! यदि उचित कही गयी मेरी बात नही ग्रहण करते हो, तो तुम्हारा मान, प्राण, धन का ध्वन्स करने वाला विघ्न सम्भव है ।

श्रुत्वेति पितृसन्देशं स भृत्यानब्रवीद् वरम् ।
तत् पर्णोत्सपथा यामः सुखं तत्रैव नः सदा ॥ ६७ ॥

६७ पिता के श्रेष्ठ सन्देश को सुनकर, भृत्यो से कहा—'पर्णोत्स[1] पथ से हम जायेंगे और वही (हमे) सदैव सुख है ।'

अथोचुस्ते तव भ्राता दाता जातोऽस्त्युदारधीः ।
स्वलक्ष्मीं भृत्यसात् कर्तुं स क्षमो न भवान् कचित् ॥ ६८ ॥

६८ उन लोगो ने कहा—'तुम्हारा वह उदार बुद्धि एव दाता भ्राता अपनी लक्ष्मी को नौकरो को देने म समर्थ हैं, तो क्या आप नही हैं ?'

वरं मरणमेवास्तु तदग्रे नोऽद्य सेवया ।
विक्रमादिगुणैर्हीनं न त्वामेवं भजामहे ॥ ६९ ॥

६९ 'सेवा करते हुए, हमलोगो को उसके समक्ष मरना श्रेष्ठ है और इस प्रकार विक्रम आदि गुणो से रहित, तुम्हारी सेवा हमलोग नही कर सकेगें ।'

अग्रजानुजयोः राजपुत्रयोः सुखदु खयोः ।
विपर्ययं व्यधाद् वेधाः प्रमातेव विभागिनोः ॥ ७० ॥

७० विभागी अग्रज एव अनुज राजपुत्रो मे प्रमाता[1] सदृश विधाता ने सुख एव दु ख का विपर्यय कर दिया ।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

६७ (१) पर्णोत्स पृष्ठ सुल्तान न दूसरे पुत्र हाजी खाँ का सघर्ष बचाने के लिये लोह कोट भेज दिया (फिरिश्ता ४७१) ।

तवक्काते अकबरी में भी यही लिखा है—'हाजी खाँ सुल्तान के आदेश स लोहर कोट पर आक्रमण करने के लिये गया (४४२–६६०) ।

पाद टिप्पणी

७० (१) प्रमाता एक मत है कि प्रमाता एक राज्याधिकारी का पद था । उसे न्याय प्रशासकीय अधिकारी कहते थे । दूसरा मत है कि राज सेना का वह एक अधिकारी था, उसका शाब्दिक अर्थ राज्य के अन्न भाग का एक माप या तौल करने वाला था ।

अथाशङ्क्य नृप पापं तद्वधात् कतिचिद्दिनैः ।
बहिर्निष्कासयामास भुट्टमार्गेण तं सुतम् ॥ ७१ ॥

७१ राजा ने उसके वध जन्य पाप की आशका कर, कुछ ही दिनो मे भुट्मार्ग[1] से उस पुत्र को बाहर कर दिया ।

वज्रबाणप्रकारांश्च शिल्पिनः समदर्शयन् ।
येभ्योऽश्रावि ध्वनिर्घोरलोकहृत्कम्पकारकः ॥ ७२ ॥

७२ शिल्पियो ने वज्रबाण[1] के विविध प्रकार प्रदर्शित किया जिनसे घोर जन के हृदय को कम्पित करने वाली ध्वनि सुनी गयी ।

तद्यन्त्रभाण्डभेदांश्च तत्तद्धातुमयान्नवान् ।
आनीतवान् नरपतिं सहतान् शिल्पिनिर्मितान् ॥ ७३ ॥

७३ शिल्पियो द्वारा निर्मित तत् तत् धातुमय नवीन यन्त्रभाण्ड[1] प्रकारो को राजा ले आया ।

प्रशस्ति क्रियतां यन्त्रभाण्डेष्विति नृपाज्ञया ।
मयैव रचितान् श्लोकान् प्रसङ्गात् कथयाम्यहम् ॥ ७४ ॥

७४ यन्त्रभाण्डो की प्रशस्ति की, जिसे इस प्रकार की राजाज्ञा से अपने द्वारा ही रचित श्लोको को प्रसगवश कहता हूँ ।

यदनुग्रहेण राज्ञां समयो लीलाविलासमयः ।
समयश्च यन्त्रतन्त्रैः स्थिरां प्रतिष्ठां क्रियात् स मयः ॥ ७५ ॥

७५ 'जिसके अनुग्रह से राजाओ का लीला विलासमय समय होता है, वह समय और वह शिल्पी यन्त्र तन्त्रो से (राजा की) प्रतिष्ठा स्थिर करे ।

रमवसुशिशिरचन्द्राङ्के शाके नाकेशविश्रुतो राजा ।
श्रीजैनोल्लाभदीनः कश्मीरान् पालयन् विजयी ॥ ७६ ॥

७६ शाक[1] वर्ष १३८६ मे इन्द्रवत् विश्रुत राजा जैनुल आबदीन काश्मीर का पालन करते हुये—

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

७१ (१) भुट्टमार्ग जोजिला पास मार्ग जो श्रीनगर से लेह को जाता है । वही भुट्टमार्ग है (पृष्ठ ४४२) । फिरिस्ता ने भुट्ट देश को तिब्बत लिखा है (४७१) ।

पाद-टिप्पणी

७२ (१) वज्रबाण गोली-गोला, बन्दूक और तोप को ।

पाद-टिप्पणी

७३ (१) यन्त्रभाण्ड तोप ।

पाद-टिप्पणी

७६ (१) शकवर्ष १३८६ = सम्वत् १५२१

वर्षे शशिवेदाङ्के निर्मितवान् यन्त्रभाण्डमिदम् ।
तदिति मौसुलभाषाख्यातं लोके च तत् काण्डमिति ।। ७७ ।।

७७ एकतालीसवें[1] वर्ष में इस यन्त्र भाण्ड का निर्माण किया, जो मौसुल (मुसलिम) भाषा में और लोक में काण्ड[2] नाम से प्रसिद्ध हुआ।

दुर्गेषु दुर्गतिपरं हृत्स्फोटकरं तुरङ्गदत्तदरम् ।
दूरोन्मुक्ताश्मशरं कटकबलान्यदृष्टचरम् ।। ७८ ।।

७८ दुर्गोपर दुर्गति परायणकारी, हृदय स्फोटकारी, तुरग को भयप्रद, दूर से अश्म (पत्थर) शरवर्षी, सैन्य के लिये अगोचर—

सारं सुरीतिबद्धं घनघोषं शिल्पिकल्पितमहार्घम् ।
नवमिव नगरं नृपतेः कल्पं स्ताद्यन्त्रभाण्डमिदम् ।। ७९ ।।

७९ दृढ, सुरीतिबद्ध, घनघोषयुक्त, शिल्पियों को अधिक मूल्यप्रद, नवीन नगर सदृश, राजा का यह यन्त्रभाण्ड कल्प भर रहे।

धातुविभक्तिस्फारात् पदप्रवृत्त्या प्रयोजिते शब्दे ।
अर्थोपलब्धिहेतोर्भवत्विदं वृद्धिगुणयुक्तया ।। ८० ।।

८० पद परिवर्तन पूर्वक शब्द का प्रयोग करने पर, धातु एवं विभक्ति का विग्रह (विस्तार) करने से, अर्थोपलब्धि होने के कारण, यह वृद्धि गुण से युक्त हो।

इति पद्माङ्किता यन्त्रभाण्डाली व्यरुचन्नवा ।
यदुष्मौघध्वनिश्चक्रे मेघगर्जिततर्जनम् ।। ८१ ।।

८१ इस प्रकार पद्मांकित[1], नवीन यन्त्र भाण्डली सुशोभित हुई, जिनके उष्मा पुंज से होने वाली ध्वनि ने मेघ गर्जन को भी तर्जित कर दिया।

विक्रमी = सन् १४६४ ई० = सप्तर्षि ४५४० = कलि० ४५६५ वर्ष।

पाद-टिप्पणी

७७ (१) सप्तर्षि ४५४१ = सन् १४६५ ई० = विक्रमी १५२२ सम्वत् = शक सम्वत् १३८७ = कलि० ४५६६ वर्ष।

(२) काण्ड काश्मरी नाम काण्ड तथा प्रचलित नाम तोप है (द्रष्टव्य . कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया ३ २८२)।

श्री दत्त कौल ने 'तदिति' शब्द को 'तोप' माना है। तोप मानकर अनुवाद यहाँ नहीं किया गया है।

पाद-टिप्पणी

८१ (१) पद्मांकित तोप के नाल के ऊपर फूल-पत्ती बनाने की प्रथा रही है। यह सुन्दरता की दृष्टि से बनाये जाते थे। काश्मीर में जो तोपें ढाली गयी थीं, उन पर कमल चिह्न बनाया गया था। आज भी प्रत्येक देश, अपनी तोपों पर, अपना निश्चित चिह्न नाम आदि बनाते हैं। उनसे तोप के निर्माण स्थान का पता चल जाता है।

कालेनादमखानेऽथ भुट्टान् जित्वा समागते ।
हाज्यखानोऽकरोद्यात्रां लोहराद्रौ नृपाज्ञया ॥ ८२ ॥

८२ समय पर भुट्टों[1] को जीतकर, आदम खाँ[2] के आनेपर, राजा की आज्ञा से हाजी खान[3] लोहराद्रि[4] की यात्रा की।

कथं हि च्छुरिकायुग्ममेककम्युनि स्थाप्यते ।
इति ज्ञात्वा सुतौ राज्ञा कारितौ निर्गमागमम् ॥ ८३ ॥

८३ एक मियान में दो तलवार कैसे रखी जा सकती है ? ऐसा जानकर, राजा ने दोनो पुत्रों का आगम एवं निर्गम कराया।

जनकस्यान्तिके स्नानपानलीलोत्सवादिकम् ।
आदमखानः सत्राणो विदधेऽनुदिनं ततः ॥ ८४ ॥

८४ तत्पश्चात सुरक्षापूर्वक, आदम खाँ[1] प्रतिदिन स्नान, दान, लीला, उत्सव आदि पिता के पास ही करता था।

पाद टिप्पणी।

८२ (१) भुट्ट लद्दाख, तिब्बत आदि से तात्पर्य है। उत्तर पूर्वीय काश्मीरी सीमा तथा केम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार बाल्तिस्तान ही छोटा तिब्बत है (३ २८३)।

(२) आदम खान सुल्तान ने सन १४५१ ई० में आदम खां को भुट्ट अर्थात लद्दाख जीतने के लिये भेजा। लद्दाख ब्लो-ग्रोस-म्चाग-ल्दन (सन् १४४०-१४७० ई०) के नेतृत्व में स्वतन्त्र हो गया था। आदम खां जीत कर, लौटा और विजय द्वारा प्राप्त वस्तुयें गुरु के चरणों में रख दिया (म्युनिख पाण्डु० ७४ बी०, इण्डियन एण्टिक्वेरी ३७ १८९, तवक्काते अकबरी ४४७)।

फिरिश्ता लिखता है—आदम खाँ तिब्बत जीतने में सफल हुआ और गौरव के साथ वे लूट के माल के साथ श्रीनगर लौट आया (४७१)।

(३) हाजी खां तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान ने आदम खाँ के प्रति कृपा दृष्टि दिखाई और हाजी खाँ सुल्तान के आदेशानुसार लोहर कोट पहुँचा' (४४२–६६३)। फिरिश्ता के घटनाक्रम का वर्णन कुछ उल्टा हो गया है। वह आदम के बाहर आने ही के समय हाजी खाँ को भी लोहरकोट भेज देता है। श्रीवर का वर्णन एक प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण ठीक मालूम पड़ता है। श्रीवर पर्णोत्स तथा लोहरकोट में अन्तर करता है। कर्नल ब्रिग्गस ने लोहकोट नाम दिया है (४ ४७१)।

(४) लोहराद्रि - जोनराज ने लोहराद्रि का उल्लेख सुलतान कुतुबुद्दीन के प्रसंग में किया है (जोन० ४६९, ४७४)। वह लोहर कोट अथवा लोहकोट है। यदि एकाक पहाड़ों पर होता था, तो उसमें पर्वत नाम भी लगा देते थे। जैसे चार्णाद्रि, (चुनार) आदि। जोनराज ने भी लोहरकोट के लिए लोहराद्रि नाम का प्रयोग किया है (जोन० ४६९, ४७४)। हाजी खाँ सन् १४५२ ई० में लोहर भेजा गया।

पादटिप्पणी

८४ (१) आदमखान तवक्काते अकबरी में उल्लेख मिलता है—

'सुल्तान आदम खाँ को हाजी खाँ के दुर्व्यवहार के कारण सर्वदा अपने पास रखता था' (४४२)।

वर्षे शशिवेदाङ्के निर्मितवान् यन्त्रभाण्डमिदम् ।
तदिति मौसुलभाषाख्यातं लोकेच तत् काण्डमिति ॥ ७७ ॥

७७ एकतालीसवें[1] वर्ष मे इस यन्त्र भाण्ड का निर्माण किया, जो मौसुल (मुसलिम) भाषा मे और लोक मे काण्ड[2] नाम से प्रसिद्ध हुआ।

दुर्गेषु दुर्गतिपरं हृत्स्फोटकरं तुरङ्गदचदरम् ।
दूरोन्मुक्ताश्मशरं कटकबलान्यदृष्टचरम् ॥ ७८ ॥

७८ दुर्गोपर दुर्गति परायणकारी, हृदय स्फोटकारी, तुरग को भयप्रद, दूर से अश्म (पत्थर) शरवर्षी, सैन्य के लिये अगोचर—

सारं सुरीतिबद्धं घनघोषं शिल्पिकल्पितमहार्घम् ।
नवमिव नगरं नृपतेः कल्पं स्तायन्त्रभाण्डमिदम् ॥ ७९ ॥

७९ दृढ, सुरीतिबद्ध, घनघोषयुक्त, शिल्पियो को अधिक मूल्यप्रद, नवीन नगर सदृश, राजा का यह यन्त्रभाण्ड कल्प भर रहे।

धातुविभक्तिस्फारात् पदप्रवृत्त्या प्रयोजिते शब्दे ।
अर्थोपलब्धिहेतोर्भवत्विद वृद्धिगुणयुक्तया ॥ ८० ॥

८० पद परिवर्तन पूर्वक शब्द का प्रयोग करने पर, धातु एवं विभक्ति का विग्रह (विस्तार) करने से, अर्थोपलब्धि होने के कारण, यह वृद्धि गुण से युक्त हो।

इति पद्माङ्किता यन्त्रभाण्डाली व्यरुचन्नवा ।
यदुष्मौघध्वनिश्चक्रे मेघगर्जिततर्जनम् ॥ ८१ ॥

८१ इस प्रकार पद्मांकित[1], नवीन यन्त्र भाण्डली सुशोभित हुई, जिनके उष्मा पुञ्ज से होने वाली ध्वनि ने मेघ गर्जन को भी तर्जित कर दिया।

विक्रमी = सन् १४६४ ई० = सप्तर्षि ४५४० = कलि० ४५६५ वर्ष।

पाद-टिप्पणी

७७ (१) सप्तर्षि ४५४१ = सन् १४६५ ई० = विक्रमी १५२२ सम्वत् = शक सम्वत १३८७ = कलि० ४५६६ वर्ष।

(२) काण्ड कादम्बरी नाम काण्ड तथा प्रचलित नाम तोप है (द्रष्टव्य कम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया ३ २८२)।

श्री कण्ठ कौल ने 'तदिति' शब्द को 'ताप' माना है। ताप मानकर अनुवाद यहाँ नही किया गया है।

पाद टिप्पणी

८१ (१) पद्मांकित तोप के नाल के ऊपर फूल-पत्ती बनाने की प्रथा रही है। यह सुन्दरता की दृष्टि से बनाये जाते थे। काश्मीर में जो तोपें ढाली गयी थी, उन पर कमल चिह्न बनाया गया था। आज भी प्रत्येक देश, अपनी तोपो पर, अपना निश्चित चिह्न नाम आदि बनाते है। उनसे तोप के निर्माण स्थान का पता चल जाता है।

कालेनादमखानेऽथ भुट्टान् जित्वा समागते।
हाज्यखानोऽकरोद्यात्रां लोहराद्रौ नृपाज्ञया ॥ ८२ ॥

८२ समय पर भुट्टों[1] को जीतकर, आदम खाँ[2] के आनेपर, राजा की आज्ञा से हाजी खान[3] लोहराद्रि[4] की यात्रा की।

कथं हि च्छुरिकायुग्ममेककम्बुनि स्थाप्यते।
इति ज्ञात्वा सुतौ राज्ञा कारितौ निर्गमागमम् ॥ ८३ ॥

८३ एक मियान में दो तलवार कैसे रखी जा सकती है? ऐसा जानकर, राजा ने दोनो पुत्रो का आगम एवं निर्गम कराया।

जनकस्यान्तिके स्नानपानलीलोत्सवादिकम्।
आदमखानः सत्राणो विदधेऽनुदिनं ततः ॥ ८४ ॥

८४ तत्पश्चात सुरक्षापूर्वक, आदम खाँ[1] प्रतिदिन स्नान, दान, लीला, उत्सव आदि पिता के पास ही करता था।

पाद-टिप्पणी।

८२ (१) भुट्ट लद्दाख, तिब्बत आदि से तात्पर्य है। उत्तर पूर्वीय काश्मीरी सीमा तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार बालतिस्तान ही छोटा तिब्बत है (३ २८३)।

(२) आदम खान सुलतान ने सन् १४५१ ई० में आदम खा को भुट्ट अर्थात लद्दाख जीतने के लिये भेजा। लद्दाख ब्लो-ग्रास-चमोग-ल्दन (सन् १४४०-१४७० ई०) के नेतृत्व में स्वतंत्र हो गया था। आदम खा जीत कर, लौटा और विजय द्वारा प्राप्त वस्तुयें राजा के चरणो में रख दिया (म्युनिख पाण्डु० ७४ बी०, इण्डियन एण्टरक्वेरी ३७ १८९, तवक्काते अकबरी ४४२)।

फिरिस्ता लिखाता है—आदम खाँ तिब्बत जीतने में सफल हुआ और गौरव के साथ वे लूट के माल के साथ श्रीनगर लौट आया (४७१)।

(३) हाजी खाँ तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सुलतान ने आदम खाँ के प्रति कृपा दृष्टि दिखाई और हाजी खाँ सुल्तान के आदेशानुसार लोहर काट पहुँचा' (४४२-६६३)। फिरिस्ता के घटनाक्रम का वर्णन कुछ उलटा हो गया है। वह आदम के बाहर आने ही के समय हाजी खाँ को भी लोहरकाट भेज देता है। श्रीवर का वर्णन एक प्रत्यक्ष-दर्शी होने के कारण ठीक मालूम पडता है। श्रीवर पर्णोत्स तथा लोहरकोट मे अन्तर करता है। कर्नल ब्रिग्गस ने लोहकोट नाम दिया है (४ ४७१)।

(४) लोहराद्रि जोनराज ने लोहराद्रि का उल्लेख सुलतान कुतुबुद्दीन के प्रसग मे किया है (जोन० ४६९, ४७४)। वह लोहर कोट अथवा लोहकोट है। यदि एकार्क पहाडी पर होता था, तो उसमें पर्वत नाम भी लगा देते थे। जैसे चर्णाद्रि, (चुनार) आदि। जोनराज ने भी लोहरकोट के लिए लोहराद्रि नाम का प्रयोग किया है (जोन० ४६९, ४७४)। हाजी खाँ सन् १४५२ ई० में लोहर भेजा गया।

पादटिप्पणी

८४ (१) आदमखान तवकाते अकबरी में उल्लेख मिलता है—

'सुल्तान आदम खाँ को हाजी खाँ के दुर्व्यवहार के कारण सर्वदा अपने पास रखता था' (४४२)।

दृष्ट्वा सतीसरसि येन सुखस्थितिः सा
भीतः स यद्यपि गतो घनकालदोषात् ।
यावन्न नाशमुपयाति किरातघातै-
स्तावत् कथं तदवमुञ्चति राजहंस ॥ ८५ ॥

८५ जिसने सतीसर[1] (काश्मीर) में वह सुख स्थिति देखी घनकाल दोष से भीत, वह (हाजी खां) चला गया। राजहंस किरात के घातों से, जब तक नष्ट नहीं हो जाता, तब तक उसे (सरोवर) कहाँ छोड़ता है।

पादटिप्पणी

८५ (१) सतीसर काश्मीर मण्डल और सतीसर नीलमत पुराण सतीसर का वर्णन करता है। काश्मीर उपत्यका पुराकाल में जलपूर्ण थी। उसे उस समय सतीसर कहा जाता था। सतीसर का जल सूख जाने पर भूमि निकल आयी वही काश्मीर उपत्यका है। अबुल फजल ने लिखा है कि काश्मीर की समस्त भूमि उसके शिखरों के अतिरिक्त जलमग्न थी। उसे सतीसर कहा जाता था। बर्नियर अपने नवें पत्र में लिखता है—

प्राचीन काल में काश्मीर जल से भरा था। थसली की भी पूर्वकाल में यही अवस्था थी। वह भी कभी जल से भरा था। गुप्तकाल तक काश्मीर को सतीसर कहा जाता था। सतीसर शब्द काश्मीर उपत्यका के लिये प्रयुक्त होता रहा है। इसमें बारह मूला से दरीनाग तक का भूखण्ड सम्मिलित था। अतः काश्मीर राज्य काश्मीर मण्डल एवं सतीसर के अर्थों में भिन्नता है। सतीसर में काश्मीर मण्डल एवं काश्मीर राज्य का समावेश नहीं होता। सतीसर काश्मीर मण्डल किंवा राज्य का एक खण्ड था। जिस समय सतीसर जल पूर्ण था उस समय गहराई ३०० से ४०० फीट तक थी। शारिका शैल तथा अन्य ऊँचे करेवा द्वीप के समान लगते थे। जल स्तर समुद्र की सतह से ५८०० फीट ऊँचा था। मार्तण्ड की ऊँची भूमि जल के अन्दर नहीं थी। दामजू की गुफा के पत्थरों पर जलस्तरीय पानी का चिह्न आज भी दिखाई देता है। इसी प्रकार वामन के पवित्र जलस्रोत के ऊपर जल चिह्न दिखाई पड़ते हैं। सुपियान समीपस्थ रामू की सराय के ऊपर करेवा एक किनारा बनाता था। उसकी ऊँचाई १०० फीट है। उसके क्षैतिज परतों में विभिन्नता है। सबसे ऊँचाई २० फुट की जमीन एलू॰ वियल है। उसके पश्चात् २० फिट की परत गोले गोले पत्थरों और भुरभुरी मिट्टी का बना है। सबसे नीचे का परत कड़ी नीली मिट्टी का है। यह परत निश्चय ही झील के जल के निश्चल जल की स्थिति के कारण बन गया था। किन्तु मध्यवर्ती मिट्टी की परत उस समय बनी होगी जब उपत्यका का जल बड़े वेग के साथ तट मूल वाली चट्टान के अवरोध हट जाने के कारण निकला होगा। पामपुर तथा समीपवर्ती करेवा पर यदि कोई व्यक्ति खड़ा हो जाय तो उसे चारों ओर ऊँचा पर्वत दिखायी देगा। जमीन भूरी और कुछ बलुई है। यहीं केसर की खेती होती है। बनिहाल–श्रीनगर राजपथ करेवा के समीप होकर जाता है। वहाँ करेवा की बनावट स्पष्ट बताती है कि वहाँ तीन प्रकार की मिट्टियों का स्तर है।

बुर्जहोम में गुफाओं की खुदायी एक टीले पर हुई है। जिस समय मैंने बुर्जहोम की यात्रा किया था वहाँ तक जाने के लिये कच्ची सड़क बनी थी। सतीसर की बात मुझे स्मरण थी। वहाँ मैंने करेवा अथवा टीले के मिट्टियों के स्तर में भिन्नता पाया। यहाँ की खुदायी से स्पष्ट प्रतीत होता है कि टीला के निचले भाग में कभी जल था। उस जल का चिह्न खुले हुये स्थान पर प्रकट होता है।

अथाष्टाविंशवर्षेऽपि　　रावत्रलवलादिभिः ।
इतीरितोऽकरोत् खानः कश्मीरागमनस्पृहाम् ॥ ८६ ॥

८६. अट्ठाइसवे[1] वर्ष, रावत्र[2] लवलादि द्वारा इस प्रकार प्रेरित खान काश्मीर आने की अभिलाषा की ।

स्वामिस्त्वदग्रजीयास्ते　　कश्मीरसुखभागिनः ।
क्लिश्यामः परदेशेऽत्र वयमेव गृहोज्झिताः ॥ ८७ ॥

८७ 'हे ! स्वामी ! तुम्हारे ये अग्रज[1] काश्मीर सुख के भागी हैं, और हम लोग ही गृह त्यागकर, यहाँ परदेश में क्लेश भोग रहे हैं ।

पाद-टिप्पणी

८६ (१) अट्ठाईसवें वर्ष सप्तर्षि वर्ष ४५२८ = सन् १४५२ ई० = विक्रमी १५०९ सम्वत् = शक १३७४ सम्वत् । कलि० गताब्द ४५५३ वर्ष ।

(२) रावत्र रावुत्र शब्द का उल्लेख शुक ने (१ १ २२, ६१, १४८) किया है । वहाँ 'रौवत्र' का पाठभेद 'रावत्य' मिलता है । 'रावत्र' 'रावुत्र' 'रावत्य' शब्द समानार्थक प्रतीत होते हैं । 'रावत्र' नाम वाचक शब्द है । वंश, कुल एवं जाति किंवा उपजाति का द्योतक है । श्रीवर ने पुन उल्लेख (२ १२) किया है । शुक तथा श्रीवर दोनों ने इस नामवाचक माना है । कल्हण तथा जोनराज राजतरंगिणियों में मुझे रावत्र किंवा राउत्र शब्द नहीं मिला । 'रावत' एक ब्राह्मण जाति है, जो पश्चिमी उत्तर प्रदेश में निवास करती है । यह जाति एवं काश्मीर के 'रावत्र' एक ही हैं अथवा भिन्न यह अनुसन्धान का विषय है । रावत का अर्थ सरदार, सामंत, लघु राजा, शूर, वीर योद्धा तथा सेनापति होता है । जमीन्दारों रियासत के राजाओ, सामन्तों तथा जागीरदारों की एक पदवी थी । यह शब्द राजपुत्र के समकक्ष है । राउत एवं रौत, दोनों शब्द राउत्र किंवा रावत्र संस्कृत शब्द के अपभ्रंश हैं । उनका अर्थ एक है ।

शुक तथा श्रीवर दोनों के वर्णनों से प्रकट होता है कि 'रावुत्र' पदधारी व्यक्ति सैनिक तथा उच्च पदाधिकारी थे ।

लोकप्रकाश में 'रावत्र' एवं 'राउत्र' शब्द का उल्लेख मिलता है । क्षेमेन्द्र ने लिखा है—'गान्धर्व-वले रावुत्रामुकेन राइत्रामुक पुत्रेण' (पृष्ठ २३) तथा 'श्री प्रेक्षाप्ल्ले रावत्र अमुकस्य यथा मदीय' (पृष्ठ २४) । इससे स्पष्ट होता है कि रावत्र जाति किंवा पदवी वाचक शब्द राजानक एवं डामर के समान था । धनुर्विदों के लिये इस शब्द का प्रयोग किया जाता रहा है तथा धनुष विद्या में श्रेष्ठ जनों को यह मूलत पदवी दी जाती रही है, जो कालान्तर में एक वंश, कुल किंवा जाति अथवा उपजाति वाचक शब्द बन गया । लोकप्रकाश में रावत्र का पर्याय विद्वान, कवि, महाकवि, प्राड्विवाक आदि दिया गया गया है (पृष्ठ ४ श्रीनगर संस्करण) । लोकप्रकाश विषयानुक्रमणिका क्रम संख्या २१ के 'पण्डितभेद' पृष्ठ ४ से स्पष्ट होता है कि रावत्र किंवा राउत्र ब्राह्मणों की एक उपजाति थी । रणपुत्र से राणा जिस प्रकार हो गया है, उसी प्रकार रणाउत्र = रणौत शब्द है । काश्मीर में ठाकुर, राजपूत, शाही, प्रतिहार, क्षत्री आदि कुल बाहर से आकर, आबाद हो गयी थी । इसी प्रकार, यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतीय रावत जाति के कुछ योद्धा काश्मीर में आकर आबाद हो गये थे ।

पाद-टिप्पणी ·

८७ (१) अग्रज . ज्येष्ठ भ्राता आदम खाँ ।

राजानकप्रतीहारमार्गेशकुलजादयः ।
अस्मत्प्रतीक्षिणः सर्वे तत्र वीरा बलोद्धताः ॥ ८८ ॥

८८ राजानक[1], प्रतीहार[2] एवं मार्गेश वंशीय आदि बलोद्धत सब वीर वहाँ पर हमलोगों की प्रतीक्षा मे हैं।

पाद टिप्पणी

८८ (१) राजानक परशियन इतिहासकार राजानक का समानवाची शब्द रैना तथा राजदान देते हैं। इस समय रैना तथा राजानक दोनो जाति वाचक शब्द प्रचलित है। राजाओं द्वारा प्रदत्त एक उपाधि थी। हिन्दू राज्यकाल में राजवंशियों एवं विशिष्ट राजपुरुषों को दी जाती थी। कल्हण ने इस पदवी का उल्लेख किया है (रा० ६ ११७, २६१, ४ ४८९)। मुसलिम राज्यकाल म पुरानी प्रथा चलती रही। मूलतः यह सम्राटों की पदवी थी, जो कालान्तर में करद तथा छोटे राजाओं को दी जाने लगी थी। राजानक, राज निका, राजनायक एवं राजान एक ही मूल शब्द के भिन्न भिन्न रूप हैं। काश्मीर के राजदान ब्राह्मण किसी समय राजानक उपाधिधारी थे। जोनराज को राजानक की पदवी प्राप्त थी। इसी प्रकार राजान शृंगार तथा राजानक जयानक को यह उपाधि प्राप्त था।

श्रीवर के समय राजानक एवं राजान शब्द का प्रचुर प्रयोग मिलता है (श्रीवर० १ १ ८८, ३ ४८२-४, २९५, ३५३, ४२४, ५८२)। शुक मे (१ १६ २०, ३६, ३७, २०, ६४ ६७, ७०, ७६, ९१, १०३, १२७, १२८, १४१ १४६, १७१, १७५)। हिमाचल आदि पर्वतीय देशो में राजानक प्रचलित उपाधि थी। राजाओं को भी राजानक कहा गया है। ताम्रपत्रों एवं मुद्राओं पर राजानक उपाधि टंकणित मिलती है। चम्बा राज्य के अभिलेखों तथा ठक्कुरों के साथ राजानक पदवी का उल्लेख मिलता है।

रणपुत्र से राणा शब्द उसी प्रकार निकला है जिस प्रकार राजपुत्र से राजपूत। राजानक का सबसे प्राचीन प्रयोग हिमगिरी परगना चम्बा में मिलता है। खान्दानी जमीन्दारों को राजानक पदवी दी जाती थी। सुदूर प्राचीन काल में पर्वतीय भूमि स्वामियों, जो यूरोप के बैरनो के समान थे दी जाती थी। कीर-ग्राम के लक्ष्मणचन्द्र के साथ यह पदवी मिलती है। कालान्तर में काश्मीर और चम्बा में यह पदवी दी जाने लगी। काश्मीर में राजान्यक किंवा राजानक कालान्तर में एक वंश एवं काश्मीरी ब्राह्मणो की उपजाति माना जाने लगा है। आनन्द राजानक के वंश प्रशस्ति (सत्तरहवीं शताब्दी) का, जिसे नैषध-चरित भाष्य में लिखा है, उसमें राजानक शब्द का प्रयोग किया गया है। यह पदवी त्रिगर्त अथवा कागड़ा में भी प्रचलित थी।

राजान्यक एवं राजक शब्दों के अर्थ में अन्तर है। संस्कृत साहित्य में राजक लघु राजाओं किंवा उनके समूह के लिये एवं राजान्यक क्षत्रिय योद्धाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है। अशोक के शिला-लेखों में उच्च पदाधिकारियो क लिय राजुक शब्द का प्रयोग किया गया है। राजानक शब्द नारायण पाल के भागलपुर फलक (आई० ए० भय० १५ पृ० ३०४, ३०६), मध्यम राजदेव सौलो-द्भववंश के परिकुड फलक (ई० आई० ११ २८१, २८६) में उल्लेख किया गया है। राजन्य शब्द लक्ष्मणसेन के अनुदान में उल्लिखित है। (ई० आई० १२ ६ ९)। पाणिनी (ईसा पूर्व ६००-३०० वर्ष) ने राजन्य शब्द का व्यवहार जिस अर्थ में किया है, वही अर्थ अमरकोषकार (चौथी शती) तथा कालान्तर में कल्हण ने (बारहवीं शती) किया है। सन् ११४३ ई० में चम्बा अभिलेखों में राजानक की पदवी ललितवर्मा ने दी थी उल्लेख मिलता है। कुछ स्थानों पर राजनक को राजान से

निम्न स्तर का माना गया है। वे लोग जागीरदार तथा अभिजात कुल के थे। रियासतों के शासकों के रूप में सुलतान तथा राजा लोग यह, उपाधि देते थे।

(२) प्रतीहार श्रीवर ने पुन प्रतीहार का उल्लेख (१ १ १५१, १ ७ - २०२, ३ ४६३, ४ १६७, २६२ तथा शुक ने १ १ : १८, ३०, ४२, १९८ तथा २०६) में किया है। प्रतीहार का शाब्दिक अर्थ द्वारपाल होता है। कल्हण ने प्रतिहार शब्द का द्वारपाल तथा रक्षक के रूप में प्रयोग (रा० : ४ १४२, २२३, ४८५) किया है। कालान्तर में यह वश, पदवी तथा एक शासकीय पद हो गया। प्राचीन काल में राजाओं के समीप प्रतीहार नामक एक विशिष्ठ कर्मचारी रहता था। वह राजा को समाचार सुनाया करता था। पठित, शिष्ट, अनुभवी तथा कुलीन इस पद पर रहने लगे। मुसलिम काल में उन्हें नकीब तथा चोबदार कहते थे। प्रतिहार तथा प्रतीहार एक ही शब्द है। उच्चारण भेद से वर्तनी में भेद हो गया है। प्राचीन काल में हिन्दू राजाओं के समय महाप्रतिहार, राजभवन का रक्षक अधिकारी, नगर के द्वाररक्षकों का मुखिया, राजा के शयनकक्ष का रक्षक था। एक मत है कि महाप्रतिहार राजा का व्यक्तिगत सेवक होता था। 'प्रतिहार प्रस्थ' एक कर होता था, जिसे ग्रामीण एक प्रस्थ के हिसाब से प्रतीहार को देता था। प्रतिहार स्त्रियाँ रक्षक राजप्रासादों में होती थी। वे अन्त पुर के द्वार की रक्षक तथा रानी की सेविका होती थी।

भारत में प्रतिहार किंवा प्रतीहार परिहार नाम से ख्यात है। राजपूतो के तीस गोत्रों में से एक है। प्राचीन मान्यता के अनुसार शास्त्रों का उद्‌भट विद्वान् हरिश्चन्द्र एक ब्राह्मण था। उसकी दो पत्नियाँ थी। ब्राह्मण पत्नी से उत्पन्न प्रतीहारवशीय ब्राह्मण तथा क्षत्रीय पत्नी से उत्पन्न पुत्र राजवश के सस्थापक हुये। क्षत्रिय पत्नी से उत्पन्न चार सन्तानें थी। उनमे राज्यों का चार राजवश स्थापित हुआ।

प्रतीहार वंश की एक शाखा मालव अर्थात् मालवा में आठवी शताब्दी तक शासन करती रही। एक मत है कि मालव प्रतिहार वश ब्राह्मण प्रतिहार वश की शाखा था। कालान्तर में क्षत्रियों से विवाहादि करने के कारण क्षत्रिय हो गये थे। इस वश का प्रसिद्ध सम्राट नागभट हुआ है। उसने अरब आक्रमकों से माल्वा की रक्षा किया था। आठवी शताब्दी के उत्तरार्ध में इस वश के वत्सराज ने राजस्थान के गुर्जरराज पर विजय कर लिया। उसने वगाल के पालवश पर भी विजय प्राप्त किया था। उसने गगा-यमुना मध्यवर्ती ब्रह्मावर्त धर्मपाल से जीत लिया था। विजय करता गौड मे होता गगासागर तक पहुँच गया था।

वत्सराज का उत्तराधिकारी नागभट द्वितीय था। राष्ट्रकूटवशीय राजा तृतीय ने मालवा पर अधिकार कर लिया था। पराजय के पश्चात् नागभट ने उससे कन्नौज जीतकर, उसे अपनी राजधानी बनाया। इस समय से उत्तर भारत में कन्नौज प्रतिहारों का केन्द्र हो गया।

नागभट द्वितीय का पौत्र भोज प्रतिहार इस वंश का सबसे प्रतिभाशाली राजा हुआ है। उसके समय प्रतिहार राज्य गुजरात से पजाब तक विस्तृत था। उसका राज्य काश्मीर की दक्षिण सीमा के निकट तक था। दसवी शताब्दी के प्रथम दशक में महेन्द्रपाल के समय उत्तर वगाल तक विस्तृत था। उसका पुत्र महिपाल इस वश का अन्तिम प्रसिद्ध राजा हुआ है। उसका राजकवि शेखर था। महमूद गजनी ने कन्नौज पर आक्रमण किया। कन्नौज अपनी गरिमा कायम नही रख सका। त्रिलोचनपाल इस वश का अन्तिम राजा था।

मुहम्मद गोरी का कन्नौज पर आधिपत्य स्थापित होने पर, प्रतिहार बिखर गये। महाराष्ट्री जिस प्रकार पूना तथा रत्नागिर से अलमोडा आदि पर्वतीय क्षेत्र में फैल गये, उसी प्रकार प्रतीहार लोग भी अपनी धर्म एव प्राणरक्षा के लिये, काश्मीरादि

यद्यप्यवचनग्राही भूभुजो निश्चितो भवान् ।
तावतैव स किं क्रुद्धो हन्त्यस्मान् करुणापरः ॥ ८९ ॥

८९ 'आप राजा का वचन नही ग्रहण करें, तो इतने ही से वह दयालु क्रुद्ध होकर, हम-लोगों को मार देगा ।

युद्धायादमखानश्च निर्यातः स्वबलान्वितः ।
त्वत्तः स नश्यति क्षिप्रं श्येनाग्रादिव पोतकः ॥ ९० ॥

९० 'अपने बल से अन्वित होकर, युद्ध के लिये निकला, वह आदम खाँ, उसी प्रकार शीघ्र नष्ट हो जायगा, जैसे बाज से पक्षि-शावक ।

पर्वतीय क्षेत्रों में शरण लिये थे । काश्मीर के प्रतीहार भारतीय प्रतिहारो के वंशज हैं । काश्मीर के मुसलमान हो जानेपर वे भी मुसलिम धर्म ग्रहण कर लिये । अपना कुलगत नाम नही त्याग सके । पर्शियन इतिहासकारों ने प्रतिहारों को 'पडर' लिखा है ।

काश्मीर में प्रतिहारों का भी वर्गीकरण था । प्रतीहार, भोप्रतीहार, ला प्रतीहार आदि का उल्लेख लोकप्रकाश में मिलता है (पृष्ठ २) । विषयानुक्रमणिका क्रम सख्या ६ में 'डामरपति नामानि' में प्रतीहार को रखा गया है । इससे एक अनुमान और लगाया जा सकता है कि प्रतीहार कम करने के कारण, उनके वंश के लिये नाम रूढ हो गया था । कर्मों के अनुसार प्रतीहारों का वर्गीकरण हो गया था । डामरों के समान प्रतीहार वर्ग ग्रामीण तथा कृषोपजीवी कुलीन लोग थे ।

कल्हण के समय प्रतिहार का कार्य द्वारपाल, राजभवन रक्षक आदि था । प्रतिहार का स्थान महत्वपूर्ण था । राजा ललितादित्य की रानी कमलादेवी महाप्रतिहार पीड थी । राज्यभवन किंवा अन्तःपुर की मुख्य अध्यक्ष थी । प्रतिहार कुलागत सेवा स्थान भी होता था, जिसके कारण वंश का नाम प्रतिहार पड़ गया था । प्रतिहार उपाधिरूप में प्रयुक्त होने लगा था (रा० ४ ४८५) । कल्हण के वर्णन से यह भी प्रकट होता है कि ललितादित्य ने पाँच और कर्मस्थानों की स्थापना की थी । उसके पूर्व अट्ठारह कर्मस्थान थे । उसने २३ कर्मस्थान बनाये थे । उनमें एक महाप्रतिहार पीड था । उसका कार्य गृह विभाग देखना था । उसका पद महासन्धि विग्रहिक (विदेश मंत्री) महाभाण्डार आदि के समान उत्तरदायित्वपूर्ण पद आजकल के गृहमन्त्री के समान था (रा० ८ १४३) । एक समय प्रतीहार इतने शक्तिशाली हो गये थे कि राजा को सिंहासन पर बैठा और उतार सकते थे (रा० ५ १२८, ३५५) । हर्षचरित में महाप्रतिहार पद का उल्लेख मिलता है । राजा हर्ष का महाप्रतिहार पारियात्र था । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी शुक १ १ ८८ ।

(३) मार्गेश काश्मीर के आने वाले मार्गों अर्थात सीमावर्ती दर्रों के प्रवेश मार्गों की रक्षा का भार, जिस सैनिक अधिकारी पर होता था, उसे मार्गपति कहते थे । यह पदवी उत्तरदायित्वपूर्ण माना जाता था । प्रत्येक दर्रों पर द्रंग अर्थात सैनिक चौकियाँ बनी रहती थी । मुगल काल में दर्रों की रक्षा का भार मलिकों को दिया गया था । सुपियान के समीप उन्हें जागीर भी दी गयी थी । उन्हें संस्कृत में द्रंगश कहा जाता था ।

काश्मीर के बाहर भी यह शब्द प्रचलित था । सीमान्त तथा दर्रों का रक्षक मार्गपति माना जाता था । यशोवर्मदेव के नालन्दा अभिलेख (सन् ५३० ई०) में इसका उल्लेख मिलता है (आह० २० २७, ४१) ।

अमी राजपुरीयाद्याः सर्वेऽस्मच्छुभकाङ्क्षिणः ।
तत् तेनैवाधुना यामो न किं सिध्यति साहसात् ॥ ९१ ॥

९१. 'राजपुरी आदि सब हम लोगों के शुभाकांक्षी हैं अतएव हमलोग अभी जायेंगे। साहस से क्या सिद्ध नहीं होता ?

मृते रिगप्रतीहारे वीराः के सन्ति तत्पुरे ।
इति त्वत्पैतृकपदं हर्तुं गन्तुं तवोचितम् ॥ ९२ ॥

९२. 'रिग[1] प्रतीहार के मरने पर, उसके नगर में कौन वीर है ? अत: अपना पैतृक पद प्राप्त करने के हेतु तुम्हारा जाना उचित है।

शिष्यास्तेऽमी वयं भृत्या वीरास्त्वत्पैतृकैः सह ।
योत्स्यामः कीदृशं शौर्यमेकदा द्रष्टुमर्हसि ॥ ९३ ॥

९३. 'हम लोग तुम्हारे वीर शिष्य एवं भृत्य तुम्हारे पैतृक जनों के साथ युद्ध करेंगे। एक बार आप पराक्रम देखें।'

तथेत्युक्त्वाथ खानेन पृष्टौ तन्मन्त्रिणौ मतम् ।
स फिर्यडामरस्ताजतन्त्रेशश्चेत्यवोचताम् ॥ ९४ ॥

९४. 'ऐसा ही हो'—यह कहकर, खाँन द्वारा मत पूछने पर, फिर्य डामर[1] तथा ताज तन्त्रेश[2] ने इस प्रकार कहा—

पाद-टिप्पणी :

९१ (१) राजपुरी : राजौरी।

पाद-टिप्पणी :

९२. (१) रिग : श्रीदत्त ने 'रिग' के स्थान पर 'अगिर' नाम दिया है (२ : १०६)।

पाद-टिप्पणी :

९३ (१) पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

श्रीदत्त ने 'सफिर्र डामर' अनुवाद 'फिर्य डामर' के स्थान पर किया है (पृष्ठ १०७)।

९४. (१) डामर : परशियन इतिहासकारों ने इन्हें डम्रे नाम से सम्बोधित किया है। क्षेमेन्द्र, कल्हण, जोनराज, श्रीवर, शुक ने डामरों का उल्लेख किया है। राजतरंगिणियों के अतिरिक्त क्षेमेन्द्र की समयमातृका तथा लोकप्रकाश में डामरों का उल्लेख किया गया है। कल्हण से एक शताब्दी पूर्व क्षेमेन्द्र ने काली को डामर समरसिंह के घर ठहरा कर, यह दिखाने का प्रयास किया है कि डामरों का मकान अच्छा एवं सुख प्रसाधनों से पूर्ण रहता था।

सेण्ट पीटर्सबर्ग के कोश में डामर को विद्रोही तथा लड़ाकू लिखा गया है। प्रोफेसर एच० कर्न ने डामर का अर्थ 'बोअर' अर्थात् बैरन अथवा जमीन्दार लगाया है। अल्बेरूनी ने ईशान दिशा में स्थित देशों के साथ डामरों का उल्लेख किया है। दर्व के पश्चात् ही वह डामर शब्द का प्रयोग कर दिखाना चाहता है कि काश्मीर के सीमावर्ती दर्वों के पड़ोस में ही डामर निवास करते थे (१ : ३०३)। देश के रूप में अल्बेरूनी ने डामरों का उल्लेख किया है किन्तु काश्मीर के डामरों की कुछ और परिस्थिति थी। काश्मीर में डामर भूस्वामी थे। कुलीन थे। भूमि पर निर्वाह करने वाला वर्ग था। सामन्त वर्ग था।

उनका विवाह सम्बन्ध राजवंशों में होता था। कल्हण एवं जोनराज के समय कोई भी व्यक्ति डामर हो सकता था। केवल उसे सफल कृषक अपने को प्रमाणित करना पड़ता था। कल्हण ने उन्हें अशिष्ट आचरण युक्त एवं खर्चीला चित्रित किया है।

डामर नगरों के बाहर निवास करते थे। शस्त्र-धारण करते थे। समरांगण में वीरगति प्राप्त करने पर उनकी स्त्रियाँ सती होती थीं। हिन्दू राज्य के पतन के कारण, अनियन्त्रित एवं उच्छृङ्खल डामर थे। मुसलिम काल में उनका पूर्णरूपेण दमन कर दिया गया था। वे मुसलिम धर्म स्वीकार कर लिये थे। उनकी शक्ति का विकास क्रमिक हुआ है। राजा अवन्तिवर्मा के समय से संघटित एक शक्ति के रूप में मिलते हैं। राजा चक्रवर्मा राज्य सिंहासन से च्युत कर दिया गया, तो वह संग्राम डामर के यहाँ शरण लिया था। डामरों के कारण चक्रवर्मा ने पुनः राज्य प्राप्त किया था। राजा उन्मत्तवन्ती तथा रानी दिद्दा के समय प्रभावशाली हो गये थे। काश्मीर में लोहर वंश के राज्य पर, प्रतिष्ठित होनेपर, डामरों की शक्ति पूर्णरूपेण विकसित हो गयी थी राजा संग्रामराज से उत्कर्ष के समय मध्य उनकी स्थिति अर्ध स्वतन्त्र राज्यों के समान हो गयी थी। वे अवध के ताल्लुकेदार अथवा राजस्थान के जागीरदार के समान थे। डामर दुर्ग तथा कोटों के स्वामी थे। एक दूसरे का दुर्ग तथा कोट लेने के लिये परस्पर संघर्ष करते थे। उन्हें कल्हण लवण्य भी मानता है। लवन्य वर्तमान मुसलिम क्रम लुन है। वे आग चलकर राजाओं के बनाने बिगाड़ने वाले हो गये थे। डामर द्रष्टव्य रा० ६ ३४८ लेखक।

(२) तन्त्री सैनिक, सेना, शासन आदि अर्थ में दक्षिण भारतीय ग्राम लेखों में तन्त्र शब्द का प्रयोग किया गया है। सेना में मुख्यतया पदातिक सेना को तन्त्री कहा गया है। तन्त्र अधिकारी का अर्थ शासनाधिकारी, राज्यपाल के भानुरिया अभिलेख में मिलता है। उसके अनुसार मन्त्री, सचिव तथा अन्त में तन्त्री पद प्राप्त करता था। सर्व-तन्त्राधिकारी सभी विभागों का निरीक्षक होता था। तन्त्र अधिकारी को तन्त्र अध्यक्ष भी कहते थे। तन्त्रपाल तन्त्राधिकारी का वही स्थान था जो तन्त्राधिकारी था। तन्त्र कर्म राजकीय विभाग था। तन्त्रनायक का सम्बन्ध सेना अथवा शासन से था। तन्त्रपाल मुख्य सेनाधिकारी होता था। इसी प्रकार महातन्त्राध्यक्ष, सर्वतन्त्राधिकृत, तन्त्रपति तथा महातन्त्राधिकारी शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। कहीं-कहीं महासम्मत, महादण्डनायक भी कहा जाता था। एक मन्त्रणदायक, रूप में भी उसका उल्लेख अभिलेखों में मिलता है। उसे तन्त्र-पालाधिष्ठापक तथा तन्त्रपालधिष्ठापक भी स्थान-स्थान पर कहा गया है। तन्त्रपति अथवा तन्त्रीश शब्द धर्म अधिकारी भी राजतरंगिणी में माना गया गया है (रा० ८ २३२२)। बृहद्तन्त्रपति मुसलिमकालीन अधिकारी 'सदरमदर' तुल्य था। वह सुल्तान के मुख्य न्यायपति, राजकीय दान विभाग का अधिकारी माना गया है। तन्त्रावय का अर्थ जुलाहा या बुनकर तथा तुन्नवाय का अर्थ दर्जी था।

तन्त्रियों का अत्यधिक उल्लेख राजतरंगिणी में किया गया है (रा० ५ : २४८–२५०, २५५, २६०, २६५, २६६, २७४, २७५, २८७, २८९, २९३, २९४, २९५, ३०२, ३२८, ३३१, ३३८–३४०, ४२१, ४३१, ६ १३२, ७ १५१३, ८ २९२, ३०३, ३७५, ५१०, ५९७, ९२८)। श्रीवर ने तन्त्राधिकार का उल्लेख (१ ३ ४१) में किया है।

तन्त्री का सर्वप्रथम प्रयोग कल्हण ने रानी सुगन्धा (सन् ९०४–९०६ ई०) के सन्दर्भ में किया है। तन्त्रि पदातिकों का इसी समय कुल समूहबद्ध हुआ अर्थात् उन्होंने अपना एक संघ बना लिया था। इस समय में तन्त्रियों की शक्ति बढ़ने लगी थी (रा० ५ २४८)। तन्त्रियों की शक्ति राजा पार्थ के उत्तराधिकारी तथा शंकरवर्धन के चक्रवर्मा के द्वारा (द्रष्टव्य टिप्पणी रा० ५ २४८ खण्ड

देव त्वत्सेवकाः सर्वे स्वगृहोत्कण्ठिताशयाः ।
देशकालावनालोच्य कथयन्त्यसुखप्रदम् ॥ ९५ ॥

९५ 'हे ! देव !! तुम्हारे सेवको का मन घर के प्रति उत्कण्ठित है। अतः देश-काल की चिन्ता न कर, असुखप्रद बात कर रहे हैं।

कथमभ्यन्तरं यामः सति राज्ञि बलोर्जिते ।
प्रदीप्तं व्योम्नि मार्तण्डं कुण्डेन पिदधाति कः ॥ ९६ ॥

९६. 'बलोर्जित राजा के रहते, कैसे अन्तर प्रवेश करेंगे ? आकाश में प्रदीप्त मार्तण्ड को कुण्ड से कौन आच्छादित करता है।

यावज्जीवति भूपालस्तावत् को बाधितुं क्षमः ।
मनोऽनुवर्तनं कर्तुं तद्युक्तं तव साम्प्रतम् ॥ ९७ ॥

९७. 'जब तक राजा जीवित है, तब तक कौन बाधित कर सकता है ? अतः इस समय उसके मन का अनुवर्तन करना उचित है।

प्रसन्ने जनकेऽस्माकं भवेयुः का न सम्पदः ।
ईश्वरे च गुरौ भक्तिर्जायते पुण्यकर्मणाम् ॥ ९८ ॥

९८. 'पिता के प्रसन्न होने पर, हमलोगो के लिये कौन-सी सम्पत्तियाँ प्राप्त नही हो सकती ? ईश्वर एव पिता मे भक्ति पुण्यशालियों की हो होती है।

अस्य कोपेन यत् साध्यं परानुग्रहतो न तत् ।
दुर्दिने या रवेर्दीप्तिः प्रदीपाज्ज्वलतो न सा ॥ ९९ ॥

९९ 'इसके कोप से जो साध्य है, वह दूसरे के अनुग्रह से नही (होगी) ? दुर्दिन मे सूर्य की जो दीप्ति होती है, वह दीप्ति जलते दीपक से (सम्भव) नही।

---

२ लेखक) पराजित होने के पश्चात् (सन् ९०६–९३० ई०) बहुत बढ़ गयी थी (रा० ५ २४९–३४०)।

प्राचीन रोमन साम्राज्य के प्रेटोरियन गार्ड के समान उनकी स्थिति हो गयी थी। अश्वारोहियो से वे भिन्न थे (रा० ७ १५१३, ८ ३७५, ९३२, ९३७)। तन्त्री राजा के अंगरक्षक रूप से भी कार्य करते थे (रा० ८ ३०३)। तन्त्रियों का नाम 'श्रम' में आता है। वे तान्त्र कहे जाते हैं। तान्त्र काश्मीर में मुसलिम कृषकों में अधिक पाये जाते हैं। वे पूर्वकालीन तन्त्रिवंशीय है। उनमें अनेक भेदभाव थे। उनका अब लोप हो गया है। तान्त्र जाति की विशेषतायें क्या थी, अब पता नहीं चलता। वे अपने मूल स्वरूप एव परम्परा को भूल गये हैं। लारेन्स ने उनके विषय में लिखा है—'वैवाहिक सम्बन्ध में उनमें किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नही है। तान्त्र वर्ग का कोई मुसलमान तान्त्र श्रम अथवा ग्राम के किसी मुसलिम कन्या से विवाह कर सकता है। केवल एक ही प्रतिबन्ध है। उन्हें ग्रामीण कृषक होना चाहिये' (वैली : ३०६)।

पाद-टिप्पणी

९९. पाठ–बम्बई।

खलोक्तिश्वासमालिन्यं सतत नयसेविनः ।
हृदयादर्शवैपद्योत्सर्सकं नास्य दृश्यते ॥ १०० ॥

१०० 'निरन्तर नीतिसेवी, इस राजा के हृदय दर्पण की स्वच्छता को खलोक्ति स्वास[1] मलिन नही कर सका।

निर्वाणगोष्ठीनिष्ठस्य तद्वच्छास्त्रविवेकिनः ।
कृपाब्धेरस्य नो किञ्चित् कृत्यमस्त्यसुखप्रदम् ॥ १०१ ॥

१०१ 'निर्वाणगोष्ठी निष्ट' और उमी प्रकार शास्त्र विवेकी एव कृपासागर इसका कोई कार्य कष्टप्रद नही था।

तद्द्रुग्घपितृपक्षोऽपि स्वामिभक्ति न सोऽत्यजत् ।
तेनैवान्त्यक्षणः श्लाघ्यस्तस्याभूज्जैनभूपवत् ॥ १०२ ॥

१०२ 'पितृद्रोही पक्ष के प्रति भी उसने स्वामिभक्ति नही त्यागी। इसी कारण जैन भूपति की तरह उसका अन्तिम क्षण प्रशसनीय हुआ।

सौहार्दमार्दवोपेता योग्या कार्यविचक्षणा ।
जाने तेनैव पुण्येन सन्ततिस्तस्य राजते ॥ १०३ ॥

१०३ 'मानो इसी कारण उसकी सोहार्द मार्दव से प्राप्त योग्य, कार्य में चतुर सन्तति शोभित हो रही है।

पाद-टिप्पणी

१००. (१) स्वास यदि शीशा या दर्पण के समीप स्वास लिया जाय, तो दर्पण पर वाष्प जमकर, उसे किंचित काल के लिए मलिन बना देता है। किन्तु यह मलिनता स्वास प्रक्रिया के दर्पण से हटते ही, समाप्त हो जाती है।

पाद-टिप्पणी

१०१ (१) निर्वाणगोष्ठी-निष्ठ जैनुल आबदीन दार्शनिक था। वह सस्कृत भाषा तथा फारसी जानता था। अकबर के समान वह विद्वानों से दार्शनिक तत्वों एव धर्म के गूढ भावो को समझने का प्रयास करता था। इस प्रकार की आध्यात्मिक चर्चा किंवा गोष्ठी की सज्ञा श्रीवर ने निर्वाणगोष्ठी से दिया है। इसका उल्लेख पुन श्रीवर ने नही किया है।

पाद-टिप्पणी

१०२ (१) श्लोक सख्या १०२ तथा १०३ प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं। परन्तु कलकत्ता एव बम्बई दोनों सस्करणो में है। अतएव उन्हें यहाँ स्थान दिया गया है। श्रीकण्ठ कौल का मत ठीक है। कलकत्ता सस्करण के प्रथम सर्ग में १७७ तथा बम्बई सस्करण में १७६ श्लोक हैं। होशियारपुर सस्करण में केवल १७४ श्लोक हैं। उक्त दो १०२ तथा १०३ श्लोक अधिक हैं। उन्हें बम्बई सस्करण के श्लोक सख्या १७६ में से घटा दिया जाय तो वह श्रीकण्ठ कौल के सस्करण के अनुसार १७४ श्लोक हो जाता है। कलकत्ता सस्करण में उक्त दोनो श्लोकों के अतिरिक्त १७७ वा श्लोक अधिक है। कलकत्ता सस्करण में श्रीकण्ठ कौल की अपेक्षा श्लोक १०२, १०३ तथा १७७ अधिक हैं। यदि वह तीनों श्लोक कलकत्ता सस्करण से घटा दिये जायें, तो उनकी सख्या श्रीकण्ठ कौल सस्करण से मिल जाती है।

स पिता त्वं सुतस्तस्य वयं सर्वे स्वसेवकाः ।
गत्वा चेत् कुर्महे युद्धं जयोऽस्माकं भवेत् कथम् ॥ १०४ ॥

१०४ 'वह पिता, तुम पुत्र, हमसे अपने सेवक जानकर यदि युद्ध करें, तो हमलोगों का जय कैसे हो सकता है ?

हताश्चेत् केऽपि तद्भृत्याः बहुभृत्यस्य का क्षतिः ।
एकपक्षक्षये किं स्याद् गरुडस्य जवाल्पता ॥ १०५ ॥

१०५ 'यदि उसके कुछ भृत्य हत हो गये, तो बहुभृत्य वाले उसकी क्या क्षति ? एक पक्ष के नष्ट होने से क्या गरुड[१] के वेग म अल्पता होगी ?

न शिवाः शकुनाः सन्ति देशाः पर्वतदुर्गमाः ।
तत्रापि जनकस्तेऽस्मान्न कालो विग्रहस्य नः ॥ १०६ ॥

१०६ 'कल्याण मगलकारी शकुन[१] नही है। देश, पर्वत दुर्गम है। वहाँ तुम्हारे पिता हैं। इसलिये हमलोगों के युद्ध का समय नही है।

भजत्वभ्यन्तरं राजा वयं बाह्ये भजामहे ।
तत्प्रसादादिहैवास्तां राज्यं छत्त्रं विना न किम् ॥ १०७ ॥

१०७ 'राजा अन्दर (देश मे) रहे। हमलोग बाहर तथापि उसकी कृपा से, यही पर बिना छत्र का राज्य नही है क्या ?

पाद-टिप्पणी :

१०५ (१) गरुड विष्णु का वाहन पक्षी है। एक मत है कि श्येन गरुड का वेदकालीन नाम है, अनन्तर संस्कृत साहित्य में श्येन का अर्थ बाज दिया गया है। गरुड स्वर्ग से अमृत लाया था। कश्यप एव विनिता का पुत्र तथा अरुण का कनिष्ठ बन्धु था। गरुड अण्ड से बाहर निकलते ही वेग से आगे बढा और उड गया। अमृत प्राप्ति के लिये गरुड आ रहा है, जान कर इन्द्र ने गरुड पर प्रहार किया, उसका केवल एक पक्ष क्षत हुआ।

मत्स्यपुराण के अनुसार विश्ववेशा के पुत्र है (१७१ २०)। निवास स्थान शाल्मलि द्वीप है (भाग० .५ २० ८)। क्षीरोद का रक्षक है। भागवत के अनुसार दक्षप्रजापति की पुत्री सुपर्णा विनता के गर्भ से उत्पन्न कश्यप का पुत्र है (भाग० ६ २२, ३ १९ ११, ब्रह्म० ३ ७ २९, ८ ११)। इनका शरीर मनुष्य परन्तु मस्तक, पक्ष, चक्षु तथा पाद गृद्ध तुल्य है। मुख-श्वेत, पक्ष-लाल तथा शरीर का वर्ण सुवर्ण है। बद्रीनाथ यात्रा मार्ग में एक गरुडगगा मिलती है। स्कन्दपुराण के अनुसार गरुड ने यहाँ तपस्या किया था। यहाँ पर निर्मल जलमय एक कुण्ड है। मान्यता है कि कुण्ड में स्नान करने पर सर्प भय नही रहता। गरुडपुराण में लगभग १९००० श्लोक हैं। किसी की मृत्यु होने पर अशौच काल में ही गरुडपुराण सुनने का महत्त्व है। इसमें यमपुर, स्वर्ग आदि का विस्तृत वर्णन है। गरुड की उपासना करने वाला प्राचीन काल में एक सम्प्रदाय भी था।

पाद-टिप्पणी

१०६ (१) शकुन मुसलमान हो जाने पर भी काश्मीरी जनता एव हिन्दू संस्कारों को पूर्णतया त्याग नही सकी थी। शकुन, मगल एव अमगल चिह्नों पर काश्मीरी पूर्वकाल में विश्वास करते थे और आज भी साधरण जनता विश्वास करती है।

ते चेद्युद्धार्थमेष्यन्ति न जेष्यन्त्यस्मदन्तिकात् ।
वय चेदन्तर यामो न जेष्यामः कदाचन ॥ १०८ ॥

१०८ 'वे युद्ध के लिये आयगे, तो हमलोगो से नही जीत सकेंगे और हम लोग अन्दर जायेंगे, तो कदापि नही जीतेंगे ।'

इति दर्पात् म श्रुत्वापि खानः शूरपुराध्वना ।
अगाद् राजपुरीं त्यक्त्वा कश्मीरान् पिशुनेरितः ॥ १०९ ॥

१०९ इस प्रकार सुनकर, दर्प स वह खान पिशुन[1] प्रेरित होकर, राजपुरी त्यागकर, शूरपुर[2] मार्ग से काश्मीर गया ।

अस्मिन्नवसरे श्रुत्वा स्वपुत्र सहसागतम् ।
गृहीत्वा स्वबल तूर्णं नगरान्निरगान्नृपः ॥ ११० ॥

११० इस समय सहसा, अपने पुत्र को आया हुआ सुनकर, शीघ्र ही अपनी सेना लेकर, राजा नगर[1] से निकल पड़ा ।

गच्छन् सकटको राजा मरणे कृतनिश्चयः ।
सदुःखो निःश्वसन् श्लोकमिममेकमपाठयत् ॥ १११ ॥

१११ मरने का निश्चय करके, सेना सहित जाते हुए, राजा दुःख के साथ निःश्वास लेते हुए, इस एक श्लोक को पढ़ा—

पाद टिप्पणी

१०९ (१) पिशुन तवकाते अकबरी में उल्लेख है—अन्त में हाजी खाँ ने कुछ लोगों के बहकाने से काश्मीर में प्रवेश किया (४४२) ।

(२) शूरपुर यह वर्तमान हुरपुर है । इस हीरपुर तथा हूरीपुर भी कहते हैं । इसकी स्थापना राजा अवन्तिवर्मा के मन्त्री शूर ने किया था । राजौरी से काश्मीर आते समय प्रवेश मार्ग पर पड़ता है । वहाँ दुग भी बनाया गया था । यहाँ पर दुग का आकार देखा जा सकता है । शूरपुर गाँव से थोड़े ही दूर पर है । इसे इलाही दरवाजा कहते हैं । यह पुराने राजकीय पथ पर व्यापार का स्थान रहा है । काश्मीर से दक्षिण की ओर यह मार्ग है । शूरपुर से आध मील ऊपर पीर पन्तसाल पर्वत है । वहाँ से रामब्यार नदी के दक्षिण तट से पीर पन्तल्ल की ओर जाता है । प्राचीन काल की मुद्रायें यहाँ पर, प्रायः मिल जाती है । नदी के दक्षिण तट कुछ दूर पर प्राचीन मन्दिर का अलंकृत पत्थर पड़ा मिलता है । यह पूर्व काल में बड़ा गाँव था । सुपियान की ओर तीन मील तक पाद पावन गाँव तक फैला था । नदी के दोनों तटों पर आबादी का चिह्न वर्तमान गाँव के अधोभाग में मिलता है ।

पाद टिप्पणी

११० (१) नगर = श्रीनगर ।

राज्येऽपि हि महत् कष्ट सन्धिविग्रहचिन्तया ।
पुत्रादपि भय यत्र तत्र सौख्यस्य का कथा ॥ ११२ ॥

११२ 'राज्य मे भी सन्धि विग्रह की चिन्ता से महान कष्ट है, जहाँ पर पुत्र से भी भय प्राप्त है। वहाँ सुख की क्या चर्चा ?

अधर्मशङ्का दूरेऽस्तु युद्धे जनकपीडया ।
वैधेयातिविधेयेन येन स्नेहोऽपि विस्मृतः ॥ ११३ ॥

११३ 'युद्धजनक पीडा से अधर्म की शका दूर रहे। मूर्खतापूर्ण कार्य करने वाले, जिसने स्नेह भी विस्मृत कर दिया--

त्वयि कुर्वति साम्राज्य यः खेदाय समागत ।
स यातु सनलः शीघ्र त्वद्वीर्याग्निपतङ्गताम् ॥ ११४ ॥

११४ 'तुम्हारे साम्राज्य करते हुए जो दु ख देने के लिये आ गया, सेना सहित वह शीघ्र तुम्हारे पराक्रमाग्नि मे फर्तिगा बने।

त्वमेवाकण्टकं राज्यं क्रिया धर्मक्रिया भजन् ।
वैरिणो विमुखा यान्तु रणे लब्धपराभवाः ॥ ११५ ॥

११५ 'तुम्ही अकटक राज्य एव धर्म कृया करो और रण म पराभव प्राप्त वैरी विमुख हो जाय।'

ग्रामेष्वित्यधिकास्तास्ताः शृण्वञ्जनपदाशिषः ।
प्रापत् सकटको राजा स सुप्रशमनाभिधम् ॥ ११६ ॥

११६ इस प्रकार गावो म अधिक से अधिक निवासियो का आशीर्वाद सुनते हुए, सेना सहित वह राजा सुप्रशमन[1] (स्थान) पर पहुँचा।

पाद टिप्पणी

११२ (१) सन्धि कौटिल्य ने ६ गुणो का उल्लेख किया है—सन्धि, विग्रह, आसन, यान, सश्रय एव द्वैधीभाव। कामन्दक (९ २-१८) एव अग्निपुराण ने सन्धि के सोलह प्रकार बताय हैं। कामन्दक का आधार कौटिल्य है (कौटिल्य ७ ३)। सेना तथा युद्ध के विषय में सन्धियो के सम्बन्ध में विशद साहित्य है। स्थानाभाव स यहाँ देना कठिन है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण (२ २४ १७) के अनुसार सन्धि विग्रहिक शान्ति एव युद्ध सम्बन्धी मन्त्री था। एक अधिकारी था, जो राजकीय अनुदान देता है। समुद्रगुप्त के प्रशस्ति में इस शब्द का उल्लेख मिलता है (गुप्त इन्सक्रिप्सन सख्या १ पृष्ठ ५)।

(२) विग्रह कामन्दक (१० २-५) तथा अग्निपुराण (२४० २०-२४) में सोलह विधियों का वर्णन किया गया है जिससे विग्रह होता है यथा—राज्य पर अधिकार, स्त्री, जनपद, वाहन, धन छीन लेना, मद, उत्पीडन आदि।

पाद टिप्पणी

११६ (१) सुप्रशमन सुपियान जिला में एक परगना है। मराज खण्ड में है। रामवयार नदी के वाम तट पर पवत पादमूल में है।

अथ मल्लशिलास्थाने पितापुत्रबलद्वये ।
सन्नद्धे नृपतिर्दूतं विप्रमेकं व्यसर्जयत् ॥ ११७ ॥

११७ मल्ल शिला[1] नामक स्थान पर, पिता एवं पुत्र की दोनो सेना सन्नद्ध हो जानेपर, राजा ने एक विप्र दूत[2] को प्रेषित किया—

पाद टिप्पणी

११७ (१) मल्लशिला : श्रीवर ने मल्लशिला का पुनः उल्लेख श्लोक १ : १ : ४७ में किया है। दत्त ने 'पल्लशिला' लिखा है। उन्होंने कलकत्ता संस्करण का अनुकरण किया है, जहाँ 'पल्लशिला' दिया गया है। श्री मोहिबुल हसन ने भी दत्त का अनुकरण कर पल्लशिला ही लिखा है। श्री मोहिबुल हसन ने नोट में पल्लशिला स्थान का परिचय दिया है। उनके मत से यह सुपियान के समीप करेवा है। वह राजौरी के मार्ग पर श्रीनगर से दक्षिण ३३ मील पर है। मुगलों के समय यहाँ सराय थी, जहाँ घोड़े बदले जाते थे (पृ० ७९ नोट ३)।

तवक्काते अक्बरी में नाम 'येल हाल या सहाल' तथा लीथो संस्करण में 'तलील' दिया गया है (४४२–६६३)। फिरिश्ता के लीथो संस्करण में नाम 'वलील', 'कर्नल' ब्रिग्स ने 'बुलील' तथा रोजर्स ने 'दुलदुल' दिया है।

(२) दूत : मुस्लिम काल में भी ब्राह्मण दूत भेजने की प्रथा थी। जोनराज ने भी ब्राह्मण दूत भेजने की बात लिखी है। लोहर दुर्गपति ने सुल्तान कुतुबुद्दीन के सेनानायक डामर लौलक के पास एक ब्राह्मण को दूत बनाकर भेजा था (जोन० : ४७०)। तत्कालीन दूत को आजकल के राजदूत के समान नहीं मानना चाहिए। दूत केवल सन्देशवाहक होता था। प्राचीनकाल में दूत के तीन वर्ग होते थे। 'निसृष्टार्थ' यह सब कुछ कहने के लिए स्वतंत्र होता था। इस दूत का मन्त्री तथा आमात्य का स्तर होता था। पाण्डवों के दूत भगवान श्रीकृष्ण इस वर्ग में आते हैं। द्वितीय वर्ग 'परिमितार्थ' अर्थात् निश्चित कार्य के लिये दूत भेजना था। यह तीन चौथाई मन्त्री के समकक्ष होता था। तृतीय वर्ग 'शासन हर' का था। उसका कार्य केवल राजकीय पत्र एवं सन्देशवाहक का कार्य करना था। उसमें मन्त्रियों का आधा गुण माना जाता था। जैनुल आबदीन का दूत इसी तृतीय श्रेणी में आता है। उसका कार्य केवल सन्देश मात्र देना था। यहाँ विप्र शब्द अर्थाभिप्राय है। दूत सर्वदा कुलीन, विवेक तर्ककुशल एवं शिष्ट, विद्वान एवं मृदुभाषी भेजे जाते थे। भारत पर सिकन्दर ने आक्रमण किया था, तो उससे भी दूत मिलने गये थे। दूत अपना दौत कार्य करते समय अवध्य माना जाता है। रामायण में तो यहाँ तक कहा गया है कि यदि दूत गुप्तचर शस्त्रधारी हो तो भी उसे छोड़ देना चाहिए। राम के शिविर में कुछ राक्षस पाये गये। वे सैनिकों को बहका रहे थे। वे पकड़े गये। भगवान् के सम्मुख उपस्थित किये गये। उन्होंने कहा—'यदि ये गुप्तचर भी है, भेष बदले है, रात्रि में पाये गये है, किन्तु वे भी दूत है। चाहे वे शस्त्रधारी ही क्यों न हों, उन्हें मारना नहीं चाहिए।' इस सिद्धान्त का पालन समस्त भारत में किया जाता था। किन्तु मुसलिम काल में मुसलमान सुल्तान इसके अपवाद थे। कुतुबुद्दीन के सिपहसालार ने सन्धि के लिये भेजे गये ब्राह्मण दूत को बन्दी बना लिया था (जोन० ४७०)।

स गत्वा नृपसन्देशमब्रवीदिति निर्भयः ।
किं वक्तीति क्षण क्रुद्धैस्तत्त्वज्ञैः परिवेष्टितः ॥ ११८ ॥

११८ वह जाकर 'क्या कहता है ?' इस क्षण भर के लिये, क्रुद्ध तत्वज्ञो से घिरा, वह निर्भय होकर, नृप के सन्देश[१] को कहा—

राजपुत्र महाबाहो दाक्षिण्यामृतसागर ।
शृणु पित्रा समादिष्टं यत् तत्सर्वं ब्रवीमि ते ॥ ११९ ॥

११९ हे ! राजपुत्र !! हे ! महाबाहो !! हे ! दाक्षिण्यामृतसागर !! पिता ने जो सन्देश दिया है, सुनो—वह सब तुमसे कहता हूँ—

फल ससारवृक्षस्य लाभोऽमुत्र परत्र च ।
पित्रोर्नेत्रोत्सवो नित्य पुत्रः कैर्नाम निन्द्यते ॥ १२० ॥

१२० 'ससार वृक्ष का फल, यहाँ इस लोक और परलोक मे लाभप्रद, माता पिता के नेत्रो का नित्य आनन्दकारी पुत्र की निन्दा कौन लोग करते हैं ?

सर्वः सञ्चिनुते सर्वं पुत्रार्थं प्रयतो यतः ।
वार्द्धके वचनग्राही भवेत् पितृसुखप्रदः ॥ १२१ ॥

१२१ 'सभी लोग प्रयत्नपूर्वक पुत्र के लिये, सब कुछ सचय करते हैं, (जिससे वह) वृद्धावस्था म वचनग्राही तथा सुखप्रद हो ।

इत्थ लोकद्वयस्थित्यां त्वयि जाते सुते मम ।
दूरे सर्वसुखाशास्तु चिन्ता प्रस्युत वर्धिता ॥ १२२ ॥

१२२ 'इस प्रकार की लोक स्थिति म तुम्हारे मेरे पुत्र होने से सब सुख की आशा दूर है, प्रत्युत चिन्ता ही बढ गयी ।

त्वत्कृतो दुर्जनाश्वासो निःश्वासो य इवान्वहम् ।
मलिनीकुरुते शुद्ध मद्राज्य मुकुरोपमम् ॥ १२३ ॥

१२३ 'तुम्हारा दुर्जनो का दिया गया, प्रोत्साहन नि श्वास के समान, मेरे दर्पण सदृश शुद्ध राज्य को मलिन कर रहा है ।

पाद टिप्पणी

११८ (१) सन्देश जैनुल आबदीन न अपनी सेना एकत्र किया और उसने अपने पुत्र के पास उचित सलाह एव करुणापूर्ण सन्देश भेजा । किन्तु सुल्तान के सन्देश का कोई प्रभाव हाजी खा पर नही हुआ (फिरिस्ता ४७१) ।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

जीवनाशोद्यता येमे लसन्त्युच्छृङ्खलाः खलाः ।
सुचिरं नैव तिष्ठन्ति सरसः सारसा इव ॥ १२४ ॥

१२४. 'जीवनाशा से उद्यत उच्छृङ्खल जो खल शोभित हो रहे हैं, वे सरोवर के सारसों के समान बहुत दिन नहीं रहेंगे।

मदादेशं विना देशं किमर्थं स्वयमागतः ।
केन राज्यं बलात् प्राप्तं निजभाग्योदयं विना ॥ १२५ ॥

१२५. 'मेरे आदेश के बिना किस लिये देश में आये हो ? अपने भाग्योदय[1] के बिना बल से किसने राज्य प्राप्त किया है ?

बाह्यदेशावनिः सर्वा भुज्यते तृप्यसे न किम् ।
येन मण्डलमात्रं मेऽवशिष्टं हर्तुमागतः ॥ १२६ ॥

१२६. 'बाह्यदेशों[1] की सब भूमि भोग रहे हो (उससे) क्या तृप्त नहीं होते, जिससे मेरे अवशिष्ट मण्डल मात्र को हरण हेतु आये हो ?

तन्निवर्तस्व मा पुत्र पापबुद्धिं वृथा कृथाः ।
बलद्वयवधात् पापं त्वय्येतत् परिणेष्यति ॥ १२७ ॥

१२७ 'अतएव हे ! पुत्र !! लौट जाओ। और वृथा पाप बुद्धि मत करो। दोनों सेनाओं का यह पाप तुम पर फलेगा।

पाद-टिप्पणी :

१२४. 'मे' पाठ—बम्बई

पादटिप्पणी :

१२५ (१) भाग्य : कल्हण, जोनराज, श्रीवर तथा शुक चारों राजतरंगिणीकार भाग्यवादी थे। कर्म को प्राथमिकता देते हुए, भी कल्हण भाग्य को मानता था। जोनराज, श्रीवर तथा शुक मुसलिम सुल्तानों के राजकवि थे। मुसलमान किस्मत पर विश्वास करते हैं। अतएव उन्होंने कर्म पर जोर न देकर भाग्य पर ही सर्वत्र जोर दिया है।

पादटिप्पणी :

१२६. (१) बाह्य देश : पूंछ से राजोरी पश्चिम दक्षिण भूखण्ड, जो काश्मीर मण्डल के बाहर था, उससे यहाँ तात्पर्य है। कभी-कभी राजतरंगिणी में दिगन्तर शब्द का भी प्रयोग किया गया है। काश्मीर की सीमा के बाहर के स्थानों की संज्ञा बाह्य देश से दी गयी है। बाह्य देश काश्मीर में प्रवेश करने वाले पासों अर्थात् दर्रों के बाहर का स्थान कहा जाता है, क्योंकि काश्मीर मण्डल चारों ओर पर्वतमालाओं से आवृत है, वही सुरक्षा पंक्ति काश्मीर की है। उससे बाहर जो स्थान पड़ता है, वह बाह्य देश था। दिगन्तर एवं बाह्य देश के प्रयोग में अन्तर मालूम पड़ता है। दो दिशाओं के मध्य का अर्थ दिगन्तर होता है। आँखों से ओझल हो जाना या निश्चित स्थान से लुप्त हो जाने का अर्थ दिगन्तर होता है।

इत्युक्तिः पैतृकी प्रोक्ता किं तु सत्यमहं ब्रुवे ।
नश्यन्ति भूपाच्छ्येनाग्रात् त्वद्भटाश्चटका इव ॥ १२८ ॥

१२८. 'इस प्रकार तुम्हारे पिता की उक्ति मैंने कह दी। किन्तु मै सच कहता हूँ। सेना द्वारा श्येन से चटक[1] के समान तुम्हारे भट नष्ट हो जायँगे।'

इति रूक्षाक्षरामुक्तिं श्रुत्वा विप्रस्य ते भटाः ।
छित्वा कर्णौ व्यधु रक्तादायुधेषु विशेषकान् ॥ १२९ ॥

१२९. इस प्रकार रुक्षाक्षर भरी उक्ति सुनकर, उन भटो ने विप्र के कान[1] काटकर रक्त से आयुधो पर थापा[2] दे दिये।

पाद-टिप्पणी

१२८ (१) चटक गोरैया पक्षी। पक्षियों में गोरैया छोटी तथा बड़ी सीधी पक्षी होती हैं। मुझे स्मरण है, मेरी माँ गोरैया को भीगा चावल का दाना देती थी। उसकी जाति ब्राह्मण समझी जाती थी। गंगातट पर भी स्त्रियाँ गोरैया को चावल खिलाती थी। अब यह प्रथा अन्न की मँहगाई के कारण बन्द हो गयी है। श्येन अर्थात बाज के सम्मुख, जिस प्रकार गोरैया क्षणमात्र भी ठहर नही सकती, उसी प्रकार राजा की सेना से विरोधी भट अर्थात योद्धा सरलता पूर्वक नष्ट हो जायेंगे।

पाद-टिप्पणी :

१२९ (१) कान काटना भारतीय एव विश्व परम्परा के अनुसार दूत अवध्य माना गया है। परन्तु मुसलिम इतिहास में इस परम्परा की प्रायः अवहेलना की गयी है। कुतुबुद्दीन सुल्तान के समय भी दूत बन्दी बना लिया गया था (श्लो० ४७१)। दूत सुदूर प्राचीन काल से अवध्य माना गया है। भारत में यह बात सर्वदा मानी गयी है। दूत का राजा के समान आदर किया जाता था। ऋग्वेद में कई स्थलो पर दूत का वर्णन है। एक स्थान पर अग्नि को दूत बनाया गया था (१ : १२ : १; १ : १६१ : ३; ८ ४४ ३, १० : १०८ : २-४)। कौटिल्य ने दूत के विषय मे एक अध्याय ही लिखा है (१ ' १६)। नीति निर्धारण के उपरान्त दूत को उस राजा के पास भेजना चाहिए। जिस पर आक्रमण आसन्न होता है (कामन्दक. १२ ' १)। मनु ने इस विषय पर बहुत सुन्दर लिखा है कि यदि दूत का सन्देश सुनकर राजा क्रोधित हो जाय, तो दूत को कहना चाहिए—'सब राजा दूत के मुख से बातें सुनते हैं। भयभीत किये जाने पर भी राजा का सन्देश दूत को देना ही पड़ता है। निम्न जाति के दूतो का भी वध नही करना चाहिए। उस दूत की बात ही क्या है जो ब्राह्मण है (मनु० : ७ ९५)'। रामायण मे स्पष्ट कहा है कि सज्जन दूत-वध की आज्ञा नही देते। परन्तु कुछ अवसरो पर उसे कोड़े मारने, मुण्डित कर, बाहर निकाल देने का आदेश दिया गया है (रा० : ५ . ५२ : १४-१५)। वर्तमान काल में भी दूत अवध्य माना जाता है, यदि वह देश मे गुप्तचर का कार्य करता है, तो उसे उसके राष्ट्र से कहा जाता है कि उसे वापस बुला ले। यदि दूतावास के राज्य कर्मचारी गुप्तचर का कार्य करते पकड़े जाते हैं, तो उन्हें दण्ड मिलता है। यहाँ दूत का नाक तथा हाथ काटना अनुचित कहा जायेगा।

(२) थापा . आयुधो पर रक्त छिड़कना या उस पर छापा लगा देना पुरानी प्रथा है। इसे एक प्रकार की शस्त्र-पूजा तथा शुभ मानते हैं। म्यान से कृपाण निकाल लेने पर उसे रक्तदान देना चाहिए।

तद्दृष्ट्वा हाज्यखानोऽथ सत्रपः पितुरागमात् ।
अभिमन्युप्रतीहारमुख्यानाख्यदिदं वचः ॥ १३० ॥

१३० यह देखकर लज्जित[1] हाजी खाँन पिता के आगमन से अभिमन्यु-प्रतीहारादि[2] से यह बात कही—

वरं पादप्रणामार्थं पितुर्याम्यमुतो बलात् ।
भूपस्तुष्टोऽथ रुष्टो वा यत् करोतु करोतु तत् ॥ १३१ ॥

१३१ 'इस सेना से पिता[1] के पाद प्रणामार्थ जाना उत्तम है। राजा तुष्ट होकर अथवा रुष्ट होकर, जो करे सो करे।

सर्वथा तातपादा मे सेव्या रक्षेत् स नो ध्रुवम् ।
तन्मा कुरुत युद्धेऽस्मिन् सरम्भं चेन्मतं मम ॥ १३२ ॥

१३२ 'सर्वथा तात[1]' पाद मेरे लिये सेवनीय है, वह हमलोगों की रक्षा निश्चय ही करेगा। यदि मेरा मत मान्य है, तो इस युद्ध का आरम्भ न करे।

किं तु स्वप्नेऽपि भूपाय नानिष्टं चिन्तयाम्यहम् ।
यो मे देवाधिकः पूज्यो लोकद्वयसुखप्रदः ॥ १३३ ॥

१३३ 'स्वप्न मे भी राजा का अनिष्ट नही सोचता हूँ, जो कि मेरे देवता से भी अधिक पूज्य तथा दोनो लोको मे सुखप्रद है।

यह एक पुरानी मान्यता है। अतएव रूढ़िवादी सैनिक निष्प्रयोजन आयुधों का प्रदर्शन नही करते थे।

पाद-टिप्पणी

'ह्या' पाठ—बम्बई।

१३० (१) लज्जित दूत के साथ हुए व्यवहार का देखकर, हाजी खा लज्जित हो गया। उसे पश्चाताप हुआ। वह पिता से सन्धि करना चाहता था (म्युनिख पाण्डु० ७४ बी०)।

(२) अभिमन्यु प्रतीहार इसका उल्लेख पुन २ १९६, ३ १०३, १२५ में किया गया है।

पाद-टिप्पणी .

१३१. (१) पिता फिरिस्ता लिखता है—हाजी खा ने पिता पर आक्रमण करना अस्वीकार कर दिया (४७१)।

म्युनिख पाण्डुलिपि में भी यही बात लिखी गयी है—हाजी खा पिता के विरुद्ध युद्ध नही करना चाहता था (पाण्डु० ७४ बी०)।

पाद-टिप्पणी

१३२ (१) तात सम्बोधन है। स्नेह, दया एवं प्रेम प्रकट करता है। आदरणीय तथा वरिष्ठ व्यक्ति के लिए आदरसूचक प्रयोग है। यथा—हे पिता हि बहवा नरेश्वरास्तेन तात धनुषा धनुभृत (रघु० ११ ४०)। अपने से छोटे विद्यार्थी आदि के प्रति स्नेह प्रदर्शन के लिए भी प्रयोग किया जाता है—मुष्यन्तु लवस्य बालिशता तात पादा (उत्तर ६)। 'तात चन्द्रापीड' (कादम्बरी)।

अग्रजोऽग्रे ममायाति रणायायाति नो नृपः ।
इत्युक्तं तेन सम्प्राप्तो नाहं पितृवधोद्यतः ॥ १३४ ॥

१३४. 'युद्ध के लिए ज्येष्ठ भ्राता आगे आ रहा है, न कि राजा, मैं पितृ वध के लिए उद्यत होकर, नहीं आया हूं'—इस प्रकार उस (हाजी खाँन) ने कहा ।

श्रुत्वेति मन्त्रिणस्ताजतन्त्रिपत्यादयस्ततः ।
तत्तुरङ्गाग्रवल्गाग्रा निष्ठुरं तेऽब्रुवन्निति ॥ १३५ ॥

१३५. यह सुनकर ताज तन्त्रपति[1] आदि उन मन्त्रियों ने उसके अश्व की लगाम पकड़कर, निष्ठुरतापूर्वक इस प्रकार कहा—

यदोक्तं समयो नायं याम इत्यवधीरितम् ।
आरब्धस्यान्तगमनं तद्युक्तमधुना तव ॥ १३६ ॥

१३६ 'जब हम लोगों ने कहा—तब 'यह उचित समय नहीं है', आपने अवहेलना की अतएव अब तुम्हारे लिए आरम्भ किये का अन्त करना उचित है ।

यूयं चेज्जातसौहार्दा मार्दवानन्दितापराः ।
वयमेव हताः कष्टं क्लिष्टास्त्वत्सेवनाशया ॥ १३७ ॥

१३७ 'यदि तुमलोग सौहार्द युक्त होकर, मृदुता से आनन्दित हो, तो तुम्हारी सेवा की आशा वाले, दुःख है, हमी लोग मारे गये ।

भवेत् सन्तप्तयोः सन्धिर्नित्यं तैलकटाहयोः ।
तदन्तः पूरणी क्षिप्ता सैव दन्दह्यते क्षणात् ॥ १३८ ॥

१३८ 'सन्तप्त तेल और कटाह[1] की नित्य सन्धि सम्भव है और उसके अन्दर डाली गयी पूरणी (पूरी) क्षण में जल जाती है ।

भवान् स्वामी वयं दासाः पौरुषं पश्य साम्प्रतम् ।
जयश्चेत्तव राज्याप्तिर्नष्टो याहि यथागतम् ॥ १३९ ॥

१३९ 'आप स्वामी है, हमलोग दास, अब पौरुष देखिये । यदि तुम्हारी जय हो, तो राज्य की प्राप्ति[1] होगी और नष्ट होने पर, जैसे आये वैसे चले जाना ।

पाद-टिप्पणी

१३५ (१) तन्त्रपति द्रष्टव्य टिप्पणी श्लोक १ १ ९५ । तन्त्रियों को वर्तमान काल में तन्त्री कहते हैं । मुसलमानों में उनकी अपनी एक उपजाति हैं । कृषक वर्ग हैं । यह 'क्रम' काश्मीर में सर्वत्र नगर तथा ग्रामो में फैला है । एक मत है कि वे मूलतः तातारी थे । काश्मीर में उत्तरीय पर्वतीय क्षेत्र के निवासी थे ।

पाद-टिप्पणी

१३८ (१) कटाह कड़ाही । कड़ाही तेल को जलाती है । बिना कड़ाही के तेल जल नहीं सकता । उसके खौलते तेल में जो भी वस्तु डाली जाती है, क्षणमात्र में जल जाती है ।

पाद-टिप्पणी

१३९ (१) राज्य प्राप्ति श्रीवर ने गीता के निम्नलिखित भाव को अपने शब्दों में रखा है ।

यावद्युद्धं करिष्यामस्तावदेव विलम्ब्यताम् ।
हतेष्वस्मासु कर्तव्यं यत् पुनस्तत् समाचर ॥ १४० ॥

१४० 'जब तक हम लोग युद्ध करेंगे, तब तक ठहरिये, हमलोगो के मारे जाने पर, जो कर्तव्य है करना ।

अस्मदुक्तं न गृह्णासि यदि त्वं पितृवञ्चितः ।
त्वय्येवानुचितं कृत्वा पुनर्यामो दिगन्तरम् ॥ १४१ ॥

१४१ पिता के बहकावे में पड़कर, तुम यदि हम लोगो की बात नही ग्रहण करते, तो तुम पर ही अनुचित कार्य (मारकर) करके, पुन दिगन्तर म हम लोग चल जायगे ।'

इति निर्भर्त्सनावाक्यजातभीतिर्नृपात्मजः ।
ततश्चिन्तार्णवे मग्नो युद्धश्रद्धामगाहत ॥ १४२ ॥

१४२ इस प्रकार की भर्त्सना युक्त बातो से भयभीत होकर, राजपुत्र चिन्ता-सागर मे मग्न होकर, युद्ध[1] के प्रति श्रद्धालु हो गया ।

अत्रान्तरे द्विजं तादृगवस्थं वीक्ष्य भूपतिः ।
मुरारातिरिव क्रुद्धो युद्धसन्नद्धतां दधे ॥ १४३ ॥

१४३ इसी बीच म ब्राह्मण को उस अवस्था म देखकर राजा 'मुरारी' (कृष्ण) के समान[1] क्रुद्ध होकर युद्ध क लिये सन्नद्ध हो गया ।

हतो वा प्रप्स्यापि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्' (२ ३७)।

पाद टिप्पणी

१४१ (१) दिगन्तर द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ १२४।

पाद टिप्पणी

१४२ (१) युद्ध अपने अनुयायियो द्वारा वह युद्ध करन के लिए अनिच्छापूर्वक बाध्य कर दिया गया था (म्युनिस पाण्डु० ७४ बी०)। फिरिस्ता लिखता है—'हाजी खा को मना ने बिना उसक आदश के ही युद्ध आरम्भ कर दिया (४७१)।

पाद टिप्पणी

१४३ (१) मुरारी श्रीवर ने महाभारत की घटना की ओर सकेत किया है। भगवान श्रीकृष्ण पाण्डवों के दूत बनकर दुर्योधन की सभा में गये और युद्ध से विरत होने तथा सन्धि करने के लिए जोर दिया। दुष्टबुद्धि दुर्योधन ने अपन मित्रो के साथ मन्त्रणा कर, कृष्ण मुरारी को बन्दी बनाने का सकल्प किया। इस षडयन्त्र का भेद सात्यकि जान गय और सभा में दूत के बन्दी बनान की दूषित मनोवृत्ति को अनुचित बताते हुए उसे धर्म अर्थ एव काम के विपरीत बताया। सात्यकि की बात सुनते ही भगवान श्रीकृष्ण न सभा में ही ललकारा कि यदि दुर्योधन आदि में शक्ति हो, तो व बन्दी बनायें। भगवान न अट्टहास किया। उनका विराट् स्वरूप प्रकट हो गया। लोगों न आश्चर्यमयरूप का दर्शन किया। भूपाल गण विस्मित हो गये। पृथ्वी कम्पित हो उठी। समुद्र क्षुब्ध हो गया। भगवान का शान्ति सन्देश ठुकरा दिया गया। उसका अवश्यम्भावी परिणाम महाभारत हुआ। जिसमें कृष्ण रूप राजदूत का अपमान करने वाले नष्ट हो गय (उद्योग० १२९-१३२)।

शुक्रयोगजनामर्क्षपरीक्षणविचक्षणः ।
स्वपक्षरक्षणं क्ष्मापः पृष्ठीकृतरविर्व्यधात् ॥ १४४ ॥

१४४ शुक्र योगज[1] नाम नक्षत्र परीक्षण मे निपुण राजा ने सूर्य को पृष्ठभाग मे करके, अपने पक्ष की रक्षा की।

राज्ञः पृष्ठगतः सूर्यः खड्गान्तःप्रतिबिम्बितः ।
जयस्ते भवितेत्येव वक्तुं व्योम्नोऽवतीर्णवान् ॥ १४५ ॥

१४५ राजा के पृष्टगत खग मे प्रतिबिम्बित होकर, तुम्हारा जय होगा, यह व्यक्त कहने के लिये ही, आकाश से अवतरित हुये (सायकाल हुयी)।

कियन्तोऽमीति यावत् सोऽचिन्तयत् तावदग्रतः ।
अर्कदीप्तिज्वलच्छस्त्रद्युतिद्योतितभूतलम् ॥ १४६ ॥

१४६ तब तक, यह ये लोग कितने हैं, यह जब तक, वह सोच रहा था, तब तक, समक्ष सूर्य की दीप्ति से, चमक ने शस्त्र की कान्ति से, भूतल प्रकाशित करते—

निर्यत्सन्नाहिसाद्योघपतद्भटतुरङ्गमम् ।
गणशो गणशो धावत् तत्सैन्यं समवैक्षत ॥ १४७ ॥

१४७. उसने यूथ के यूथ दौडते, उस सेना को देखा, जिसमे कि वर्मयुक्त योद्धा, समूह एवं भट और तुरग निकल रहे थे।

---

१४३ (१) मुरारी: श्रीवर ने मुरारी नाम का प्रयोग श्रीकृष्ण के लिये किया है। दानासुर के पुत्र मुर को मारने के कारण भगवान का नाम मुरारी पडा है (भाग० ४ २६ २४, १० १० १४ ५८७ ब्रह्मा० ३ ३६ ३४, मत्स्य० ५४ १९)। भगवान ने क्रुद्ध होकर, अद्भुतशक्ति का परिचय दिया था। मुर एक पंचमुखी दैत्य था। प्रागज्योतिषपुर के राजा का सेनापति था। इसने नरकासुर के प्राग्ज्योतिषपुर की सीमा पर ६ हजार पाश लगाया था। उनके किनारो पर छूरे लगे थे। उन पाशों को उसके नाम पर ही 'मौख' नामकरण किया गया था। भगवान ने उन पाशों को सुदर्शन चक्र द्वारा काट कर, मुर तथा उसके पुत्रों का वध किया था। मुर को मारने के कारण भगवान का नाम मुरारी पड गया। जैनुल आबदीन को श्रीवर तथा जोनराज ने हरि का अवतार माना है। अतएव यहाँ पर भी संकेत करते हैं कि जिस प्रकार मुर राक्षस का भगवान ने क्रोध से सहार किया था, उसी प्रकार जैनुल आबदीन भी क्रुद्ध होकर युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गया (सभापर्व ३८)।

सुलतान जैनुल आबदीन सन्धि के लिये प्रेषित अपने दूत की दुर्दशा देखकर, क्रोधित हो गया और युद्ध का आदेश दिया।

पाद टिप्पणी

१४४ (१) शुक्रयोग शुक्रयोग के सम्बन्ध में ब्रह्माराध्याय, वाराही सहिता और बल्लालसेन विरचित अद्भुत सागर में उल्लेख मिलता है। यह व्यापक अर्थ का सूचक है। इसके अन्तर्गत शुक्र का उदयास्त, शुक्र की नक्षत्रगति, राशि प्रवेश और योग आदि अनेक पर्याय है।

पाद-टिप्पणी:

१४७ पाठ बम्बई

कोऽन्यो वीरो हाज्यखानाद्यो राज्ञा चाग्रजेन वा ।
गृहीतसर्वसैन्येन धैर्यात् क्रष्टुमशक्यत ॥ १४८ ॥

१४८ हाजी खाँ के अतिरिक्त दूसरा कौन वीर है, जो सेना सहित राजा या अग्रज द्वारा धैर्यच्युत न किया जा सके।

तत्र मल्लशिलारङ्गमङ्गतास्तद्भटा नटाः ।
त्यक्ष्यदङ्गविहङ्गानां नाट्यभङ्गिमदर्शयन् ॥ १४९ ॥

१४९ उस मल्लशिला[1] रंगस्थल पर पहुँचकर, उसके भट रूप नट अंग संचालन करते हुए, विहंगमों को नाट्य भंगी प्रदर्शित किये।

ववर्ष शरधाराभिः स भूपकटकाम्बुदः ।
स्फुरच्छस्त्रतडिज्ज्योतिस्तूर्यगम्भीरगर्जितः ॥ १५० ॥

१५० वह राजा का सैन्य बादल, बाणधारा की वृष्टि की, जो कि चमकते शस्त्ररूपी विद्युत ज्योति एवं तूर्य के गम्भीर गर्जन से युक्त था।

अन्योन्यमिलिताः कांस्यघनवत् कठिना घनाः ।
अन्योन्याघातसहना नदन्तः सुभटा बभुः ॥ १५१ ॥

१५१ परस्पर मिलित काँसा के घन झांझ सदृश कठिन घने, परस्पर घात सहनशील सुभट गरजते हुए शोभित हुये।

भटा नयन्ति मां युद्धे मां मा ताडयत द्रुतम् ।
इतीव तारं दध्वान खानस्यानकदुन्दुभिः ॥ १५२ ॥

१५२, 'भट युद्ध में मुझे ले जा रहे हैं। मुझे मत पीटो' इस प्रकार मानो खाँन[1] की दुन्दुभी जोर से ध्वनि करने लगी।

पाद टिप्पणी

१४९ (१) मल्लशिला द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ११५। पिल्सिना नाम 'बुगील' देता है (४७१) कलकत्ता में १११ इगल में पल्ल' नाम दिया गया है। परन्तु यहाँ मल्ल दिया है। अतएव ११५ में भी मल्ल ही पल्ल के स्थान पर दिया गया है।

पाद टिप्पणी

१५० पाठ-बम्बई

पाद टिप्पणी :

१५१ पाठ-बम्बई

पाद-टिप्पणी

१५२ (१) खान = हाजी खाँ श्रीवर ने हाजी खाँ को कायर चित्रित किया है। प्रतीत होता है कि हाजी खाँ का उसके सैनिक रण में पलायन नहीं करने देना चाहते थे। हाजी खाँ प्रारम्भ से ही युद्ध के प्रति द्विविधा में था। वह युद्ध नहीं करना चाहता था। उसके साथी जो सुल्तान के विरोधी मुखर हो गये थे, अपने सुरक्षा तथा स्वार्थ के लिये युद्ध में रत थे। उनके लिये युद्ध के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं रह गया था।

पूर्वं मया प्रतीहारमुख्या गुरुलघूर्जिताः ।
रणे फलतया दृष्टा रवेर्वृत्ते घना इव ॥ १५३ ॥

१५३ पहले मैंने रविमण्डल पर, मेघ के समान युद्ध म, छोटे-बडे तेजयुक्त, प्रतीहार प्रमुख लोगों को, फलयुक्त होते देखा।

ततो भूपबलात् क्रुद्धौ धात्रेयौ भूपतेर्हितौ ।
ठक्कुरौ निरगातां तौ वीरौ हस्सनहोस्सनौ ॥ १५४ ॥

१५४ तदनन्तर राजा के सैन्य से क्रुद्ध होकर, राजा के हितैपी धात्रीपुत्र वे दोनों वीर, ठक्कुर हस्सन एव हुस्सन निकल पडे।

सुवर्णसीहनग्राद्या राजपुत्रा रणाध्वरे ।
शस्त्रज्वालावलीलीढे जुहुवुः श्रीफलं वपुः ॥ १५५ ॥

१५५ शस्त्रज्वाला-पुज से भरे, रणयज्ञ मे सुवर्णसीह[1], नग्र[2] आदि राजपुत्र, शरीर श्रीफल[3] की आहुति दिये।

ते वीरभ्रमरास्तत्र रणोद्याने तदाभ्रमन् ।
स्वामिमाधवसांनिध्याद् यशःकुसुमलम्पटाः ॥ १५६ ॥

१५६ उस समय स्वामी माधव[1] (वसन्त ऋतु) के सान्निध्य से, यश कुसुम के लोभी, वे वीर रूप भ्रमर, उस रणोद्यान मे भ्रमण कर रहे थे।

पाद टिप्पणी

१५३ कलकत्ता में 'वृत्तर' पाठ है। प्रसग में उसका अर्थ ठीक नही बैठता 'भ्रम' के कारण 'रेफ' जोड दिया गया है। अत 'वृत्ते' पाठ माना गया है।

पाद-टिप्पणी

१५५ (१) सुवर्ण सीह सुवर्ण सिंह, सीह शब्द सिंह के लिये कल्हण ने भी प्रयोग किया है। सिंह, सीह तथा सी समानार्थक शब्द है।

(२) नग्र इस व्यक्ति का पुन उल्लेख नही मिलता। श्रीकण्ठ कौल ने नगा नाम दिया है। बम्बई सस्करण जानराजतरंगिणी में श्लोक ६२६ मे नगाराज का उल्लेख मिलता है। परन्तु यह समय जैनुल आबदीन के पिता सिकन्दर का है। जैनुल आबदीन के पिता तथा उसके राज्यकाल में केवल ६ वर्षों का अन्तर है। अति सक्षिप्त उल्लेख एव परिचय के कारण निश्चय रूप से नही कहा जा सकता कि दोनो नगर एक ही व्यक्ति है।

(३) श्रीफल = बेल काश्मीरी काव्यकार रण में आहुति बनने वालों की उपमा प्राय श्रीफल से देते है। श्रीफल शिव का प्रिय फल है। उस आहुति में चढाते है। वैशाख मास में श्रीफल आयुर्वेदिक दृष्टि से खाना लाभप्रद होता है। शिव लिंग पर बिल्वपत्र तथा बिल्व फल चढाया जाता है।

पाद-टिप्पणी

१५६ (१) माधव = वासन्ती कामदेव का मित्र वसन्त ऋतु—स्मर पर्युत्सुक एष माधव (कु० ३ ४ २८) वसन्तकालीन सौन्दर्य जिसमें पृथ्वी कुसुमों से लद जाती है। आम, जामुन, नीम, अशोक आदि फूलते हैं तथा पादप नवपल्लव धारण करते हैं।

ते वीरमस्तकाश्छिन्ना रणभूभाजने स्फुटम् ।
क्षुत्तप्तस्य कृतान्तस्य कवला इव रेजिरे ॥ १५७ ॥

१५७ मस्तक छिन्न, वे वीर रण भू-पात्र मे क्षुधा से तप्त, कृतान्त के ग्रास सदृश, शोभित हो रहे थे।

रणतूर्यस्वनैस्तैस्तैर्जनकोलाहलैस्तथा ।
वीराणां सिंहनादैश्च शब्दाद्वैतमजायत ॥ १५८ ॥

१५८ रण वाद्य की ध्वनियो तथा तत्-तत् जन कोलाहलो से एव वीरो के सिंहनादो से, शब्दो का अद्वैत हो गया था।

तच्छुद्धये ऋणमिवेक्ष्य नृपप्रसाद
प्राप्ते क्षणे जहति ये निजजीविताशाम् ।
तत्तद्विहस्तपरिरक्षधर्मलुब्धा
धन्यास्त एव कतिचिन्नृपसेवकेभ्यः ॥ १५९ ॥

१५९ राज कृपा को ऋण सदृश मानकर, उसकी शुद्धी के लिये समय आने पर, जो लोग अपनी जीवन की आशा त्याग देते हैं, और व्याकुलो की परिरक्षण द्वारा धर्म के लोभी होते हैं, वे लोग कतिपय राजसेवको की अपेक्षा-धन्य हैं।

राजाग्रादागतास्तीक्ष्णाः शरास्तत्पक्षपातिनः ।
स्वयं पाहीति भीत्येव स्खलन्त समचोदयन् ॥ १६० ॥

१६० राजपक्ष से आगत, उसके पक्ष मे गिरने वाले की बाणवर्षा मानो भय से ही स्खलित होते हुए, 'स्वय' को रक्षा करो' इस प्रकार प्रेरणा दिये।

ध्वजचेलाश्चला राजसुतस्याग्रे तु वायुना ।
सकम्पा रणभीत्येव पश्चाद्भागमशिश्रियन् ॥ १६१ ॥

१६१. राजपुत्र के सम्मुख, वायु से चचल ध्वजाएँ, रणभीति से ही मानो, कम्पित होकर, पश्चात भाग का आश्रय ग्रहण किये।

पाद-टिप्पणी

१५७ पाठ–बम्बई

पाद-टिप्पणी

१५९ कलकत्ता में 'ल्व्धा' तथा बम्बई में 'लुब्धा' शब्द है। बम्बई का पाठ ठीक है। प्रतीत होता है कि कलकत्ता में मात्रा 'ऊ' छूट गयी है।

पाद-टिप्पणी :

१६१ कलकत्ता 'अशिश्रयन्' के स्थान पर बम्बई 'अशिश्रियन्' पाठ लिया गया है। यह व्याकरणसम्मत है।

शस्त्रकृत्तस्फुरद्वीरशिरःकमलनिर्भरा ।
जीवनाशा चलत्पत्रा नलिनी रणभूरभूत् ॥ १६२ ॥

१६२ शस्त्रो से कटे तथा स्फुरित होते, वीरों के शिर कमल से परिपूर्ण तथा जीवन की आशा रूप चचल पत्रो से युक्त, रणभूमि नलिनी[१] हो गयी थी।

शौर्यमत्यद्भुतं दृष्ट्वा सूनोस्तत्कटकस्य च ।
पुनर्जातमिवात्मानं रणोत्तीर्णे नृपोऽविदत् ॥ १६३ ॥

१६३ पुत्र तथा उसके सैन्य का अति अद्भुत पराक्रम देखकर, राजा ने रण पार करने पर, अपना पुनजन्म ही माना।

कृत्वा सर्वदिनं युद्धं बलाद् भृत्यैर्निवारितः ।
हाज्यखानः सवित्राणः समराद् स न्यवर्तत ॥ १६४ ॥

१६४ दिनभर युद्ध कर, भृत्यो द्वारा बलात् निवारित होकर, वह हाजी खाँ रक्षापूर्वक युद्ध से परामुख[१] हुआ।

भग्नं निजानुजं दृष्ट्वा पश्चाल्लग्नो विविग्नधीः ।
अग्रजोऽथावधील्लग्नान्मग्नांस्त्रासार्णवे भटान् ॥ १६५ ॥

१६५ अपने अनुज को पराजित देखकर, पीछा करता, क्षुब्ध अग्रज[१] (आदम खाँ) ने सत्रास-सागर मे मग्न, उसके अनुगत भटो को मार डाला।

पाद-टिप्पणी

१६२ (१) नलिनी कल्हण ने चिता ज्वाला की उपमा नलिन से दी है। श्रीवर ने रणभूमि की उपमा नलिनी से दिया है। चिता मनुष्य को भस्म कर देती है, रणभूमि अर्थात नलिनी भी मनुष्यो को नष्ट करती है (कल्हण रा० २ ५६)।

पाद-टिप्पणी

१६४. (१) परामुख = तबकाते अकबरी में उल्लेख है—'हाजी खाँ यद्यपि उसने जो कुछ किया था, उससे लज्जित था, परन्तु कुछ वीरों के प्रयत्न से सेनाओं की पक्तियाँ ठीक कर, रणक्षेत्र म पहुचा और प्रात काल से सायकाल तक युद्ध होता रहा। अन्त में हाजी खाँ के सेना को पराजय हुई और आदम खाँ ने युद्ध मे अत्यधिक वीरता का प्रदर्शन किया (४४२-६६४)।

फिरिस्ता लिखता है—हाजी खाँ राजकीय सेना का भयकर आक्रमण सहन न कर सकने के कारण घोर युद्ध के पश्चात, जो प्रात काल से सायकाल तक हुआ था, पराजित हो गया और हूरपुर भाग गया (४७१)।

पाद-टिप्पणी

१६५ (१) अग्रज = आदम खाँ फिरिस्ता लिखता है—अनेक वीर सेनानो दोनो पक्षो से मारे गये। आदम खाँ ने इस युद्ध में बडी बहादुरी का परिचय दिया (४७१)।

किमुच्यते नृशंसत्वं येन शूरपुरान्तरे ।
जन्ययात्रागतो मोहान्निहतः पथिकव्रजः ॥ १६६ ॥

१६६ उसकी नृशंसता क्या कही जाय ? जिसने सूरपुर[1] में वरयात्रा में आगत, पथिक समूह को मार डाला ।

यस्यां मन्दप्रभो भास्वान् गणैः सर्वैर्विलोकितः ।
दक्षिणस्या दिशस्तस्याः प्रवासी स नृपोऽभवत् ॥ १६७ ॥

१६७ जिस दिशा में सब लोगों ने सूर्य को ही मन्द प्रभायुक्त देखा, वह राजा उसी दक्षिण[1] दिशा का प्रवासी हुआ ।

दुर्योधनार्पितरमा गुरुशल्यनिष्ठा
भीष्मप्रियाः परहतिं प्रति दत्तकर्णाः ।
ये धर्मजातिविमनस्कतया कृपेच्छा-
स्ते कौरवा इव रणे न जयं लभन्ते ॥ १६८ ॥

१६८ दुष्टों के हाथ में पृथ्वी का भार देने तथा शल्य (भाला) पर आश्रित विश्वास रखने वाले भयंकरताप्रिय, दूसरों के हानि के लिये दत्त कर्ण (चैतन्य) एवं धर्म-जाति के प्रति उदासीनता के कारण, कृपा के इच्छुक, जो होते हैं, वे लोग दुर्योधन[1] को पृथ्वीभार समर्पितकर्ता गुरु[2] एवं शल्य[3] पर निष्ठाकारी भीष्म[4] प्रिय, पर-पक्ष की हानि हेतु कर्ण[5] को लगाने वाले, धर्म-गोत्र से उदासीन कृपाचार्य को चाहने वाले, कौरवों[6] के समान रण में जय प्राप्त नहीं करते ।

पाद-टिप्पणी

१६६. (१) सूरपुर = द्रष्टव्य टिप्पणी श्लोक १ : १ : १०७ । तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'हाजी खाँ हूरपुर की तरफ भागा और आदम खाँ ने तुरन्त उसका पीछा कर पकड़ना चाहा' (४४२-४४३ = ६६४)। तवक्काते अकबरी के पाण्डुलिपि में 'नस्सीरपुर' 'बीरह ऊद' और लीथो संस्करण में 'नीदारपुर' दिया गया है । फिरिश्ता के लीथो सम्करण में 'दीरहपुर' दिया गया है। कर्नल ब्रिग्स ने 'हीरपुर' लिखा है । कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (२८३) तथा रोजर्स ने लिखा है कि हाजी खाँ भीमवर आया । परन्तु तवक्काते अकबरी तथा फिरिश्ता ने लिखा है कि वह सूरपुर या हीरपुर जाकर, तब भीमवर गया ।

पाद-टिप्पणी :

१६७ (१) दक्षिण दिशा : मृत्यु की दिशा दक्षिण है । दक्षिण दिशा यम की दिशा है । वही उस दिशा का राजा है । मृत्यु के पश्चात् मनुष्य का पैर दक्षिण दिशा की ओर कर दिया जाता है । मुसलमान भी अपना शव दक्षिण दिशा की ओर पैर कर गाड़ते है । श्मशान सर्वदा जनस्थान के दक्षिण दिशा की ओर बनाया अथवा रखा जाता है । कल्हण ने भी इसी अर्थ में दक्षिण दिशा का प्रयोग किया है (रा० १ २९०) ।

पाद-टिप्पणी :

१६८. (१) दुर्योधन धृतराष्ट्र पिता एवं गान्धारी माता के शत पुत्रों में ज्येष्ठ । महाभारत युद्ध का कारण । व्यास ने महाभारत में नाटक के खल्नायक पात्र तुल्य उसका चित्रण किया है । गदायुद्ध में दक्ष था । सच्चा मित्र था । दुर्योधन युधिष्ठिर से छोटा था । दुर्योधन एवं भीम का जन्म

एक ही दिन हुआ था। दोनो ही गदायुद्ध में पारगत थे। द्रोणाचार्य ने पाण्डवों के समान दुर्योधन को भी अस्त्र-शस्त्र का शिक्षा दिया था। पाण्डवो का यह शत्रु था। उन्हें विष, लाक्षागृह आदि उपायो द्वारा मार डालने का प्रयत्न किया था। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को आधा राज्य देकर, इन्द्रप्रस्थ में रखा था। मामा शकुनी द्वारा जूआ में पाण्डवो का राज्य ले लिया। पाण्डव वन चले गये। अज्ञातवास किया। वनवास से लौटने पर, पाण्डवों का राज्य नही लौटाया। अतएव महाभारत का युद्ध हुआ। दुर्योधन मानी तथा हठी था। भीम ने गदायुद्ध के नियमों को तोडकर, इस पर प्रहार कर, मार डाला, क्योंकि गदा-युद्ध में नाभि के नीचे गदा प्रहार नही किया जाता। भीम ने नाभि के निम्न भाग जघा पर प्रहार किया था।

(२) द्रोणाचार्य आगिरसगोत्रीय भरद्वाज ऋषि के पुत्र थे। कृपाचार्य की बहन इसकी पत्नी थी। उससे अश्वत्थामा पुत्र था। द्रोण का आश्रम गगाद्वार अर्थात् हरिद्वार में था। बृहस्पति एव नारद के अश से द्रोणाचार्य का जन्म, द्रोण कलश में हुआ था। अतएव नाम द्रोणाचार्य पडा था। पिता द्वारा ही ऋग्वेद एव धनुर्वेद का अध्ययन किया। अग्निवेश नामक चाचा ने इनको आग्नेयास्त्र दिया था। विराटराज द्रुपद द्रोण का सहपाठी था किन्तु कालान्तर में शत्रु हो गया था। कौरव एवं पाण्डव दोनों को इसने अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा दिया था।

दुर्योधन को युद्ध से विरत रहने के लिये बहुत समझाया परन्तु दुर्योधन ने हठ किया। द्रोणाचार्य ने दुर्योधन की ओर से महाभारत युद्ध में भाग लिया था। दशवें दिन कौरवो के प्रथम सेनापति भीष्म की मृत्यु के पश्चात् द्रोणाचार्य कौरवों के सेनापति हुए। युद्ध के पन्द्रहवें अर्थात् अपने सेनापतित्व के पाँचवें दिन इनका देहावसान अश्वत्थामा मर गया यह समाचार उडाकर किया गया। पुत्रशोक से द्रोणाचार्य युद्धभूमि में विह्वल हो गये। इस परिस्थिति में धृष्टद्युम्न ने निःशस्त्र द्रोण का मग से वध कर दिया। युद्ध कौरवो की ओर से कर रहे थे परन्तु सहानुभूति इनकी पाण्डवो के साथ थी।

(३) शल्य वाल्हीक एव मद्र देश के राजा शल्य थे। पाण्डव नकुल एवं सहदेव के सगे मामा थे। उनकी माता माद्री शल्य की बहन थी। माद्री पाण्डु के साथ सती हो गयी थी। कुन्ती ने अपने पुत्रो के समान नकुल एव सहदेव का लालन-पालन किया था। महाभारत युद्ध में अपने भानजो की ओर से युद्ध मे सम्मिलित होना, शल्य के लिये स्वाभाविक था। वह सेना सहित पाण्डवो की सहायता के लिये चला। मार्ग में दुर्योधन ने इसका इतना स्वागत किया कि कौरव पक्ष में सम्मिलित हो गया। युधिष्ठिर ने उसे कर्ण के तेज भंग कराने की प्रतिज्ञा कराया। यह अतिरथी था। महाभारत युद्ध में कर्ण का सारथी बन कर, उसे हतोत्साहित करता था। उपहासपूर्ण वचनो द्वारा कर्ण का इसने तेज भंग किया था।

कर्णवध के पश्चात् कौरवों का सेनापति हुआ। केवल आधा दिन इसने सेनापतित्व किया था। युधिष्ठिर के द्वारा पौष कृष्ण अमावस्या के दिन युद्धस्थल में मारा गया। वह कौरवपक्ष से युद्ध करता था परन्तु इसकी सहानुभूति पाण्डवों के साथ थी।

(४) भीष्म कुरु राजा शन्तनु एवं माता गंगा से इनकी उत्पत्ति हुई थी। आठवें वसु के अश से उत्पन्न हुए थे। बाल ब्रह्मचारी थे। भीष्म का शाब्दिक अर्थ भयंकर है। पराक्रमी एवं ध्येयनिष्ठ राजर्षि रूप में व्यास ने महाभारत में इनका चरित्र चित्रण किया है। इन्हें गागेय कहा जाता है। शन्तनु ने हस्तिनापुर में लाकर उन्हें युवराज बनाया था। कालान्तर में धीवर कन्या सत्यवती पर, शन्तनु आसक्त हो गये। धीवर ने राजा को सत्यवती देना, इसलिये अस्वीकार किया कि भीष्म के रहते, उसका पुत्र राजा नही हो सकेगा। पितृसुख के लिये भीष्म ने आजन्म अविवाहित ब्रह्मचारी रहकर, सत्यवती के पुत्रो की

रक्षा करने तथा उन्हें राज्य पर, शोभित करने की प्रतिज्ञा किया। पिता ने भीष्म के त्याग पर उसे इच्छामृत्यु प्राप्त का वर दिया। सत्यवती का पुत्र चित्रांगद राजा बना। गन्धर्वो से युद्ध में वह मारा गया। सत्यवती के आदेश से विचित्रवीर्य राज सिंहासन पर बैठा। विचित्रवीर्य के विवाह के लिये काशिराज की कन्या अम्बा, अंबिका एवं अम्बालिका का हरण किया। अम्बा ने कहा कि वह विवाह नहीं करेगी। क्योंकि वह मन से शल्य का वरण कर चुकी थी। भीष्म ने उसे छोड़ दिया। शाल्य ने उससे विवाह करना अस्वीकार कर दिया। अम्बा ने भीष्म से विवाह करने के लिये कहा। भीष्म ने अस्वीकार कर दिया। अम्बा भीष्म से विवाह हेतु तपस्या करने लगी। एक दिन उसके नाना होत्रवाहन सृंजय ने उससे परशुराम से सहायता लेने के लिये सुझाव दिया। परशुराम तथा भीष्म में चार दिनों तक इस बात को लेकर युद्ध हुआ। परशुराम हार गये। भीष्म ने विवाह नहीं किया। अम्बा भीष्म को मारने के लिये तपस्या करती रही और शिखण्डी रूप में जन्म लिया।

कौरव-पाण्डव युद्ध में भीष्म कौरवपक्ष से युद्ध किये। प्रथम सेनापति थे। उनकी सहानुभूति पाण्डवों के साथ थी। युद्ध में हत हो गये। शरशय्या पर पड़े रहे। सूर्य के उत्तरायण होने पर, प्राण त्याग किया।

(५) कर्ण अविवाहित अवस्था में कर्ण कुन्ती के गर्भ से सूर्य द्वारा उत्पन्न हुआ था। जन्म लेते ही कुन्ती ने कर्ण को अश्व नदी में प्रवाहित कर दिया। वह बहता-बहता चर्मण्वती नदी में आया। वहाँ से यमुना एवं भागीरथी में बहता आया। धृतराष्ट्र के सारथि अधिरथ ने उसे देखा। जल से निकाल कर, अपनी पत्नी राधा को पालन के लिये दे दिया। कर्ण पर जन्मजात कवच एवं कुण्डल थे। राधा ने उसका नाम वसुषेण रखा। द्रोणाचार्य से शस्त्र विद्या सीखा। कर्ण का अपमान पाण्डव आदि उसके राजपुत्र न होने के कारण करते थे। दुर्योधन ने इसे मान्यता दिया। दोनो मित्र हो गये। द्रौपदी स्वयम्वर में द्रौपदी ने उसे सूतपुत्र कहकर, विवाह करने से अस्वीकार कर दिया। कौरव-पाण्डव महाभारत युद्ध में इसने कौरवों की ओर से भाग लिया था। कुंती ने अपना भेद कर्ण पर प्रकट किया। कर्ण ने चारो पाण्डवों को न मारने की प्रतिज्ञा किया। केवल अर्जुन से युद्ध करने की बात दुहराई। द्रोणाचार्य के पश्चात् कर्ण महाभारत युद्ध का सेनापति हुआ। कर्ण महान दानी था। उसने अपना कवच एवं कुण्डल भी उतार कर इन्द्र को दे दिया था। युद्ध के समय उसका पुत्र वृषसेन मारा गया। उसका रथ युद्धक्षेत्र में फँस गया था। कर्ण उतर कर पहिया निकालने लगा। निशस्त्र कर्ण पर कृष्ण के संकेत पर, अर्जुन ने इसी समय बाण प्रहार कर मार डाला। कर्ण यद्यपि कौरवों के पक्ष से युद्ध कर रहा था और सच्चाई से युद्ध किया परन्तु अर्जुन के अतिरिक्त शेष पाण्डवों को न मारने की प्रतिज्ञा किया था।

(६) कौरव : कुरुवंशियो को कौरव कहा गया है। चन्द्रवंशी राजा ययाति के पुत्र पुरु थे। उनसे पौरव वंश चला। इस वंश में एक प्रतापी राजा कुरु हुए। कुरु के नाम पर कुरुदेश, कुरुक्षेत्र तथा कुरुजांगल स्थानों का नाम पड़ा। इनकी एक शाखा उत्तर कुरु नाम से प्रसिद्ध हुई। मनुस्मृति में कुरु, मत्स्य, पांचाल एवं शौरसेन को ब्रह्मर्षियों का देश माना है। इसी वंश में कौरव एवं पाण्डव हुए थे। वे एक ही कुरु वंश की शाखा थे। हस्तिनापुर कौरव तथा इन्द्रप्रस्थ पाण्डवों की राजधानियाँ थी। महाभारत युद्ध के पूर्व जिन पाँच गाँवों को युधिष्ठिर ने माँगा था उनमें सोनप्रस्थ तथा पाणिप्रस्थ भी थे। वे आधुनिक सोनपत एवं पानीपत हैं। बौद्धसाहित्य में सोलह जनपदों में कुरु का उल्लेख किया गया है। कुरु वंश में शान्तनु हुए। शान्तनु के पुत्र चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य थे। विचित्रवीर्य की रानियों से दो

अन्येद्युर्हतशिष्टांस्तान् भृत्यानानीय पूर्ववत् ।
हाज्यखानः सानुतापश्चिभदेशे स्थितिं व्याधात् ॥ १६९ ॥

१६९ दूसरे दिन मरने से बचे, उन भृत्यो को लाकर, पश्चाताप पूर्वक, हाजी खाँ ने पूर्ववत् चिभ[१] देश मे अपनी स्थिति बनायी ।

खिन्नानाश्वासयन् कांश्चित् संभिन्नान् प्रतिपालयन् ।
भक्षयन् क्षुधयाक्षीणान् नगाग्रे सोऽनयन्निशाम् ॥ १७० ॥

१७० कुछ दुखियो को आस्वस्थ तथा हतो को प्रतिपालित एव क्षुधा क्षीण जनो को खिलाते हुए, पर्वत के ऊपर रात्रि व्यतीत किया ।

नियोगज पुत्र धृतराष्ट्र एव पाण्डु हुए । धृतराष्ट्र जन्मान्ध थे । अतएव पाण्डु को राजसिंहासन प्राप्त हुआ । पाण्डु का शीघ्र ही देहावसान हो गया । धृतराष्ट्र ने शासनसूत्र सम्हाला । धृतराष्ट्र के दुर्योधनादि एक शत तथा पाण्डु को पाँच पुत्र हुए । वे क्रम से कौरव एव पाण्डव कहे गये । महाभारत युद्ध के पश्चात् युधिष्ठिर राजा हुए । कृष्ण की मृत्यु के पश्चात् युधिष्ठिर भाइयों तथा द्रौपदी सहित हिमालय में प्राण त्याग निमित्त चले गये । अर्जुन के पौत्र तथा अभिमन्यु का पुत्र परीक्षित राजा बना । परीक्षित के पश्चात् जनमेजय राजा हुए । जनमेजय के तीसरी पीढी में अधिसीम कृष्ण राजा हुआ । उसके समय सबसे पहले नैमिषारण्य में महाभारत तथा पुराणों का परायण हुआ । अधिसीम कृष्ण का पुत्र निचक्षु था । वह हस्तिनापुर का अन्तिम राजा था । हस्तिनापुर गगा में बह गयी । राजा तथा प्रजा प्रयाग के समीप आकर वत्स क्षत्र में शरण लिये ।

पाद टिप्पणी

१६९ (१) चिभदेश = भीमवर श्रीदत्त ने चिभ को चित्र लिखा है । कलकत्ता तथा बम्बई सस्करणों में 'चित्र' शब्द मिलता है । दत्त ने भी चित्र ही लिखा है । परन्तु चित्र नामक कोई देश नहीं है । चिभ देश कश्मीर के सीमान्त दक्षिण में है । अतएव लिपिक की गल्ती से 'चिभ' को 'चित्र' लिख दिया गया है ।

चिब राजपूतों की एक उपजाति है । चिभाली मुसलमान भी पूर्वकाल में चिब या डोगरा जाति के थे । डोगरा हिन्दू रह गये और चिभाली मुसलिम धर्म स्वीकार कर लिये । मुसलिम जाट भी चिभाली जाति में मिल गये हैं । वे कृषक कार्य करते है । पूर्वीय चिभाली अचल के मुसलमान ठाकुर है । उनमें उच्च वर्ग के सुदन कहे जाते हैं । चिबाली लोगों का रूप डोगरों से मिलता है, केवल मुसलिम चिभाली अपनी मूछ बीच से अर्थात नाक के नीचे छटा देते है । शताब्दी पूर्व मुसलमान तथा हिन्दुओं में परस्पर विवाह होता था । दोनो ही अपने धर्म को मानते थे । अपने घरों में मुसलमान देवता भी रखते थे । परन्तु यह सब अब लुप्त हो गया है ।

परशियन इतिहासकार लिखते हैं कि हाजी खाँ हीरपुर अपने शेष साथियों के साथ भाग आया और वहाँ से भीमवर चला गया (म्युनिख पाण्डु ७५ ए बी तवक्काते अकबरी ३ ४४२-४३ = ६६४) ।

फरिश्ता दूसरे स्थान पर नाम देता है—'हाजी खाँ अपनी सेना को पुन एकत्रित कर वहाँ अपनी स्थिति बनाकर 'नौरे' नगर लौटा आया (४७२) ।

द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ १ ४७ । तवक्काते अकबरी के पाण्डुलिपि में 'ववज' 'बनीर' तथा 'बनीर' और लीथो सस्करण में 'नौर' और फिरिश्ता के लीथो सस्करण में 'नौर' दिया गया है । रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में 'भीमवर' दिया गया है (३ २८३) ।

पाद टिप्पणी

१७०. कलकत्ता के 'अशवन' के स्थान पर बम्बई का 'अक्षपन' पाठ उचित है ।

मा वाधिष्ट सुतं कश्चिन्मत्परो वातिविह्वलः ।
इति कारुणिको राजा न्यवर्तत रणाद् द्रुतम् ।। १७१ ।।

१७१. 'मेरे पक्ष का कोई पुत्र का वध[1] न करे'—इस प्रकार अतिविह्वल होकर, दयालु राजा युद्ध से शीघ्र परावृत हो गया।

आसिष्ये सुखितः सुतार्पितभरो बुद्धेति दत्ता निजा
राष्ट्रेशा वरसेवका सतुरगाः सवर्धिता ये मया ।
तेऽमी राज्यजिहीर्षवः सुतरता युद्धाय मय्यागता
धिङ्मां येन नयोज्झितेन घृणयानर्थः स्वयं स्वीकृतः ।। १७२ ।।

१७२ सुतपर भार रखकर, सुख से रहूँगा, यह विचार कर, अपने जनो को राजपुरुषों जो अश्व तथा लोगो से घिरे रहते थे, अपने प्रिय मुख्य सेवको को राष्ट्र का स्वामित्व दिया, परन्तु धिक्कार है, वे उससे लड़ने आये। उसने स्वयं अपने को दोष दिया कि अपनी कृपा में उसने विवेक से काम नही लिया।

इत्यादि विमृशन् राजा स्वपुरं दुःखितोऽगमत् ।
विरोधादायिनो निन्दन् सेवकान् विधिकर्मणा ।। १७३ ।।

१७३ इस प्रकार विचार करते तथा विरोधियो की निन्दा करते हुये, दुःखित राजा अपने नगर गया।

संग्राममृतवीरेन्द्रच्छिन्नमस्तकपङ्क्तिभि ।
आनीय राजा नगरे मुखागारमकारयत् ।। १७४ ।।

१७४ राजा ने नगर[1] मे लाकर, संग्राम मे मृत वीरो के छिन्न मस्तक पंक्तियो से मुखागार[2] (मीनार) का निर्माण कराया।

पाद-टिप्पणी :

१७१. (१) वध = आदम खाँ पीछा कर रहा था। अतएव सुलतान हाजी खाँ के जीवन बचाने की दृष्टि से आदेश दिया कि कोई भी हाजी खाँ का वध न करे (म्युनिख पाण्डु० ७१ ए बी,)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—आदम खाँ ने उसका पीछा किया और उसे (हाजी खाँ) बन्दी बना लेने का प्रयत्न किया किन्तु सुलतान ने उसे इस बात की आज्ञा न दी (४४३ = ६६४)।

फिरिस्ता लिखता है—आदम खाँ ने हूरपुर से हाजी खाँ का पीछा किया किन्तु पिता (सुलतान) ने उसे और पीछा करने से मना कर दिया (४७२)।

पाद-टिप्पणी

१७४ बम्बई तथा कलकत्ता संस्करणों में 'सुखागार' शब्द है। शत्रुओं के मुण्डों को देखकर सुख मिलता था। अतएव 'सुखागार' भी अर्थ हो सकता है। परन्तु 'मुखागार' अधिक अभीष्ट है। मुसलमानों में शत्रुओं के मुण्डों को एकत्र कर मीनार बनाना साधारण प्रथा थी। अतएव मुखागार मानकर अर्थ किया गया है।

(१) नगर = श्रीनगर।

(२) मुखागार = यह मीनार है। मुसलिम देशों तथा सुलतान अपने विरोधियों को मारकर उनके मुण्डों पर मीनार बनाते थे। वे विजयस्तम्भ के प्रतीक मान लिये जाते थे।

इत्थं सेवकपैशुन्यात् पितापुत्रविरोधतः ।
समरे तत्र तद्वर्षे वीरलोकक्षयोऽभवत् ॥ १७५ ॥

१७५ इस प्रकार सेवको की पिशुनता से पिता-पुत्र के विरोध के कारण, उस वर्ष वहाँ युद्ध मे वीरो का विनाश हुआ ।

अलाउद्दीन खिलजी ने मुगलो के मुण्डो पर मीनार का निर्माण कराया था । यह मीनार भग्नावस्था में सन् १९५२ ई० में मौजूद थी, जब मैंने उसे प्रथम बार देखा था । यह हौज खास के चौराहे के समीप दिल्ली से महरौली जाने वाली सडक के वाम पार्श्व में थी । उन दिनो सफदरजग से महरौली तक न तो आबादी थी और न कोई इमारत बनी थी । केवल सफदरजग हवाई अड्डा तथा तत् सम्बन्धी कुछ इमारतें थी । कुतुबमीनार के पास एक टी० बी० का अस्पताल था । आज सन् १९७१ ई० में सफदरजग से महरौली तक इमारतें बन गयी है । उस समय अलाउद्दीन के मीनार के पास पठान शैली की मसजिदें बनी थी । कुछ मजारें भी थी । आज बहुत कुछ समाप्त हो गया है । मजारो का पता नही है । केवल मीनार का कुछ अश शेप रह गया है ।

पीरहसन लिखता है—मुखालिफो के सरों का एक ऊँचा मीनार बनवाया । और हाजी खाँ के लश्कर के कैदी कतल कर डाले । (पृ० १८४)

द्रष्टव्य म्युनिख पाण्डु ७५ ए तथा तवकाते अकबरी ३ ४४३

तवकाते अकबरी में उल्लेख है—हाजी खाँ ने हीरपुर से नवर पहुँचकर, घायलो का उपचार आरम्भ किया । सुलतान विजयोपरान्त कश्मीर (श्रीनगर) पहुँचा । उसने आदेश दिया—'शत्रुओ के सिर का मीनार तैयार किया जाय ।' हाजी खाँ की सेना के बन्दियों की हत्या कर दी गयी और आदम खाँ ने उन लोगो को जिन्होंने हाजी खाँ को मार्गभ्रष्ट किया था, बन्दी बनाकर कत्ल कर दिया तथा उनके परिवारों को कष्ट पहुँचाया । इस कारण अधिकाश लोग पृथक होकर आदम खाँ के पास पहुँच गये (४४३ = ६६४) ।

फरिश्ता लिखता है—उसी समय सुल्तान राजधानी लौटकर एक मीनार अथवा (खम्भा) बनवाया उसके चारों तरफ उन विद्रोहियों का सर लटकवा दिया—जो युद्ध में बन्दी बनाकर मार डाल गये थे (४७२) ।

सुल्तान के प्रकृति के विरुद्ध यह क्रूर कार्य प्रतीत होता है । 'मुखागार' का अर्थ अभी स्पष्ट नही है । यदि पाठभेद सुखागार मान लिया जाय तो उसका अर्थ प्रासाद निर्माण होगा । मुण्डो का प्रासाद या सुखागार कैसे बनेगा समझ में नही आता ।

राज्यस्थितिप्रविकसन्नलिनीहिमौघो
लोकक्षयोचितमहाभयधूमकेतुः ।
विघ्नप्रसक्तखलघूकनिशान्धकारः
शापः सुखस्य नृपते स्वजनैर्विरोधः ॥ १७६ ॥

इति पण्डितश्रीवरविरचितजैनराजतरंगिण्या मल्लशिलायुद्धवर्णनं नाम प्रथम सर्ग ॥ १ ॥

१७६ सुखी राजा के लिये अपने जनों से विरोध होना शाप है, जो विकसित होते, रूप-नलिनी के लिये हिमपुंज, लोक के विनाश समर्थ महाभयकर धूमकेतु[1] एवं विघ्न में लगे दुष्ट उलूकों के लिये निशान्धकार है।

पण्डित श्रीवर विरचित जैन राजतरंगिणी में मल्ल शिला युद्ध वर्णन प्रथम सर्ग समाप्त हुआ।

पाद-टिप्पणी

१७६ उक्त श्लोक कलकत्ता तथा बम्बई संस्करण का १७६ वां श्लोक है।

उक्त श्लोक के पश्चात् निम्नलिखित श्लोक कलकत्ता संस्करण में और मुद्रित है।

श्री मान सिंहनृपते तव नाम वर्णा
पञ्चेषु पञ्च विशिखन्ति नितम्बिनीषु ।
प्राणन्ति बन्धुषु विरोधिषु पाण्डवन्ति-
देवद्रुमन्ति कवि पण्डित मण्डलेषु ॥

'हे ! श्रीमान सिंह नृपति ! तुम्हारे नामाक्षर ! पंचवाण (कामदेव) के पंचवाण तथा भाइयों में प्राण एवं विरोधियों म पाण्डव तथा कवि पण्डित मण्डलियों में देवद्रुम का आचरण करते है।'

कलकत्ता में १७७ तथा बम्बई में १७६ श्लोक हैं। कलकत्ता में उक्त श्लोक और अधिक छपा है, जो श्रीवर कृत नहीं परन्तु लिपिक द्वारा श्लोक 'श्रीमानसिंह नृपति' बढ़ाया गया है। श्री मानसिंह नृपति के समय पाण्डुलिपि की प्रतिलिपि कराई गयी होगी अतएव श्रीवर कृत पद नहीं है। यह बम्बई प्रति में भी नहीं है। अतएव उसे निकाल देने पर श्लोक संख्या १७६ हो जाती है। इस प्रकार बम्बई तथा कलकत्ता दोनों की श्लोक संख्या समान होती है।

(१) धूमकेतु : धूमकेतु का परिणाम छत्रभंग, अकाल, युद्ध इत्यादि अमंगल कार्य होता है। अनिष्ट-सूचक धूमकेतु के उदय का वर्णन प्रायः सभी काश्मीरी लेखकों ने किया है। धूमकेतु के उदय होते ही काश्मीरी धारणा है कि देश पर भयंकर विपत्ति आ जाती है। शुक्र ने धूमकेतु के परिणामों का उल्लेख विस्तार से किया है (२ : ८९)। केतु एक प्रकार का तारा है। उसमें चमकती पूँछ दिखायी देती है। इसे पुच्छल तारा भी कहते हैं। इस प्रकार के अनेक तारा है, जो रात्रि में झाडू के समान दिखायी देते हैं। ख्यातिपियों में इनकी संख्या के विषय में मतैक्य नहीं है। फलित ज्योतिष के अनुसार भिन्न-भिन्न केतुओं का भिन्न भिन्न परिणाम होता है। केतु उदयकाल के पन्द्रह दिन के भीतर अपना फल प्रकट करता है।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण में धूमकेतु के विषय में एक कथा दी गयी है। प्रजा की अत्यन्त वृद्धि देखकर ब्रह्मा ने मृत्यु नामक एक कन्या उत्पन्न किया। उसे प्रजा संहार करने के लिये आदेश दिया। कन्या संहार का आदेश सुनकर रुदन करने लगी। उसके अश्रुओं ने अनेक व्याधियों को उत्पन्न किया। उसने तप किया। तप के कारण उसे वर मिला। उसके कारण किसी की मृत्यु नहीं होगी। कन्या ने एक दीर्घ निश्वास त्याग किया। उससे केतु उत्पन्न हुआ। केतु को एक शिखा भी थी। इसे ही केतु या धूमकेतु कहते है (१ : १०६)। आधुनिक वैज्ञानिक मान्यता के अनुसार धूमकेतु के आयाम, नामकरण, कक्षा, मूलतत्त्व, घनत्व, प्रकाश आदि पर विशद ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

द्वितीयः सर्गः

भूभृतो निर्गता प्रेमसरित् प्रोच्चानुजच्छलात् ।
प्रत्यावृत्ता कियत्कालं शुद्धाग्रजमशिश्रियत् ॥ १ ॥

१ राजा का प्रेम अनुज के छल के कारण (उससे) परावृत्त होकर, शुद्ध अग्रज (ज्येष्ठ भ्राता) का आश्रय लिया। जिस प्रकार पर्वत से निकली नदी, उन्नतावनत भूमिष्ट स्थान से सम (भूमि) का आश्रय लेती है।

यत् स्नेहभागी सुदशाभिरामो
भाति प्रदीपः समुपास्य पात्रम् ।
आशाप्रकाशैकनिधेस्तदारा-
दसंनिधानेन विरोचनस्य ॥ २ ॥

२ दिशाओं के प्रकाशनिधि सूर्य का सन्निधान न होने से ही, स्नेह (तैल) युक्त एवं सुन्दर दशा (बत्ती) से शोभित, प्रदीप पात्र पाकर, सुशोभित होता है।

ददावादमखानाय नायकः स क्षितेस्तदा ।
प्रमेयान् क्रमराज्यस्थाननुजीयान् विरागतः ॥ ३ ॥

३ तदनन्तर वह पृथिवीपति विराग से क्रमराज्य[1] गत प्रमेय[2] (विश्वास योग्य) अनुजीव्य जनों को आदम खाँ के आधीन कर दिया।

पाद-टिप्पणी

१ उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की १७८वीं पंक्ति तथा बम्बई एवं संस्करण का प्रथम श्लोक है।

पाद-टिप्पणी

३ (१) क्रमराज्य = कामराज या कमराज।

(२) प्रमेय = जागीर श्रीवर ने इसी अर्थ में प्रमेय शब्द का पुनः उल्लेख (१ : ४ : ४९) किया है।

फिरिश्ता लिखता है—इस समय सुल्तान ने आदम खाँ को गजरज (क्रमराज्य) एक सेना के साथ भेजा कि वहाँ के कोट पर वह जाकर, आक्रमण

जगृहे स च वित्तौघं गृहग्रामादि देवगम् ।
हाज्येहैदरखानीयं पानीयमिव वाडवः ॥ ४ ॥

४ उसके हाजी (हैदर)[१] खाँ के गृह ग्राम आदि धन समूह को, उसी प्रकार ग्रहण कर लिया, जिस प्रकार बडवाग्नि जल का ।

ततःप्रभृति ज्येष्ठः स कश्मीरान्तर्नृपाग्रगः ।
यौवराज्ये सुख तद्वद् बुभुजे पञ्चशः समाः ॥ ५ ॥

५ तब से नृप का अग्रगामी, वह ज्येष्ठ (आदम खाँ) काश्मीर के अन्दर यौवराज्य[१] पद पाँच वर्ष[२], उसी के समान भोग किया ।

करे और वहाँ उसने बहुत से लोगो को जिन्होंने विद्रोह उभाडा था पकड कर हाजी खाँ ने उनका वध करवा दिया और उनकी सम्पत्तियाँ ले ली । उसके इस कार्यवाही से हाजी खाँ के जो कुछ सैनिक साथी बच गये थे, वे भी हाजी खा का साथ त्याग कर आदम खाँ के साथ हो गये (४७२) ।

पाद टिप्पणी

४ (१) हैदर हाजी खाँ ही हैदर शाह है । शाहमीर वंश का नवाँ सुलतान पिता जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात हुआ था । अग्रज अर्थात ज्येष्ठ भ्राता आदम खाँ को कभी सुलतान बनने का अवसर नही मिला ।

पाद टिप्पणी

५ (१) यौवराज्य जोनराज ने युवराज पद का उल्लेख (३२९ ४८५, ६८८, ७०२ तथा ७३२) किया है । सुलतान कुतुबुद्दीन ने हस्सन को युवराज बनाया था । पीर हसन लिखता है—सुलतान ने इस वाकया के बाद आदम खाँ को अपना वलीअहद बनाकर, इन्तजाम और आबादी मुल्क में मशगूल हुआ (पृष्ठ १८४) ।

भारतीय मुसलमानों ने इस प्राचीन भारतीय प्रथा को स्वीकार कर लिया था । पर्शियन में इस पद का नाम वलीअहद है । शुक भी उल्लेख करता है कि मुहम्मद शाह ने शाह सिकन्दर को अपना युवराज बनाया था (१ ९४) । कौटिल्य ने एक पूरा अध्याय युवराज के विषय में लिखा है (१ १७) । युवराज का भी अभिषेक होता था । राजा के शासनकाल में कनिष्ठ भ्राता अथवा ज्येष्ठ पुत्र युवराज बनाया जाता था (रामा० अयो० ३, ६ काम० ७ ६ शुक्र० २ १४-१६) । राम ने लक्ष्मण के अस्वीकार करने पर भरत को युवराज बनाया था (रामा० युद्ध० १३१ ९३) । युधिष्ठिर ने भीम को युवराज बनाया (शान्ति० ४१) । राज्य के भिन्न भागों में युवराज अथवा राजकुमार राज्यपाल बनाकर भेजे जाते थे । बिन्दुसार ने अशोक को तक्षशिला शासक बना कर भेजा था । अशोक ने कुणाल को तक्षशिला अामात्यों के अत्याचार से आसन्न विद्रोह दमन करने के लिये भेजा था । हाथी गुम्फा खारवेल अभिलेख से प्रकट होता है कि खारवेल स्वयं ९ वर्षों तक युवराज पद पर था ।

युवराज का नाम मन्त्रियों की प्राचीन मान्यतानुसार सूची में नाम नही मिलता । किन्तु उसे १८ तीर्थों में एक माना है (शुक्र २ ३६९-३७०) । शुक्र ने युवराज एवं आमात्य दल को दो बाहु तथा आँखें है, लिखा है (शुक्र २ १२) । युवराज का वेतन मन्त्री, पुरोहित आमात्य सेनापति रानी एवं राजमाता के समान मिलता था । कौटिल्य ने युवराज को (१ १२) अट्ठारह तीर्थों में एक तीर्थ माना है । मथुरा सिंहस्तम्भ तथा चन्द्रावती

येषां सुखं वितनुते विधिरन्नवृद्धया
दुर्भिक्षदुःखमपि संतनुते स तेषाम् ।
वृष्ट्या विवर्धयति यानि तृणानि मेघ-
स्तान्येव शोषयति भावितुषारभारात् ॥ ६ ॥

६ विधाता जिन लोगों को अन्न वृद्धि करके सुख देता है, उन्ही को वह दुर्भिक्ष दुःख भी प्रदान करता है। मेघ वृष्टि द्वारा जिन तृणों को वर्धित करता है, भविष्य में तुषारपात से उन्हें सुखा भी देता है।

सर्वशस्यसमृद्धेऽस्मिन् देशे पट्त्रिंशवत्सरे ।
अकस्मादभवच्चैत्रे गगनात् पांशुवर्षणम् ॥ ७ ॥

७ हर प्रकार के फसल से सम्पन्न इस देश मे, ३६[1] वें वर्ष के चैत्र मास मे, आकाश से अकस्मात धूल[2] वृष्टि हुई।

के चन्द्रदेव कन्नौज में तीन उल्लेख मिलता है (इ० आई० : ९ ३०२, ३०४)।

भारतीय शासन पद्धति के अनुसार राजा किसी व्यक्ति को युवराज बना सकता था। युवराज के भी मन्त्री होते थे। उन्हें युवराज पादीय कुमारामात्य कहा जाता था। गहड़वाल नरेशों के अभिलेखों में राजा, राज्ञी, युवराज, मन्त्री, पुरोहित, प्रतिहार तथा सेनापति का उल्लेख मिलता है। युवराज प्राय पुत्र बनाया जाता था। जैनुल आबदीन ने सर्वप्रथम अपने अनुज महमूद तत्पश्चात आदम खाँ (१ २ ५) तत्पश्चात हाजी खाँ को (१ ३ ११७) युवराज बनाया था। मृत्यु काल में किसी को नहीं बनाया। हैदर शाह जब सुलतान हुआ, तो अपने चाचा बहराम खाँ को युवराज पद देने का प्रस्ताव रखा था। सुलतान कुतुबुद्दीन को कोई सन्तान नहीं थी। उसने हस्सन को युवराज बनाने का निश्चय किया था (जोन० ४८५)। सुलतान जमशेद ने अपने भाई अलाउद्दीन को युवराज बनाया था (जोन० . ३२९, द्रष्टव्य . म्युनिम पाण्डु० ७५ ए०, तवकाते अकबरी ३ . ४४३, तारीख हसन . पाण्डु० २ १०३ बी०, जोन० ६८८, ७०२ तथा ७३२)।

(२) ६ वर्ष फिरिस्ता लिखता है—सुल्तान ने इस समय आदम खाँ को अपना प्रतिनिधि तथा युवराज घोषित कर दिया। आदम खाँ ने वहाँ ६ वर्ष वर्ष तक शासन किया (४७२)। तवकाते अकबरी में भी उल्लेख है—तत्पश्चात आदम खाँ ने देश का ६ वर्ष तक पूरे अधिकार के साथ शासन किया (४४३ = ६६५)। कर्नल ब्रिग्गस तथा रोजर्स भी लिखते हैं कि आदम खाँ राज्य का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया गया। कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में लिखा है—आदम खाँ अब श्रीनगर में अपने पिता के साथ ६ वर्षों तक रहा और राज्य के प्रशासन में अधिक भाग लेता था (३ २८३)।

पाद-टिप्पणी

श्रीवर दुर्भिक्ष का वर्णन आरम्भ करता है।

७ (१) छत्तीसवें वर्ष सप्तर्षि ४५३६ = सन् १४६० ई० = विक्रमी १५१७ सम्वत = शक १३८२ – कलि गताब्द ४५६१ वर्ष। पीर हसन हिजरी ८७५ अकाल का समय देता है (पृ० १८४)।

बभूव वर्षः षट्त्रिंशः सर्ववृष्णिकुलक्षयात् ।
भयकृत् सर्वजन्तूनां भारतादिति विश्रुतम् ॥ ८ ॥

८ सभी प्राणियों के लिये ३६ वाँ[1] वर्ष भयकारी होता है। महाभारत में सब यदुवंशियों[2] के विनाश होने से प्रसिद्ध है।

---

(२) धूल वर्षा यह अशुभ तथा भावी विपत्ति का सूचक माना जाता है।

पाद-टिप्पणी

८ (१) छत्तीसवाँ वर्ष द्रष्टव्य टिप्पणी (१ २ · ७)। महाभारत मौसलपर्व (१ १) में उल्लेख मिलता है—

षट्त्रिंशे त्वथ सम्प्राप्ते वर्षे कौरवनन्दन ।
ददर्श विपरीतानि निमित्तानि युधिष्ठिर ॥ १ : १

× × ×

षट्त्रिंशेऽथ ततो वर्षे वृष्णीनामनयो महान् ।
अन्योन्यं मुसलैस्ते तु निजघ्नुः काल चोदित ॥ १ १३

(२) यदुवंश कुलक्षय, वंश विनाश, जाति संहार को जहाँ उपमा देनी होती है, वहाँ यादव वंश संहार की बात की जाती है। इसका गुरुत्व इसलिये अत्यधिक है कि भगवान कृष्ण, बलराम की उपस्थिति में संहार हुआ और वे रोक नहीं सके। सात्यकि जैसे महाभारत के महारथी द्वारा संहार का आरम्भ हुआ और उससे कोई बच नहीं सका।

एक समय महर्षि विश्वामित्र, कण्व एवं नारद जी द्वारिका गये थे। यदु बालक सारण आदि साम्ब को नारीवेश में विभूषित कर मुनियों के सम्मुख ले गये। उन्होंने कहा—'महात्मन्! यह बभ्रु की पत्नी है। कृपया बताइये इसके गर्भ में क्या है ?' महर्षिगण वञ्चनापूर्ण बालकों की बात सुन कर कुपित हो गये। वे बोले—'यादवकुमारों! श्रीकृष्ण का यह साम्ब भयंकर लोहे का मूसल उत्पन्न करेगा जो वृष्णि एवं अन्धक वंश के विनाश का कारण होगा। साम्ब से जब मूसल उत्पन्न हुआ तो वे उसे यदुवंशियों के राजा उग्रसेन को दिये। राजा ने उस टुकड़ा कर चूर्ण बना दिया। लौहचूर्ण समुद्र में फेंक दिया गया। और नगर में घोषणा कर दी गयी कि कोई मदिरापान न करें।

अन्धक एवं वृष्णियों ने सकुटुम्ब तीर्थयात्रा का संकल्प किया। वे खाद्य एवं पेय सामग्रियों के साथ द्वारका से प्रभासक्षेत्र में आ गये। वह स्थान नट, नर्तन, एवं वाद्यों से पूर्ण हो गया। प्रभासक्षेत्र में यादवों ने मद्यपान आरम्भ किया। श्रीकृष्ण के समीप ही कृतवर्मा, बलराम, सात्यकि, बभ्रु एवं गद मद पीने लगे। सात्यकि मद से मत्त होकर कृतवर्मा का उपहास करने लगे। उसने रात्रि में निहत्थों की शयनावस्था में हत्या किया था। प्रद्युम्न ने भी कृतवर्मा का तिरस्कार किया। कृतवर्मा क्रोधित हो गया, बायें हाथ की उँगली से निर्देश करता हुआ बोला—'तुमने हाथ कटे निहत्थे रणक्षेत्र में उपवास के लिये बैठे भूरिश्रवा की हत्या क्यों की ?' सात्यकि क्रोधपूर्वक उठा और कृतवर्मा का मस्तक काट दिया। परस्पर संघर्ष आरम्भ हो गया। कृष्ण उसे रोक न सके। भोज एवं अन्धक वंशियों ने सात्यकि को घेर लिया। सात्यकि को घिरा देखकर प्रद्युम्न उसे बचाने के लिये कूद पड़े। प्रद्युम्न भोजों तथा सात्यकि अन्धों से भिड़ गये। देखते-देखते दोनों ही कृष्ण के सम्मुख ही मार डाले गये। कृष्ण ने क्रोधित होकर एक मुट्ठी एरका उखाड़ लिया। वह घास उनके हाथ में आते ही मूसल बन गयी। कृष्ण के इस कृत्य के पश्चात सभी लोगों ने एरका उखाड़ लिये। उनके हाथों में आते ही वह मूसल हो गयी। मूसल जो चूर्ण कर समुद्र में फेंका गया था कहावत है कि उसी से एरक उत्पन्न हो गया था। साधारण तिनका ने मूसल का रूप ले लिया। उसी मूसल से पिता ने पुत्र को और पुत्र ने पिता को मार डाला। उस

अभवन् पत्रपुष्पौघा धूलिधूसरता नताः ।
भाविदुर्भिक्षपीडार्तजनचिन्तावशादिव ॥ ९ ॥

९ धूल-धूसरित एवं पत्र-पुष्पपुंज, भावी दुर्भिक्ष की पीडा से पीडित जनो की चिन्तावश ही, मानो नत हो गये थे ।

सधप में फातिगो के समान कूदते, यादववशी जलने लगे । कृष्ण ने जब अपने पुत्र साम्ब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न, पौत्र अनिरुद्ध तथा गद को रणशय्या पर देखा, तो उन्होने कुपित होकर, शेष यादवो का भी सहार कर दिया । इस कथा की प्रसिद्धि इसलिए है कि महापराक्रमी और वीर यादव लोग बाहरी शत्रु अथवा आन्तरिक शत्रुओं द्वारा नही मारे गये बल्कि स्वत परस्पर लड कर मर गये (मौसल-पर्व १–३) ।

प्राचीन यदु किंवा यादववश पुरुवश के समान ही प्रसिद्ध तथा भारत के अनेक राजवशो का स्रोत रहा है । यह वश दो कालो में विभाजित किया जा सकता है । क्रोष्टु से सात्वत तथा सात्वत के पश्चात इस वश की अनेक शाखायें हुई । पुराणो में इस वश का वर्णन अत्यधिक किया गया है । तथा राजवश की तालिकाएँ भी दी गयी हैं । क्रोष्टु से परावृत राजा के काल तक राजाओ की तालिका में भेद नही है । तथापि कई पुराणो मे पृथुश्रवस, उशनस्, स्वम-घचन एव निवृत्ति राजाओं के पश्चात एक पीढी अधिक दी गयी है । परावृत्त राजा म दो पुत्र थ । उनमें ज्यामद्य कनिष्ट पुत्र था । उमस यदुवश चला था । उसने तथा उसके पुत्र विदभ ने विदभ-राज्य की स्थापना किया था । उसके ज्येष्ठ पुत्र रोमपाद ने विदभराज्य की उन्नति की । इसी वश मे क्रथ, दवक्षत्र, मधु आदि राजा उत्पन्न हुए थे । इसी वश में उत्पन्न हुए सात्वत राजा ने राज्यवृद्धि किया । मधु से सात्वत राजा तक राजाओं की तालिका में पुराणो में एकवाक्यता नही है । विदभ-राज के द्वितीय पुत्र का नाम कौशिक था । उसने चेदि देश म अपने वश की राज्य स्थापना की था । विदर्भराज का त्रितीय पुत्र लोमपाद था । सात्वत राजा ने इक्ष्वाकुवशियों से मथुरा राज्य छीनकर, अपना राज्य स्थापित किया था । सात्वत राजा क भजमान देवावृध, वृष्णि एव अधक नामक चार पुत्र थे । उनके नामो से अलग-अलग राजवशो की स्थापना हुई । भजमान शाखा मथुरा में, देवावृत तथा उसका पुत्र बभ्रु ने मातिकावत नगरी मे भोज राजवश की स्थापना किया था । अधक राजा के चार पुत्र थे । उनमें कुकुर एव भजमान प्रमुख थे । उन्होंने कुकुर तथा अधक राजवशो की स्थापना किया था । कुकुर वश में कस तथा अंधक में कृष्ण हुए थे । वृष्णि राजा के चार पुत्र थे । उन्होंने सुमित्र, युधा-जित, देवमीढूष तथा अनमित्र राजवशो तथा शाखाओ की स्थापना की । सुमित्र शाखा में सत्राजित तथा भगकार, युधाजित मे श्वफल्क तथा अक्रूर, देवमीढूष में वसुदेवादि तथा अनमित्र में शिनि युयु-धान सात्यकि असग आदि थ । वसुदेव के नाम से वसुदेव वश हुआ । अधकवश की एक शाखा विदूरथवश था । वायु एव मत्स्य पुराणो में ११ वश म एक शत यदुवश की शाखायें दी गयी हैं (वायु० ९६ २५५, मत्स्य ४७ २५–२८) । यदुवश की शाखाओं का विस्तार दक्षिण भारत मे भी हुआ था (हरिवश० २ ३८ ३६–५१) । यदु राजा के एक पुत्र सहस्त्राजित ने हैहयवश की स्थापना किया था । हैहयवश यादववश की ही एक शाखा पुराणो क अनुसार थी ।

भविता वत्सरेऽमुष्मिन् दुर्भिक्षं पांशुवर्षणात् ।
इत्याख्यन्नुत्तरं पृष्टा भूभुजा दैवविच्चमाः ॥ १० ॥

१० राजा द्वारा पूछे जाने पर, ज्योतिषियो ने—'पांशु (धूल) वृष्टि[1] से इस वर्ष दुर्भिक्ष होगा'—कहा ।

षट्त्रिंशो वत्सरोऽतीतो दुर्भिक्षार्तिप्रदोऽभवत् ।
ऐषमस्तादृशः प्राप्तो भीतिरित्युदभूद्धृदि ॥ ११ ॥

११ अतीत[1] का ३६ वाँ वर्ष दुर्भिक्ष का पीड़ा देने वाला हुआ । यह भी ऐसा है । ऐसा सब लोगो के हृदय मे पैदा हुआ ।

पतात मार्गशीर्षेऽथ मास्युपद्रवदर्शनम् ।
देशेऽत्र विलमच्छालिमाले प्रालेयवर्षणम् ॥ १२ ॥

१२. उसी समय इस देश मे शालि सुशोभित मार्गशीर्ष[1] मास मे उपद्रवदर्शी हिम पात हुआ ।

दुर्भिक्षुदुःस्थित लोकं कथ पश्यामि साम्प्रतम् ।
इतीव भूरभूच्छन्नमुखी हिमसितांशुकैः ॥ १३ ॥

१३ दुर्भिक्ष से दुःखी लोगो को अब कैसे देखू ? इसी से मानो हिम[1] रूप शित वस्त्र से पृथ्वी ने अपना मुख ढँक लिया ।

पाद टिप्पणी

१० (१) पांशु वृष्टि युद्धारम्भ के पूर्व पराजय स्वरूप कौरवो को अपशकुन दिखायी पड़ने लगा । उसमें पांशु वर्षा का भी उल्लेख है—'अशामिता दिश सर्वा पांसुवर्ष समन्त' । –भीष्म० : ३ ३९ ।

पाद-टिप्पणी

११ (१) अतीत छत्तीसवाँ वर्ष = सुल्तान शहाबुद्दीन के समय सप्तार्षि ४५३६ वर्ष = सन् १४६० ई० = १५१७ विक्रमी संवत् = शक १३८२ में भयंकर जलप्लावन हुआ था यह । बाढ़ भयंकर थी । श्रीनगर जलमग्न हो गया था । शंकराचार्य पर्वत, शालीमार तथा शारिका पर्वत, उस महाबाढ़ के तट प्रान्त बन गये थे । श्रीवर इसी ओर धन, जन, कृषिसंहार की ओर संकेत करता है ।

पाद-टिप्पणी

१२ (१) मार्गशीर्ष . अगहन मास ।

पाद टिप्पणी

'दुःस्थित' पाठ बम्बई

१३ (१) हिमपात फारसी इतिहासकारों ने हिमपात का उल्लेख नही किया है । हिमपात से पृथ्वी ने मानों श्वेत वस्त्र पहन कर, मुख ढँक लिया था ।

छादिताः शालयः पक्का हिमैर्जनमनोहराः ।
खलमूर्खसभामध्ये पण्डितैः स्वगुणा इव ॥ १४ ॥

१४ जब मनोहारी, पके शालियो को हिम ने उसी प्रकार आच्छादित कर लिया, जिस प्रकार खलों एव मूर्खों के सभा मध्य, पण्डित अपने गुणो को ।

कुक्ष्यावेगाद् बुभुक्षार्तः क्षपिताक्षः क्षणे क्षणे ।
आशु दुर्भिक्षयक्षोऽत्र व्यधात् प्रक्षीणलक्षणम् ॥ १५ ॥

१५ प्रतिक्षण कुक्षि (पेट) आवेग से भूख पीडित क्षपिताक्ष[1] दुर्भिक्ष, यक्ष ने यहाँ शीघ्र ही विनाश का लक्षण प्रकट किया ।

प्रविश्य रात्रौ गेहान्तः क्षुद्रक्षद्रोहपीडितः ।
हिरण्यादि धनं त्यक्त्वा भाण्डेभ्योऽन्नमपाहरत् ॥ १६ ॥

१६ क्षुधाधिक्य से पीडित व्यक्ति घर में प्रवेश करके, सुवर्ण इत्यादि धन त्यागकर, पात्रो से अन्न का अपहरण करता था ।

सर्वस्मिन् दिवसे रात्रावपि भिक्षुपरम्पराः ।
शरा इवाविशन् देहे गेहे धान्यवहे तदा ॥ १७ ॥

१७ उस समय प्रतिदिन रात्रि मे भी भिक्षुओ की परम्परा, शरीर म शर के समान, धान्यपूर्ण घर मे प्रवेश करती थी ।

धान्यवद्गृहसंदिष्टकुष्टकम्बुकदम्बकाः ।
नीरसापूपभोगेनाप्यरक्षन् केऽपि जीवितम् ॥ १८ ॥

१८ धान तुल्य घर मे कम्बु (सीप आदि) को पीसने वाले कुछ लोगो ने नीरस अपूप[1] खाकर, प्राण की रक्षा की थी ।

पालीपालीवतासक्तपट्टङ्कटङ्कितभोजनः ।
चिराचिरास्वादरतः कोऽपि कोऽपि हतोऽभवत् ॥ १९ ॥

१९ पालको मे आसक्त कसकर, भोजन करने वाला चिरकाल से आस्वाद रत रहने पर भी, कोई-कोई मर गया ।

पाद-टिप्पणी

१४ बम्बई का 'स्वगुणा' पाठ ठीक है ।

पाद-टिप्पणी

१५ (१) क्षपिताक्ष चारों ओर आँख फेंक कर या फैलाकर अर्थात आँख गडा कर देखना ।

पाद-टिप्पणी

१८ (१) अपूप : शर्करा या मीठा आटा में सानकर बनायी गयी पूरी । पूर्वीय उत्तर प्रदेश म उसे ठोकवा कहते है । मालपूआ और अपूप में अन्तर है । माल्पूआ भी गेहूँ के आटा में मीठा मिलाकर बनाया जाता है । परन्तु वह नीरस नही होता ।

क्षीणा ग्रामेषु वास्तव्याः केचिदन्नामृताप्तये ।
शाकमूलफलाहारा व्रतनिष्ठा इवाभवन् ॥ २० ॥

२० ग्रामों में कुछ क्षीण निवासी अन्न अमृत प्राप्ति हेतु शाक, मूल, फल का आहार कर मानो व्रत का पालन कर रहे थे।

चिराटङ्कान्तरे क्षिप्त्वा शाकं किमपि तण्डुलम् ।
पक्त्वाऽन्ये केऽपि तद्भोगादकुर्वन् प्राणधारणम् ॥ २१ ॥

२१ अन्य कुछ लोग कुछ दिनों के पश्चात् शाक एवं चावल पकाकर, उसे खाकर, प्राण धारण किये।

सर्पिर्लवणतैलानां तण्डुलेन महार्घता ।
हृता नीचेन साधूनामिव सर्वोपयोगिनाम् ॥ २२ ॥

२२ चावल ने सर्वोपयोगी घी, नमक, तैल की महार्घता' (अतिमूल्यवान) का मूल्य उसी प्रकार कम कर दिया, जिस प्रकार नीच सर्वहितकारी साधुओं का।

बहुधान्यकथानिष्ठो योऽभूत् पूर्वं पुरान्तरे ।
बहुधान्यकथानिष्ठस्तत्काले स व्यलोक्यत ॥ २३ ॥

२३ पुर में पहले बहुत धन-धान्य की जो कहानी थी, वह उस समय प्रायः कहानी में ही देखी गयी थी।

बन्धुर्जीवस्तथा कन्दो बन्धुजीव इवाभवत् ।
मन्दान् सधारयामास क्षुधान्धान् योऽन्धसा विना ॥ २४ ॥

२४ उस समय बन्धुजीव कन्द बन्धुजीव सदृश हो गया था, जो कि अन्न के बिना भी, क्षुधा से अन्ध मन्द लोगों को धारण किये रहा।

उसकी गणना परम स्वादिष्ट भक्ष्य पदार्थों में होती है।

पाद टिप्पणी

२० कलकत्ता संस्करण का १९७ तथा बम्बई संस्करण का २० वाँ श्लोक है।

पाद टिप्पणी

२१ पाठ—बम्बई

पाद टिप्पणी

२२ (१) महार्घता : महँगाई का वर्णन श्रीवर ने किया है। घी, नमक तथा तेल, अन्न से मँहगे बिकते थे। परन्तु घी, तेल, नमक खाकर कोई जीवित नहीं रह सकता। जीवन निर्वाह के लिए अन्न आवश्यक है। यदि मनुष्य रत्नों की राशि-पूर्ण कोठरी में रख दिया जाय, तो रत्न उसे सुख तथा उसकी तृष्णा एवं क्षुधा शान्त नहीं करेगा। उस समय एक पाव अन्न की कीमत एक पाव रत्न से अधिक होगी। क्योंकि जब जीवन ही नहीं रहेगा, तो रत्न की क्या उपयोगिता ?

पाद टिप्पणी

बम्बई का 'सन्धार' पाठ ठीक है।

२४ (१) बन्धुजीव : जीवक वृक्ष = बन्धु का जीवनप्रद, गुल्दुपहरिया का पौधा।

धान्यखारेः क्रयः पूर्वं दीनाराणां शतत्रयम् ।
दुर्भिक्षतस्तदा सार्धसहस्रेणापि नापि सा ॥ २५ ॥

२५. पहले तीन सौ दीनार[1] से धान की खारी[2] का क्रय होता था और दुर्भिक्ष के कारण, उस समय डेढ़ हजार में भी उससे नहीं प्राप्त हो सकती थी।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

२५ (१) दीनार : दीनार शब्द संस्कृत है। दशकुमारचरित में दीनार शब्द का प्रयोग किया गया है—जितवानस्मि मया षोडशसहस्राणि दीनाराणाम्—दशकुमारचरित। भारत में दीनार सुवर्ण मुद्रा था। दीनारियस रोमन शब्द है। रोम साम्राज्य में यह प्रचलित था। जकाशलविका की मुद्रा के लिये आज भी दीनार शब्द प्रचलित है। हिन्दू राज्यकाल में स्वर्ण, रजत एवं ताम्र तीनों धातुओं में टंकणित होता था। शत कौड़ी का एक ताम्र दीनार होता था। बत्तीस रत्ती माना का प्राय: स्वर्ण दीनार होता था। ईरान तथा सीरिया में अरबों के आक्रमण के पूर्व दीनार प्रचलित था। अरबों ने अपने विजय के पश्चात् दिरहम मुद्रा चलाया। दीनार शब्द का ही तद्भव रूप है। आइन अकबरी के अनुसार दीनार एक दिरहम का तीन बटा सातवाँ भाग होता था। फरिश्ता लिखता है कि दीनार दो रुपयों के बराबर होता था। रोम दिनारियस मुद्रा रजत थी, जबकि भारतीय दीनार स्वर्ण मुद्रा थी। किन्तु कालान्तर में *दिनारियस स्वर्ण मुद्रा भी होने लगा।* पेरीप्लस का *लेखक लिखता है कि दिनारी स्वर्ण* एवं रजत यूरोप से 'वणगजा' अर्थात् भड़ोच भेजा जाता था।

काश्मीर की मुद्रा प्रणाली हिन्दू राजाओं के समय से मुसलिम काल में विशेष परिवर्तित नहीं हुई थी। सुलतानों के समय मुद्रायें ताम्र की होती थी। उन्हें कर्षिरस अथवा पुन्ट्स कहते थे। परन्तु कौड़ी प्रथम इकाई मुद्रा प्रणाली में थी। जैनुल आबदीन ने जस्ता तथा पीतल की भी मुद्रा टंकणित कराया था। रजत मुद्रा कम तथा स्वर्ण मुद्रा बहुत ही कम चलती थी। चकवंश राज्य काल में रजत तथा *स्वर्ण मुद्राओं का कुछ प्रचलन हुआ था।* काश्मीर में १२ दीनार का एक बाहगनी, दो बाहगनी का एक पुन्छू, चार पुन्छू का एक हथ, दश हथ का एक ससून, एक शत ससून का एक लाख तथा एक शत लाख का एक कोटि दीनार होता था। हुसेन शाह के पूर्व तूरमान की मुद्रायें प्रचलित थी। हुसेन शाह ने जब देखा कि वे अधिक प्रचलित नहीं हैं, तो नवीन मुद्रा द्विदीनारी टंकणित कराया। वह सीसे की थी। मुहम्मद शाह के समय अशरफी और तङ्कू का प्रचलन था। चकों के समय पण में जजिया अदा किया जाता था। काश्मीरी पण के विषय में *विशेष जानकारी प्राप्त नहीं है। परन्तु यह पैसा* रहा होगा।

(२) खारी : खरवार = शाब्दिक अर्थ होता है एक खर अर्थात् गदहा भर बोझा। सुलतानों के समय खारी ८३ सेर का होता था। सोलह मासा का एक तोला, अस्सी तोला का एक सेर, साढ़े सात पल का एक सेर होता था। चार सेर का एक मन *अर्थात् एक तरक या वर्तमान काल का पाँच सेर और सोलह तरक का एक खरवार होता था।*

खारी तौल का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। वह सोम के एक माप का सूचक है (ऋ० ४ : ३२ : १७)। पाणिनि को भी इस तौल का ज्ञान था। परशियन शब्द खरवार इसी खारी का अपभ्रंश है। लोकप्रकाश में क्षेमेन्द्र ने उसे खारी या खारिका लिखा है। खारी मुद्रा तथा अन्न तौल दोनों के लिये प्रयुक्त होता रहा है। खारी शब्द शाली भूमि के माप के लिये भी प्रयोग सुदूर प्राचीन काल में होता

किमन्यत् कुत्रचिद् राष्ट्रे धात्रा निष्किञ्चनो जनः।
अभवन्मण्डकुण्डस्य काञ्चिकेनापि वञ्चितः ॥ २६ ॥

२६ अधिक (वर्णन) क्या (कहे ?) कही पर राष्ट्र मे विधाता निष्किंचन जन को भाण्ड कुण्ड के काञ्चिक मात्र से भी वंचित कर दिया था।

यत् पूर्वमकरोद्धेलां रसवद्व्रीहिशालिषु ।
मन्ये तेनैव शापेन भयमापत् प्रजेदृशम् ॥ २७ ॥

२७ जो पहले सुस्वादु व्रीहि[1] एवं शालियो के प्रति अवहेलना किये, मानो उसी शाप से प्रजा भय प्राप्त की।

करुणाकुलितो राजा स्वधान्यैः पुत्रवत् प्रजाः ।
पोषयामास मासेषु केषुचिद् यावदाकुलाः ॥ २८ ॥

२८. दयालु राजा ने अपने धान्यो से पुत्र के समान, कुछ मासो तक, व्याकुल प्रजा का पोषण[1] किया।

तावदस्यैव माहात्म्यात् शस्यसंपद्व्यजृम्भत ।
सत्यव्रतानां भूपानां क्वावकाशश्चिरं शुचाम् ॥ २९ ॥

२९ तब तक, इसी माहात्म्य से प्रचुर शस्य सम्पत्ति पैदा हुई। सत्यव्रती राजाओ के लिए चिरकाल तक शोक कहा ?

मध्येऽथवा विधिर्भूपकारुण्यप्रथनेच्छया ।
दौर्भिक्षदौःस्थ्याद् भूलोकं सशोकमकरोत् तदा ॥ ३० ॥

३०. अथवा लगता है कि, विधाता ने राजा की दयालुता को प्रसिद्ध करने की इच्छा से दुर्भिक्ष की दुःस्थिति से, भूलोक को उस समय शोक युक्त कर दिया।

रहा है। अकबरनामा के अनुसार एक खरवार अकबरशाही तौल के अनुसार ३ मन ८ सेर का होता था (पृष्ठ ८३१)। द्रष्टव्य म्युनिख - पाण्डु० : ७५ बी०।

पाद-टिप्पणी

२७ (१) व्रीही चावल का दाना।

पाद-टिप्पणी :

२८. (१) पोषण - तबकाते अकबरी में उल्लेख है—'काश्मीर में घोर अकाल पड़ा और अधिकांश लोग भूख के कारण मृत्यु को प्राप्त हो गये। इस कारण सुल्तान बड़ा दुःखी हुआ। और उसने अधिकांश खजाना तथा अनाज लोगो में बाँट दिये (४४३-६६५)।'

पाद-टिप्पणी .

३० उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का २०७वाँ तथा बम्बई का ३०वाँ श्लोक है।

कलकत्ता के 'रिधि' के स्थान पर बम्बई का 'विधि' उचित है।

पार्थिवोपप्लवे चौरा अन्धकारेऽभिसारिकाः ।
दुर्भिक्षे चैव तुष्यन्ति धान्यविक्रयिणो जनाः ॥ ३१ ॥

३१. राजाओ के उपद्रव मे चोर, और अन्धकार मे अभिसारिकायें[1] तथा दुर्भिक्ष मे धान्य विक्रेता लोग सन्तुष्ट होते हैं।

अतः क्षुधा महार्घा ये पदार्था धान्यविक्रयात् ।
गृहीतास्तेऽन्यदा पूर्वमूल्येनप्रापयन्नृपः ॥ ३२ ॥

३२ धान्य विक्रय करके, भूखो के जिन बहुमूल्य पदार्थों को लोगो ने लिया था, राजा ने पहले के मूल्य पर, उनको (वापस) दिला दिया।

दुर्भिक्षभक्षिताक्षोटलोकदक्षः क्षितीश्वरः ।
धिया सरलवृक्षेभ्यस्तैलाकर्षणमादिशत् ॥ ३३ ॥

३३ दुर्भिक्ष मे अखरोट खाने वाले लोगो मे दक्ष राजा ने बुद्धिपूर्वक सरल (चीड) वृक्षो से तेल निकालने का आदेश दिया।

पाद-टिप्पणी :

३१ (१) अभिसारिका भानुदत्त ने अभिसारिका की परिभाषा की है—'स्वयमभिसरति प्रियमभिसारयति' प्रिय से मिलन हेतु स्वय जाती है अथवा प्रिय को बुलाने वाली स्त्री की सज्ञा अभिसारिका से दी गयी है—कवि मतिराम ने परिभाषा किया है—'पियहि बुलावै आपुकै आपहि पयपै जाय' (रसराज १९०)। कुछ कवि उनको मुग्धा, मध्या तथा प्रौढा और कुछ स्वकीया, परकीया तथा सामान्य तीन भेद कहा है। कृष्णा, शुक्ला तथा दिवाभिसारिका के तीन भेद परकीया अभिसारिका में आते हैं। कृष्णाभिसारिका, अन्धकार किंवा अँधेरी रात में अभिसार करती है। बिहारी कृष्णाभिसारिका के सन्दर्भ में लिखते हैं—

'सघन कुज घन-घन तिमिर अधिक अँधेरी राति।
तऊ न दुरिहै स्याम यह दीप सिखा सो जाति ॥'

बिहारी शुक्लाभिसारिका के विषय में लिखते हैं—

'जुवहि जोन्ह में मिल गयी नैक न परति लखाइ।
सौंधें के डोरन लगी अली चली सँग जाइ ॥'

दिवाभिसारिका के सन्दर्भ में मतिराम लिखते हैं—

'ग्रीषम ऋतु की दुपहरी चली बाल बन कुज।
अग लपटि तीछन लुऐं मलय पवन के पुज ॥'
—रसराज (२०२)

अमर कोशकार ने परिभाषा किया है—'कान्ताथिनी तु या याति सकेत साऽभिसारिका' (२ ६ १०)।

कान्तार्थिनी के लिए लिखा गया है—

हित्वा लज्जाभये श्लिष्टा मदनेन मदेन या।
अभिसारयते कान्त सा भवेदभिसारिका ॥

पाद-टिप्पणी

३३ (१) सरल सरल वृक्षो का वर्णन सस्कृत साहित्य में मिलता है। यह चीड वर्ग वृक्ष की श्रेणी में आता है। कुमारसम्भव में इसका उल्लेख किया गया है—विघट्टिताना सरल द्रुमाणाम्—(१ ९)। सरल वृक्ष से तेल निकालने का कार्य बहुत पहले से होता रहा है। उससे विरोजा तथा ताडपीन का तेल आजकल व्यावसायिक ढग से निकाला जाता है। सरस निर्यास को गन्धा विरोजा कहते हैं। यहाँ पर तेल निकालने से तात्पर्य ताडपीन का तेल है। सुल्तान ने दुर्भिक्षग्रस्त

तस्मिन् मत्सरे राज्ञा कारुण्याद् भूर्जगामिनी ।
उत्तमर्णाधमर्णानां व्यवस्था विनिवारिता ॥ ३४ ॥

३४ उसी वर्ष राजा ने दया करके, उस वर्ष भोजपत्र पर लिखे, ऋणी एवं ऋणदाता की व्यवस्था को समाप्त कर दिया ।

चतुष्षष्टिकला: शिल्पं विद्या सौभाग्यमेव च ।
दुर्भिक्षोपप्लवे सर्वं तदाभून्निष्प्रयोजनम् ॥ ३५ ॥

३५ उस दुर्भिक्ष के उपद्रव काल में ६४ कलायें, शिल्प, विद्या, सौभाग्य, सब कुछ निष्प्रयोजन हो गया था ।

लोगों को काम पर लगाने के लिए उन्हें मरने अर्थात् चोट के कूप में तल लगाने के काम पर लगाया ।

पाद टिप्पणी

३५ (१) चौसठ कलाएँ : कला का वर्गीकरण उपयोगी कला एवं ललित कला में किया गया है । उपयोगी कला व्यवहारजनित एवं सुविधाबोधी तथा ललित कला मन के सन्तोष के लिये है । उसमें मानसिक सौन्दर्य की योजना है जो उपयोगितावाद से भिन्न है । कला एवं मानव का सम्बन्ध अविभाज्य है । मानव ने कला को विकसित किया है । कला से मानव ने आत्मचैतन्य एवं आत्मगौरव प्राप्त किया है ।

कामसूत्र एवं शुक्रनीति ने कला को ६४ माना है । कला का वर्गीकरण कामशास्त्र तथा तन्त्र सम्बन्धी कलाओं में किया गया है । कामशास्त्र के अनुसार निम्नलिखित चौसठ कलाएँ हैं—

(१) अगरागादि लेपन (२) अक्षरायता, (३) अभिधानकोश ज्ञान (४) अल्पना (५) असुन्दर का सुन्दरीकरण (६) आकार ज्ञान (७) आकर्षण क्रीडा (८) आभूषण धारण, (९) आपानक, (१०) आलेख्य, (११) आनुकाव्य कृया, (१२) इत्रादि सुगन्धि उत्पादन, (१३) इन्द्रजाल, (१४) उदक वाद्य (१५) उपवन विनोद (बागवानी), (१६) कठपुतली नृत्य, (१७) कठपुतली का खेल, (१८) कर्णाभूषण निर्माण, (१९) कलावत्तू का सीवन, (२०) काव्य समस्या पूर्ति, (२१) गायन, (२२) गुप्तभाषा ज्ञान, (२३) छलिक नृत्य चौपायडी, (२४) जल क्रीडा, (२५) दैशिक भाषा ज्ञान, (२६) द्यूतविद्या, (२७) धातुकर्म, (२८) नर्तन, (२९) नाट्य, (३०) नाट्य व्याख्या दर्शन, (३१) पक्षी आदि लड़ाना (३२) पक्षियों को बोली सिखाना, (३३) पच्चीकारी (३४) पहेली बुझाना, (३५) पाक कला, (३६) पुष्प शय्या, (३७) पुस्तक वाचना, (३८) बढ़ई कर्म, (३९) बालक्रीडा, (४०) बूझौवल, (४१) बेत की बुनायी, (४२) भविष्य कथन, (४३) भाव को उलट कर कहना, (४४) माला, (४५) मालिश, (४६) मुकुट बनाना (४७) रत्न परीक्षा, (४८) रत्नरंग परीक्षा (४९) रम्भाकर्म, (५०) रंग बनाना (५१) वशीकरण, (५२) वस्त्र गोपन, (५३) वादन, (५४) वास्तु कला, (५५) विदेशी कला ज्ञान (५६) शिरोरक्ष, (५७) वेश परिवर्तन, (५८) व्यायाम (५९) शयन रचना, (६०) शिष्टाचार, (६१) सुनकर दुहरा देना, (६२) सूची कर्म, (६३) सूत कातना, एवं (६४) हस्तलाघव ।

शुक्रनीति में दूसरी तालिका उपस्थित की गयी है—

(१) आभूषण बनाना, (२) कपड़ा बुनना, (३) कताई, (४) कला मर्मज्ञता, (५) कला शिक्षण, (६) कृत्रिम उत्पादन (७) कृषि (८) चोर कर्म, (९) गजादि चलाना सिखाना, (१०) गजादि युद्ध,

पदवाक्यतर्कनवकाव्यकथा
बहुगीतवाद्यरसनृत्यकलाः ।
सुरतप्रपञ्चचतुरा वनिताः
क्षुधितस्य नैव रचयन्ति सुखम् ॥ ३६ ॥

इति जैनराजतरङ्गिण्या पण्डितश्रीवरविरचिताया पट्त्रिंशद्वर्षे दुर्भिक्षवर्णन नाम द्वितीय. सर्ग. ॥ २ ॥

३६ पद्वाक्य, तर्क एव नवीन काव्य, कथा, गीत, वाद्य, रस, नृत्य, कलायें तथा सुरति प्रपंच में दक्ष वनितायें भूखे को सुख नही देती।

पण्डित श्रीवर विरचित जैनराजतरगिणी मे ३६ वें वर्ष का दुर्भिक्ष वर्णन नामक द्वितीय सर्ग समाप्त हुआ।

---

(११) घटादि वादन, (१२) चर्म-कर्म, (१३) चम उतारना, (१४) चित्रकला, (१५) चोली आदि सीना, (१६) भाप प्रयोग जलवाराग्नि, (१७) जीन, हाथी का हौदा आदि बनाना, (१८) टोकरी बनाना, (१९) तेल उत्पादन, (२०) तैरना, (२१) ताम्बूल, (२२) दुग्ध प्रयोग, (२३) दण्ड कार्य, (२४) द्यूत क्रीडा, (२५) धातु मिश्रण, (२६) धातु शस्त्र निर्माण, (२७) धात्वौषधि, (२८) नटकर्म, (२९) नर्तन, (३०) लवण उत्पादन, (३१) नौका-रथादि यान निर्माण, (३२) पाषाण धातु भस्म, (३३) पाककर्म, (३४) बर्तन बनाना, (३५) बर्तन माजना, (३६) मदिरा बनाना, (३७) मल्लयुद्ध, (३८) मिष्ठान्न बनाना, (३९) मिश्रित धातु का पृथकीकरण, (४०) यज्ञीय रज्जु बनाना, (४१) रतिज्ञान, (४२) रत्न-परीक्षा, (४३) रूप परिवर्तन, (४४) रगरेजी, (४५) वस्त्र सज्जा, (४६) लक्ष्यभेद, (४७) वस्त्र प्रक्षालन, (४८) वाद्य सकेत, (४९) वादन द्वारा व्यूह रचना, (५०) विविध मुद्राओं द्वारा देवपूजा, (५१) वृक्षा-रोहण, (५२) शय्या भाजन, (५३) शल्य क्रिया, (५४) शस्त्र संचालन, (५५) शिशुपालन, (५६) शीशे का बर्तन बनाना, (५७) सारथ्य, (५८) ब्रह्म आसन, (५९) रतिज्ञान, (६०) सरोवर प्रासाद हेतु भूमि योजना, (६१) सेवा, (६२) रसचारी, (६३) स्वर्ण परीक्षण, (६४) सुलेखन।

पाद-टिप्पणी

३६ उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण का २१३वी पक्ति तथा बम्बई का ३६वाँ श्लोक है।

पाद-टिप्पणी .

(१) ३६ वर्ष बम्बई संस्करण में 'पट्त्रिंश' वर्ष अर्थात् ३६ वर्ष कलकत्ता के २६ वर्ष के स्थान पर दिया गया है। किन्तु कलकत्ता संस्करण के पक्ति १८४ पृ० ७ (तृतीया राजतरगिणी) 'पट्-त्रिंशवत्सरे' दिया गया है। अत इतिपाठ में ३६ के स्थान पर मुद्रण की गलती से त्रिंश के स्थान पर 'विंश' छप गया है। बम्बई संस्करण में इसी तरग के श्लोक ७ में 'त्रिंश' शब्द कलकत्ता संस्करण के समान दिया गया है। बम्बई इतिपाठ का यह अश ही मान्य होना चाहिए।

श्रीवर १ १ ८९ में अट्ठाइसवें वर्ष का उल्लेख करता है। अतएव क्रम के अनुसार भी २९ वर्ष के पश्चात् का समय होगा। वह ३६ वर्ष ही हो सकता है।

कलकत्ता सस्करण में इस सर्ग में ३६ श्लोक अर्थात् पक्ति संख्या १७८ से २१३ तक है। बम्बई सस्करण में भी ३६ श्लोक हैं। श्लोक संख्या बम्बई तथा कलकत्ता के समान है।

तृतीयः सर्गः

तुष्टः प्रसादमतुलं कुरुते क्षणाद्यः
क्रुद्धः प्रजासु कुरुते भयमप्रतर्क्यम् ।
उन्मत्तपार्थिवपतेरिव हन्त धातो-
र्लीलास्वतन्त्रचरितं भुवि बुध्यते कैः ॥ १ ॥

१ सन्तुष्ट होकर क्षणभर में प्रजाओं में, अतुलनीय प्रसाद एवं क्रुद्ध होकर, असीम भय प्रदान कर देता है, उत्तम राजा के समान, उस विधाता के लीला भरे, स्वतन्त्र चरित को पृथ्वी पर कौन लोग जान सकते है ?

षट्त्रिंशवर्षदुर्भिक्षदुःखविस्मरणं जनः ।
न यावदकरोत् तावदष्टात्रिंशेऽपि वत्सरे ॥ २ ॥

२ जब तक लोग छत्तीसवें वर्ष[1] के दुर्भिक्ष दुःख का विस्मरण नही कर सके थे, तब तक ३८ वें वर्ष[2] में भी—

वृष्टया सह रजोवर्षमपतद् गगनाद् भुवि ।
उदीपक्षतशाल्युत्यभाविदुर्भिक्षसूचकम् ॥ ३ ॥

३ वृष्टि के साथ आकाश से पृथ्वी पर धूल वृष्टि[1] हुई, जो कि बाढ़[2] से शालि के नष्ट हो जाने के कारण, भावी दुर्भिक्ष की सूचक थी ।

पाद टिप्पणी

१ उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का २१४वी पंक्ति तथा बम्बई का प्रथम श्लोक है ।

पाद टिप्पणी

२ (१) छत्तीसवें वर्ष ४५३६ सप्तर्षि = सन् १४६० ई० = संवत् विक्रमी १५१७ = शक १३८२ = कलि गताब्द ४५६१ वर्ष ।

(२) अड़तीसवें वर्ष ४५३८ सप्तर्षि = सन् १४६२ ई० = विक्रमी संवत् १५१९ = शक १३८४ = कलि गताब्द ४५६३ वर्ष ।

पाद-टिप्पणी

३ पाठ—बम्बई ।

(१) धूल वृष्टि ध्वंस, बरबादी, तबाही का पूर्व सूचक या लक्षण है ।

(२) उदीप उदीप का अर्थ जलप्लावन, बाढ़ एवं काश्मीरी भाषा में 'पीयो' या 'पुयु' कहते है । पारसी इतिहासकार दुर्भिक्ष के पश्चात् जल-प्लावन का उल्लेख नहीं करते । श्रीवर का वर्णन ठीक है क्योंकि उसके आँखों के सम्मुख जलप्लावन तथा धूल वृष्टि दोनों हुये थे ।

अथाचिरेण गर्जन्तो धृतचापा घना घनाः ।
जनानुद्वेजयामासुः शरासारैरिवारयः ॥ ४ ॥

४ शीघ्र ही जलपूर्ण एवं इन्द्रधनुष[1] युक्त, घने घन गर्जते हुए, वृष्टि से उसी प्रकार लोगों को उद्वेजित किये जिस प्रकार चापधारी अरि शर वृष्टि द्वारा।

वृष्ट्युपद्रवसन्नद्धाः फलर्द्धिहरणाकुलाः ।
उत्थिता बुद्बुदव्याजाद् दुष्टा नागफणा इव ॥ ५ ॥

५ वृष्टि के उपद्रव हेतु सन्नद्ध फल सम्पत्ति को हरण करने के लिये आकुल, मानो दुष्ट नाग से फण ही बुद-बुद क व्याज से (जलस्तर पर) उठे थे।

उत्पन्नध्वसिनो भावान् करिष्याम्यहमञ्जसा ।
इति ज्ञापयितु मेघो बुद्बुदानसृजद् ध्रुवम् ॥ ६ ॥

६ शीघ्र ही समाज उत्पन्न भाव का स्थित्व समाप्त कर दूँगा। यह विज्ञापित करने के लिए मेघ ने बुद-बुदों का सृजन किया।

वृक्षाः सर्वत्र पत्रान्तःपतद्वृष्टिस्वनच्छलात् ।
अश्रुबिन्दूनिवामुञ्चन् रुदन्तो जनचिन्तया ॥ ७ ॥

७ सर्वत्र वृक्ष पत्रों के मध्य पड़ते, वृष्टि के शब्द व्याज से, मानो लोगों की चिन्ता स, रोते हुए, अश्रुबिन्दु गिरा रहे थे।

वितस्तालेदरीसिन्धुक्षिप्तिकाद्यास्तदापगाः ।
अन्योन्यस्पर्द्धयेवोग्रा ग्रामास्तीरेष्वमज्जयन् ॥ ८ ॥

८ उस समय वितस्ता[1], लदरी[2], सिन्धु[3], क्षिप्तिका[4], आदि नदियों ने पारस्परिक स्पर्धा से, मानो उग्र होकर, तट स्थित को डुबा दिये।

पाद टिप्पणी

४ (१) इन्द्रधनुष सप्तरंगी युक्त एक अर्ध वृत्त वर्षाकाल में सूय के विपरीत दिशा आकाश में दृष्टिगोचर होता है। सूय की किरणें आकाशस्थ जल कणों के पार होती हैं, तो इन्द्रधनुष बनता है। सूय किरणों का विक्षेपण ही इन्द्रधनुष के रंगों का कारण है। आकाश में सन्ध्याकाल पूव दिशा तथा प्रात काल पश्चिम दिशा में वर्षा क पश्चात् रक्त नारंगी पीत, हरा, आसमानी, नीला तथा बैंगनी वर्णों का विशाल धनुष दृष्टिगोचर होता है। इन्द्रधनुष दर्शक के पीठ पीछे सूय के होने पर दिखाई देता है। यह ऊपर उठते फुहारे के उड़ते जलकणों पर भी सूय किरणों के विक्षेपण के कारण दिखाई देता है। जबलपुर में धूँआधार के जलप्रपात में भी नीचे दिखाई देता है। सूय किरणों के अभाव में इन्द्रधनुष का अस्तित्व लोप हो जाता है।

पाद टिप्पणी

५ कलकत्ता के हलर्धि पाठ के स्थान पर बम्बई का फलर्धि' पाठ सार्थक प्रतीत होता है। वह फल सम्पत्ति का सूचक है।

पाद टिप्पणी

८ (१) वितस्ता झेलम नदी, काश्मीरी

सविभ्रमा धृतावर्ता वाहिन्युत्थाः महेपिताः ।
जवादधावन्नुत्तुङ्गास्तत्तरङ्गतुरङ्गमाः ॥ ९ ॥

९ विभ्रम[1] एवं आवर्त युक्त[2], वाहिनी[3] गत हेषित (शब्द)[4] सहित, उन्नत तरंग[5] तुरग[6] वेग से दौड़ रहे थे।

अत्युच्चापातकृन्नीचोन्नतिद च निरङ्कुशम् ।
आसीदपथग सत्यं तदा जलविजृम्भितम् ॥ १० ॥

१० उन्नत को अवनत एवं अवनत को उन्नत करने वाला निरंकुश जल प्रवाह, उस समय वास्तव में कुपथगामी हो गया था।

इस नदी को वेथ तथा वेहुत कहते हैं। यूनानी इसे हैडसपेस कहते हैं (द्र० १ ३ १९, २४, ३२, ५५, ५७, ८२, १०९, १ ४ ३, १ ५ ५६, २ ५३)।

(२) लेदरी = लिदर इसका प्राचीन नाम लम्बोदरी है। यह लिदर उपत्यका में बहती है। वितस्ता में अनन्तनाग और विजबहेरा (विजयेश्वर) के मध्य आकर मिलती है। इसीके तट पर पहलगांव है। इसका नाम लैदर्य एवं लैदर्या (जोन० १०६) भी मिलता है। लेदर शब्द लम्बोदरी का अपभ्रंश है। केवल यहीं उल्लेख मिलता है।

(३) सिन्धु यह सिन्धु महानद नहीं बल्कि काश्मीर उपत्यका की सिन्धु नदी है। वितस्ता में प्रयाग अर्थात् शादीपुर के पास आकर मिलती है। काश्मीरी साहित्य में इसे उत्तरगंगा कहा गया है। यह नदी इस उपत्यका तथा हरमुख पर्वत के उत्तरीय पर्वतीय क्षेत्रों के जल को ग्रहण करती है। वितस्ता की सबसे बड़ी सहायक नदी है। सोनमर्ग, कंगन तथा गान्दर बल से बहती वितस्ता से मिलती है। इसकी धारा बहुत तेज है। जल बहुत शीतल रहता है। लार उपत्यका में बहती है। गान्दर बल तक इसमें नावें चलती हैं। सिन्धु महानद को काश्मीर में बड़ सिन्धु कहते हैं (द्र० १ १ ५१)।

(४) क्षिप्तिका श्रीनगर की कुटकुल नहर है (द्र० ३ १८८, ४ १०७)।

पाद-टिप्पणी

पद में रूप का बाहुल्य है।

९ (१) विभ्रम इधर-उधर फिरना, या घूमना। पानी की उतावली के साथ गति। युद्धस्थल में सेना के अश्व जिस उतावली के साथ इधर-उधर दौड़ते हैं, उसी प्रकार जल उतावली के साथ वेग से घूम रहा था।

(२) आवर्त बालों के पट्टे या अयाल या जल की भँवर। जल में गर्त होने पर, आवर्त या भँवर पड़ जाते हैं। उसकी उपमा घोड़े के अयाल से श्रीवर ने दिया है।

(३) वाहिनी सेना में ५०० हाथी, ५०० रथ, १५०० अश्व तथा २५०० पैदल सैनिक होते हैं। दश सेनाओं की एक पृतना तथा १० पृतनाओं की एक वाहिनी, प्राचीन परिभाषा के अनुसार होती थी। वाहिनी का अर्थ नदियों का पति समुद्र भी होता है। यहाँ अभिप्राय जलमय उपत्यका से है, जो समुद्र की तरह लग रही थी।

(४) हेषा घोड़ों का हिनहिनाना जलध्वनि या गर्जन से तात्पर्य है।

(५) तरंग अश्वों का छलांग लगाना, सरपट दौड़ना या जल की उत्ताल तरंगें उछल रही थीं, जैसे सेना में अश्व छलांग लगाते या पंक्तिबद्ध लहरों की तरह चलते दिखाई देते हैं।

(६) तुरग अश्व, वेग से गमन करने वाले को तुरग कहते हैं।

पाद-टिप्पणी

१० उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का २२३वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का १०वां श्लोक है।

मृदोर्जलस्य तत्कालेऽद्रिवृक्षविटपालिषु ।
केनोपदिष्टं तत्काले मूलोत्पाटनपाटवम् ॥ ११ ॥

११ उस समय मृदु जल का पर्वत, वृक्ष एवं विटपों को मूल से उखाड़ने की चातुरी किसने सिखायी ?

अग्राग्रपशुगोप्राणिगृहधान्यादिहारकः ।
भयदोऽभूज्जलापूरः स म्लेच्छोत्पिञ्जसंनिभः ॥ १२ ॥

१२ समक्ष के पशु, गऊ, प्राणी, गृह, धान्यादि का हरणकर्ता, वह जलापुर (बाढ़) म्लेच्छों[१] के हिंसा (क्षति) सदृश, भयप्रद हो गया था।

तदा मडवराज्यस्था विशोका शोकदा नदी ।
प्रदक्षिणेच्छयेवान्तर्विवेश विजयेश्वरम् ॥ १३ ॥

१३ उस समय मडव राज्य की शोकप्रद विशोका[१] नदी प्रदक्षिणा की इच्छा से ही, मानो विजयेश्वर[२] में प्रवेश की।

पाद-टिप्पणी

११ कलकत्ता तथा बम्बई दोनों में 'मृदाह' छपा है परन्तु व्याकरण की दृष्टि से 'मृदोर' होना चाहिए अतएव 'मृदोर' रखा गया है।

पाद-टिप्पणी

१२ (१) म्लेच्छ हिंसा श्रीवर म्लेच्छराज दुलचा (जोन० १४२-१४३) तथा सूहभट्ट के ब्राह्मणों पर अत्याचार, पीडन, दमन, प्रतिमाभंग आदि की ओर संकेत करता है, जो सिकन्दर बुतशिकन तथा अलीशाह के समय सूहभट्ट द्वारा किया गया था। (जोन० ५९९–६१३ तथा ६५३–६६९, ७२२–७२७)। म्लेच्छबाधा का उल्लेख श्लोक ८११ व ८२० में श्री जोनराज ने किया है। म्लेच्छ का उल्लेख १ ५ ५९ तथा १ ४ ३३ में भी किया गया है।

पाद-टिप्पणी :

उक्त श्लोक में बम्बई श्लोक के १३वें श्लोक का द्वितीय पद यथावत् है। प्रथम पद नहीं है। किन्तु कलकत्ता संस्करण में पूरा श्लोक २२६वीं पंक्ति है।

१३. (१) विशोका : वर्तमान विशाऊ नदी है। पीरपंजाल के उत्तरी ढाल की सब स्रोतस्विनियों का जो सिदन तथा बनिहाल के मध्य पड़ती है, जल ग्रहण करती है। नौबन्धन के नीचे क्रमसरस अथवा कौसरनाग सर इसका उद्गम माना गया है। पर्वत से इस नदी के नीचे उतरते ही इसमें से बहुत-सी नहरें निकाली गयी हैं। पुराने कराल (अदविन) तथा देवसरस (दिवसर) परगना के भूभाग को सींचती है। नैमुह तक विशोका में नाव चल सकती है। रामण्यार नदी विशोका में गम्भीर संगम से कुछ ऊपर मिलती है। गम्भीर संगम पर विशोका वितस्ता में मिल जाती है। नीलमत पुराण में विशोका को लक्ष्मी का अवतार माना है। विशोका नदी करमसर बन्धा के पश्चिमी सीमा के निकट एक गर्त से निकलती है। उसे चूहे की बिल 'अहोर बिल' कहते हैं। विशोका का स्रोत जहाँ गिरता है, उस प्रपात को भी 'अखोर' बिल कहते हैं। वह पहले उत्तर बहती चिन्त नदी नाम धारण करती है। यह कम से एक मील उत्तर है। तत्पश्चात् बुढिल पास पहुँचकर अरबल पहुँचती है। वहाँ से उत्तर-पूर्व दिशा बहती उत्तर की ओर मुड़ती राम-

स्नानात् पापहरी पूर्वप्रवाहोपगता नदी।
इतीव तज्जले तूर्णं ममज्जुर्गृहपङ्क्तयः ॥ १४ ॥

१४ पूर्व प्रवाह से (समीप आती) नदी स्नान करने से पापहरण करने वाली है, इसीलिए मानो गृहपक्तियाँ शीघ्र उसके जल में डुबकी लगा दी।

पुराणेषु प्रसिद्धा या विशोका शोकनाशिनी।
तदाभूद् विपरीतार्था प्रजाभाग्यविपर्ययात् ॥ १५ ॥

१५. पुराणों[1] में प्रसिद्ध शोकनाशिनी विशोका नदी प्रजा भाग्य विपर्यय के कारण, उस समय विपरीत अर्थ वाली हो गयी।

येभ्यः प्रतिष्ठा प्राप्ता तान् दुःस्थान् द्रष्टुमसाम्प्रतम्।
इतीव तोये तत्कालं ममज्जुर्नगरे गृहाः ॥ १६ ॥

१६ जिन लोगों ने प्रतिष्ठा की है, उन लोगों को दुःखी देखना ठीक नहीं है, इसलिए ही मानो नगर के गृह जल मे तत्काल निमज्जित हो गये।

शिलादारुमयी मग्नस्तम्भीभूतचतुर्गृहा।
चतुष्पादिव धर्मो या लोकोत्तरणकृद् बभौ ॥ १७ ॥

१७ जिसके चारों स्तम्भ[1] डूब गये थे, ऐसी शिलादारुमय गृहससार पार करने के लिए चतुष्पाद[2] धर्म के समान शोभित हो रहा था।

ब्यार से नौना ग्राम में मिलती वितस्ता में मिल जाती है। द्रष्टव्य : ३ : १३, १५।

(२) विजयेश्वर : विजब्रोर, विजबेहरा। विजयेश्वर प्राचीन काल में शारदापीठ के समान काश्मीर का दूसरा पीठ था। सस्कृत विद्या का केन्द्र था। सिकन्दर बुतशिकन के समय में सभी मन्दिर नष्ट कर दिये गये थे। तीर्थ तथा क्षेत्र भी था। द्र० १ : ४ : ४; १ : ५ : २१, ३ : २०३, ४ : ५३२।

पाद-टिप्पणी

१४. उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण का २२७ वीं पक्ति है। दूसरा पद बम्बई के १३ वें श्लोक का द्वितीय पद है।

पादटिप्पणी .

१५ (१) पुराण : नीलमत पुराण (श्लोक २३९) काश्मीर में लक्ष्मी विशोका नदी का रूप धारण कर अवतीर्ण हुई थी :

आराध्य केशव देव तया लक्ष्मीमचोदयत्।
देशस्य पावनायास्य सा विशोकेति कीर्तिता ॥

लक्ष्मी का कार्य समृद्धि, धन तथा सुख देना है। उनके विपरीत हो जाने पर दरिद्रता, दुख आदि का उदय होता है। महाभारत के अनुसार विशाखा कुमार कार्तिकेय की अनुचरी एक मातृका है (शल्य० ४६ : ५)।

पाद-टिप्पणी :

१६ बम्बई सस्करण का १५वां श्लोक तथा कलकत्ता सस्करण की २२९वी पक्ति है।

पादटिप्पणी

१७. बम्बई सस्करण का १६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २३०वी पक्ति है।

तारदाग्राम पंक्त्याश्च दर्शनाय विशांपतेः ।
यात्रागतस्य रामस्य सेतुबन्ध इवाभवत् ॥ १८ ॥

१८ तरदा[१] ग्राम पंक्ति को देखने के लिए, यात्रा में आये राजा के लिए, वह राम के सेतु-बन्ध[२] सदृश हो गया।

वितस्तायां कृता जैनकदलिः सा गृहोज्ज्वला ।
जलावेशात् तटे मग्ना भग्नाद्र्या नगरान्तरे ॥ १९ ॥

१९ वितस्ता पर निर्मित गृहो से शोभित, वह जैनकदल[१] तटपर, जल प्रवेश के कारण नगर मध्य मग्न हो गयी।

पादद्वयावशेषापि स्थापिताग्रे भविष्यताम् ।
पादद्वयं पूरयितु समस्येव महीभुजाम् ॥ २० ॥ चतुर्भिः कुलकम् ॥

२० अवशिष्ट दो पाद से ही स्थित, वह भविष्य के राजाओ के लिए, दो पाद पूर्ण करने वाली समस्या[१] के समान हो गयी थी।

---

(१) स्तम्भ मान्यता है कि विजयेश्वर का चारो स्तम्भ जैनुल आबदीन ने निर्माण कराया था।

(२) चतुष्पाद शब्द का अर्थ है चार पाद अर्थात धर्म, व्यवहार, चरित्र एवं राज्य शासन (नारद १ १०)। याज्ञवल्क्य एवं बृहस्पति के अनुसार चतुष्पाद अभियोग, उत्तर, क्रिया एवं निर्णय है (याज्ञ० १ ८–२९)। कात्यायन के अनुसार चतुष्पाद का अर्थ अभियोग, उत्तर, प्रत्याकलित एवं क्रिया है।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

१८ यह श्लोक बम्बई सस्करण का १८वाँ तथा कलकत्ता की २३१वी पंक्ति है।

(१) तरद को श्रीदत्त ने दरद लिखा है। दरद देश है। वतमान दर्दिस्तान है (पृ० १२१)। यहाँ पर तरदा नामवाची अर्थ असगत प्रतीत होता है। 'तरदाय' मानकर तारने के लिए अर्थ कर दिया जाय, तो कुछ अधिक सगत होगा।

(२) सेतुबन्ध सेतुबंध रामेश्वर। लका एव भारत के मध्य।

पाद टिप्पणी

१९ (१) जैनकदल जैनुल आबदीन ने श्रीनगर में चौथा पुल जैनकदल वितस्ता पर निर्माण कराया था। श्रीनगर में उन दिनो सात पुल वितस्ता पर थे। पुल नावों को पाट कर बनाये जाते थे। जैनकदल का महत्व इसलिए था कि यह शहतीरों पर बनाया गया था। इसे चौथा पुल भी उन दिनों कहते थे। जैनुल आबदीन के पूर्व राजा जयापीड ने यही पर सेतु बनवाया था। जैनकदल का पुन उल्लेख १ ३ ८३ में किया गया है। द्र० वाइन ३३७, मूरक्राफ्ट २ १२१, १२३, लारेंस पृ० ३७।

पाद-टिप्पणी

२० उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण का २३३-पंक्ति है तथा बम्बई सस्करण का १९वाँ श्लोक है।

(१) समस्या पूर्ण करने के लिए दिया जाने वाला छद का अन्तिम चरण। कविता का वह भाग जो पूर्ति के लिए प्रस्तुत किया जाता है। कल्हण ने भी समस्या उपमा का प्रयोग किया है।

क्रमराज्ये तदा कुर्वन् कल्लोलैराकुलं जनम् ।
महानम्प्रसरो वेगादगाद् दुर्गपुरान्तरम् ॥ २१ ॥

२१ उस समय क्रम राज्य मे तरगो से लोगो को आकुल करता हुआ, जल का महान प्रसार[1] दुर्गपुर[2] के अन्दर तेजी से प्रवेश किया ।

अन्यः सरोवरः कोऽपि पद्मनागसरोन्तिकम् ।
प्रीत्या किमागतो दूराद् य दृष्ट्वा विशशङ्किरे ॥ २२ ॥

२२ दूसरा भी कोई सरोवर प्रेम से पद्मनाग सरोवर के निकट आ गया है क्या ? दूर से जिसे देखकर (लोगो ने) शका की ।

स्वयमुत्पाटयत्यस्मान् वृक्षवत् सहसागतः ।
इतीव तत्र वेश्मानि चिक्षिपुः स्व जलान्तरे ॥ २३ ॥

२३ सहसा आगत, वह वृक्ष के समान हमलोगो को उखाड रहा है इसीलिए मानो वहाँ घर अपने को जल म डाल दिये ।

दूरे समुद्रो मद्भर्ता कोऽय्य मे समुपागतः ।
इत्थ वितस्ता त्रस्तेव प्रतीपमगमत् तदा ॥ २४ ॥

२४ मेरा भर्ता[1] समुद्र दूर है । यह कौन मेरे पास आ गया ?' इस प्रकार त्रस्त सदृश वितस्ता उलटे[2] बहने लगी ।

द्रष्टव्य रा० ४ ६११ । नवादिकन्न अखवार पाण्डु० (फो० ४५ ए०) लिपि में भी जैनवदन का उल्लेख मिलता है ।

पाद टिप्पणी

२१ बम्बई का २०वा श्लोक तथा कलकत्ता की २३४वी पक्ति है ।

(१) महान प्रसार पाठभेद महापद्मसर भी मिलता है । महापद्मसर मानकर अनुवाद करने से महापद्मसर का जल दुर्ग म प्रवेश किया, अथ होगा ।

(२) दुर्गपुर स्थान उलर लेक के तट पर था । इसका केवल यही उल्लेख मिलता है ।

पाद टिप्पणी

२२ बम्बई का २१वा श्लोक तथा कलकत्ता की २३५वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

२३ बम्बई सस्करण का २२वा श्लोक तथा कलकत्ता की २३६वी पक्ति है ।

पाठ—बम्बई ।

२४ बम्बई का २३वा श्लोक तथा कलकत्ता की २३७वी पक्ति है ।

(१) भर्ता भर्ता का अथ स्त्री का पति होता है । नदी स्त्रीलिंग है । उसको उपमा नारी तथा समुद्र पुलिंग की उपमा पुरुष से दी गयी है । नर एव नारी का मिलन विवाह का परिणाम है । विवाह पश्चात ही पुरुष भर्ता की सज्ञा प्राप्त करता है । इसी प्रकार समुद्र से मिलने पर नदी का भर्ता समुद्र हो जाता है ।—स्त्रीणा भर्ता धम दाराश्च पुमाम् = (पाराशरशील० ९ १८) । स्त्री का भरण-पोषण करन के कारण पति को भर्ता कहा गया है ।

(२) उलटे नदी में जब बडी नदी मिलती है तो गतिशील धारा सगम के समीप रुक कर बहने लगती है । यह प्रक्रिया काशी में वरुणा तथा गगा सगम के कारण प्राय उपस्थित होती

मीमोज्झिता चलन्मार्गा पङ्कातङ्ककलङ्किता ।
स्थितिः कलियुगस्येव भूरभूज्जलपूरिता ॥ २५ ॥

२५ सीमा रहित एवं नष्ट मार्ग युक्त, पंक रूपी आतंक से कलंकित, जलपूर्ण भूमि कलियुग[१] की स्थिति सदृश हो गयी थी।

तस्मिन्नवसरे धारासारं वर्षति वासवे ।
नौकामारुह्य भूपालो निरगाज्जनचिन्तया ॥ २६ ॥

२६ उस समय इन्द्र के धारा वृष्टि करते रहने पर, राजा लोगों की चिन्ता से नाव पर, आरूढ होकर निकला।

पश्यञ्जलान्तरे मग्नां कृपि कृशतरः शुचा ।
जनकारुण्यपुण्यात्मा विचार पतिः स्थलम् ॥ २७ ॥

२७ शोक से दुर्बल लोगों पर, दयाभाव के कारण, पुण्यात्मा राजा जल में डूबी, कृपि देखते हुए विचरण करता रहा।

दृष्टानि यानि घोषेषु गहनत्वान्न जातुचित् ।
स्थानानि तानि भूपालो नौकारूढो व्यलोकयत् ॥ २८ ॥

२८ ग्वाला[१] की बस्तियों में गहन होने के कारण, जिन स्थानों को कभी नहीं देखा था, उन्हें नौकारूढ राजा ने देखा।

रहती है। वरुणा की धारा प्रबल गंगा की बहती धारा से रुक कर उलटी बहती है। बारहमूला के पास जल निकलने का स्थान संकीर्ण है। वहाँ जल अधिकता के कारण रुक सकता है या बाढ के कारण वृक्षादि बारहमूला के जल बहिर्गमन में अवरोध उत्पन्न कर दिये थे अतएव जल का पीछे की ओर उठकर बहना स्वाभाविक है।

पाद टिप्पणी

२५ बम्बई का २४वां श्लोक तथा कलकत्ता का २३८वीं पंक्ति है।

(१) कलियुग कलियुग भी मर्यादा रहित एवं उचित मार्ग रीति-नीति रहित हो जाता है। भारतीय ग्रन्थों में कलि के सम्बन्ध में अत्यन्त निराशाजनक, अन्धकारपूर्ण एवं अत्यन्त हृदयस्पर्शी बातें कही गयी हैं। प्रमुख बातें हैं कि कलियुग में शूद्र एवं म्लेच्छों का राज्य होगा। नास्तिक सम्प्रदायों की प्रधानता होगी। जाति सम्बन्धी कर्तव्य एवं सुविधाओं में उलट-फेर होगा। शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक शक्तियों का पतन होगा। (द्रष्टव्य वन १८८-१९०, हरिवंश० भविष्य० ३ ५, ब्रह्म० २२९-२३०, वायु० ५८, ९९ ३९१-४२८, मत्स्य० १४४ ३२-४७, कूर्म० १ ३०, विष्णु पु० ६ १ २, भागवत० १२ २, ब्रह्मा० २ ३१, नारदीय० पूर्वार्ध ४१ २१-८८ लिंग० ४०, नृसिंह० ५४ ११-४९)।

पाद-टिप्पणी

२६ बम्बई का २५वां श्लोक तथा कलकत्ता का २३९वीं पंक्ति है।

पाद टिप्पणी

२७ बम्बई का २६वां श्लोक तथा कलकत्ता का २४०वीं पंक्ति है।

पादटिप्पणी

२८ बम्बई का २७वां श्लोक तथा कलकत्ता का २४१वीं पंक्ति है।

प्रतापशिखिनेवाथ शोषितोऽगान्मितैर्दिनैः ।
शान्तिं क्रूरो जलापूरः सन्निवारे समागतः ॥ २९ ॥

२९. थोड़े दिनों में ही मानो राजा के प्रतापाग्नि से शोषित होकर, क्रूर जलपूर सन्निवार[1] में आकर शान्त हो गया ।

अथाचिरेण तद्वर्षे दानोत्कर्षादिव प्रभोः ।
हर्षमन्वभवन् सर्वे पकया शालिसंपदा ॥ ३० ॥

३० शीघ्र ही उस वर्ष राजा के अत्यधिक दान से ही मानो, पकी शालि सम्पत्ति से, सब लोगों ने हर्ष का अनुभव किया ।

प्रजाचन्द्रकलावृद्ध्यै कश्मीरेन्द्रपयोनिधिः ।
तूर्णं पूर्णात्मतां प्राप दयापीयूषभूषणः ॥ ३१ ॥

३१ प्रजारूप चन्द्रकला की वृद्धि के लिये, दया-पीयूष-भूषण नृप पयोनिधि ने शीघ्र ही, पूर्णात्मता प्राप्त की ।

आत्मेव कश्चित् सुकृती क्षितीशः
प्रजा प्रियास्य प्रकृतिर्यथैव ।
तत्सौख्यवृद्धया सुखिता यदास्ते
तदीयदुःखेन च दुःखयुक्तः ॥ ३२ ॥

३२ कोई सुकृती नृपति आत्मा सदृश होता है और उस प्रजा उसी प्रकार प्रिय होती है, जिस प्रकार आत्मा को प्रकृति[1] । उसी के सुख एवं वृद्धि से सुखी एवं उसी के दुःख से दुःखी होता है ।

---

२८ (१) ग्वाल बस्ती गूजरों अथवा घोषों की आबादी से तात्पर्य है—दूध, गाय, बैल, भेंडे तथा पशुधन का कारबार करते हैं । भारत में आज भी ग्वालों की आबादी पशुओं के साथ अलग होती है ।

पाद टिप्पणी ।

२९ बम्बई का २८वां श्लोक तथा कलकत्ता का २४२वीं पंक्ति है ।

(१) सन्निवार यह सोनावारी वर्तमान भूखण्ड है । सोनावारी स्थान जल में थोड़ी भी बाढ़ आने पर डूब जाता है । काश्मीर राज्य की ओर जल को रोकथाम की गयी है । यहाँ पूर्वकाल में जलाधिक्य के कारण खेती कठिन होती थी ।

सोनवार एक स्थान शंकराचार्य पर्वत के दक्षिण-पूर्व श्रीनगर का एक भाग है । दोनों ही स्थानों पर जल पहुँच सकता है । श्रीवर का दोनों में किस वर्तमान स्थान से अभिप्राय है, निश्चित निर्णय के लिए अनुसंधान की आवश्यकता है ।

पाद-टिप्पणी :

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का २४३वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का २९वाँ श्लोक है ।

३० (१) उस वर्ष सप्तर्षि ४५३८ = सन् १४६२ ई० = विक्रमी १५१९ = शक संवत १३८४ ।

पाद-टिप्पणी

३१ बम्बई का ३०वां श्लोक तथा कलकत्ता का २४४वीं पंक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ३१वां श्लोक तथा कलकत्ता का २४५वीं पंक्ति है । कलकत्ता में 'युक्ता' के स्थान पर 'युक्तः' पाठ उचित है ।

३२ (१) प्रकृति नैसर्गिक स्थिति, मौलिक

वितस्तोच्चतटे भूपस्तदुपद्रवशङ्कया ।
पुरं चिकीर्षुर्भ्राम जयापीडपुरान्तिके ॥ ३३ ॥

३३ राजा उपद्रव की आशंका से वितस्ता के ऊँचे तटपर, नगर निर्माण की इच्छा से जयापीडपुर[1] के समीप भ्रमण किया ।

अकरोत् तिलकं भूमेरलकादर्पहृत्पुरम् ।
स जैनतिलकं नाम नदीतीरोन्नतस्थले ॥ ३४ ॥

३४ नदी तट के उन्नत स्थल पर, भूमि के तिलक स्वरूप, अलका के दर्प का हरण करने वाला, जैनतिलक[1] नामक नगर निर्माण कराया ।

राज्ञो दिदृक्षयेवात्र राजधानीरुचिच्छलात् ।
सौधभित्तिगता नूनं चन्द्रिकास्ते सुधासिते ॥ ३५ ॥

३५ राजा को देखने की इच्छा से ही, वहाँ राजधानी की प्रभा के व्याज से, निश्चय ही सौध भित्ति-गत (होकर) चन्द्रिका निवास करती थी ।

या भौतिक कारण । सांख्य में प्रकृति से भिन्न पुरुष की स्थिति मानी गयी है । इसमें सत्य, रज एवं तम तीनों गुण सन्निविष्ट हैं ।

पाद टिप्पणी :

बम्बई का ३२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता का २४६वीं पंक्ति है ।

३३ (१) जयापीडपुर : वितस्ता के वाम तट पर सम्बल स्थान है । इस स्थान से कुछ दूर पर प्राचीन जयापीडपुर किंवा जयपुर का स्थान है । राजा जयापीड ने मध्य आठवीं शताब्दी में यहाँ राजधानी बनाया था । नोर तथा सम्बल के मध्य एक द्वीप स्वरूप स्थान पर ग्राम अन्दरकोट है ।

कोटा रानी की यहीं पर शाहमीर द्वारा बन्दी बनाकर (जोन० ३४०, ७८६) हत्या की गयी थी । शाहमीर जिसने अपने वंश का राज्य स्थापित किया था, इसी को अपनी राजधानी बनाया था । सुरक्षा की दृष्टि से उत्तम स्थान माना जाता था ।

श्रीवर कल्हण वर्णित प्रवरसेनपुर निर्माण की शैली पर, जैन तिलक निर्माण का वर्णन करता है । प्रवरसेन ने भी नगर निर्माण की इच्छा से रात्रि में भ्रमण किया था । उसे वैताल मिला । वैताल व सूत्रपात स्थान पर प्रवरसेन ने प्रवरसेनपुर अर्थात् वर्तमान श्रीनगर की स्थापना की थी (रा० ३ : ३३९-३४९) । श्रीवर ने पुनः उल्लेख १ : ३ : ३७; १ : ३ : ४४ तथा ४ : ५३५ में किया है ।

पाद टिप्पणी :

बम्बई का ३३वाँ श्लोक तथा कलकत्ता का २४७वीं पंक्ति है ।

३४ (१) जैनतिलक : जैनुल आबदीन ने वितस्ता के ऊँचे तट पर अन्दरकोट के समीप जैन-तिलक नगर (सन् १४६२ ई० में) बसाया था । वह जलप्लावन में बह गया । यह स्थान अन्दरकोट के समीप था (म्यहि० पृ० ७६) । यहीं पर जयसिंह राजा राजपुरी या राजौरी का तिलक किया गया था (१ : ३ : ४०) ।

पाद टिप्पणी :

३५ बम्बई का ३४वाँ श्लोक तथा कलकत्ता का २४८वीं पंक्ति है ।

मूलोत्पाटे दशास्योऽरिर्मेशेन विवर्धितः ।
इतीव खिन्नः कैलासः सौधव्याजादिवागतः ॥ ३६ ॥

३६ मूलोत्पाटन करने के कारण मेरा जो शत्रु रावण, जिसे शंकर ने बढाया है, अतएव खिन्न होकर, कैलाश² सौधों के व्याज से वहाँ आ गया था।

सुधासितगृहा यत्र सन्नागारवसुधरम् ।
जयापीडपुरं जीर्णं हसन्तीव रुचिच्छलात् ॥ ३७ ॥

३७ जहाँ पर सुधा से श्वेत गृह वाली पुरी, अपनी प्रभा के व्याज से, उत्तम गृह एवं धन रहित, जीर्ण जयापीडपुर का उपहास करती थी।

पाद टिप्पणी

बम्बई ३५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २४९वीं पंक्ति है।

३६ (१) रावण विश्रवस का पुत्र तथा पुलस्त्य ऋषि का पौत्र रावण था। शिव के द्वारा कैलाश पर्वत के नीचे इसकी भुजायें दब गयी थी। उस समय इसने भीषण चित्कार (राव० सुदारुण) किया 'रावा' से इसका नाम रावण पड़ गया (रा० अयोध्या १६ : ३९ सु० २३ : ८) एक मत है कि तामिल इरवण (राजा) का संस्कृत रूप रावण है। रायपुर के निवासी गोंड अपने को रावण का वंशज मानते हैं। इसी प्रकार कटकंघा जिला रांची में 'रावना परिवार आज भी रहता है। रावण का उपनाम दशग्रीव है। वह लंकापति था। सीता-हरण के कारण राम रावण युद्ध में मारा गया था।

महाभारत में रावण को विश्रवस् पिता तथा पुष्पोत्कटा माता का पुत्र कहा गया है। विश्रवस् का दूसरा पुत्र कुबेर था। उसने अपने पिता की सेवा के लिये पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी सुन्दर कन्याओं का नियुक्त किया था। इनमें पुष्पोत्कटा से रावण एवं कुम्भकर्ण, राका से खर एवं मालिनी से विभीषण का जन्म हुआ था (वन० २५९ : ७)। इस प्रकार रावण ब्रह्मा का वंशज था।

कुबेर को पराजित कर इसने पुष्पक विमान ले लिया। उस पर चढ़कर कैलाश के ऊपर से जा रहा था। विमान अचानक रुक गया। कैलाश को उखा-ड़ने की चेष्टा करने लगा। कैलाश हिलने लगा। शिव ने पादांगुष्ठ से कैलाश दबाया। रावण की भुजायें पर्वत के नीचे दब गयी। रावण उसी अवस्था में एक सहस्र वर्षों तक शिव की प्रार्थना के साथ विलाप करता रहा। शिव ने प्रसन्न होकर, उसे चन्द्रहास नामक खड्ग दिया। अपने भक्तों में स्थान दिया। रावण सुवर्ण शिवलिङ्ग अपने साथ रखता था। शंकर के कारण प्रतापशाली हो गया। श्रीवर इसी कथा की ओर संकेत करता है।

(२) कैलाश : शंकर का निवास स्थान कैलाश है। उन्हें कैलाशपति कहा जाता है। यह हिमालय के मध्य स्थित है। हिन्दुओं का पवित्र तीर्थस्थान है। चीन के तिब्बत लेने के पूर्व कैलाश एवं मानसरोवर की प्रतिवर्ष सहस्रों यात्री यात्रा करते थे। इस समय यहाँ की यात्रा पूर्णतया बन्द हो गयी है। कैलाश सिन्धु-महानद के उत्तरी तट पर स्थित है। इस पर्वतमाला का सर्वोच्च हिमाच्छादित शिखर राकापोशी २५५५० फीट ऊँचा है। मानसरोवर निकटस्थ कैलाश शिखर २२०२८ फुट ऊँचा है। शंक्वाकार है। ऊपरी शिखर सर्वदा हिमाच्छादित रहता है। उस पर नीचे आती हिमानी कृष्ण वर्ण पर्वत पर शिव की काली जटा से गंगावतरण की स्मृति दिलाती है। कैलाश हिन्दू मन्दिर तुल्य दूर से लगता है। यह देवताओं का आवास माना जाता है। द्रष्टव्य टिप्पणी : १ : १२१।

पाद टिप्पणी

३७ बम्बई का ३६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५० वीं पंक्ति है।

तलद्वारोत्सुकस्यास्य राज्ञ प्रत्यक्षतां गतम् ।
मायासुरपुरं किं वा यद् दृष्ट्वेत्यवदन् बुधाः ॥ ३८ ॥

३८ तल द्वार पर उत्सुक, इस राजा को दृष्टिगोचर हुआ, जिसे देखकर, विद्वानो ने अस्पष्ट 'मायासुरपुर,[१] है क्या ?' इस प्रकार कहा ।

यद् वारिकान्तं संक्रान्तं परितः सरितस्तटात् ।
द्वारिकां हसतीवास्य द्वारि कान्त्या सुधासितम् ॥ ३९ ॥

३९ नदी के तट पर सब ओर जल मे प्रतिबिम्बित, चूने से श्वेत, जिसका द्वार भाग मानो द्वारिका[१] का परिहास करता था ।

तत्र राजपुरीयाय जयसिंहाय भूपतिः ।
प्रददौ राज्यतिलकं निजजन्मदिनोत्सवे ॥ ४० ॥

४० वहाँ पर राजा के जन्म दिवस के उत्सव पर, राजपुरीय[१] जयसिंह[२] को राजतिलक प्रदान किया ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ३७वा श्लोक तथा कलकत्ता की २५१वी पक्ति है । प्रथम पद के प्रथम चरण का पाठ सन्दिग्ध है ।

३८ (१) मायासुर यह मयासुर मेरे मत से है । प्राचीन मान्यता के अनुसार मयासुर दानव था । नमुचि का भ्राता एवं सर्वश्रेष्ठ शिल्पी था । त्रेतायुग में दक्षिण समुद्र के निकट सह्य, मलय एव दर्दुर नामक पर्वतों के समीप एक विशाल गुफा में बने भवन में निवास करता था । दैत्यराज वृषपर्वन द्वारा किये गये होम के समय इसने एक अति चमत्कृत-पूर्ण सभा का निर्माण किया था । इसने दैत्यो के सरक्षण के लिये तीन नगरो का निर्माण किया था । वे आकाश जैसे मेघो के समान घूमते दिखायी पडते थे । उनमें एक स्वर्ण, दूसरा रजत एव तीसरा लोह का बना था । भगवान कृष्ण के आदेश पर वृषपर्वा के कोषागार से सामग्री लाकर, मय ने सभा नामक दिव्य सभा का निर्माण किया था । युधिष्ठिर ने अपना राजसूय यज्ञ यहीं किया था । यह भुवन रचना दुर्योधन के ईर्षा की कारण हुई थी । मत्स्यपुराण म उल्लेख मिलता है कि इसने वास्तुशास्त्र की रचना किया था । अनेक शिल्प एव ज्योतिष शास्त्र ग्रन्थों का रचनाकार मय माना गया है । मयासुर दानवों का विश्वकर्मा है । मय ने एक सहस्र वर्ष घोर तपस्या कर, ब्रह्मा से वरदान स्वरूप शुक्राचार्य का समस्त शिल्प वैभव प्राप्त कर लिया था । रावण की पत्नी मन्दोदरी इसकी कन्या थी (किष्कि० ५१ १०-१४, उत्तर० १२, १६-१९, महा० आदि० . ६१, ४८-४९, २२७ ३९-४५, सभा० १ ३-६, २१ वन० २८२ ४०-४३, कर्ण० ३३ १७, भा० ६ १८ ३, ६ ६ ३३, वायु० ८४ २०, ब्रह्माण्ड० ३ ६ २८-३०) ।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ३८वा श्लोक तथा कलकत्ता की २५२वी पक्ति है ।

३९ (१) द्वारिका सप्तपुरियो में एक पुरी है ।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक बम्बई सस्करण का ३९वा श्लोक तथा कलकत्ता की २५३वी पक्ति है ।

४० (१) राजपुरी राजौरी ।

तत्रोपविष्टः सतुष्टः सेवयास्य महीपतिः ।
भट्टतन्त्राधिकार च प्रददौ ब्राह्मणप्रियः ॥ ४१ ॥

४१ वहाँ पर स्थित सेवा से प्रसन्न, ब्राह्मणप्रिय महीपति ने भट्ट तन्त्राधिकार[१] भी प्रदान किया ।

काश्मीरकाश्यदेशीयसर्वगीताङ्कितांङ्गने ।
तस्मिन् संवत्सरे राजा चक्रे कनकवर्षणम् ॥ ४२ ॥

४२ काश्मीर आदि देशीय सर्व प्रकार के संगीत से पूर्ण प्रांगण में उसी वर्ष राजा ने कनक वृष्टि[१] की ।

तत्रोपकण्ठे भूपालः स्मृत्यै कण्ठीरवद्विपः ।
हेलालनाम्नो दासस्य हेलालपुरकं व्यधात् ॥ ४३ ॥

४३ उसी के समीप मतवाले हाथी के हन्ता हेलाल[१] नामक दास की स्मृति में राजा ने हेलापुर[२] बसाया ।

---

(२) जयसिंह राजपुरी का राजा था। जोनराज ने श्लोक ८३१ में राजपुरी के राजा रणसूह का अर्थात् रणसिंह का वर्णन जैनुल आबदीन के विजय प्रसंग में किया है। इस विजय का समय नहीं दिया गया है। जैनुल आबदीन की विजय का समय सन् १४२० से १४३० ई० के मध्य रखा जा सकता है। इस समय रणसूह राजा था। उसके पश्चात् ही जयसिंह राजा हुआ होगा अथवा रणसिंह तथा जयसिंह के मध्य कोई और राजा हुआ था। उसका साधिकार निश्चय करना इस समय सम्भाव्य नहीं है। जयसिंह के पुनः उल्लेख २ १४५ में किया गया है।

पादटिप्पणी

४१ बम्बई का ४० वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५४वीं पंक्ति है।

(१) तन्त्राधिकार = यहाँ पर सैन्य पद किंवा निरीक्षक का अर्थ लगाना ठीक होगा। दक्षिणा भारत अभिलेखों के अनुसार तन्त्राधिकारी विभागों का निरीक्षक होता था। द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ९४।

पादटिप्पणी

४२ बम्बई का ४१ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५५वीं पंक्ति है। प्रथम पद का पाठ अस्पष्ट है।

(१) कनक वृष्टि = कल्हण ने कंकण वर्षा का उल्लेख राजा क्षेमगुप्त के सन्दर्भ में किया है। कनक वृष्टि का पुनः उल्लेख श्रीवर श्लोक १ ४ ५२ में करता है। द्रष्टव्य टिप्पणी २१ ६ ३०१।

पाद टिप्पणी

४३ बम्बई का ४२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५६वीं पंक्ति है।

(१) हेलाल = यह शब्द अरबी हिलाल है जिसका अर्थ द्वितीया का चन्द्रमा है। हेलाल मुसलिम था जैसा उसके नाम से प्रकट है।

(२) हेलालपुर = कल्हण ने हलू नामक ग्राम का उल्लेख किया है परन्तु श्रीवर जैनुल आबदीन द्वारा हेला नामक दास द्वारा बसाये हेलापुर का उल्लेख करता है। दोनों भिन्न स्थान प्रतीत होते हैं। हेलालपुर स्थान का अनुसन्धान अपेक्षित है।

शैलपीठं विधायोच्चैर्जयापीडपुरान्तरे ।
सरस्तीर्थे मनोहारि राजवासं स्वकं व्यधात् ॥ ४४ ॥

४४ जयापीड[1] मे ऊँचे शैलपीठ का निर्माण कर, सरोवर के तटपर, अपना मनोहारी राज निवास का निर्माण कराय ।

उदीपत्रुडितं जीर्णं निर्लुण्ठ्योपसरोवरम् ।
महाप्रज्ञो नृपश्चक्रे तद्वद् राजगृहावलिम् ॥ ४५ ॥

४५ महाप्रज्ञ राजा ने सरोवर के निकट उदीप (बाढ) मे डूबे एव जीर्ण, उसे तोड-फोडकर, उसी तरह से राजगृहावलि बनाया ।

नागयात्रादिने यत्र प्रत्यब्दं दिनपञ्चकम् ।
गणचक्रोत्सवे राजा योगिनो भोगिनो व्यधात् ॥ ४६ ॥

४६ जहाँ पर नागयात्रा[1] के दिन, गणचक्रोत्सव[2] के अवसर पर, प्रतिवर्ष पाँच दिन के लिए योगिया को भोगी बना दिया ।

यत्र कादम्बरीक्षीरव्यञ्जनादिप्रपूरिताः ।
कृत्वा पुष्करिणीः सर्वान् स यथेच्छमभोजयत् ॥ ४७ ॥

४७ जहाँ पर वह राजा पुष्करणियो को कादम्बरी, (सुरा) क्षीर, व्यञ्जनादि से परिपूर्ण कर, सब लोगो को इच्छानुसार भोजन कराता था ।

पाद-टिप्पणी

४४ बम्बई. ४३ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५७ वी पक्ति है। सरस्तीरे का पाठ सन्दिग्ध है।

(१) जयापीडपुर = अन्दरकोट ।

पाद-टिप्पणी

४५ बम्बई का ४४ वाँ श्लोक, कलकत्ता का २५८ वी पक्ति है ।

प्रथम पद में त्रुटित तथा 'जीर्ण' का पाठभेद सन्दिग्ध है ।

पाद-टिप्पणी .

४६ बम्बई का ४६ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २२९ वी पक्ति है ।

(१) नागयात्रा = द्रष्टव्य टिप्पणी . जोनराज ६५४ ।

(२) गणचक्रोत्सव = गुणी गणों का सहभोज । तीन पुरुषों के समुदाय को गण कहते हैं । (धर्मदीक्षा जैनग्रन्थ १३ ५४, २६ ६३८) ।

पाद-टिप्पणी

४७ बम्बई का ४६ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २५९ वी पक्ति है ।

कलकत्ता के 'पूरित' के स्थान पर बम्बई का 'पूरिताः' पाठ ठीक है ।

(१) कादम्बरी = कोकिल, सरस्वती, वाणी, मदिरा = कदम्ब के पुष्पों से खींची गयी शराब— निपेव्य मधुमाधवा सरसमत्र कादम्वरम् (शि० ४ ६६) । कादम्बरी साक्षिक प्रथम सौहृद मिष्यते (श० ६) । कादम्बरी मद विघूर्णित लोचनस्य युक्त हि लाङ्लभृत पतन पृथिव्याम्—उदभट ।

यत्र योगिमहस्रोत्थशृङ्गनादासकृच्छ्रुतेः ।
जाने मानसनागोऽपि न्यमीलन्निजचक्षुषी ॥ ४८ ॥

४८ जहाँ पर सहस्रों योगियों के शृंगनाद को बार-बार सुनने के कारण, मानो मानस नाग[1] ने भी चक्षु[2] बन्द कर लिया।

न तदन्नं न तन्मांसं न तत् शस्यं न तत्फलम् ।
न ते भोगा न ये राज्ञा भोजिता भोजनक्षणे ॥ ४९ ॥

४९ वह अन्न नहीं, वह मांस नहीं, वह सस्य नहीं, वह फल नहीं, वह भोग नहीं, जिन्हें राजा ने भोजन के समय नहीं खिलाया।

योगिनां त्रिविधाश्लील मद्यमत्ततयोदितम् ।
असहिष्ट नृपो भक्त्या यदसह्य जनैरपि ॥ ५० ॥

५० योगियों के मदमत्तता के कारण कहे गये तीन प्रकार की अश्लीलता[1] को भक्ति के कारण राजा ने कहा, जो कि सामान्य लोगों के लिए भी असह्य था।

महार्घ्यपरिधानोद्यद्दानमानादिलाञ्छनैः ।
तेषामधिपतिं यत्र मेरं स्वसदृशं व्यधात् ॥ ५१ ॥

५१ जहाँ पर बहुमूल्य, परिधान, दान, मान, आदि लाञ्छनों से उनके अधिपति मेर (मीर) को अपने समान बना दिया।

पाद-टिप्पणी

४८ बम्बई का ४७ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २६१वीं पंक्ति है।

(१) मानसनाग = मनमावल का इष्ट देवता, जैसे पद्मसर का देवता पद्मनाग माना जाता है।

(२) चक्षु = मान्यता है कि सर्प चक्षु से सुनते हैं। अतएव उन्हें चक्षुश्रवा कहा जाता है। श्रीवर ने वही युक्ति दुहराई है। नाद से लोग कान मूँद लेते है। परन्तु सर्प को कान नहीं होता। चक्षु से देखने और सुनने दोनों का काम लेना है, अतएव उसे चक्षुश्रवा कहते हैं (कि० १६ ४२, नं० १ २८)।

पादटिप्पणी

४९ बम्बई का ४८ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २६२ वी पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

५० बम्बई का ४९ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २६३ वी पंक्ति है। 'त्रिविधाशील' का पाठ कुछ अस्पष्ट है।

(१) अश्लीलता अश्लीलता तीन प्रकार की होती है। (१) लज्जा (२) जुगुप्सा एवं (३) अमंगल अर्थवाचक।

पाद टिप्पणी

५१ बम्बई का ५० वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २६४ वी पंक्ति है।

सत्कन्थाकिन्नरामुद्रादण्डाद्यैर्द्वादशीदिने ।
भारिकान् योगिन कृत्वा प्रत्यमुञ्चत् ततो बहि ॥ ५२ ॥

५२ द्वादशी[1] के दिन सुदर कन्था[2], तम्बूरा, मुद्रा, दण्डादि[3] देकर योगियो को भारवाहक[4] बना कर छोडा।

वितस्ताजन्मपूजार्थं त्रयोदश्यां ततो नृप ।
दीपमाला दिदृक्षुः सनौकारूढोऽभ्यगात् पुरम् ॥ ५३ ॥

५३ तदनन्तर राजा त्रयोदशी के दिन वितस्ता जन्मोत्सव[1] (पूजा) के लिए, दीपमालाओ को देखने की इच्छा से नौका पर आरूढ होकर नगर मे गया।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ५१वा श्लोक तथा कलकत्ता की २६५वी पंक्ति है।

५२ (१) द्वादशी भाद्रपद शुक्ल द्वादशी का पर्व काश्मीर में महत्त्वपूर्ण माना गया है। यह जब श्रावण के साथ होती है, तो उसे महाद्वादशी कहते हैं। द्रष्टव्य नीलमत पुराण ७६७–७७७।

(२) कन्था गुदडी, कथरी, जोगिया का पहनावा या परिधान। थेगली लगा वस्त्र।

फारि पटोर सो पहिरौ कन्था।
जो मोहि कोउ दिखावै पथा ॥ जायसी ॥

(३) दण्ड वर्णानुसार दण्ड धारण करने की व्यवस्था शास्त्रकारो ने की है। उपनयन सस्कार के समय मेखलादि के साथ ब्रह्मचारी को दण्ड धारण कराया जाता है। ब्राह्मण—बेल या पलाश केशात तक ऊँचा, क्षत्रिय—बरगद या खैर का ललाट तक ऊँचा और वैश्य—गूलर या पलाश नाक तक ऊँचा दण्डधारण करते है।

केवल ब्राह्मण सन्यासी दण्ड धारण कर सकते है। उन्हें दण्डी सन्यासी कहते है। सन्यासियो में कुटीचक तथा बहूदक को त्रिदण्ड, हस को एक वेणु दण्ड एव परमहस को भी एक दण्ड धारण करना चाहिए। यह भी मत है कि परमहस को दण्ड धारण करना आवश्यक नही है। दण्ड ग्रहण करने का अर्थ सन्यास लेना है। पिता, माता, स्त्री, पुत्र आदि के रहते दण्ड धारण निषेध है। दण्ड धारण करने पर, यज्ञोपवीत उतार कर, भस्म कर दिया जाता है। शिखा का मुण्डन कर देते हैं। पूर्व नाम बदल दिया जाता है। अनन्तर गुरु दशाक्षर मन्त्र देकर, गेरुवा वस्त्र, दण्ड एव कमण्डलु देते हैं। धातु एव अग्नि का स्पर्श तथा स्वय भोजन दण्डी नही बनाते। केवल एक बार दण्डी सन्यासी मध्याह्न के पूर्व भोजन करते हैं।

बारह वर्ष दण्डी सन्यासी का व्रत धारण करने पर, दण्ड को जल म प्रवाह कर दिया जाता है। दण्डी उस समय परमहस आश्रम प्राप्त करता है। मृत्योपरान्त दण्डी का दाह सस्कार नही होता। श्राद्ध आदि नही किया जाता। उनके पार्थिव शरीर को जलप्रवाह अथवा समाधि दी जाती है। दण्डी निर्गुण ब्रह्म की उपासना करते है।

(४) भारवाहक सुल्तान ने इतना सामान दिया कि वह स्वय एक भार हो गया था। वे बोझा लेकर चले।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ५२वा श्लोक तथा कलकत्ता की २६६वी पंक्ति है।

५३ (१) जन्मोत्सव व्यथतुवह कहते है। भाद्रशुक्ल त्रयोदशी को मनायी जाती है। इसे काश्मीरी में व्यथत्रुवहो कहते है। इस समय यह

सुभाषितानि संशृण्वन् संगीतानि जलान्तरे ।
समारोहावरोहाभ्यां स पौराशिषमग्रहीत् ॥ ५४ ॥

५४ जल में सुभाषित सगीतो को सुनते हुए, वह आरोहारोह (उतरने चढने) अवसर पर, पुरवासियो का आशीर्वाद ग्रहण किया ।

पूजार्थं प्रस्फुरत्पौरदत्तदीपावलिच्छलात् ।
वितस्तान्तरमायाता तीर्थकोटिरिवाद्युतत् ॥ ५५ ॥

५५ पूजा के लिए पुरवासियो द्वारा प्रदत्त स्फुरित होते दीपावलियो के व्याज से मानो वितस्ता मे आये करोडो तीर्थ ही प्रकाशित हो रहे थे ।

पारावारतटप्रभा दीपमालास्तदा दधुः ।
अर्चनाप्तसुरोन्मुक्तसुवर्णकुसुमश्रियम् ॥ ५६ ॥

५६ उस समय पारावार तट पर प्रश्रित दीपमालायें अर्चना प्राप्त देवताओ द्वारा उन्मुक्त सुवर्ण पुष्प की शोभा धारण कर रही थी ।

वितस्ताबलिपूजाप्तनागरीमुखनिर्जितः ।
लज्जयाकम्पतेवेन्दुः सेवाप्त प्रतिमाच्छलात् ॥ ५७ ॥

५७ वितस्ता मे वलि[1] पूजा करने के लिए आयी, नगर स्त्रियो के मुख से निर्जित होकर, प्रतिमा के छल से सेवा हेतु आगत चन्द्रमा मानो लज्जा से कॉप रहा था ।

वन्द हो गया है। डॉ० श्री परमू के अनुसार सन् १९४७ ई० अर्थात् आजादी के बाद बन्द हो गया है। कुछ वृद्ध काश्मीरी ब्राह्मण मनाते है। इस दिन कन्याओं को भेंट दिया जाता है (पृ० १४३)। द्रष्टव्य नीलमत पुराण ३०३-३२२ ।

पाद टिप्पणी

५४ वम्बई का ५३वा श्लोक तथा कलकत्ता की २६४वी पक्ति है ।

पाद टिप्पणी

५५ वम्बई का ५४वा श्लोक तथा कलकत्ता की २६८वी पक्ति है। कलकत्ता के 'दीपवलि' के स्थान पर वम्बई का 'दीपावलि' पाठ रखा गया है।

पाद-टिप्पणी

५६ वम्बई का ५५वा श्लोक तथा कलकत्ता की २७१वीं पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

वम्बई का ५६वा श्लोक तथा कलकत्ता की २७०वी पक्ति है ।

५७ (१) वलि आजकल वलि का अर्थ पशुबलि लगाया जाता है, यह भ्रामक है। बलि का अर्थ आहुति भेंट तथा दैनिक पचमहायज्ञो मे एक यज्ञ है। पूजा, आराधना, चावल (शाली), अनाज, घी, दूध आदि देवमूर्ति, देवता, नदी, सरोवर, स्रोतस्विनी तथा नागों पर चढाया जाता है। देवता को नैवेद्य अर्पण एव जीव-जन्तुओ को भोजन आदि देना वलिदान कहा गया है ।

वलि का अर्थ है

पाठो होमश्चातिथीना सपर्या तर्पण बलि ।
एते पचमहायज्ञा ब्रह्मयज्ञादिनामका ॥

अमर० . २ १७ ' १४ ।

गर्वखर्वीकृताराति: सुपर्ण इव लीलया ।
सर्वां रात्रीं स गान्धर्वचर्वणैरनयत् सुखम् ।। ५८ ।।

५८ वह शत्रुओ के गर्व को समाप्त करके, लीलापूर्वक गरुड की तरह समस्त-समस्त रात्रि गान्धर्व चर्वण[१] (नृत्य, गीत-श्रवण) पूर्वक सुख से व्यतीत किया ।

वन्द्योऽसौ गुणिबान्धवो दिनपतिर्यस्योदयानुग्रहाद्
दृष्टा कुत्र न सर्वदर्शनसुखात् सच्चक्रहर्षस्थितिः ।
निन्द्यौ तस्य सुतौ पितुर्विसदृशौ लोकव्यथोत्पादकौ
यौ कालोऽयमिति प्रथामुपगतौ क्रूरग्रहौ निश्चितौ ।। ५९ ।।

५९ जिसके उदयानुग्रह से सर्व दर्शन का सुख प्राप्त करने के कारण, चक्रवाक् प्रसन्न हो जाते हैं, उस सूर्य के समान, जिस राजा के उदय अनुग्रह से, सर्व दर्शनो को सुख-सुविधा प्राप्त होने से, कहाँ पर साधु समुदाय मे हर्ष की स्थिति नही देखी गयी ? वह गुणियो का बन्धु वन्दनीय है । उसके निन्दनीय, पिता के प्रतिकूल, ससार को दु.खदायी, जो दोनो पुत्र 'यह काल है'—इस प्रकार प्रसिद्ध हो गये थे, वे क्रूर ग्रह[१] माने गये ।

अत्रान्तरेऽनुजद्वेषवशात् कलुषिताशयः ।
आदामखानो निःशेषं देशमाक्रामयद्धठात् ।। ६० ।।

६० इसी बीच अनुज के द्वेषवश, कलुषित हृदय आदम खाँन हठात् सम्पूर्ण देश पर आक्रमण कर दिया ।

अध्यापन ब्रह्मयज्ञ पितृयज्ञस्तु तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथि पूजनम् ।।
मनु० ३ ७०

पाठ, होम, अतिथि सेवा, तर्पण, बलि पचयज्ञ है । (१) पाठ–अर्थात् वेदाध्ययनादि ब्रह्मयज्ञ है । (२) हवन–देवयज्ञ है । (३) अतिथि सपर्या–अतिथियो को अन्नादि से सन्तुष्ट करना मनुष्य या नृयज्ञ है । (४) तर्पण–पितरों को अन्न-जल से सन्तुष्ट करना पितृयज्ञ है । (५) बलि–जीवों को अन्नदानादि से सन्तुष्ट करना भूतयज्ञ है ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ५७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७१वी पक्ति है ।

५८ (१) चर्वण स्वाद किंवा आनन्द लेने से अर्थ अभिप्रेत है ।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ५८वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७२वी पक्ति है ।

५९ (१) क्रूर ग्रह शनी, मगल एव सूर्य क्रूर ग्रह है ।

पाद-टिप्पणी

६० बम्बई ५९वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७३वी पक्ति है ।

यत्राश्मेवातिकठिनास्तन्त्रतन्त्रितयन्त्रिण ।
दुर्मन्त्रिणोऽभवन् राज्ञि तस्मिन् सोऽपि स्वतन्त्रताम् ॥ ६१ ॥

६१ पत्थर के समान कठिन एव शासको को अपने शासन से बाध्य कर देने वाले दुष्ट मन्त्री उस राजा के समय हो गये थे। और वह भी स्वतन्त्र हो गया था।

स्फीते भीते न कामास्त्रे शास्त्रे न रसिकोऽभवत् ।
केवल मृगयासक्तश्चमत्कार श्वभिर्व्यधात् ॥ ६२ ॥

६२ प्रचुर भय के प्रति उदासीन शास्त्र के प्रति नही अपितु कामशास्त्र के प्रति रसिक केवल मृगया म आसक्त होकर, कुत्तो द्वारा चमत्कार करता था।

सरसामन्तरेऽरण्ये यत्र कुत्रापि तिष्ठतः ।
मृगयारसिकस्यास्य रात्रिदिनमिवाभवत् ॥ ६३ ॥

६३ सरोवर अथवा अरण्य म जहा कही भी रहते उस मृगया रसिक के लिए रात्रि दिन सदृश हो गयी।

किमुच्यतेऽन्यन्नीचत्व यद् भृत्यैर्व्यवहारिवत् ।
श्येनसहृतपक्ष्योघविक्रयो नगरे कृत' ॥ ६४ ॥

६४ अन्य नीचता क्या कही जाय जिसके भृत्य क्षुद्र व्यापारी के समान बाज[१] द्वारा पक्षि समूहो को एकत्रित कर नगर म विक्रय कराते थे।

अथैकदा विभज्यासौ यौवराज्यमदोद्धत. ।
क्रमराज्य नृपत्याज्य ययौ प्राज्यपरिच्छदः ॥ ६५ ॥

६५ एक समय यौवराज्य[१] मद से उद्धत[२] वह प्रचुर सेवक सहित नृप त्याज्य क्रमराज्य[३] मे गया।

पाद टिप्पणी

६१ बम्बई का ६०वा श्लोक तथा कलकत्ता की २७४ वी पक्ति है।

पाद टिप्पणी

६२ बम्बई का ६१वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७५ वी पक्ति है।

पाद टिप्पणी

६३ बम्बई का ६२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७६ वीं पक्ति है।

कलकत्ता के 'रात्रि' के स्थान पर बम्बई का 'रात्रि र' पाठ रखा गया है।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ६३वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७७वी पक्ति है।

६४ (१) बाज बाज पालन की प्रथा हमारे बाल्यकाल तक खूब प्रचलित थी। मुख्यतया पठान और मुगल लोग बाम कलाई पर बाज लिये घूमते थे। यह कुलीनता का चिह्न था। बाज उडा कर पक्षियों का शिकार किया जाता था। बाज पक्षियों को पकडकर अपने स्वामी के पास लाता था। इस प्रकार मृत पक्षियों का बेचने से यहाँ तात्पर्य है।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

बम्बई का ६४वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २७८वी पक्ति है।

६५ (१) यौवराज्य द्रष्टव्य टिप्पणी १ २ ५।

यत्र यत्रोपविष्टः स पापनिष्ठोऽप्यनिष्टवत् ।
अभवन् पीडितग्रामीणाक्रन्दमुखरा दिशः ॥ ६६ ॥

६६ अनिष्ट सदृश वह पापी जहाँ-जहाँ पर बैठा, वहाँ पीडित[१] ग्रामीणो के आक्रान्दन से दिशायें मुखरित हो उठी।

प्रसादमतुलोदग्र प्रतिग्रहदृढां क्षितिम् ।
उपग्रह इवात्युग्रः संजहार पदे पदे ॥ ६७ ॥

६७ उपग्रह[१] सदृश, अति उग्र उसने प्रसाद एव कठोरतापूर्वक दान देकर, दृढ की गयी पृथ्वी को पद-पद पर अपहृत किया।

क्वचिद्रीत्या क्वचिद्भीत्या क्वचिन्नीत्या विलोभयन्।
लोभग्रस्तो बलात्कारान्न केषामहरद्धनम् ॥ ६८ ॥

६८ लोभग्रस्त उसने, कही रीति से, कही भीति से, कही नीति से, विलोभित करता हुआ, बलात्कारपूर्वक किनके धन का अपहरण नही किया ?

---

(२) उद्धत तवकाते अकबरी में उल्लेख है—कमराज में शक्ति प्राप्त कर आदम खां ने अनेक दमनकारी काय किये (४४३ = ६६६) ।

आदम खा अपने राज्य कमराज्य में बहुत उत्पीडक हो गया था। लेकिन रोजस यह नही लिखता कि कमराज्य में सुल्तान ने आदम खा को नियुक्त किया था। केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में उल्लेख है—दुर्भिक्ष के पश्चात आदम खा को कमराज का प्रशासन दिया गया। किन्तु जनता को दमन एव उत्पीडन एव लुण्टक वृत्ति के कारण पिता सुल्तान ने उसकी भत्सना किया। इसलिये वह पिता क विरुद्ध उत्तेजित और विद्रोह पर तत्पर हो गया (३ : ३८३) ।

(३) कमराज्य = मराज त्याज्य राज्य का प्रयोग इसलिये किया गया है कि सुल्तान ने कमराज का अधिकार आदम खाँ का दे दिया था।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ६५वाँ श्लोक तथा कल्कत्ता की २७९वी पक्ति है। पाठ बम्बई 'ऽप्यानिष्ट' का पाठ अस्पष्ट है।

६३ (१) पीडन : पीर हसन लिखता है—कुछ अरसा बाद आदम खा भी बागी हो गया और हुदूद कामराज में कतल व गारत शुरू करके किस्म-किस्म के जुल्म और फसाद की बुनियाद रख दी। जो कुछ भी लोगो के पास देखता कि छीन लेता था। (पृष्ठ १८४) ।

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है कि आदम खाँ ने उन भूमि को ले लिया, जो दान में दी गयी थी। लोगों की सम्पत्ति लूट लिया। उसकी देखादेखी उसके अधिकारियो ने प्रजापीडन, बलात्कार आदि आरम्भ कर दिया (म्युनिख पाण्डु० ७५ बी०)।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ६६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८०वी पक्ति है। पाठ कुछ अस्पष्ट है।

६७ (१) उपग्रह=लघु ग्रह राहु, केतु आदि उपग्रह है। फलित ज्योतिष के अनुसार सूर्य जिस नक्षत्र में होते है, उससे पाचवाँ, आठवाँ, चौदहवाँ, अठारहवाँ, इक्कीसवाँ, बाइसवाँ, तेइसवाँ और चौबीसवाँ नक्षत्र उपग्रह कहा जाता है। लघु अर्थात् छोटा ग्रह, जो अपने बडे ग्रहो के चारों ओर घूमता है। पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा है।

पाद-टिप्पणी

६८ बम्बई का ६७वाँ श्लोक तथा कल्कत्ता की २८१वी पक्ति है।

स प्राकृत इव व्याजमैत्रीं कुर्वन् गृहागतः ।
लोभादन्यॉल्लवन्यास्तानन्यान् वित्तैरवञ्चयत् ॥ ६९ ॥

६९ लोभवश, वह सामान्य जन के समान घर आकर, मित्रता का बहाना बनाते (कपट मैत्री करते) हुए उन लवन्यों[1] को धन से ठग लिया।

नीता जारकृताद् युक्त्या भभयास्ताडयन् स्त्रियः ।
तदुक्त्यादण्डयत् यस्य ग्रामीणान् सेवकव्रजः ॥ ७० ॥

७० युक्तिपूर्वक ले जायी गयी जार[1] कृत भयभीत स्त्रियों को प्रताडित करते हुए उसके सेवक समूह ने उसके कहने पर ग्रामीणों को दण्डित किया।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ६८वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८२वीं पंक्ति है। नन्यान का पाठ सन्दिग्ध है।

६९ (१) लवन्य कल्हण ने लवन्य वर्ग का सर्वप्रथम उल्लेख राजा हर्ष (सन् १०९६–११०१ ई०) के प्रसंग में किया है (रा० ७ ११७१)। कल्हण के समय से जोनराज एवं श्रीवर के समय तक लवन्यों का उल्लेख मिलता है। शुक ने उनका उल्लेख नहीं किया है। इससे प्रकट होता है कि लवन्य मुसलिम बनकर अपनी स्वतन्त्र वर्गीय स्थिति समाप्त कर चुके थे। हिन्दू राज्य पतन के कारण थे। कल्हण ने उनके आतंक एवं उपद्रव का वर्णन तरंग ७ तथा ८ में किया है। जोनराज ने हिन्दूकालीन इतिहास में उन्हें अराजक रूप में चित्रित किया है। मुसलिम राज स्थापित होने के पश्चात उनका मुलतानों ने दमन किया। वे लोप हो गये। जोनराज काल तक वे काश्मीर के राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण भाग लेते रहे हैं। अनेक गृहयुद्धों के जनक होकर अन्त में हिन्दू राज्य के विघटन के कारण हुये।

ग्यारहवीं शती में लवन्य ग्रामीण कृषक रूप में चित्रित किये गये हैं। क्षत्रियों के समान उनका नाम अब तक ग्रामों में 'लून' शब्द से प्रचलित हैं। यह शब्द लवन्य का अपभ्रंश है। लून[1] काश्मीर उपत्यका में चारों ओर ग्रामीण क्षेत्रों में बिखरे हैं। लारेन्स का मत है कि वे विलास से काश्मीर में आये थे (वैली ऑफ काश्मीर ३०६)। परन्तु स्तीन का मत है कि लूनों में इस प्रकार की कोई परम्परा प्रचलित नहीं है। लारेन्स के अनुसार काश्मीर क्रम में लोन या लुन लोग वैश्य के वंशज माने जाते हैं। (द्रष्टव्य टिप्पणी जोन० राज० श्लोक १७६ १७७ २५२)।

पाठ टिप्पणी

बम्बई संस्करण का ६९वाँ तथा कलकत्ता संस्करण का उक्त श्लोक २८३वीं पंक्ति है। 'चार' के स्थान पर बम्बई का जार पाठ रखा गया है। स्ताश्यन पाठ सन्दिग्ध है।

७० (१) जार उपपति = प्रेमी = आशिक विवाहित स्त्री जिस पुरुष के साथ प्रेम या अनुचित सम्बन्ध करती है उस पुरुष को जार कहते हैं। परायी स्त्री से सम्बन्ध रखने वाला पुरुष जार कहा जाता है—रथकार सेवका भार्या सजारा शिरसा वहन—पंचतन्त्र = ४ ५४। जार कृत शब्द का तात्पर्य विचारणीय है। जार के पास रहने वाली कभी की आचरणवान स्त्री से तात्पर्य है जो जार के पास स्त्रीवत् बन जाती है।

तत्तद्विनिग्रहस्थानसावधानमतिस्तदा ।
स तार्किक इवात्युग्रो राष्ट्रियैर्दुर्जयोऽभवत् ॥ ७१ ॥

७१ उस समय, अति उग्र वह तत् तत् विनिग्रह[1] स्थानो पर, सावधान मति होकर, तार्किक की तरह, राष्ट्रियो के लिए दुर्जय हो गया।

जायास्नुषादुहित्राद्या मन्या येष्वभवन् गृहे ।
बलात् प्रविश्य संभुक्ता निर्लज्जैस्तस्य सेवकैः ॥ ७२ ॥

७२ जिसके गृह मे सुन्दर स्त्री, बहन, बेटी आदि थी, बलात् प्रवेश करके, उसके निर्लज्ज सेवको ने भोग किया।

समण्डमत्स्यं कुण्डैस्ते पीत्वा शुण्डान्तरे मधु ।
भाण्डा इव मदोच्चण्डाः श्वासैर्भाण्डमवादयन् ॥ ७३ ॥

७३. वे मधुशाला मे मण्ड[1], मत्स्य सहित कुण्डो (प्यालो) से मधु पीकर, भाड[2] के समान मद से उदण्ड होकर, श्वासो से भाण्ड बजाने लगे।

तण्डुलाश्च कुशूलेभ्यः शालाभ्यः पीनबर्कराः ।
वीटिकाभ्यः स्वयं मद्यं भुक्तं तैर्बलकारिभिः ॥ ७४ ॥

७४. बखारो से चावलो को, घरो से पुष्ट बकरो को, वीटिकाओ से मद्य को लेकर, उन बलकारियो ने स्वय भोग किया।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ७०वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८४वी पंक्ति है।

७१. (१) विनिग्रह विनिग्रह का अर्थ नियन्त्रण, दमन, पारस्परिक विरोध है। जहाँ-जहाँ से लोगों को पकडा जा सकता है, राजनीतिक दृष्टि है। यह अर्थ यहाँ अभिप्रेत है जहाँ दुर्बल स्थल होता है, वही राजा सर्वप्रथम अपना प्रभाव स्थापित करता है।

पाद-टिप्पणी .

बम्बई का ७१वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८५वी पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी .

बम्बई का ७२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता का २८६ वी पंक्ति है।

७३ (१) मण्ड : उबले चावल को पसाकर माड़ निकाला जाता है। उसे भाण्ड या माड़ कहते है। मण्ड का अर्थ खीची हुई शराब भी होता है।

(२) भाण्ड = भाड़ शब्द का प्रयोग संस्कृत में भी सुदूर पन्द्रहवी शताब्दी से होने लगा था। पुरुष नाचने-गाने तथा उत्सवों पर नाटक करने वाले होते है। इन्हें उत्तर भारत में भाँड कहा जाता है। अर्ध शताब्दी पूर्व भाडो की जाति मुसलमान थी, वे भड़ैती पेशा करते थे, परन्तु अब सभी जाति के लोग भाड का काम करते है। कुछ दिन पूर्व लखनऊ के भाड प्रसिद्ध थे। श्रीवर ने भाण्डपति शब्द का उल्लेख किया है। परन्तु यहाँ भाड़ों का मालिक अर्थ अभिप्रेत नही है। वह मद्य का विशेष है एक पद है (क० व० २०५, हो० २०३)।

पाट-टिप्पणी .

७४. बम्बई का ७३वाँ श्लोक तथा कलकत्ता का २८७ वी पंक्ति है।

पाठ-बम्बई।

सेवकानौचिती तस्य कियती वर्ण्यते मया ।
ये स्वमूर्धनि वास्तव्यान् घृताभ्यङ्गमकारयन् ॥ ७५ ॥

७५ उसके सेवको का अनौचित्य कितना वर्णन करूँ, जिन लोगो ने ग्रामीणो के शिर पर घी का लेप कराया।

हसन्तीरिव ज्वालाभिस्तैलपूर्णा हसन्तिका ।
तान् कारयित्वा ये दीपान् निशास्वज्वलयञ्शठाः ॥ ७६ ॥

७६ और जिन सठो ने रात्रि मे ज्वालाओ से हँसती हुई के समान, जिन्हे तैलपूर्ण हसन्तिका[१] बनाकर दीप जलाये थे—

इत्यादि कुत्सिताचार भारार्त इव भूपतिः ।
विज्ञप्त्योद्वेजितो लोकैर्निर्गन्तु नाशकद् गृहात् ॥ ७७ ॥

७७. इत्यादि कुत्सित आचार को जानकर, भारपीडित के समान, राजा उद्वेजित हुआ और घर से (लोगो के कारण) बाहर निकल नही सका।

पीडां मा कुरुतेत्यादि राजदूते ब्रुवत्यमी ।
अवोचन्निति तद्भृत्या राजा क्रन्दतु पीडितः ॥ ७८ ॥

७८ 'पीडा मत दो'—इस प्रकार राजदूत के कहने पर, उसके (आदम खाँ के) भृत्यो ने इस प्रकार कहा—[१]

पाद टिप्पणी

७५ बम्बई ७४वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८८वी पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ७५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २८९वी पंक्ति है।

७६ (१) हसन्तिका कागडी।

पाद-टिप्पणी

७७ बम्बई का ७६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९०वी पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ७७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९१वी पंक्ति है।

७८ (१) पीर हसन लिखता है—फरियादी लोग बादशाह की खिदमत में आकर फिरयादी हुए। बादशाह हुक्म उसे देता था, आदम खाँ उससे बिल्कुल कबूल न करता था (पृष्ठ १८४)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—आदम खाँ ने किमराज। (कामराज) की विलायत पर अधिकार जमाकर नाना प्रकार के अत्याचार प्रारम्भ कर दिये और बहुत से लोग उसके अत्याचारो से पीडित होकर सुल्तान की सेवा में न्याय की याचना करने पहुँचे। सुलतान की ओर से जो फरमान उसके पास पहुँचते थे वह उसे स्वीकार न करता था (४४३–६६६)।

फिरिश्ता लिखता है—गुजरज (क्रमराज्य) की जनता आदम खाँ के अत्याचार से पीडित हो उठी। जनता ने श्रीनगर में सुल्तान के सम्मुख शिकायत की, सुलतान ने लगातार उसके पास अत्याचार से विरत होने के लिये सन्देश भेजा (४७२)।

वैरं यो गुरुभिः करोति सतत पुण्णात्यल दुर्जनॉ-
ल्लोभात् सचयमातनोत्यनुदिन तद्दानभोगोज्झितः ।
दीनान् ग्राम्यजनांश्च पीडयति यो निर्हेतुमत्याक्षिप-
स्तस्यासन्नविनाशिनः स्वविभवस्तापाय शापाय वा ।। ७९ ।।

७९ पीडित होकर राजा क्रन्दन करे, जो गुरुओ से बैर करता है, दान, भोग त्यागकर लोभवश अनुदिन सचय करता है अकारण आक्षेप करता हुआ, दीन ग्रामीण जनो को पीडित करता है, ऐसे उस आसन्न विनाशी का अपना विभव ताप अथवा शाप के लिए होता है ।

कुर्वन् स्वसैन्यसामग्रीं कुद्देनपुरे स्थितः ।
एकदा जैननगरे भूपाल सबलोऽभ्यगात् ।। ८० ।।

८० कुद्देनपुर[१] मे स्थित रहकर अपनी सैन्य सामग्री सग्रह करते हुए, एक वार वह सेना सहित जैननगर मे भूपाल के पास गया ।

तद्दिने शङ्कितस्तस्मात् पूर्णकर्णो दुरुक्तिभिः ।
स्वसैन्यसग्रहं राजा राजधान्यां गतोऽकरोत् ।। ८१ ।।

८१ उस दिन शकित तथा दुरुक्तियो से पूर्ण कर्ण[१] होकर, राजा राजधानी मे जाकर अपना सैन्य सग्रह किया ।

पाद टिप्पणी

७९ बम्बई का ७८वा श्लोक तथा कलकत्ता की २९२वी तथा २९३वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी :

उक्त श्लोक बम्बई सस्करण का ७९वा श्लोक तथा कलकत्ता सस्करण की २९४वी पक्ति है ।

८० (१) कुद्देनपुर कुतुबुद्दीनपुर, सुलतान कुतुबुद्दीन ने अपने नाम पर बसाया था (जोन ५२७)। इस समय इस स्थान पर श्रीनगर के दो महल्ले लगरहट्टा तथा पीर. हाजी मुहम्मद स्थित है। सुल्तान अपने निर्मित कुतुबुद्दीन नगर में दफन किया गया था। उसकी कब्र पीर हाजी मुहम्मद की जियारत के समीप है। वह इस समय राजकीय रक्षित स्थान है। झेलम के पाँचवें तथा छठें पुल के मध्य स्थित है।

पीर हसन लिखता है—बिल आखिर आदम खाँ ने कुतुबुद्दीनपुर में मुकीम होकर अलम बगावत बुलन्द कर दिया और बहुत से फौज अपने इर्द गिर्द जमाकर दिये। सुल्तान को बडी दहशत हुई (पृष्ठ १८४)।

(२) जैननगर = आदम खाँ ने कुतुबुद्दीनपुर सैन्य सहित कर जैनगिर पर स्थित अपने पिता सुल्तान पर आक्रमण करने की योजना बनायी और जैनगिर आया (म्युनिख पाण्डु० ७५ बी०)। द्र० १ ७ १६२ हो० ब० १६३, क० ६८९।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—वह एक बहुत बडी सेना एकत्र करके, सुल्तान पर आक्रमण करने के लिये पहुँचा और कुतुबुद्दीनपुर में पडाव किया (४४३ = ६६६)।

फिरिश्ता लिखता है—आदम खाँ ने सुल्तान की वातो पर ध्यान नही दिया और कुतुबुद्दीनपुर में सना सग्रह किया। उसने राजधानी पर आक्रमण करने की योजना बनायी (४७२)।

पाद टिप्पणी

८१ बम्बई ८० वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९४ वी पक्ति है।

(१) कर्ण यहाँ यह शब्द श्लिष्ट है। कर्ण

वितस्तान्तर्वसद्दारुशैलपूर्णचतुर्गृहम् ।
तरदायामपङ्क्त्यश्वदशक नगरान्तरे ॥ ८२ ॥

८२ नगर मे वितस्ता के मध्य बसने वाले काष्ट एव शैल से पूर्ण, चतुर्गृह से युक्त, तरद (पार करने वाले) पंक्तिबद्ध दश अश्वो की चौडाई से युक्त—

सेतुबन्ध व्यधाज्जैनकदलाख्यमयं नृपः ।
स्वकृत त तदाज्ञासीत् स्वविघ्नमिव भीतिदम् ॥ ८३ ॥

८३ जैन कदल नामक सेतुबन्ध को इस राजा ने बनवाया। उस समय स्वकृत उसे अपने विघ्न के समान भयप्रद जाना।

नगरोपप्लवाशङ्की सत्रस्तो यत्नमास्थितः ।
पुरान्निष्कासयामास त सुत मन्त्रयुक्तिभि ॥ ८४ ॥

८४ नगर मे उपद्रव की आशका से सन्त्रस्त उसने यत्नपूर्वक मन्त्र[१] युक्तियो से, उस पुत्र को नगर से निकलवा दिया।

का अर्थ महारथी कर्ण तथा सुनना दोनो है। कर्ण दुरुक्तियों से पूर्ण होकर युद्धभूमि मे गया था। यहाँ सुल्तान का इतना कान भर दिया गया था कि वह उन दुरुक्तियों से प्रभावित होकर युद्ध की तयारी करने लगा।

पाद टिप्पणी

८२ बम्बई का ८१ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९५ वीं पंक्ति है।

पङ्क्त्यश्व का फारसी अर्थ दह सवार अर्थात् दश अश्वारोही लिया गया है।

पाद टिप्पणी

८३ बम्बई का ८२ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९६ वी पंक्ति है।

पाद टिप्पणी

८४ पाठ–बम्बई

बम्बई का ८३ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९७ वी पंक्ति है।

(१) मन्त्र = पीर हसन लिखता है—सुल्तान को दहशत पैदा हुई इस बिनापर उसे नरमी और मदारा से कामराज की तरफ भेज दिया (पृष्ठ १८४)।

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख मिलता है कि सुल्तान ने पुत्र समझा-बुझाकर उसे कामराज भेज दिया। आसन्न युद्ध की स्थिति समाप्त हो गयी (म्युनिख ७५ बी॰)।

तवक्काते अकबरी मे उल्लेख है—सुल्तान ने किसी न किसी युक्ति से उसको प्रोत्साहन देकर किमराज की विलायत की ओर पुन भेज दिया (४४३ = ६६६)।

फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान ने आदम खाँ को समझा-बुझाकर उसे गुजरात (क्रमराज्य) का सूबा देकर भेज दिया (४७२)।

संतापप्रदमुत्तरायणमिहालोच्यापि रम्यं गुणै-
र्यो वाञ्छत्यथ दक्षिणायनममुं ज्ञात्वा हिमार्तिप्रदम् ।
लोकानामसुखक्षयार्थमुभयोराद्यं पुनर्यो भज-
त्यर्थायैव परोपकारनिरतः सूर्याय तस्मै नमः ॥ ८५ ॥

८५ सन्तापप्रद उत्तरायण को गुणो से रम्य बनाकर, जो दक्षिणायन ग्रहण करता है, और उसे भी हिमार्तिप्रद शीतल जानकर, ससार का दुःख दूर करने के लिए ही दोनो अयनो का आश्रय लेता है, उस परोपकार-निरत सूर्य को नमस्कार है।

क्रमराज्यान्तरं प्राप्ते तस्मिन् द्वैराज्यशङ्कितः ।
स्वाक्षरैर्हाज्यखान स प्राहैषीत् पत्रमित्यदः ॥ ८६ ॥

८६ उसके क्रमराज्य[1] पहुचने पर, दो राज्य[2] की आशका से, उसने अपने स्वाक्षर युक्त यह पत्र[3] हाजी खाँ को भेजा—

पाद-टिप्पणी

८५ पाठ—बम्बई

बम्बई का ८४ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९८ वी पक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ८५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की २९९वी पक्ति है।

८६ (१) क्रमराज्य कमराज्य द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ४०।

(२) द्वैराज भारतीय शासन प्रणालियो में द्वैराज राजप्रणाली प्रसिद्ध है। मुख्यतया ६ प्रकार की शासन प्रणालियो का उल्लेख मिलता है—

(१) अराजक, (२) गण, (३) युवराज, (४) द्वैराज, (५) वैराज्य तथा (६) दलगत राज्य। दो राजाओ द्वारा जब शासन प्रणाली चलायी जाती है तो उसे द्वैराज कहते थे। यूनान के स्पार्टा प्रदेश में द्वैराज शासन प्रणाली प्रचलित थी। इसी प्रकार रोम में दो कोन्सल होते थे। कौटिल्य ने वैराज्य शासन प्रणाली प्रसग में द्वैराज का विवेचन किया है। कौटिल्य (अर्थ ८ २) के मत से इस प्रकार की शासन प्रणाली घातक सिद्ध होती है—

'द्वैराज्यवैराज्यो द्वैराज्यमन्योन्य पक्षद्वेषानुरागाभ्या परस्पर सघर्षेण वा विनश्यति।' अवन्ती में इस प्रकार की शासन-प्रणाली एक समय प्रचलित थी। वहाँ विंद एव अनुविंद दो राजाओ का राज्य था। छठी तथा सातवी शताब्दी ई० नेपाल में इस प्रकार की शासन-प्रणाली प्रचलित थी। नेपाल के दोनो राजवशों में कोई रक्त सबध नही था। दोनो वश किसी एक पूर्वज की सन्तान नही थे।

शक एव कुषाण राजाओं ने द्वैराज की शासन प्रणाली चलायी थी। उसमे राजा एव युवराज सयुक्त शासन करते थे। उनमें स्पलिराजेश—अझेस, हगान—हगामष, गोडोफर—गड तथा कनिष्क द्वितीय—हुविष्क के युग्म इस प्रकार के द्वैराज के उदाहरण है। पश्चिम भारत में क्षत्रपो के राज्य में पिता-पुत्र एक साथ राज्य करते थे। दोनों के नाम से मुद्रायें भी टकणित होती थी। पिता महाक्षत्रप की उपाधि धारण करता था। तथा पुत्र क्षत्रप कहा जाता था। सिकन्दर के भारत-आक्रमण-काल में पाटल राज्य (सिन्ध) में पृथक् दो वश के राजाओ का सयुक्त शासन चलता था (मैक-क्रिण्डल इनवेशन ऑफ इण्डिया बाई अलेक्जेंडर ए ग्रेट (पृष्ठ २९६)।

पुत्र मेऽवसरो दुष्टस्तादृक् प्राप्तो दुरुत्तरः ।
यत्र मत्प्राणसंदेहे गतिर्नान्या त्वया विना ॥ ८७ ॥

८७ 'हे ! पुत्र !! मेरा बुरा समय है और वैसा ही दुस्तर प्राप्त हुआ है, जिससे मेरा जीवन सन्देहात्मक स्थिति में है । तुम्हारे बिना दूसरी गति नहीं है ।

मत्पत्रावेक्षणे युक्तं शयितस्य तवासनम् ।
आसीनस्य समुत्थानमुत्थितस्य च धावनम् ॥ ८८ ॥

८८ 'मेरा पत्र देखने के समय सोये हुए तुम्हारा उठना तथा बैठे हुए का उठना उठे का दौड़ना उचित है ।

किमन्यत् सत्यमेवोक्तं त्यक्त्वापि श्रुतयन्त्रणाम् ।
यद्यागच्छसि तत् तूर्णं पूर्णं प्राप्स्यसि वाञ्छितम् ॥ ८९ ॥

८९ 'दूसरा क्या कहूँ ? सत्य ही (मैंने) कह दिया है । श्रुति यन्त्रणा त्यागकर, यदि शीघ्र आवोगे, तो अपना वाञ्छित पूर्ण पावोगे ।

कौटिल्य इस राज्य प्रणाली का विरोधी है । विदर्भ में दो गों द्वारा स्थापित इस प्रकार का राज्य नष्ट हो गया था (मालविकाग्निमित्र ५ १३) ।

श्रीलंका में दो दामल भ्राता सेन तथा गतक श्रीलंका का राज्य पाया था । एक साथ राज्य करना आरम्भ किय । किन्तु बाईस वर्षों के पश्चात ही राज्य समाप्त हो गया (महावंश० २१ १०-१२) ।

जैनुल आबदीन द्वैराज्य किंवा द्वैध शासन की बुराई से सतर्क था । वह देख रहा था कि या तो काश्मीर में दोनों भाइयों का दो राज्य स्थापित होकर काश्मीर विभाजित होकर शक्तिहीन हो जायगा अथवा बाध्य होकर उसे अपने किसी एक पुत्र के साथ राज्य करना होगा । तत्कालीन मुसलिम राज्यों की नीति देखते हुए उसके लिये खतरे से खाली नहीं था ।

(३) पत्र पीर हसन लिखता है— हाजी खाँ को सुल्तान ने खुफिया तौर पर पैगाम भेज दिया कि वह फौरन अपनी जमीअत लेकर दाखिल खलीफा पहुँचे (पृ० १८४) ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है— सुल्तान ने हाजी खाँ को शीघ्रातिशीघ्र बुलाया (४४३) ।'

फिरिश्ता लिखता है— आदम खाँ के वहाँ (क्रमराज्य) जाने पर आदम खाँ इस बात से अपमानित हुआ कि सुल्तान ने उसके निष्कासित अनुज हाजी खाँ को बुलवाया (४७२) ।

पाद टिप्पणी

८७ बम्बई का ८६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३००वीं पंक्ति है ।

पाद टिप्पणी

८८ बम्बई का ८७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०१वीं पंक्ति है ।

पाद टिप्पणी

८९ बम्बई का ८८वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०१वीं पंक्ति है । कलकत्ता के 'क्तं' के स्थान पर 'क्त' रखा गया है ।

अतितूर्णं न चेत् प्राप्तो मयि जीवति विह्वले ।
गते मयि मदभ्यर्णं पुनरागमनेन किम् ।। ९० ।।

९० 'यदि विह्वल मेरे जीवित रहते अति शीघ्र नही आवोगे, तो मेरे चले (मर) जानेपर, पुन मेरे निकट आने स क्या लाभ होगा ?'

तावत् सुय्यपुरं प्राप्तः सोऽभूत् तीर्णो नृपात्मजः ।
राजानीकैः सम युद्धमुद्धतं सबलो व्यधात् ।। ९१ ।।

९१ जैसे ही वह सबल राजपुत्र सुय्यपुर[१] पहुँचकर अग्रसर हुआ, राज सेना के साथ उद्धत युद्ध किया ।

पाद-टिप्पणी

९० बम्बई का ८९वा श्लोक तथा कलकत्ता की २०३वीं पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

श्रीस्तीन ने 'सूय्यपुर' ही नाम दिया है । 'सुय्य' पाठ स्वीकार किया गया है ।

बम्बई का ९०वां श्लोक तथा कलकत्ता की २०४वी पक्ति है ।

९१ (१) सुय्यपुर कल्हण सुय्यपुर के निर्माण पर प्रकाश डालता है । कल्हण के अनुसार वितस्ता के दोनों तटों पर सुय्यपुर आबाद था, जो आज भी स्थित है । सन् १८९१ ई० में सुय्यपुर अर्थात सोपोर की आबादी आठ हजार थी । इस समय यहाँ आधुनिक नगर के सभी प्रसाधन उपलब्ध है । जैनुल आबदीन ने सन १४६० ई० में दोनों तटों की आबादी का सम्बन्धित करने के लिये पुल को बनवाया था । श्रीनगर बारहमूला राजपथ के मध्य बारहमूला से १० मिल पर स्थित है । सोपोर से श्रीनगर नाव द्वारा १४ घण्टा, बारहमूला ३॥ घण्टा में पहुचते हैं । गुलमर्ग सोपुर से १७ मिल दक्षिण-पश्चिम है । सोपुर से बादीपुर १६ मिल है । यहाँ एक किला भी था । पुल के नीचे नदी २८ फीट गहरी है । दक्षिण दिशा में एक शिव मन्दिर है । इसके सामने दूसरे तट पर एक मसजिद है । सन् १८८५ ई० के भूकम्प में किला गिर गया है । सोपोर में रणीचक ने किला निर्माण कराया था, वह भूचाल से गिर गया । सुय्यपुर उलर लेक के समीप है । इस समय तिजारत की बडी मण्डी है । यहाँ से टिटवाल, मन्छीपुर, हिन्दवारह, बान्दीपुर के लिये मार्ग जाते हैं । यहाँ पर कालेज तथा बालिका एव बालक विद्यालय भी है (द्रष्टव्य रा० ५ ११८, ८ ३१२८, जोन० ३४०, ८६८, शुक० १ ८०, ९१) ।

पीर हसन लिखता है—हाजी खाँ ने पैगाम पाते ही कूच करके, कसबा सोपार में आकर क़याम किया (पृ० १८४) ।

तवक्काते अकबरी मे उल्लेख मिलता है—'आदम खाँ किमराज (कामराज) पहुँच कर, अविलम्ब वहाँ से निकला और सोयापुर (सुय्यपुर) पर उसने आक्रमण किया । वहाँ का हाकिम, जो सुलतान के पूव से ही वहाँ के अधिकार में था, निकल कर युद्ध किया और मारा गया (४४४ = ६६७) ।' श्रीवर हाकिम का नाम नरथभट्ट देता है ।

फिरिश्ता लिखता है—उस मदद देने के स्थान पर हाजी खाँ ने भाई (आदम खाँ) पर आक्रमण कर दिया । हाजी खाँ शीवपुर (सोपोर) म पराजित हो गया । जिसे आदम खाँ ने नष्ट कर दिया । इस समाचार के मिलते ही सुल्तान ने अपनी सम्पूर्ण सेना आदम खाँ पर आक्रमण करने के लिये भेजा (४७३) ।

राष्ट्राधिकारिणं तत्र नत्थभट्टं भटैः मह ।
हत्वा कृत्वा च कदन देशोत्पिञ्ज क्रुधा व्यधात् ॥ ९२ ॥

९२ वहाँ पर क्रोध से भटो के साथ राष्ट्राधिकारी नत्थभट्ट को मारकर तथा विनाश कर के, देश म उत्पिंज[1] उपद्रव किया।

अथोदतिष्ठत् तुमुलस्तत्कालं सैन्ययोर्द्वयोः ।
उन्नद्धखानसन्नद्धयुद्धेक्षणदुःसहः ॥ ९३ ॥

९३ उन्नद्ध खाँ के सन्नद्ध युद्ध के कारण देखने मे दु सह तुमुल उठा।

अष्टाविंशाब्दवदस्मिन् पञ्चत्रिंशेऽपि वत्सरे ।
वैरं नीत्वा पितापुत्रौ पिशुनैः कारितो वधः ॥ ९४ ॥

९४ अट्ठाइसवे[1] वर्ष के समान उस पैंतीसवें[2] वर्ष भी पिशुनो ने पिता-पुत्र मे वैरभाव उत्पन्न करके वध कराया।

तत्रत्या दरदा वान्ये परितः सरितो जले ।
ममज्जुस्तद्भयाद् येन शवपूर्णमभूत् सरः ॥ ९५ ॥

९५ उसके भय से वहाँ के दरद[1] या अन्य जन चारो ओर से नदी जल मे डूब गये। जिससे सर शवपूर्ण हो गया।

पाद-टिप्पणी :

पाठ बम्बई। कलकत्ता संस्करण में यह श्लोक नही है। किन्तु बम्बई में है। अतएव इसे रखा गया है। बम्बई का ९१वाँ श्लोक है।

९२. (१) उत्पिञ्ज पीर हसन लिखता है—आदम खाँ ने उसे जग में शिकस्त देकर, सोपोर लूट लिया (पृ० १८४)।

म्युनिख पाण्डुलिपि म उल्लेख है कि हाजी खाँ के पहुँचने के पूर्व आदम खाँ ने सोपोर पर आक्रमण किया। वहाँ के अधिकारी ने आदम खाँ का सामना किया परन्तु आदम खाँ द्वारा वह मारा गया और आदम खाँ ने नगर को लूट लिया। श्रीवर तथा म्युनिख पाण्डुलिपि को मिलाकर पढ़ने से यही निष्कर्ष निकलता है कि नत्थभट्ट सोपोर का हाकिम था वह प्रतिरोध करते मारा गया था (म्युनिख पाण्डु० ७५बी०, तवक्काते अकबरी ३ ४४४)।

तवक्काते अकबरी भी यही लिखती है—समस्त नगर नष्ट-भ्रष्ट हो गया (४४४)।

फिरिश्ता लिखता है—'घोर युद्ध हुआ। युद्ध में आदम खाँ पराजित हो गया। उसके बहुत वीर सैनिक पीछे हटते हुए मार डाले गये' (४७३)।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ९२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०५वी पंक्ति है।

पाद टिप्पणी

९४ बम्बई का ९३ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०६ वी पंक्ति है।

(१) अट्ठाइसवें = सप्तर्षि ४५२८ = सन् १४५२ ई० = सम्वत् विक्रमी, १५०९ = शक सम्वत १३७४।

(२) पैंतीसवें = सप्तर्षि ४५३५ = सन् १४५९ ई० = विक्रमी १५१७ = शक सम्वत् १३८२।

पाद-टिप्पणी

९५ बम्बई का ९४ वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०७ पंक्ति है।

(१) दरद दारद-दरद देश का वर्णन ने

हत्वा मृत्युरिवात्युग्रांतद्दिने नृशतत्रयीम् ।
नौसेतुबन्धमुच्छिद्य नदीपारं समासदत् ।। ९६ ।।

९६ उस दिन मृत्यु सदृश वह अत्युग्र तीन सौ मनुष्यो को मारकर तथा नाव के सेतु[1] का उच्छेद कर, नदी पार पहुँच गया।

बहुत उल्लेख किया है। (रा० १ ९३, ३०७, ३१२, ५ १५२, ७ ११९, १६७, १७१, १७४, १७६,३७५, ९११,११७१, ११७३, ११७४,११८१, ११८५, ११९५, ११९७, ८ २०१, २०९, २११, ११३०, २४५४, २५१९, २५३८, २७०९, २७६४, २७६५, २७७१, २७७५, २८४२-९७, ३४०१, ३०४७) । प्राचीन भारतीय साहित्य एव ऐतिहासिक ग्रन्थों में दरदो का एक देश एव जाति दोनो रूपो में बहुत उल्लेख मिलता है। दरद का अर्थ पर्वत होता है। दरद जाति पर्वतीय है। उनका समस्त प्रदेश पर्वतों के मध्य है। कृष्णगगा के ऊर्ध्वभागीय उपत्यका एव उत्तरीय काश्मीर में दरदो का देश था। उसे आज भी दर्दिस्तान कहते है। दरदापुर किंवा दरदपुरी वहाँ का नगर है। दरदक्षेत्र को दरस भी कहते हैं। दरदिस्तान पामीर के दक्षिण है। दारदिक एव पैशाची भाषा को आर्य भाषा की एक शाखा माना गया है। एक मत है कि दरदी भाषा इरानी तथा फारसी के मध्य की भाषा है। भारत में दरद को एक जाति माना गया है। पूर्वकाल में वे क्षत्रिय थे। कालान्तर में ब्राह्मणो के कोप के कारण शूद्र हो गये। इस समय सभी मुसलमान है। द्रष्टव्य रा० भाग १ परिशिष्ट 'ध'।

बौद्ध ग्रथ ललितविस्तर से ज्ञात होता है कि दरदों की लिपि ६४ लिपियो में से एक थी। दरद भाषा के क्षेत्र पामीर, प्लेटो तथा पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के मध्य हैं। यह क्षेत्र पजाब के पश्चिम-उत्तर है। दरद भाषा पश्तू एव पश्तो भाषा के समान फारसी एव भारतीय भाषा के मध्य स्थिति मानी गई है। पश्तो, फारसी की ओर झुकी है। परन्तु दरद भारतीय भाषा की ओर झुकी है। उसका मुख्य कारण है कि सस्कृत भाषा-भाषी क्षेत्रों के सीमावर्ती अचल में दरद जाति निवास करती थी। काश्मीर की भाषा सस्कृत थी। सीमात पश्चिमोत्तर प्रदेश में सस्कृत भाषा का प्रसार था। अतएव सस्कृत का दरद भाषा पर प्रभाव पडना स्वाभाविक है। प्राचीन विद्वान दरद भाषा को सस्कृत भाषा की शाखा मानते थे। उसे पैशाची प्राकृत कहते थे। दरद भाषा के ही अतर्गत खोवार, किंवा चित्राली आदि, काफिरिस्तान की बोलियाँ आती हैं। काफिरिस्तान की भाषा में बशगली, वइगला, वसिवेरी, अशकुन्द, कलाशाप, शादी बोलियाँ आ आती है। शीना भाषा भी दरद के अन्तर्गत आती है। शीना की ही बहुत गिलगिती भाषा है। इसी भाषा के अन्तर्गत भाषाविद् कोहिस्तानी, मैया, तोरवाली, गार्वी एव अश्कुन्द रखते है।

दरद जाति मूलत आर्य है। इस समय दर्दिस्तान में कोई हिन्दू नही है। सभी मुसलमान है। वे काश्मीर के उत्तर पर्वतीय क्षेत्रो में रहते है। तिब्बती बालती लोग उनके पडोसी है। पूर्व दिशा में ल्हाखी और पश्चिम में अफगानी या पठान आबाद है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ९५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०८वी पंक्ति है।

९६ (१) सेतु यहाँ सुय्यपुर में वितस्ता पर बना पुल अभिप्रेत है। पीर हसन लिखता है—आदम खाँ के बहुत से सिपाही काम आये। और वह शिकस्त खा गया। दौरान हजीमत (पराजय) में ज्योंही कि वह सोपोर के पुल से गुजर रहा था कि अचानक पुल टूट गया और उसके तीन सौ बहादुर लुकमा नजल हो गये (पृष्ठ १८४)।

घिक् तं यः पैतृके देशे रक्षणीयेऽपि निष्कृपः ।
परदेशजयं त्यक्त्वा तादृङ् निन्द्यं समाचरत् ॥ ९७ ॥

९७ उसे धिक्कार है जो, कि रक्षणीय भी पैतृक देश के प्रति निर्दय हो गया। पर-देश का जय त्याग कर, उस प्रकार का निन्दनीय कृत्य किया।

पापास्ते शिखजादाद्याः गृहीत्वोभयवेतनम् ।
भूपमुद्वेजयामासुः फलं यैरनुभूयते ॥ ९८ ॥

९८ शिखजादा[1] आदि उन पापियो ने दोनो तरफ से वेतन ग्रहण कर, राजा को उद्वेजित किया और जिन लोगो ने फल का भी अनुभव कर लिया।

तबक़ाते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान ने समाचार पाकर बहुत बड़ी सेना आदम खाँ के विरुद्ध भेजी। घोर युद्ध हुआ। दोनों सेनाओं के बहुत लोग मारे गये। आदम खाँ पराजित हो गया। सोपापुर (सुय्यपुर-सोपोर) का पुल जो बहुत (वितस्ता-झेलम) नदी के ऊपर तैयार किया गया था टूट गया, तो आदम खाँ के लगभग ३०० आदमी भागते समय डूब गये (४४४-६६६)।

फिरिश्ता लिखता है—वे सैनिक जो (सोपूर) सापोर के नगर में भाग गये थे, उनमें ३०० सैनिक बेहुत (वितस्ता-झेलम) में डूब मरे (४७१)।

तबक़ाते अकबरी में स्थान का नाम 'मह' तथा 'मह' पाण्डुलिपियों में दिया गया है। लीथो संस्करण में नाम 'बजह' तथा फिरिश्ता ने 'पजह' दिया है।

कर्नल ब्रिग्गस रोजर्स अथवा कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में स्थान के नाम का उल्लेख नहीं है (३ : ४४४=६६७)।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ९६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३०९वीं पंक्ति है।

पाद टिप्पणी

बम्बई का ९७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१०वीं पंक्ति है।

९८ (१) शिख : एक मत है कि यह शब्द शिकदार है। परगनों के हाकिम को शिकदार कहते थे (फिरिश्ता तथा तारीख हसन पाण्डु० २ फो० ९६ ए०)। शिकदार लोग परगनों के हाकिम थे। (फिरिश्ता ६५७ तथा तारीखे हसन पाण्डु० ९६ ए०।) शाब्दिक अर्थ शीखजादा अर्थात् शीखों के पुत्र होता है। नवाबजादा आदि के समान शीखजादा शब्द प्रकट होता है। पंजाब में परगना से नीचे का स्थान 'शिक' था। इसे कस्बा भी कहते थे। पंजाब में शिक तथा 'सदी' शब्दों का प्रयोग मिलता है। अमीर एसद का ओहदा तहसीलदार के समान था। सुल्तानों के समय पंजाब में 'शिक' (अकबाद) तत्पश्चात् 'सदीना' अर्थात् सब डिवीजन या प्रखण्ड था। प्रत्येक 'सदीना' पुनः १०० गाँवों के समूह 'सदी' या परगनों में विभाजित थे। शिक का शासक 'आमिल', 'नाजिम' या 'शिकदार' कहा जाता था (पंजाब अण्डर सुल्तान्स सिज्जर : पृ० १०३-१०४, द० १ : ३ : १०२, १०३, २ : ५१)।

उच्चः सत्फलदो यथायमहमप्येतादृगेतावता
स्पर्धा यावदियेष हन्त जनकेनैकेन मन्दः सुतः ।
भास्वानभ्युदितः स तावदतुल सर्वप्रकाशोद्यतो
यन्माहात्म्यवशेन वक्रगतयो ध्वस्ता भवन्ति स्वयम् ।। ९९ ।।

९९ जिस प्रकारर यह उन्नत एव सत्फलप्रद है, उसी प्रकार मुझे भी दु ख है कि जबतक इतनी स्पर्धा पिता से मन्द पुत्र ने की, तबतक सबके प्रकाश हेतु उद्यत, अतुलनीय सूय उदित हो गये, जिनके माहात्म्यवश कुटिलगामी स्वय ध्वस्त हो जाते है ।

तद्देशकष्टदैर्दुष्टैः प्रजानां नाशहेतुना ।
आदमखानो वित्राणो लक्ष्म्या भाग्यैश्च तत्यजे ।। १०० ।।

१०० आदम खाँन जो कि प्रजाओ के विनाश का हेतु था, उस देश के कष्टप्रद दुष्टो ने उस त्राण रहित को लक्ष्मी एव भाग्य से वचित कर दिया ।

ईत्यातङ्कादिभिर्दु खैर्वर देशेऽत्र जीव्यते ।
सर्वनाशकरी मास्तु भूभर्तुर्बह्वपत्यता ।। १०१ ।।

१०१ ईति[1], आतक आदि दु खो के साथ (रहकर) इस देश मे जीना अच्छा है किन्तु (देशमे) राजा के सर्वनाशकारी बहुत सन्तान[2] न हो ।

पाद-टिप्पणी

९९ बम्बई का ९८वा श्लोक तथा कलकत्ता की ३११वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

१०० बम्बई सस्करण का यह ९९वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१२वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १००वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१३वी पक्ति है ।

१०१ (१) ईति पीडा, दु ख, सकट, विपत्ति आदि से अर्थ अभिप्रेत है ।

(१) अतिवृष्टि, (२) अनावृष्टि, (३) टिड्डी, (४) चूहा, (५) तोता तथा (६) बाह्य आक्रमण आदि से देश पर ६ प्रकार की ईतियों का उल्लेख मिलता है—ईति ६ प्रकार की होती है—

अतिवृष्टिनावृष्टि शलभा मषका शुका
प्रत्यासन्नाश्च राजान षडेता ईतय स्मृता ।

सात ईतियों का भी उल्लेख मिलता है—

अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषिका शलभा खगा ।
प्रत्यासन्नाश्च राजान सप्तैता ईतय स्मृता ।।

ईति का अर्थ विप्लव भी होता है । ईतिर्डिम्ब-प्रवासयो (अमर० ३ ३ ९८) ।

तुलसीदास ने ईति का इसी अर्थ में प्रयोग किया है—

दशरथ राज न ईतिभय नहिं दु ख दुरित दुकाल ।
प्रमुदित प्रजा प्रसन्न सब सब सुख सदा सुकाल ।।

सूरदास ने भी इसी अर्थ में प्रयोग किया है—

अब राधे नाहिनँ ब्रजनीति ।
सखि बिनु मिलें तो ना बनि ऐहैं कठिन कुराज राज की ईति ।

कवि गोकुल ने भी लिखा है—

बसिनो ओर को वायु वहै यह सीत की ईति है बीस विसा मैं । राति बडी जुग सी न सिराति रह्यौ हिय पूरी दिगा विदिसा मैं । द्र० जैन० ४ ५२२ ।

सा चेत् तेषां स्वभेदो मा भूयाद् वैरात् परस्परम् ।
मा जायेताथ वा दुष्टः सुतः कस्यापि दुःखदः ॥ १०२ ॥

१०२ यदि राजा को बहुत सन्तान हो, तो परस्पर बैर से उनमें भेद न हो अथवा किसी को भी दु खद दुष्ट पुत्र उत्पन्न न हो।

प्रजान्तकारिणौ क्रूरौ राजपुत्रावुभावपि ।
सूर्यस्येव महीभर्तुः पङ्गुकालाविवोदितौ ॥ १०३ ॥

१०३ सूर्य के शनि[1] एव यम[2] के सदृश राजा के प्रजान्तकारी एव क्रूर दो पुत्र हुये।

अपकर्तॄन् विपन्मग्नान् दयमानः परानपि ।
क्षमी दाता गुणग्राही स्वामीदृग् लभ्यते कथम् ॥ १०४ ॥

१०४ अपकारी विपत्तिमग्न शत्रुओं पर भी दयालु, क्षमाशील, दाता, गुणग्राही ऐसा स्वामी कैसे (कहाँ) प्राप्त होता है ?

व्यथितो यत् सुतैर्दुष्टैः सोऽस्माद्भाग्यविपर्ययः ।
शृण्वन् स रुदिताक्रन्दमिति पौरगिरः पथि ।
पाददाहव्यथार्तोऽपि नगरान्निरगान्नृपः ॥ १०५ ॥

१०५ दुष्ट पुत्रों से, जो वह व्यथित हुआ, यह हमलोगों का भाग्य विपर्यय[1] ही है—इस प्रकार मार्ग में रुदन एवं क्रन्दनपूर्वक पुरवासियों की वाणी सुनकर, पाददाह की व्यथा से पीडित भी नृप नगर से निकल पडा।

---

(२) सन्तान मुसलिम राज्यवशों में बहु-सन्तान सर्वदा अभिशाप रहा है। पारस्परिक संघर्षों के कारण विश्व इतिहास अति रक्तरंजित है।

पाद-टिप्पणी

१०२ बम्बई का १०१वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१४वीं पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १०२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१५वीं पंक्ति है।

१०३ (१) शनि सूर्य का पुत्र जिसने छाया के गर्भ से जन्म लिया था। इसका वर्ण काला तथा वाहन गृद्ध है। अशुभ फलदायक ग्रह माना गया है। फलित ज्योतिष के अनुसार शनि की दशा होने पर मनुष्य बहुत परीशान और विपन्न तथा अस्थिर हो जाता है। प्रबल ग्रह है। द्र० जैन० १ १ १९, २ २७।

(२) यम वैदिक काल में मृत्यु के देवता माने गये है। यम एव यमी भाई-बहन एव सूर्य के पुत्र थे (ऋ० १ १६४ ४)। सबसे पहले मरने वाले व्यक्ति यम थ (अथर्व० १८ ३ १३)।

पाद-टिप्पणी :

१०४ बम्बई का १०३वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१६वीं पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १०४वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१७वीं पंक्ति है।

१०५ (१) भाग्य विपर्यय . जोनराज ने भी

पुत्रोत्पत्तिमवेक्ष्य तुष्यति नृपो वोढा धुरः स्यादिति
स्नेहात् संपदमस्य यच्छति निजामुल्लङ्घ्य नीतिक्रमम्।
ज्ञात्वा तं बलवन्तमात्मसदृश तादृग् भिया शङ्कते
येनासन्नसुखो न जातु लभते निद्रां सचिन्ताज्वरः ॥ १०६ ॥

१०६ 'पुत्रोत्पत्ति से नृप प्रसन्न होता है कि राजभार का वहन करने वाला होगा। स्नेह से नीतिक्रम का उल्लंघन करके, अपनी सम्पत्ति उसे दे देता है। पश्चात् अपने समान बलवान जानकर भय से इस प्रकार शङ्कित होता है कि सुख समीप होने पर भी, वह चिन्ताज्वरग्रस्त होकर, कभी निद्रा नहीं प्राप्त करता।

बद्ध्वा मल्लिकजसरथेन स यदा राजालिशाहिर्हतो
भ्रातृद्वेषवशाद् बभूव कदन काश्मीरिकाणां महत्।
तद्वज्जैनमहीभुजोऽस्य तनयद्वेषात् किमालोक्यते
तन्मा भूद् बहुसन्ततिर्नृपगृहे देशे विनाशप्रदा ॥ १०७ ॥

१०७ 'जब मलिक जसरथ[1] द्वारा बाँध कर राजा अलीशाह[2] मारा डाला गया। भ्रातृ-द्वेषवश काश्मीरियों का महान विनाश हुआ। उसी प्रकार पुत्र द्वेष के कारण इस जैन राजा का देखा जा रहा है। अतएव देश मे नृपति के घर विनाशकारी बहुत सन्तति न हो।'

भाग्य विपर्यय का उल्लेख (जोन० ५९७) किया है। काश्मीर में हिन्दू लेखक वहाँ की स्थिति देखकर नैराश्य हो गये थे। उन्हें आशा नहीं रह गयी थी कि कभी हिन्दुओं के हाथ में शक्ति आयेगी अथवा उनकी स्थिति सुधरेगी। निराश व्यक्ति भाग्यवादी हो जाता है। कल्हण भी कर्मवाद का प्रतिपादन करते, भाग्यवादी बन जाता है। शुभाशुभ कर्मों एव उनके परिणामो में दृढ विश्वास करने लगता है। जोनराज का आदर्श कल्हण था। कल्हण का अनुकरण करता जोनराज अपनी राजतरगिणी लिख रहा था। जोनराज का शिष्य श्रीवर था अतएव श्रीवर अपने गुरु के सिद्धान्त से विरत नही हो सका (रा० १ ३२५, २ ४५, ४ ६२०)। श्रीवर भाग्य विपर्यय का पुन उल्लेख १ ७ २१५, २ ४१ में करता है। द्र० धर्मशास्त्र का इतिहास काणे पृ० ६५८ हिन्दी।

(२) नगर : श्रीनगर=पीरहसन लिखता है—'दूसरे दिन सुल्तान ने बडी भारी फौज के साथ सोपोर के तरफ कूच किया (पृ० १८४)।'

पाद-टिप्पणी

१०६ बम्बई का १०५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१८वीं पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

बम्बई का १०६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३१९वीं पंक्ति है।

१०७ (१) जसरथ द्रष्टव्य टिप्पणी जोन-राजतरगिणी श्लोक : ७३२, ७३६, ७८५, ८५८, जैन राज० १ ७ ६४, ४ १५७। जसरथ खुक्खर सरदार था। उसका सम्बन्ध दिल्ली सुल्तानों से अच्छा नही था। खुक्खरो की लूटपाट की आदत थी। वे सीमावर्ती या समीपवर्ती राज्यों में सर्वदा घुसकर, उत्पीडन तथा लुण्ठन करते थे। उनके सम्बन्ध में

इति मार्गे कथाः शृण्वन् ग्राम्याणां जैनभूपतिः ।
वधात् कुतनयं निन्दन् प्राप सुय्यपुरान्तरम् ॥ १०८ ॥

१०८ मार्ग में इस प्रकार ग्रामीणों की कथा सुनते हुए एवं वध करने के कारण कुपुत्र की निन्दा करते हुए, जैन भूपति सुय्यपुर[2] पहुंचा ।

तीरद्वये वितस्तायाः पितापुत्रबलद्वयम् ।
न्यवीविशत् समासन्नं परस्परजयोद्यतम् ॥ १०९ ॥

१०९. जय हेतु उद्यत एवं निकट आयी, पिता तथा पुत्र की दोनों सेनाएँ वितस्ता[1] के दोनों तटों पर पहुँची ।

अत्रान्तरे हाज्यखानः पर्णोत्सात् तूर्णमागतः ।
सुपर्ण इव सद्वर्णो देशाभ्यर्णं समासदत् ॥ ११० ॥

११० इसी बीच पर्णोत्स[1] से शीघ्र आकर, सुवर्ण सदृश सुन्दर वर्ण वाला हाजी खाँन देश के समीप पहुँचा ।

काश्मीरी में कहावत है—'लोग नाम यकुर' तथा 'खुकुर खुस' लोग मुत' । जसरथ ने जैनुल आबदीन की सहायता की थी । बदले में सुल्तान ने भी जसरथ की सहायता धनादि से दिल्ली के सुल्तानों के खिलाफ की थी । तवक्काते० ३ ४३५ तथा आइने० जरेट० २ २८८ । जसरथ सन् १४२३ ई० में लड़ता मारा गया था ।

(२) अलीशाह : द्रष्टव्य जोन० राजतरंगिणी श्लोक० २४७, २५०, २५६, ३३३-३३५, जैन० ३ २६५, ४ १४२ ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १०७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२०वीं पंक्ति है ।

१०८. (१) जैन सुल्तान जैनुल आबदीन ।

कलकत्ता के पाठ में स्वय्यपुर है उसे सुय्यपुर किया गया है ।

(२) सुय्यपुर सोपोर । फिरिश्ता लिखता है—'सुल्तान विजय के पश्चात् अपनी सेना से मिल गया और शिवपुर (सोपोर) पहुँचा जब कि आदम खाँ ने दरया वेहत (वितस्ता-झेलम) के दूसरे तट पर शिविर लगाया था (४७३) ।'

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १०८वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२१वीं पंक्ति है ।

१०९ (१) वितस्ता सुल्तान ने दरिया झेलम के अनूवी किनारा पर डेरा डाल दिया । दूसरी तरफ आदम खाँ ने बाप के मुकाबला में अलम तफावुल बुलन्द कर दिया (पीर हसन : १८४) ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'आदम खाँ ने नदी पार करके नदी के उस ओर पड़ाव किया और सुल्तान नगर (श्रीनगर) से निकल कर सोयापुर (सुय्यपुर) पहुँचा तथा प्रजा को प्रोत्साहन प्रदान किया (४४४ : ६६७) ।'

पाद-टिप्पणी :

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का ३२२वीं पंक्ति तथा बम्बई सस्करण का १०९वाँ श्लोक है ।

पाठ—कलकत्ता । 'सद्वर्णदेशाभ्यर्णं' समास युक्त पद अर्थप्रतीति में बाधक है अत उसे पृथक् किया गया है ।

११० (१) पर्णोत्स . पूंछ : उन्नीसवीं शताब्दी में राजा रणजीत सिंह ने वहाँ के राजा

श्रुत्वा वराहमूलान्ते पुत्रं प्राप्तं बलान्वितम् ।
अग्रे वहामखानं तं सत्कर्तुं व्यसृजन्नृपः ॥ १११ ॥

१११. वराहमूल[1] के समीप सेना सहित पुत्र को आया सुनकर, राजा ने बहराम खाँ को आगे (जाकर) उसका सत्कार करने के लिए भेजा।

कालापेक्षी हाज्यखानः प्रेम्णाश्लिष्य कृतादरः ।
प्रीतिनिष्ठं कनिष्ठं तं भ्रातरं स्वममानयत् ॥ ११२ ॥

११२ कालापेक्षी हाजी खाँ आदरपूर्वक प्रेम[1] से आलिंगन कर, प्रेमपूर्ण अपने उस कनिष्ट भाई को मानित किया (वास्तव मे भाई जाना)।

मीर बाज खान गूजर से जीत कर लिया था। डोगरा काल में रणवीर सिंह के सम्बन्धी राजा मोती सिंह वहाँ के शासक थे। यह विजय के पश्चात राजा ध्यान सिंह के आधीन आ गया, तत्पश्चात उनके पुत्र जवाहर सिंह तथा पौत्र मोती सिंह राजा हुए। जवाहर सिंह पजाब से एक लाख रुपया वार्षिक पेन्शन देकर निष्कासित कर दिये गये। मोती सिंह ने राजा गुलाब सिंह के प्रति निष्ठा प्रकट करने पर पुंछ प्राप्त किया था। कालान्तर में डोगरा राजा ने पूंछ अपने राज्य में पूर्ण रूप से सम्मिलित कर, उसे काश्मीर का एक भाग बना लिया। यह पूंछ तवी या पलस्ता नदी पर है। मैं यहाँ आ चुका हूँ। नदी का पाट लगभग एक मील चौड़ा है। चारों ओर सम्पत्तिशाली वनश्री है तथा यहाँ धान की पैदावार खूब होती है। पूंछ के उत्तर में उत्तुंग पर्वतमाला है। वह पीर पंजाल पर्वत की एक शाखा है। यह पर्वत खन्ना क्षेत्र उरी, विकार, तथा दन्ना से पूंछ को विभाजित करता है। पूर्व में पीर पंजाल पर्वतमाला है। दक्षिण में परगना राजौरी मुफल, कोटली तथा पश्चिम में झेलम नदी है। पजाब से काश्मीर के लिए मार्ग भीमवर राजौरी से पूंछ के दक्षिण-पूर्व के कोने से जाता था। पाकिस्तान बनने पर स्थिति बदल गयी है। पूंछ में किला भी है। द्र० १.१ ६७, २ ६८, २०२, ४ १४४, ६०७।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११०वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२३वी पंक्ति है।

१११ (१) वराहमूल. बारहमूला = 'उधर हाजीखाँ बारहमूला के इतराफ में शिकस्त खाकर बाप की कुमुक का मुन्तजिर था। उसके भाई बहराम खाँ ने सुल्तान के हुक्म से उसका इस्तकबाल किया (पीर हसन १८५)।

हाजी खाँ के बारहमूला के समीप पहुँचने का समाचार पाकर सुल्तान ने बहराम खाँ को बुलाने के लिए भेजा (म्युनिख पाण्डु० ७६ ए० तथा तबक्काते अकबरी ४४४)।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'इसी बीच हाजी खाँ उस फरमान के अनुसार जो उसे प्राप्त हुआ था पंजा (पूंछ) के मार्ग से बारहमूला के निकट पहुचा। सुल्तान ने अपने छोटे पुत्र बहराम खाँ को उसके स्वागतार्थ भेजा। दोनों भाइयों में शत्रुता हो गयी (४४४-६६७)।'

फिरिश्ता लिखता है—इस समय सुल्तान का प्रियपुत्र हाजी खाँ बारहमूला शहर पहुँच गया। सुल्तान ने कनिष्ठ पुत्र बहराम खाँ को उसके आगमन पर बधाई देने के लिए भेजा (४७३)।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

बम्बई का १११वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२४वीं पंक्ति है।

११२ (१) प्रेम : दोनों भाइयों ने एक दूसरे

अन्येद्युर्मानितं दृष्ट्वा जनकेन निजानुजम् ।
आदमखानो वित्राणः सन्त्रस्तोऽगाद् दिगन्तरम् ॥ ११३ ॥

११३ दूसरे दिन जनक[1] (पिता) द्वारा अपने भाई को सम्मानित देखकर, सन्त्रस्त आदम खाँ त्राणरहित दिगन्तर[2] चला गया।

शाहिभङ्गपथा सिन्धुं समुत्तीर्य बलान्वितः ।
प्राप सिन्धुपतेर्देश कष्टक्लिष्टपरिच्छदः ॥ ११४ ॥

११४ सेनानुगत एवं दुःखी सेवक सहित वह शाहिभंग[1] पथ से सिन्धु पार कर सिन्धुपति के देश पहुंचा।

के साथ मिलकर, एक दूसरे के साथ मुहब्बत का इजहार किया (पीर हसन १८५, म्युनिख पाण्डु० ७९ ए०, तवक्काते अकबरी ३ ४४४)।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११२वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की १२५वीं पंक्ति है।

११३ (१) जनक शब्द श्लिष्ट है। जनक शब्द राजा जनक तथा जन्मदाता अर्थात् पिता दोनों अर्थों को प्रकट करता है।

(२) दिगन्तर श्रीवर ने दिगन्तर शब्द का प्रयोग १ १ १३९, १ ५ : ७६ तथा १ ७ ७७-१७३ में किया है। दिगन्तर का अर्थ दो दिशाओं के मध्य होता है। यहाँ अर्थ निश्चित स्थान त्याग कर, दिशा में लोप या आँखों से ओझल हो जाना है।

आदम खाँ ने बाप और भाइयों की लड़ाई से तंग आकर पंजाब की तरफ भाग खड़ा हुआ (पीर-हसन पृ० १८५)।

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई।

बम्बई का ११३वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की १२६वीं पंक्ति है।

११४ (१) शाहिभंग : दत्त ने शाहिभंग को एक मार्ग माना है (दत्त १३१)। शुक ने शाहिभंगीय शब्द का प्रयोग (१ . १२९) किया है। वहाँ पर व्यक्ति के विशेषण रूप में प्रयोग किया गया है। श्रीकण्ठकौल ने शाहिभंग को दत्त के समान स्थानवाचक शब्द माना है। शाहिभंग किस मार्ग का नाम था अनुसन्धान का विषय है। श्रीवर ने फतह शाह के राज्यच्युति तथा महम्मद शाह सभी के राज्य प्राप्ति के प्रसंग में शाहिभंगीय शब्द का प्रयोग किया है।

मोहिबुल हसन का मत है कि वह काश्मीर के उत्तर-पश्चिम कुछ मील पर पड़ने वाली संकीर्ण सिन्धु उपत्यका है (पृष्ठ ७७)। किन्तु यहाँ दिगन्तर शब्द का अर्थ सर्वत्र 'बाहर' किया गया है। सिन्धुपति शब्द से प्रकट होता है कि सिन्ध का शासक जैनुल आबदीन के आधीन नहीं था। वहाँ का शासक दूसरा था। श्रीनगर समीपस्थ सिन्ध उपत्यका सुल्तान जैनुल आबदीन के राज्य में थी। श्रीवर के वर्णन के अनुसार यह स्थान काश्मीर की सिन्ध उपत्यका नहीं हो सकती (द्र० ४ ५५९, २११, २७०, २७२)।

तवक्काते अकबरी में 'मुग' शाहिभंग के स्थान पर लिखा है—आदम खाँ उस स्थान से भाग कर शाहवग के मार्ग से नीलाब (सिन्ध) चला गया (४४४)।

फिरिश्ता शाहिभंग का नाम शाहाबाद देता है—'जब आदम खाँ अपनी सेना के साथ शाहाबाद के मार्ग से भाग गया और नीलाब सिन्ध के तट पर पहुँचा और मुलतान राजधानी लौट आया (३७३)।'

इत्थं त्रित्रिंशमे वर्षे ज्येष्ठं निष्कास्य युक्तितः ।
हाज्यखानान्वितस्तुष्टो नगरं प्राप भूपतिः ॥ ११५ ॥

११५ इस प्रकार राजा तैतीसवें[१] वर्ष युक्तिपूर्वक ज्येष्ठ पुत्र को निकालकर, हाजी खाँ सहित सन्तुष्ट होकर, नगर मे प्रवेश किया ।

शिशिरसमये योऽभूत् क्लिष्टश्चिरं हतपक्षति-
र्धरणिकुहरेष्वन्तः कालं निनाय शुचाकुलः ।
कुसुमसमये प्राप्योद्यानं विकासिलतोज्ज्वल
किसलयरतः सोऽयं भृङ्गः सुखं रमते पुनः ॥ ११६ ॥

११६. जिसने शिशिर के समय मे हतपक्ष होकर, चिरकाल कष्ट पाया और ग्रीष्म से आकुल होकर, पृथ्वी कुहर म कालयापन किया, किसलयरत वह भृग, कुसुम समय में विकसित लताओ से सुन्दर उद्यान को प्राप्त कर, पुन सुखपूर्वक विहार करता है ।

अस्मिन्नवसरे तुष्टाद्धाज्यखानो धृतं चिरात् ।
यौवराज्यपदं प्रापज्जनकाज्जनकोपमात् ॥ ११७ ॥

११७ इसी अवसर पर हाजी खाँ तुष्ट जनक[१] सदृश जनक से चिरकाल से धृत युवराज पद प्राप्त किया ।

तवकाते अकवरी की पाण्डुलिपियो में 'शाहमक' तथा 'शाह बिक' तथा लीथो सस्करण में 'शाह नीक' लिखा गया है। 'शाह रुह' फिरिश्ता के लीथो सस्करण.में दिया गया है। कर्नल ब्रिग्गस ने शाहाबाद नाम दिया है। रोजर्स ने नाम नही दिया है। कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में लिखा गया है कि आदम खाँ सिन्ध की ओर भाग गया। द्र० ४ २११, २७०, २७२, ५५९।

पाद टिप्पणी :

बम्बई का ११४वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२७वी पक्ति है।

११५. (१) तैतीसवें वर्ष ४५३३ = सन् १४५७ ई० = विक्रमी १५१४ = शक स० १३३९ = कलि-गताब्द ४५५८ वर्ष।

तवक्काते अक्वरी में उल्लेख है—'सुल्तान हाजी खाँ को अपने साथ लेकर शहर (श्रीनगर) आया और अपना वलीअहद (युवराज) नियुक्त किया (४४४–६६८)।'

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११५वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३२८वी पक्ति है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११६वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३३०वी पक्ति है।

११७ (१) जनक शब्द श्लिष्ट है। मिथिलापति राजा जनक तथा पिता से अर्थ अभिप्रेत है।

(२) युवराज द्रष्टव्य टिप्पणी १ २ ५; म्युनिख पाण्डु० ७६ ए०। तवक्काते अक्वरी (४४४–६६८), फिरिश्ता (४७३ व ३४६)। द्र० १ २ ५, २ ११, १७, ३ २, ६, ४ २१, रामा० अयोध्याकाण्ड।

पितुः प्रेममणिं प्राप्य स्वच्छं भक्तिपरायणः ।
हृदयान्नात्यजज्जातु श्रीमान् शार्ङ्गीव कौस्तुभम् ॥ ११८ ॥

११८ पिता के स्वच्छ प्रेममणि को प्राप्तकर, भक्तिपरायण उसने उसे हृदय से उसी प्रकार नही त्यागा, जिस प्रकार श्रीमान विष्णु कौस्तुभ[1] (मणि) को ।

विनयाक्षिप्तदेवाग्रजानुसङ्कुचिताकृतिः ।
हकार इव सद्वर्णः सोष्मा सर्वावधिर्बभौ ॥ ११९ ॥

११९ देवताओ एव अग्रजो के पीछे विनयपूर्वक सकुचित आकृति वाला सुन्दर वर्ण एव तेज युक्त वह सद वर्ण एव ऊष्मावर्गीय 'हकार' सदृश सदेव सुशोभित हुआ ।

न तत्तीर्थं न सा यात्रा न सा लीला न चोत्सवः ।
तदाभून्नैव यत्रागाद्धाज्यखानान्वितो नृपः ॥ १२० ॥

१२० वह तीर्थ[1] नही, वह यात्रा नही, वह लीला नही, वह उत्सव नही, जहाँ कि उस समय हाजी खां सहित नृप नही गया ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११७वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३३१वी पक्ति है ।

११८ (१) कौस्तुभ मणि समुद्रमन्थन द्वारा प्राप्त तेरह रत्नों में से एक यह भी रत्न है । विष्णु भगवान अपने वक्षस्थल पर धारण करते हैं—'सकौस्तुभ ध्येयतीव कृष्णाम्' (रघु० ६ ४९, १० : १०) । कौस्तुभ लवण समुद्र में स्थित एक पर्वत भी है । रामा० बालकाण्ड १ ४५ ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११८वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३३२वी पक्ति है ।

११९ (१) 'हकार' हठयोग के अनुसार *'ह' का 'सूर्य' एव 'ठ' का अर्थ चन्द्रमा होता है ।* प्राणवायु की सज्ञा सूर्य एव अपानवायु की चन्द्रमा मानी गयी है । इनका ऐक्य करने वाला जो प्राणायाम है, उसे हठयोग कहा जाता है (गोरक्ष पद्धति) । 'ह' अक्षर का अर्थ शिव, जल, आकाश आदि होता है ।

फिरिश्ता लिखता है—हाजी खाँ ने अपने बुरे व्यवहारों के प्रायश्चित्त करने का प्रयास करते हुए, पिता की वृद्धावस्था में सावधानी पूर्वक उसकी सेवा में तत्पर हो गया (४७३) ।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का ११९वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३३३वी पक्ति है ।

१२० (१) तीर्थ मार्ग, जलाशय, घाट, नदी स्रोत, पवित्र स्थान यथा मन्दिर, देवालय, क्षेत्र यथा काशी, प्रयाग, कुरुक्षेत्र, जगन्नाथ, रामेश्वर, बौद्धों के लिये, लुम्बिनी, गया, सारनाथ एव कुशीनारा आदि, मुसलमानों क लिये मक्का, मदीना, शिया लोगों के लिये कर्बला, ईसाइयों के जरूसलेम, बेथेल्हेम, निजारथ, रोम आदि तीर्थस्थान माने गये है ।

जगम, स्थावर एव मानस तीर्थ होते हैं । (१) जगम तीर्थ वग में ब्राह्मण, साधु, महात्मा, योगी एव पवित्र पुरुष आते हैं । (२) मानस तीर्थ में सत्य, क्षमा, दया, दान, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, ज्ञान, धैर्य, मधुर, मापणादि हैं । (३) स्थावर तीर्थ में काशी, प्रयाग,

यो नित्यं परितो वृतो गणशतैरत्यर्थभक्त्युज्ज्वलैः
पुत्राभ्यां सहितो हितस्त्रिजगतां नानाविलासान् भजन् ।
कालो गच्छति यस्य लास्यललित गीत च यच्छृण्वतः
शस्यः कस्य न तन्नमस्यविभवः कैलासवासो भवः ॥ १२१ ॥

इति जैनराजतरङ्गिण्याम् आदामखानर्निर्वासन हाज्यखानसयोगवर्णन नाम
तृतीय सर्गः ॥ ३ ॥

१२१ अति भक्तिपूर्ण सैकडो गणो द्वारा चारो ओर से, जो नित्य आवृत होकर, दोनो पुत्रो सहित तीनो लोक के हितैषी नाना विलासो को प्राप्त करते हैं ललित लास्य[1] एव गीत श्रवण करते, जिसका काल व्यतीत होता है, वह प्रणम्य ऐश्वर्यशाली, कैलास[2] वासी शिव, किसके लिये प्रशसनीय नही है ?

जैन राजतरगिणी मे आदम खाँ निर्वासन तथा हाजी खाँ सयोग वर्णन नामक
तृतीय सर्ग[3] समाप्त हुआ।

गया, हरिद्वार आदि है। काश्मीर में अनेक स्थानीय तीर्थ थे। उनको मैंने राजतरगिणी जोनराज परिशिष्ट 'थ' में दिया है।

दाहिने हाथ के अँगूठे का ऊपरी भाग ब्रह्मतीर्थ, अँगूठे और तर्जनी के मध्य का पितृतीर्थ, कनिष्ठा उँगली के नीचे का भाग प्राजापत्यतीर्थ एव उँगलियो का अग्रभाग देवतीर्थ माना जाता है।

पाद-टिप्पणी

बम्बई का १२०वाँ श्लोक तथा कलकत्ता की ३३४वी पक्ति है।

१२१ (१) लास्य नृत्य इसमें स्त्रियाँ भाग लेती है। इस नृत्य में प्रेम की भावनाएँ विभिन्न हाव-भाव तथा अग विन्यासा द्वारा प्रकट की जाती है। द्रष्टव्य जैन० १ ४ १०।

(२) कैलास रामायण (वाल० २४ ८, ३७ ७०, अरण्य० ३२ १४, किष्किन्धा० ३७ २, २२, ४३ २०, उत्तर० २५:५२) तथा महाभारत (वन० १०९ १६-१७, १०८ २६, १३९ ४१, १०६ १०, १४१ ११-१२, १५३ १-२, १५५ २३, आदि० २२२ ३६-४०, सभा० ३ २-९, १० ३१-३२, ४६ ७, उद्योग० १११ : ११, अनु० १९ : ३१, ८३ २८-३०) में अत्यधिक तथा मनोरम वणन मिलता है। पुराणो (ब्रह्मा० ४ . ४४ ९५, मत्स्य० १२१ २-३) म भी कैलास का वर्णन शिव के आवास रूप में मिलता है। हिन्दुओ का एक तीर्थ है। प्रत्येक हिन्दू का यह सकल्प रहता है कि वह कैलास का दशन करे। कैलास का नाम लेते ही हिन्दुओं का हृदय भक्ति एव तत्सम्बन्धी गाथाओं से भर उठता है।

कैलास समुद्र की सतह से २२०२८ फुट ऊँचा है। मानसरोवर से ४५ मील उत्तर है। यह हिन्दू मन्दिर शैली सा प्रकट होता है। उसका मस्तक हिमाच्छादित रहता है। वहाँ से हिमानी शिव जटा के समान वलुआ पत्थर वाले पर्वत पर बिखरी ऊपर से नीचे आती है। गगावतरण की कल्पना प्रतीत होती है कि कैलास की सुन्दरता, उसकी सुन्दर रचना एव शिखर से नीचे की ओर आती हिमधारा को देखकर की गयी है। जटा मस्तक पर होती है। जटा का रग काला होता है। शिखर काला है। गगा का रूप उज्ज्वल है। कैलास मूर्धा पर जमा

तुषार उज्ज्वल है। कैलास पर्वतीय शृंखला का सर्वोच्च हिमाच्छादित शिखर २५५५० फुट ऊँचा है। कैलाश पर्वत श्रेणी लद्दाख पर्वत श्रेणी के ५० मील पीछे सिन्धु नदी के उत्तरी तट पर स्थित है। महाभारत में कैलास की ऊँचाई ६ योजन बताई गयी है। द्र० टिप्पणी १ ३ ३६, १ ५ १०३।

पाद-टिप्पणी :

तृतीय सर्ग : बम्बई प्रति में इस सर्ग में १२० श्लोक है तथा कलकत्ता संस्करण में भी १२० श्लोक है। एक श्लोक संख्या ९२ कलकत्ता में नहीं है परन्तु बम्बई में है। श्लोक संख्या १४ बम्बई में नहीं है परन्तु कलकत्ता में है। यदि दोनो के कम तथा अधिक श्लोको को मिला दिया जाय तो संख्या १२१ हो जायगी।



चतुर्थः सर्गः

चैत्रोत्सव

अत्रान्तरे मदनबन्धुरयाद् वसन्तः
शृङ्गारसारकुमुदाकररोहिणीशः ।
मानान्धकारविनिवारणभानुमूर्तिः
स्फूर्जल्लताललनानवयौवनश्रीः ॥ १ ॥

१ इसी बीच मदनबन्धु वसन्त समाप्त हुआ, जो शृंगार सर्वस्व रूप कुमुदाकर के लिए चन्द्रमा, मान रूप अन्धकार निवारण के लिए भानुमूर्ति, स्फूर्जित होती लता एव ललनाओ के लिए नव-यौवनश्री था।

ततश्चैत्रोत्सवे राजा पुष्पलीलाचिकीर्षया ।
ययौ मडवराज्योर्वीं नौकारूढः सुतान्वितः ॥ २ ॥

२ तदोपरान्त चैत्रोत्सव[1] म पुष्पलीला[2] की इच्छा से पुत्र सहित राजा नौकारूढ होकर, मड वराज भूमि पर गया।

पाद-टिप्पणी

१ उक्त श्लोक बम्बई का १ तथा कलकत्ता सस्करण की ३३५वी पक्ति है।

पाद-टिप्पणी

२ (१) चैत्रोत्सव चैत्र मास म चैत्रकृष्ण एकादशी, चैत्रकृष्ण चतुदशी चैत्र अमावस्या, चैत्र शुक्ल परिवा, पचमी, षष्ठी, नवमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी तथा चैत्र पूर्णिमा, व्रत, पूजा एव उत्सव के लिये विहित थे।

(२) पुष्प उत्सव मैंने काश्मीरियो से बहुत पूछा परन्तु लोग कुछ ठीक स इस पर प्रकाश नही डाल सके। एक महिला ने मुझे बताया कि उनके बाल्य काल में जब बादाम में फूल लगता था और बरफ पिघलने लगता थी तो हिन्दू-मुसलमान सभी हरी पवत पर एकत्र होत थे और उत्सव मनाया जाता था।

चैत्र उत्सव के स्थान पर नौरोज का उत्सव मनाया जाता था। चैत्र मास (मार्च-अप्रैल) में ही नव-वर्षारम्भ में होता था। यह समय मार्च २३ स ११ तक ९ दिन का होता है। इस समय काश्मीरी नवीन वस्त्र पहनते थे। उमगपूण उत्सव का आयोजन किया जाता था। हरी पवत, निशात, शालीमार आदि स्थानो में लोग उत्सव मनाते थे। हमें अच्छी तरह स्मरण है। लोकसभा में मैं बैठा था। मेरे पास ही श्रीमती उमा नेहरू की भी सीट थी। पडित जवाहरलाल जी उमा नेहरू के पास आये। वे उनकी चाची लगती थी। उन्हें देखते ही उमा जी

तरण्डमण्डली राज्ञो वितस्तान्तरगा बभौ ।
शक्रस्येव विमानाली छायापटविभूषिता ॥ ३ ॥

३. वितस्ता के अन्तर्गत राजा की नाव मण्डली, उसी प्रकार से शोभित हो रही थी, जिस प्रकार इन्द्र की विमान पंक्ति आकाशगंगा[2] में ।

ने कहा— कपड़ा-लपड़ा बनवाया है कि नहीं नौरोज है नया कपड़ा पहनना चाहिए। पण्डित जी मुस्करा कर अपने कुरते का दामन उठाते बोले— हाँ बनवाया है, देखो।' उमा जी प्रसन्न हो गयीं। उस समय मुझे काश्मीर के विषय में रुचि नहीं थी। मेरा लोकसभा में यह पहला ही वर्ष था। अतएव ध्यान नहीं दिया। आज वह बात तथा उत्सव का अर्थ समझ में आ रहा है।

नौरोज ईरानियों का त्योहार है। पारसी लोग भारत में नवीन वर्ष के आगमन पर नौरोज का उत्सव आनन्द एवं उत्साहपूर्वक मनाते हैं। काश्मीर में भी नवीन वर्ष चैत्र में ही आरम्भ होता है। मुसलिम धर्म एवं फारसी भाषा के प्रचार और मुसलिम पर्वों के मनाने के कारण नौरोज की भी प्रथा चल पड़ी थी। यद्यपि यह भारत के अन्य स्थानों पर सर्वप्रिय नहीं हो सका।

पारसी राजा जमशेद के समय नवीन पंचांग बना। उसकी स्मृति में पारसी नौरोज जमशेद मनाते थे। फरवरी मास के प्रथम दिन ईरानियों का वर्ष प्रारम्भ होता था। इसे नौरोज कहते थे। सोगदिया के लोग इसे नौरुद कहते थे। इस दिन मिठाईयाँ बाँटी जाती थी। यह पर्व सर्वप्रथम तुर्कों ने शाहबहराम नाम से आरम्भ किया था। वह २१ जून से आरम्भ होता था। कालान्तर में २१ मार्च इसके लिए दिन रखा गया। आज भी यह इसी दिन होता है। मार्च की ६ तारीख को खोरदाद नाम से एक दूसरा नौरोज भी मनाया जाता था। इसे आशा का दिन कहते थे। इस दिन होली के समान रंग खेला जाता था। फिरिश्ता के जन्म का दिन यह माना जाता था। दूसरा मत है कि जमशेद ने एक नहर खुदवायी थी और जल की कमी दूर हो गयी थी।

पाद टिप्पणी

३. (१) इन्द्र वैदिक देवता है। वैदिक साहित्य में इन्द्र को प्रथम स्थान दिया गया है परन्तु पौराणिक साहित्य में उसे त्रिमूर्ति अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश के पश्चात् स्थान प्राप्त है। वह अंतरिक्ष एवं पूर्व दिशा का स्वामी है। आकाश में बिजली चमकाता तथा कड़कता है। इन्द्रधनुष सज्जित करता है। रूपवान है। श्वेत अश्व एवं श्वेत ऐरावत पर वज्र सहित आरूढ़ होता है। राजधानी अमरावती है। इसका रथ विमान है। सारथी मातली, धनुष शक्रधनु, कृपाण परञ्जय, उद्यान नंदन, अश्व उच्चैश्रवा, निवास स्वर्ग एवं राजप्रासाद वैजयन्त है।

(२) आकाशगंगा : आकाश में उत्तर-दक्षिण विस्तृत अनेक तारों का घना समूह है। खाली आँखों से देखने पर तारों का यह समूह एक मेघ के समान दिखायी पड़ता है। इसकी चौड़ाई बराबर नहीं है। कहीं ज्यादा और कहीं कम चौड़ी है। कुछ तारे मूल पंक्ति से इधर उधर छिटके दिखाई देते हैं। इसे दूधगंगा, सड़क, आकाश-यज्ञोपवीत आदि हिन्दी तथा अंग्रेजी में मिल्की वे तथा गैलेक्सी कहते हैं। इसके अन्य पर्याय मंदाकिनी, वियद्गंगा, स्वर्गंगा, स्वर्नदी, सुरदीर्घिका, दिव्यगंगा, आकाशवाहिनी गंगा, सुरनदी, देवनदी, नाग-वीथी, हरिताली आदि हैं।

स्वकीयराजवासस्थो राजावन्तिपुराद् गतः ।
विजयेशादिदेशेषु नाट्य द्रष्टुमुपाविशत् ॥ ४ ॥

४ राजा अवन्तिपुर[१] गया और विजयेश[२] आदि देशों मे अपने राजप्रासाद मे स्थित होकर, नाटक देखने के लिये बैठता था।

हरांश भूभुजं जेतुं यत्र राजसभानिभात् ।
भवाशक्तोऽभवत् कृत्वा बहुधा स्व मनोभवः ॥ ५ ॥

५ जहा पर, कामदेव शिवाश[१] राजा को जीतने के लिए, राजसभा के व्याज से अपना बहुत रूप बनाकर भवाशक्त हो गया।

सालङ्कारप्रबन्धज्ञाः सिद्धान्तश्रुतविश्रुताः ।
यत्रान्तःकरणोद्युक्ता द्रष्टारो गायना अपि ॥ ६ ॥

६ जहाँ पर, द्रष्टा एव गायक भी अन्त करण से उत्सुक, अलकार सहित प्रबन्ध[१] के ज्ञाता तथा सिद्धान्त श्रुत म प्रख्यात थे।

पाद टिप्पणी

४ (१) अवन्तीपुर बनिहाल–श्रीनगर राजपथ पर वन्तपुर या वन्तपोर है। यह शब्द अवन्तिपुर का अपभ्रंश है। ऊलर परगना में वितस्ता के दक्षिण तट पर है। यहाँ दो मन्दिरो के खण्डित ध्वन्सावशेष बिखरे है। वे अवन्तीश्वर तथा अवन्ति स्वामी के है। वानपोर ग्राम स्थित मन्दिर अवन्ति स्वामी तथा इससे बडा मन्दिर, पहले से आध मील उत्तर-पश्चिम जौब्रार ग्राम में अवन्तीश्वर का है। सन् १८६० ई० में यहाँ खनन कार्य हुआ था। कोई विशेष सामग्री नही मिली थी। राजा अवन्तिवर्मा ने नगर तथा मन्दिरों की स्थापना की थी। द्रष्टव्य टिप्पणी जानराज० ३३१, ३३५ ८६५, जैन० ३ ४२।

(२) विजयेश विजब्रार–विजवेहरा–विजयेश्वर क्षेत्र।

पाद-टि०

५ (१) शिवाश कल्हण ने एक पुराण वचन का उल्लेख किया है। उसी को काश्मीरी लेखक शिव का अश राजा है इस सिद्धान्त के प्रतिपादन हेतु दुहराते हैं

काश्मीरा पार्वती तत्र राजा ज्ञेय शिवाशज।
नावज्ञेय स दुष्टोऽपि विदुषा भूति मिच्छता।
रा० १ ७२

नीलमत पुराण में इसी भाव को दूसरे शब्दो में प्रकट किया गया है।

काश्मीराया तथा राजा त्वया ज्ञेयो हराशज।
तस्यावज्ञा न कर्तव्या सतत भूति मिच्छता।
नी० २४६।

क्षेमेन्द्र लोकप्रकाश में लिखता है (पृ० ६१)
सती च पार्वती ज्ञेया राजा ज्ञेयो हराशज॥

नीलमत पुराण तथा क्षेमेन्द्र ने 'हराशज' तथा कल्हण ने 'शिवाश' दिया है। श्रीवर ने कल्हण का अनुकरण किया है।

पाद-टिप्पणी

६ द्वितीय पद के प्रथम चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

(१) प्रबन्ध प्रबन्ध-काव्य–पद्यबद्ध तथा सगबद्ध कथात्मक काव्य होता है। अविच्छिन्न तथा

नानाग्रामगताश्चारुस्वररागमनोहराः ।
यत्र गीता रसस्फीता वभ्रुर्युवतयोऽपि च ॥ ७ ॥

७ जहाँ पर, नाना ग्रामगत, चारु, स्वर एवं राग से मनोहर, रसपूर्ण गीत तथा युवतियाँ शोभित थी।

कलाकलापवेत्तासीन्मानमानससौख्यभृत् ।
रङ्गरङ्गद्रुचिर्लोको विद्याविद् यातसंशयः ॥ ८ ॥

८. लोग कला-कलाप के वेत्ता, मान से सुखीमन, विद्याविद्, संशयरहित तथा रंगमंच के प्रति रंगीन रुचि रखनेवाले थे।

प्रतितालैकतालादिबहुतालविभूषितम् ।
तत्र ताराचनाराचसंज्ञानं विदधुर्नटाः ॥ ९ ॥

९. वहाँ पर, वह लोग प्रति ताल[1], एक ताल[2] आदि बहुताल[3] विभूषित ताराच-नाराच[4] का ज्ञान प्राप्त (हाव-भाव प्रकट) करते थे।

उत्सवा नाम कामास्त्रं गायनी नयनोत्सवा ।
लास्यताण्डवनृत्यज्ञा न केषां रञ्जिकाभवत् ॥ १० ॥

१०. लास्य[1], ताण्डव[2] नृत्य को जाननेवाले नेत्रोत्सव एवं कामदेव का अस्त्रभूत उत्सवा[3] नाम्नी गायिका किसके लिए मनोरंजिका नहीं हुई ?

सुसंगत वर्णन प्रबन्ध-काव्य में होता है—विच्छेद माप भुवि यस्तु कथा प्रबन्ध । (का० २३९), क्रिया प्रबन्धादयमध्वराणाम् (रघु० ६ २३), अनुज्झितार्थ सबन्ध प्रबन्धो दुरुदाहर (शि० २/७३), प्रथित यशसा भासक विसौमिल्लकविमिश्रादीना प्रबन्धाति-क्रम्य (मालावि० १)। प्रबन्ध गीत का उल्लेख श्रीवर ३ २५६ में किया है।

पाद-टिप्पणी

९ (१) ताल = ताल की परिभाषा की गयी है—

एके नैव द्रुतेन स्यादेक तालिति सज्ञया ।

इसको एकतालो ताल कहते हैं । इसमें केवल 'द्रुत' ०० होता है।

(२) प्रति ताल = इसकी परिभाषा है—
'लो द्रुतौ प्रति ताल स्याद ।'

एक लघु तथा दो द्रुत मात्रा का ताल होता है। ०० आजकल प्रयोग में नही आता।

(३) बहुताल = अनेक तालों से विभूषित नट लोग नाचते हैं। उसमें अनेक तालों का मिश्रण होता है।

(४) तारा-नारा = तारा और नारा छन्द के मात्रावृत्त थे जो ताल के लिए उपयोगी थे। तारा नव प्रकार का था—प्राकृत, भ्रमण, पात, वलान, वलन, प्रवेशन, समुद्वृत्त, निष्क्रम, निवर्तन।

नारा मात्रावृत्त निम्न प्रकार का था—ल ग लग लग, लग, ल = लघु ग = गुरु।

पाद-टिप्पणी

द्वितीय पद द्वितीय चरण का पाठ सदिग्ध है।

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ३४४ वीं पंक्ति तथा बम्बई सस्करण का १० वा श्लोक है।

१० (१) लास्य = वाद्य एवं संगीत के साथ नृत्य, जिसमें प्रेम की भावनायें विभिन्न हाव, भाव तथा अंग विन्यासो द्वारा प्रकट की जाती है। लास्य का अर्थ नट, नर्तक, अभिनेता तथा लास्या का नर्तकी होता है। सुकुमार अंगों तथा जिसमें शृंगार आदि कोमल रसों का संचार होता है।

भावानेकोनपञ्चाशत्संख्यांस्तानांश्च तावतः ।
दर्शयन्त्यो बभुः पात्र्यस्ता मूर्ता इव मूर्च्छनाः ॥ ११ ॥

११ उनचास[1] भावो तथा उतने ही तानो[2] को प्रदर्शित करती वे पात्री स्त्रियाँ मूर्तिमती मूर्छना[3] सदृश शोभित हो रही थी ।

पाद-टिप्पणी

११ (१) उनचास भाव मन के विकार का नाम भाव है। भाव के बोध करानेवाले रोमाच आदि को *अनुभाव कहते हैं। काव्य रचना में स्थायी*, गौण या व्यभिचारी तथा सात्विक तीन भेद भाव के किये गये है। स्थायीभाव आठ या नव हैं। व्यभिचारीभाव तैंतीस या चौंतीम है। स्थायीभाव—(१) रति, (२) हास, (३) शोक, (४) क्रोध, (५) उत्साह, (६) भय, (७) जुगुप्सा और (८) विस्मय है। व्यभिचारीभाव—(१) निर्वेद (वैराग्य), (२) ग्लानि, (३) शका, (४) असूया, (५) मद, (६) श्रम, (७) आलस्य, (८) दैन्य, (९) चिन्ता, (१०) मोह, (११) स्मृति, (१२) धृति, (१३) व्रीडा, (१४) चपलता, (१५) हर्ष, (१६) आवेग, (१७) जडता, (१८) गर्व, (१९) विषाद, (२०) औत्सुक्य, (२१) निद्रा, (२२) अपस्मार, (२३) स्वप्न, (२४) विबोध, (२५) अमर्ष, (२६) अकार गोपन (अवहित्था), (२७) उग्रता, (२८) मति, (२९) व्याधि, (३०) उन्माद, (३१) मरण, (३२) त्रास, (३३) वितर्क। सात्विकभाव के अन्तर्गत—(१) स्तम्भ, (२) स्वेद, (३) रोमाच, (४) स्वरभग, (५) कम्पन, (६) विवर्णता, (७) अश्रु और (८) प्रलाप (मूर्छा) है।

रसगगाधर में पण्डितराज जगन्नाथ ने काव्य के ३४ भावो का उल्लेख किया है—(१) हर्ष, (२) स्मृति, (३) व्रीडा, (४) मोह, (५) धृति, (६) शका, (७) ग्लानि, (८) दैन्य, (९) चिन्ता, (१०) मद, (११) श्रम, (१२) गर्व, (१३) निद्रा, (१४) मति, (१५) व्याधि, (१६) त्रास, (१७) सुप्त, (१८) विबोध, (१९) अमर्ष, (२०) अवहित्य, (२१) उग्रता, (२२) उन्माद, (२३) मरण, (२४) वितर्क, (२५) विषाद, (२६) औत्सुक्य, (२७) आवेग, (२८) जडता, (२९)

उसकी सज्ञा लास्य नृत्य से दी गयी है। साधारणतया पुरुष के नृत्य को ताण्डव एव स्त्री के नृत्य को लास्य कहते है। लास्य के दो भेद पेलवि तथा बहुरूपक होते है। *अभिनय-शून्य अगविक्षेप* को पेलिव कहते है। जिसम भेद आदि अनेक प्रकार के भावो के अभिनय हो उन्हे बहुरूप कहते हैं। लास्य नृत्य दो प्रकार का होता है। छुरित तथा यौवन कहा जाता है। नायक एव नायिका परस्पर आलिगन, चुम्बन आदि करते जो नृत्य करते हैं उसे छुरित कहा जाता है। एकाकी नृत्य को यौवन कहते हैं।

(२) ताण्डव मदताण्डवोत्सवान्ते (उत्तर ३ १८)। विशेषतया शिव के उन्माद नृत्य या प्रचण्ड नृत्य के लिये प्रयुक्त होता है। इस नृत्य का सम्बन्ध भैरव तथा वीरभद्र से है। शिव का ताण्डव श्मशान में देवी तथा भूत-पिशाचो के साथ उद्धत रीति से होता है। अष्ट तथा षष्ठभुजी ताण्डव मुद्रा में शिव की मूर्तियाँ एलिफेण्टा, एलोरा, तथा भुवनेश्वर की कलाओ में व्यजित की गयी है। ताण्डव की सबसे आकर्षक शिला पर खुदी नटराज की मूर्ति छठवी शताब्दी की वादामी की है। मैं इसे देखकर कलाकार की कला पर मुग्ध हो गया। इस मूर्ति में शिव के १२ हाथ दिखाये गये है।

(३) उत्सवा यह एक प्रसिद्ध गायिका थी। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि यह सुन्दर थी। जैनुल आबदीन के दरबार में भारत के प्रसिद्ध संगीतज्ञों का प्रवेश उस काल में था। श्रीवर का केवल उत्सवा के उल्लेख करने का अर्थ है कि वह अपने समय की अपने कला की महान निपुण महिला थी। नाम से हिन्दू प्रतीत होती हैं।

यासां नृत्ये च गीते च त्वचो मेऽस्त्यधिकं सुखम् ।
इति वादोऽभवच्छ्रोत्रनेत्रयोः प्रेक्षणक्षणे ॥ १२ ॥

१२ देखने के समय जिनके नृत्य एवं गीत के विषय में—'मुझे तुमसे अधिक सुख प्राप्त हुआ' इस प्रकार का विवाद श्रोत एवं नेत्र में हुआ।

पात्रीगानपिकध्वाने रङ्गोद्याने तदाद्युतन् ।
दीपचम्पकमालास्ता मधुपैः परितो वृताः ॥ १३ ॥

१३ उस समय, पात्री गान रूप पिक शब्द (ध्वनि) युक्त रंगमंच रूप उद्यान में, दीप रूप चंपक[1] मालाएँ, मधुपों द्वारा चारों ओर आवृत्त होकर, शोभित हो रही थी।

राज्ञो राज्येक्षणात् तुष्टैर्नृत्यप्रेक्षागतैः सुरैः ।
दीपमालाच्छलान्मुक्ता नूनं हेमाम्बुजस्रजः ॥ १४ ॥

१४ नृत्य पेक्षण हेतु आगत सुरों[1] ने राज्य देखने से सन्तुष्ट होकर, राजा के लिये दीप-मालाओंके व्याज से निश्चय ही स्वर्ण कमल की मालाएँ छोड दी।

आलस्य, (३०) असूया, (३१) अपस्मार, (३२) चपलता, (३३) निर्वेद, (३४) देवता में रति।

भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में भाव पर प्रकाश डाला है। 'भावयति' होने के कारण भाव की संज्ञा दी गयी है। भाव का अर्थ परिव्याप्त होना है (नाट्य ७ १-२-३)। मानसिक अवस्थाओं का व्यंजक प्रदर्शनभाव है। इसी आधार पर विभाव, अनुभाव एवं संचारीभाव की स्थापना की गयी है।

(२) तान तन् धातु से तान बना है। स्वर प्रसार को तान कहते हैं। गान का एक अंग है। मूर्च्छना आदि द्वारा राग या स्वर तथा लय का विस्तार या अनेक विभाग कर स्वर अथवा गान में लय के साथ स्वरों का खींचना है। संगीत-दामोदर के मत से स्वरों से उत्पन्न तान ४९ हैं। इनसे ८३०० कूट तान निकले हैं। कुछ लोगों का मत है कि कूट तानों की संख्या ५०४० है।

१ ४ ११ तान—षड्जोत्पन्नस्वरात्त तान = ४९ तान। ये मूर्छनाश्रित ४९ ताडव (छ स्वरों की) तानें थीं। षड्जग्रामाश्रित २८ ताडव तानें और मध्यमग्रामाश्रित २१ ताडव तानें—सब मिलाकर ४९ ताडव तानें थी।

(३) मूर्च्छना परिभाषा की गयी है—
'स्वराणाम् क्रमेण आरोहावरोहणाम्।' स्वरों को क्रम से आरोह एवं अवरोह को मूर्च्छना कहा जाता है।

एक और परिभाषा है—'क्रमास्स्वराणां सप्तानामा रोहश्चावरोहणम् सा मूर्च्छेत्युच्यते ग्रामस्था एता सप्त सप्त च।'

स्वरारोहण, स्वर-विन्यास, स्वरों का नियमित आरोहणावरोहण सुखद स्वर संधान, लय-परिवर्तन, स्वर सामंजस्य स्वर माधुर्य आदि को मूर्च्छना कहते हैं।

पाद-टिप्पणी

१३ (१) चम्पा हल्के पीले रंग का पुष्प होता है। चम्पा दो प्रकार की होती है—साधारण तथा कटहलिया। कटहलिया चम्पा की महक पके कटहल की गन्ध से मिलती है। इसकी लकडी पीली, चमकीली, मुलायम, मजबूत होती है। हिमालय की तराई, नैपाल, बंगाल, आसाम में अधिकता से पायी जाती है। इसके लकडी की मालाएँ चित्रकूट में बनती हैं। विशेषतया चम्पा दक्षिण भारत में पायी जाती है। इसे सुल्ताना चम्पा भी कहते हैं।

हिन्दी कहावत है कि चम्पा में रूप, गुण, वास सभी गुण होते हैं, परन्तु उसमें एक ही अवगुण है भ्रमर उसके पास नहीं आता।

पाद टिप्पणी

१४ (१) सुर : देवता . देवताओंके २६

जलान्तर्बिम्बिता कापि दीपाली नागलोकतः ।
वरुणेन नृपप्रीत्या दापितेवाद्भुतं तदा ॥ १५ ॥

१५ उस समय कहीं पर, जल मध्य प्रतिबिम्बित दीपमाला, इस प्रकार प्रकाशित हो रही थी, मानो वरुण[1] ने नृपति-प्रेम के कारण, नागलोक[2] से ही (उन्हें) प्रकट कराया है।

ता दीपिता दीपमाला द्विधा रङ्गे चकाशिरे ।
दिदृक्षागतनागानां फणामणिगणा इव ॥ १६ ॥

१६ रगमच पर दीपित वे दीपमालाएँ, देखने की इच्छा से, आगत नागों के फण पर स्थित, मणिगण सदृश शोभित हो रही थी।

नामों में एक नाम सुर भी। रामायण ने सुर की परिभाषा किया है—'सुरा प्रतिग्रहाद् देवा सुरा इत्यभिविश्रुता ।

पाद-टिप्पणी

१५. (१) वरुण सर्वश्रेष्ठ वैदिक देवता हैं। वैदिक साहित्य में आकाश तथा वैदिकोत्तर साहित्य में समुद्र का प्रतीक माना गया है। वैदिक साहित्य में वरुण सृष्टि के नैतिक एवं भौतिक नियमों का सर्वोच्च प्रतिपालक माना गया है। वैदिकोत्तर साहित्य में देवता रूप में प्रजापति का विकास होने के कारण वरुण का श्रेष्ठत्व कम होता गया है। इस समय वह केवल जल का ही देवता माना जाता है। वरुण की मुखकान्ति अग्नि के समान तेजस्वी है। सूर्य के सहस्र नेत्रों से मानव जाति का अवलोकन करता है। अतएव उसे सूर्यनेत्री कहा गया है। शतपथब्राह्मण में वह श्वेत वर्ण, गंजा एवं पीले नेत्रोंवाला माना गया है। उसे वृद्ध पुरुष कहा जाता है। वरुण का आवास द्युलोक में है। गृह स्वर्ण निर्मित है।

गृह में सहस्र द्वार हैं। सहस्र स्तम्भों वाले आसन पर बैठता है। वरुण के गुप्तचर द्युलोक से उतर कर जगत में भ्रमण करते हैं। ऋग्वेद में उसे विश्व का सम्राट् कहा गया है। पृथ्वी पर रात्रि एवं दिन की स्थापना वरुण द्वारा की गयी है। उनका नियमन भी वही करता है। रात्रि में दृष्टिगत चन्द्र एवं तारामण्डल इसी के कारण दृश्यगत होते हैं। इसके विधान के कारण पृथ्वी एवं द्युलोक अलग हैं। वायुमण्डल में भ्रमण करता वायु, वरुण का श्वास है। वैदिक साहित्य में उसे असुर अर्थात् असुर शक्ति-युक्त तथा बधक एवं शासक वरुण कहा गया है। बधक रूप से वह सृष्टि की समस्त शक्तियों को बाँध कर योजनाबद्ध करता है। शासक वरुण अपने पाशों द्वारा आज्ञाकारियों पर शासन करता है।

अथर्ववेद ने उसे सार्वभौम नहीं बल्कि केवल जल का ही नियामक बताया है। महाभारत में उसे चौथा लोकपाल माना गया है। जल का स्वामी एवं जल में निवास करनेवाला बताया गया है। ओल्डेनबर्ग का मत है कि वरुण भारतीय देवता नहीं है। उसका उद्गम ज्योतिष शास्त्र में प्रवीण शामी अर्थात सेमेटिक लोगों में हुआ था। वरुण एवं मित्र क्रम से चन्द्र एवं सूर्य थे।

वरुण की पत्नी ज्येष्ठा थी। वह शुक्राचार्य की कन्या थी। उससे बल, अधर्म एवं पुष्कर नामक पुत्र तथा सुरा नामक कन्या उत्पन्न हुई थी। इसकी अन्य पत्नी वारुणी अथवा गौरी थी। उससे गो नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। तृतीय पत्नी शीततोया से श्रुतायुध नामक पुत्र हुआ था।

(२) नागलोक द्रष्टव्य टिप्पणी १ ५. ३७ तथा परिशिष्ट 'ध' पृष्ठ २६ (राज० खण्ड १, लेखक)।

किं राजालोकलोभात् तटभुवि मिलिताः पूर्वभूपालजीवाः
किं व्योम्नस्तारकौघः शशधरविमुखः सेवनायावतीर्णः ।
किं वा सिद्धाः सुरेन्द्रा निजरुचिरुचिराः प्रेक्षणायोपविष्टाः
किं वैता दीपमाला इति जनमनसामास्त दूराद् वितर्कः ॥ १७ ॥

१७ राजा के आलोक लोभ से तट भूमि पर पूर्व भूपालो के जीव ही एकत्रित हो गये हैं क्या ? अथवा चन्द्रमा स विमुख होकर, तारक पुज आकाश से सेवा हेतु अवतीर्ण हुआ है क्या ? अथवा अपनी रुचि के कारण रुचिर सिद्ध सुरेन्द्र[1] देखने के लिये बैठे हैं क्या ? अथवा ये दीपमालाएँ हैं ? इस प्रकार दूर-दूर का तर्क वितर्क लोगो के मन म हो रहा था।

साक्षादेष पुरन्दरः कविबुधा विद्याधराः सेवका
अन्ते देवसभासदः सवपुषः सिद्धा अमी योगिनः ।
एता अप्सरसो रसोर्जितगुणा गन्धर्वका गायना
रङ्गोऽय त्रिदिवस्थलीति जगदुः सर्वे जनाः प्रेक्षका ॥ १८ ॥

१८ 'यह साक्षात् पुरन्दर[1] हैं, कवि[2], बुध[3] एव विद्याधर[4] सेवकजन है, और अन्त मे देव सभासद् हैं, ये योगी शरीरधारी सिद्ध[5] हैं, रसोर्जित गुणवाली ये गन्धर्व[6] गाइकाएँ, अप्सराएँ हैं, यह रगस्थल स्वर्गस्थली है'—इस प्रकार सब दर्शको ने कहा।

पाद टिप्पणी

पाठ—बम्बई ।

१७ (१) सुरेन्द्र इन्द्र ।

पाद टिप्पणी

१८. (१) पुरन्दर वैवस्वत मनवन्तर के इन्द्र का नामान्तर पुरन्दर है। शत्रु का पुर किंवा नगर नष्ट किया था अतएव नाम पुरन्दर पडा है। (भाग० ८ १३ ४, ९ ८ ८ १० ७७ ३६-३७, १२ ८ १५, ब्रह्मा० २ ३६ २०५ वायु० ३४ ७५, ६२ ११८, ६४ ७, ६७ १०२, विष्णु० ३ १ ३१, ४०)। मत्स्यपुराण में निर्दिष्ट अठारह वास्तुशास्त्रकारों में पुरन्दर का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य० २५२ २-३)। तप अथवा पाचजन्य नामक अग्नि का पुत्र पुरन्दर था। महान तपस्या के पश्चात तप को अग्नि से तपस्या फल प्राप्त हुआ। उसे प्राप्त करने के लिये स्वयं इन्द्र ने पुरन्दर नाम से अग्नि के पुत्र रूप में जन्म लिया था (वन० २११ ३)।

(२) कवि शुक्राचार्य ।

(३) बुध इसका अर्थ विद्वान एव पण्डित है। यदि नामवाचक शब्द माना जाय तो नवग्रहों में एक शुभ ग्रह है। इसका पिता बृहस्पति माना गया है।

(४) विद्याधर एक देव योनि है। इसे अर्ध देवता माना है। पुराणों में इनके राजाओ के नाम चित्रकेतु चित्ररथ किंवा सुदर्शन दिये हैं (भा० ६ १७ १, ११ १६ २९)। वायु पुराण में पुलोमन को 'विद्याधरपति' कहा गया है (वायु० ३८ १६)। इनकी स्त्रियों का नाम विद्याधरी है (ब्रह्माण्ड० ३ ५० ४०)। इनके दौवेय, विभ्रान्त एव सौमनस नामक तीन प्रमुख गण थे। इनका विद्याधरपुर नगर था। यह ताम्रवर्ण सरोवर एव पतग पर्वत के मध्य स्थित था (मत्स्य० ६६ १८)। खेचर, नभचर आदि नाम से पुकारे जाते हैं (ब्रह्मा० ४ ३७ १०)।

(५) सिद्ध . दस देवयोनि में एक योनि सिद्ध

अङ्गारक्षारचूर्णादिगन्धकौषधयुक्तिभिः ।
रागैः शिल्पिकृता लीला क्रीडालोकमरञ्जयत् ॥ १९ ॥

१९ अङ्गार, (कोयला) क्षार (सोरा) चूर्ण आदि गन्धक औषध युक्त रागो (रगो) से शिल्पियो द्वारा की गयी लीला[१] ने दर्शकों का मनोरजन किया।

तथा ह्यौषधसंपूर्णान्नालाद् वह्निकणा घनाः ।
निर्यत्कुसुमसंपूर्णस्वर्णवल्लीभ्रमं व्यधुः ॥ २० ॥

२० औषध-चर्ण नाल[१] से निकलते घने अग्निकण कुसुम[२] से पूर्ण लता का भ्रम उत्पन्न कर रहे थे।

है। सिद्ध पुराणों में कश्यप पिता एव प्राधा के पुत्रों में से एक था। जिसे इसी जीवन में सिद्धि प्राप्त हो गयी है, उसे सिद्ध कहते है।

(६) गन्धर्व वेदो के अनुसार द्यु स्थान एव अतरिक्ष स्थान के गन्धर्वों का वर्ग विभिन्न है। द्यु स्थान के गन्धर्व दिव्य गन्धर्व है। उनसे सूर्य, सूर्य की रश्मि, तेज, प्रकाश इत्यादि प्राप्त होता है। इनका स्वामी वरुण है। मध्यस्थान (अतरिक्ष) के गन्धर्व नक्षत्र प्रवर्तक है। उनसे मेघ, चन्द्रमा, विद्युत आदि निरुक्तशास्त्र के आधार पर लिये जाते है। देव एव मनुष्य गन्धर्वों में भी वर्गीकरण किया गया है। विद्याधर, अप्सरा, सिद्ध, गुह्यक एव सिद्धो के वर्ग में आते है। देवताओ के गायक 'हा हा हू-हू' माने गये है। उनमें तुम्बरु, विश्वावसु, चित्ररथ प्रभृति है। चित्ररथ गन्धर्वों के राजा है। कश्यप तथा अरिष्ठा की सन्तति गन्धर्व कही जाती है। गन्धर्वों का देश हिमालय का मध्य भाग माना जाता है। गन्धर्व तथा किन्नर देशो का उल्लेख पुराणों में मिलता है। गन्धर्व जाति स्वरूपवान, शूर तथा शक्तिशाली थी। गन्धर्व विद्या का उल्लेख श्लोक (१ ५ ९) मे है। मृत्यु के पश्चात् तथा पुनर्जन्म स पूर्व की आत्मा की सज्ञा है। गन्धर्वनगर का उल्लेख (३ ४०८) में किया है। गन्धर्व विवाह आठ विवाहों में एक तथा एक उपवेद है। जैन मान्यता के अनुसार—दस गन्धर्व—हाहा, हूहू, नारद, तुम्बरु, वासव, कदम्ब, महास्वर, गीतरति, गीतरस और वज्रवान है (त्रि० सा० २६३)। अग्निपुराण में गन्धर्वों के ग्यारह गण माने गये है—अभ्राज, अंध्रारि, रभारी, सूर्यवर्चा, कृधु, हस्त सुहस्त, मूर्द्धवान, महामन्त्र,—विश्वावसु तथा कृशानु है। कुछ पुराणो मे तुम्बरु, गोमायु तथा नन्दि भी उनके गण माने गये है।

पाद-टिप्पणी :

१९. (१) लीला वर्णन से प्रकट होता है कि यह आतिशबाजी का प्रदर्शन था।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ३५४ वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का २० वा श्लोक है।

२० (१) नाल आतिशबाजी में बाण, चर्खी, चादर आदि नाल अथवा बाँस में या लौहनली में भर दिये जाते है। उसमें आग लगाने से बाण आकाश म जाकर अनेक रगीन चिनगारियों में परिणत हो जाता है। चर्खी भी इसी प्रकार चलती है। चर्खी में गोलाकार वृत्त में बई नाल किंवा नलिका लगी रहती है। चादर में एक ही पक्ति में कई नलिकाएँ लगी रहती है। उसमें आग लगाने पर वह भूमि पर चद्दर के समान गिरती है जबकि चर्खी तथा बाण ऊपर की ओर चलते है। नलियो से निकला जलता मसाला फूल के समान लगता है। इसी प्रकार मिट्टी के घरिया में जो नाल सदृश होता

सर्पाकारानलज्वाला निर्गता सलिलान्तरात् ।
चक्रे प्रेक्षकलोकानां त्रासाश्चर्यभयोदयम् ॥ २१ ॥

२१. सलिलान्तर से निर्गत, सर्पाकार अग्निज्वाला प्रेक्षक लोगो मे त्रास, आश्चर्य एव भय का उदय कर रही थी।

नालकादुत्थिता व्योम्नि ज्वालागोलकपङ्क्तयः ।
राजद्राजतरोचिष्का जीवशुक्रोपमां व्यधुः ॥ २२ ॥

२२ नालक[१] से उठो रजत की कान्ति से पूर्ण ज्वाला गोलक पक्तियाँ आकाश मे जीव (बृहस्पति) तथा शुक्र को उपमा उत्पन्न कर रही थी।

रज्जुबद्धागमद् दूरं ज्वलन्त्योषधनालिका ।
आहूतये तथा नीतास्तादृश्यो बहवो गताः ॥ २३ ॥

२३ रज्जुबद्ध, वह जलती औषध-नालिका[१] दूर तक गयी—उसे उसी प्रकार मानो बुलाने के लिये ही बहुत-सी (नालिकाएँ) गयी।

गतागतानि कुर्वन्त्यो दीप्ता उल्का इवोल्वणाः ।
प्रेक्षकाणां प्रिया दृष्टीरहरन्नद्भुतावहाः ॥ २४ ॥

२४ उल्का सदृश तेज तथा गतागत करती हुयी, अद्भुता वह दीप्त, उन नालिकाओ ने प्रेक्षको की प्रिय दृष्टि का हरण किया।

अत्र पात्रीकरस्थापि ज्वलन्त्योषधनालिका ।
द्युलोकोन्मुक्तसद्वर्णस्वर्णपुष्पश्रियं व्यधात् ॥ २५ ॥

२५ यहाँ पर जलती औषध नालिका पात्री (नटी) के कर मे स्थित होकर, स्वर्गलोक से उन्मुक्त सुन्दर वर्ण स्वर्ण पुष्प की श्री (शोभा) सम्पन्न करती थी।

है, आतिशबाजी का मसाला रग-बिरगा भरा रहता है। उसे भूमि पर रखकर आग लगा देते है। उसमें स्फुटित चिनगारियाँ, फुहारा तथा पुष्प सदृश लगती है। उसे प्रचलित भाषा में अनार छोड़ना कहते है।

(२) कुसुम इसे फुलझरी या फुलझड़ी कहते है। आतिशबाजी का यह एक प्रकार है।

पाद-टिप्पणी :

२२ (१) नालक नाल से निकलती अग्नि-कण रजत, स्वर्ण, बैंगनी तथा लाल विभिन्न रगो के होते है। आतिशबाज उन्हे रुचि अनुसार बनाते है। आतिशबाजी में बाण, चर्खी, चद्दर, अनार आदि में बास को खोखला कर उसमें मसाला भर दिया जाता है। आग लगाने पर फुलझड़ी, चर्खी, बाण, अनार एव चादर से आतिशबाजी छूटने लगती है। जहाँ बाँस नही मिलता, वहाँ लकड़ी खोखला कर या लोहा की नली का प्रयोग किया जाता है।

पाद-टिप्पणी

२३ (१) नलिका आतिशबाजी नलिका सहित आकाश में उड़कर, वही आतिशबाजी छोड़ती है। सम्भवत आजकल के प्रचलित बाण है, जो आकाश में जाकर ऊपर छूटता है। यह नलिका बास की बनाई जाती है। वह ऊपर जाकर छूटती, कही दूर पर गिरती है।

निर्गतं ननुदण्डान्तर्ज्वालापिण्डं नभोन्तरे ।
उद्दण्डदण्डं सर्वेषां चण्डरश्मिभ्रमं व्यधात् ॥ २६ ॥

२६ आकाश मे दण्ड से निर्गत उद्दण्ड, दण्ड सदृश, ज्वालापिण्ड, सब लोगों म सूर्य-रश्मि का भ्रम करा दिया ।

वह्निक्रीडनलीलाया युक्तिज्ञेन महीभुजा ।
शिक्षयित्वा हबेभाख्य तास्ताः सर्वाः प्रदर्शिताः ॥ २७ ॥

२७ अग्नि क्रीडन लीला युक्तिवाले राजा ने हबीब[1] को सिखाकर, वह सब प्रदर्शित कराया ।

क्षारस्तदुपयोग्योऽत्र दुर्लभो योऽभवत् पुरा ।
तद्युक्तिशिक्षया राज्ञा स्वदेशे सुलभः कृतः ॥ २८ ॥

२८ पहले जो क्षार और उसका उपयोग यहाँ दुर्लभ था, वह युक्ति शिक्षा द्वारा, राजा ने अपने देश मे सुलभ कर दिया।

प्रश्नोत्तरमयी स्वोक्तिर्हर्भेभ प्रति या कृता ।
पारसीभाषया काव्यं दृष्ट्वाद्य कुरुते न कः ॥ २९ ॥

२९ राजा ने पारसी (फारसी) भाषा मे जो कुछ प्रश्नोत्तर[1] किया, उसे देखकर, आज न नहीं काव्य[2] करता है ?

पाद-टिप्पणी

२६ कलकत्ता सस्करण में उक्त श्लोक नही है। बम्बई सस्करण की श्लोक सख्या २६वाँ यथावत है।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता की ३६०वी पक्ति है ।

२७ (१) हबीब सुल्तान जैनुल आबदीन के पूर्व बारूद बनाना लोग काश्मीर में नही जानते थे। एक मत है कि इसके पूर्व आतिशबाजी बनाने का मसाला बाहर से आता था । वह काश्मीर में नही मिलता था । सुल्तान ने हबीब को आतिशबाजी बनाने की कला में पारगत कर दिया । इसके पश्चात आतिशबाजी काश्मीर में बनाना साधारण बात हो गयी । हबीब के विषय और जानकारी नही मिल सकी है । आतिशबाजी उन दिनो भारत में बनानेवाले प्राय मुसलमान ही होते थे । काशी में सभी आतिशबाज मुसलमान है, जबकि आलौन की प्रसिद्ध आतिशबाजी बनानेवाले कुछ हिन्दू भी है ।

तबकात अकबरी के दोनो पाण्डुलिपियों में हबीब' तथा लिथो सस्करण म 'हल्व' (६५), फिरिश्ता के लीथो सस्करण म 'जब' तथा रोजर्स ने भी 'जब' नाम दिया है ।

पीर हसन के फारसी और उर्दू दोनो सस्करण में नाम जीव दिया है । वह लिखता है—इसी तरह एक जीव नामक आतिशबाज पैदा हुआ, जिसके सानी जमाना की आँख ने इसके पहले न देखा था । इसी शख्स ने फन आतिशबाजी में नई-नई चीजें इजाद किये (द० फारसी १९८, उर्दू १७९), फिरिस्ता २ ३४४, तबक्कात० ३ ४३९ ।

पाद-टिप्पणी

२८ कलकत्ता की ३६१वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता की ३६२वी पक्ति है ।

२९ (१) प्रश्नोत्तर श्रीवर के वर्णन से

ते शिल्पा मतिकल्पिताः स च मदा संगीतवाद्योरसः
मालङ्कारविचारचारुधिषणा काव्ये च तत् कौशलम् ।
सच्छास्त्रश्रवणादरः स च नवप्रोत्पादनायोद्यमः
श्रीमज्जैनमहीपतेर्बहुमतेस्तस्येव कस्याधुना ॥ ३० ॥

३० बुद्धि कल्पित वे शिल्प, मदा संगीत-वाद्य में वह रस, अलंकार-विचार में सुन्दर बुद्धि, काव्य में वह कौशल, सुन्दर शास्त्र के श्रवण में आदर, नवीन के उत्पादन के प्रति वह उद्यम, उस महामतिमान महीपति जैन के समान आज किसमें है ?

खुज्याब्दोल्कादराख्यस्य शिष्यः सर्वगुणाम्बुधेः ।
भूभुजश्चित्तमनयद् रागतालादिभिर्मुदम् ॥ ३१ ॥

३१ सर्वगुण-सागर अब्दुल कादिर का शिष्य खुज्य[१] ने राग-ताल आदि से राजा का मन मुदित किया।

प्रतीत होता है कि सवाद-शैली में सुल्तान तथा हबीब के बीच आतिशबाजी तथा बारूद के प्रयोग तथा उसकी कला एवं उसकी शिक्षा की जो वार्ता हुई थी, वह फारसी भाषा में लिपिबद्ध की गयी थी। वह इतने अच्छे ढंग से लिखी गयी थी कि श्रीवर उसे काव्य कहता है। यह ग्रन्थ अप्राप्य है। यह सुल्तान की रचना मानी जाती है।

(२) काव्य : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'हबीब आतिशबाज जिसने काश्मीर में बन्दूक का आविष्कार किया। सुल्तान के राज्यकाल में था और आतिशबाजी की कला में अद्वितीय था। सवाल व जवाब' नामक पुस्तक थी जिसमें बहुत-सी लाभदायक बातें लिखी हुई हैं, सुल्तान ने उसके सहयोग से रचना की (६५७)'।

पाद-टिप्पणी

३० कलकत्ता का ३६३वीं पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता का ३६४वीं पंक्ति है।

३१ (१) खुज्य : दत्त ने सुज्य नाम दिया है। मोहिबुल हसन का मत है कि वह ख्वाजा का अपभ्रंश है। परन्तु यह ख्वाजा का अपभ्रंश प्रतीत है। आइने अकबरी में उल्लेख है कि खुरासान के अब्दुल कादिर का ऊदी ख्वाजा शिष्य था (पृष्ठ ४३९)। ख्वाजा शब्द तुर्की है—अर्थ, स्वामी, पति, मालिक, प्रतिष्ठित पुरुष, मुसलमान फकीर है। ख्वाजा, खोजा रनिवास का नपुंसक भृत्य होता है।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है कि—'उसमें से मुल्ला ऊदी जो ख्वाजा अब्दुल कादिर का एक गरीब शिष्य था। खुरासान से आया। वह इस प्रकार ऊद (बरबत) बजाता था कि सुल्तान उससे अत्यधिक प्रसन्न होता था और सुल्तान ने उसे नाना प्रकार की कृपाओं द्वारा सम्मानित किया (६५)'।

तवक्काते अकबरी में ऊदी के लिये 'बे वास्त' शब्द प्रयोग किया गया है। जिसका अर्थ बिना साधन अर्थात् गरीब होता है। फिरिश्ता ने 'बे वास्ता' शब्द छोड़ दिया है।

खुरासानागतो मल्लाजादकाख्यो महीपतेः ।
वादनात् कूर्मवीणायाः प्रापातुलमनुग्रहम् ॥ ३२ ॥

३२ खुरासान[1] से आगत मल्लाजादक[2] ने कूर्म वीणा[3] के वादन से महीपति का अतुल अनुग्रह प्राप्त किया ।

मल्लाज्यमालनामापि म्लेच्छवागेयकारकः ।
नारदो वासवस्येव राज्ञोऽभूदतिरञ्जकः ॥ ॥ ३३ ॥

३३ म्लेच्छ वाणी[1] में गीतकारक मल्लाज्य[2] ने राजा का उसी प्रकार अनुरंजन किया जिस प्रकार नारद[3] इन्द्र का ।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता का ३६५वी पक्ति है ।

३२ (१) खुरासान यह ईरान का नवाँ प्रान्त है । इसका विस्तार उत्तर दक्षिण ५०० तथा पूर्व-पश्चिम ३०० मील है । दक्षिण में पर्वतीय भाग भी ११ से १३ हजार फीट तक है । मेसद इस प्रदेश की राजधानी है । कालीन, चर्म, अफीम, इमारती लकड़ी, कपास की बनी वस्तुएँ, तथा रेशम का रोजगार होता है । यहाँ की मेवार, पिस्ता, मोद, कम्बल तथा नीलमणि प्रसिद्ध है ।

(२) मल्लाजादक मुल्ला जाद = म्युनिख (पाण्डु० ७३ ए०) से ज्ञात होता है कि खुरासान से आनेवाला मुल्ला जाद था । श्रीवर ने मुल्लाजाद का मल्लाजादक नाम लिखा है । मुल्ला शब्द अरबी है । मौल्वी, फाजिल, अजान देनेवाला तथा बच्चों क पढानेवालों के अर्थ मी प्रयोग होता है ।

(३) कूर्म वीणा : इस कच्छपी वीणा भी कहते है । द्रष्टव्य टिप्पणी २ ५७ ।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता सस्करण की ३६६वी पंक्ति है ।

३३ (१) म्लेच्छ वाणी परशियन भाषा । क्योंकि मुल्ला जाद खुरासान का निवासी था । जहाँ की राजभाषा परशियन थी । जैनुल आबदीन के समय में भी काश्मीर की राजभाषा परशियन हो गयी थी, यद्यपि संस्कृत का भी प्रचलन था ।

(२) मल्लाज्य . मुल्ला जमील = यह केवल कवि तथा चित्रकार ही नहीं था बल्कि परशियन का गीत पारगत भी था (म्युनिख पाण्डु० ७२ ए०, तबक्काते अकबरी ३ ४३९ । आइने अकबरी में उल्लेख है—मुल्ला जमील चित्रकारी तथा सगीत दोनो म पारगत था (पृष्ठ ४३९) । तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—मुल्ला जमील हाफिज जो कविता करने तथा पढने में अद्वितीय था, सुल्तान द्वारा अत्यधिक आश्रय प्राप्त किया था । उसके स्वर आज तक काश्मीर में प्रसिद्ध हैं (६५७) । यहाँ पर स्वर के स्थान पर नक्श शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ चित्रकारी भी होता है । आइने अकबरी २ ३८८-३८९, तबक्काते . ३ . ४३९ ।

(३) नारद ब्रह्मा क मानसपुत्र है । नारद त्रिकाल आकाश मार्ग से तीनों लोको में सचार करते है । नानाशास्त्र-कुशल है । वेद-वेदांग में पारगत, ब्रह्मज्ञान युक्त एव नय-नीतिज्ञ है । उनकी शरीर कांति श्वेत एव तेजस्वी है । इन्द्र द्वारा प्रदत्त श्वेत, मृदु, एव धूत वस्त्र परिधान करते है । कान में सुवर्ण कुण्डल, स्कन्ध प्रदेश पर वीणा, मूर्धा पर हल्क्ष्ण शिखा रहती है । ब्रह्मा की जंघा से उत्पन्न विष्णु के तृतीय अवतार माने जाते है (भा० . १ . ३ ८, १२, मत्स्य ३ ६–८) । नर-नारायण के उपासक हैं । नारद उच्च श्रेणी के संगीतज्ञ, सगीत शास्त्र में निपुण एव स्वरज्ञ है । उनकी नारद संहिता संगीतशास्त्र का ग्रन्थ प्राप्य है । वह इन्द्रसभा में उपस्थित रहते है । एक बार इन्द्र ने पूछा—'किस अप्सरा को गाने की अनुमति दूँ ?' नारद ने

तुम्बवीणाधरः सोऽहं सर्वगीतविशारदः ।
उद्बद्धन्नवगीताङ्ककौशलं समदर्शयम् ॥ ३४ ॥

३४ सर्वगीत-विशारद एवं तुम्ब वीणाधारी मैंने नवीन गीत आरम्भ कर कौशल किया।

अन्येऽपि जाफराणाद्या मया सह नृपाग्रगाः ।
तौरुष्कान् दुष्करान् रागानगायन् वीणया समम् ॥ ३५ ॥

३५ मेरे साथ अन्य भी नृपाग्रगामी जाफराण[1] आदि वीणा के साथ दुष्कर तुरुष्क[2] के राग गाये।

गीतं द्वादशरागाङ्कं गायतां नः सभान्तरे ।
प्रीत्यैवैक्यमिवापन्नास्तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः ॥ ३६ ॥

३६ सभा मे हमलोगो के बारह राग[1] के गीत गाते समय वीणा एवं कण्ठ से निकले स्वर मानो प्रीति से ही एक हो गये थे।

'कहा जो गुण-रूप में श्रेष्ठ हो उसे अवसर देना चाहिये।' अप्सराएँ परस्पर अपनी श्रेष्ठता बनाने के लिये झगड़ने लगी। इन्द्र ने निर्णय का भार नारद पर छोड़ दिया। नारद ने तुरन्त कहा—'जो दुर्वासा को मोहित करे वही श्रेष्ठ है।' वपु नामक अप्सरा इस काम के लिये तैयार हो गयी (मार्क० १ ३०-४७)। नारद परिहास पटु हैं। परिहास वशलोगो में मगड़ा करा देने तथा कीतन करने में पारंगत है। श्रीवर ने उपमा दी है कि इन्द्र की सभा में जैसे नारद सगीत-कला विशारद है उसी प्रकार सुल्तान की सभा में मुल्ला जाद था।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता श्लोक की ३६७वी पंक्ति है। द्वितीय पद के प्रथम चरण का पाठ सदिग्ध है।

३४ (१) तुम्ब वीणा तुम्ब अर्थात तुम्बी पर बनी वीणा तुम्ब वीणा कही जाती है। लौका कद्दू जो सरकारी के काम में नही आता, बहुत बड़ा होता है। उसे ही लगभग चौथाई काटकर तुम्ब वीणा बनायी जाती है। तुम्बी का प्रयोग सितार तथा वीणा दोनों में होता है। उसके कारण ध्वनि गूँजती है। जिस वीणा में तुम्बा लगा हुआ होता है, उसे तुम्ब वीणा की सज्ञा दी गयी है।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता श्लोक की ३६८वी पंक्ति है।

३५ जाफराण = जाफर इस व्यक्ति का पुन उल्लेख श्रीवर ने नही किया है। जोनराज तथा शुक भी उल्लेख नही करता। परशियन स्रोत से भी इसके विषय में कुछ प्रकाश नही पड़ता। जाफरान अर्बी शब्द है जिसका अर्थ कुकुम तथा केशर होता है। जाफर शब्द भी अर्बी है, अर्थ नहर, नदी, सरचश्मा है जाफर १४ इमामों में से एक हुए हैं।

३५ (२) तुरुष्क राग . तुरुष्क राग भारत में तुर्कों द्वारा आया। यह दो प्रकार का था—तुरुष्कगौड और तुरुष्कतोड़ी। तुरुष्कगौड राग में निषाद स्वर ग्रह और अंश था। इसमें ऋषभ और पचम स्वर वर्ज्य थे और मन्द्र स्थान में गान्धार स्वर का अधिक प्रयोग था।

जिस तोडी राग में गान्धार स्वर का अल्प प्रयोग था और निषाद, ऋषभ और पचम का अधिक प्रयोग था वह तुरुष्कतोडी कहलाता था।

पाद टिप्पणी

कलकत्ता श्लोक की ३६९वी पंक्ति है। प्रथम पद के प्रथम चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

३६ (१) राग राग की परिभाषा की गई है—यो य ध्वनि विशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषित ।
रञ्जको जन चित्ता नाम स राग कथितो बुधैः ॥

वह ध्वनिविशेष जो स्वर एवं वर्ण से विभूषित हो और लोगों के चित्त का रञ्जन करे उसे राग कहा जाता है।

देशसंस्कृतकाव्यज्ञो राज्ञो निकटवास्यभूत् ।
पण्डितो नोत्थसोमाख्यो देशजैनचरित्रकृत् ॥ ३७ ॥

३७. देशी (काश्मीरी) एवं संस्कृत काव्य का ज्ञाता तथा भाषा में जैन[1] चरित प्रणेता पण्डित नोत्थ[2] सोम राजा का निकटवासी था।

देशभाषाकविर्योधभट्टः शुद्धं च नाटकम् ।
चक्रे जैनप्रकाशाख्यं राजवृत्तान्तदर्पणम् ॥ ३८ ॥

३८. देशी (काश्मीरी) भाषा का कवि योधभट्ट[1] ने जैनप्रकाश[2] नामक शुद्ध नाटक की रचना की, जो वृत्तान्त के दर्पण (सदृश) था।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—उसके राज्य काल में नृत्य करनेवाले तथा बहुत से नट पैदा हो गये थे और बहुत से ऐसे लोग थे, जो कि एक स्वर को बारह राग से बजा सकते थे (पृष्ठ ४३९)।

पादटिप्पणी :

कलकत्ता संस्करण की ३७०वीं पंक्ति है।

३७. (१) जैन चरित : नोत्थ सोम ने काश्मीरी भाषा में जैनुल आबदीन का चरित लिखा था। यह विक्रमांकदेव तथा दशकुमार चरित की शैली पर लिखा गया होगा, जैसा कि उसके शीर्षक से प्रकट होता है। पुस्तक अप्राप्य है। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—उसने जैन हरब नामक ग्रंथ की रचना की जिसमें सुल्तान के राज्यकाल की समस्त घटनाएँ विस्तार के साथ लिखी है (पृष्ठ ४३९)। तवक्काते अकबरी के विवरण से प्रकट होता है कि रचनाकार के समय ग्रंथ का अस्तित्व था। लेखक ख्वाजा निजामुद्दीन अहमद की मृत्यु ७ नवम्बर सन् १५९४ ई० में हुई थी। वह बाबर, हिमायूँ तथा अकबरकालीन घटनाओं का प्रत्यक्षदर्शी था। जैनुल आबदीन की मृत्यु के लगभग एक शत वर्ष पश्चात् रचना किया था।

(२) नोत्थ सोम : काश्मीरी भाषा तथा संस्कृत दोनों का काव्यमर्मज्ञ एवं विद्वान था। श्रीवर ने यदि राजतरंगिणी लिखा था, तो नोत्थ सोम ने जैनुल आबदीन का चरित लिखा था। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है, नोत्थ सोम भी सुल्तान का निकटवर्ती और उसका सभासद, दरबारी तथा दरबारी कवि था। पद्य काव्य था। उसमें जैनुल आबदीन के चरित तथा उसके कार्यों का वर्णन था (म्युनिख पाण्डु० : ७२ बी०)।

पीर हसन नाम सोम देता है—एक शख्स सोम नाम काश्मीरी जबान में अशआर कहा करता था। इसके साथ ही अलूम हिन्दवी में भी लाशानी था। इस शख्स में 'जैनचरित' एक किताब बादशाह के हालात में कलमबन्द किये (पृष्ठ १७९)।

तवक्कात अकबरी में नाम सहुम दिया गया है—उसके राज्यकाल में सुहूम नामक एक बुद्धिमान था जो काश्मीरी भाषा में कविता करता था और हिन्दवी के ज्ञान में अद्वितीय था (६५८)। दूसरी पाण्डुलिपि में 'सहुम' का पाठभेद 'सयूम' मिलता है। फरिश्ता के लीथो संस्करण में 'सोम' नाम दिया दिया गया है। 'नोत्थ' नाम पर्शियन पाण्डुलिपियों को छोड़कर सवत्र केवल सोम दिया गया है।

पादटिप्पणी

कलकत्ता संस्करण की ३७१वां पंक्ति है।

३८. (१) योधभट्ट : श्री मोहबिल हसन ने गलती से लिख दिया है कि योधभट्ट प्रसिद्ध संगीतज्ञ था। उसने संगीत शास्त्र पर पुस्तक लिखकर सुल्तान को समर्पित किया था (पृष्ठ ९३)। उसने काश्मीरी भाषा में एक नाटक जैनप्रकाश लिखा था।

भट्टावतारः शाह्नामदेशग्रन्थाब्धिपारगः ।
व्यधाज्जैनविलासाख्यं राजोक्तिप्रतिरूपकम् ॥ ३९ ॥

३९. शाहनामा[1] नामक देश ग्रन्थ म पारगत भट्टावतार[2] ने राजा की उक्ति प्रति रूप जैनविलास[3] नामक ग्रन्थ लिखा ।

वीणातुम्बीरवावाद्याः सर्वास्तुष्टेन भूभुजा ।
सुवर्णरौप्यरत्नौघैर्घटितास्ताश्चकाशिरे ॥ ४० ॥

४० सन्तुष्ट होकर राजा ने वीणा, तुम्बी, रबाब[1] आदि वाद्यों को सुवर्ण, रौप्य एवं रत्न समूहों से बनवाया और वे चमकने लगे ।

योधभट्ट सुल्तान का दरबारी था। फिरदौसी का शाहनामा उसे कण्ठस्थ था (म्युनिख पाण्डु० ७२बी०, ७३ ए०, मोहिबुल हसन ९३) ।

(२) जैनप्रकाश श्रीवर ने स्पष्ट लिखा है कि योधभट्ट ने काश्मीरी भाषा में जैनप्रकाश नामक ग्रथ लिखा था । उसमें सुल्तान के राज्यकाल के वृत्तान्त का वर्णन लिखा था । वह दर्पण तुल्य था जिसमें सुल्तान के राज्यकाल का पूर्ण प्रतिबिम्ब मिलता था। पीर हसन नाम 'बोदी बट' देता है—'बोदी बट एक और शख्स था जिसे फिरदौसी का शाहनामा अजबर याद था। बादशाह की महफिल में पढा करता था। इस शख्स ने जैन नामी एक किताब इलम मौसीकी में सुल्तान के नाम पर लिखकर इनाम व इकराम पाया (पृष्ठ १७९-१८०) ।

पाद टिप्पणी

कलकत्ता सस्करण की ३७२वी पंक्ति है।

३९ (१) शाहनामा शाब्दिक अर्थ महाकाव्य, जिसमें किसी राज्य के राजा का वर्णन लिखा जाता है। शुद्ध फारसी शब्द है। फारसी के प्रसिद्ध कवि फिरदौसी ने शाहनामा ग्रन्थ की रचना की थी। फिरदौसी का जन्म खुरासान के कस्बा में सन ९२० ई० में हुआ था। असदी नामक कवि का शिष्य था। उसके गुरु ने ईरान के पौराणिक राजाओं के विषय में एक ग्रन्थ लिख दिया। उसी ग्रन्थ के आधार पर फिरदौसी ने शाहनामा की रचना की थी। इसमें साठ हजार शेर है। इसने २५ वर्षों के अथक परिश्रम के पश्चात इस ग्रंथ को २५ फरवरी सन् १०१० ई० में समाप्त किया। महमूद गजनी ने खुरासान सन् ९९९ में विजय किया था। फिरदौसी ने यह काव्य गजनी को भेंट किया था। गजनी ने उसे २० हजार दिरहम पुरस्कार स्वरूप दिया था। वह सन १०२०-१०२१ ई० में दिवगत हो गया। उसकी मृत्यु तूस में हुई थी। ईरान के दर्शनीय स्थानों में फिरदौसी की मजार है। किवदन्ती है कि उसका जनाजा गाँव के फाटक से निकल रहा था तो महमूद गजनी का भेजा साठ हजार दिरहम पहुँचा। फिरदौसी की पुत्री ने सब धन दान-पुण्य में व्यय कर दिया। फिरदौसी ने जब बीस हजार दिरहम पाया था, तो गजनी के कजूसी की निन्दा की थी।

(२) भट्टावतार इनके विषय में अभी तक कुछ और ज्ञात नही है। तबक्काते अकबरी में उल्लेख किया गया है—लोदीभट्ट को पूरा शाहनाम कठस्थ था। उसने सगीत सम्बन्धी 'मामक' नामक एक पुस्तक की सुल्तान के नाम पर रचना की और इस कारण वह सुल्तान का कृपापात्र बना। (४३९-६५८)। पाण्डुलिपि में पुस्तक का नाम मानक तथा लीथो सस्करण में 'मानक' या 'मानिक' या 'मायक' लिखा मिलता है। फिरिश्ता ने 'सहूम' के स्थान पर 'बूदीत्रट' लिखा मिलता है।

(३) जैन विलास इस ग्रंथ में सुल्तान की उक्तियाँ लिपिबद्ध थी।

पाद टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ३७३वी पंक्ति तथा बम्बई की श्लोक सख्या ४० है।

४० (१) रबाब : फारसी शब्द है। सितार

तद्वाचिकाङ्गिकाहार्यसात्त्विकाभिनयोज्ज्वलम् ।
नाट्यं दृष्ट्वा जनः सर्वश्चतुर्मुखमशंसत ॥ ४१ ॥

४१ आंगिक[1], वाचिक[2], आहार्य[3], एवं सात्विक[4] अभिनय[5] से सुन्दर उस नाटक को देखकर चतुर्मुखी प्रशंसा किये।

इत्थं त्रिवर्गविद्राजा त्रिजगत्ख्यातपौरुषः ।
त्रियामास्त्रिविधैर्नृत्यैरनयत् त्रिदशोपमः ॥ ४२ ॥

४२ इस प्रकार तीनों लोक में प्रख्यात पौरुष एवं देवोपम त्रिवर्ग[1] वेत्ता राजा ने तीन प्रकार के नृत्यों[2] से तीन रात्रियाँ व्यतीत की।

के प्रकार का एक तन्तुवाद्य होता है। द्रष्टव्य टिप्पणी २ ५।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता संस्करण की ३७४वीं पंक्ति है।

४१ (१) आंगिक शरीर की चेष्टाओं से व्यक्त होनेवाला अभिनय, अर्थात् अंग के विकार, का नाम आङ्गिक है—

नाटक के पाँच अंग आङ्गिक, वाचिक तथा आहार्य, तीन प्रकार के अभिनय तथा गान एवं वाद्य मिलकर नाटक के पाँच अंग बनते हैं।

(२) वाचिक शब्दों द्वारा प्रकट होनेवाला अभिनय अथवा शब्दों से युक्त, अभिव्यक्ति वाचक क्रिया या मौखिक, शाब्दिक या मौखिक रूप से अभिव्यक्त अभिनय।

(३) आहार्य : वेष-भूषा, अलंकार, शृंगार आदि से व्यक्त होने वाला अभिनय या शृंगार अथवा वाभूषा से संप्रेषित या प्रभावित अभिनय।

(४) सात्विक . स्वेद, रोमांच आदि के आन्तरिक भावनाओं को प्रकट करनेवाला अभिनय। 'स्तम्भ स्वेदोऽथ रोमाञ्च स्वरभंगोऽथ वेपथु। वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्विक गुणा ।'

(५) अभिनय : साहित्यदर्पण अभिनय की परिभाषा करता है, जिसे श्रीवर ने यहाँ दुहरा दिया है—

भवेदभिनयोऽवस्थानुकार स चतुर्विध, आङ्गिको, वाचिकश्चैवमाहार्य सात्विकस्तथा (१७४)।

भरत मुनि ने भी यही मत प्रकट किया है—
आङ्गिको वाचिकश्चैव ह्याहार्य सात्विकस्तथा।
चत्वारो ह्यभिनया ह्येते विज्ञेया नाट्य संश्रया ॥

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता संस्करण की ३७५वीं पंक्ति है।

४२ (१) त्रिवर्ग सांसारिक जीवन के तीन पदार्थ—धर्म, अर्थ एवं काम हैं।

(२) नृत्य ताण्डव, नटन, नाट्य, लास्य, नृत्य नाम है—ताण्डव नटन नाट्य लास्य नृत्य च नर्तने। अमर० १ ७ : १०। संगीत के ताल और गति के अनुसार हाथ, पाँव तथा अंगों के हाव-भाव को नृत्य की संज्ञा दी गयी है। नृत्य के दो भेद—ताण्डव तथा लास्य है। उग्र तथा उद्धत चेष्टा जिसमें प्रकट किया जाता है, उसे ताण्डव तथा जिसमें सुकुमार अंगों से शृंगार आदि कोमल रसों का संचार किया जाता है, उसे लास्य कहते हैं। ताण्डव एवं लास्य भी दो प्रकार के पेलिव और बहुरूपक होते हैं। अभिनवशून्य अंग विक्षेप को पेलिव तथा जिनमें भावों के अभिनव होते हैं उन्हें बहुरूपक कहते हैं। लास्य नृत्य दो प्रकार का छुरित तथा यौवन होता है (द्र० १ . ४ १०)।

स्फुरद्विचकिलोल्लासहासं स भवनान्तरम् ।
आसदत् तारकापूर्णं पूर्णचन्द्र इवाम्बरम् ॥ ४३ ॥

४३ तारकापूर्ण अम्बर मे पूर्णचन्द्र समान वह राजा स्फुरित होते, विचकिल[१] (पुष्प) के उल्लास हास युक्त भवन मे पहुँचा ।

ततो विमलकुण्डान्ते पानक्रीडां महीपतिः ।
कर्तुं प्रचक्रमे तत्र पुत्रमित्रविभूषितः ॥ ४४ ॥

४४ तद उपरान्त वहाँ पर विमल कुण्ड के पास पुत्र मित्र से भूषित महीपति ने पानक्रीडा आरम्भ की ।

पितृप्रेमामृतोत्सिक्तो हाज्यखानोऽथ भक्तिमान् ।
वसन्तवर्णनोन्मिश्रां चाटूक्तिमवदद् विभोः ॥ ४५ ॥

४५. पितृप्रेमामृत से सिक्त भक्तिमान हाजीखान वसन्त वर्णन मिश्रित राजा की चाटुक्ति (प्रशसा) की ।

सगीतनादनिपुणान् कलकण्ठभृङ्गान्
कृत्वानिलं व्रततिलास्यविधानदक्षम् ।
गीतप्रियं नरपते किमु सेवितुं त्वां
प्राप्तो वसन्तऋतुचारणचक्रवर्ती ॥ ४६ ॥

४६ हे नरपते ! कलकण्ठ भृङ्गो को सगीत नाद मे निपुण तथा वायु को लता नर्तन विधान मे दक्ष बनाकर, चारण चक्रवर्ती वसन्त ऋतु गीतप्रिय आपकी सेवा हेतु उपस्थित हुआ है, क्या ?

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता सस्करण की ३७६वी पक्ति है ।

४३ (१) विचकिल एक प्रकार की चमेली है । मदन वृक्ष का नाम भी विचकिल है ।

पाद टिप्पणी

४४ कलकत्ता सस्करण की ३७७वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता सस्करण की ३७८वीं पक्ति है ।

४५ (१) चाटुक्ति खुशामद या मिथ्या प्रशसापूर्ण वचनो का प्रयोग, चापलूसी । चाटुक्तियों से राजा अच्छा शासक नही बनता ।

पाद टिप्पणी

४६ पाठ–बम्बई । कलकत्ता सस्करण की ३७९ वी पक्ति है ।

मेघाडम्बरमम्बरं यदि तदा निर्नष्टशोभा वयं
नित्यं तीक्ष्णकरेण तेन दिवसे तत्राप्यहो बाधिताः ।
स्वामी नः शशभृत्क्षयोदयहतो दुःखादितीवागता
उद्याने नरदेव सेवनपराः पुष्पच्छलात् तारकाः ॥ ४७ ॥

४७ 'यदि आकाश मेघाडम्बर ग्रस्त होता है, तो हम लोगो (ताराओ) की शोभा नष्ट हो जाती है और दिन मे भी सूर्य के द्वारा बाधित होते हैं। हमलोगो (ताराओ) का स्वामी चन्द्रमा घटाव-बढाव से नष्टप्राय है। हे राजा ! इस दुःख से मानो सेवा मे तत्पर तारकायें ही पुष्प छल से उद्यान मे आ गयी है ।

पङ्कातङ्ककलङ्किता जलमया ये भोगिदेहार्तिदा-
स्त्वद्देशे विलसन्त्युपात्तविषयाः सन्मार्गविघ्नोद्यताः ।
ते याताः स्वयमेव देव विलयं श्रीमत्प्रतापोदया-
दस्मिन् हर्षमये वसन्तसमये प्रालेयपूरा यथा ॥ ४८ ॥

४८. 'पकातक से कलकित सर्वशरीर को पीडाप्रद, सन्मार्ग से विघ्न हेतु उद्यत, जो जलापुर[1] देश में आकर, विलसित होते हैं, हे देव ! वे श्रीमान् के प्रतापोदय से उसी प्रकार स्वय समाप्त हो गये हैं, जैसे इस हर्षमय वसन्त समय में प्रलयपुर[2] ।'

श्रुत्वेति भूपतिर्हृष्टो हाज्यखानाय सत्वरम् ।
सौवर्णकर्तरीबन्धमप्रमेयं समार्पयत् ॥ ४९ ॥

४९. यह सुनकर प्रसन्न राजा ने तुरन्त हाजीखान को जागीर (प्रमेय[1]) रहित सुवर्ण कर्तरी[2] (छुरिका) प्रदान किया ।

पाद-टिप्पणी ।

४७ कलकत्ता सस्करण की ३८०वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–बम्बई, कलकत्ता सस्करण की ३८८वी पक्ति है ।

४८ (१) जलापूर बाढ ।

(२) प्रालेयपूर : तुषार किंवा हिमपूर्ण । यथा—'ईशाचल प्रालेय प्लवनेच्छया' गीत १ 'प्रालेय शीतम चलेश्वर मीश्वरोऽपि' शिशुपालवध ४ ६४ ।

पाद-टिप्पणी :

कलकत्ता सस्करण की ३८२वी पक्ति है ।

४९ (१) प्रमेय जागीर रहित अथवा जागीर मुकर्रर नमूद ।

(२) कर्तरी : पीर हसन लिखता है—बादशाह अपने तमाम बेटों में हाजी खाँ को सबसे ज्यादा अजीज रखता था । इसके निशान में सुलतान ने उसे एक जवाहरदार तलवार वख्शने के अलावा मन्सब व जागीरें भी अता की (पृष्ठ १८५) ।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान ने उसे सुनहरा पेटी प्रदान की और वह उससे सर्वदा सन्तुष्ट रहता था (४४४–६६८) ।

यैर्यैः सेवा कृता तस्य शाह्यादेशे विचार्य तान् ।
पुत्रस्नेहेन भूपालो घोषराष्ट्राधिपान् व्यधात् ॥ ५० ॥

५० शाह्य[1] देश मे जिन-जिन लोगों ने उसकी सेवा की थी, विचारकर, राजा ने उन्हे पुत्र स्नेह से घोष[2] राष्ट्र का अधिपति बना दिया।

प्रेष्याधाक्षेपसिन्ध्वौघमग्नांस्तान् सेवकव्रजान् ।
प्रसादपट्टपोतेन समुत्तीर्णान् व्यधान्नृपः ॥ ५१ ॥

५१ आक्षेप (निन्दादि) रूप सिन्धु के ओघ मे मग्न, उन सेवक समूहो को राजा ने अपने अनुग्रह[1] रूप नाव द्वारा पार कर दिये।

विद्वद्गीताङ्घ्रिभृत्येभ्यस्तस्मिन्नवसरे नृपः ।
सुताप्त्यानन्दवाष्पाढ्यो व्यधात् कनकवर्षणम् ॥ ५२ ॥

५२ उस समय पुत्र प्राप्ति के आनन्द से वाष्पपूर्ण राजा ने विद्वान्, गायक एवं भृत्यो पर कनक वृष्टि[1] की।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का ३८३वी पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का ५०वा श्लोक है।

५० (१) शाह्य देश · हिन्दुस्तान। परशियन लेखकों ने 'दर हिन्दुस्तान' अर्थ किया है।

श्रीवर ने सह्य देश का उल्लेख किया है। 'शेल' या 'शे' स्थान सिन्धु नदी पर लेह से ऊपर है। यहाँ बुद्ध की प्रतिमा बहुत ही सुन्दर पर्वत में खुदी है। मैं यहाँ जा चुका हूँ। शाह्य का पाठभेद साह्य एवं बाह्य देश भी मिलता है। उसके अनुसार परशियन लेखकों द्वारा वर्णित 'दर हिन्दुस्तान' शब्द ठीक बैठता है। काश्मीर में 'बाह्य' देश का सर्वदा तात्पर्य काश्मीर के बाहर का देश लगाया गया है। वह स्थान हिन्दुस्तान में ही होगा अतएव पारसी में 'दर हिन्दुस्तान' लिखा गया है।

(२) घोष राष्ट्र एक गाँव या परगना है कुछ स्पष्ट नही होता। इस शब्द का केवल यही प्रयोग किया गया है। इसका उल्लेख अन्य राजतरंगिणीकारों ने नही किया है।

पादटिप्पणी :

कलकत्ता संस्करण की ३८४वी पंक्ति है। प्रथम पद के प्रथम चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

५१ (१) अनुग्रह तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—हाजी खाँ ने निष्ठा के हेतु कटिबद्ध होकर इस ओर कोई कसर उठा न रखी और अपने सेवकों को जो हिन्दुस्तान की यात्रा में उसके सहायक थे सिफारिश करके उनके लिये बड़े-बड़े पद सुलतान से ले लिये तथा अच्छी-अच्छी जागीरें उनके लिये निश्चित करायी (४४४)।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता संस्करण की ३८५वी पंक्ति है।

५२ (१) कनक वृष्टि . कल्हण ने राजा क्षेमगुप्त के लिये कंकण की कथा का उल्लेख किया है (रा० ६ १६१)। श्रीवर कल्हण का अनुकरण करता, जैनुल आबदीन को 'कनकवर्षी' लिखता है। राजा अभिमन्यु का अपर नाम ही कंकणवर्षी पड गया था (रा० · ६ ३०१)।

दत्तमार्गोपचारार्था　राष्ट्रिया　दर्शनागताः ।
प्राप्तपट्टपरीधानमानतुष्टा　न　केऽभवन् ॥ ५३ ॥

५३. दर्शनागत राष्ट्रियो को मार्ग व्यय दिया। इस प्रकार रेशमी वस्त्र एव मान प्राप्त कर कौन से लोग सन्तुष्ट नही हुए ?

तान्　विलोक्य　भवनोपवनादीन्
पुष्पपूरपरिपूरितनौकः　।
संस्तुवन्　मडवराज्यनिवासान्
प्राप　जैननृपतिर्नगरं　स्वम् ॥ ५४ ॥

५४. उन भवन उपवन आदि को देखकर मडवराज निवासियो की प्रशसा करते हुए, पुष्प राशि से नाव को परिपूर्ण कर, जैन नृपति अपने नगर पहुँचा।

इति जैनराजतरङ्गिण्या पुष्पलीलावर्णनं नाम चतुर्थ सर्ग ॥ ४ ॥

जैन राजतरगिणी मे पुष्पलीला वर्णन नामक चतुर्थ सर्ग समाप्त हुआ।

पाद-टिप्पणी

५३ कलकत्ता सस्करण की ३८६वी पक्ति है।

पाद-टिप्पणी

५४ उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ३८७वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का ५४वाँ श्लोक है।

उक्त सर्ग में बम्बई सस्करण में ५४ श्लोक यथावत है। कलकत्ता सस्करण के पक्ति ३३५ से ३८७ अर्थात् ५३ श्लोक है। बम्बई सस्करण का एक श्लोक सख्या २६ कलकत्ता सस्करण में नही है।

पञ्चमः सर्गः

अत्रान्तरे सुतप्राप्त्या निश्चिन्तः सुकृतोद्यतः ।
कुल्या नवनवाः कुर्वन् प्रतिष्ठारसिकोऽभवत् ॥ १ ॥

१ इसी बीच पुत्र प्राप्ति से निश्चिन्त एव सत्कार्य हेतु उद्यत (राजा) नवीन कुल्याएँ खुदवाते हुए, प्रतिष्ठा के प्रति रसिक हो गया।

कविः श्रीजोनराजो यां स्वसदर्भान्तरेऽब्रवीत् ।
ग्रन्थविस्तारभीत्या तद्वर्णनं न मया कृतम् ॥ २ ॥

२ कवि श्री जोनराज ने जिन्हे अपने ग्रन्थ म लिखा है, ग्रन्थ विस्तार भय स वह वर्णन नही किया है।

एकैवास्त्यमरावती ननु पुरी साज्ञातनिर्माणका
तत्राप्यत्र सदा विमानवसतिर्देवादिषु श्रूयते ।
सोऽभूद् भूमिपुरंदरः पुरशत कुर्वन्नत्र सर्वतो
यत्रैते निवसन्ति मानसहितास्ते भूमिदेवादयः ॥ ३ ॥

३. स्वर्ग म एक ही वह पुरी अमरावती[1] है, जिसका निर्माण अज्ञात है। वहाँ भी सदा विमान निवास ही, देवता आदि म सुना जाता है। यहां पर सब ओर से सैकडो पुर का निर्माण करता, वह भूमि पुरन्दर हुआ, जिनमे मान सहित भूमि देव आदि निवास करते हैं।

श्रीजैननगरे पञ्चदशेऽब्दे या कृता पुरा ।
राजधानी नवात्युच्चा विद्धा देवगृहोपरि ॥ ४ ॥

४ पन्द्रहवें[1] वर्ष जैन नगर[2] मे जो नवीन राजधानी बनायी वह अति ऊँची एव अपर देवगृह विद्ध थी।

पाद टिप्पणी

१ उक्त श्लोक कल्कत्ता सस्करण को ३८८वी पंक्ति तथा बम्बई सस्करण का प्रथम श्लोक है।

पाद टिप्पणी .

३ (१) अमरावती देवताओ की पुरी अर्थात इन्द्रपुरी सुरपुरी है। इसका निर्माण विश्वकर्मा न किया था। इसमें हीर को स्तम्भावली थी। सिंहासन सुवण का था। चारो ओर सुन्दर रमणीय उपवन थ। जलस्रोत प्रवाहित थे। वहाँ सर्वदा वाद्य ध्वनि होती रहती थी (वन० ४२ ४२, उद्योग० १०३ १, अरण्य० ४८ १०), यहाँ जरा, मृत्यु एव शोक नही होता।

पादटिप्पणी

४ (१) पन्द्रहवें वर्ष सप्तर्षि ४५१५ =

तस्याः समीपे नृपतिश्चत्वारिंशेऽथ वत्सरे ।
इष्टिकादारुसंबद्धं राजवासं नवं न्यधात् ॥ ५ ॥

५ राजा ने चालीसवें[१] वर्ष उसी के समीप ईंटा और लकड़ीमय नवीन राजप्रासाद निर्माण कराया।

यत्पृष्ठे स्वर्णकलशो भातिर्भाति मनोहरः ।
हेमपद्म इवोन्मुक्तः शक्रेण श्रुतकीर्तिना ॥ ६ ॥

६ जिसके ऊपर मनोहर स्वर्ण कलश शोभित होता है, मानो इन्द्र ने कीर्ति सुनकर स्वर्ण-कलश गिरा दिया है।

यद्द्वाराग्रनियुक्तेभ्यस्तत्तत्कर्म समादिशन् ।
आजीवं सोऽवसद् राजा राजधान्युज्झितास्थितिः ॥ ७ ॥

७. जिसके द्वार पर, नियुक्त जनों को तत्-तत् कर्म का आदेश देते हुए, वह राजा राजधानी की स्थिति त्याग कर, जीवन पर्यन्त वहीं पर निवास किया।

सन् १४३९ ई० = विक्रमी १४९६ – शक १३६१ = कलि गताब्द = ४५४० वर्ष।

(२) जैननगर सारिका किंवा हरिपर्वत से अम्बुरहर तक जैन नगरी विस्तृत थी। यह जैनगगा के तट पर थी। जैनगगा को आजकल लछम कुल कहते हैं। यह राजधानी अथवा राजदान नाम से ज्ञात थी। एक मत है कि जैनदव ही जैननगर है (तारीख रशीदी पृ० २४९)।

मिर्जा हैदर लिखता है कि यह भव्य इमारत १२ मंजिलों की थी। प्रत्येक मंजिल में ५० कमरे थे। मिर्जा हैदर ने इसे सन् १५५३ ई० में देखा था। तत्पश्चात् यह नष्ट हो गया। उसके गौरव की स्मृति में पर्वों, उत्सवों तथा रमजान अब पर महिलाएँ गाना गाती हैं।

शुक ने इसका उल्लेख किया है (शुक० २ ६७)। जोनराज ने भी इसका उल्लेख किया है (जो० . ८६९)। यहाँ की आबादी सोवरा से हरिपर्वत तक फैली थी। एक मत से मुस्लिम नाम नौशहरा तथा प्राचीन नाम विचार नगर था। इसे राजदान या राजधानी मिर्जा हैदर दुगलात के समय मध्य सालहवी शताब्दी तक कहते थे।

पाद-टिप्पणी

५ (१) चालीसवें वर्ष सप्तर्षि ४५४० = सन् १४६४ ई० = १५२१ विक्रमी = शक संवत् १३८६ = कलि गताब्द ४५६५ वर्ष।

पाद-टिप्पणी

६ (१) श्रुतकीर्ति प्रसिद्ध, विश्रुत, उदार व्यक्ति आदि।

पाद टिप्पणी

७ श्री कण्ठकौल संस्करण के उक्त श्लोक का चतुर्थ पाद अर्थात् द्वितीय पंक्ति का अन्तिम भाग का पाठ मानकर अनुवाद करने पर अर्थ नहीं बैठता, बम्बई तथा कलकत्ता संस्करण का पाठ मानकर अनुवाद करने पर यह कठिनाई दूर हो जाती है। श्री कण्ठकौल का पाठ है—राजधान्युज्झितस्थिति ।

यत्र वापीगता हंसा गीतशंसां स्वनच्छलात् ।
कुर्वन्तीव समीपस्था गायद्गीताङ्गिसंस्कृतैः ॥ ८ ॥

८. जहाँ पर समीपस्थ वापीगत[1] हंस शब्द व्याज से, मानो गान करते, गायकों की गीत की प्रशंसा करते थे।

यत्र सर्वीकृताराति: सुपर्वाधिपतिर्यथा ।
सर्वाहः सुखगन्धर्वचर्वणैरनयत् सुखम् ॥ ९ ॥

९. जहाँ पर इन्द्र के समान शत्रु को नीचा कर, सुखपूर्वक गन्धर्व[1] विद्या का आनन्द लेते हुए, सब दिन व्यतीत करता था।

यदन्तरे सुविस्तीर्णः सर्वदर्शनमण्डपः ।
काचभित्तिमयो भाति त्र्यश्रसिंहासनोज्ज्वलः ॥ १० ॥

१०. जिसके मध्य सुविस्तीर्ण, काचमय, भित्तिवाला तथा त्रिकोण सिंहासन[1] से सुन्दर सर्वदर्शन मण्डप[2] शोभित होता था।

यद्गर्भाद् धूपसंदर्भनिर्भरान्नृपसंश्रितात् ।
वातोऽपि सफलो यातः प्रातर्घ्राणसुखप्रदः ॥ ११ ॥

११. नृप सेवित, धूप-गन्ध-व्याप्त, जिसके (राजप्रासाद) मध्य से प्रात: सुखप्रद वायु भी सफल होकर, निकलती थी।

पाद-टिप्पणी :

पाठ-बम्बई।

८ (१) वापी : वापी को दीर्घिका या बावली कहते हैं। वापी बड़ा आयताकार जलाशय होता है। उसमें शिलाबद्ध सीढ़ियाँ होती हैं, जिससे उतर, जल लिया जा सकता है। सरोवर, कूप, वापी, तड़ाग सबके अर्थों में अन्तर है—वापी चासिन्मरकत शिलाबद्ध सोपान मार्गा—मेघ० : ७६।

पाद-टिप्पणी :

९ (१) गन्धर्व विद्या : ज्ञान विद्या, संगीत कला, शास्त्रीय संगीत को गन्धर्व विद्या कहते हैं। भरत मुनि, जिनका काल लगभग दूसरी शती ईसा पूर्व रखा जाता है, उस समय से सारंगदेव तेरहवी शताब्दी तक शास्त्रीय संगीत की परम्परा भारत में प्रचलित थी। मुसलमानी आक्रमण एवं भारत के पराधीन हो जाने के पश्चात्, इरानी तथा मुसलिम देश प्रभावित संगीत का प्रचार दरबारों का आश्रम पाकर प्रचलित हो गया। भारत के प्रदेश एक दूसरे से दूर थे। उनमें अराजकता के कारण सम्पर्क नहीं रह गया था। शास्त्रीय संगीत के स्थान पर देशी संगीतों का विकास होने लगा। शास्त्रीय संगीत परम्परा शिथिल तथा स्थानीय रूप, व्यापक भारतीय रूप के स्थान पर लेने लगी। नाम भी गन्धर्व विद्या से बदल कर दूसरा पड़ गया।

पाद-टिप्पणी :

१०. (१) सिंहासन : सोने का बना था (२ : ६)।

(२) मण्डप : दरबारे-आम।

कदाचिल्लाहर दुर्गे यात्रां द्रष्टुं गतो नृप ।
राजवास नव कृत्वा जीर्णोद्धारमकारयत् ॥ १२ ॥

१२ किसी समय राजा यात्रा देखने के लिये, लहर[1] दुर्ग गया। वहाँ राजवास का जीर्णोद्धार कर, नया बनाया।

समुद्रकोटादारभ्य यावच्छ्रीद्वारकावधि ।
तत्तन्नवनवावासवासवालयसुन्दरान् ॥ १३ ॥

१३ समुद्रकोट[1] से लेकर द्वारका[2] पर्यन्त, नये नये इन्द्र गृह के समान, सुन्दर नवीन, आवासो से युक्त—

जैननामाङ्कितान् ग्रामानकरोन्नगभूषितान् ।
उपतीर महापद्मश्रीमत्पन्नगभूषितान् ॥ १४ ॥

१४ जैन[1] नाम से अंकित, नग भूषित[2], महापद्म एवं श्रीमद् पन्नग विभूषित ग्रामो को उसके तट पर निर्मित कराया।

तदन्नसत्रतृप्तानामर्थिनां त्रिपुरेश्वरे ।
उदर मेदुर क्षान्तो राजा लम्बोदरः कथम् ॥ १५ ॥

१५ त्रिपुरेश्वर[1] मे उसके अन्नसत्र[2] से तृप्त, याचको का उदर परिपूर्ण हुआ और नही सो क्षमाशील राजा लम्बोदर[3] (गणेश) कैसे हुआ?

पाद-टिप्पणी

१२ (१) लहर वर्तमान परगना लार है। पूर्वकाल में लहर कहा जाता था। सिन्ध उपत्यका का पश्चिमी अचल है। तहसील का केन्द्र भर तल है।

पाद-टिप्पणी

१३ (१) समुद्रकोट वर्तमान सुन्दरकोट है। डलरलेक के पूर्वीय तट पर है (रा० क० १ १२५-१२६)। सिंघिडा के पैदावार के समय यहाँ चहल-पहल हो जाती है। इसका उल्लेख पुन श्रीवर नही करता।

(२) द्वारका अन्दरकोट (रा० क० ४ ५०६-५११) तथा श्रीवर० ४ ३४७।

पाद टिप्पणी

१४ (१) जैन जैनुल आबदीन।

(२) नग भूषित वृक्षो से विभूषित, जैन ग्राम निर्माण कराया। यदि नग का अर्थ सात मान लिया जाय तो सात ग्रामो का निर्माण महापद्मसर के समीप कराया था।

(३) पन्नग भूषित पन्नग का अर्थ सर्प होता है। सर्प नाग को भी कहते हैं। महापद्मसर मे नाग अथवा जलस्रोत आकर मिलते थे। उन्ही की ओर श्रीवर सकेत करता है। जैन नाम का ग्राम नाग (जलस्रोत) स्थानो पर निर्माण कराया।

पाद टिप्पणी

१५ (१) त्रिपुरेश्वर श्रीनगर के समीप एक तीर्थ था। वर्तमान त्रिफर है डललेक से ३ मील दूर है (रा० क० ४ ४६, ६ १३५ ५ १२३, ७ १५१, ५२६ १५६)।

(२) अन्नसत्र श्रीवर राजा के द्वारा

अन्नसत्रे क्षितीशान्नैर्वाराहक्षेत्रभूमिषु ।
अस्तु नम्रशिराः शेषश्चित्रमिन्द्रोऽपि चाभवत् ॥ १६ ॥

१६ वाराहक्षेत्र[1] भूमि पर, अन्नसत्र[2] में राजा के अन्न से शेषनाग का मस्तक, नत हो गया और इन्द्र चकित हो गये।

मत्स्येभ्यो नित्यतृप्तेभ्यः सूक्ष्माणामभयं ददौ ।
मत्स्यानामन्नसत्रेण वितस्तासिन्धुसंगमे ॥ १७ ॥

१७ वितस्ता एवं सिन्धु के संगम[1] पर अन्नसत्र से नित्य तृप्त मत्स्यों से छोटी मछलियों[2] को अभयदान दे दिया।

अर्थिनामतितृप्तानां श्रीशङ्करपुरे नृपः ।
अपेक्ष्य निदधे छायां न फलानि महीरुहाम् ॥ १८ ॥

१८ राजा ने शंकरपुर[1] में अत्यन्त तृप्त, अर्थियों के लिये, वृक्षों के फल की नहीं, बल्कि छाया[2] की अपेक्षा की।

चलाये गये अन्नसत्रों का उल्लेख आरम्भ करता है। परशियन इतिहासकारों के उल्लेख से पता चलता है कि श्रीनगर में रैनवारी स्थान में हिन्दू राजाओं के काल में एक विशाल भवन में बाहर से आये तथा काश्मीरस्थ तीर्थों एवं देवस्थानों की यात्रा करनेवालों के लिये अन्नसत्र चलता था। जैनुल आबदीन ने एक भवन निर्माण कराकर निवास तथा अन्नसत्र की व्यवस्था कर दिया (तुहफातुल अहबाब २२६-२२७ क्यूहात कुबराविया पाण्डु० २०० बी)।

(३) लम्बोदर गणेश का एक नाम लम्बोदर है। उनका उदर भोजन करने से उन्नत हो गया है। श्रीवर यहाँ यही उपमा देता है कि अन्नसत्र में याचक इतने तृप्त हो गये कि उनका पेट उन्नत हो गया। इससे यह प्रकट होता है कि सुल्तान जैनुल आबदीन का पेट या तोन्द निकला था। शाब्दिक अर्थ भोजनभट्ट स्थूलकाय भारी भरकम तोंन्दवाला होता है।

पाद टिप्पणी

१६ (१) वाराहक्षेत्र वाराहमूला समीपस्थ स्थान वाराहक्षेत्र तथा वाराहतीर्थ कहा जाता था।

(२) अन्नसत्र वह स्थान जहाँ भूखों को भोजन दिया जाता है। अन्नसत्र तथा लंगर भी अर्थ होता है।

पाद टिप्पणी

१७ (१) संगम काश्मीर का प्रयाग = शादीपुर समीपस्थ।

(२) मछली बड़ी मछलियों का इतना पेट भर गया था कि वे छोटी का नहीं खा सकती थी। इस प्रकार राजा के कारण छोटी मछलियों की जीवन रक्षा हो गयी।

श्रीदत्त ने भावानुवाद किया है कि छोटी मछलियों को प्रतिदिन भात खिलाता था जिससे उनकी रक्षा हो गयी था।

पाद टिप्पणी

१८ (१) शंकरपुर वर्तमान पाटन = पत्तन (रा० क० ५ : १५६)।

(२) छाया श्रीदत्त ने अनुवाद किया है कि याचकों की प्रार्थना पर, जिन्हें वह खिलाता था,

अश्रमायां व्यधादन्नसत्रैः सन्तर्पयन् जनान् ।
भङ्गं शृङ्गाटवल्लीनां शृङ्गाटैरतिसस्कृतैः ॥ १९ ॥

१९ राजा ने अश्रमा स्थान पर अन्नसत्रो द्वारा लोगो को अति सस्कृत शृगारों से तृप्त करते हुए, शृगार लताओ का अभाव कर दिया।

तस्य पद्मपुरे चान्नसत्रे व्यञ्जनसौरभैः ।
कथं न कुङ्कुमस्याभूद् गन्धभेदकदर्थना ॥ २० ॥

२० पद्मपुर[1] मे उसके अन्नसत्र के अवसर पर, व्यञ्जन की सुगन्धि से कुमकुम की गन्ध की कदर्थना, (निन्दा) क्या नही हुई ?

अच्छिन्नेनान्नसत्रेण विजयेश्वरवासिनाम् ।
उदरे मेदुरे सिद्धः प्रणामो यत्नतो विभोः ॥ २१ ॥

२१ निरन्तर चलते उसके सत्र से विजयेश्वर[1] निवासियो के भरे पेट से, भगवान् का प्रणाम भी यत्न से सिद्ध होता था।

श्री शकरपुर में वृक्षो का रोपण किया, जो छाया देते थे न कि फल। पेट भरने के लिये फल की आवश्यकता होती थी। सुलतान ने पेट भर दिया था, आवश्यकता थी, भोजनापरान्त तरु की शीतल छाया में बैठकर आराम करने की।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

१९ (१) अश्रमा स्थान का पता नही चलता। अनुसधान अपेक्षित है।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

यह श्लोक कलकत्ता सस्करण में नही है। बम्बई सस्करण का २०वाँ श्लोक है।

२० (१) पद्मपुर = पामपुर। झेलम नदी के दक्षिण तट पर है। श्रीनगर से ३ मील दूर उत्तर-पूर्व है। श्रीनगर से नाव द्वारा ५ या ६ घण्टो में पहुँच सकते हैं। नगर में पुराने कूप बहुत मिलते है। यहाँ एक जामा मसजिद तथा जियारत—शोका बाबा, शाह हमदान, सैय्यिद सफीद, सैय्यिद नियाम तुल्ला तथा नन्द साहिब की है। शहर के नीचे तथा झेलम के तट पर नन्दबाग है। एक हिन्दू मन्दिर का चिन्ह तथा पहाड़ी के दक्षिण भाग में अन्य हिन्दू प्राचीन भग्नावशेष के चिन्ह मिलते हैं। शोका बाबा की जियारत हिन्दू मन्दिर पर बनी है। पद्मस्वामी के भव्य मन्दिर के केन्द्रीय अधिष्ठान के स्तम्भावली के केवल दो स्तम्भ शेष रह गये है (रा०क० ४ ६९५)। द्र० जैन० १ ६ १, ४ १३१, ३४२।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

२१ (१) विजयेश्वर = बिजब्रार = बिज बेहरा = विजयेशा = विजयश्वर क्षेत्र तथा तीर्थ। शारदा एवं विजयेश्वर काश्मीर में दो स्थान विद्या के केन्द्र तथा पीठ थे। नगर झेलम या वितस्ता के दोनो तटों पर आबाद है। अनन्तनाग से ६ मील तथा श्रीनगर से ३० मील पर है। अवन्तीपुर से ९ मील पर है। नगर के पश्चिम तरफ वहीद बाबा अदर का ऊँची जमीन है। वहाँ एक वृक्ष है। हिन्दू वहाँ पूजा करते हैं। झेलम की गहराई पुल के नीचे ६ फीट है। नगर का अधिक भाग नदी के दक्षिण

अन्नसत्रमविच्छिन्नं कृत्वा शूरपुराध्वना ।
शुल्कास्थाने व्यधाद् राजा भारिकानभिसारिकान् ॥ २२ ॥

२२ राजा ने शुल्क के स्थान पर, अविच्छिन्न अन्नसत्र प्रदान कर, शूरपुर[1] मार्ग से जानेवाले अभिसारिकों को भारवाही बना दिया ।

तट पर है । नगर में दश से ऊपर मसजिदें तथा आठ जियारतें हैं । उनमें बाबा नसीरुद्दीन गाजी की जियारत सबसे बड़ी है । यह नदी के वाम तट पर नगर के उत्तर जामा मसजिद के समीप है । बादशाही बाग सन १६५० ई० म दारा सिकोह के आदेश पर बनाया गया था । द्र० १ : ३ १३, १ ४ ४, ३ २०३, ४ ५३२ ।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई

२२ (१) शूरपुर =हूरपुर (रा० क० ३ २२७, ५ ३९ ७ ५५८, १३४८–१३५५, ८ १०५१-११३४ आदि, श्रीवर १ १ १०७, १६४, ३ ४२, ४ ३९, ४४२, ५२६, ५३१, ५५८, ५८४, ६०६ ।

(२) अभिसार शब्द यहाँ श्लिष्ट है । अभिसार का अर्थ जानेवाले मुख्यत शीघ्र जानेवाला होता है । उन्हें राजा ने इतना भोजन खिला कर बोझिल कर दिया कि वे शीघ्र चलने या जाने योग्य नहीं रह गए थे । अभिसार का दूसरा अर्थ एक अभिसार देश के रहनेवालों से लगाया जा सकता है । दर्वा-भिसार शब्द का एक साथ प्रयोग किया गया है । दर्वाभिसार की दव जाति झेलम तथा चनाव नदियों के मध्यवर्ती पूंछ तथा नौशेरा अचल में रहती थी । पुराण, महाभारत तथा बृहत् संहिता में पजाब की जातियों के सन्दर्भ में दर्वाभिसार का उल्लेख किया गया है । राजौरी का पर्वतीय क्षेत्र दर्वाभिसार में आता है । भीमवर इसी क्षेत्र में एक लघु राज्य था । काश्मीर राजा उत्पलापीड के समय यह काश्मीर के अन्तर्गत था । शकर वर्मा ने उस पर पुन विजय प्राप्त किया था, जब वह गुजरात, जा भीमवर के दक्षिण था, विजय हेतु गया था । दर्वाभिसार का उल्लेख सिकन्दर के अभियान के समय भी मिलता है । यहाँ का राजा सिकन्दर के पास गया था । [redacted] एक जाति है । यह बल्लावर तथा जम्मू में रहती थी । दर्व जाति के साथ ही अभिसार जाति आबाद थी । इन्हीं जातियों के नाम पर क्षेत्र का सम्मिलित नाम दर्वाभिसार पड गया था । अभिसार का उल्लेख बृहत्संहिता में वराह मिहिर ने किया है । अभिसार झेलम-चनाव के मध्य का अचल था, जब कि एक मान्यता के अनुसार दर्व चनाव तथा रावी के मध्य माना गया है । दर्व तथा अभिसार दो जातियाँ तथा जनपद थे । प्राचीन काल में दो जनपदों को मिलाकर भी नामकरण किया जाता था, जैसे काशी-कोसल आदि । महाभारत में दव एव अभिसार दो भिन्न जनपद माने गये हैं (रा० ८ १५३१, १८६१, ४ ७१२, १४१, सभा० ५१ १३, ४८ १२, १३, भीष्म० . ९ ५४, २७ २९, ५२ १३, ९३ . ४४, बृहत् संहिता १४ २९, अल्बेरूनी १ ३०३, द्रष्टव्य टिप्पणी ४ ७१२) ।

इसी अर्थ के अनुसार अर्थ होगा कि राजा ने अभिसार निवासियों को जो अन्नसत्र में भाग लिये थे, उन्हें इतना खिला दिया कि वे कश्मीर से अभिसार अपने देश जाने में भारवाही व्यक्ति की तरह शिथिल हो गये थे ।

गुणी मूर्खो निराचारः साचारो यवनो द्विजः ।
नापोषि यस्तदन्नेन कश्मीरेषु स नाभवत् ॥ २३ ॥

२३ काश्मीर म ऐसा कोई गुणी, मूर्ख, निराचार, साचार, यवन, द्विज[1] नही रहा, जिसका उसके अन्न से पोषण नही हुआ।

शम्भुश्रीपतिधातृजह्नुमनुभिः पूर्वं रवेरन्वये
जातेनापि कृतः श्रमस्त्रिपथगा गङ्गैव जाता नदी ।
तेषां स्वार्थमभूद्रसो नरपतिः सोऽस्य परार्थे पुन-
र्देशेऽस्मिन् स्वधिया नदीर्नवनवा नानापथः कृष्टवान् ॥ २४ ॥

२४ पूर्व म शिव[1] श्रीपति[2], ब्रह्मा[3], जन्हु[4] मनु[5] ने तथा सूर्यवंश म उत्पन्न (भगीरथ[6]) ने श्रम किया, तब गंगा (अवतरण) हुआ, उन लोगो का उसम स्वार्थ था किन्तु यह नरपति परोपकार हेतु ही अपनी बुद्धि स, इस देश म नाना पथवाली, नयी-नयी नदियां, निर्मित करायी।

पाद-टिप्पणी

२१ पाठ–बम्बई

२३ (१) द्विजादि बहारिस्तानशाही में भी सुलतान के इन पुण्य कार्यो का उल्लेख मिलता है (पाण्डु० फोलियो ४८ बी०)।

पाद टिप्पणी

२४ (१) शिव—ब्रह्मा, विष्णु एव शिव त्रिदेव है। शिव ईशान है। विषपान करन के कारण इनका नाम नीलकण्ठ पड गया था। ग्यारहों रुद्र के पिता है। किरात वष धारण कर अजुन स युद्ध तथा उन्हे वरदान दिया। गंगावतरण के समय शिव न गंगा का वग अपनी जटा में रोक लिया था। भगवान् शिव का आवास कलाश माना गया है। त्रिपुर का वध करन के कारण इन्हें त्रिपुरारी कहा गया है। कामदव को भस्म कर दिया था। शिव क शरीर स वीरभद्र पैदा हुए थे। वृषभ इनका वाहन है। वही ध्वज भी है। इन्हें त्रिनत्र भी कहत हैं। तीसरा नेत्र खुलने पर पृथ्वी का संहार होता है। इनक अनेक पर्यायवाची नाम हैं। शिव योगी कहे जाते हैं। ताण्डव नृत्य के जनक हैं। नटराज हैं।

(२) श्रीपति भगवान विष्णु = लक्ष्मीपति = नारायण।

(३) ब्रह्मा सृष्टि क सृजनकर्ता है। विष्णु सिंचनकर्ता एव शिव संहारकर्ता है। प्रजाओं के स्रष्टा हैं। विष्णु के समान ब्रह्मा क भी अवतार—मानस, कायिक, चाक्षुष, वाचिक, श्रवणज, नासिकज, अण्डज एव पद्मज है। पुराणो में ब्रह्मा का चतुर्मुख रूप से वर्णन मिलता है। ब्रह्मा न अपन शरीर के अधभाग से सतरूपा नामक स्त्री का निर्माण किया। वही इसकी पत्नी बनी। यह कथा बाइबिल के आदम एव होवा से मिलती है। प्रथमत ब्रह्मा के पाँच मुखों का वर्णन है। किन्तु शकर के कारण यह पाँचवें मुख से रहित हो गया। ब्रह्मा एव शकर के विरोध की अनेक कथायें पुराणों म प्राप्त हैं। मत्स्य एव महाभारत क अनुसार इसक शरीर स मृत्यु की उत्पत्ति हुई है। पुराणो क अनुसार ब्रह्मा के चार मुखो स चार वदो की उत्पत्ति हुई है। पूर्व मुख से गायत्री छद, ऋग्वद, त्रिवृत, रथतर एव अग्निष्टोम। पश्चिम स सामवद, सप्तदश ऋक्समूह, वैरूप साम एव अतिराज यज्ञ। उत्तर स अथर्ववेद एकविंश ऋक्समूह, आप्तार्याम, अनुष्टुप छद एव वैराज तथा दक्षिण से यजुर्वेद, पचदश ऋक्समूह बृहत्साम एव उक्थ यज्ञ उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्मा की मानस कन्याओं में सरस्वती उस प्रिय है। पद्मपुराण में ब्रह्मा क १०८ स्थानों का निर्देश प्राप्त है। पद्मपुराण के अनुसार ब्रह्मा की

नवीनोदारकेदारभूम्युत्पन्नाः प्रतिस्थलम् ।
कूटा धान्यफलैः पुष्टा दृष्टाः पर्वतसन्निभाः ॥ २५ ॥

२५. हर स्थान पर नवीन केदार[1] भूमि मे उत्पन्न धान्य-फल से पूर्ण, पर्वत सदृश, (धान) ढेर दिखायी देते थे।

आयु के पचास वर्ष बीत चुके हैं। इसका रात्रिकाल ही नैमित्तिक प्रलयकाल माना जाता है। ब्रह्मा का एक दिन ४३,२,००,००,०० वर्ष का माना जाता है। ब्रह्मा का एक वर्ष विष्णु के एक दिन के बराबर एवं विष्णु एक वर्ष शंकर के एक दिन के बराबर होता है।

(४) जह्नु : अजमीढ के पुत्र थे। माता का नाम केशनी था। अजमीढ के पिता हस्तिन् ने हस्तिनापुर की स्थापना किया था।

जन्हु एक ऋषि हैं। भगीरथ गंगा लाये। इनका नाम गंगावतरण के सन्दर्भ में आता है। इनका यज्ञस्थल गंगा अपने प्रवाह में बहा ले गयी। क्रुद्ध होकर गंगा के समस्त जल का पान कर लिया। देवों की प्रार्थना पर अपने कान से गंगा को निकाल दिया। गंगा को इनकी पुत्री कहकर जान्हवी नाम रखा गया है (रामा० बाल० ४३ ३५-३८), (आदि० ९९ ३२, अग्नि० २७८ १६, वायु० ९१)।

(५) मनु : आदि पुरुष है। ऋग्वेद में इसे पिता कहा गया है। मानव जाति को मनु का प्रजा माना गया है। मनु ने यज्ञप्रथा का आरम्भ किया था। विश्व का प्रथम यज्ञकर्ता है। इसने सर्वप्रथम हवि प्रदान किया था। इन्होंने अग्नि की स्थापना किया था। चौदह मनवन्तर माने गये हैं। प्रत्येक मनवन्तर का एक मनु होता है। इस समय वैवस्वत मनवन्तर चल रहा है। प्रत्येक मन्वतर के मनु, सप्तर्षि, देवगण, इन्द्र, अवतार पुत्र भिन्न होते हैं। मनु के दस पुत्र थे। उन्होंने राजवंशों की स्थापना की थी—इक्ष्वाकु, अयोध्या-(इक्ष्वाकु वंश) शर्याति (आनर्त देश-शर्याति राजवंश) नाभा ने दिष्ट (उत्तर बिहार-वैशाल राजवंश) *नाभाग* (मध्य देश नाभाग राजवंश), धृष्ट (बाहीक प्रदेश-धार्ष्टक क्षत्रिय राजवंश), *नरिष्यन्त* (शक वंश), करुष (रेवा प्रदेश-करुष वंश), पृषध्र (राज्य नहीं मिला), प्रांशु (वंश की जानकारी नहीं प्राप्त है), मनु की रचना 'मनुस्मृति' किंवा मानव धर्मशास्त्र है।

(६) भगीरथ : इक्ष्वाकुवंशीय सम्राट दिलीप के पुत्र थे। प्रपितामह *असमंजस थे* और पितामह-अंशुमत थे। असमंजस के पिता राजा सगर के ६० हजार पुत्र कपिल मुनि के शाप के कारण दग्ध हो गये थे। कपिल ने कहा दिवंगत आत्माओं को शांति गंगावतरण से होगी। अंशुमान तथा दिलीप ने तप किया किन्तु सफल नहीं हुए। *भगीरथ ने हिमालय* पर घोर तप किया। गंगा पृथ्वी पर आने के लिए उद्यत हो गयी। गंगा का वेग रोकने के लिए भगीरथ ने शंकर की तपस्या किया। शंकर गंगा प्रवाह जटा द्वारा रोकने के लिए तत्पर हो गये। गंगावतरण *हुआ। भगीरथ गंगा को उस स्थान पर ले गये जहाँ* राजा सगर के ६० हजार पुत्र दग्ध हुए थे। गंगा-स्पर्श से सगर पुत्र मुक्त हो गये। गंगा का अवतरण भगीरथ के कारण हुआ था अतएव गंगा का नाम भागीरथी पड़ा। गंगावतरण के पश्चात् भगीरथ पूर्ववत् राज्य करने लगे। *भगीरथ ने कालान्तर में* अपनी दानशीलता के कारण प्रसिद्धि प्राप्त किया। महाभारत में वर्णित सोलह श्रेष्ठ राजाओं में एक भगीरथ भी है।

पाद-टिप्पणी

२५ (१) केदार भूमि : धान का खेत अथवा धान की क्यारी, जल से भरा खेत।

धान्यकूटच्छलान्नूनं साभूद् धात्र्याः कुचस्थली ।
प्राप्तोपाया प्रजा यस्माद् वृद्धिमापद् दिने दिने ॥ २६ ॥

२६ धान्य के ढेर के व्याज से, वह निश्चय हो, धात्री की कुचस्थलो हो गयी थी, जिससे तृप्त होकर, प्रजा प्रतिदिन वृद्धि प्राप्त कर रही थी।

दुर्लभोपद्रवानिम्ना यत्र यत्राभवत् क्षितिः ।
स सुय्य इव सस्याढ्यां तत्र तत्राकरोन्नृपः ॥ २७ ॥

२७ जहाँ-जहाँ, भूमि दुर्लभ उपद्रव ग्रस्त होती, वहाँ-वहाँ, सुय्य[1] की तरह इस राजा ने सस्य सम्पत्ति पूर्ण किया ।

न तत् स्थलं न कन्तारो न स देशो न साटवी ।
यत्र नानीय कुल्याः स्वाः स्वनामाङ्काः पुरीर्व्यधात् ॥ २८ ॥

२८ वह स्थल नही, वह कन्तार (बन) नही, वह देश नही, वह अटवी नही, जहाँ इसने कुल्या[1] लाकर, अपने नाम की पुरी न बनायी हो ?

न सा नदी न तत् क्षेत्रं न स ग्रामो न सा पुरी ।
न तत् स्थानं न यद् राज्ञा जैननामाङ्कितं कृतम् ॥ २९ ॥

२९ वह नदी नही, वह क्षेत्र नही, वह ग्राम नही, वह पुरी नही और वह स्थान नही, जिसे राजा ने जैन नामांकित नहीं किया ।

यत्र यत्राभवन्निम्नः प्रदेशस्तत्र कुल्यया ।
व्यधाद् राजा सरः पक्षिबिसशृङ्गाटभूषितम् ॥ ३० ॥

३० जहाँ-जहाँ पर, निम्न प्रदेश था, वहाँ कुल्या द्वारा पक्षी तथा कमल, शृंगाट, विभूषित सरोवर बनाया ।

पाद-टिप्पणी

२६. (१) कुचस्थली जिस प्रकार स्त्री के समतल छाती पर कुच उठे ढेर की तरह लगते हैं, उसी प्रकार धानों के लगे ढेर से समतल खेत उठी स्थली तुल्य लगते थे ।

पाद-टिप्पणी

२७ (१) सुय्य अवन्तिवर्मा का मन्त्री । अपने समय का चतुर अभियन्ता था । इसने वितस्ता का जल प्रवाह बदल दिया था । उसकी योजना से काश्मीर की रक्षा जलप्लावनो से हो गयी थी (रा० क० ५ ७२, ९८, १०९, ११८, ६ १३३) ।

पाद-टिप्पणी

२८ (१) कुल्या = छोटी नहर कुल्याम्भोभि पवन चपलैं शालिना धौत मूला (श० १ . १५) ।

श्रीवर ने यहाँ अनोखी उपमा प्रस्तुत की है ।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई ।

३० कलकत्ता संस्करण की ४१६वी पंक्ति तथा बम्बई का ३०वाँ श्लोक है ।

धान्यो वारिधरो धरोपकरणोद्युक्तः सदा जीवनै-
र्यः सिन्धोः सलिलं निरर्थकतया निन्ये निकृष्यान्वहम् ।
कान्तारेष्वफलेषु केषु रुचिरं मुञ्चत्यभीक्ष्णं यत-
स्तत्सेकोदितसर्वसस्यविभवो लोकः सुखी जायते ॥ ३१ ॥

३१ जीवन द्वारा धरा का सदैव उपकार हेतु उद्यत, वारिधर धन्य है। जोकि प्रतिदिन निरर्थक सिन्धु के जल को लेकर, कुछ निष्फल वनों में, प्रचुर वर्षा करता है, उस जल के सेक से उत्पन्न, सब सस्य के वैभव से सम्पन्न, संसार सुखी होता है।

लोके डल इति ख्यातं यदगाधं सरोवरम् ।
तस्य प्रतिष्ठाप्रस्तावाद् वर्णनं क्रियते मनाक् ॥ ३२ ॥

३२ संसार में डल[१] नाम प्रसिद्ध जो अगाध सरोवर है, प्रतिष्ठा प्रस्तावश, उसका कुछ वर्णन किया जाता है।

आ राजधान्या यद् दीर्घं सुरेश्वर्याः सरोवरम् ।
नौकारूढोऽचरन्नित्यं व्योम्नीवेन्दुः सुनिर्मले ॥ ३३ ॥

३३ राजधानी तक वहाँ सुरेश्वरी[१] का सरोवर है, उसमें निर्मलाकाश से चन्द्रमा सदृश, नौकारूढ होकर, नित्य विचरण करता था।

अरित्रपत्रा यत्रान्तः सोड्डीनाः पटसुन्दराः ।
पोता इवारुचन् पोता राज्ञः शाकुनिकान्विताः ॥ ३४ ॥

३४ जिसमें अरित्र (डाडा-चप्पा) रूप पत्रवाले उड़ते हुए पट से सुन्दर साकुनिकों[१] से अन्वित, राजा के पोत[२] (नाव) पक्षिसावक सदृश शोभित हो रहे थे।

पाद टिप्पणी

३१ (१) वारिधर : मेघ = बादल। विक्रमाङ्कदेवचरित में बिल्हण कवि ने वारिधर शब्द का सुन्दर प्रयोग किया है— नव वारिधराद्या-द्रोभिन्नवितन्व न निरातपवरम्यं (४ : ३)।

पाद टिप्पणी

३२ (१) डल : इसका प्राचीन नाम 'ज्येष्ठ रुद्र समीपस्थ सर' तथा 'सुरस्वरी सर' था। आज कल इसे डल कहते हैं। राजतरंगिणी में प्रथम बार 'डल' नाम का यहाँ प्रयोग किया गया है। 'डल्ल सर' (जैन० ४ : ११८) नाम से डल का सम्बोधन किया गया है। यह श्रीनगर के पूर्वदिशा में है। जैन० ४ : ११८।

पाद टिप्पणी

३३ (१) सुरेश्वरी सरोवर : डल लेक है। डल तिब्बती शब्द है जिसका अर्थ निस्तब्धता अथवा खामोशी होता है (क० : ५ : ३७-४१, ६ : १४७ : ८ : ५०६ : ७४४ : आन० ६०२)। श्रीनगर के पूर्व है। जैन० : १ : ५ : ४०, शुक० ।

पाद टिप्पणी

३४ (१) साकुनिक : सगुन जानने वाले अथवा बहेलिया दोनों अर्थ यहाँ लग सकता है। पक्षी

तिलप्रस्थागता यत्र तटिनी त्रिपुरेश्वरात् ।
संगच्छते सुटङ्कां यल्लङ्कां द्रष्टुमिवोत्सुका ।। ३५ ।।

३५ जहाँपर त्रिपुरेश्वर[1] से आयी, तिलप्रस्था[2] नदी मानो लंका[3] को देखने के लिये, उत्सुक होकर, सुटंका की ओर जाती है ।

के साथ वहेलिया तथा नाव के साथ साकुनिक अभिप्राय अभिप्रेत है ।

(२) पोत उक्त वर्णन डल लेक का है। पक्षी अपना डैना फैला कर पंख फड़फड़ाता उड़ता है। नाव से पक्षी की उपमा दी गयी है। नाव के दोनों ओर चप्पा (डाँड़े) चलते है। वही पक्षी के पंख है। नाव पर पाल लगता है। वस्त्र लगते है। या वस्त्र से नाव धूप या वर्षा बचाने के लिये सजा या ढक दिया जाता है। उन पर पताकाएँ भी लगायी जाती है। पाल और डाँड़ो से चलती नावें गहरे हरे जल पर, नील गगन में उड़ते पक्षी की तरह लगती हैं। डल का यह दृश्य वही समझ सकता है, जिसने डल लेक के तट पर खड़ा होकर, यह दृश्य देखा होगा। सुदूर प्राचीन काल से जल परिवहन काश्मीर में बहुत विकसित रहा है। वितस्ता, उल्लोल (उलर) तथा डल में नावें परिवहन के काम में आती रही हैं। नावें छोटी तथा बहुत बड़ी छोटे लाव या जहाज की तरह बनती थी। श्रीवर का पोत शब्द अर्थपूर्ण है। वह यहाँ नाव शब्द का प्रयोग नही करता है। नावें छोटी होती है। काश्मीर की बड़ी नावें समुद्र आरपार जानेवाले लकड़ी के जहाजों जितनी ही बड़ी होती हैं, मजबूत तथा ऊँची समुद्री जहाजो से कम होती है।

नावें मुख्यतया चार प्रकार की होती हैं। 'खच्चू' ढोनेवाली बड़ी बड़ी नावें होती है। यह वितस्ता तथा ऊलर लेक में चलती हैं। डोंगा दूसरी प्रकार की नाव होती है। उसमें रहने का स्थान बना होता है। हाउस बोट बहुत बड़े होते हैं। वे चौड़ाई की अपेक्षा लम्बे बहुत होते हैं। उनमें भोजन बनाने, स्नान करने, निपटन तथा शयन एवं बैठने के लिये दो-तीन या चार कमरे बने रहते हैं। वे भीतर खूब सजे रहते है। शिकारा छोटी नावें होती है। उनपर गद्दा बिछा रहता है और पीछे की तरफ सज्जित एवं ढँकी रहती है। पर्यटक पीछे की तरफ बैठता है। माझी किंवा हाँजी आगे की तरफ खुले में बैठकर चप्पा से नाव खेता है। गगनगामी पक्षी कलरव करते है। नावें के चलते समय 'चप्पा' के चलने पर कल-कल ध्वनि उठती है। काश्मीर का नौका-भ्रमण महाभारत काल से प्रसिद्ध रहा है। वह भ्रमण सुखद इसलिये भी होता है कि डल का जल स्थिर रहता है। उसमें धारा नही होती। वितस्ता की धारा में भी साधारण ऋतु में तीव्रता नही रहती अतएव भय नही होता। वितस्ता में 'चप्पा' के साथ ही बड़ी लग्गी से भी नाव ढकेल कर आगे बढ़ाते या पीछे हटाते है।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

३५ (१) त्रिपुरेश्वर त्रिफर धारा नदी तट पर है। सर्वावतार में उसे महासरित् कहा गया है (क० ५ : ४६, १२३, ६ : १३५, ७ : १५१, जोन ६०१, जैन० १ : ५ : १५, ६ : १३५)।

(२) तिलप्रस्था तिलप्रस्था नदी धारा नदी की एक शाखा है। शालीमार से कुछ अधोभाग आने पर, यह शालीमार शाखा से अलग होकर डल लेक में गिरती है। वहाँ उसे तेलबल नाला कहा जाता है। नीलमत पुराण तिलप्रस्था का उल्लेख करता है (१३७०) (क० ५ : ४६)।

श्रीपर्वतोऽपि षट्कोशस्तीर्थस्नानफलेप्सया ।
स्वसङ्गतिच्छलाद् यत्र मज्जतीव दिवानिशम् ॥ ३६ ॥

३६ छ कोश तक विस्तृत श्रीपर्वत[1] भी, तीर्थस्नान के फलप्राप्ति की इच्छा से, अपने ससर्ग के व्याज से, मानो रात दिन स्नान करता है ।

शैवलन्ति द्रुमा यत्र कमठन्ति च पर्वताः ।
पुर्यश्च नागलोकन्ति जलान्तर्यत्र बिम्बिताः ॥ ३७ ॥

३७ जहाँ जल में प्रतिबिम्बित द्रुम शैवाल की तरह, पर्वत कच्छप की तरह एवं नगरियाँ नागलोक[1] की तरह लगती (आचरण करती) थी ।

यच्चलतृणभूशालिकुलानि सरसीरुहाम् ।
तत्सौगन्ध्यमिवाघ्रातुमानतानीक्षते जनः ॥ ३८ ॥

३८ लोग देखते थे कि चलते तृण एवं भूमि की शालिपुंज, मानो कमलों की सुगन्धि प्राप्त करने के लिये, आनत हो रहे हैं ।

यल्लङ्कायुगलोत्प्रेक्षास्वोदयद्वयसम्भ्रमात् ।
जाने याति रविः कुर्वन् प्रत्यब्दमयनद्वयम् ॥ ३९ ॥

३९ युगल लंका[1] देखने के कारण, अपने दो उदय के भ्रम से, सूर्य मानो, प्रतिवर्ष दो अयन[2] करते हुए, जाते हैं ।

पाद टिप्पणी

कलकत्ता एवं बम्बई में सङ्गति मुद्रित है। भ्रम के कारण सङ्गाति हो गया है।

३६ (१) श्रीपर्वत किसी पर्वत का नाम काश्मीर में था। एक दूसरा श्रीपर्वत आन्ध्र प्रदेश गन्टूर जिला में है। नागार्जुन का वहाँ निवास स्थान था।

पाद टिप्पणी

३७ (१) नागलोक भूलोक के नीचे स्थित पाताल लोक नागों का प्रमुख निवास स्थान है (विष्णु० ४ ३ ७ उद्योग० ९७ १)। नाग राज वासुकी नागलोक का राजा था। इस देश की स्थिति भूतल से सहस्रों योजन दूर थी (आश्व० ५७ ३३, आदि० १२७ ६८)। यह लोक सहस्र योजन विस्तृत है। इसके चारों ओर दिव्य परकोटे बने हैं। वे चारों ओर स्वर्ण ईटों तथा मणि मुक्ताओं से अलंकृत हैं। उनके वापियाँ स्फटिक मणि की सोपानों से सुशोभित हैं। निर्मल जल की नदियाँ हैं। सुशोभित मनोहर वृक्ष हैं। नागलोक का वाह्य द्वार शत योजन लम्बा तथा पाँच योजन चौड़ा है (आश्व० ५८ ३७–४०)। नर्मदा तटस्थित तपोवन तीर्थ में स्नानकर्ता नागलोक प्राप्त करता है (मत्स्य० १९१, ८४)।

पाद टिप्पणी

३९ (१) युगल लंका सोना लंका तथा रूपा लंका से यहाँ तात्पर्य है (बहारिस्तान० पाण्डु० पो० ५३)।

(२) अयन सूर्य की विषुवत् रेखा से उत्तर एवं दक्षिण की गति। जिसे उत्तरायण तथा दक्षिणा यण कहते हैं। उत्तरायण सूर्य जब मकर रेखा

यत्र तीरे सुरेश्वर्याः क्षेत्रं भुक्तिविमुक्तिदम् ।
वाराणस्यधिकं भाति तीर्थराजिविराजितम् ॥ ४० ॥

४० जिसके तटपर, तीर्थ पंक्ति शोभित, मुक्ति एवं विमुक्तप्रद, सुरेश्वरी का क्षेत्र वाराणसी[१] से भी अधिक शोभित होता है।

विहारैरग्रहारैश्च मठैः सुकृतकर्मठैः ।
आश्रमैरश्रमैः राजवासैः स्वर्गोपमां व्यधात् ॥ ४१ ॥

४१ विहारो एवं अग्रहारो से, सुकृत कर्मठ मठो से, श्रम-निवारक आश्रमो तथा राज निवासो से, स्वर्ग सदृश बना दिया था।

दीर्घैश्चतुष्किकाहस्तैर्नृत्यन्त इव सूनृताः ।
दृश्यन्ते ये जनैर्दूराद्धेमच्छत्रवरोदराः ॥ ४२ ॥मध्य युगलम्॥

४२ हेम छत्र से सुन्दर मध्य भागवाले सुखप्रद जिन्हे लोग दूर से दीर्घ चतुष्किका (चार स्तम्भ) रूप हाथो से नाचते हुए के समान देख रहे थे ॥ मध्य युगलम् ॥

येषां सिद्धपुरी नाम प्रसिद्धं नृपतेर्गृहम् ।
स्वसौधैः कुरुते सिद्धविमानावलिविभ्रमम् ॥ ४३ ॥

४३ जिनमे सिद्धपुरी[१] नाम का प्रसिद्ध राजा का घर अपने सौधो से, सिद्धो के विमान पंक्ति का भ्रम, उत्पन्न कर रहा था।

से कर्क रेखा की ओर जाता है। दक्षिणायण में इसके विपरीत गति होती है अर्थात मकर रेखा की ओर से कर्क रेखा की ओर जाता है। दो पक्ष का एक मास, दो मास की एक ऋतु, तीन ऋतुओ का एक अयन, दो अयन (उत्तरायण एवं दक्षिणायन) का एक संवत्सर होता है। मकर से मिथुन की छ राशियों को उत्तरायण अर्थात सायन मकर से लेकर सायन मिथुन की समाप्ति तक होता है। उत्तरायण में दिन बढ़ता है। इसमें सूर्य या चन्द्रमा पूर्व से पश्चिम को जाते है। कर्क से धनु की संक्रान्ति, जब सूर्य या चन्द्र की गति दक्षिण की ओर होती है। राशिचक्र ६६ वर्ष ८ मास म विषुवत् रेखा का एक फेरा पूरा करता है। यह दो भागों में विभक्त प्रागयन तथा पश्चादयन होता है। अयन संक्रम—मकर एवं कर्क की संक्रान्ति है। सूर्य का क्रान्तिवृत्त विषुवत् रेखा को वर्ष में दो बार अर्थात ६ मास पर काटता है। जिस समय रात्रि एवं दिन दोनो बराबर होते है, तो उसे अयन संपात कहते है। गर्भाधान से लेकर मृत्यु पर्यन्त सभी संस्कार उत्तरायण में ग्राह्य है। गीता स्पष्ट कहती है—

अग्नि ज्योति रह शुक्ल षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जना ॥
धूमोरात्रिस्तथा कृष्ण षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमस ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते ॥

पाद-टिप्पणी

४० उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का ४२६ वी पंक्ति तथा बम्बई का ४० वा श्लोक है।

(१) वाराणसी काशी = बनारस।

पाद-टिप्पणी :

पाठ—बम्बई।

४३ (१) सिद्धपुरी . जोनराज ने सिद्धि-

जीर्णा देवालया यत्र राजधान्यन्तरीकृताः ।
धृत्योन्नत्या निजस्थित्या सत्याथा भूभुजा कृताः ॥ ४४ ॥

४४ जहाँपर, राजा ने राजधानी के अन्तर्गत किये गये, जीर्ण देवालयों[1] को धृति एवं उन्नति भाव के कारण निज स्थिति से, जिन्हें सत्यार्थ कर दिया ।

यत्र सर्वतृणक्लेदनिर्भेदोत्पन्नभूस्थली ।
सचारिण्युर्वरा राज्ञा सफला विहिता धिया ॥ ४५ ॥

४५ सब प्रकार के तृणों द्वारा, प्रवाह का निवारण (नियमन) करने से उत्पन्न, सचरणशील भूमि[1] को राजा ने अपनी बुद्धि से, उर्वरा[2] एवं फलवती बनाया ।

एकत्र देशे यत्रान्तः सत्र श्रीजैनवाटिका ।
योगिनां पात्रपूजार्थं कृत भोगात्कृतस्मयम् ॥ ४६ ॥

४६ एक स्थान पर, योगियों के पात्र पूजा हेतु जैनवाटिका[1] नामक अन्न सत्र, भोगों के कारण विस्मयावह था ।

पुरी का उल्लेख (जोन० ८७०) किया है । शुक ने उल्लेख नहीं किया है । श्रीवर ने सिद्धपुर नाम दिया है । जोनराज के श्लोक का ही एक तरह अंश शब्दों के हेरफेर से स्पष्ट लिख दिया है । जोनराज ने 'सिद्ध' प्रसिद्ध आदि शब्द का प्रयोग उक्त श्लोक में किया है । इससे अनुमान निकाला जा सकता है कि सिद्धपुरी जोनराज वर्णित सिद्धि पुरी है जो इसी स्थल पर था । इसी तरह सुरेश्वरी क्षेत्र तक विस्तृत था । सुरेश्वरी सर इसी स्थल का प्राचीन नाम है । जोनराज की सिद्धिपुरी तथा श्रीवर की सिद्धपुरी एक पुरी के नाम है ।

पाद टिप्पणी

४४ (१) देवालय : सुल्तान सिकन्दर बुतशिकन द्वारा भग्न किये मन्दिरों के जीर्णोद्धार की ही आज्ञा नहीं दिया बल्कि कुछ स्थानों पर स्वयं स्थान स्वयं पुनः निर्माण कराया । कुछ का जीर्णोद्धार किया । उसने सारी भूमि ब्राह्मणों को दिया । राजाओं के समय ब्राह्मणों को जो लिया गया था, उसे नहीं लिया (तुजुक० पाण्डु० ७० ए०, बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४८ बी०) ।

पाद टिप्पणी

४५ (१) सचरणशील भूमि : उसको सब काश्मीर में 'राद' कहते हैं । यह लगभग ६ फीट चौड़ा होता है । उसके चारों कोनों पर खूंटा गाड़कर जल में बाँध दिया जाता है । यह नाव की तरह तैरता है तथा ले जाया जा सकता है । घास फूस या नरकुल बाँध कर उस पर मिट्टी रख दी जाती है (बहारिस्तानशाही पाण्डु० का० ५३ वाल्टर लारेन्स पृष्ठ ४०४) ।

(२) उर्वरा : बहारिस्तानशाही (पाण्डु० ५१ बी०) में उल्लेख है कि सुल्तान ने दलदली भूमि का पानी निकलवा कर उसे कृषियोग्य उर्वर बनवा दिया ।

पाद-टिप्पणी

४६ (१) जैनवाटिका : इसका उल्लेख जोनराज तथा शुक दोनों नहीं करते । श्रीवर ने भी इसका उल्लेख केवल एक बार यहाँ किया है । जैनुल आबदीन ने अपने नाम से वाटिका लगवाई थी । इसलिए नाम जैनवाटिका पड़ गया था ।

पीर हसन लिखता है—सुल्तान ने जैनागिर में

मद्यपुष्करिणीमध्यसंक्रान्तः स्वादलिप्सया ।
यत्रैति द्विजराजोऽपि योगिचक्रान्तरे ध्रुवम् ।। ४७ ।।

४७ पुष्करिणी मध्य योगिचक्र के अन्दर प्रतिबिम्बित, चन्द्रमा भी जहाँ, स्वाद की लिप्सा से ही आता था।

भूपतिर्भोजयन् योगिमहस्रं मीलदीक्षणम् ।
निष्कम्पमकरोन्नित्यं किं तृप्त्या किं समाधिना ।। ४८ ।।

४८ राजा ने सहस्रों योगियों को आँख मून्दने तक, (पूर्ण तृप्ति पर्यन्त) भोजन कराकर, निःष्कम्प कर दिया, फिर तृप्ति एवं समाधि से क्या लाभ ?

आहारमनु तीव्रोद्यत्कीर्त्या रसवतीश्रिया ।
दिवीव क्रियते यत्र मर्वा रसवती प्रजा ।। ४९ ।।

४९ तीव्र उदय होती, कीर्तिशालिनी, रसवती[1] श्री ने स्वर्ग के समान, आहार के पश्चात, जहाँ पर सब प्रजा को रसवती बना दिया।

पक्वान्नराशयोऽभ्रा यत्राभ्रमुभ्रमप्रदाः ।
बिभ्रत्यभ्रभ्रमच्छुभ्रशरदभ्रश्रियोपमाम् ।। ५० ।।

५० जहाँ पर, ऐरावत[1] की पत्नी का भ्रम उत्पन्न करनेवाली, प्रचुर पकी अन्न राशियाँ, आकाश में घूमते शुभ्र शरद ऋतु के मेघ के समान शोभित हो रहे थे।

एक बाग बनवाया था। वह दो बग मील में फैला था। इसमें तरह-तरह के दरख्त और फूल लगवाये थे। इसके चार कोनों पर चार आलीशान इमारत बनवा कर, इस बाग को अजूब रोजगार कर दिया था। इस बाग के इर्द-गिर्द उमरा व अराकीन सल्तनत की ऊँची-ऊँची कोठियाँ थी, जो फूल और फुलवारी से सजी हुई थी (पृष्ठ १७४)। वाटिका शब्द बाग का ही संस्कृत रूप है। मेरा अनुमान है कि श्रीवरकालीन जैनवाटिका यही बाग है, तथापि इस पर और अनुसन्धान की आवश्यकता है। पीर हसन और लिखता है—'इस बाग को तमाम पैदावार और आमदनी उलमा और फजला को बतौर जागीर बख्श दी थी' (पृष्ठ १७५)।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–बम्बई।

प्रथम पद श्लोक के प्रथम चरण का पाठ सदिग्ध है।

४७ (१) योगीचक्र : एक मत से यह स्थान श्रीनगर का जोगी लकर स्थान है। रैनवारी तथा मार नहर के समीप है।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

४९ (१) रसवती : शुद्ध स्वरवती रागिनी या रसपूर्ण एवं रसीली। रसवती का अर्थ रसोई-घर भी होता है।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–बम्बई

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का ४३६ वाँ तथा बम्बई का ५०वा श्लोक है।

५० (१) ऐरावत : देवराज इन्द्र का हाथी

यत्राधर्ममृगं हन्तुं मृगनादमिषाद् ध्रुवम् ।
संमिलल्लारसारावं श्रूयते मृगयारवः ॥ ५१ ॥

५१ जहाँ पर मृगनाद[1] के व्याज से, अधर्म रूप मृग को मारने के लिये, मिश्रित ललकार-पूर्ण, मृगया ध्वनि सुनी जाती है।

मामोदकामनिर्मुक्तमोदका यत्र योगिनः ।
श्रमघर्मोदका जग्धेर्जाता राज्ञः प्रमोदकाः ॥ ५२ ॥

५२ जहाँ पर, आनन्द निर्भर योगियों का भोजन के श्रम से, निकलनेवाला पसीना, राजा को प्रसन्न करता था।

योगिस्फुरत्करक्लिष्टदधिदिग्धाशनच्छलात् ।
योगाच्छशिकलास्रावास्तत्रैवान्त इवाद्युतन् ॥ ५३ ॥ कुलकम् ॥

५३. योगियों के हाथों म लिप्त, दधिपूर्ण भोजन के छल से, मानो उसी बीच योग से शशिकला का स्राव ही, शोभित हो रहा था। कुलकम्।

मारी नाम नदी तस्माद् वितस्तान्तरमागता ।
केवलं याभवत् पौरस्नानपानप्रयोजना ॥ ५४ ॥

५४ वहाँ से वितस्ता में आयी मारी[1] (महासरित) नाम की नदी पुरवासियों के केवल स्नान-पान प्रयोजन हेतु हुई।

और पूर्व दिशा का दिग्गज है। इसका रंग श्वेत तथा दाँत चार होते हैं। समुद्रमथन से प्राप्त १४ रत्नों में एक रत्न है। इरावती का पुत्र होने के कारण नाम ऐरावत पड़ा था।

ऐरावत की पत्नी ऐरावती है। राप्ती नदी का भी एक नाम है। चन्द्रमा की एक वीथी है, जिसमें अश्लेषा, पुष्य और पुनर्वसु नक्षत्र पड़ते हैं।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

५१ (१) मृगनाद वन पशु के शिकार करने के लिये 'हकवा' किया जाता है। शिकार को चारों तरफ से भेरी, नगाड़ा, मृगनाद आदि कर शिकार स्थान पर घेरकर लाते हैं। वहाँ मचान पर बैठकर अथवा पैदल शिकार किया जाता है। शिव के गण मृगनाद करते हैं। अतएव नाद पवित्र माना जाता है।

पाद-टिप्पणी

५२. श्लोक के प्रथम पद के प्रथम चरण का पाठभेद सन्दिग्ध है।

पाद-टिप्पणी

५३ कलकत्ता संस्करण का उक्त श्लोक ४३९वीं पंक्ति है। उसके पश्चात् 'कुलकम्' मुद्रित है। पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी

५४ (१) मारी श्रीवर को प्रतीत होता है कि काश्मीर के प्राचीन नामों का ज्ञान कम था। उसने महासरित का नाम मारी अर्थात वर्तमान 'मार' नाम नहीं दिया है, जो मारी तथा मार का मूल संस्कृत नाम है। महासरित का अपभ्रंश मारी अथवा मार है (द्रष्टव्य : नवादरुल अखबार पाण्डु० : ४५ बी०, क० ३ : ३३९-३४९, जैन० ३ २७७, ४ : २९)।

हस्तिकर्णाभिधे क्षेत्रे युक्त्या राज्ञा प्रवेशिता ।
सिन्धुसगमपर्यन्त निर्मिता शालिनालिनी ॥ ५५ ॥

५५ राजा ने युक्तिपूर्वक इसे हस्तिकर्ण[१] नामक क्षेत्र मे प्रविष्ट किया और सिन्धु-सगम[२] तक इसे शालि नाली युक्त कर दिया।

मृतानां देहदाहेन स्वर्गदो नगरान्तरे ।
स मारीसङ्गम ख्यातो जातः सङ्गाद् वितस्तया ॥ ५६ ॥

५६ नगर म मृतको का दाह[१] करने से स्वर्गप्रद, वह मारी सगम[२], वितस्ता के सग से प्रख्यात हो गया।

इस नहर द्वारा श्रीनगर तथा इस समीपवर्ती ग्रामीण अचल से व्यापार आदि होता है। यह नहर शादीपुर तक बढाकर, सगम में मिला दी गयी थी। इस नहर पर सात पुल बने थे। नहर के दोनो तरफ बाँध टूट मन्दिरों से प्राप्त शिलाखण्डों से बाँध दिया गया था। यह भी जनश्रुति है, नहर का पेटा अर्थात् तल पक्की ईंटों आदि से बिछाकर मजबूत बनाया गया था।

पाद-टिप्पणी

५५. (१) हस्तिकर्ण यह स्थान व्याघ्राश्रम के समीप था। व्याघ्राश्रम का वर्तमान नाम वागहाम है। दच्छिन पोर परगना में है। वितस्ता के दक्षिण तटपर बहुत दूर नहीं है। यह मरहोम से २ मील दक्षिण-पश्चिम है। ग्राम में एक नाग है। उसे आज भी हस्तिकर्ण नाग कहते हैं। इसका उल्लेख विजयेश्वर, अमरेश्वर माहात्म्य तथा तीर्थो एव नीलमत (८८९) में भी उल्लेख मिलता है (रा० ५ २३, द्रष्टव्य सैय्यदअली तारीख काश्मीर ३७)।

(२) सिन्धु सगम सिन्धु वितस्ता सगम जिसे काश्मीरी प्रयाग कहते हैं, जो इस समय शादीपुर ग्राम के समीप है।

पाद टिप्पणी :

५६ (१) दाह श्रीनगर में श्मशान वितस्ता तथा महासरित या मारी के सगम पर था। यहीं पर दाह क्रिया की जाती थी। कल्हण ने राजा उच्चल (सन् ११०१-१११११ ई०) के दाह सस्कार का वर्णन किया है। यह स्थान वितस्ता तथा महासरित के सगम पर एक द्वीप पर था (रा० ८ ३३९)। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है। उसके समय में भी वितस्ता तथा महासरित के सगम पर श्मशान चार शताब्दी तक एक स्थान पर पूर्ववत् बना रहा। उसका स्थान परिवर्तन नहीं हुआ था।

(२) मारी सगम वितस्ता महासरित सगम स्थान। मारी, मर, महासरित एक ही नाम के पर्याय हैं। कुछ विद्वानों ने माहुरी नदी का मारी माना है। यह गलत है। माहुरी नदी मच्छीपुर परगना की मधुर नदी है (नील १३२०)।

आर्यों में दाह सस्कार सुदूर पूर्वकाल स प्रचलित है। आर्य जहाँ गये अथवा उपनिवेश बनाय, वहाँ उन्होने दाह सस्कार प्रचलित किया। गाड़ने की प्रथा सेमेटिक है। बबलोन तथा सुमेर में गाड़ने और फूकने की दानों प्रथायें प्रचलित था। फूकने क पश्चात भस्म एक कुम्भ में रखा जाता था। इस प्रकार *क पात्र ईसा ३ सहस्र वर्ष पूर्व निप्पुर में मिल* हैं। आधुनिक सुरघुल ल्गाश क समीप तथा एल हिब्बा में शवदाह के चबूतरे मिले हैं, जिनपर शव रखकर फूका जाता था। शव मृत्तिका के बक्स या कफन में रखा जाता था। उसे अग्निपर रख देत थे। मृत्तिका पात्र या केस में शरीर भस्म हा जाता था। भस्म पात्र में रखकर कुल के गवाजिर में गाड दिया जाता था। बक्कद तथा सुमेर में शवदाह प्रथा खूब प्रचलित थी।

यत्क्षेत्रपालाः कालेन किङ्कराः पञ्चवारिकाः ।
पौरेभ्यः शवदाहोत्थमगृह्णन् शुल्कमन्वहम् ॥ ५७ ॥

५७ समय पर जिसके क्षेत्रपाल[1], पञ्चवारिक[2], भृत्य, पुरवासियों से प्रतिदिन शवदाह का शुल्क[3] ग्रहण करते थे ।

यूनान के नियोलिथिक काल में गाड़ने की प्रथा थी परन्तु होमर काल में शवदाह की प्रथा प्रचलित हो गयी थी । मध्य तथा दक्षिण यूरोप में भी गाड़ने के स्थान पर, दाह की प्रथा प्रचलित थी । उत्तरी यूरोप तथा दक्षिणी इटली में दाह प्रथा प्रचलित थी । जापान में शवदाह की प्रथा प्रचलित है । रोम में भी दाह प्रथा प्रचलित थी । स्लैविक जाति में शवदाह प्रचलित था । यूरोप में सुदूर प्राचीन काल मे शवदाह की प्रथा प्रचलित थी । संक्षेप में इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि आर्यभाषा-भाषी, भारतीय, यूनानी, रोमन, केल्टिक, स्लिटोनिक, लुथेनियन, दक्षिणी रूस, नीपर, दनीस्तर, कारपेथियन के पूर्व, वेस्सरबिया, बाल्कन पेनिनशुला के उत्तर प्रचलित था ।

यहूदी गाड़ते हैं । यहूदियों की परम्परा का अनुकरण करते हुए, ईसायी तथा मुसलमानों में भी गाड़ने की प्रथा प्रचलित है । जिन आर्य देशों ने इसायी तथा मुसलिम धर्म स्वीकार कर लिया, वहाँ शवदाह की प्रथा समाप्त हो गयी तथा गाड़ना धार्मिक कृत्य मान लिया गया । बौद्ध देशों में शवदाह की प्रथा प्रचलित हो गयी । बौद्ध भिक्षु निश्चय ही फूके जाते हैं । तिब्बत में भी बौद्ध लामा फूके जाते हैं यद्यपि साधारण जनता में शव नष्ट करने की अन्य प्रथायें भी है ।

इसायी देशों में भी अब लोग बिजली से शवदाह की ओर लौटने लगे हैं । इसायी तथा यहूदियों में यह मत फैल रहा है कि बिजली से शवदाह करना धर्म विरुद्ध नहीं है, क्योंकि शवदाह के प्राचीन प्रथा के विरुद्ध ही धार्मिक पुस्तकों में लिखा गया है । मुसलिम देश इस दिशा में बहुत पीछे है । यद्यपि बड़े नगरो में जहाँ कब्रिस्तान बनाने के लिए भूमि का अभाव है, वहाँ विचार बिजली द्वारा शवदाह कराने की हो रहा है । यह मानना ही पड़ेगा कि शवदाह की प्रथा अधिक वैज्ञानिक है । पारसी लोग न तो शवदाह करते है और न गाड़ते है । क्योंकि उनका मत है कि पृथ्वी, जल तथा अग्नि पवित्र है । उन्हें शव अर्पित करने से वे अपवित्र हो जाते है, जो उनके धर्म विरुद्ध है । पुराने इरानियो में पारसी धर्म के पूर्व बलख में मरणासन्न तथा वृद्धो को कुत्तों से खिलवा दिया जाता था । मगी लोग शव को कुत्ता तथा पक्षियों को खाने के लिए छोड देते थे । सीथियन जाति भी अपने शवों को पक्षियो से खिलाकर बचे हुए पजर को गाड़ती थी । तिब्बत में सभी प्रकार अपनाये जाते थे । कुछ पक्षियो को खिलाते थे, कुछ जन्तुओं से पूरा शरीर खिला देते थे, कुछ नदियों अथवा जलाशय में शव प्रवाह कर देते थे तथा राजा और बडे लोगों का शव हमवाम कर रखते थे ।

पाद-टिप्पणी ।

प्रथम पाद के द्वितीय चरण का पाठ सन्दिग्ध है ।

५७. (१) क्षेत्रपाल : राजा के खास महल के निरीक्षक का नाम क्षेत्रपाल था (इण्ड० : एण्टीक्वेरी : १५ . ३०६ तथा इपिग्राफिक इण्डिया० , १७ ३२१) ।

(२) पञ्चवारीक : एक तत्कालीन राज्य-कर्मचारी ।

(३) शुल्क : हिन्दुओं से श्मशान में शवदाह करने के लिए सिकन्दर बुतशिकन के समय से कर लगा दिया गया था । श्मशान पर शवदाह करने पर भी प्रतिबन्ध था । निकटस्थ मुसलिम आबादी के

मत्पितृप्रमये राजा विज्ञप्तः स मयैकदा ॥
दण्डयित्वा किरातांस्तान् शवशुल्कं न्यवारयत् ॥ ५८ ॥

५८ एक समय अपने पिता की मृत्यु पर, मैंने राजा से (शुल्क की) बात कही, तो उसने उन किरातों[1] को दण्ड देकर, शव-शुल्क निवारित कर दिया।

लोग शवदाह करने पर आपत्ति करते थे। जैनुल आबदीन ने यह कर उठा दिया था।

पाद-टिप्पणी

५८ (१) किरात : हिमालय निवासी मूलतः एक जाति है, जो कालान्तर में आसाम तथा विन्ध्य पर्वत तक फैल गयी थी। किराती जाति से किरात जाति को सम्बन्धित करने का कुछ विद्वानों ने प्रयास किया है, जिन्होंने नेपाल के एक भाग पर शासन किया था। किरात देश एक समय तप्तकुण्ड से रामक्षेत्र तक फैला बताया गया है। तप्तकुण्ड को राजगृह तथा मुंगेर समीपस्थ विहार का तप्तकुंड मानते हैं। रामक्षेत्र को रामटेक या रामगिरि होने का अनुमान लगाया गया है। यहाँ पर किरात कुछ विन्ध्याचल पर्वतीय जातियाँ मानी गयी हैं। कालान्तर में किरात शब्द पर्वतीय, असभ्य अथवा अर्धसभ्य एवं अनार्य जाति के लिए रूढ़ हो गया था (शक्तिसंगम तन्त्र ३ : ७ : २९)। किरातों का वर्णन, कम्बोज तथा काश्मीरियों के साथ महाभारत तथा पुराणों में किया गया है। महाभारत में किरात को एक भारतीय जनपद माना गया है (भीष्म० ९ : ५१-५७)। वृहत् संहिता ने भी किरातों के देश का उल्लेख किया है। उससे प्रकट होता है कि काश्मीर की सीमा अथवा काश्मीर में अथवा भारत के उत्तर-पश्चिम भागों में किरात जाति निवास करती थी। किरातों का उद्यम आखेट तथा जंगली औषधि आदि खोदना बताया गया है (अथर्व० १०४ : १४)। वाजसेनीयी संहिता (३० : १६) तथा तैत्तिरीय ब्राह्मण में किरातों को गुहा निवासी रूप में चित्रित किया गया है। रामायण में किरातों का वर्णन मिलता है। रामायण में किरात नारियों के तीक्ष्ण जूड़ों का वर्णन किया गया है। उनका रंग सुवर्ण की तरह कहा गया है (वा० कि० ४० : २७)। महाभारत में उन्हें म्लेच्छ तथा पर्वतीय एवं हिमालय पर्वतवासी बताया गया है (कर्ण० : ७३ : १९-२०, द्रोण० ४, ७, सभा० : २६)। प्राग्ज्योतिषपुर के समीप अर्जुन तथा किरातों में युद्ध हुआ था (सभा० ५२ : ९-१२)। वे फल-फूलभोजी, चर्मवस्त्रधारी, भयानक अस्त्र चलानेवाले तथा क्रूरकर्मा कहे गये हैं। खारवेल के अभिलेख में चीन एवं किरात का एक साथ उल्लेख है। इसी आधार पर कुछ विद्वानों ने उन्हें मंगोल जातीय होने की सम्भावना प्रकट की है। कुमारसम्भव में कालिदास ने उन्हें हिमालय में देवदारु वृक्षों के मध्य मृगों को खोजते चित्रित किया है। साँची के स्तूप पर एक किरात भिक्षु के दान का चित्र है। इसी प्रकार नागार्जुनी कोंडा में एक अभिलेख में किरातों का उल्लेख है। मनुस्मृति में उनकी व्रात्य क्षत्रियों में गणना की गयी है (१० : ४३-४४)। तुलसीदास ने भी रामायण में किरात जाति का उल्लेख किया है—मिलहिं किरात कोल वनवासी। वैखानस, बटु, गृही उदासी॥ मध्ययुग तक किरातों को जंगली अथवा वनवासी माना जाता था। उनकी गणना कोल आदि जंगली जातियों के साथ की गयी थी। यहाँ पर श्रीवर ने किरात शब्द उन डोमों के लिए विशेषण रूप में प्रयोग किया है, जो वनवासी तुल्य निम्न कोटि के थे।

ततः प्रभृति तत्स्थाने विमाना नगरान्तरे ।
दह्यन्ते दर्शनद्वेषिम्लेच्छानां हृदयैः समम् ॥ ५९ ॥

५९ उसी समय से नगर मे उस स्थान पर, दर्शनद्वेषी म्लेच्छो[1] के हृदय के साथ, विमानी (सामान्य) जन जलाये जाते थे।

निर्गला वयं जाता इतीव शिविकाहकैः ।
छत्रहस्तैः प्रनृत्यन्तो दृश्यन्ते वाद्यनिःस्वनैः ॥ ६० ॥

६०. 'हमलोग प्रतिबन्ध रहित हो गये'—इसलिये मानो शिविका[1] वाहक हाथ म छत्र लिये वाद्य ध्वनि के साथ नाचते हुए दिखायी दे रहे थे।

दिगन्तरीयया रीत्या यत्र राज्ञाप्यवारिताः ।
प्रियानुगमनं नार्यश्चितामारुह्य कुर्वते ॥ ६१ ॥

६१ वाह्य देश[1] की नीति के अनुसार जहाँ पर, नारियाँ चितारोहण[2] कर, प्रिय का अनुगमन करती थी और राजा उन्हे वारित नही करता था।

अर्थिसंघोपकारार्थं पौराणां सुकृती नृपः ।
विहारं बहुविस्तारं तत्संगमतटे व्यधात् ॥ ६२ ॥

६२ सुकृती राजा ने उस (मारी), संगम तट पर, पुरवासियो के अर्थि संघ के उपकार हेतु, बहुत विस्तृत विहार निर्माण कराया।

पाद-टिप्पणी

५९ (१) म्लेच्छ मुसलमान। मुसलमानों ने सिकन्दर बुतशिकन के समय से शवदाह स्मशान में बन्द कर दिया था। शव क्रिया करने वाले डोम्ब आदि मुसलमान हो गये थे अतएव वे भी मृतक कर्म नहीं कराते थे। मुसलमानों ने जब देखा कि जैनुल आबदीन ने स्मशान में शवदाह की आज्ञा निःशुल्क दे दी है, तो उनका हृदय जल उठा।

पाद टिप्पणी

६० (१) शिविका - अरथी = शिविका में शव ले जाने की प्रथा रामायण काल से है। श्रीवर के इस वर्णन से प्रकट होता है कि काश्मीरी शिविका में भी शव ले जाते थे। शव पर छत्र लगाते थे। शवयात्रा बाजों के साथ होती थी। शिविका का अर्थ अर्थी भी होता है। श्रीवर शिविका में जैनुल आबदीन के पुत्र हैदरशाह का शव ले जाने का वर्णन करता है (जैन० : १ : ७ २२६, २ २०८)।

पाद-टिप्पणी

६१. (१) वाह्य देश यहाँ भारतवर्ष से अभिप्राय है।

(२) सती सतीप्रथा काश्मीर में प्रचलित थी। रानी देवी वाक्पुष्टा का अपने पति के साथ सती होने का प्रथम उदाहरण काश्मीर में मिलता है (रा० ३ ५६)। काश्मीर में पुरुष भी पत्नी के साथ देहत्याग करते थे। राजा जलोक ने स्वन स्वपत्नी सहित शरीर त्याग किया था। मिहिर कुल स्वयं चितारोहण किया था। बाह्य देश का अनुगमन शब्द से पता चलता है कि सतीप्रथा उन दिनों काश्मीर में बन्द हो गयी थी। क्योंकि नब्बे प्रतिशत काश्मीरी मुसलमान हो गये थे और सती

स च हाज्येविहारश्च पारावारे पुरद्वये ।
गृहश्रेणिमणिव्रातनायकश्रियमापतुः ।
अन्याः प्रतिष्ठास्तत्कालं राज्ञा स्वस्थेन कारिताः ॥ ६३ ॥

६३ नदी के दोनो तट पर, यह तथा हाज्य विहार[1] के गृह श्रेणी रूप मणि समूहो मे, नायक मणि की शोभा प्राप्त कर रहे थे। स्वस्थ राजा ने उस समय अन्य भी प्रतिष्ठाएँ करायी ?

श्रीहर्षो नृपतिर्बभूव कविताराज्ये तदा येऽभवन्
सर्वे ते कवयः किमन्यदपि ते सूदाः स्त्रियो भारिकाः।
सन्त्यद्यापि कृतानि तैः प्रतिगृहं पद्यानि विद्यानिधौ
राजा चेद् गुणवान् गुणेषु रसिको लोको भवेत् तादृशः ॥ ६४ ॥

६४. राजा श्री हर्ष[1] हुआ, उस समय कविता के राज्य मे जो लोग थे, वे सब कवि हुये, अधिक क्या कहे ? वे रसोइयाँ, स्त्री एव बोझा ढोनेवाले ही क्यो न रहे हैं ? आज भी उनके बनाये पद प्रति घर मे हैं। राजा यदि गुणी एव विद्यमान एव गुणो के प्रति रसिक होता है, तो लोक भी वैसा हो ही जाता है।

छात्रशाला विशालास्ता धर्मार्थं गुणशालिना ।
कृता याभ्यः श्रुतः शब्दस्तर्कव्याकरणोद्भवः ॥ ६५ ॥

६५ गुणशाली राजा ने धर्म हेतु, विशाल छात्रशालायें बनवायी, जिनमे तर्क एव व्याकरण का शब्द सुना जाता था।

प्रथा प्रोत्साहित नही की जाती थी (म्युनिख पाण्डु० ७० ए तथा बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४८ बी०, तबक्काते० ३ ४३६, फिरिस्ता २ : ३४२)।

पाद-टिप्पणी :

६३ (१) हाज्य विहार श्रीनगर में था। केवल उल्लेख मिलता है।

पाद-टिप्पणी

६४ (१) हर्ष काश्मीर का राजा हर्ष (सन् १०८९ से सन् ११०१ ई०) था। वह राजा कलश (सन् १०६३–१०८९ ई०) का पुत्र था। कल्हण के शब्दों में हर्ष अति रूपवान, शक्तिशाली युवक था। साहसी था। कलाप्रेमी था और संगीत कला पारंगत था। वह राणा कुम्भ के समान वीर के साथ ही संगीतज्ञ था। वह गीतकार भी था। उसके रचित गीत कल्हण के समय तक काश्मीर में गाये जाते थे। उस समय संस्कृत एव साहित्य का प्रचार काश्मीर में खूब था। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि हर्ष रचित पद हर्ष की मृत्यु एव मुसलिम राज्य स्थापित हो जाने पर भी, लोकप्रिय थे। लगभग चार शताब्दी तक जनता उनके माधुर्य एवं काव्य का रस लेती रही। जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात परशियन का अत्यधिक प्रचार होने के कारण, आज हर्ष के गीतो का न तो संग्रह मिलता है, न उसकी कोई रचना प्राप्त है। द्रष्टव्य (रा० ७ : ८३९–१७३२)।

आचार्यपुस्तकावाससहायान्नसमृद्धिभिः ।
पाठयन् सर्वविद्यानां वर्धयामास मण्डलम् ॥ ६६ ॥

६६ आचार्य, पुस्तक, आवास, सहायता, अन्न, समृद्धि द्वारा (छात्रो को) पढाते हुये, सभी विद्याओ के मण्डल (राजा ने) विस्तृत कर दिया।

न विद्यासुखयोः संधिस्तेजस्तिमिरयोरिव ।
इति व्यर्थं वचश्चक्रे मुनीनामभयप्रदः ॥ ६७ ॥

६७. मुनियो के अभयदाता राजा ने विद्या[1] और सुख मे, तेज और तिमिर के समान सन्धि नही होती, इस बात को व्यर्थ कर दिया।

सौराज्यसुखिते देशे विद्याभ्यासपरायणे ।
अकाङ्क्षीत् सर्वदारोग्य नृपतेः स्वस्य चान्वहम् ॥ ६८ ॥

६८ सुराज्य से सुखी एव विद्याभ्यास-परायण देश मे, जनता प्रतिदिन अपने और राजा के सर्वदा आरोग्य की अभिलाषा करती थी।

राज्योत्पत्त्या नृपस्तादृक् तुष्टोऽभून्न प्रतिष्ठया ।
यथा पण्डितसामग्र्या यामग्र्यामविदद् गुणैः ॥ ६९ ॥

६९ प्रतिष्ठा युक्त राज्योत्पत्ति से, राजा उतना सन्तुष्ट नही हुआ, जितना पण्डित सामग्री की प्रतिष्ठा[1] से, गुणो के कारण, जिसे वह सर्वोत्कृष्ट जानता था।

पाद-टिप्पणी

६७ (१) विद्या एव सुख विद्वान दरिद्र रहते है। उन्हें सुख नही मिलता। यह प्राचीन कहावत है। सरस्वती का वाहन हस है। लक्ष्मी का वाहन उल्लू है। पुरातन काल मे कथा प्रचलित है कि लक्ष्मीपति विद्वान नही होता। सुख लक्ष्मी से मिलता है। हस को दिन प्रिय है। उल्लू रात्रि मे निकलता है। प्रकाश में उसकी आँखें बन्द हो जाती है। प्रकाश से वह भागता है। हस प्रकाश में सरोवर में भ्रमण करता है। उसका भ्रमण ही मन में सुख पैदा करता है। उल्लू को बोली एव उसका घर में आना अशुभ माना जाता है। हस शुभ विद्या, गुण का एव उल्लू अशुभ, अप्रकाश एव मूढता का प्रतीक है। सरस्वती तथा लक्ष्मी की गति विरोधी है। विद्या विरोधी है। उनमें सन्धि, मेल नही होती। इसी प्रकार प्रकाश एव अन्धकार एक दूसरे के विरोधी है, उनमें सन्धि नही होती। किन्तु राजा धनी होकर भी, लक्ष्मीपति होकर भी, सरस्वती के प्रसाद का पात्र बन गया था। उसे विद्या के साथ सुख प्राप्त था।

पाद टिप्पणी.

६९. (१) प्रतिष्ठा सुल्तान विद्वानों की प्रतिष्ठा किया। उन्हे दान किया। उनके निवास के लिए नौशहर में व्यवस्था किया (बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४६ ए० तथा ४७ ए०)।

येषां स्वप्नेऽपि पाण्डित्यं नाभूज्ज्ञातुचिदन्वये ।
तेऽपि भूपप्रसादेन जाताः पाण्डित्यमण्डिताः ॥ ७० ॥

७० स्वप्न मे भी, जिनके वश मे कभी पाण्डित्य नही हुआ था, वे भी राजा की कृपा से, पाण्डित्य मे शोभित हो गये थे ।

वर्धिता जीवनोपायैर्देवेन फलदाः सदा ।
याताः सहस्रशाखत्व विद्याः कल्पलता इव ॥ ७१ ॥

७१ देव (राजा) ने सद जीवनोपायो से फलप्रद, विद्याओ को वर्धित किया, जिससे वे कल्पलताओ[1] के समान, सहस्र साखाओं वाली हो गयी थी ।

न सा विद्या न तच्छिल्पं न तत्काव्य न सा कला ।
श्रीजैनभूपते राज्ये नाभूद् या प्रथिता भुवि ॥ ७२ ॥

७२ वह विद्या, वह शिल्प, वह काव्य, वह कला नही थी, जो कि जैन राजा के राज्य मे पृथ्वी पर, प्रसिद्ध या प्रचलित नही हो गयी ?

विदुषां मान्यतां दृष्ट्वा भूपतेर्गुणिबान्धवात् ।
काङ्क्षन्ति स्मापि सामन्ताः पाण्डित्य नित्यमादरात् ॥ ७३ ॥

७३ राजा के गुणियो के प्रति बन्धुभाव, एव नित्य समादर के कारण, विद्वानो की मान्यता देखकर, सामन्त लोग भी, पाण्डित्य की कामना करते थे ।

पाद-टिप्पणी

७० उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ४५६ वी पक्ति तथा बम्बई का ७०वा श्लोक है ।

पाद-टिप्पणी :

७१ (१) कल्पलता इन्द्र के नन्दन कानन की लता सब इच्छाओ को पूरी करती है—नाना फलै फलति कल्पतेव भूमि —(भतृ० २ ४६ तथा १ ९०) कल्पलता दान का भी उल्लेख मिलता है । सुवर्ण की दस लताएँ तथा सिद्धि, मुनी, पक्षी आदि बना कर दान किया जाता है ।

पाद-टिप्पणी

७२ भरतमुनी के नाट्यशास्त्र का श्लोक १ ११६ उक्त श्लोक का पूर्वार्द्ध है
'न तज्ज्ञान न तच्छिल्प न सा विद्या न सा कला ।
नासौ योगो न तत् कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते' ॥ ॥११६॥

(१) विद्या जैनुल आबदीन के समय विदेशा से भी विद्वान लोग राजाश्रय प्राप्त करने के लिये प्रवेश किये । उनमें सैय्यद मुहम्मद रूमी, काजी सैय्यद अली शिराजी, सैय्यद मुहम्मद लुरिस्तानी, काजी जमाल, सैय्यद मुहम्मद शीस्तानी आदि मुख्य थे । वे अपनी जन्मभूमि त्याग कर काश्मीर में आबाद हो गये (बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४८ बी०–५६ ए०) । काजी जमाल जो सिन्ध स आया था, उस सुल्तान ने काजी बनाया (तारीख हसन पाण्डु० ११९ ए०, हैदर मल्लिक पाण्डु० ११८ बी०, ११९ बी०) । मौलाना कबीर जैनुल आबदीन का शिक्षक था । वह हेरात पढने के लिये चला गया था । उसे सुल्तान ने बुलाकर शेखुल इस्लाम बना दिया (तारीख हसन पाण्डु० १२० ए०) । मुल्ला अहमद, मुल्ला नादरी तथा मुल्ला फतही राजकवि थे (बहारिस्तान शाही पाण्डु० . ५६

निदाघकाले विषमः प्रतापो
दहेद् धरित्र्यां तृणगुल्मपूगान् ।
वन्द्यो न केषां घनकाल एको
यो जीवनैस्तान् विततान् करोति ॥ ७४ ॥

७४ निदाघ काल मे विषम प्रताप (ऊष्मा) पृथ्वी पर, तृण-गुल्म-कुंजो को दग्ध कर देता है, एक घन किनके लिये वन्दनीय नही है, जो जीवन (जल) दानकर, उनको पुन वितत (विस्तृत) कर देता है।

शेकन्धरधरानाथो यवनैः प्रेरितः पुरा ।
पुस्तकान् सकलान् सर्वांस्तृणान्यग्निरिवादहत् ॥ ७५ ॥

७५ कुछ समय पूर्व, पृथ्वीपति सिकन्दर[१] ने, यवनो[२] से प्रेरित होकर, समस्त पुस्तको[३] को, तृणग्नि के समान पूर्ण रूप से जला दिया।

तस्मिन् काले बुधाः सर्वे मौसुलोपद्रवाज्जवात् ।
गृहीत्वा पुस्तकान् सर्वान् ययुर्दूरं दिगन्तरम् ॥ ७६ ॥

७६. उस समय मुसलमानो के तेज उपद्रव के कारण, सब विद्वान समस्त पुस्तकें लेकर दिगन्तर[१] (दूर देशो) मे चले गय।

ए०)। कुछ अन्य विद्वानो में मुल्ला परसा बुखारी तथा सैय्यद मुहम्मद मदनी का नाम उल्लेखनीय है (बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४६ बी०)।

पाद-टिप्पणी

७५ (१) सिकन्दर सिकन्दर बुतशिकन। काश्मीर के शाहमीर वश का छठवा सुल्तान था। उसने सन् १३८९ से १४१३ ई० तक काश्मीर पर शासन किया था।

(२) यवन = मुसलमान यवनों का अत्याचार सिकन्दर के समय बढ़ गया था (जोन० ५३८–६१३)। जैनुल आबदीन ने अपने पिता की विरोधी नीति सहिष्णुता एव धर्म निरपेक्षता चलाया। आइने अकबरी में भी उल्लेख मिलता है कि जजिया उठा दिया गया। गोहत्या बन्द कर दी गयी। वह बड़ा गुणी सुल्तान था। उसने धर्म के नाम पर किसी का दमन नही किया। इसलिये उसका आदर तथा प्रतिष्ठा सब लोग करते थे (पृष्ठ ४३९)।

(३) पुस्तक बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४६–४७ में सिकन्दर के पुस्तक नष्ट करने के सन्दर्भ में लिखा गया है—'सिकन्दर बुतशिकन ने समस्त पुस्तकें जलवा दी। सिकन्दर ने शालीमार का तालाब हाक परगना में बनवाया था। काश्मीर के समस्त सस्कृत ग्रन्थो से तालाब भर दिया गया। वहाँ किताबें टिड्डियों के समान एकत्रित हो गयी थी। तालाब में उन्हे भरने के पश्चात् उन पर मिट्टी डाल दी गयी ताकि वे सड जायें।'

पाद-टिप्पणी :

७६ (१) दिगन्तर : काश्मीर के बाहर अथवा काश्मीर त्याग से अभिप्राय है। द्रष्टव्य टिप्पणी : जैन० १ - १ - १३९, १ ३ : ११३, १ ७ १७३। दिगन्तर का शाब्दिक अर्थ होता है, दो दिशाओं के मध्य का स्थान।

किमन्यद् द्विजवद् देशे सर्वे ग्रन्था मनोरमाः ।
कथावशेषतां याताः पद्मानीव हिमागमे ॥ ७७ ॥

७७ अधिक क्या वर्णन करें, इस देश मे ब्राह्मणो की तरह सभी ग्रन्थ[1], उसी प्रकार कथा शेष रह गये, जिस प्रकार हिमागम के समय कमल।

सुमनोवल्लभेनात्र राज्ञा भूषयता क्षितिम् ।
नवीकृताः पुनः सर्वे मधुनेव मधुव्रताः ॥ ७८ ॥

७८ सुमनोवल्लभ नृप ने पृथ्वी को भूषित कर, उसी प्रकार सबको नवीन बना दिया, जिस प्रकार वसन्त ऋतु भ्रमरो को।

पुराणतर्कमीमांसाः पुस्तकानपरानपि ।
दूरादानाय्य वित्तेन विद्वद्भ्यः प्रत्यपादयत् ॥ ७९ ॥

७९ पुराण, तर्क, मीमासा एव अन्य पुस्तको को वित्त द्वारा दूर[1] से मगा कर, विद्वानो को प्रदान किया।

मोक्षोपाय इति ख्यात वासिष्ठं ब्रह्मदर्शनम् ।
मन्मुखादशृणोद् राजा श्रीमद्वाल्मीकिभाषितम् ॥ ८० ॥

८० मोक्षोपाय के लिये, प्रसिद्ध वाल्मीकि मुनि कृत वासिष्ठ[1] ब्रह्मदर्शन को राजा ने मेरे मुख से सुना।

पाद-टिप्पणी

७७ (१) ग्रन्थ : द्रष्टव्य टिप्पणी १ ५ ७५।

पाद-टिप्पणी

७९. (१) दूर : सुल्तान ने हिन्दुस्तान, इरान, इराक, तुर्किस्तान में अपने आदमियो को ग्रन्थ खरीदने अथवा प्राप्त करने के लिये भेजा (बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४७ बी०, तारीखे हसन पाण्डु० १२० बी०, हैदर मल्लिक पाण्डु० १२० ए०)।

जहाँ ग्रन्थ खरीदे नही जा सकते थे, वहाँ के लिये आदेश दिया कि लिपिको प्रचुर धन देकर, उनकी प्रतिलिपि करा ली जाय (बहारिस्तान शाही पाण्डु० : ४८ ए०)।

सुल्तान ने एक बडा पुस्तकालय इस प्रकार तैयार कर लिया था, जो फतहशाह के समय तक कायम रहा। तत्पश्चात शाहमीरवंशियों के गृहयुद्ध तथा विदेशी आक्रमणों के कारण नष्ट हो गया। (तारीखे हसन : पाण्डु० १२० बी०, हैदर मल्लिक १२० ए०)।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ४६६वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का ८० वाँ श्लोक है।

८० (१) वासिष्ठ ब्रह्मदर्शन योगवासिष्ठ उत्तर रामायण कहा जाता है। उसमें वेदान्त, साख्य, योग, वैशेषिक मीमासा न्याय के अतिरिक्त बौद्धदर्शन का भी समावेश मिलता है। उसके दर्शन के व्याख्या की अपनी शैली है। उसमें किसी दार्शनिक भावों का खण्डन न कर, सर्वदा नवीन दृष्टिकोण सरल एव बलवती भाषा में रखा गया है। यह ग्रन्थ भारतीयदर्शन एव विचारों का मौलिक सग्रह है।

श्रुत्वा शान्तरसोपेतां व्याख्यां स्वप्नेऽपि नो नृपः ।
अस्मार्षीद् दम्भिकाः कान्ताहावभावक्रियाइव ॥ ८१ ॥

८१. शान्तरस पूर्ण मेरी व्याख्या सुनकर, राजा स्वप्न मे भी, उसी प्रकार उसका स्मरण किया, जिस प्रकार कामुक कान्ता की हाव-भाव और क्रियाओ का।

यो यद्भाषाप्रवीणोऽस्ति स तद्भाषोपदेशभाक् ।
लोके नहि जना नानाभाषालिपिविदोऽखिलाः ॥ ८२ ॥

८२. जो जिस भाषा मे प्रवीण है, वह उसी भाषा द्वारा उपदेश ग्रहण कर सकता है, लोक मे सब लोग नाना भाषा एव लिपि नही जानते हैं।

इति संस्कृतदेशादिपारसीवाग्विशारदैः ।
भाषाविपर्ययात् तत्तच्छास्त्रं सर्वमचीकरत् ॥ ८३ ॥

८३. अतएव संस्कृत भाषा आदि तथा फारसी[1] भाषा मे विशारद, जनो द्वारा भाषाविपर्यय[2] (भाषान्तर) से, तत् तत् सब शास्त्रो को निर्मित कराया।

यह योगियों एव दार्शनिकों का सम्बल है। भारतीय धर्म, आचार, विचार, व्यवहार का सरल सुस्पष्ट एव तर्कशील काव्यमयी भाषा में प्रणयन किया गया है।

योगवासिष्ठ की एक और विशेषता है। 'गीता' भगवान द्वारा मानव अर्जुन की शंका समाधान है और 'योगवासिष्ठ' एक मानव द्वारा भगवान राम की शंकाओं का समाधान है। गीता तथा योगवासिष्ठ में यह मौलिक भेद है। योगवासिष्ठ आत्मा के ऊपर किसी शक्ति की प्राथमिकता नहीं देता गीता आत्मसमर्पण की बात करता है। योगवासिष्ठ आत्मसमर्पण में विश्वास नहीं करता। यह मानव को उसकी अन्तशक्ति की ओर प्रेरित करता है। उसे ही जगत शक्ति का स्रोत मानता है। जन्म-मृत्यु का रहस्य योगवासिष्ठ उदाहरणों अनेक कथाओं द्वारा समझाता है।

ब्रह्मज्ञान का, आत्मज्ञान का, योगवासिष्ठ अद्भुत ग्रन्थ है। उसने हिन्दुओं के साथ मुसल्मानों को अनुप्राणित किया है। जैनुल आबदीन ने उसका फारसी अनुवाद कराया था। उसी के आधार पर स्वयं 'शिकायत दीपक' पुस्तक की फारसी में रचना किया था। अकबर के समय इसका पुनः फारसी में अनुवाद किया गया था। दाराशिकोह ने भी इसका अनुवाद फारसी में कराया था। फारसी में इसके कितने ही अनुवाद हुए थे। (द्रष्टव्य लेखक की पुस्तक योगवासिष्ठ कथा सन् १९६९ ई०)।

पाद-टिप्पणी

८३ (१) फारसी संस्कृत पढकर जो ब्राह्मण केवल पुरोहित अथवा धर्म कर्म करते और दूसरे जो फारसी पढकर राजकार्य में भाग लेते थे उन राजसेवा वृत्ति करनेवाले ब्राह्मणो को कारकुन कहा जाता था। संस्कृतज्ञ एव धर्म करनेवाले ब्राह्मणो को बच्चो भट्ट कहते है। कारकुन तथा बच्चो यह दोनों वर्ग अलग होते गये और एक समय परस्पर विवाह आदि भी बन्द हो गया था।

(२) विपर्यय : अनुवाद। पीर हसन लिखता है—और बहुत से आलिम बरहमन और जोगी लोग कुरुक्षेत्र से बुलवाकर, उनकी मुसाहबत से फायदा उठाता था। हिन्दुस्तान से संस्कृत और वेदों की किताबें मँगवाकर उनका तरजुमा फारसी

धातुवादरसग्रन्थकल्पशास्त्रोदितान् गुणान् ।
यवना अपि जानन्ति स्वभाषाक्षरवाचनात् ॥ ८४ ॥

८४ धातुवाद[1], रस ग्रन्थ[2] एवं कल्प[3] शास्त्रो मे उक्त गुणो को अपनी भाषा का अक्षर पढने के कारण यवन भी जानते हैं।

दशावतारपृथ्वीशग्रन्थराजतरङ्गिणीः ।
संस्कृताः पारसीवाचा वाचनार्हांस्त्वकारयत् ॥ ८५ ॥

८५. संस्कृत भाषा मे लिखी गयी, दश राजाओं[1] का ग्रन्थ राजतरंगिणी को फारसी भाषा द्वारा पढने योग्य कराया।

जबान में करवाया। इसी तरह अरबी और फारसी किताबें भी संस्कृत में तरजुमा करवायी (पृष्ठ १७८)। आइने अकबरी में उल्लेख है—उसने बहुत-सी किताबो का अनुवाद अरबी से फारसी, काश्मीरी, तथा संस्कृत में कराया था। तबक्काते अकबरी में भी उल्लेख मिलता है—सुल्तान को फारसी हिन्दी तथा तिब्बती का ज्ञान था। और उसके आदेशानुसार बहुत-सी अरबी तथा फारसी ग्रन्थों का हिन्दी (हिन्दवी) में अनुवाद हुआ (पृष्ठ ६५१)।

श्रीवर ने स्वयं युसुफ-जुलेखा का अनुवाद संस्कृत मे कथाकौतुक नाम से किया था। मुल्ला अहमद ने महाभारत तथा कल्हण की राजतरंगिणी का अनुवाद फारसी मे किया था (म्युनिख पाण्डु० : ७३ ए०)।

केम्ब्रिज हिस्ट्री में उल्लेख है—सुल्तान ने महाभारत, राजतरंगिणी का संस्कृत से फारसी मे तथा फारसी और अरबी के अनेक ग्रन्थो का अनुवाद हिन्दी भाषा में कराया। उसने फारसी भाषा का राज्य भाषा बनाया, जो अदालतो तथा सरकारी मुहकमों में प्रचलित की गयी (३ २८२)।

पाद-टिप्पणी

८४ (१) धातुवाद : खनिज विज्ञान या धातु विज्ञान। वैद्यक के अनुसार, रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा एवं शुक्र सप्त धातुएँ मानी गयी है। बौद्धो ने १८ धातुएँ मानी हैं। पंचभूतो तथा पंचतन्मात्रा को भी धातु मानते हैं। बौद्धो के अनुसार—चक्षु, घ्राण, श्रोत्र, जिह्वा, काय, रूप, शब्द, गंध, रस, स्पर्श, चक्षुविज्ञान, श्रोत्र विज्ञान, घ्राण विज्ञान, जिह्वा विज्ञान, काय विज्ञान, मनो, धर्म तथा मनोविज्ञान धातु है। चौसठ कलाओ में एक है।

(२) रसग्रन्थ रससिद्धि विज्ञान।

(३) कल्प शास्त्र कल्पसूत्र। सृष्टि के उत्पत्ति, स्थित एवं समाप्ति किंवा प्रलय सम्बन्धी ज्ञान, षड् वेदांगो में एक—वैदिक सूत्र ग्रन्थ। इसमें यज्ञादि करने का विधान है। यज्ञानुष्ठान एवं धार्मिक संस्कारो के नियमो का संग्रह है। श्रौत, गृह्यसूत्र आदि ग्रन्थ इसी के अन्तर्गत हैं। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष वेदांग है। वेदांग शब्द सर्वप्रथम निरुक्त (१ २०) तत्पश्चात ऋग्वेद प्रतिशाख्य (१२ ४०) में ऋग्वेद के सहायक ग्रन्थों को प्रकट करता है।

(४) भाषा फारसी लिपि में लिखी गयी पुस्तक।

पाद-टिप्पणी

श्लोक का अर्थ यह भी हो सकता है—संस्कृत भाषा में रचित दशावतार एवं राजाओं का ग्रन्थ राजतरंगिणी को फारसी भाषा द्वारा पढने योग्य कराया।

८५ (१) दश राजा : शाहमीर वंश के दश राजा श्रीवर के इस समय तक हुये थे। (१) शाह-

म्लेच्छैर्बृहत्कथासार हाटकेश्वरसंहिताः ।
पुराणादि च तद्युक्त्या वाच्यते निजभाषया ॥ ८६ ॥

८६ उसकी युक्ति से म्लेच्छ लोग वृहद् कथासार[1] तथा हाटकेश्वर[2] सहिता, पुराणादि को अपनी भाषा मे पढते हैं।

कश्चिच्छ्रुत्वा शुचिरुचि चिरं धर्मशास्त्रं पवित्रं
धत्ते चित्ते पट इव सितो रञ्जनं तत्क्रियां यः ।
आकर्ण्यान्ये प्रतिदिनममुं पद्मिनीपत्रतुल्याः
कुल्याधारा अपि धृतगुणा गृह्णतेऽस्तन्न किंचित् ॥ ८७ ॥

८७ कुछ लोग सुचि-रुचिपूर्वक चिरकाल पवित्र धर्म-शास्त्र सुनकर, अपने चित्त पर उसकी क्रिया को उसी प्रकार (धारण) कर लेते है, जिस प्रकार श्वेत पट रग ग्रहण करते हैं। अन्य लोग इसे सुनकर भी, अपने (अन्दर) उसी प्रकार कुछ नही ग्रहण करते, जिस प्रकार पद्मिनीपत्र गुण युक्त कुल्याधारा को।

मीर, (२) जमशेद, (३) अलाउद्दीन, (४) शिहाबुद्दीन, (५) कुतुबुद्दीन, (६) सिकन्दर बुतशिकन, (७) अलीशाह, (८) जैनुल आबदीन, (९) अलीशाह, (१०) जैनुल आबदीन।

सस्कृत में उक्त दश राजाओ का इतिहास लिखा गया था।

दशावतार में—(१) मत्स्य, (२) कच्छप, (३) वाराह, (४) नृसिंह, (५) वामन, (६) परशुराम, (७) राम, (८) कृष्ण, (९) बुद्ध और (१०) कल्कि है।

सुल्तान ने दशावतार तथा राजाओ के ग्रन्थ राजतरंगिणी का अनुवाद पारसी (फारसी) भाषा में कराया, ताकि जो लोग सस्कृत नही जानते, वे उनका अध्ययन फारसी में कर सकें।

पीर हसन लिखता है—'खासकर महाभारत और राजतरंगिणी का नुसखा कि दोनों सस्कृत जबान में थी। इनका तरजुमा मुल्ला अहमद ने किया। जयसिंह के अहद से लेकर अपने वक्त तक राजतरंगिणी का ज़मीमा पण्डित जोनराज के जरिया सस्कृत जबान में मुरत्तब कराया (पृष्ट १७८)।' पीर हसन का वर्णन श्रीवर के अनुकूल नही है। जोनराज ने रिंचन सहित पन्द्रह हिन्दू राजाओं के राज्य तथा १० सुल्तानों के चरित का वर्णन किया है। अतएव दश राजा का अर्थ यहाँ सुल्तानो से लगाना ही उचित प्रतीत होता है।

तवक्काते अकबरी में भी उल्लेख है—'महाभारत जो कि एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है, राजतरंगिणी जिसमें काश्मीर के बादशाहों का इतिहास है, उसके आदेशानुसार फारसी में भाषान्तरित हुई (पृष्ठ : ६५९)।'

स्पष्ट लिखा है—'तरजुमह करदन्द, व किताब महाभारत।' दूसरी पाण्डुलिपि में 'मशहूर किताब' शब्द नही लिखा है। दोनों ही पाण्डुलिपियों में 'राजतरंगिणी' लिखा है। उसके सम्बन्ध में उल्लेख है—'किताब को राजतरंगी कहते है जो, कि काश्मीर के बादशाहो की तवारीख है (६५९)।'

पाद-टिप्पणी

८६ (१) वृहद् कथासार।

(२) हाटकेश्वर : हाटकेश गोदावरी तट स्थित भगवान् शंकर की एक मूर्ति का नाम है (स्कन्द० : नर्मदा-माहात्म्य)। हाटक उत्तर में एक देश, गुह्यकों का निवास स्थान है (सभा० : २८ : ३-४)।

नौबन्धनगिरेर्यात्रामाकर्ण्यादिपुराणतः ।
तीर्थयात्रोत्सुक राज्ञः कदाचिदभवन्मनः ॥ ८८ ॥

८८ किसी समय आदिपुराण[1] से नवबन्धन[2] गिरि की यात्रा वर्णन सुनकर, राजा का मन तीर्थयात्रा के प्रति उत्सुक हो गया।

एकोनचत्वारिंशेऽब्दे पितृपक्षान्त्यवासरे ।
यात्रादिदृक्षया भूपो जगाम विजयेश्वरम् ॥ ८९ ॥

८९ उनतालीसवें[1] वर्ष पितृपक्ष के अन्तिम दिन यात्रा देखने की इच्छा से राजा विजयेश्वर गया।

नानावर्णांशुकच्छन्नैः प्रेक्षकैः परिपूरितम् ।
पुष्पाकीर्णमिवोद्यानमद्राक्षीद् रङ्गमण्डलम् ॥ ९० ॥

९० नाना रग के परिधान पहने, प्रेक्षको से परिपूर्ण, रगमण्डल को उसी प्रकार देखा जैसे पुष्पपूर्ण उद्यान।

यत्र वान्दरपालाद्या राजानो वीक्ष्य सद्बलाः ।
तद्वर्षे दर्शनायाता हर्षमन्वभवन्निति ॥ ९१ ॥

९१ उस वर्ष जहाँ दर्शन के लिये आये हुये, सेना सहित वान्दरपाल[1] आदि राजा (रगमण्डप) देखकर, हर्षित हुये।

पाद-टिप्पणी

८८ (१) आदिपुराण आधुनिक विद्वानो ने आदिपुराण का काल सन १२०३-१२२५ ई० रखा है। इसका अर्थ है कि आदिपुराण कल्हण (सन् ११४८-४९ ई०) के पश्चात की रचना है। श्रीवर के रचनाकाल के समय (सन १४५९-१४८६ ई०) में यह पुस्तक काश्मीर में उपलब्ध थी। आदिपुराण से अर्थ ही है कि यह पुराण था। यह कोई नवीन रचना केवल दो शताब्दि पूर्व की नही थी। आदिपुराण को कुछ विद्वान ब्रह्मपुराण मानते है। दूसरा मत है कि इसका तात्पर्य काश्मीर के लौकिक पुराण नीलमत से है। जैन ग्रन्थो के अनुसार जिनसेन (सन् ८०१-८४३ ई०) ने आदिपुराण की रचना की थी। मल्लिषेण (सन ११२८ ई०) ने आदिपुराण रचा था। सकलकीर्ति (सन् १४३३-१४७३ ई०) तथा चन्द्रकीर्ति (सन् १५९७ ई०) ने भी आदिपुराण की रचना की थी।

(२) नवबन्धन द्र० नील० १६७, हर० ४ २७, सर्वावतार० ३ ४ १२, ३ : १०, ५ १४७, ५ ४३, नौबन्धन माहात्म्य, वनपर्व १८७ : ५० ।

पाद-टिप्पणी

८९ (१) उनतालीसवें वर्ष ४५३९ सप्तर्षि = सन १४६३ ई० = विक्रमी सवत १५२० = शक सवत् १३८५ । कलि गताब्द ४५६४ वर्ष ।

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई ।

९० उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ४७६ वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का ९०वा श्लोक है।

पाद-टिप्पणी

९१ (१) वान्दरपाल शोध अपेक्षित है।

गगन तारकापूर्णं दीपाढ्यं रङ्गमण्डपम् ।
यत्रान्योन्य तुलां चक्रे रात्रौ कविबुधाचिंतम् ॥ ९२ ॥

९२ जहाँ पर, रात्रि मे कवि (शुक्र[1]) एव बुधा (बुध[2]) से युक्त, तारकापूर्ण आकाश तथा कवियो एव विद्वानो सहित दीपो से समृद्ध, रगमण्डप, परस्पर समानता प्राप्त कर रहे थे।

अमावस्यादिने प्राप्तैर्नानानागरिकामुखैः ।
शुशुभे शुभद यत्र शतचन्द्र भुवस्तलम् ॥ ९३ ॥

९३ अमावस्या के दिन जहाँ पर, आये हुये बहुत सी नागरिकाओ के मुखों से शुभद पृथ्वीतल, शत चन्द्र युक्त समान शोभित हो रहा था।

पाद-टिप्पणी

९२ (१) कवि (शुक्र) शुक्र पौराणिक मान्यता के अनुसार भार्गव-कुलोत्पन्न थ। यह भृगु ऋषि तथा हिरण्यकश्यपु की कन्या दिव्या के पुत्र थे। उस कवि का भी पुत्र माना गया है। अतएव उसका पैतृक नाम काव्य पड गया। यह दैत्यो के गुरु, आचार्य एव पुरोहित थे। भगवान् कृष्ण ने गीता में श्रेष्ठ कवियों में कवि 'उशनस्' अर्थात् शुक्र का उल्लेख किया है।

शुक्र एक ग्रह है। ग्रहों में यह सबसे अधिक कान्तिमान है। उच्चतम कांति की अवस्था में यदि यह होता है, तो दिन में खाली आँखों स भी देखा जा सकता है। रात्रि काल में क्षितिज के ऊपर आ जाता है, तो इसके प्रकाश से पादपा की छाया बन जाती है। सौर क्रम में इसका दूसरा स्थान है। इसका व्यास ७५८४ मील है। पृथ्वी के बराबर है। चद्रमा के समान इसमें भी कलायें होती हैं। वैज्ञानिको का मत है कि इसपर प्राणियों का रहना सम्भव नही है। सूर्य से ६ करोड बहत्तर लाख मील दूर है। सूय की परिक्रमा २२४ दिनों में पूरी करता है। गगन-मण्डल में गुरु एव बुध के द्वारा सुशोभित तथा जनसमुदाय को उनके दर्शन से प्रसन्नता प्राप्त होती है।

शुक्र का पर्यायवाची नाम कवि हैं और बुध का पर्यायवाची नाम विद्वान हैं। इसीलिये द्वयर्थक श्लिष्ट वाक्यों का प्रयोग किया गया है। सुकवियों के द्वारा सभामण्डप उसी प्रकार आनन्द विभोर होता था जिस प्रकार आकाश में बुध शुक्र के उदय होने पर *गगनमण्डल में परिपूर्णता भासित होती है।*

(२) बुध द्रष्टव्य टिप्पणी १ ४ १८। सौरमण्डल में सूय के सबसे समीप बुध, तत्पश्चात शुक्र अनन्तर पृथ्वी पडती है। पृथ्वी के पश्चात् मगल, बृहस्पति एव शनि हैं। बसन्त एव शारद ऋतुओ में यह दूरबीन से देखा जा सकता है। वसन्त ऋतु में सूर्यास्त के पश्चात् दृष्टिगत होता है। केवल दो घन्टो पश्चात् स्वत अस्त हो जाता है। शरद् काल में सूर्योदय के पूर्व दिखायी देता है। पूव और पश्चिम दोनों दिशाओ में समयो के अन्तर से उदय होता है। प्राचीन काल में इसके नाम इसलिये दो पड गये थे। सूय से वह ३ करोड ६० लाख मील दूर तथा सूर्य की परिक्रमा ८८ दिनो में करता है, जब कि पृथ्वी ३६५ दिनों में करती है।

(३) तुलाचक्र कवि ने तराजू के दोनों पलडों को सतुलित करते हुये एक पलडे में बुध-शुक्र (ग्रह) *गगनमण्डल* के तारक और दूसरे पलडे में विद्वान कवियों की प्रतिभा का तौल किया है। क्योंकि तुला राशि राशिचक्र को सप्तम राशि है और शुक्र की अपनी राशि है। कवि अपने स्थान पर सुशोभित होते हैं, जैसे कि शुक्र तुला राशि पर। उनका महत्व रात्रि में अधिक होता है, क्योंकि शुक्र

दीपवृक्षो नृवाह्योऽपि यत्र रङ्गान्तरे स्फुरन् ।
दध्रे तारकामध्योद्यत्कृत्तिकर्क्षचयोपमाम् ॥ ९४ ॥

९४ जहां पर रगमण्डप मध्य मनुष्यवाही दीप वृक्ष, तारकाओ के मध्य, उदित होते कृत्तिका[1] नक्षत्र पुज की उपमा धारण कर रहा था ।

विजयेशादथोत्थाय भूपः पुत्रद्वयान्वितः ।
पद्भ्यामुल्लङ्घ्य दुर्मार्गं प्रपेदे वासरैस्त्रिभिः ॥ ९५ ॥

९५ दोनो पुत्रो सहित, राजा विजयेश से चलकर, पावो से ही दुर्मार्ग[1] लाघकर, तीन दिनो मे पहुच गया ।

दृष्ट्वा क्रमसरोविष्णुपादमुद्राकृतिं प्रभुः ।
पादप्रणामजानन्दमविन्दद् भक्तिसुन्दरः ॥ ९६ ॥

९६ भक्ति से सुन्दर स्वामी क्रमसर[1] विष्णुपाद मुद्रा[2] की आवृति देखकर पाद प्रणाम करने का आनन्द प्राप्त किया ।

और बुध दीप्तमान रहते हुये, भी दिन में दिखायी नही पड़ते, यद्यपि रात्रि रूपी रगमच पर शोभित होते हैं ।

पाद-टिप्पणी

९४. (१) कृत्तिका नक्षत्र पुराणों के अनुसार प्रचेता दक्ष को दी गयी सत्ताइस कन्याओ में एक है। चन्द्रमा की पत्नी थी । कार्तिकेय का पालन की थी । सत्ताइस नक्षत्रों मे यह तीसरा नक्षत्र है । इस नक्षत्र समूह में ६ तारें हैं। जिनका सयुक्त आकार अग्निशिखा के समान लगता है। एक मत है कि कृत्तिका की अधिष्ठात्री अग्नि है । भागवत (६ ६) तथा (५ २७) के अनुसार अग्नि नामक वसु की पत्नी है । कृत्तिका का रूप छुरा के समान वर्णित किया गया है । इसके स्वामी अग्नि है। इसका नाम पद चक्र अ इ उ ए हैं । कृत्तिका का योग धूम्र तथा दिन रवि है ।

ज्योतिष के अनुसार यह वृष राशि के समीप है । दूरदर्शक यन्त्र से देखने पर, इसके तारा समूह शन मे अधिक दृष्टिगोचर होते है। उनके मध्य धुंधली छाया दिखायी देती है। एक मत है कि यह निहारिका है । कृत्तिका की दूरी पृथ्वी से लगभग ५०० प्रकाश वर्ष है। इस तारापुञ्ज में ३०० से ५०० तक तारे हैं । ये ५० प्रकाश वर्ष के वृत्त में बिखरे हैं । तारों का घनत्व केन्द्र में अधिक है ।

सूर्य इस नक्षत्र में प्रथम अश में होते है, तो चन्द्रमा विशाखा के चतुर्थ अश में होता है । सूर्य विशाखा के तृतीय चरण में हो तो कृत्तिका के सिर पर स्थित होता है । महर्षियों ने इसे विषुव लिखा है (ब्रह्मा० २ २१ १७, १४५, २४ १३०, ३ १० . ४१, १८ २, वायु० ६६ ४८, ८२ २, महा० वन० २३० . ५, ११, ८४ ५१, अनु० ६४ ५)। कृत्तिका का अधिपति देवता अग्नि है । सत्ताइस नक्षत्रों में तीसरा नक्षत्र है । इसमें ६ तारे हैं । इनका सयुक्त आकार अग्निशिखा के समान लगता है । कृत्तिका चन्द्रमा की पत्नी तथा कार्तिकेय की पालन करनेवाली हैं ।

पाद-टिप्पणी

९५ (१) दुर्मार्ग योदत्त ने दुर्मार्ग स्थान-वाचक नाम माना हैं ।

पाद-टिप्पणी

९६. (१) क्रमसर कौसर नाग = नौबन्धन

ब्रह्माच्युतेशगिरयः पतत्तोयरवच्छलात् ।
अकुर्वन् कुशलप्रश्नं हरांशजमहीभुजे ॥ ९७ ॥

९७ गिरते हुये, जलधारा के शब्द व्याज से, ब्रह्म,[१] अच्युतेश[२], शिव के अंशभूत राजा से कुशल प्रश्न किये ।

पर्वत के मूल उत्तर-पश्चिम दिशा में एक पर्वतीय दो मील लम्बी झील है । इसका पुराना नाम क्रमसर अथवा क्रमसार है । (नील० १२३, १७६, १८०, १२६९, १२७०, १२७८, नौबन्धन माहात्म्य, सर्वावतार ३ १०, रा० ५ १७४) । विष्णुपद सर को क्रमसर कहा गया है । क्रम का अर्थ पदार्पण होता है । नौबन्धन आरोहण हेतु भगवान का यही प्रथम पद पड़ा था । क्रमसर विशोका नदी का उद्गम है (द्र० १ ६ १) ।

(२) विष्णुपाद मुद्रा विष्णुपद = भगवान विष्णु तथा भगवान बुद्ध की पादमुद्रा अर्थात पाद चिह्न बनाने की प्रथा प्रचलित है । काश्मीर में भी विष्णु की पाद मुद्रा बनी थी । पादमुद्रायें या चिह्न दो प्रकार के बनते है । एक सादा होता है तथा दूसरे में फलित ज्योतिष के अनेक चिह्न बने रहते है । नौबन्धन आरोहण के पूर्ण भगवान विष्णु का क्रम अर्थात जहाँ प्रथम पद पड़ा था, वहीं पर भगवान का चरण चिह्न अथवा विष्णुपद बना दिया गया था । वह नौबन्धन तीर्थयात्रा का एक भाग था ।

पाद-टिप्पणी

९७ (१) ब्रह्मा पुरातन सिद्धान्त है कि राजा देव का अंश है । मनु का मत है—'विधाता ने इन्द्र, मरुत, यम, सूय, अग्नि, वरुण, चन्द्र एवं कुबेर के प्रमुख-अंशों से युक्त राजा की रचना की है' (मनु० ७ ४-५, ९ ९६) मनुष्य नर रूप में देवता है (मनु० ७ ८, शान्ति० ६८ ४० आपस्तम्ब० १ ११ ३१ ५, मत्स्यपुराण २२६ १, शुक्रनीति १ ७१-७२ । अग्निपुराण में (२२६ १७-२०) राजा, सूर्य, चन्द्र, वायु, यम वरुण, अग्नि, कुबेर, पृथ्वी एवं विष्णु का कार्य करता है अतएव राजा में उनके अंश हैं । वायुपुराण (५७ : ७२) का मत है कि अतीत एवं भविष्य के मन्वन्तरों में चक्रवर्ती राजा उत्पन्न हुये और होंगे उनमें विष्णु का अंश होगा । शान्तिपर्व (३ ६७) में राजा के उत्पत्ति के विषय में गाथा दी गयी है—लोग ब्रह्मा के पास गये । उनसे एक शासक के नियुक्ति की प्रार्थना की । ब्रह्मा ने मनु को नियुक्त किया । रामायण में उल्लेख मिलता है कि ब्रह्मा ने राजा को बनाया । नारदस्मृति में लिखा गया है—प्रकृति पर स्वयं इन्द्र राजा के रूप में विचरण करता है (प्रकीर्णक २०, २२, २६, ५२) । भागवतपुराण में महादेव का अंश भी जोड़ दिया गया है—विष्णु ब्रह्मा, महादेव, इन्द्र, वायु, यम, सूर्य मेघ, कुबेर, चन्द्रमा पृथ्वी, अग्नि और वरुण और इसके अतिरिक्त, जो दूसरे वर और शाप देनेवाले देवता हैं, वे सब राजा के शरीर में निवास करते हैं अतएव देवता सर्वदेवमय है (भा० ४ १४ २६-२७) । प्रारम्भिक वैदिक काल में देवत्व की कल्पना नहीं की गयी थी ।

(२) अच्युत अपने स्वरूप से न गिरनेवाला, दृढ़ स्थिर निर्विकार, अविनाशी, अमर, अचल, शाब्दिक अर्थ होता है । विष्णु तथा उनके अवतारों का नाम है । वासुदेव श्रीकृष्ण का विशेषण है । जैनियों के अनुसार कल्पवासी देवताओं का एक भेद तथा उनका स्थान है । कल्प स्वर्गों में सोल्हवाँ स्वर्ग है । अच्युत कुल वैष्णवों का एक समाज एवं उनकी कुल परम्परा है । वे विशेषतया रामानन्द सम्प्रदाय के होते हैं । वे अपने को अच्युतकुल या अच्युतगोत्रीय मानते हैं ।

कस्तूरीकुसुमश्यामां कोष्ठागारावनिं गिरेः ।
दृष्ट्वा तुष्टो नृपश्रेष्ठो योगीवेष्टां हरेस्तनुम् ॥ ९८ ॥

९८ कस्तूरी, कुसुम, श्यामल पर्वत की कोष्टागार भूमि को देखकर, नृपश्रेष्ठ राजा उसी प्रकार तुष्ट हुआ, जिस प्रकार योगी कस्तूरी-कुसुम-श्यामल[1] हरि के शरीर को देखकर।

अथ नौकां समारुह्य धीवरैः पञ्चपैर्वृताम् ।
धृत्वा मां सिंहभट्टं च चचार सरसोऽन्तरे ॥ ९९ ॥

९९ धीवरों[1] से युक्त नौका पर, आरूढ होकर, और मुझे तथा सिंह[2] भट्ट को लेकर, सरोवर[3] के अन्दर विचरण किया।

गीतगोविन्दगीतानि मत्तः श्रुतवतः प्रभोः ।
गोविन्दभक्तिसंसिक्तो रसः कोऽप्युदभूत् तदा ॥ १०० ॥

१०० उस समय मुझसे गीतगोविन्द[1] के गीतो को सुनकर, राजा को गोविन्द भक्ति से पूर्ण, कोई अपूर्व रस पैदा हुआ।

पाद-टिप्पणी

प्रथम पाद के द्वितीय चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

९८ (१) श्यामल : भगवान कृष्ण के वर्ण की कल्पना श्याम वर्ण से की गयी है। श्याम वट-वृक्ष का नाम है। वटपत्र पर भगवान प्रलय काल में विश्राम करते हैं। प्रयाग सगम पर स्थित वट को श्याम की सज्ञा दी गयी है। (भाग०)—अय च कालिन्दी तटे वट श्यामो नाम। (उत्तर० १) सोऽयं वट श्याम इति प्रतीत (रघु० १३ ५३)। शिव का एक विशेषण है।

पाद टिप्पणी

९९ (१) धीवर मल्लुवा = मल्लाह = माझी हाँजी। भर्तृहरि (२ ६१) धीवरों के विषय में लिखते हैं—मृग मीन सज्जनाना तृण जल सतोष विहित वृत्तीना, लुब्धक धीवर पिशुना निष्कारण वैरिणो जगति—धीवर का एक राज्य के रूप में भी उल्लेख महाभारत में मिलता है (ब्रह्मा० २ १८ ५४, मत्स्य० १३१ . ५३, वायु० ४७ ५१, ६३ १२३)।

(२) सिंहभट्ट द्र० ४ ४३।

(३) सरोवर क्रमसर।

पाद-टिप्पणी

१०० (१) गीतगोविन्द गीतगोविन्द संस्कृत के सरस, ललित एव मधुर काव्य का जीता-जागता रूप है। उस जैसा, पद-लालित्य विश्व की किसी भाषा में नहीं मिलेगा। संस्कृत न जानने-वाले भी केवल उसका पठन किंवा सरस उच्चारण सुनकर झूम उठते हैं।

गीतगोविन्दकार महाकवि जयदेव थे। उनके पिता का नाम भोजदेव एव माता का राधा अथवा रामा था। जन्म स्थान 'केंदुबिल्व' वर्तमान केंदुली स्थान था, जहाँ आज भी मेला लगता है और गीत-गोविन्द के पदों का सरस गायन होता है। उनका जन्म बारहवी शती में हुआ था। बगाल के अन्तिम हिन्दू राजा लक्ष्मण सेन के सभा-कविरत्नों में सर्व श्रेष्ठ थे। इस काल में श्रीकृष्ण आदर्श नायक एव राधा आदर्श नायिका थी। इसमें आध्यात्मिक रहस्यवाद की अभिव्यक्ति अपने समय के परम सगीतज्ञ एव सगीत शास्त्र-विशारद राणा कुम्भ

कुञ्जप्रतिश्रुतो मञ्जुगीतनादस्तदावयोः ।
अनुगीत इवालस्थैः किंनरैं राजगौरवात् ॥ १०१ ॥

१०१ उस समय हम दोनो के मजुल गीतनाद की कुज मे होनेवाली प्रतिध्वनि, राज गौरववश वहाँ के किन्नरो द्वारा अनुगीत सदृश प्रतीत हो रही थी।

क्षणं सरोन्तश्चरतो हिमवृष्टिनिभाद् विभोः ।
भक्तिप्रीतैरिवोन्मुक्तं देवैः कुसुमवर्षणम् ॥ १०२ ॥

१०२ कुछ क्षण सरोवर मे भ्रमण करते, राजा की भक्ति से प्रसन्न, देवो ने मानो हिम-वृष्टि के व्याज से कुसुम-वृष्टि की।

(सन १५६३ ई०) ने इसकी व्याख्या की है। गीतगोविन्द समस्त भारत में लोकप्रिय है। महाप्रभु चैतन्य गीतगोविन्द गाते-गाते समाधिस्थ हो जाते थ। गीतगोविन्द के पश्चात सस्कृत में अष्टपदी तथा अन्य भारतीय भाषाओ में गीतकाव्य प्रणयन की परम्परा चल पडी थी।

गीतगोविन्द के सम्बन्ध में अनेक गाथाएँ प्रचलित है। जयदेव कवि—'भय शिरसि मण्डनम' पद लिखकर रुक गये। पद बैठ नही रहा था। वह स्नान करने चले गये। इसी समय भगवान ने आकर—'देहिपद पल्लवम' लिखकर, पद पूरा कर दिया। स्नान कर लौट, तो उनकी धर्मपत्नी न आश्चर्यपूर्वक पूछा, इतने जल्दी कैसे लौट आये ? अभी तो पद लिखकर, गये थे। जयदेव चकित हुए। वह दौडकर पद देखने लगे। भगवान का दर्शन पत्नी को हुआ और उन्हें नही हुआ। कहकर अपने पत्नि के सौभाग्य की प्रशसा की। एक और गाथा है। एक मालिन एक खेत में भुट्टा तोड रही थी। साथ ही साथ मधुर स्वर से गीतगोविन्द गाती जाती थी। जयदेव ने देखा कि भगवान की प्रतिमा का वस्त्र फटा था। रहस्य खुला कि मालिन के कोमल कण्ठ से गीतगोविन्द का गान सुनकर भगवान उसके पीछे-पीछे भाग रहे थे। भागने में उनका वस्त्र फट गया था।

इस श्लोक मे प्रकट होता है कि जैनुल आबदीन सस्कृतज्ञ के साथ ही साथ शास्त्रीय गान-पारगत भी था। वह गीतगोविन्द के माधुर्य पर मोहित होकर, स्वय श्रीवर के साथ गाने लगा था। इससे एक बात का और पता चलता है। गीतगोविन्द बगाल से काश्मीर तक सर्वप्रिय काव्य-गीत हो गया था।

पाद-टिप्पणी

१०१ (१) किन्नर किन्नौर अचल के निवासी किन्नर कहे जाते है। हिमाचल प्रदेश में है। किन्नौर के पूर्व में पश्चिमी तिब्बत, पश्चिम में कुलू तथा स्पीति दक्षिण में टेहरी गढवाल, जम्वल कोट है। सतलज नदी की उपत्यका क्षेत्र में फैला है। भूखण्ड लगभग ७० मील लम्बा तथा उतना ही चौडा है। इसकी कम से कम ऊँचाई समुद्र सतह से ५००० फीट है। आबादी ११ हजार फिट की ऊँचाई तक मिल जाती है। कन्नौरी, गलचा तथा लाहौली स्थानीय भाषाएँ है। जम्बूद्वीप के सात वर्षों में एक किंपुरुष अथवा किन्नरवर्ष है। ये अश्वमुख तथा सगीत कलाप्रिय कहे गये है। उनकी गान विद्या में प्रसिद्धि मुद्रा प्राचीन काल से अबतक रही है और है (जैन० १ ६ . ७, द्रष्टव्य परिशिष्ट 'किन्नर' 'रा० खण्ड १ पृष्ठ ११०)। किन्नर सगीत में प्रवीण होते थे (माघ० ३ १० ३९)। पुलह ऋषि के वशज माने जाते है। कुबेर के साथ कैलाश पर रहते है। ब्रह्मा के परछाई स इनकी

दृष्ट्वा सरोन्तरे श्वेता हिमान्यो भ्रमणाकुलाः ।
तीर्थस्नानाप्तकैलासशृङ्गभङ्गिभ्रमं व्यधुः ॥ १०३ ॥

१०३ सरोवर के श्वेत हिमपुंज को इधर-उधर घूमते (तैरते) देखकर, (लोगों ने) तीर्थ-स्थान के लिये आये[१] कैलाश शृंग (शिखर) का भ्रम किया।

सत्यं विष्ण्ववतारः स येन भक्त्या प्रदक्षिणम् ।
त्रीन् वारानकरोन्नून ज्ञातुं स्वक्रमविक्रमम् ॥ १०४ ॥

१०४ वास्तव में विष्णु अवतार उस राजा ने अपने पद-पराक्रम को जानने के लिये, भक्ति पूर्वक तीन बार प्रदिक्षणा की।

योऽभूदागमसिद्धार्थो नौबन्धनगिरिस्तदा ।
प्रत्यक्षार्थः कृतो राज्ञा बद्ध्वा नौकां यदागतः ॥ १०५ ॥

१०५ नौका-बन्धन कर, राजा ने आगम से सिद्ध अर्थवाले, नवबन्धन[१] गिरि का उस समय साक्षात्कार किया।

उत्पत्ति मानी जाती है (भाग० ३ २० ४९, ४ ६ ९, ब्रह्मा० २ २५ २८, ३ ७ १७६, ८ ७१)। गदाधर मन्दिर के प्रांगण में राजा रणवीर सिंह द्वारा लगे विक्रमी १९२९ = सन् १८७२ ई० में देवनागरी लिपि के शिलालेख में हिमालय उत्तर स्थित किन्नरवर्ष का उल्लेख किया गया है।

पाद-टिप्पणी :

१०३ (१) कैलाश द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी १ : ३ १२१।

पाद-टिप्पणी

१०४ (१) विष्णु अवतार जोनराज तथा श्रीवर दोनों ही ने जैनुल आबदीन को नारायण किंवा विष्णु का अवतार माना है (जोन० ९ ७३)। उसे श्रीमद्दर्शननाथ अर्थात् धमराट लिखा है (जोन० ९७५)।

पुराणों की मान्यता के अनुसार विष्णु का ही अवतार होता है। विष्णु के २४ अवतार हुए हैं। उनमें दस प्रधान है—मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और भविष्य का होनेवाला कल्कि अवतार है। किसी देवता का संसारी प्राणियों के शरीर धारण करने को अवतार कहते हैं।

पाद-टिप्पणी :

१०५ (१) नवबन्धन गिरि बनिहाल से पश्चिमी दिशा में चलने पर, तीन शिखरों का एक समूह मिलता है। उसे विष्णु, शिव एवं ब्रह्म शिखर कहते हैं। उनकी ऊँचाई पन्द्रह हजार फीट है। त्रिदेवों ने इसी स्थान से जलोद्भव असुर से युद्ध कर, सतीसर को हरी भूमि बनाया था। इन शिखरों में धुर पश्चिमी शिखर १५५२३ फीट ऊँचा है। इसी को नवबन्धन तीर्थ कहते है। नीलमत के अनुसार जल प्लावन के समय भगवान विष्णु ने मत्स्य रूप में इस शिखर में नाव बाँधा था। नाव स्वरूप दुर्गा स्वयं हो गयी थी। ताकि प्राणी नाश होने से बच जाय। यह कथानक बाइबिल वर्णित महात्मा नूह के आक से मिलती-जुलती है। (नील० ३९-४१, १७८, हरचरित चिन्तामणि ४ २७, सर्वावतार ३ ४, १२ ५ ४३)।

स कुमारसरो यावत् सुकुमारं स्मरन् पथि ।
सकुमारोऽम्बुपानेन सुखं पुण्यमिवासदत् ॥ १०६ ॥

१०६ कुमार सहित उस राजा ने मार्ग में कुमारसर[1] तक सुकुमार[2] का स्मरण करते हुए, अम्बुपान कर, पुण्य सदृश सुख प्राप्त किया।

शृण्वन् स्थानाभिधाः पुण्याः स्पृशंस्तीर्थजलं शुभम् ।
पिबन् सतुहिनं तोयं पश्यन् वनतरुश्रियम् ॥ १०७ ॥

१०७ पुण्यशाली स्थानों का नाम श्रवण करते, शुभ तीर्थजल का स्पर्श करते, तुहिन सहित जल पीते, वन वृक्षों की शोभा देखते—

जिघ्रन्नोषधिपुष्पाणि पञ्चेन्द्रियसुखप्रदाम् ।
तीर्थयात्रां विधायेत्थं नगरं प्राप भूपतिः ॥ १०८ ॥

१०८ औषध पुष्पों की सुगन्ध लेते, वह राजा इस प्रकार पञ्चेन्द्रियों को सुखप्रद तीर्थ-यात्रा करके, नगर में पहुँचा।

इति जैनराजतरङ्गिण्यां क्रमसरोयात्रावर्णनं नाम पञ्चमः सर्गः ॥ ५ ॥

इस प्रकार जैनराजतरंगिणी में क्रमसर यात्रा वर्णन नामक पाँचवा सर्ग समाप्त हुआ।

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई।

१०६ (१) कुमारसर : वर्णनक्रम से कुमार-सर के स्थान पर क्रमसर होना चाहिए। इसका पुनः उल्लेख नहीं मिलता।

(२) सुकुमार : एक तीर्थस्थल। तक्षक-कुल में उत्पन्न एक नाग है। यह जनमेजय के नागसत्र में भस्म किया गया था (आदि० ५७ : ९)। शाकद्वीप के जलधार पर्वत के निकटस्थ एक वर्ष है (भीष्म० ११ : २५)।

पाद-टिप्पणी

१०८ उक्त श्लोक के प्रथम पद के द्वितीय चरण का पाठभेद सन्दिग्ध है।

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ४९४वीं पंक्ति है।

बम्बई संस्करण में १०८ श्लोक इस सर्ग के यथावत तथा कलकत्ता संस्करण के १०७ श्लोक हैं। कलकत्ता संस्करण में २०वाँ श्लोक नहीं है। कलकत्ता संस्करण का ३८८ से ४९४ पंक्ति संख्या के श्लोक क्रम से इस सर्ग में सम्मिलित हैं।

●

षष्ठः सर्गः

ततः क्रमसरस्तुल्य राजा पद्मपुरान्तरे ।
तत्कौतुकापनोदाय चक्रे जैनसरो नवम् ॥ १ ॥

१ तत्पश्चात राजा ने उसका कौतुक दूर करने के लिये, क्रमसर[1] के तुल्य पद्मपुर[2] में नवीन जैनसर[3] निर्माण कराया ।

फुल्लत्कुङ्कुमपुष्पौघश्यामीभूतस्थलच्छलात् ।
शरदीवागता प्रीत्या यमुना यत्सरोवरम् ॥ २ ॥

शरद काल मे प्रफुल्ल कुमकुम के पुष्पपुज से, श्यामल भूमि के व्याज से, मानो प्रेम से, यमुना ही उस सरोवर मे आ गयी थी ।

कुलोद्धरणनागाख्यमण्डिते यत्तटे नवम् ।
राजद्राजगृहं राजा राजराजोपमो व्यधात् ॥ ३ ॥

३ कुलोद्धरण[1] नाग-मण्डित तटपर, कुबेर सदृश राजा ने नवीन भव्य राजगृह निर्माण कराया ।

उच्चैः पदस्थममलं रुचिरञ्जिताश
संपूर्णमण्डलखण्डकलाकलापम् ।
राजानमीशमवलोक्य हतोपताप
काङ्क्षन्ति के न नितरामपि दूरसंस्थाः ॥ ४ ॥

४ उन्नत पद पर स्थित, निर्मल रुचि (कान्ति-इच्छा) दिशा (आशा) को रजित करने वाले, सम्पूर्ण मण्डल (देश) एव अखण्ड कला-कलाप से पूण, उपताप (ताप) नाशी, स्वामी (ईश) राजा (चन्द्रमा) को देखकर, बहुत दूर स्थित, भी कौन-स लोग नही चाहते हैं ?

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण का ४९५ वी पक्ति है ।

१ (१) क्रमसर कौसर नाग द्र० १ ५ . ९६, ६ : १ ।

(२) पद्मपुर पामपुर । द्र० ४ १३१, ४ ३४२, लोक० २० ।

(३) जैनसर स्थान का अन्वेषण अपेक्षित है । इसका केवल यही उल्लेख मिलता है ।

पाद-टिप्पणी

३ (१) कुलोद्धरण नाग हरचरित चिन्तामणि में कुलोद्धारणिका का उल्लेख मिलता है (१० · २४७) । विजयेश्वर से उत्तर-पश्चिम लगभग १४ मील दूर है ।

दिगन्तरीया भूपालाः श्रुत्वैतद् गुणगौरवम् ।
नानोपायनवर्षौघैर्ववर्षुर्नितरामभुम् ॥ ५ ॥

५. दिगन्तरीय (बाहरके) भूपाल यह गुण-गौरव सुनकर, इस पर नाना प्रकार के उपायनो की नितरा वृष्टि किये।

वेगेन जितवायुं स्वं ताजिकाख्यं तुरङ्गमम् ।
उपदां व्यसृजत् सख्यादुच्चं पञ्चनदप्रभुः ॥ ६ ॥

६ पचनद[1] के राजा[2] ने मित्रता के कारण वेग से वायु को जीतनेवाला उन्नत ताजिक[3] नामक तुरग उपहार मे भेजा।

पाद-टिप्पणी

६ (१) पचनद पजाव, झेलम, चनाव, रावी, सतलज, व्यास पाँच नदियों से सिंचित देश को पज + आब (पाँच-पानी) कहा जाता है। भारत विभाजन के पूर्व का समस्त पजाव इस परिभाषा में आ जाता है। पञ्चनद शब्द पुराकाल मे प्रचलित था। पश्चिम दिग्विजय के समय नकुल ने पचनद विजय किया था (सभा० ३२ ११)। पचनद की पाँच नदियाँ विपाशा (व्यास), शतद्रू (सतलज), इरावती (रावी), चन्द्रभागा (चनाव) और वितस्ता (झेलम) है।

(२) राजा पजाब कई सूबो में विभाजित था। वहाँ सूवेदारों का शासन था। लाहौर–दौलत खाँ लोदी (–१५२४) मुलतान–राय सकरा लधा (सन् १४४५–१४६९ ई०), हुसेन खाँ लधा (सन् १४६९–१५०२ ई०), दिपालपुर–तातार खाँ (सन् १४५१–१४८५ ई०), सुनाम या सामना–बहलोल लोदी (सन् १४४१–१४५२ ई०), सीरहिन्द–बहलोल लोदी (सन् १४३१–१४६८ ई०) शासन कर रहे थे। किस राजा से श्रीवर का तात्पर्य है, स्पष्ट नही होता।

(३) ताजिक ताजी शब्द अरवी है अरवी घोडे को कहते हैं। अरबी घोडा सर्वश्रेष्ठ, वेगशाली माना जाता है। आस्ट्रेलिया की यात्रा मे मैंने देखा था कि अरवी घोडे की नसल वहाँ पर ले जाकर, अरवी घोडे पैदा किये जाते थे। उनका व्यापार होता था। नामों के अन्त में 'क' जोडने की शैली काश्मीर में है। अतएव ताजी के आगे 'ताजीक' लगा दिया गया है। छन्द के लालित्य के लिये दीर्घ मात्रायें प्राय ह्रस्व तथा ह्रस्व की मात्रायें दीर्घ में परिणत कर दी जाती है।

बम्बई सस्करण जैनराजतरंगिणी की श्लोक सख्या १७० में ताजिक जाति का उल्लेख है, जो दुलचा के साथ काश्मीर में प्रवेश किये थे।

प्रारम्भ में ताजिक शब्द से अरब मुसलमानों का बोध होता था। तुर्कों का जब मध्येशिया पर अधिकार हो गया, तो ईरानी वहाँ के निवासियो को भी ताजिक कहने लगे। कालान्तर में गैर तुर्क मुसलमानों के लिये ताजिक शब्द का व्यवहार होने लगा। ईरानी मुसलमान ताजिक कहे जाने लगे। ताजिक शब्द तातार के व्यापारियों के लिये भी सम्बोधित किया जाता रहा है। आजकल ताजिक शब्द पूर्व क्षेत्रीय इरानियों के लिये व्यवहृत होता है। अस्त्राबाद एव यज्द का मध्यवर्ती भूखण्ड ताजिकों के भूमि की अन्तिम सीमा मानी जाती है। सोवियत रूस में ताजिक गणतन्त्र सन् १९२४ ई० में स्थापित हुआ था। इसकी सीमा पूर्व में तिकियाग तथा दक्षिण में अफगानिस्तान है। तुर्की घोडे भी अच्छे होते हैं। किन्तु अरबी घोडे उनसे भी अच्छे होते हैं। यहाँ पर ताजिक से ताजिकास्तान का घोडा अर्थ लगाना ठीक नही प्रतीत होता। द्र० जैन० ४ : २४८।

किंनरोऽश्वमुखः ख्यातः कण्ठान्नृत्यं न वेत्त्यसौ ।
इतीव नाट्यं यो दर्पाद् वरारूढोऽकरोत् पथि ॥ ७ ॥

७ अश्वमुख किन्नर[1] कलकण्ठ के कारण प्रसिद्ध है, परन्तु नृत्य नही जानते, इसीलिये मानो वह अश्व मार्ग मे नर्तन किया, जिस पर राजा आरूढ था ।

प्रवालहस्तः सद्रश्मिः सुखलीनः सुलक्षणः ।
यथासावहमित्थं यो नासहिष्टास्य ताडनम् ॥ ८ ॥

८ जिस प्रकार यह राजा प्रवाल[1], हस्त[2], सद्रश्मि[3], सुखलीन[4], सुलक्षण[5] है, उसी प्रकार मैं भी हूँ, इसीलिये उस अश्व ने इसका ताडन सहन नही किया ।

पादैश्चतुर्भिः शुभ्रो यो मुखमध्येन चावहत् ।
कल्याणपञ्चकख्यातिं कल्याणाभरणोज्ज्वलः ॥ ९ ॥

९ सुवर्ण भरण से उज्वल (सुन्दर,) चारो पदो एव मुख के मध्य भाग से भी उज्वल, वह अश्व पचकल्याण[1] की प्रसिद्धि से युक्त था ।

पाद टिप्पणी

७ (१) अश्वमुख किन्नर सस्कृत साहित्य में 'किन्नरा अश्वादिमुखा नराकृतय' लिखा गया है। अर्थात उनका मुख अश्वो के समान होता है। अमर कोषकार ने भी—'स्यात किन्नर किम्पुरुषस्तुरग वदनो मयु' उन्हें तुरग बदन कहा है। तुरग का अर्थ अश्व होता है (अमर० १ २ ७४)। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी १ ५ १०१।—'गीतरतप किन्नर' गान में रति रखनेवालो को किन्नर की सज्ञा जैन ग्रन्थकारों ने दी है (प० १३ ५ ५, १४० ३९१ ८)। दश वर्गों में उनकी गणना की गयी है—(१) किंपुरुष, (२) किन्नर, (३) हृदयगम, (४) रूपमाली, (५) किन्नर किन्नर, (६) अनिन्दित, (७) मनोरम, (८) किन्नरात्तम (९) रति प्रिय एव (१०) ज्येष्ठ (ति० सा० २५७-२५८)।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता के 'तु' के स्थान पर बम्बई का 'यो' रखा गया है।

८ (१) प्रवाल पच ताराग्रह (मगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि) पचभूत के प्रतीक हैं और पाँचों की आभा रत्नों द्वारा अकित की गयी है। मगल का तेज बताने के लिये प्रवाल है।

(२) हस्त बुध की आभा नील नभ के समान है। अर्थात् हस्त में पाँच उँगलियाँ बुध के मिश्रित वर्ण के प्रतीक हैं।

(३) सद्रश्मि गुरु का वर्ण पीत है। और पीत वर्ण को सद्रश्मि एव मगल्दायक मानते है।

(४) सुखलीन : शुक्र की आभा बैंगनी (वायलेट) मानी जाती है। देखने में सुन्दर लगता है। अत सुखलीन श्लिष्ट शब्द का प्रयोग किया गया है।

(५) सुलक्षणा शनि ग्रह सबसे सुन्दर है। (रिग्स आफ सटर्न) शनि की अँगुलिका सभी ग्रहों से सुन्दर दिखाई देती है। अतएव श्लिष्ट शब्द का प्रयोग किया गया है।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

९ (१) पञ्चकल्याण घोडों की एक नस्ल होती है। उनके चारों पैरों का निचला हिस्सा खुर से ऊपर तथा एडो के नीचे तथा मुख पर सिर से

माण्डव्यगौडभूमीशः खलुच्यो यो महीपतिः ।
अतूतुपद् दरन्दामनामवस्त्रैरुपाहितैः ॥ १० ॥

१०, माण्डव्य[1], गौड[2] भूमि के राजा खलुच्यो[3] ने दरन्दाम[4] नामक वस्त्र को प्रदान कर (उसे) सन्तुष्ट किया ।

इतो ह्यस्मै नृपो भव्यं काव्य कृत्वा स्वभाषया ।
प्राहिणोद् द्रव्यसयुक्त सव्यसाच्यग्रजोपमः ॥ ११ ॥

११ युधिष्ठिरोपम[1] राजा ने भी यहा से, उसके लिये द्रव्य सहित, अपनी भाषा मे सुन्दर काव्य लिखकर, प्रेषित किया ।

सोऽप्यनर्घैः पदार्थैर्न तथा तुष्टो महीपतिः ।
सालङ्कारैर्यथा भूपकाव्यस्यातिमनोहरैः ॥ १२ ॥

१२ वह राजा भी अलकार सहित बहुमूल्य पदार्थो से उतना नही सतुष्ट हुआ, जितना कि नृपकाव्य के अति मनोहर अलकारो से ।

दोनो आँखों के बीच होता नाक तक का भाग श्वेत होता है । घोडा में पाँच स्थानों पर घोडों के रगो मुश्की आदि के बीच श्वेत रग होने के कारण उन्हें पचकल्याण कहा जाता है । मेरे पास भी पचकल्याण घोडा, मोटर आने के पूर्व था । पचकल्याण घोडा शुभ एव मागलिक तथा सुखप्रद माना जाता है । इस घोडे की कीमत अन्य घोडों की अपेक्षा अधिक होती है ।

पाद टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ५०४वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का १०वाँ श्लोक है ।

१०. (१०) माण्डव्य माण्डू (मालवा) । वह माल्वा का सुल्तान महमूद प्रथम था (तवक्काते अकबरी ४४०-६५९) ।

(२) गौड द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ २५ । गौड का तात्पर्य बगाल से है ।

(३) खलच्च : वहाँ इस समय सुल्तान 'रुक-नुद्दीन' (सन १४५९-१४७४ ई०) था । श्रीवर ने सम्भवत रुकनुद्दीन के लिये प्रयाग किया है । खलच्च का पाठभेद खलच्यो तथा खलुच्यो मिलता है । बगाल में मुसलमानों का शासन था । खलच्च नाम मुसलिम नही हो सकता (क० ४ ३२३) ।

(४) दरन्दाम वस्त्र का क्या रूप था, प्रकाश नही पडता । अनुसन्धान अपेक्षित है । इसका केवल यही उल्लेख मिलता है ।

पाद-टिप्पणी

११ (१) युधिष्ठिरोपम धर्मराज पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर तुल्य ।

पाद टिप्पणी

१२ कलकत्ता में 'महीपते' पाठ दिया गया है, जिससे अर्थ में पुनरुक्ति होती है । अत 'महीपति' पाठ रखने से अर्थ की असगति दूर हो जाती है ।

वस्त्रं नारीकुञ्जराख्यं कुम्भराणो विसर्जयन् ।
अहरद्धृदि तद्देशनारीकुञ्जरकौतुकम् ॥ १३ ॥

१३. राणा कुम्भ[1] ने नारी कुजर[2] नामक वस्त्र भेजकर, उस देश के, उत्तम स्त्रियो के, हृदय के, कौतूहल को दूर किया।

राजा डुगरसेहाख्यो गोपालपुरवल्लभः ।
गीततालकलावाद्यनाट्यलक्षणलक्षितम् ॥ १४ ॥

१४ गोपालपुर[1] के राजा डुगरसीह[2] ने गीत, ताल, कला, वाद्य, लास्य, लक्षणो से युक्त—

पाद-टिप्पणी :

१३ (१) कुम्भ राणा : मेवाड के राणा कुम्भ के पिता राणा मुकुन्द थे। पिता के पश्चात कुम्भ सन् १४१९ ई० में मेवाड के सिंहासन पर बैठे। अपने पराक्रम से मेवाड की सीमा दृषद्वती नदी तक पहुँचा दिया था। मालवा के राजा महमूद ने राणा कुम्भ पर आक्रमण किया किन्तु उसे परास्त होना पड़ा। महमूद छ मास तक मेवाड में बन्दी बना रहा। दिल्लीपति के आक्रमण के समय महमूद ने राणा कुम्भ की सहायता किया था। चित्तौर का विजयस्तम्भ उनकी अमर कीर्ति है। राणा ने ५० वर्ष शासन किया। अपने पुत्र उदा द्वारा कुम्भलगढ में मार डाले गये थे। मैंने वह स्थान देखा है। वह एक सरोवर के तटपर है।

राणा कुम्भ ने 'संगीतराज' नामक संगीत पर एक बृहद् ग्रन्थ लिखा था। इसका प्रथम भाग हिन्दू विश्वविद्यालय से सन् १९६४ ई० में प्रकाशित हुआ है। द्वितीय भाग प्रकाशित हो रहा है।

महाराणा कुम्भ ने जयदेव के गीतगोविन्द पर 'रसिकप्रिया' नाम की एक बहुत ही विशद टीका लिखी है। यह ग्रन्थ निर्णयसागर प्रेस बम्बई से प्रकाशित हुआ है। इस समय यह ग्रन्थ बाजार में नही मिलता। इसका संस्करण अपेक्षित है।

(२) नारी कुञ्जर : वस्त्र का नाम है, परन्तु किस प्रकार का यह वस्त्र होता था, कहना कठिन है। यदि 'नारी चन्दुर' कुञ्जर के स्थान पर पाठ मान कर अर्थ किया जाय तो चुन्दरी का अर्थ होगा। राजस्थान तथा मेवाड की चुन्दरी रगों के मिश्रण के कारण सुन्दर होती थी। 'चुन्दरी' पहना कर विवाह करने की प्रथा आज भी प्रचलित है।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

१४ (१) गोपालपुर : ग्वालियर। रानी सुगन्धा ने एक गोपालपुर (सन् ९०४-९०६ ई०) की स्थापना की थी। यह वर्तमान गाँव गुरीपुर है। वितस्ता के दक्षिण तट पर है (रा० : ५ : २४४)। कल्हण ने एक दूसरे गोपालपुर का भी उल्लेख किया है (रा० : ८ : १४७१)। यह गोपाल श्रीवर वर्णित गोपालपुर नही हो सकता है। डुगरसिंह राजा काश्मीर के बाहर का था। कल्हण राजा सुस्सल के मृत्यु के प्रसग में गोपालपुर का वर्णन करता है। यह स्थान काश्मीर के बाहर राजपुरी प्रदेश के समीप था। क्योकि गोपालपुर में राजा सुस्सल के मस्तक का दाह संस्कार किया गया था। कल्हण के वर्णन से प्रकट होता है कि गोपालपुर राजौरी के समीप था।

वर्तमान गोपालपुर दूसरा है। यह ग्वालियर है। ग्वालियर का प्राचीन नाम गोपाद्रि है। इसे गोपगिरि भी कहते हैं। शंकराचार्य पर्वत श्रीनगर को भी गोप पर्वत अथवा गोपाद्रि कहते है। म्युनिख पाण्डुलिपि में ग्वालियर नाम दिया गया है (पाण्डु० ७३ ए०, तवक्कात० : ३ : ४४०)।

संगीतचूडामण्याख्यं श्रीसंगीतशिरोमणिम् ।
राज्ञे गीतविनोदार्थं गीतग्रन्थं व्यसर्जयत् ॥ १५ ॥ युग्मम् ॥

१५ संगीतशिरोमणि[1], संगीतचूडामणि[2] नामक गीत ग्रन्थ, गीत विनोद हेतु राजा के लिये भेजा। (युग्मम्)

---

(२) डूंगरसिंह तबक्काते अकबरी में नाम डूँगरसेन दिया गया है। उसमें उल्लेख है—ग्वालियर के राजा डूँगरसेन को जब यह ज्ञात हुआ कि सुल्तान को संगीत से अत्यधिक रुचि है तो उसने इस विषय के दो-तीन उत्तम ग्रन्थ उसकी सेवा में भेजे (४४०-६६०)। उक्त प्रमाणों से स्पष्ट हो जाता है कि गोपालपुर वास्तव में ग्वालियर था। श्रीवर वर्णित डूंगरसिंह परसियन इतिहासकारों द्वारा वर्णित डूँगरसेन है। तबक्काते अकबरी में ही ग्वालियर के राजा कीर्तिसिंह का उल्लेख कर, उसे डूँगरसिंह का पुत्र माना गया है। अतएव गोपालपुर ही ग्वालियर का होना निर्विवाद है (३११)।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में राजा का नाम न देकर केवल—तोनवार राजा ग्वालियर लिखा गया है (३ २८८)।

पाद टिप्पणी

१५ (१) संगीतशिरोमणि कड़ा हिन्दुओं का राज्य था। सन् १४४० ई० के आसपास उस पर जौनपुर के शर्की सुल्तान ने आक्रमण किया। राजा हार गया। जौनपुर दरबार में उपस्थित किया गया। सुल्तान ने उससे उसकी इच्छा जाननी चाही। उसने कहा कि उसकी एकमात्र इच्छा यही है कि संगीतज्ञ पण्डितों की एक गोष्ठी बुलाई जाय। उसमें तत्कालीन प्रचलित भेद मिटा कर, नवीन ग्रन्थ बनाया जाय। सुल्तान ने एक शर्त रखी। यदि मुसलमान धर्म स्वीकार कर ले तो उसे छोड़ देगा। वह पण्डितों की सभा बुलाकर अपना काम आजादी के साथ कर सकता था। राजा ने संगीत ग्रन्थ की रचना के लिए इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया। सुल्तान ने उसका राज्य भी वापस कर दिया। राजा ने पण्डितों की सभा बुलाई। संगीतशिरोमणि ग्रन्थ की रचना की गयी। उसका रचनाकार कोई एक व्यक्ति नहीं परन्तु 'पण्डित मण्डली' के नाम से पुस्तक प्रकाशित की गयी। यह पुस्तक पूर्ण रूप में नहीं मिलती। इसकी कुछ पाण्डुलिपि वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय और कुछ काशी विश्वविद्यालय में हैं। यदि पूरा ग्रन्थ मिल जाय तो संगीत इतिहास पर और प्रकाश पड़ेगा।

सुल्तान गीतकारों तथा कुछ संगीतज्ञों का संरक्षक था। उन्हें मुक्तहस्त दान देता था। उसके समय काश्मीर ने संगीतविद्या में समस्त भारत में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी (बहारिस्तान शाही पाण्डु० ४९ ए०-बी०, हैदर मल्लिक पाण्डु० ११३ ए०)।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'राजा ने दो-तीन ग्रन्थ भेजा था। संगीतशिरोमणि राजा का विशेषण है। अन्य ग्रन्थों का नाम नहीं ज्ञात है। यदि संगीतशिरोमणि राजा का विशेषण न माना जाय, तो यह एक दूसरा ग्रन्थ था। तबक्काते अकबरी का उल्लेख इस प्रकार ठीक बैठ जाता है।

(२) संगीतचूडामणि चालुक्य वंश के महाराज जगदेकमल्ल (सन् ११३४-११४३ ई०) संगीत के प्रकाण्ड विद्वान थे। इनकी राजधानी कल्याण थी। संगीतचूडामणि वृहद् ग्रन्थ के रचनाकार थे। ग्रन्थ के कुछ अध्याय मिलते हैं। शेष अध्यायों का पता अथक अनुसन्धान के पश्चात् भी अभी नहीं मिला है। यह ग्रन्थ गायक्वाड ओरियण्टल सिरीज बड़ौदा से सन् १९५८ ई० में प्रकाशित हुआ है।

तस्मिन् राज्ञि दिवं याते कीर्तिसीहो महीपतिः ।
तत्पुत्रः पितृवत् प्रीतिमरक्षत् प्रहितोपदः ॥ १६ ॥

१६ उस राजा के स्वर्ग चले जाने पर, उसका पुत्र राजाकीर्ति सीह[1] ने उपहार भेजकर, पिता के सदृश प्रीति की रक्षा की।

मण्डलीकाधिपो राजा सुराष्ट्रनगराधिपः ।
प्राहिणोन्नृपतेः प्रीत्या ललामकमनीयकम् ॥ १७ ॥

१७ मण्डलीकाधिपति[1], सुराष्ट्र[2] नगराधिप राजा ने नृपति के प्रेम से, अलंकारस्वरूप श्रेष्ठ एवं कमनीय (अश्व) प्रेषित किया।

पाद-टिप्पणी :

१६ 'कीर्तिसिन्धो' के स्थान पर 'कीर्तिसिंह' होना चाहिए। क्योंकि प्रकरण एवं ऐतिहासिक तथ्य के आधार पर कीर्तिसिंह पुत्र था। कीर्ति सिन्धो रखने पर वह दिवंगत राजा का विशेषण हो जायगा, जिसका अर्थ कीर्तिसागर होगा।

(१) कीर्तिसीह : फारसी में किरत सिंह नाम दिया है (म्युनिख० : पाण्डु० : ७२ ए०)।

तवक्काते अकबरी में डूँगरसीह अर्थात सिंह के पुत्र का नाम क्रोटमन दिया गया है। अन्य फारसी इतिहासकार नाम कोवनन्द देते हैं। क्रोटमन नाम कीर्तिसन अथवा कीर्तिसिंह या कीरत सिंह ही है। उल्लेख मिलता है—'उसका पुत्र राजा गोपसिंह भी अपने पिता के उपरान्त सुल्तान के प्रति इसी प्रकार मित्रता तथा निष्ठा के भाव प्रदर्शित करता था' (तवक्काते अकबरी : पृ० ४४०-६६०)। फारसी तवारीख में नाम भिन्न प्रकार से दिया गया है। तवक्काते अकबरी की एक पाण्डुलिपि में कोवनन्द, कोतसन तथा दूसरी में कोतसन तथा लीथो में 'गोपसीह' लिखा मिलता है।

किन्तु तवक्काते अकबरी में लिखा गया है— 'सुल्तान हुसेन ग्वालियर की तरफ रवाना हुआ। हतवान्त (भदावर) के भदौरिया नामक समूह में उसके शिविर पर छापा मारा और उसे लूट लिया। जब वह ग्वालियर पर पहुँचा तो ग्वालियर के राजा कीरतसिंह (कीर्तिसिंह) ने अधीनता स्वीकार कर ली और सेवकों की भाँति व्यवहार किया।' इससे स्पष्ट हो जाता है कीरतसिंह अथवा कीर्तिसिंह ग्वालियर का राजा था। गोपालपुर ही ग्वालियर है।

पाद टिप्पणी :

पाठ—बम्बई।

१७ (१) मण्डलीकाधिपति : सूबेदार। 'दिल्ली सल्तनत' (विद्या भवन बम्बई : ३८३) में माण्डलिक शब्द का अर्थ गुजरात का राजा लगाया गया है।

(२) सुराष्ट्र : सौराष्ट्र = गुजरात। गुजरात में कच्छ के घोड़े प्रसिद्ध होते हैं। उन्हें कच्छी कहते हैं। काठियावाड़ या सौराष्ट्र के मण्डलाधिप ने सुन्दर अश्व जैनुल आबदीन को भेजा था। तवक्काते अकबरी में गुजरात के सुल्तान का नाम महमूद गुराती दिया गया है (४४०-६५९)। वास्तव में यह व्यक्ति मुहम्मदशाह बेकरा (सन् १४५९-१५११ ई०) का पुत्र करीमशाह था। (आइने अकबरी : २ : ३८९, तवक्काते० : ३ : ४४०)।

चित्रवर्णाल्लसत्पक्षलक्ष्यशोभान् महीपतेः।
पक्षिणो मुचुकुन्दाख्यान् प्राहिणोदक्षिसुन्दरान् ॥ १८ ॥

१८ चित्र वर्णवाले सुन्दर पक्षों से शोभित, सुन्दर आँखवाले मुचुकुन्द[1] नाम के पक्षियों को राजा के लिये भेजा।

जिघांसया चरन् सोऽपि भूपतेः प्राकृतैर्गुणैः।
यद्धो हिंस्रोऽपि डिल्लेशो वल्लूको रल्लकोपमः ॥ १९ ॥

१९ हिंसा की इच्छा से विचरणशील दिल्लीपति बल्लूक, हिंसक होते भी, हरिण सदृश राजा के सहज गुणों से बँध गया।

कश्चिच्छ्रीराजहंसस्य राजहंसयुगं ददौ।
अन्ये हंसा यदुत्पन्ना राजहंसमरञ्जयन् ॥ २० ॥

२० किसी ने राजा को युगल राजहंस[1] प्रदान किया, उससे उत्पन्न होकर, अन्य हंसों ने राजा को प्रसन्न किया।

पाद टिप्पणी

प्रथम पाद के द्वितीय चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

१८ (१) मुचुकुन्द : एक पक्षी जिसकी आँखें अत्यन्त सुन्दर होती हैं। मुचुकुन्द वृक्ष का भी नाम है।

पाद टिप्पणी

१९ (१) वल्लूक : बहलोल लोदी (सन् १४५०-१४८८ ई०)। पीर हसन नाम बहलोल लोदी देता है (पृ० १८१)। आइन अकबरी के अनुसार वल्लूक ही बहलोल लोदी है। उसमें उल्लेख मिलता है कि बहलोल लोदी के साथ सुल्तान की मित्रता थी (पृ० ४३९)। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान बहलोल लोदी ने अपने देश की उत्तम वस्तुएँ उपहार में भेजी (४४०-६५९)। द्र० ३ : १११ आइन अकबरी २ : ३८९।

पाद टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५१४ वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का २०वाँ श्लोक है।

प्रथम पाद के प्रथम चरण का पाद सन्दिग्ध है।

२० (१) राजहंस : पीर हसन लिखता है : लासा के वली ने दो सुदराग अजीब-व-गरीब परिन्दे जिनका नाम राजहंस था, तालाब मानसर के कोहिस्तान से पकड़ कर बतौर तुहफा सुल्तान की खिदमत में भेजे थे—कहते हैं, सुल्तान के सामने यह दोनों जानवर मिले हुए दूध और पानी को अलग-अलग करके छोड़ देते थे। चोंच से दूध के अजजा पानी से अलग करते थे और इस तरह खालिस पानी हो जाता था (पृष्ठ १८१-१८२)।

तवक्कात अकबरी में उल्लेख मिलता है—तिब्बत के राजा ने दो सुन्दर पक्षी जो हिन्दुस्तानी भाषा में हंस कहे जाते थे, मानसरोवर नामक स्थान से जहाँ के जल में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता सुल्तान की सेवा में भेजा। सुल्तान उन पक्षियों को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ। उन पक्षियों की एक विशेषता थी। यदि जल मिश्रित दूध उनके सामने रखा जाता था, तो वे दूध को अपनी चोंच से जल से पृथक कर पी जाते थे और जल छोड़ देते थे (६६०)। श्रीवर हंस दाता का नाम नहीं देता। तवक्काते अकबरी ने इस पर प्रकाश डाला

सरः भ्रमन्तर्भ्रमन्तस्ते निर्दाराः पङ्क्तिपात्रनाः ।
तरङ्गतरलोत्फुल्लश्वेतोत्पलतुला दधुः ॥ २१ ॥

२१ सरोवर के भ्रमण करते, निर्भय एवं पंक्ति भक्त (वे) हंस तरंगो से तरल, प्रफुल्ल, श्वेत कमल तुल्य शोभित हो रहे थे।

खुरासानमहीपस्य यस्यैवाज्ञा हयप्रभोः ।
मूर्ध्ना मन्दारमालेव ध्रियते दिगधीश्वरैः ॥ २२ ॥

२२ हयस्वामी, जिस खुरासान महीपति की आज्ञा मन्दारमाला की तरह दिशाओं के अधीश्वर शिरसा धारण करते हैं—

यस्यायुधोर्जितकराः किङ्कराः सुभयङ्कराः ।
यमस्य चार्पितकरा व्यचरन् धरणीतले ॥ २३ ॥

२३ हाथ में प्रचण्ड हथियार लिये, जिसके सुभयकर भृत्य, जो कि यम को भी कर लगाने वाले थे, पृथ्वी तलपर विचरण कर रहे थे।

उत्तराशाधिपो मेर्जाऽमोसैदः स महीभुजे ।
उच्चाश्वखेसरीयुक्त व्यसृजत् सोपधिं चरम् ॥ २४ ॥

२४ उत्तर दिशा के स्वामी (खुरासानाधिपति) मिर्जा अमोसैद[1], राजा के पास बहुत से घोड़े एवं खच्चरों[2] के उपहार सहित दूत भेजा।

है। श्रीवर और तवक्कात अकबरी के काल में लगभग १ शताब्दी का अन्तर है। मानसरोवर का नाम फारसी इतिहासकारो ने मौद लिखा है।

पाद टिप्पणी

२१ दत्त ने इस श्लोक के अंग्रेजी अनुवाद में 'निर्भय' अर्थ लिखा है, जो निर्दारा के स्थान पर 'निदरा' मानकर अनुवाद किया गया है। क्योंकि 'निदर' शब्द का निर्भय अर्थ होता है। निर्दारा' का अर्थ पत्नी रहित होगा। श्री दत्त ने भी निर्दारा के स्थान निदरा' अर्थात निर्भय मान कर अनुवाद किया है।

पाद टिप्पणी

२२ (१) खुरासान महीपति मिर्जा अबूसैद (१ ६ २४)। यादगर मुहम्मद (१४६९-१४७०) अपने पिता अबूसैद के पश्चात खुरासान का शासक हुआ था तथा सुल्तान अहमद समरकन्द का (१४६९-१४९४ ई०) सुल्तान हुआ था। खुरासान द्रष्टव्य टिप्पणी (१ ४ ३२)।

तवक्कात अकबरी में उल्लेख है—खुरासान के बादशाह अबू सईद ने खुरासान से अरबी घोड़े भेजे थे (४४०-६५९)। इसलिये श्रीवर ने यहाँ खुरासान के सुल्तान को नाम हयपति विशेषण के साथ प्रयोग किया है।

पाद टिप्पणी

२४ (१) मिर्जा अमोसैद मिर्जा अबू सैय्यद बादशाह बाबर का पितामह था।

पीर हसन लिखता है—खुरासान के बादशाह म्याकान सईद ने जिसने खुरासान से बादशाह के लिए तेज रफ्तार अरबी घोड़े, खच्चर आला, बल्खी ऊँट-रवाना किये (पृ० १८१)।

कतेफमोफमग्लातख्यातवस्त्राद्युपायनैः ।
महम्मदसुरत्राणो गूर्जरीशोऽप्यतूतुषत् ॥ २५ ॥

२५ कतेफ सोफ सग्लात[1] नामक वस्त्रादि उपायन प्रदान कर, गुर्जर[2] के स्वामी मुहम्मद[3] सुरत्राण[4] ने भी उसे सन्तुष्ट किया।

गिलानमेसमक्कादिदेशाधीशा हितेच्छया ।
दुर्लभोपायनैस्तैस्तैर्न के भूपमरञ्जयन् ॥ २६ ॥

२६ गिलान[1], मिस्र[2], मक्का[3], आदि[4] देशो के किन राजाओ ने हित की इच्छा से, तत्-तत् दुर्लभ उपायनो द्वारा राजा को प्रसन्न नही किया ?

मिर्जा अबूसैद तैमूर वंशीय (सन् १४५२–१४६७ ई०) बाबर का प्रपितामह था। कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार वह सन् १४५८–१४६८ ई० तक खुरासान का सुल्तान था। सुल्तान जैनुल आबदीन ने सौगात के बदले में कीमती तोहफा काश्मीर से भेजा (पृ० १८१), और उल्लेख मिलता है कि सुल्तान जैनुल आबदीन ने केसर, कागज, मुश्क, शाल, शीशे के प्याले आदि भेजे। (तारीख रशीदी : ७९, म्युनिख० : पाण्डु० : ७३ ए० तथा तवक्काते अक० : ४४० = ६५९, आइने अकबरी : २ : ३८९)।

(२) खच्चड : आइने अकबरी में भी उल्लेख किया गया है—'सुल्तान अबू सईद मिरजा ने अरबी घोड़े और बोख्ती ऊँट भेजा था (पृ० ४३९)।' श्रीवर ने 'वेसर' शब्द का प्रयोग किया है। यह संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ खच्चड किया गया है। परन्तु आइने अकबरी में ऊँट का उल्लेख किया गया है।'

तबक्काते अकबरी में भी उल्लेख मिलता है—'खुरासान के बादशाह सुल्तान अबू सईद ने खुरासान से अरबी घोड़े तथा बख्ती ऊँट उसके पास उपहार-स्वरूप अपने देश की उत्तम वस्तुएँ भेजकर निष्ठा-भाव प्रकट किया (४४०-६५९)।'

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

२५ (१) कतफ सोफ सग्लात : शुक ने भी इस वाक्य का प्रयोग किया है (१ : २ : ८४)। शुद्ध वाक्य है—'सूफी सकर्लातो सायर नफास'।

(२) गुर्जर : गुजरात। आइने अकबरी भी इसका समर्थन करती है। गुर्जर का अर्थ यहाँ गुजरात है (द्र० क० ५ : २४४)।

(३) मुहम्मद : मुहम्मद शाह चतुर्थ। पीर हसन सुल्तान महमूद गुजराती नाम देता है (पृ० १८१)। आइने अकबरी में उल्लेख मिलता है—'गुजरात के सुल्तान महमूद से सुल्तान जैनुल आबदीन की मित्रता थी (पृ० ४३९)।' तबक्काते अकबरी में सुल्तान महमूद गुजराती नाम दिया गया है। इस समय मालवा का सुल्तान मुहम्मद प्रथम था।

(४) सुरत्राण : सुल्तान जैनुल आबदीन।

पाद-टिप्पणी

२६ (१) गिलान : अफगानिस्तान। कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार अजरबैजा तथा गिलान दोनों का शासक जहानशाह प्रतीत होता है (३ : २८९)। गिलान एक नगर भी था।

(२) मिस्र : श्रीवर ने शुद्ध नाम मिस्र दिया है, जो आज भी इजिप्ट का नाम है। बुर्जी ममलूक कैम्ब्रिज हिस्ट्री के अनुसार उस समय मिस्र का सुल्तान था (३ : २८२)। इसका केवल यही उल्लेख मिलता है।

(३) मक्का : पीर हसन लिखता है—सुल्तान ने अपने नाम की सराये कायम करके शरीफ मक्का से मुहब्बत पैदा कर ली (पृ० १८१)। कैम्ब्रिज

अनल्पाः शिल्पिनः कल्पवृक्षकल्पममुं न के ।
भृङ्गा इवाययुर्दूराच्छिल्पकल्पितकल्पनाः ॥ २७ ॥

२७ कल्पवृक्ष उस राजा के समीप भृगो के समान दूर-दूर से सुन्दर शिल्प रचना करनेवाले कौन शिल्पी नही आये ?

काश्मीरिका अथाभ्यस्य तुरीवेमादिचातुरीम् ।
कौशेयकं वयन्त्यद्य बहुमूल्य मनोहरम् ॥ २८ ॥

२८ आज काश्मीरी लोग तुरी[1]-वेमा[2] का अभ्यास कर, बहुमूल्य एव मनोहर कौशेय वस्त्र बिनते हैं।

और्णाः सोफादयो वस्त्रविशेषा दूरदेशजाः ।
काश्मीरिकाश्च भान्त्यद्य समर्थास्ते नृपोचिताः ॥ २९ ॥

२९ दूरदेशोत्पन्न तथा काश्मीर के मजबूत नृपोचित ऊनी सोफा आदि वस्त्र विशेष आज (यहाँ) शोभित हो रहे हैं।

विचित्रवयनोत्पन्ननानाचित्रलताकृतीः ।
दृष्ट्वा चित्रकरा येषु जाताश्चित्रार्पिता इव ॥ ३० ॥

३० विचित्र प्रकार की बुनाई से बननेवाली नाना प्रकार की चित्र, लता एव आकृतियो को देखकर, चित्रकारी चित्रार्पित सदृश लग रही थी।

हिस्ट्री में मक्का के शासक का नाम नही, केवल मक्का का शरीफ लिखा गया है (३ ३८२, तवक्काते० ३ ४४०)।

(३) आदि पीर हसन एक नाम शाम का और देता है (पृ० १८१)।

नवादरुल अखबार में उल्लेख मिलता है कि शाहरुख (सन् १४०४-१४४७ ई०) जो तैमूरलग का पुत्र था। उसने जैनुल आबदीन का हाथी तथा रत्न भेंट किया था। किन्तु उत्तर में लिख भेजा कि उसे प्रसन्नता होती यदि शाहरुख विद्वानों तथा पुस्तकों का रत्नो के स्थान भेजना (पाण्डु० ४६ बी०, ४७ ए० तथा गोहर आलम पाण्डु० १२६ बी०)।

द्रष्टव्य म्युनिख पाण्डु० ७३ ए० तथा तवक्काते अकबरी (४४०-६६१) तवक्काते अकबरी में 'आदि' के लिये 'असपान' तथा 'अशपाए' पाण्डुलिपि में लिखा है। तबक्काते अकबरी में और लिथो व मसरुख 'एके बाब' कसीदा तथा पाण्डुलिपि में व 'मसरुख कसीदा' लिखा मिलता है।

पाद टिप्पणी

२७ पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२८ (१) तुरी बाने के धागा को साफ करने का एक उपकरण।

(२) वेमा : करघा।—तुरीवेमादिकम्—सर्क० नै० १:१२।

पाद-टिप्पणी

२९ (१) सोफा यह अरबी शब्द सूफ है जिसका अर्थ एक प्रकार का वस्त्र होता है। बकरी या भेंड के ऊन से बनाया जाता है।

पाद-टिप्पणी

३० उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण का ५२४ वी पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का ३०वाँ श्लोक है।

अनन्ततन्तुसंतानवर्णविच्छित्तिसुन्दरः ।
बभौ कौशेयकख्यातो देशो वेशश्च भूपतेः ॥ ३१ ॥

३१ राजा का अनन्त, ततु, सन्तान के वर्ण विभाजन से सुन्दर तथा कौशेय[1] देश वेश शोभित हुआ।

नानावर्णविशेषचित्रकटकालङ्कारसारोचितो
विद्यामानवराजितोऽतिसुखदः कौशेयताख्यातिमान् ।
श्रीमान् नित्यमहोज्ज्वलोऽतुलगुणः सत्तन्त्रसम्पत्तिभृद्
राज्ञा तेन विशेषितो निजधिया वेशोऽपि देशोऽपि वा॥ ३२ ॥

३२ नाना प्रकार के वर्ण (रंग-जाति) विशेष स विचित्र कटक (सेना-कंकण) अलकार से युक्त विद्यावाले मनुष्यो से अति सुखद, (विद्या-लक्ष्मी) नवीन-नवीन चित्र पक्ति से शोभित, कोश युक्त, (रेशमी वस्त्रों के लिये प्रसिद्ध) श्रीमान सदैव उत्सव से या शोभा से सम्पन्न, अतुलनीय गुणों से पूर्ण (असख्य गुण सूत्रो से युक्त), उत्तम वशपरम्परा (किंवा उत्तम सूत्र) वाले, उस देश को अथवा वेश को उस राजा ने अपनी वुद्धि से विशिष्ट बना दिया।

इति जैनराजतरङ्गिण्या चित्रोपचयशिल्पवर्णनं नाम षष्ठ सर्ग ॥ ६ ॥

इस प्रकार जैनराजतरंगिणी मे चित्रोपचय शिल्प वर्णन नामक षष्ठ सर्ग समाप्त हुआ।

पाद टिप्पणी

३१ (१) कौशेय रेशमी वस्त्र = कौशेय कालिदास काल से ही प्रसिद्ध है। निर्नाभि कौशेयमुपात्त वाणामभ्यञ्जन पथ्य मलञ्चकार।' कुमारसम्भव ■ ७, 'सराग कौशेयक भूपि तोक्ष' (ऋतुसहार ७ ८), द्रष्टव्य तारीख रशीदी पृ० ४३४, आइने अकबरी जरेट० २ ३५५, तुजुक० २ १४७, बहारिस्तान शाही . पाण्डु० फो० ४७ ए०।

पाद-टिप्पणी ·

३२ कलकत्ता सस्करण का उक्त श्लोक पक्ति सख्या ५२६ है।

पाद-टिप्पणी :

इस तरग में कलकत्ता सस्करण के ४९५ से ५२६ पक्ति के ३२ श्लोक तथा बम्बई सस्करण में ३२ श्लोक यथावत है। उनके सख्या में अन्तर नही है।

सप्तमः सर्गः

दाता भवेत् क्षितिपतिर्यदि सादरोऽयं
लोकोऽपि दर्शयति तत् स्वकलाकलापम् ।
वर्षासु वर्षति घनो यदि चातकोऽपि
नृत्यन् मुदा भवति तज्जनरञ्जनाय ॥ १ ॥

१. यदि क्षितिपति सादर दाता होता है, तो यह लोक भी अपना कला-कलाप दिखाता है। यदि वर्षा में मेघ बरसता है, तो चातक[1] भी प्रसन्नता से नाचते हुए, लोगों का मनोरंजन करता है।

अथोत्तरपथात् दानख्यातकीर्तेर्महीभुजः ।
रज्जुभ्रमणशिल्पज्ञः कोऽप्यागात् यवनोऽन्तिकम् ॥ २ ॥

२ दान-प्रसिद्ध कीर्तिशाली महीपति के समीप उत्तरपथ से रस्सी पर चलने की कला जाननेवाला कोई यवन[1] आया।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५२७वी पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का १ला श्लोक है।

१ (१) चातक तोक्क, मेघजीवन, सारंग, स्तोकक, पपीहा पर्यायवाची नाम हैं। वर्षाकाल में घनपूर्ण नभ को देखकर, बहुत बोलता है। इसके विषय में प्रसिद्धि है कि वह नदी, सरोवर आदि का संचित जल नहीं पीता। केवल मेघ का बरसता पानी पीता है। एक मत है कि वह केवल स्वाती नक्षत्र का वर्षा जलबिन्दु ही ग्रहण करता है। अतएव वह मेघ की ओर देखता, उससे जल की याचना करता है। वर्षा की बूँदें देखकर प्रसन्न हो जाता है। कथा है कि बादल उठने पर यह चंचु पसारे, मेघ की ओर इस आशा से देखता रहता है कि कुछ बूँदें उसके मुख में पड़ जाँय।

देश-भेद से यह कई प्रकार का पाया जाता है। उत्तर-भारत में श्यामा पक्षी के बराबर मटमैला या हलका काला होता है। दक्षिण भारत का चातक उत्तर-भारत से आकार में बड़ा और रंग में चित्र-विचित्र होता है। मादा चातक का रंग-रूप सर्वथा एक समान होता है।

चातक वृक्ष पर मनुष्य की दृष्टि से छिपा बैठा रहता है। वृक्ष से कम उतरता है। चातक की वाणी रसमयी तथा उसमें कई स्वरों का समावेश होता है। पिक की बोली से भी अधिक मधुर होती है। चैत्र मास से भाद्रपद तक चातक की बोली सुनायी पड़ती है। कामोद्दीपक होती है। प्यासा रहकर मर जाना पसन्द करता है परन्तु जीवन रक्षा के लिए संचित पानी का पान नहीं करता—सूक्ष्मा एव पतन्ति चातक मुखे द्वित्रा पयो बिन्दवः—(भर्तृ० २ १२१)। इसके इस अटल नियम, मधुर बोली पर कवियों ने बहुत कुछ लिखा है।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५२८वी पंक्ति है।

२ (१) यवन : नट। उत्तर भारत में रस्सी

विंशप्रस्थाभिधे स्थाने कदाचिद् यवनोत्सवे ।
तं द्रष्टुमगमद् राजा परिवारविभूषितः ॥ ३ ॥

३ किसी समय विंशप्रस्थ[1] नामक स्थान में यवनोत्सव के अवसर पर, उसे देखने के लिये परिवार विभूषित राजा आया ।

धनुर्दण्डशतायामान्तरस्थान् दीर्घरज्जुभिः ।
उच्चान् स्तम्भानबध्नात् स स्वशिल्पप्रथनोद्यतः ॥ ४ ॥

४ अपना शिल्प दिखाने के लिये उद्यत, वह सौ धनुर्दंड की दूरी पर स्थित, ऊँचे खम्भों को बड़ी रस्सियों से बाँध दिया ।

अभवन्कलुषास्ते ये नागा रज्जुपुरादिषु ।
भाविस्वभक्तभूपालदेहानिष्टेक्षणादिव ॥ ५ ॥

५ रज्जुपुर आदि मे जो नाग थे, भावी अपने भक्त भूपालो के देह का अनिष्ट देखने से ही, मानो कलुषित हो गये ।

पर खड़े चलकर, कूद और बैठकर तमाशा करते है। नट सभी मुसल्मान हो गये है। मुस्लिम धर्म ग्रहण करने के पूर्व उनकी गणना व्रात्य क्षत्रियों में की जाती थी। उत्तर प्रदेश में बाँस पर आधारित रस्सियों पर चढ़कर चलते है। खेल करते है। अनेक प्रकार की कसरत करते है। बंगाल में इस जाति के लोग गाने-बजाने का पेशा करते है। रस्सी पर खेल करनेवाला नट हाथ में डण्डा लिए चलता है। रस्सी दो बाँसों की कैंची बनाकर दोनों तरफ लगा दी जाती है। उस पर मोटी रस्सी तान दी जाती है। रस्सी का दोनों सिरा खूँटों से बाँध दिया जाता है। भूमि पर बैठकर, नन्नी या नट ढोल बजाकर गाता है। खेल के सम्बन्ध में बातें बताता है, पैसा माँगता है। बिहार, उत्तर प्रदेश आदि स्थानो पर मेले में इस प्रकार के प्रदर्शन साधारण बात है। श्रीवर के वर्णन तथा आजकल के खेल में कुछ अन्तर नहीं मालूम पड़ता।

तवक्काते अकवरी की पाण्डुलिपि में रस्सी पर चलने वाले को 'रसमान बाजान' तथा फिरिश्ता के लियो संस्करण में 'तनाव बाजान' दिया गया है।

एक पाण्डुलिपि में 'नतवहहा' दूसरी में 'नतवहा' दिया गया है। यह संस्कृत शब्द 'नट' का ही फारसी रूप है।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५२९वीं पंक्ति है।

द्वितीय चरण का पाठ सन्दिग्ध है।

३ (१) विंशप्रस्थ बहारिस्तान शाही के लेखक ने विंशप्रस्थ को श्रीनगर का मैदान ईदगाह माना है। द्रष्टव्य १ ७ ३, श्री० ४ १७, १९१, ६३८।

(२) यवनोत्सव सम्भवत ईद का पर्व था।

पाद-टिप्पणी

४ कलकत्ता संस्करण के श्लोक की ५३०वीं पंक्ति है।

पाद-टिप्पणी

कलकत्ता के श्लोक की ५३१वीं पंक्ति है।

५. (१) रज्जुपुर : रजौल गाँव।

अथो भूभागलग्नैकरज्जुमार्गेण निर्भयः ।
आरोहमकरोत्तत्र पतत्रीव नभोन्तरे ॥ ६ ॥

६ आकाश मे पक्षी के समान निर्भय होकर, वह भूभाग पर लगे, एक रस्सी के मार्ग से उस पर, आरोहण किया ।

निपातास्खलितां तत्र लोकचित्तानुरञ्जकाम् ।
कवितामिव शिल्पेज्यश्चित्रां पदगतिं व्यधात् ॥ ७ ॥

७ वह उस शिल्प युक्त डोरी पर कविता के समान निपात एव स्खलन रहित लोक चित्तानुरजक, विचित्र पदन्यास किया ।

अनीचवर्तिनस्तस्य ग्रहस्येव फलप्रदा ।
सुरशिमराशिगस्याल बभूवाश्चर्यभूर्नृणाम् ॥ ८ ॥

८ ग्रह[1] के समान अनीचवर्ती[2] तथा सुन्दर रस से राशि[3] गत, उसके लिये लोगों का आश्चर्यपूर्ण होना अधिक फलप्रद हुआ ।

पाद-टिप्पणी

६ कलकत्ता के श्लोक की ५३२वी पक्ति है ।

पाद-टिप्पणी

७ उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ५३३वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का ७वाँ श्लोक है ।

पाद टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ५३४वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का ८वाँ श्लोक है ।

पाठ–बम्बई ।

८ (१) ग्रह वाराह मिहिर ने केवल ७ ग्रह सूर्य, चन्द्र, मगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि माना है । इनके अतिरिक्त राहु और केतु जो एक ही शरीर के शिर तथा धड़ है, दो और ग्रह मानकर, उनकी सख्या नव बना दी गयी है । नवग्रह की पूजा मागलिक कार्यो के समय होती है । फलित ज्योतिष के अनुसार ग्रहों की सख्या नव ही मानी जाती है ।

ग्रह, गुरु एव शुक्र ब्राह्मण है, मगल क्षत्रिय है, बुध-चन्द्रमा वैश्य तथा राहु और केतु शूद्र ग्रह माने गये है । मगल एव सूर्य का रग लाल, चन्द्रमा एव शुक्र का श्वेत, गुरु-बुध का पीत, शनि, राहु एव केतु का काला बताया गया है । शुभ ग्रह की दृष्टि शुभ तथा अशुभ की अशुभ होती है । पूर्ण, त्रिपाद, अर्द्ध एक एक पाद की दृष्टियाँ होती है । पूर्ण दृष्टि का फल पूर्ण, त्रिपाद का तीन चतुर्थांश, अर्द्ध का आधा तथा एक पाद का चतुर्थांश होता है । ग्रह आकाश-मण्डल के वे तारे है, जो अपने सौर जगत के सूर्य की परिक्रमा करते हैं । पाप ग्रह या अशुभ ग्रह फलित ज्योतिष के अनुसार—मगल, शनि, राहु, केतु या सूर्य इनमें से जिनके साथ बुध रहता है ।

प्रत्येक ग्रहो के तीन स्थान—दक्षिण, उत्तर तथा मध्यम होता है (वायु० ३ १२, ७ १५, ३० १४६ ३१ ३५, ५१ ८, ५३ २९–१०९) । जैन ग्रन्थों में ८८ ग्रहो का नाम-निर्देश है ।

(२) अनीचवर्ती ग्रहो की नीच और उच्च राशियाँ ज्योतिष में वर्णित है । सूर्य का उच्च मेष, चन्द्रमा का वृष, मगल का मकर, बुध की कन्या, गुरु का कर्क, शुक्र का मीन और शनि की तुला उच्च राशि है । उच्च राशियों से सप्तम नीच राशियाँ होती है, जैसे रवि की तुला नीच राशि है । चन्द्रमा

कृत्वा सुखं सुरुचिरं सुचिरं विधाता
दुःखं पुनर्जनपदे जनयत्यसह्यम् ।
वर्षं प्रदर्श्य जलदः कृषिकर्षहेतुं
नेतुं फलं वितनुते करकाविकारम् ॥ ९ ॥

९. विधाता चिरकाल तक सुख प्रदान कर, जनपद पर, असह्य दुःख डाल देता है। जलद कृषि के कर्ष (जोतायी) हेतु वृष्टि करके, पुनः फल हर लेने के लिये, करकापात कर देता है।

सौराज्यसुखिते देशे नरेशे निरुपद्रवे ।
अकस्माद् दुःसहान् जातानुत्पातान् ददृशुर्जनाः ॥ १० ॥

१० सौराज्य से सुखी इस देश में, जिसमें राजा उपद्रव रहित था, अकस्मात् दुःसह उत्पात[1] को उत्पन्न हुआ लोगों ने देखा।

ईत्यातङ्कागमे सेतुर्हेतुः सर्वजनक्षये ।
अथोत्तरदिशा रात्रौ धूमकेतुरदृश्यत ॥ ११ ॥

११ रात को उत्तर दिशा में, 'ईति' (अतिवृष्टि-अनावृष्टि आदि) के आगमन के लिये सेतु तथा सर्वजन क्षय हेतु धूमकेतु[1] दिखायी दिया।

की वृश्चिक, मंगल का कर्क, बुध का मीन, गुरु का मकर, शुक्र की कन्या और शनि का मेष नीच राशि है। नीच राशि में ग्रह अशुभ फलदायक और उच्च में शुभ फलदायक होते हैं। अतएव यहाँ पर अनीचवर्तिन कहा गया है।

(३) राशि : राशियाँ बारह हैं। चन्द्र एवं सूर्य राशिचक्र में चलते हैं। प्रत्येक राशि का नाम, उस राशि के तारा प्रतिरूप के अनुसार दिया जाता है। सूर्य एक वर्ष अर्थात् बारह मास में राशिचक्र का पथ पूरा करता है। बैबिलोन में १६ राशियाँ मानी गयी थी। चन्द्रमा की दैनिक गति के अनुसार चीनवालों ने राशिचक्र को २८ राशियों में विभक्त किया था। भारत में चन्द्रपथ २७ नक्षत्रों में विभक्त है। भारतीय मान्यता के अनुसार १२ राशियाँ—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुंभ और मीन हैं।

पाद-टिप्पणी

९. उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५३५वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का ९वाँ श्लोक है।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५३६वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का १०वाँ श्लोक है।

१०. (१) उत्पात : अनहोनी, अशुभ, संकट अनिष्ट-सूचक, आकस्मिक घटना, ग्रहण, भूचाल, हलचल, सार्वजनिक संकट आदि की गणना उत्पातों में होती है। जैन ग्रन्थों में उत्पात २६वाँ ग्रह है।

पाद-टिप्पणी :

उक्त श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५३७वीं पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का ११वाँ श्लोक है।

११ (१) धूमकेतु : द्रष्टव्य टिप्पणी १ : १ : १७४। असंख्य केतुओं का वर्णन है। किन्तु समय-समय पर पुच्छल तारा के रूप में रात्रि में उदय होनेवाले केतु को धूमकेतु कहते हैं। यह धूमकेतु एक ही प्रकार का नहीं होता। कभी बृहद् और कभी लघु रूप में उदय होता

दीर्घपुच्छोच्छलत्कान्तितत्केतुकपटाद् ध्रुवम् ।
कालेन द्रुघण क्षिप्तं क्षयायेव महीक्षिताम् ॥ १२ ॥

१२ दीर्घ पुच्छ से निकलते, कान्ति रूप उसके केतु पट के व्याज से, निश्चय ही काल[1] ने राजाओ के विनाश के लिये, मानो द्रुघण[2] (कुल्हाडी) फेक दिया था ।

मासद्वयं स्फुरन्नासीत् स व्योम्नि विमले सदा ।
सदये हृदये राज्ञश्चिन्तौघोऽनिष्टशङ्कया ॥ १३ ॥

१३ दो मास तक वह निरन्तर विमल आकाश मे तथा अनिष्ट की शका से चिन्ता का समूह राजा के सदय हृदय मे, स्फुरित होता रहा ।

अदृश्यन्त सदा श्वानो विक्रोशन्तः पुरान्तरे ।
शुचेव रुदिताक्रन्दा भाविविघ्नेक्षणादिव ॥ १४ ॥

१४ नगर मे श्वान भावी विघ्न को देखने के कारण, शोक से सदैव रोदन, क्रन्दन युक्त तथा चीत्कार करते हुए, दिखायी देते थे ।

एकपक्षेऽभवच्चन्द्रसूर्यग्रहणसंस्थितिः ।
एकपक्षमिवादातुं राज्यं राजविपर्ययात् ॥ १५ ॥

१५ राज्य विपर्यय के कारण, एकपक्षीय राज्य ग्रहण[1] करने के लिये ही, मानो एक ही पक्ष मे चन्द्र एव सूर्यग्रहणो की स्थिति हुई ।

है । बहुधा रात्रि के पूर्व या परयाम में उदय हुआ करता है । उसके उदय होने से जनक्षय, राजक्षय (राज्य परिवर्तन) होते है । साथ ही अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सप्त इष्टियों का भी भय होता है । धूमकेतु की प्रचुर उपमा सस्कृत साहित्य में मिलती है—धूमकेतुमिव किमपि करालम् (गीत० १) कोपस्य नदकुल कानन धूमकेतो (मुद्रा० १ १०) ।

फारसी इतिहासकारा ने खुरासान के राजा बाबर के समय सन् १४५६ ई० में धूमकेतु उदय का वर्णन किया है कि उसके पश्चात् ही सन् १४५७ में मुल्तान दिवगत हो गया । मुसलमानों में धूमकेतु का प्रकट होना अशुभ माना गया है ।

अकबर के समय नवम्बर मास सन् १५७५ ई० में उत्तर-पूर्व दिशा में सायकाल दो घटी तक धूमकेतु दिखाई पड़ता रहा । इसके पश्चात् ही राज्य में दुर्व्यवस्था फैल गयी थी और कालान्तर में सुल्तान का ही देहावसान हो गया ।

पाद-टिप्पणी

१२ (१) काल यमराज ।

(२) दुर्घण गदा, कुठार, कुल्हाणी तथा ब्रह्मा का एक विशेषण भी है ।

पाद-टिप्पणी

१५. (१) ग्रहण सूर्यग्रहण अमावस्या तथा चन्द्रग्रहण सर्वदा पूर्णिमा को लगता है । वर्ष मे कम से कम दो तथा अधिक से अधिक ७ बार ग्रहण लगते हैं । सूर्यग्रहणो की सख्या चन्द्रग्रहण से अधिक होती हैं । तीन चन्द्रग्रहण पर चार सूर्यग्रहण लगते है । जिस वर्ष दो ही ग्रहण हागे, उस वर्ष सूर्यग्रहण ही होगा । चन्द्रमा जिस समय सूर्य एव पृथ्वी के मध्य

सूर्यसंक्रान्तयः क्रूरदिनेष्वाप्तास्तदा विशाम् ।
भाविक्रूरफलोत्पादमादचिन्तनभीतिदाः ॥ १६ ॥

१६ उस समय सूर्य की सक्रान्ति क्रूर दिनो मे हुयी थी, जिसने प्रजाओं के भविष्य में क्रूर फल की उत्पत्ति तथा विनाश के चिन्ता का भय उत्पन्न कर दिया ।

मन्निर्माता क्षयं यास्यत्यय किमिति दुःखिता ।
राजधान्यरुदच्छलतलोलूकध्वनिच्छलात् ॥ १७ ॥

१७ मेरा यह निर्माता नष्ट हो जायगा, इसी से छत के नीचे उलूक[1] की ध्वनि के व्याज से, राजधानी रो रही थी ।

दृष्टोऽम्बरे द्वितीयस्यां सुधांशुस्तत्र तैर्जनैः ।
उत्तान इव भूपेऽपरमन्यं सूचयितु विशाम् ॥ १८ ॥

१८ वहाँ पर लोगो ने द्वितीया को आकाश में, प्रजाओं को अन्य राजा की सूचना देने के लिये ही, मानो उत्तान हुये, चन्द्रमा को देखा ।

अत्रान्तरे महाघोरमनावृष्टिकृतं भयम् ।
उदभूदन्यदेशेषु दुर्भिक्षोपद्रवावहम् ॥ १९ ॥

१९ अन्य देशों मे इसी बीच दुर्भिक्ष[1] एवं उपद्रवकारी, महाघोर, अनावृष्ट कृत, भय उत्पन्न हुआ ।

आता है तो सूर्यग्रहण लगता है । इसी प्रकार सूर्य एवं चन्द्रमा के मध्य पृथ्वी आती है तो चन्द्रग्रहण लगता है । भारतीय ज्योतिष के अनुसार वय-काल के अनुसार भिन्न भिन्न परिणाम घटित होते हैं ।

एक ही पक्ष में चन्द्र एवं सूर्यग्रहण का होना घोर अशुभ है । अकाल, असमय वृष्टि आदि सर्वशोभन नाशन होता है । राहु, चन्द्रमा तथा क्तु सूर्य का ग्रास जैन मान्यता के अनुसार करता है ।

पाद-टिप्पणी :

१७ (१) उलूक ध्वनि यह अशुभ मानी जाती है। उल्लू तथा कुत्ता का रोना मृत्यु का सूचक है। उल्लू दिन में छिपा रहता है। रात्रि में निकलता है। छोटे पक्षियों को पकड़ कर खाता है। ऊजाड़ स्थानों में रहता है। बोली अशुभ एवं भयावनी होती है। घर में उल्लू का रहना अशुभ माना जाता है। तान्त्रिकगण इसके मांस का प्रयोग उच्चाटन आदि क्रियाओं में करते है। सभी देश एवं जातियों में अभक्ष्य माना जाता है। उल्लू बोलने का मुहावरा उजड़ने के अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

पाद टिप्पणी

१९. (१) दुर्भिक्ष सन् १४६९ ई० में मध्येशिया, तुर्किस्तान आदि स्थानों में भयंकर अकाल पड़ा था ।

भिक्षुकानन्यदेशीयान् प्रेतरूपानिवागतान् ।
दृष्ट्वापृच्छन्नृपस्ते च वार्तां तस्याब्रुवन्निमति ॥ २० ॥

२० प्रेतरूप आये, अन्य देशीय भिक्षु को देखकर, राजा ने उनसे पूछा और उन्होंने यह बात कही—

राजन् देशेष्वनेकेषु वृष्ट्यभावात् समन्ततः ।
सर्वान्तकृत् काल इव दुष्कालः समुपस्थितः ॥ २१ ॥

२१ 'हे राजन् ! अनेक देशो मे वृष्टि के अभाव से, चारो ओर सबका अन्तकारी काल सदृश दुष्काल, उपस्थित हुआ है ।

दुर्भिक्षेण प्रभवता मणीनां सा महार्घता ।
नीता नीचेन साधूनामिव सर्वोपयोगिनाम् ॥ २२ ॥

२२. 'उत्पन्न दुर्भिक्ष ने मणियो की (उस) महार्घता को, उसी प्रकार हर लिया, जिस प्रकार सर्वोपयोगी साधुओ के महत्व को नीच ।

भुञ्जते श्वादयोऽन्योन्यंपिशित क्षुदुपद्रुताः ।
तत्तच्छून्यगृहान्तःस्थनिःशेषितशवप्रजाः ॥ २३ ॥

२३ 'भूख से पीडित कुत्ते आदि शून्य गृह स्थित, शव समूहो को, नि शेष कर, एक दूसरे का मास खाने लगे ।

स्पृष्टोच्छिष्टतया दृष्टप्रायश्चित्तादिनिष्ठिताः ।
क्षुधा द्विजवरा देव प्रयाताः सर्वभक्ष्यताम् ॥ २४ ॥

२४ 'हे राजन ! स्पर्श एव जूठन (उच्छिष्टता) के कारण, जिनको प्रायश्चित्तादि करते देखा गया था, वे द्विजश्रेष्ठ, सर्वभक्षी बन गये ।

क्वापि विप्रस्त्रियस्तत्तदभक्ष्यान्वीक्षणाक्षमाः ।
पक्वान्नं सविष भुक्त्वा स्वमन्यांश्च व्यसून् व्यधुः ॥ २५ ॥

२५. कही पर तत्तत् भक्ष्य (पदार्थ) को देखने मे अक्षम होकर, विप्र स्त्रियाँ ने सविष पका अन्न खाकर, अपनी तथा अन्यो को प्राण रहित कर दिया ।

पाद-टिप्पणी

२० उक्त श्लोक कलकत्ता सस्करण की ५४६ वी पक्ति तथा बम्बई सस्करण का २०वाँ श्लोक है ।

पाद-टिप्पणी

२२ पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

२३ पाठ–बम्बई ।

अवृष्टया वसतिं त्यक्त्वा गते क्वापि मृते जने ।
शून्या केन पुरग्रामा दृष्टा राजन् पदे पदे ॥ २६ ॥

२६ 'अवृष्टि के कारण, मनुष्य बस्ती त्यागकर, कही चले जाने पर, अथवा मर जाने पर, हे राजन् ! पद-पद पर, कौन से पुर-ग्राम शून्य नही देखे गये ।

प्रीतिं स्नेहं च दाक्षिण्यं पत्न्यां पुत्रे पितर्यपि ।
कुक्षिंभरिः क्षुदुत्तप्तो विस्मरत्यवनौ जनः ॥ २७ ॥

२७ 'पृथ्वी पर क्षुधातप्त कुक्षंभरि (पेटू) जन पत्नी के प्रति प्रेम, पुत्र के प्रति स्नेह, पिता के प्रति दाक्षिण्य भाव भूल गये ।

खुरासानावनीशक्रं विक्रान्त्या शत्रुभूमिगम् ।
अन्नाभावाद् भवन्मित्रमभिषेणेन निर्गतम् ॥ २८ ॥

२८ 'आपका मित्र एवं खुरासान[1] भूमि का इन्द्र, जो कि अन्नाभाव के कारण, अभियान हेतु वीरतापूर्वक शत्रुभूमि मे चला गया था ।

मेर्जाऽभोसैदनामानं सुरत्राणं रणान्तरात् ।
इराकभूपतिर्बद्‌ध्वावधीत् कोटिबलान्वितम् ॥ २९ ॥ युग्मम् ॥

२९ 'कोटि सैन्य युक्त, उस मिर्जा अभोसैद[1] नामक सुलतान को, रण मध्य से बाँधकर, इराक[2] के सुलतान ने मार डाला (युग्मम्) ।

पाद टिप्पणी ।

पाठ–बम्बई ।

२८ (१) खुरासान शुक की काल गणना ठीक है। सन् १४६९ ई० में खुरासान का सुल्तान मर गया। इसी समय हुसन बैकरा ने हेरात पर अधिकार कर, अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी। (इ० अँन० १ ४ ३२, १ ६ २२)।

पाद टिप्पणी

२९ (१) अभोसैद अबूसैद। तुर्कोमन हसन बग ने अबूसैद की सेना परास्त कर, उसे जनवरी सन् १४६९ ई० में मार डाला।

(२) ईराक प्राचीन सभ्यता का ईराक प्रसिद्ध केन्द्र रहा है। उत्तरी भाग में असीरिया तथा दक्षिणी भाग में बेबलोन की सभ्यता शताब्दियों तक फलती-फूलती रही है। इस देश की भौगोलिक सीमाएँ बदलती रही हैं। काल के थपेड़ों ने इसमें बहुत उलट-पलट किया है। वर्तमान ईराक के तुर्की, पश्चिमोत्तर में सीरिया, पश्चिम में सीरिया तथा सऊदी अरब का रेगिस्तान दक्षिण में फारस की खाड़ी तथा पूरब में ईरान है। इस समय यह देश त्रिभुजाकार है। उत्तर-दक्षिण ११२५ किलोमीटर, पूरब-पश्चिम ४८० किलोमीटर तथा क्षेत्रफल ४३८, ४४६ वर्ग किलोमीटर है। भारतवर्ष के मध्य प्रदेश के बराबर है। देश की ढाल उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूरब की ओर है। दजला एवं फुरात मुख्य नदियाँ हैं, जिनके उपत्यका में अनेक सभ्यताएँ, साम्राज्य एवं राज्य हुए और मिटे हैं। वर्ष में आठ मास वर्षा नही होती। ग्रीष्म ऋतु में ईराक विश्व के सर्वाधिक गरम स्थानों में हो जाता है। वायु शुष्क एवं आकाश स्वच्छ रहता है। दिन में धूल उड़ती है। रात्रि में लोग बाहर सोते हैं। दोपहर

को घरों को ठण्डा रखते हैं। घरों में तहखाने बनाते हैं। गरमी में वही विश्राम करते हैं। पुराने नगरों की सड़कें काशी की गलियों के समान सकरी हैं। प्रात काल ठण्ड पड़ती है। ओढ़ना ओढ़ने की आवश्यकता प्रतीत होती हैं।

इराक चार भागों में प्राकृतिक दृष्टि से विभाजित किया जा सकता है—उत्तरी-पूर्वी पर्वतीय प्रदेश। ऊपरी इराक, निचला इराक तथा मरुस्थल। पर्वतीय प्रदेश कुर्दिस्तान कहा जाता है। उत्तरी इराक में दजला-फुरात नदियों की उत्तरी द्रोणी है। सिजार की पहाड़ियाँ हैं। दक्षिणी इराक दजला, फुरात नदियों की दक्षिणी द्रोणी है। वह फारस की खाड़ी से उत्तर में रमादी स्थान तक फैला है। फरात नदी के पश्चिम में मरुस्थल है।

इराक में तेल का खनिज प्रचुर मात्रा में है। इसके अतिरिक्त कृषिप्रधान देश है, ७० प्रतिशत जनता कृषि करती है। कृषि योग्य भूमि के केवल छठे भाग पर कृषि होती है। दो फसलें होती हैं। जाड़े की फसल में गेहूँ तथा गर्मी की फसल में धान, मक्का, तिल आदि की उपज होती है। जौ यहाँ खूब होता है। प्रकृति इस उपज के अनुकूल है।

खजूर की फसल से काफी विदेशी मुद्रा मिलती है। भारतीय गुजराती लोगों ने यहाँ भी खजूर का व्यापार आरम्भ किया तथा खजूर के खूब बाग लगवाये हैं। खजूर उत्पादन में ईराक का विश्व में प्रथम स्थान है। यहाँ विश्व की तीन चौथाई उपज है। छुहारे भी उत्पन्न होते हैं। उनके बगीचों के चारो ओर कच्ची दिवालों की चहारदिवारी बनायी जाती है। विश्व में ८० प्रतिशत छुहारा का व्यापार इराक से होता है। छुहारा बगदाद तथा बसरा से विदेश भेजा जाता है। खजूर की हरी कली साक बनाने के काम में आती हैं। छुहारा पीसकर आटा बनाया जाता है। कपास की भी खेती दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसका उत्पादन बगदाद के पूर्वोत्तर दियाला नदी की घाटी है। अन्य फसलें, अंगूर, शहतूत, अंजीर, तम्बाकू, अफीम और फल

हैं। इराक में पशुपालन कृषि के पश्चात सबसे बड़ा उद्यम है। गाय-बैल लगभग एक लाख, भैंस-भैंसा पचास हजार, भेंड ५६ लाख, बकरी लगभग २० लाख, घोड़ा लगभग १ लाख ९४ हजार, गधा लगभग साढ़े पाँच लाख, खच्चर एक लाख है। जनसंख्या सन १९६० ई० की गणना के अनुसार ६८,०३,१५३ हैं। शिया मुसलमानों की संख्या अनुपातत अधिक हैं। साधारण जनता का मुख्य भोजन रोटी और प्याज है। ग्रामीणों के घर नरकुल तथा मिट्टी के बनते हैं। रोटी में छुहारा का आटा मिला लेते हैं। यहाँ के प्रमुख नगर बगदाद, बसरा, मोसुल, दिवानिया, करबला, खानकिन, समारा, किरकुल, अदजिल, कयेयारात तथा टेलकी हैं।

करबला के कारण शिया लोगों का तीर्थ स्थान है। बाइबिल वर्णित ईदन उद्यान ईराक में था। यह देश साम्राज्यों की स्मशान भूमि तथा खड़हर है। सुमेर, बाबुल, असुरी, खल्द सभ्यताओं का यहीं उदय हुआ था। यहाँ का प्राचीन नगर 'उर' 'एरनुन्ना' (तेल अस्मर) तिनेवे, यहाँ का पुरातन गाथाओं में वर्णित आकाशीय उद्यान विश्व के सप्त आश्चर्यों में एक माना जाता था। इराक पर यूनानी तत्पश्चात् रोमन, तत्पश्चात सासानी ईरानियों ने ईराक पर शासन किया था। अरबों के आक्रमण ने परिस्थिति बदल दी। उन्होंने कुफा, बसरा तथा बगदाद की स्थापना किया था। हजरत अली ने मुस्लिम साम्राज्य की राजधानी कूफा बनाया था। अब्बासी खलीफाओं के समय बगदाद अरब साम्राज्य की राजधानी बन गया। खलीफा हारुन रशीद के समय बगदाद की आशातीत उन्नति हुई। अन्तिम अब्बासी खलीफा मुसलिम के समय सन १२५८ ई० में चगेज खाँ के पौत्र हलाकू खाँ ने बगदाद पर आक्रमण किया। अब्बासी अधिकार सर्वदा के लिए समाप्त हो गया।

अब्बासी खलीफाओं के पश्चात मगोल, तातार, इरानी, कुर्दो, तुर्कों की प्रतिस्पर्धा का शिकार बना रहा। तत्पश्चात् तुर्कों का शासन ईराक पर सन्

तस्य दुर्योधनस्येव बद्धस्य हरणक्षणे ।
अभूत् सख्यान्तरेऽसख्यतुरुष्कनृपतिक्षयः ॥ ३० ॥

३० 'दुर्योधन सदृश बँधे उसके हरण के समय, युद्ध में असंख्य तुरुष्कों एवं राजाओं का क्षय हुआ।

देशेषूद्भूतदुष्कालबलाबलविपर्ययात् ।
अन्योन्यनृपयुद्धेन विघ्नो देव पदे पदे ॥ ३१ ॥

३१ हे ! नृप !! देशों में उत्पन्न दुष्काल से बलाबल विपर्यय के कारण राजाओं के परस्पर युद्ध से पद-पद पर विघ्न उपस्थित हो गया।

सुखप्रदं भवद्देशं श्रुत्वान्नादिसमृद्धिभिः ।
आगतास्तत्क्षमापाल रक्षास्मान् विक्षतान् क्षुधा ॥ ३२ ॥

३२ अतः हे ! राजन् !! अन्न आदि समृद्धि से आपके देश को सुखप्रद सुनकर क्षुधा पीड़ित होकर आये हम लोगों की रक्षा करो।

श्रुत्वेति वार्तामार्तां तां जानन्निव निजाः प्रजाः ।
द्रव्यकोटिं ददौ राजा तदर्थे करुणाकुलः ॥ ३३ ॥

३३ अपनी प्रजा सदृश जानते हुये इस प्रकार पीडा भरी, उस बात को सुनकर, राजा करुणाकुल होकर उन्हें कोटि द्रव्य प्रदान किया।

अत्रान्तरे स्वयंसिद्धकृतं स्वय्यपुरं महत् ।
समस्तं वह्निना दग्धं शून्यारण्यमिवाभवत् ॥ ३४ ॥

३४ इसी बीच स्वयं (सुय्य[1]) सिद्ध द्वारा निर्मित महान सुय्यपुर[2] अग्नि द्वारा पूर्ण रूपेण दग्ध होकर, शून्य अरण्य सदृश हो गया।

१८३१ ई० में हुआ। तुर्कों ने ईराक को तीन भागों अर्थात् मुसल विलायत, बगदाद विलायत, बसरा विलायत तथा वे चौदह कमिश्नरियों में इस समय बंटे हैं। प्रथम विश्वयुद्ध में ब्रिटिश सेना ने २२ नवम्बर सन् १९१४ ई० को बसरा और ११ मार्च सन् १९१७ ई० को बगदाद विजय कर लिया। युद्ध पश्चात् ईराक ब्रिटिश का प्रभाव क्षेत्र मान लिया गया। २३ अगस्त सन् १९२१ ई० को कठ पुतली अमीर फजल का ईराक का सुल्तान घोषित कर दिया। ईराक पर से ब्रिटिश मण्डेट ४ अक्तूबर सन् १९३२ ई० को समाप्त हो गया। स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में ईराक राष्ट्रसंघ में सम्मिलित हुआ।

श्रीवर की काल गणना यहाँ भी ठीक है और उसे तत्कालीन काश्मीर तथा विदेशों के इतिहास का ज्ञान था।

पाद टिप्पणी

३४ (१) स्वयं=सुय्य अवन्तिवर्मा का यशस्वी मन्त्री एवं सफल अभियन्ता था। उसने वितस्ता की धारा वान्दी पुर के समीप परिवर्तित कर जल प्लावन से कश्मीर की रक्षा किया था। उसके

क्रमराज्यस्फुरत्प्राज्यराज्यतन्त्रक्रियाङ्कितम् ।
भूर्जभाण्डादि तत्रस्थं समस्तं भस्मसादभूत् ॥ ३५ ॥

३५ क्रमराज्य (कमराज) के बहुल से राजतन्त्र की कृया (लेख) से युक्त भूर्ज (पत्र) भाण्डादि, जो कि वहाँ थे, वह समस्त भस्मसात हो गया।

ग्राह्यो जैनगिरिक्षेत्रे सप्तमांशोऽत्र भाविभिः ।
इति ताम्रमये पट्टे कल्यं यस्यां न्यधान्नृपः ॥ ३६ ॥

३६ इस जैनगिरि[1] क्षेत्र मे भावी (नृप) सप्तमांश ग्रहण करे, यह राजा ने ताम्रपट्ट[2] पर, इस प्रकार आदेश लिखाया—

श्रीमान् जैनोल्लाभदीनो ययाचे
स्वान् भूपान् भाविनो जैनगिर्याम् ।
कृष्टोत्पाद्य स्वैर्धनैर्भूर्मयात्र
तस्या ग्राह्यः सप्तमांशो भवद्भिः ॥ ३७ ॥

३७ 'श्रीमान् जैनुल आबदीन भावी नृपो से याचना करते हैं कि जैनगिर पर मैंने धन से भूमि को सम्पन्न बनाकर, कृषि पूर्ण कर दिया है। आपलोग उसका सातवाँ[1] अंश ग्रहण करें।

जलावतरणं कृत्वा गिरीनुल्लङ्घ्य मत्कृतः ।
पुण्यकेतुरयं सेतुर्वर्धनीयः शुभेच्छया ॥ ३८ ॥

३८ 'जलावतरण करके तथा पर्वतो को लाँघकर, मेरे द्वारा निर्मित, पुण्य केतु[1] भूत, यह सेतु शुभकामना से सर्वाधित करना।'

कारण वितस्ता सिन्धु संगम नवीन स्थान पर बन गया था। उसने सुय्यमेव एवं सुय्यपुर का निर्माण कराया था। स्वयं का अर्थ यहाँ सुय्य है।

(२) सुय्यपुर सुय्य द्वारा स्थापित नगर सोपोर। द्र० : १ . ३ ९१, १०८, १ ७ ४३, २०७, ३ . ४३, १८१, ४ ५६०।

पाद-टिप्पणी :

३६ (१) जैनगिर इस नगर की स्थापना सोपोर के समीप हुई थी (जोन० ८७२)। यह कमराज का परगना है। यह क्षेत्र सोपुर के उत्तर-पश्चिम तथा पोहुर नदी और उलर लेक के मध्य है। यव इस परगना की मुख्य उपज है। सुहा के समीप पहाडी के पादमूल में धान की खेती होती है।

(२) ताम्रपत्र तवक्काते० ३ ४३६, फिरिश्ता० ३४२।

पाद-टिप्पणी

३७. (१) सातवाँ तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—कुछ स्थानो पर खराज चार में से एक और कुछ स्थानो पर सात में से एक निश्चय किया गया (४४३ = ६६५)।

खराज एक प्रकार का लगान या भूमिकर है। यह एक प्रकार का कर है, जो अधीनस्थ राजा अपने से बडे राजा को देता है। चौथ के अर्थ में भी प्रयोग होता है।

पाद-टिप्पणी

३८ (१) केतु . यहाँ केतु का अर्थ ग्रह

इत्थं ताम्रमये पट्टे श्रीत्रकाशीशनिर्मिता ।
प्रशस्तिरासीत्तां राजधानीं वह्नी ररक्ष च ॥ ३९ ॥

३९ इस प्रकार श्रीवकाशीष निर्मित प्रशस्ति ताम्रमय पट्टपर अंकित थी । उसकी राजधानी की अग्नि ने रक्षा की ।

प्रदीप्तः सुकृतोत्कर्ष इवास्यैव महीपतेः ।
अरक्षद् राजधानीं तां मध्यस्थामपि पावकः ॥ ४० ॥

४० इस राजा के प्रदीप्त सुकृति के उत्कर्ष सदृश पावक ने 'अपने' मध्य स्थित, उस राजधानी की रक्षा की।

श्रुत्वा दग्धं पुरं राजा शुचा दग्धो विदग्धधीः ।
अचीकरन्नवं तूर्णं चारु दारुमयैर्गृहैः ॥ ४१ ॥

४१ चतुर-बुद्धि राजा पुर को दग्ध हुआ सुनकर, शोक दग्ध हो गया और शीघ्र ही दारुमय गृहों से (उस) सुन्दर एवं नवीन बनवा दिया ।

राजा वराहमूलीयां राजधानीं पुरा कृताम् ।
आनीय विदधे तत्र राजावासं नवं महत् ॥ ४२ ॥

४२ राजा ने वारहमूला में पूर्व निर्मित राजधानी लाकर, वहाँ एक बड़ा और नवीन नृप आवास निर्मित कराया ।

तन्त्रायकनृपागारं सेतुमत्तोम्भितं नवम् ।
क्रमराज्यश्रियो हारं सारं सुय्यपुरं व्यधात् ॥ ४३ ॥

४३ तन्त्रायक नृपागार से युक्त तथा सेतु एवं अटारी आदि से पूर्ण, क्रमराज्य[1] लक्ष्मी के हार स्वरूप श्रेष्ठ सुय्यपुर[2] का नवीनीकरण किया ।

सेतुमत्तोम्भिते तत्र गृहश्रेणिमणिव्रजे ।
राजधानी स्फुरच्छत्रा धत्ते मध्यमणिश्रियम् ॥ ४४ ॥

४४ अटारियों से पूर्ण, गृहपंक्ति रूपी मणि समूह के मध्य स्फुरित, छत्रवाली राजधानी मध्य मणि के समान शोभित हो रही थी ।

नहीं पताका है। वह सेतु राजा की पुण्य-पताका थी। यह अर्थ अभिप्रेत है।

पाद टिप्पणी

श्री दत्त ने सेतु का स्विंगिंग अर्थात् झूला पुल अनुवाद किया है। पद के प्रथम चरण का पाठ सन्दिग्ध है। तन्त्र का अर्थ स्पष्ट नहीं है।

४३ (१) क्रमराज्य : क्रमराज द्रष्टव्य टिप्पणी १ : १ : ४० ।

(२) सुय्यपुर : द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ३ : ९१ ।

मानुष्यकं नववसन्तमिवाप्य हृद्यं
लोका लता इव लसन्ति नवे वनेऽस्मिन् ।
तद्बान्धवा रुचिकरा इव पुष्पपूगाः
स्थित्वा दिनानि कतिचिच्चतुरं प्रयान्ति ॥ ४५ ॥

४५ नूतन वसन्त के सदृश मनोहारी, मनुष्यत्व को प्राप्त कर, नगर मे नवीन वन मे लता के समान लोग शोभित होते हैं और मनोरम पुष्प-पुञ्ज सदृश, उसके बन्धुगण, चार दिनों तक रहकर चले जाते हैं ।

विहगेष्विव जातपक्षपूगः
पुरुषेषु प्रभवेत् कुटुम्बवर्गः ।
सुखगत्युचितोऽपि तत्प्रतिष्ठो
न चिरं तिष्ठति कायकष्टदायी ॥ ४६ ॥

४६ उत्पन्न पक्ष-पुञ्ज युक्त पक्षी, अन्य पक्षियो के प्रति जिस प्रकार व्यवहार करता है, उसी प्रकार पक्ष आदि से पूर्ण कुटुम्ब वर्ग भी मनुष्यो के प्रति वह पक्षी-सा कुटुम्ब वर्ग सुखपूर्वक गति के योग्य होने पर उठा-सा मनुष्यो के आश्रित होकर, शरीर को कष्ट देनेवाला बनकर, चिरकाल तक उनके आधीन नही रहता ।

अत्रान्तरे दिवं याता सा बोधाखातोनाभिधा ।
श्रीमत्सैदान्वयोदन्वच्चन्द्रिका नृपतिप्रिया ॥ ४७ ॥

४७ इसी बीच, वह बोधा खातून[१] नामकी नृपतिर्प्रिया, स्वर्ग चली गयी, जो कि श्रीमान् सैय्यिद वंश[२] रूप समुद्र की चन्द्रिका थी ।

पाद-टिप्पणी

४७. (१) बोधा खातून जैनुल आबदीन के व्यक्तिगत कौटुम्बिक जीवन के सन्दर्भ में बहुत कम जोनराज तथा श्रीवर ने वर्णन किया है । सैय्यिद मुहम्मद बैहकी की कन्या थी । नाम ताज खातून था । श्री मोहिबुल हसन का मत है कि श्रीवर वर्णित बोध खातून ही ताज खातून है । उन्होंने बोधा को मखदूम का अपभ्रंश मानने का अनुमान किया है । अथवा वह 'बोड' का अपभ्रंश है । जिसका अर्थ बडा होता है । सुल्तान का पुकारने का नाम बड-शाह हो गया था, इसी प्रकार बडी रानी होने के कारण उसे भी 'बोड' कहा जाने लगा ।

(२) सैय्यिद वंश सैय्यद मुहम्मद बैहकी का वंश । बहारिस्तान शाही (२९ बी०, ३० बी०) के अनुसार बोध खातून की दो लडकियाँ थी । एक का ब्याह सैय्यद हसन बैहकी तथा दूसरे का पखली के शासक के साथ हुआ था ।

सैय्यद लोग कालान्तर म कृषक कार्य करने लगे थे । तथापि गाँवों में आदर की दृष्टि से देखे जाते थे । बोध खातून को कुछ काश्मीरी लेखक बैहकी बेगम मानते हैं । उसके कब्र पर जो मजारए बहाउद्दीन श्रीनगर में है नाम मखदूमा खातून लिखा है ।

वफात-ए-हजरत मखदूम खातून,
कि सल हस्त सद बो हफ्तद विगूजस्त ।

यत्संयोगसुखं प्राप्य सोऽज्ञासीत् सफलं वयः ।
तद्वियोगाद्विदग्धाङ्गः सर्वं शून्यमिवाविदत् ॥ ४८ ॥

४८ जिसका सयोग सुख प्राप्तकर, वय को सफल जाना था, उसके वियोग से, वह दग्धाग-सा होकर, सब कुछ शून्य सदृश जाना ।

न्यस्तो राजेन्दुना सिन्धुदेशे यो गुणसुन्दरः ।
स्वत्राणेन सुरत्राणपदे प्राणाधिकप्रियः ॥ ४९ ॥

४९ स्वरक्षक (अपने लोगो का रक्षक) नृपति चन्द्र ने जिस गुण, सुन्दर एव प्रणाधिक प्रिय को सिन्धु देश मे सुल्तान क पद पर, स्थापित किया था—

श्रीक्यामदेन सिन्ध्वीश भागिनेय सुतोपमम् ।
एबराहिमनाम्ना त हत युद्धेऽशृणोन्नृपः ॥ ५० ॥

५० राजा ने उस सुतोपम भगिनी-पुत्र एव सिन्धु के स्वामी श्री क्यामदेन' को इब्राहीम द्वारा युद्ध मे मारा गया सुना ।

परमाश्वासनोपायः सुखे दुःखे च योऽभवत् ।
तदा तन्मरण राजा भुजच्छेदमिवाविदत् ॥ ५१ ॥

५१ सुख एव दु ख मे जो परम आश्वासन का उपाय था, उस समय राजा ने उसका मरना 'भुजच्छेद' (हाथ कट जाना) माना ।

दर्याबखानादिमृतौ याभून्मन्त्रिसभा नवा ।
लीलामित्रैः सम सर्वा सा ययौ स्मरणीयताम् ॥ ५२ ॥

५२ दर्याव खान' आदि के मरने पर जा नवीन मन्त्रि सभा थी, उन सबकी लीला (विनोद) मित्रो के साथ स्मृति मात्र शेष रह गयी ।

उक्त पद से मृत्यु काल हिजरी ८७० = सन् १४६५ ई० निकलता है । जैनुल आबदीन की मृत्यु के ५ वष पूर्व उसकी मृत्यु हुई थी । सैय्यिदों की बैहकी शाखा, बैहक क्षत्र सब्जवर स सैय्यिद मुहम्मद हमदानी के साथ आयी थी । कालान्तर में सैय्यिद लोग दिल्ली में जाकर आबाद हो गये । मखदूमा खातून उसी वश के सैय्यिद हसन की कन्या थी । (बहारिस्तान पाण्डु० फो० ३७ बी० तथा ४५ बी०, तारीख हसन पाण्डु० २ ३१०) ।

पाद-टिप्पणी :

५० (१) क्यामदेन : क्यामदीन या कायमदीन या इकरामुद्दीन होना चाहिए । जाम निजामुद्दीन (जामनन्द) सिन्ध के गद्दी पर सन् १४६१ ई० में बैठा था । सन् १४७२ ई० में मोहम्मद बेघरा गुजरात ने सिन्ध पर आक्रमण किया था । किन्तु यह समय जैनुल आबदीन सन् १४२०–१४७० ई० की मृत्यु के पश्चात् का है ।

पाद टिप्पणी

५२ (१) दर्याबखान दरया खां = दरिया खा । जोनराज ने भी इस व्यक्ति का उल्लेख किया है । द्रष्टव्य जोन० . ९६३ । केवल यही उल्लेख मिलता है ।

लसन्मदो विभुप्राप्तकार्योत्पादितसौहृदः ।
तत्कालं प्रभयं यातो दाता मेरखुशाह्लदः ॥ ५३ ॥

५३. गर्वीला एव प्रमुख तथा अपने कार्यों से राजा की मित्रता प्राप्त की थी, वह दाता मेर खुशह्लाद[1] उसी समय मर गया।

दुर्वार्तामन्वहं शृण्वन्नार्तां जानन्निजां प्रजाम् ।
स्वसुतान्योन्यवैरेण चिन्तातप्तो नृपोऽभवत् ॥ ५४ ॥

५३. प्रतिदिन दुर्वार्ता (बुरी खबर) सुनते तथा अपनी प्रजा को पीडित जानते हुये, वह राजा अपने पुत्रों के पारस्परिक वैर से चिन्ता तप्त हो गया।

अतीतान् बान्धवान् भृत्यान् सखीन् प्राणसमान् स्मरन् ।
स्वात्मानमविदद् राजा यूथभ्रष्टमिव द्विपम् ॥ ५५ ॥

५५. प्राण सदृश पुराने बन्धुओं, भृत्यों एवं मित्रों को स्मरण करते हुए, राजा ने अपने को यूथभ्रष्ठ (समूह से बिछुड़ा) गज तुल्य जाना।

अत्रान्तरे राजसूनोर्हाज्यखानस्य रक्तजम् ।
अस्वास्थ्यमुदभून्नित्यं मद्यपानातिसेवनात् ॥ ५६ ॥

५६ इसी बीच राजा का पुत्र हाजी खान को नित्य अत्यधिक मद्यपान सेवन से रक्त सम्बन्धी रोग[1] हो गया।

तवक्काते अकबरी में दर्या खा का उल्लेख मिलता है—उसने अज्ञात कुल एक आदमी जिसका नाम मुल्ला दरया था उसे दरया खा की उपाधि से विभूषित किया। और उसे सब कार-भार सौप दिया और स्वयं सुख और आनन्दपूर्वक रहने लगा (४४१ = ६६०-६३१)।

तवक्काते के दोनों पाण्डुलिपियों में 'बादरया' तथा लीथो संस्करण तवक्काते एवं फिरिश्ता में 'मुल्ला दरया' लिखा मिलता है।

पाद-टिप्पणी

५३ (१) मीर खुश अहमद जैनुल आबदीन का दरबारी था। इसके विषय में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं है। केवल यही उल्लेख मिलता है।

पाद-टिप्पणी

५६. (१) रक्त सबन्धी रोग . तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—अन्त में निरन्तर मद्यपान करने के कारण हाजी खा को संग्रहणी की बीमारी हो गयी और प्रशासन में बड़ी अस्तव्यस्तता हो गयी (४४४ = ६६९)।

फिरिश्ता ने कुछ उलटी बात लिख दिया है। उसका मत है कि हाजी खा को नहीं बल्कि सुल्तान को संग्रहणी हो गयी थी। सुल्तान हाजी खा के अत्यधिक मद्यपान के कारण नाराज रहता था, सरकारी कामकाज ठप पड़ गया था।

कर्नल ब्रिग्गस का मत तवक्काते अकबरी से मिलता है। हाजी खा को संग्रहणी हो गयी थी। न कि सुल्तान का। रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया ने फिरिश्ता के मत का अनुकरण किया है।

शौर्यौदार्यनिधेः सूनोरतिप्रियतया तया ।
राज्यसौख्यलता राजहृदुद्याने फलाचिता ॥ ५७ ॥

५७ शौर्य एवं औदार्य के निधि पुत्र को उस अति प्रियता के कारण राजा के हृदय रूपी उद्यान में फलपूर्ण राज्य सौख्य लता उस समय हो गयी।

तदाभून्नीरसप्राया तदस्वास्थ्यदवाग्निना ।
अथानीयान्तिकं दृष्ट्वा सविकारं भृशं कृशम् ॥ ५८ ॥

५८ उसके अस्वास्थ्य रूप दवाग्नि से (उस समय) नीरसप्राय हो गयी थी। समीप लाकर रोगग्रस्त एवं अति कृश पुत्र को देखकर—

स्नेहादित्यब्रवीद् राजा पुत्रं मन्त्रिसभान्तरे ।
अहो पुत्र फलं लब्धं दोषासक्तेन पानजम् ॥ ५९ ॥

५९ मन्त्रि सभा के मध्य राजा ने प्रेमपूर्वक उससे इस प्रकार कहा—'हे पुत्र ! दोष में आसक्ति के कारण तुमने पान से उत्पन्न फल प्राप्त किया है—

येनेदृशी दशा प्राप्ता चन्द्रेणेव क्षयावहा ।
स्वार्थापेक्षी हितः कोऽपि भृत्यस्ते नास्ति रक्षकः ॥ ६० ॥

६० 'जिससे तुम्हारी चन्द्रमा के समान इस समय क्षयावह दशा हो गयी है। तुम्हारे स्वार्थापेक्षी कोई हितैषी भी भृत्य तुम्हारा रक्षक नहीं है।

पानव्यसनसंसक्तं यस्त्वामुपदिशत्यलम् ।
कियन्तो बत न भोगाश्चमत्कारकरास्तव ॥ ६१ ॥

६१ 'जो पान व्यसन में रत तुम्हें उपदेश देता। दुःख है, कौन-से चमत्कारी भोग तुम्हें प्राप्त नहीं हैं।

किमेकेन भवान् ग्रस्तो विषयेण पतङ्गवत् ।
अस्मिञ् जन्मनि सामग्री येयं प्राप्तान्यदुर्लभा ॥ ६२ ॥

६२ 'आप फतिंगे के समान एक ही विषय में क्यों ग्रस्त हो गये ? इस जन्म में अन्य दुर्लभ जो यह सामग्री प्राप्त हुई है।

पाद टिप्पणी

५७ उक्त श्लोक का प्रथम दो पद मिलकर एक श्लोक कलकत्ता संस्करण की ५८३ वी पंक्ति तथा बम्बई संस्करण का ५७ वाँ श्लोक बनता है। इसका तृतीय पद कलकत्ता संस्करण के पंक्ति ५८४ का तथा बम्बई संस्करण के श्लोक ५८ [redacted] प्रथम पद है। अनुवाद सौकर्य एवं प्रसंग की दृष्टि से श्लोक के पूर्वार्ध-परार्ध को परिवर्तित किया गया है, जिसके कारण कलकत्ता एवं बम्बई दोनों से कुछ अन्तर ज्ञात होगा।

प्राप्ता नैवेदृशी भूयो यदि दुर्व्यसनो भवान् ।
किं चिरन्तनवृत्तान्तैर्वृष्ण्यादीनां समीरितैः ॥ ६३ ॥

६३ यदि आप दुर्व्यसनी रहेंगे तो पुन यह प्राप्त नही होगी। यादवादि[1] के चिरन्तन वृतान्तो के कहने से क्या लाभ ?

मद्येनातनुभूपाला दृष्टनष्टा विचार्यताम् ।
तथा हि सबलारातिगणतूलसमीरणः ॥ ६४ ॥

६४ उन बहुत से भूपालो का विचार करो, जिनका मद्य के कारण विनाश हो गया जैसे सबल शत्रु समूह रूप तूल के लिये वायु।

मल्लेकजसथो योऽभून्मद्राज्याप्तिनिधानभूः ।
तेनापि दृष्टं दुष्ट प्राङ् नात्याक्षीत् तत् स्ववञ्चकः ॥ ६५ ॥

६५ 'मल्लिक जसरथ' जो कि मेरे राज्य प्राप्ति रूप निधान का भूमि था, उस आत्म-वंचक ने भी मद्य के दोष को देखकर, भी नही छोडा था।

पाद-टिप्पणी

६३ (१) यादव महाभारत वर्णित मद्यपान के कारण यादव वंश सहार की ओर सुल्तान ने सकेत किया है। द्रष्टव्य टिप्पणी १ २ ८।

पाद-टिप्पणी

६५ (१) जसरथ : (सन् १३९९–१४४६ ई०) खोखर सरदार था। जोनराज (श्लोक ७३२) तथा श्रीवर ने (१ ३ १०७) और आइने अकबरी में अबुल फजल ने सुल्तान जैनुल आबदीन और जसरथ की मित्रता का उल्लेख किया है। जैनुल आबदीन से विदा होकर जसरथ दिल्ली की ओर बढा परन्तु वह बहलोल लोदी म पराजित हो गया। वह लौटकर काश्मीर आया और सुल्तान की फौज की सहायता से पजाब जीता (पृ० ४३९)। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि जसरथ का देहावसान जैनुल आबदीन के ही समय हो गया था। श्रीवर का वर्णन ठीक है। जैनुल आबदीन की मृत्यु जसरथ के २२ वर्ष पश्चात् सन् १४७० ई० में हुई थी। तारीख मुबारकशाही में अहयाबिन अहमद बिन अब्दुल्ला सिरहिन्दी काश्मीर के अलीशाह और जसरथ के सघर्ष का उल्लेख करता है। सिकन्दर पिता जैनुल आबदीन ने सूहभट्ट तथा जसरत खोखर को राजा जम्मू को दबाने के लिए भेजा था। उन लोगो ने जम्मू विजय कर, उसे लूटा था। अलीशाह और जैनुल आबदीन सघर्ष काल मे जैनुल आबदीन स्वय सियालकोट जाकर जसरत खोखर की मदद माँगी थी। जसरथ ने सहायता का वचन दिया। अलीशाह उन दिनों काश्मीर का सुल्तान था। जसरत खोखर को दण्ड देने के लिए, जम्मू के राजा के वर्जित करने पर भी, सैनिक अभियान किया। जसरत खोखर से अलीशाह पराजित हो गया (म्युनिख पाण्डु० फो० ६८ ए०, ६९ ए०, तबक्काते अकबरी ३ ४३४, तारीख मुबारकशाही पृष्ट १९४)। जैनुल आबदीन श्रीनगर पहुँचा। अलीशाह ने अपनी सेना पुन संघटित किया। जम्मू के राजा की सहायता से कश्मीर उपत्यका पर आक्रमण किया। जैनुल आबदीन बारहमूला मार्ग से सैन्य सहित उरी पहुँचा। वहाँ अलीशाह हार गया।

जैनुल आबदीन ने जसरत से मित्रता बनाये रखा। समरकन्द मे लौटने पर जसरत ने पजाब में स्वतत्र

तस्य पुत्रोऽभवच्छाहिमसोदः प्रमये पितुः ।
मत्तं हारितवान् क्षीवः कुर्वन्नुन्मत्तचेष्टितम् ॥ ६६ ॥

६६. उसका पुत्र शाहि मसोद[1] हुआ, जो कि पिता के मरने पर, मदमत्त वह उन्मत्त की तरह चेष्टा करते हुए, सब कुछ हार गया।

सप्तप्रकृतिधात्वाढ्यं तन्मल्लेकपुरं महत् ।
कुपुत्रव्यसनाद् यातं देहवत् स्मरणीयताम् ॥ ६७ ॥

६७. कुपुत्र के व्यसन के कारण सप्त प्रकृति से समृद्ध, वह महा मल्लेकपुर सप्तधातु[1] पूर्ण शरीरवत् नष्ट हो गया।

मद्यं यल्लोहितं वर्णं बिभर्ति चषकान्तरे ।
जाने पानप्रवृत्तानां हृद्रक्तेनैव जायते ॥ ६८ ॥

६८. 'चषक'[1] में मद्य[2], जो लाल रंग धारण करता है, मानो मद्यपान में प्रवृत्त लोगों के हृदय रक्त से ही रक्त वर्ण होता है।

राज्य स्थापित कर लिया। जैनुल आबदीन की सहायता से दिल्ली के सैय्यद सुल्तान मुबारकशाह की दुर्बलता का लाभ उठाकर, समस्त पंजाब जीत लिया। दिल्ली विजय में असफल रहा। मुबारकशाह ने एक सेना, उसे पराजित करने के लिये भेजी। जसरथ कमजोरी का अनुभव कर कश्मीर भाग गया। जैनुल आबदीन की सुरक्षा में रहा (म्युनिस पाण्डु० फो० ६१ ए०, तवक्काते अकबरी ३ ४३५)।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

६६ (१) शाह मसूद : जसरथ का पुत्र मसूद था। वह उत्तराधिकार नहीं पा सका। मलिक पुलू जसरथ का उत्तराधिकार (सन् १४४६-१४४७ ई०) पाया। उसके पश्चात् सिकन्दर खाँ ने (सन् १४-४७–१४६६ ई०) उत्तराधिकार प्राप्त किया।

सिकन्दर के पश्चात् फिरुज खान (सन १४६६–१४७२ ई०) खाक्खर या गक्खर सरदार था। इस प्रकार देखा जाता है कि मसोद को कभी उत्तराधिकार न प्राप्त हुआ और न उसने शासन किया।

पाद-टिप्पणी

६७ (१) सप्तधातु : 'रसासृङ मांस मेदोऽस्थि मज्जा शुक्राणि धातवः।' कहीं-कहीं धातुओं की संख्या १० दी गयी है। उक्त सातों धातुओं में केश, त्वच् एवं स्नायु भी जोड़ देते हैं। अमरकोश के अनुसार

इलेष्मादिरस रक्तादि महाभूतानि तद्गुणा ।
इन्द्रियाण्यश्मविकृतिः शब्दयोनिश्च धातवः ॥'
३ ३ ६४।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

६८ (१) चषक : सुरापात्र = सुरापान पात्र = प्याला = मदिरा पीने का गिलास।

(२) मद्य : हाजी खाँ को शराब की बुरी लत लग गयी थी। शराब के कारण ही उसका पैर फिसल गया और बीमार होकर मर गया।

पीर हसन लिखता है—'कुछ अरसा के बाद सुल्तान हाजी खाँ की बुरी हरकत के बायस उससे निहायत रंजीदा हो गया (पृ० १८५)। द्रष्टव्य म्युनिस पाण्डु० - ७६ ए० तथा बी०।

न मद्येनामुना तुल्यः शत्रुरस्ति हि देहिनाम् ।
सेवितो हितकृच्छत्रुर्मद्यं हन्त्यतिसेवितम् ॥ ६९ ॥

६९. 'शरीरधारियों के लिये इस मद्य के समान कोई शत्रु नहीं है, सेवित शत्रु हितकारी होता है, और अति सेवित मद्य मार डालता है।

मैरेयमदमत्ता यां कुर्वन्त्यनुचितां क्रियाम् ।
उन्मत्तोऽपि न तां कुर्याद् यत् स तस्मात् पलायते ॥ ७० ॥

७०. 'सुरा में मदमत्त जन, जो अनुचित कार्य करते हैं, उन्मत्त भी वह नहीं करेगा, क्योंकि वह उससे भागता है।

मद्यरूपेण वेतालः प्रविश्य हृदयं क्षणात् ।
न केषां हरते प्राणान् सहासरुदितक्रियम् ॥ ७१ ॥

७१. 'मद्यरूप वेताल हास्य एवं रोदन क्रिया युक्त, हृदय में प्रवेश करके, क्षणभर में किनके प्राणों का हरण नहीं कर लेता ?

विषेण वामुना पुत्र पीतेनाप्तेदृशी दशा ।
पाहि स्वं त्यज सावद्यं मद्यमद्यप्रभृत्यतः ॥ ७२ ॥

७२ 'हे ! पुत्र !! विष रूप इसके पान से ऐसी (तुम्हारी) दशा हुई है, अत अपनी रक्षा करो और आज से दोषपूर्ण इस मद्य को त्याग दो।

न चेत् त्यजसि मूढस्त्वं व्यसनार्पितमानसः ।
अचिराद् वञ्चितो लक्ष्म्या प्रक्षीणायुर्भविष्यसि ॥ ७३ ॥

७३. 'यदि व्यसन में लीन मनवाले मूढ तुम नहीं त्यागते, तो शीघ्र ही लक्ष्मी रहित होकर, क्षीणायु होगे (मर जाओगे)।'

श्रुत्वेति राजपुत्रः स स्वपितुः संमता गिरः ।
त्वदाज्ञां न विना मद्यं पिबामीत्युत्तरं व्यधात् ॥ ७४ ॥

७४. इस प्रकार वह राजपुत्र अपने पिता की सम्मत वाणी सुनकर उत्तर दिया—'तुम्हारे आज्ञा के बिना मद्यपान नहीं करूँगा।'

पाद-टिप्पणी :

७१ (१) वेताल : भूतयोनि = पिशाच = प्रेत; जिस शव में भूत का प्रवेश हो जाता है, उसे भी वेताल कहते हैं—'वेतालः प्रतिष्ठा यस्यासौ वेतालः'। शव पर अधिकार कर लेनेवाले भूत की संज्ञा वेताल से दी गयी है। वेताल एवं भूत में अन्तर है। वेताल काबू में नहीं आता परन्तु भूत को वश या काबू में किया जा सकता है।

दीप्त्युज्झितं क्षीणदशं मन्दमस्नेहभाजनम् ।
सुतं दीपमिवेक्ष्याभूद् भूपो मोहतमोहतः ॥ ७५ ॥

७५ दीप सदृश, दीप्त रहित, क्षीण दशा (बत्ती) वाले मन्द एवं स्नेह (तैल) रहित पुत्र को देखकर, राजा मोहरूप तम से ग्रस्त हो गया।

उपदेशगिरःप्रियाः श्रुतौ
गतभाग्येषु भवन्ति जन्तुषु ।
विपदभ्युदये पुनः स्मृता
न मयाश्रावि किमित्यरुन्तुदाः ॥ ७६ ॥

७६ गतभाग्य प्राणियों को प्रिय उपदेश सुनने में कष्टप्रद लगती है और विपत्ति के उदयकाल में पुनः स्मरण करने पर, 'मैंने क्यों नहीं सुना ?' इस प्रकार दुःखी होते हैं।

अथ स्वावसथं गत्वा सोऽपिबद् यन्त्रितोऽपि सन् ।
विषवद्व्यसनान्धानामुपदेशो निरर्थकः ॥ ७७ ॥

७७ वह नियन्त्रित होने पर, भी अपने आवास में जाकर, (मदिरा) पान[1] किया, विष सदृश व्यसन से, जो अन्धे हो गये हैं, उनके लिये उपदेश निरर्थक होता है।

तावतास्नेहमाशङ्क्य राजपुत्रेऽतिमन्त्रिणः ।
आदमखानमानिन्युर्गूढलेखैर्दिगन्तरात् ॥ ७८ ॥

७८ मर्यादा रहित मन्त्रियों ने इतने से ही राजा का राजपुत्र पर, प्रेम के अभाव की आशंका से, गुप्त लेख द्वारा दिगन्तर[1] से आदम खां को बुलाया[2]।

पाद टिप्पणी

७७ (१) पान : फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान को बहुत दुःख हुआ कि पुत्र ने उसकी सलाह पर ध्यान न देकर, उपेक्षा किया तथा मद्य पान और लंपट व्यवहारों से विरत नहीं हुआ। हाजी खां जो राज्य का सब कार्य देखता था उसे रक्तस्राव की बीमारी हो गयी। सुल्तान की वृद्धावस्था राज्यकार्य संचालन में रुकावट डालने लगी (४७३)।

पाद-टिप्पणी

७८ (१) दिगन्तर : द्रष्टव्य टिप्पणी : १ : १ : १३९, १ : ३ : ११३, १ : ४ : ७६, १ : ७ : ७७। साहिबुल हसन का मत है कि आदम खाँ सिन्ध उपत्यका था और वहाँ से वह बाहरी पर्वतों की ओर चला गया था। द्रष्टव्य : १ : ३ : ११४।

(२) बुलाना : पीर हसन लिखता है—यह देखकर बाज अमीरों ने आदम खाँ को पैगाम भेजकर बुलवा लिया (पृ० १८९)। फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान का विचार तथा इन परिस्थिति को देखकर, अमीरों ने गुप्त रूप से आदम खाँ को आने लिए सन्देश भेजा (४७३)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—गुप्तरूप से अमीरों ने आदम खाँ को बुलाया (४४४ = ६७०)।

अनुजागमनत्रासाद् यथा यातोऽग्रजः पुरा ।
तथाग्रजागमत्रासादनुजो याति देशतः ॥ ७९ ॥

७९. पहले जिस प्रकार अनुज के आगमन त्रास से, अग्रज चला गया था, उसी प्रकार अग्रज के आगमन त्रास से, अनुज भी देश से जा रहा है ।

एतत्कलहनिश्चिन्त प्राग्वत् स्यां निजमण्डले ।
इति बुद्ध्या प्रवेशेऽस्य कृतोपेक्षो नृपोऽभवत् ॥ ८० ॥

८० 'इसके कलह से निश्चित पूर्ववत् निज मण्डल में रहूँगा', इस विचार से राजा उसके प्रवेश के प्रति उदासीन रहा ।

हाज्यखानात्मजः श्रुत्वा तं पितृव्यं समागतम् ।
युयुत्सुः प्राप पर्णोत्सं त्यक्त्वा राजपुरीं ततः ॥ ८१ ॥

८१ हाज्यि खान का पुत्र अपने उस (चाचा) पितृव्य (आदम खां) को आया हुआ सुनकर, युद्ध की इच्छा से, राजपुरी त्यागकर, पर्णोत्स पहुँचा ।

आन्द्रोटकोटमाश्रित्य भ्रातृपुत्रपितृव्ययोः ।
कश्मीरागमनद्वेषादभवद् युद्धमुद्धतम् ॥ ८२ ॥

८२ काश्मीर आगमन के द्वेष के कारण आन्द्रोट[1] कोट का आश्रय लेकर, चचा-भतीजा में प्रचण्ड युद्ध हुआ ।

दृष्टं हसनखानस्य क्षमित्वं बलशालिनः ।
विना पैतामहीमाज्ञां नागाद् देशोत्सुकोऽपि सन् ॥ ८३ ॥

८३ बलशाली हसन खाँन[1] की क्षमता देखी गयी, जो कि देश के प्रति उत्सुक होने पर, बिना पितामह की आज्ञा के नहीं गया ।

अग्रजेऽभ्यन्तरं प्राप्ते द्वारस्थे लक्षिते पितुः ।
हाज्यखानोऽनुजयुतो युक्त्या साम प्रयुक्तवान् ॥ ८४ ॥

८४ भीतर पहुँचे, एवं द्वार पर स्थित, अग्रज को पिता के द्वारा देखे जाने पर, अग्रज सहित हाजी खां ने युक्तिपूर्वक साम्य नीति[1] का प्रयोग किया ।

पाठ-टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

८२ (१) आन्द्रोट कोट मेरा अनुमान है कि वह स्थान अन्दरकोट है पूर्व राजतरंगिणीकारों ने इसकी संज्ञा अभ्यन्तर कोट दिया है । उसी का अपभ्रंश अन्दरकोट है । सम्भव है श्रीवर के समय आंद्रोट इसकी लौकिक संज्ञा हो गयी होगी । अनुसन्धान अपेक्षित है । इस रूप में नाम का केवल यही उल्लेख मिलता है ।

पाद-टिप्पणी

८३ (१) हसन खां हाजी खां का पुत्र । शाहमीर वंश का दशवाँ सुल्तान था । इसका नाम राज्य प्राप्त करने पर हसनशाह पड गया था ।

पाद-टिप्पणी

पद का चतुर्थ चरण सन्दिग्ध है ।

८४. (१) साम्यनीति द्रष्टव्य टिप्पणी :

दिव्यं मौसुलदेवेन ते कृत्वापि परस्परम् ।
नात्यजन् हृदयाद् वैरं कार्ष्ण्यमौर्णा इवांशुकाः ॥ ८५ ॥

८५ वे परस्पर मौसुल[1] देव की सपथ लेकर भी हृदय से बैर[2] को उसी प्रकार नहीं त्याग सके, जिस प्रकार ऊनी वस्त्र कालिमा का।

अहो गुहायामेकस्यां प्राप्ता सिंहचतुष्टयी ।
एतदन्योन्यवैरोत्थो नाशोऽस्य समुपस्थितः ॥ ८६ ॥

८६ आश्चर्य है ! एक ही गुफा में चार सिंह प्राप्त हुए, उनके पारस्परिक बैर से उत्पन्न, यह नाश ही उपस्थित हो गया।

राज्ञो देशस्य खानानां परिवारस्य मण्डले ।
सर्वांस्तान् मिलितान् दृष्ट्वा प्रोवाच सकलो जनः ॥ ८७ ॥ युग्मम् ॥

८७ राजा, देश, खानो एवं परिवार के मण्डल में सबों को मिला देखकर, सब लोगों ने कहा। युग्मम् ॥

अत्रान्तरे द्वयोर्द्विष्टं कनिष्ठं श्रेष्ठमात्मजम् ।
विचार्यानीय बहामखानं स विजनेऽब्रवीत् ॥ ८८ ॥

८८ इसी समय दोनों के द्वेषी कनिष्ट पुत्र बहराम खाँ[1] को श्रेष्ठ समझकर, उसे निर्जन स्थान में बुलाकर (राजा ने) कहा—

---

२ १८६ । पीर हसन लिखता है—कुछ दिनों तक तो आदम खाँ को अपने भाई हाजी खाँ से सुलह से गुजरी।

पाद टिप्पणी

८५ (१) मौसुल देव : मुसलिम देवता। अल्ला या खुदा की कसम खाना मुसलमानों में मुख्यतया काश्मीर में प्रचलित है।

(२) बैर : दोनों भाइयों ने यद्यपि मित्र बने रहने की शपथ कुरानशरीफ लेकर की थी परन्तु दोनों का हृदय साफ नहीं था। उनके बैर का अन्त नहीं हो सका (म्युनिख : पाण्डु० ७६ बी०)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—ईर्षालुओं ने बीच में पड़कर दोनों (भाइयों) में शत्रुता उत्पन्न कर दी। बहराम खाँ ने धूर्ततापूर्वक बैर उत्पन्न करनेवाली बात कही और दोनों भाइयों को परस्पर शत्रु बना दिया (४४४-६७०)। तवक्काते अकबरी की एक पाण्डुलिपि में 'निफाक अमीर' तथा लीथो संस्करण में 'निफाक' लिखा मिलता है।

पाद-टिप्पणी

८८ (१) बहराम खाँ : जैनुल आबदीन का तृतीय पुत्र था। यह कभी सुल्तान नहीं बन सका था। हसन खाँ ने इसे बन्दी बनाकर इसको अन्धा बना दिया। यह कारागार में ही मर गया। वह तीन वर्ष कैद में पड़ा रहा। उसका पुत्र युसुफ था। वह भी कैद से छूटते ही मार डाला गया। द्र० १ : १ : ५६, ३ : ८७।

बहाम ज्येष्ठो भ्रातायं द्विष्टो दुश्चेष्टितैः कृतः।
स्मृतपूर्वापकारोऽयं हितो जातु न ते भवेत् ॥ ८९ ॥

८९. 'हे! बहराम !! ज्येष्ठ भ्राता के दुश्चेष्टाओं के कारण द्वेषी हो गया है, पूर्व के अपकारों को स्मरण करके, यह तुम्हारा कभी हितैषी नहीं होगा।

अन्यं यं सेवसे भक्त्या दुराशाग्रस्तमानसः।
स कथं स्वं सुतं त्यक्त्वा कार्ये त्वां समपेक्षते ॥ ९० ॥

९०. 'दुराशाग्रस्त मनवाले तुम, भक्तिपूर्वक जिस दूसरे की सेवा करते हो, वह अपने पुत्र (हसन) को त्यागकर, कैसे कार्य में तुम्हारी अपेक्षा करेगा।

तस्मात् त्वं पैशुनाचारं मा कृथा भाविदुःखदम्।
मदेकशरणो भूत्वा कालं नय ततोऽचिरात् ॥ ९१ ॥

९१ 'इसलिये भविष्य में दुःखप्रद पैशुनता मत करो। केवल मेरे शरण में रहकर, समय बिताओ इससे शीघ्र ही—

प्राप्स्यन्ति संपदः सर्वा न्यायमार्गस्थितस्य ते।
अन्यथा तैलतप्तायःकटाहकरणीनिभः ॥ ९२ ॥

९२. 'न्याय मार्ग में स्थित तुम्हें सभी सम्पत्तियाँ प्राप्त होंगी। अन्यथा (हे मूढ) तैलतप्तपूर्ण लौह कटाह (कड़ाही) करणी (कलछी) सदृश—

तद्वैरानलमध्यस्थो मुग्ध दग्धो भविष्यसि।
श्रुत्वेति स पितुर्वाक्यं मुग्धधीरब्रवीदिदम् ॥ ९३ ॥

९३. 'उसके वैराग्नि मध्य स्थित (तुम) जल जाओगे।' वह मूढबुद्धि इस प्रकार पिता का वाक्य सुनकर यह बोला—

देव मे पितृवत् स्नेहं हाज्यखानः करोत्यलम्।
सेव्यः स एव मे भाति तं त्यजे नैव जातुचित् ॥ ९४ ॥

९४ 'हे! देव !! हाजी खाँन मुझ पर, पिता के समान अधिक स्नेह करता है। मुझे वह सेवनीय प्रतीत होता है। उसे कभी नहीं छोड़ूँगा।

रक्षिष्यति स मां काले कोऽन्योऽस्मादधुना बली।
श्रुत्वेति भूपः प्रोवाच क्रुद्धस्तं कृतनिश्चयम् ॥ ९५ ॥

९५. 'वह समय पर मेरी रक्षा करेगा, इस समय दूसरा कौन इससे बली है?' यह सुनकर, क्रुद्ध होकर, राजा ने निश्चय किये हुए, उससे कहा—

हा धिक् त्वा मा परित्यज्य पितान्योऽङ्गीकृतस्त्वया ।
दृष्टिर्या विहिता मूढ प्रोल्लङ्घ्य वचनं मम ॥ ९६ ॥

९६ 'तुम्हे धिक्कार है जो कि तुमने मुझे त्यागकर, दूसरे का पिता स्वीकार किया। हे ! मूढ ॥ मेरे वचन का उल्लंघन कर, जो दृष्टि की है—

तस्या नाशोऽचिरेणैव भविष्यति न संशयः ।
इत्युक्त्वा प्रतिमुच्यामु स्वान्तरेवमचिन्तयत् ॥ ९७ ॥

९७ उसका शीघ्र ही नाश होगा। इसमे सन्देह नहीं है। यह कहकर, उसे त्यागकर इस प्रकार अपने मन मे राजा ने सोचा—

अहो प्रदीप्तान्मत्तोऽमी जाता विसदृशाः सुताः ।
त्रयोऽमी दहनागारादिव हा भस्ममुष्टयः ॥ ९८ ॥

९८ 'अहो ! दुख है ॥ तेजस्वी मुझसे ही ये तीन असमान पुत्र उसी प्रकार पैदा हुए हैं, जिस प्रकार दहनागार से (उत्पन्न) भस्म मुट्ठियाँ।

अयोग्या दीप्तिरहिताः काष्ठाः कृष्टावनिष्ठिताः ।
कदाचिद् निर्जने राजा सुतानिष्टाविशङ्कितः ॥ ९९ ॥

९९ जो कि अयोग्य दीप्त रहित काष्ठ जोती भूमि पर पडी रहती है' (इस प्रकार) राजा ने एकान्त मे पुत्रो के अनिष्ट की विशेष आशका करके—

अधुना करणीयं किं मयेति व्यक्तमब्रवीत् ।
तत्समक्षं बुधा येऽपि तत्प्रसङ्गाद् बभाषिरे ॥ १०० ॥

१०० अब मुझे क्या करना चाहिए ? यह उसने कहा। उसके समक्ष जो विद्वान थे उन लोगो ने उसके प्रसग से कहा—

राजन्नुत्साद्यते देशो राज्यलुब्धैः सुतैस्तव ।
एकस्यैव निजं राज्यं किं नार्पयसि यो हितः ॥ १०१ ॥

१०१ हे ! राजन् ॥ राज्य लोभी तुम्हारे पुत्र देश को नष्ट कर रहे हैं। अत क्यो नही किसी एक हितैषी (पुत्र) को अपना राज्य अर्पित[1] कर देते ?

पाद टिप्पणी

१०१ (१) राज्य अर्पित 'वाज खैर ख्वाहों ने सुल्तान से अर्ज की कि वह अपने बेटों में से किसी एक को अपना वलीअहद बनाये। मगर सुल्तान ने उनकी नाशाइस्ता हरकात के वमूजिब मामला हवाला तकदीर कर दिया (पीर हसन पृ० १८९)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है— कुछ समय पश्चात् जब सुल्तान वृद्धावस्था के कारण निर्बल हो गया और इसके अतिरिक्त रुग्ण रहने लगा तो

व्याकुलत्वं विशां येन तव न स्याच्च भूपते ।
तत्रापि माणिक्यदेवः श्रुत्वासुं प्रबलं श्रिया ॥ १०२ ॥

१०२ 'जिससे कि हे ! राजन् ॥ तुम्हारी एवं प्रजाओं की व्याकुलता न हो, उनमें भी उसे श्री मे प्रबल सुनकर, माणिक्यदेव—

वैरी स्याद्येन देशस्य सर्वनाशोऽचिराद् भवेत् ।
इति श्रुत्वाब्रवीत पुत्रस्वभावेक्षणदक्षधीः ॥ १०३ ॥

१०३ 'बैरी होगा जिससे शीघ्र देश का सर्वनाश हो जायेगा' यह सुनकर पुत्रों का स्वभाव जानने मे चतुर बुद्धि (राजा ने) कहा—

ज्येष्ठः श्रेष्ठोऽस्ति किंत्वस्य कार्पण्यं येन सेवकाः ।
न सन्ति तादृशा येषां राज्य दार्ढ्यमवाप्नुयात् ॥ १०४ ॥

१०४. 'ज्येष्ठ (पुत्र) श्रेष्ठ है, किन्तु उसमे कार्पण्य है अतएव उसके कारण इस प्रकार के सेवक नहीं रहेंगे कि राज्य दृढ हो सके।

मध्यमोऽतीव दातास्य प्रद्युम्नाचलसंनिभम् ।
द्युम्नं चेत् स्याद् व्ययात्तस्य कर्षमात्रोऽवशिष्यते ॥ १०५ ॥

१०५ 'मध्यम अतीव दाता है, इसके पास प्रद्युम्नाचल[1] सदृश धन हो, तो इसके व्यय से कर्ष[2] मात्र अवशिष्ट नहीं रहेगा।

अमीरो और वजीरों ने सगठित होकर, निवेदन किया कि यदि राज्य को किसी एक शाहजादे को सौंप दिया जाय, तो इससे राज्य एवं शासन प्रबन्ध में शान्ति रहेगी (पृ० ४४४–६७० ।'

फिरिश्ता लिखता है—अमीर लोग सुल्तान पर जोर डालने लगे कि वह किसी पुत्र को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दें (४७४)।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री में 'एवडीकेट' शब्द का प्रयोग किया गया है। जिसका अर्थ होता है राज्य त्याग देना, सिंहासन से उतर जाना। उल्लेख किया गया है—राजा के मन्त्रियों ने उससे प्रार्थना किया कि वह अपने किसी एक पुत्र के पक्ष में राज्य त्याग दे (३ २८४)।

पाद-टिप्पणी

१०४ पद के द्वितीय चरण का पाठ संदिग्ध है।

पाद-टिप्पणी

१०५ (१) प्रद्युम्नाचल हरि पर्वत = शारिका पर्वत = प्रद्युम्न गिर = प्रद्युम्न शिखर प्रद्युम्नाद्रि।

(२) कर्ष यह प्राचीन सिक्का अथवा मुद्रा था। इसका तौल लगभग १६ मासा होता था। प्राचीन काल में मासा ५ रत्ती का होता था। इस हिसाब से आजकल तौल दस ही मासा ठहरेगा। वैद्यक में कहीं-कहीं २ तोला माना गया है।

इसे 'हूण' भी कहते थे। यह रजत मुद्रा १६

कनिष्ठो दुष्टधीः पापनिष्ठोऽस्मादचिरात् ।
नष्टा स्यात् तत् सुत श्रेष्ठ जानेकमपि नोचितम् ॥ १०६ ॥

१०६ 'दुष्ट-बुद्धि कनिष्ठ पापनिष्ठ है, इससे शीघ्र ही सभा (दरबार) नष्ट हो जायगी अतएव किसी पुत्र को श्रेष्ठ एव उपयुक्त नही मानता।

मया तावत् स्वय राज्य कस्मा अपि न दीयते ।
गते मयि बल यस्य स प्राप्नोत्विति मे मतम् ॥ १०७ ॥

१०७ 'जीवन पर्यन्त मैं स्वय राज्य[१] किसी को न दूँगा। मेरे मरने पर, जिसके पास बल हो वह प्राप्त करे, यही मेरा मत है।

बहवो न मरिष्यन्ति यदि तन्मम को गुणान् ।
ज्ञास्यिष्यति यतः स्थित्या द्वयोर्भेदो हि लभ्यते ॥ १०८ ॥ कुलकम् ॥

१०८ 'यदि बहुत से मरेंगे नही, तो मेरे गुणो का कौन जानेगा, क्योंकि दोनो के ठीक प्रकार से स्थित रहने पर, (उनमे) भेद हो होता है।

ध्वान्त पतेद्यदि न दिक्षु जनस्य दृष्टि-
र्नश्येन्न चेद्यदि मुषन्ति न तस्कराद्याः ।
सङ्कोचमेति गुणवान् यदि नाम नासौ
जानाति यो दिनमणि परलोकयातम् ॥ १०९ ॥

१०९ 'यदि दिशाओ मे अन्धकार न छा जाय, लोगो की दृष्टि नष्ट न हो जाय, यदि चौरादि चोरी न करें, गुणवान (कमल ?) सकुचित न हो, तो ऐसा कौन होगा जो सूर्य को परलोक गमन जानेगा ?

कार्षापण के बराबर होता था। यदि कार्षापण ताम्र का होता था तो अस्सी रत्ती सुवर्ण का १६ मासा यदि रजत या चाँदी का था तो १८ पण या १२८० कौडियों के मूल्य का होता था। एकमत से १ पण की कीमत प्राचीनकाल में ८० कौड़ी होती थी। (लीलावती) रजत कर्षापण का १११६वाँ भाग मूल्य होता था। कृत्यकल्पतरु व्यवहार काल के अनुसार सुवर्ण का १/४८ भाग होता था।

स्थानभेद से कर्ष कही ८० रत्ती कही १ तोला और कही १०० या १२० रत्ती तौल माना गया है।

पाद टिप्पणी

१०७ (१) राज्य तबकात अकबरी में उल्लेख है— सुल्तान ने अपने पुत्रो में से किसी को राज्य के लिए नही चुना (४४५-६७०)।'

फिरिश्ता लिखता है— सुल्तान ने (राज्य उत्तराधिकार) हेतु किसी को नामजद करना तथा अपने जीवित रहते किसी को राज्य देना अस्वीकार कर दिया (४७४)।'

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में लिखा गया है—राजा ने मन्त्रियो की सलाह (राज त्याग) नही माना (३ २८४)।

स्ववीर्येणार्जितं राज्य योजित स्वधिया मया ।
कुपुत्रैर्नाशित सर्वं परस्परविरोधिभिः ॥ ११० ॥

११० मेन अपने वीर्य से राज्य को अर्जित किया अपनी वुद्धि से योजित किया, परस्पर विरोधी पुत्रो ने सर्वनाश कर दिया।

सप्ताङ्ग धातुसवद्ध राज्य देहमिवोर्जितम् ।
दोषैरिवैतैः पुत्रैर्मे त्रिभिः सदूषत नु यत् ॥ १११ ॥

१११ 'क्योकि सप्तधातु' सम्बद्ध देह सदृश, सप्ताग' अर्जित, राज को त्रिदोषो[3] के समान, मेरे इन तीनो पुत्रो ने सन्दूषित कर दिया है।

तत्स्वास्थ्यमासादयितु शक्ताः पथ्यचिकित्सया ।
मन्मन्त्रिणोऽगदकारा न सन्त्यद्यतने क्षणे ॥ ११२ ॥

११२ 'पथ्य' चिकित्सा द्वारा उस स्वस्थ कराने म मेरे मन्त्री रूप वैद्य, इस समय समर्थ नही हैं।

भुक्ता भोगाश्चिर शास्त्रगीतकाव्यविनोदनैः ।
वयः सफलतां नीत कार्यं किमपि नास्ति मे ॥ ११३ ॥

११३ 'शास्त्र', गीत, काव्य के विनोदपूर्वक चिरकाल तक भोगो का भोग किया, आयु सफल कर लिया, मुझे अब कुछ काय नही है।

पाद टिप्पणी

१११ (१) सप्त धातु द्रष्टव्य १ ७ ६६।

(२) सप्ताग राज्य के सात अग—१ स्वामी (राजा), २ अमात्य, ३ जनपद, (राष्ट भूमि-प्रजा) ४ दुग, ५ कोश, ६ दण्ड (सेना), ७ मित्र।

कौटिल्य के अनुसार सप्ताग ही राज्य की प्रकृतियाँ है—स्वाम्यमात्य जनपद दुग कोश दण्ड मित्राणि प्रकृतय (६ १)। द्रष्टव्य याज्ञवल्क्य १ ३५३ मनु० ९ २९४ विष्णुधमसूत्र० ३ ३३ शान्तिपव ६९ ६४–६५, मत्स्यपुराण २२५ ११, २३९, अग्निपुराण २३३ १२, कामन्दक० १ १६, ४ १–२।

(३) त्रिदोष वात, पित्त एव कफ का एक साथ प्रकुपित हो जाना त्रिदोष माना गया है। इन तीनों क प्रकोप से सन्निपात जैसी प्राणघातक व्याधि उत्पन्न हो जाती है।

पाद टिप्पणी

११२ (१) पथ्य चिकित्सा का एक अग है। रोग में खान-पान पर नियन्त्रण एव चिकित्सा शास्त्रानुसार खान पान के प्रयोग से तात्पय है। रोगी के लिए हितकर वस्तु किंवा आहार है। ओषधि म कोई लाभ नही होता यदि रोगी कुपथ्य करता है—कारिक पथ्य विराध इक रोगी त्यागत प्रान।

(भा० हरिश्चन्द्र)

स्वास्थ्यप्रद स्वास्थ्य-वधक कल्याणकारी आहार किंवा रोगी के अनुकूल खान-पान से तात्पय है। उन पदार्थों के समूह से अथ है जो किसी रोग में स्वास्थ्य-वधक या हानिकर मान जाते है।

पाद टिप्पणी

११३ (१) शास्त्र यहाँ शास्त्र से अथ

देशस्य यावत्युत्पत्तिर्नवा तत्त्रिगुणा मया ।
संपादिता प्रजास्नेहात् कुल्याकर्षणयुक्तिभिः ॥ ११४ ॥

११४ 'प्रजा स्नेहवश नहर लाने की उक्तियो से, देश की जितनी उत्पत्ति थी, उसका तिगुना मैंने नया सपन्न कर दिया ।

सर्वदर्शनरक्षार्थं पात्राण्यालोच्य सर्वतः ।
प्रतिपद्य शुभे काले भूर्नवा धर्मसात्कृता ॥ ११५ ॥

११५ 'सब दर्शनो' की रक्षा के लिये, चारो ओर से उचित पात्रो (विद्वानो) का विचार कर, उन्हे आमन्त्रित करके, शुभमुहूर्त म नवीन भूमि को धर्मार्थ प्रदान किया ।

सच्छिद्रमधुना राज्यं वदने रदनोपमम् ।
तुदति प्रत्यहं तस्मात् तत्त्यागेन सुखं मम ॥ ११६ ॥

११६ 'इस समय मुख मे दाँत सदृश, राज्य छिद्रपूर्ण हो गया है। प्रतिदिन पीडा देता है, इसलिये उसके त्याग से सुख होगा ।

चौराणामिव दीपोऽहं येषामक्षिगतोऽस्म्यहम् ।
अचिरान्मद्गुणस्थित्या ते स्युरनुशयार्दिताः ॥ ११७ ॥

११७ 'चोर के नेत्र म दीपक तुल्य, जिनके नेत्रो मे मैं पड गया हूँ, वे शीघ्र ही मेरे गुणो की स्थिति हेतु पश्चाताप से पीडित होगे ।

स्थास्यन्ति न चिरं तेऽपि मद्द्विष्टा ये सुतादयः ।
सकलाः प्रलयं यान्ति भुक्त्वा धान्यफलं न किम् ॥ ११८ ॥

११८ 'मेरे द्वेषी जो सुतादि हैं, व भी चिरकाल तक स्थित नही रहेंगे, धान्य फल (संपत्ति) का भोगकर, क्या सब लोग नष्ट नही हो जाते ?

केवल सस्कृत लिखित ग्रन्थ नही किन्तु अरबी एव फारसी में लिखित ग्रन्थ से भी लगाना चाहिए । सुल्तान फारसी का लेखक था । सस्कृत जानता था । परन्तु उसके सस्कृत की किसी रचना का पता नही चलता । शास्त्र का अभिप्राय यदि धर्म ग्रन्थ से लगाया जाय, तो सुल्तान सच्चा मुसलमान था । अपने धर्म पर दृढ रहते, दूसरे धर्म का आदर करता था । हिन्दू मुसलमान सभी के धर्म ग्रन्थ किंवा शास्त्र का अध्ययन करता था ।

पाद-टिप्पणी

११५ (१) दर्शन दर्शन का अर्थ यहाँ पर मत-मतान्तर, धर्म एव सम्प्रदाय लगाना चाहिए द्र० २ ९६, १२८ ।

पाद टिप्पणी

११७ पाठ–बम्बई ।

पाद टिप्पणी :

११८ पाठ–बम्बई ।

युक्त्या निर्याणमेवास्य जीवस्येच्छामि साम्प्रतम् ।
येन सर्वे भविष्यन्ति पुत्राः पूर्णमनोरथाः ॥ ११९ ॥

११९ 'इस समय युक्ति से इस जीवन के निकल जाने की ही इच्छा करता हूँ, जिससे सब पुत्रो का मनोरथ पूर्ण हो जायगा ।

श्रुत्वेत्युक्तिं सदुःखस्य नृपतेस्तेऽब्रुवन् पुनः ।
देवेदं चेन्मतं तत्किं कोशोऽयं रक्ष्यते महान् ॥ १२० ॥

१२० दु खी राजा के इस कथन को सुनकर, वे पुन बोले—'हे ! देव !! यदि यही निर्णय है, तो क्यो इस महान कोश की रक्षा कर रहे हो ?

परलोकस्य पाथेयं कुरु जीवन् स्वयं व्ययम् ।
तदाकर्ण्याब्रवीद्राजा युक्तमुक्तमिदं वचः ॥ १२१ ॥

१२१ 'जीते जी स्वय व्यय कर, परलोक का पाथेय बना लो ।' यह सुनकर, राजा ने कहा—'यह बात आपलोगो ने ठीक कही है ।'

किंतु शृण्वन्तु मे हेतुं यत् कोशोऽयं धृतो भृतः ।
मयि प्रमीते मद्राज्यं मत्पुत्रः कोऽपि चेल्लभेत् ।
मत्सचयेन तृप्तः स प्रजायाः स्वं त्यजिष्यति ॥ १२२ ॥

१२२ 'मेरा वह हेतु सुनिये, जिससे यह पूर्ण कोश धारण किये हूँ । मेरे मरने पर मेरा राज्य यदि कोई मेरा पुत्र प्राप्त करेगा, तो मेरे सचय से तृप्त होकर, प्रजा का धन त्याग देगा ?

पुत्राधिका प्रजेयं मे रक्षणीया विभाति या ।
तस्याः पीडां भविष्यन्तीं हरिष्ये सचयादतः ॥ १२३ ॥

१२३ 'मुझे यह प्रजा पुत्र से अधिक रक्षणीय प्रतीत होती है, अत इस सचय से उसकी भावी पीडा का हरण करूँगा ।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–बम्बई ।

१२१. (१) स्वय राजा ललितादित्य ने अपने वशजों तथा देशवासियो के लिए वसीयत लिखा था । श्रीवर ने उसी शैली का यहाँ अनुकरण किया है (रा० : ४ ३४१–३६२) ।

पाद टिप्पणी

१२२ पाठ–बम्बई ।

पाद टिप्पणी

१२३ (१) पाठ श्लोक सख्या १२२ का तृतीय तथा १२३ का दोनो पद मिलकर कलकत्ता की पक्ति ६४८ का पूर्ण दो पद और पक्ति ६४९ का एक पद से तीन पदीय श्लोक बनता है ।

पूर्णो विलासान् कुरुते प्रजेशो
रिक्तः प्रजापीडनमातनोति ।
तृप्तो मृगेन्द्रो रमते गुहान्त-
र्भुङ्क्ते क्षुधार्तो वनजन्तुवर्गम् ॥ १२४ ॥

१२४ 'राजा पूर्ण होने पर, विलास करता है, रिक्त होने पर, प्रजा पीडन करता है, तृप्त सिंह गुहा म रमता है और क्षुधार्त (सिंह) वन क जन्तु वर्ग को खाता है।

मत्सचयोपकारेण भाविभिः पीडनोज्झितैः ।
आयतिज्ञ वदद्भिर्मां करिष्यन्ते न गर्हणाः ॥ १२५ ॥

१२५ 'मेरे सग्रह के उपकार से, भावी पीडा रहित जन उत्तरकाल के ज्ञाता, मेरी गर्हणा (निन्दा) नही करेंगे।

पूर्णाद्राजगृहादन्ये पूर्णाः स्युरुपकारकाः ।
नयन्त्यब्धेर्न चेत्तोय भूमौ वर्षन्ति किं घनाः ॥ १२६ ॥

१२६ 'पूर्ण राजगृह से अन्य उपकारी पूर्ण होएँ, यदि घन समुद्र से जल न ले जाते, तो भूमि पर क्या बरसते ?

इय या सामग्री भवति नृपतेः सर्वरुचिरा
धनेनैकेनैव प्रभवति चिर सा प्रभवता ।
फल पत्र पुष्प समुदयति यद्यद्विटपिनो
धरण्यन्तर्भूतो जनयति तदेको रसगुणः ॥ १२७ ॥

१२७ 'सर्वरुचिकर राजा को, जो सामग्री होती है, वह चिरकाल से उत्पन्न होनेवाले केवल धन के द्वारा होती है। वृक्ष से फल, पत्र, पुष्प, जो कुछ निकलता है, वह सब पृथ्वी के अन्दर रहनेवाला रसगुण ही करता है।'

सुदीर्घदर्शिनो वाक्य श्रुत्वेति पृथिवीपतेः ।
आसस्तच्चोद्यकर्तारस्तदग्रे ते निरुत्तराः ॥ १२८ ॥

१२८ इस प्रकार, दीर्घदर्शी राजा का वाक्य सुनकर, उसकी प्रेरणा से कार्य करनेवाले, वे सब मन्त्री, उसके समक्ष निरुत्तर हो गये।

पाद टिप्पणी
१२४ 'गुहान्तर' पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी
१२७ 'समुदयति' पाठ–बम्बई ।

पाद टिप्पणी
१२८ सु' पाठ–बम्बई ।

राजवेश्मनि पयोनिधौ च या
वाहिनीभृति पदार्थपूर्णता ।
जीवनाप्तजनयाचकाचिता
सैव तस्य सुषमा समाहिता ॥ १२९ ॥

१२९. वाहिनी (सेना) या नदियों से पूर्ण राज्य गृह एवं समुद्र में पदार्थों की जो पूर्णता होती है, याचकजन आकर, अपने जीवन के लिये, जिसकी याचना करते हैं, वही उसकी सुस्थिर शोभा है।

यद्यदुक्तं नरेन्द्रेण स्मृत्वा तत्तत् फलेक्षणात् ।
न कः शंसति शोकार्तस्तदीयां दीर्घदर्शिताम् ॥ १३० ॥

१३०. राजा ने जो जो कहा, फल देखने से, उसका उसका स्मरण करके, कौन शोकार्त होकर, उसके दीर्घदर्शिता की प्रशंसा नहीं की ?

सचिवाः सेवकाः पुत्रमित्रसंबन्धिबान्धवाः ।
दुःखापनोद कुर्वाणाः केऽपि नासन् महीभुजे ॥ १३१ ॥

१३१. सचिव, सेवक, पुत्र, मित्र, सम्बन्धी, बान्धवगण, कौन-से लोग राजा का दुःख दूर करने का उपाय नहीं कर रहे थे ?

राजा गर्भगृहान्तःस्थः शृण्वन् पुत्रस्थितिं मिथः ।
कृतकप्रेमवैराढ्यां न बहिर्निरयाद्भिया ॥ १३२ ॥

१३२. राजा गर्भगृह[1] (केन्द्रीय गृह) में स्थिर रहकर, कृत्रिम प्रेम से एवं वैर समृद्ध युक्त पुत्र की स्थिति सुनते हुए, भय से बाहर नहीं निकलता था।

संसारदुःखशान्त्यर्थं मत्तो व्याख्यानवेदिनः ।
अशृणोद् गणरात्रं स श्रीमोक्षोपायसंहिताम् ॥ १३३ ॥

१३३. व्याख्यानवेत्ता मुझ[1] (श्रीवर) से, संसार दुःख की शान्ति के लिये, अनेक रात्रियों में, *श्री मोक्षोपाय संहिता*[2] सुनी।

पाद-टिप्पणी :

१३२ (१) गर्भगृह : अन्तःपुर। घर के भीतर का कमरा या घर का मध्य भाग। मन्दिर का वह कक्ष जिसमें देव प्रतिमा रहती है।

पाद-टिप्पणी :

१३३ (१) मुझ : श्रीवर स्थान-स्थान पर सुल्तान से अपने सन्निकट होने का उल्लेख करता है। राजा को वह योगवासिष्ठ रामायण सुनाता था, इसका उल्लेख उसने १ : ५ : ८०, गीतगोविन्द सुनाने एवं गाने का उल्लेख १ : ५ : १०० तथा मोक्षोपाय सुनाने का उल्लेख १ : ७ : १३९ में करता है।

(२) मोक्षोपाय संहिता : विभिन्न दर्शन सम्बन्धी ग्रन्थों से यहाँ तात्पर्य है। जिनमें मोक्ष

स्वकण्ठस्वरभङ्ग्याह वद्वृत्तपरिवर्तनैः ।
व्याख्यामकरव येन निःशोकोऽभूत् क्षणं नृपः ॥ १३४ ॥

१३४ मैंने अपने कण्ठस्वर की भंगिमा से उसका वृत्त परिवर्तन करके, व्याख्या किया जिससे राजा क्षणभर के लिये शोकरहित हो गया।

भ्रमस्य जाग्रतस्तस्य जातस्याकाशवर्णवत् ।
अपुनः स्मरणं साधोर्मन्ये विस्मरणं वरम् ॥ १३५ ॥

१३५ आकाश वर्ण सदृश जाग्रत सज्जन व्यक्ति का आकाश वर्ण सदृश, उस भ्रम (माया) का पुनः स्मरण न करना तथा विस्मरण कर जाना श्रेष्ठ है।

दीर्घस्वप्नोपमं विद्धि दीर्घं वा प्रियदर्शनम् ।
दीर्घं वापि मनोराज्यं संसारं रघुनन्दन ॥ १३६ ॥

१३६ हे! रघुनन्दन[1] !! संसार को दीर्घकालिक स्वप्न सदृश अथवा दीर्घकाल का प्रिय दर्शन अथवा दीर्घकालिक मनोराज्य जानिये।

यदि जन्म जरा मरणं न भवेद्
यदि वेष्टवियोगभयं न भवेत् ।
यदि सर्वमनित्यमिदं न भवे
दिह जन्मनि कस्य रतिर्न भवेत् ॥ १३७ ॥

१३७ यदि जन्म जरा मरण न हो अथवा यदि इष्ट वियोग न हो यदि वह सब अनित्य न हो तो इस जन्म में किसको रति नहीं होती ?

यतो यतो निवर्तेत ततस्ततो विमुच्यते ।
निवर्तनाद्धि सर्वतो न वेत्ति सुखमण्वपि ॥ १३८ ॥

१३८ 'जैसे जैसे नृवृत्त (निवर्तित) होता है वैसे वैसे मुक्त होता है। चारों ओर से निवृत्त हो जाने से अणुमात्र सुख का अनुभव नहीं करता।

प्राप्ति के उपायों का वर्णन किया रहता है। द्रष्टव्य १ ७ १३९ २ २१५।

पाद टिप्पणी

१३४ स्व पाठ-बम्बई।

पाद टिप्पणी

१३६ (१) रघुनन्दन योगवाशिष्ठ रामायण में रघुनन्दन सम्बोधन में राम की शंका का समाधान किया गया है। श्रीवर ने वही शैली यहाँ अपनाया है। इसमें प्रकट होता है कि श्रीवर जैनुल आबदीन को योगवाशिष्ठ रामायण सुना रहा था। दूसरा इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि जैनुल आबदीन को अवतार श्रीवर मानता था अतएव उसने उसके लिए रघुनन्दन सम्बोधन का प्रयोग किया है।

मद्व्याख्याश्रवणाभ्यस्तान् स्वावस्थासूचकान् बहून् ।
इत्यादिकान् स्वयं श्लोकानपठत् स महीपतिः ॥ १३९ ॥

१३९ वह राजा मेरी व्याख्या सुनने से, स्मृत तथा अपने अवस्था के सूचक, इस प्रकार के बहुत से श्लोको को स्वयं पढा।

मोक्षोपाये श्रुते मत्तस्तत्तत्पदार्थभावनात् ।
अथैकदाब्रवीद् राजा विबुधानन्तिकस्थितान् ॥ १४० ॥

१४० मुझसे मोक्षोपाय[1] सुनने पर, तत् तत् पदार्थो को भावना करके, राजा ने समीपस्थ विद्वानो से कहा—

किमर्थं स्वसुतस्नेह करोष्येको न तेहितः ।
इत्येव वक्ति मे नूनं कर्णोपान्तागतो जनः ॥ १४१ ॥

१४१ 'किस लिये अपने पुत्रो पर प्रेम कर रहे हो ? उनमे एक भी तुम्हारा हितैषी नही है—?' इस प्रकार कर्ण (कान) के समीप आगतजन मानो मुझसे कह रहे हैं।

अस्थि दन्तादिभिर्भङ्क्त्वा मांसं मांसेन भुज्यते ।
रक्तबीजमये भोगे भ्रमोऽयं न व्यपैति मे ॥ १४२ ॥

१४२ 'दाँतो आदि से अस्थि (हड्डी) तोडकर, मास से मास खाया जाता है। रक्त, बीज-मय भोग मे मेरा यह भ्रम दूर नही हो रहा है।

अहो मयि मृदौ सर्वसुखदे छिद्रकारिणः ।
नाशायामी सुता जाता राङ्कवे क्रिमयो यथा ॥ १४३ ॥

१४३ 'आश्चर्य है! कोमल एव सर्वसुखद मुझमे छिद्रकारी, ये पुत्र नाश के लिये, उसी प्रकार उत्पन्न हो गये हैं, जिस प्रकार राकव[1] म कृमि उत्पन्न हो जाता है।

पाद-टिप्पणी

१४० (१) मोक्षोपाय द्रष्टव्य टिप्पणी श्लोक १ ■ १३२।

पाद टिप्पणी

१४१ (१) जन जन के स्थान पर जरा शब्द रखना और अच्छा होगा। किन्तु इसका कोई आधार नही मिल रहा है। इस स्थिति में अर्थ होगा—आगत जरा (वृद्धावस्था) मानो मुझसे कह रही है। श्री दत्त ने जरा या जन के स्थान पर 'कोई' 'समवन' भावानुवाद किया है।

जै रा २८

पाद टिप्पणी

भङ्क्त्वा = पाठ–बम्बई।

श्री दत्त ने राकव का अर्थ ऊनी वस्त्र लगाया है।

१४३ (१) राकव राकव का अर्थ कम्बल भी होता है। ऊनी वस्त्रों शाल, कम्बल गलीचा आदि को कृमि काट कर नष्ट कर देती है। आधुनिक अनुसन्धानों के कारण मोथप्रूफ कम्बलादि बनने लगे है जिनमें कीटाणु नही लगते।

राकव कम्बल रकु जाति के हरिण के ऊन स बनता है। विक्रमाङ्कदेवचरित में विल्हण ने इसका उल्लेख किया है (१८ ३१)

यैः समं स्ववयो नीतं तेऽवशिष्टा न केचन ।
आजीवनं चलत्येषा तद्वियोगविषव्यथा ॥ १४४ ॥

१४४ 'जिन लोगो के साथ अपनी आयु व्यतीत किया, वे कोई नही बचे हुए हैं, उनके वियोग की विष व्यथा आजीवन चल रही है ।

देहोटजमिदं जीर्णं केशतृणगणावृतम् ।
सच्छिद्रं रोचते नाद्य दुर्दिने मन्मनोमुनेः ॥ १४५ ॥

१४५ 'देहरूप यह कुटीर, जो कि केशरूप तृणो से आच्छादित है, जीर्ण एवं छिद्रयुक्त हो गयी है । मनरूप मुनि को यह रुचिकर नही लग रहा है ।'

भुजगैरिव दष्टानि राज्याङ्गानि सुतैर्मम ।
तत्त्यागोपाय एवैको युक्तो मे नान्यथा सुखम् ॥ १४६ ॥

१४६ 'सर्पों के समान मेरे पुत्रो ने राज्यांग को डस लिया है । उनका त्याग ही एक मात्र उचित उपाय है, अन्यथा मुझे सुख नही ।'

इत्यादि चिन्तयन् राजा पारसीभाषया व्यधात् ।
काव्यं शीकायताख्यं स सर्वगर्ह्यार्थचर्वणम् ॥ १४७ ॥

१४७ इस प्रकार सोचते हुए, राजा ने फारसी भाषा मे सबलोगो के निन्दारूप अर्थ को प्रकट करनेवाला 'शिकायत'[1] नामक काव्य लिखा ।

पाद-टिप्पणी

१४५ उक्त श्लोक का कई प्रकार से अनुवाद हो सकता है परन्तु मुझे यही अनुवाद ठीक लगता ठीक है ।

पाद-टिप्पणी

१४७ (१) शिकायत अरबी शब्द है । उपालम्भ या उल्हना से यहाँ अर्थ अभिप्रेत है । योगवाशिष्ठ के आधार पर सुल्तान ने शिकायत शीर्षक ग्रन्थ फारसी में लिखा था ।

जैनुल आबदीन केवल विद्वानों का आदर ही नही करता था, वह स्वयं विद्वान था । वह काश्मीरी, हिन्दी, संस्कृत, फारसी तथा तिब्बती भाषा जानता था । वह संस्कृत में गीत भी गाता था । संस्कृत समझता और बोलता था (म्युनिख पाण्डु० ७३ ए०, तवक्काते अकबरी ४३९ = ६५९ ।

वह विद्वानो का इतना आदर करता था कि किसी पर नाराज होने पर, उसे देश से निर्वासित करने पर भी पुनः बुला लेता था । मुल्ला अहमद निष्कासित कर दिया गया था । वह पखली पहुँचा । वहाँ से चार कविता लिखकर, सुल्तान के पास भेजा । सुल्तान इतना प्रसन्न हुआ कि उसे पुनः काश्मीर में बुला लिया (हैदर मल्लिक पाण्डु० ११७ बी०, ११८ ए०) ।

जैनुल आबदीन ने दो ग्रन्थ फारसी में लिखा था । पहला आतिशबाजी के ऊपर था । उसका नाम नही मालूम है । दूसरे ग्रन्थ का शीर्षक 'शिकायत' था । सुल्तान ने फारसी में कुछ पद्यों की भी रचना की थी ।

राज्ञो धात्रेयपुत्राद्याः प्रमेयैरपि मत्कृताः ।
भूपपक्षं परित्यज्य हाज्यखानमुपागमन् ॥ १४८ ॥

१४८ राजा ने धात्री-पुत्रादि तथा विश्वस्त जन, राजा का पक्ष त्याग कर, हाज्यिखान के पास चल गये ।

किमन्यद् व्यक्तमेवाह्नि ये दृष्टा नृपमन्निधौ ।
अलक्ष्यन्त निशि स्वैरं ते खानाग्रे गतत्रपाः ॥ १४९ ॥

१४९ अधिक क्या कहा जाय, दिन मे जो लोग सुस्पष्ट रूप से राजा के समीप देखे गये, वे निर्लज्ज स्वेच्छापूर्वक रात्रि म खान के समक्ष दिखायी दिये ।

ताटस्थ्येन स्थिते राज्ञि तद्भृत्यानां परस्परम् ।
तत्तदाक्षेपतो देशे कोऽप्यलम्भत विप्लवः ॥ १५० ॥

१५० तटस्थतापूर्वक राजा के स्थित रहने पर, उसके भृत्यो के परस्पर तत्-तत् आक्षेप करने के कारण, देश मे कोई विचित्र विप्लव खडा हो गया ।

भविष्यन्निव साम्राज्यस्यार्धभागी न कस्तदा ।
तत्पुत्रेष्वनुरक्तोऽभून्न तु राज्ञिसुखस्थिते ॥ १५१ ॥

१५१ उस समय अर्ध साम्राज्य के भागीय होने के सदृश, कौन उसके पुत्रो मे अनुरक्त तथा कौन सुखस्थ राजा से विरक्त नही हुआ ?

इत्थं स्वभृत्यसंचारदुराचारविचारणात् ।
परिवारान्निजात् सर्वान्निर्विण्णोऽभून्महीपतिः ॥ १५२ ॥

१५२ इस प्रकार राजा अपने भृत्यो के सचार समस्त दुराचार को विचार कर, अपने परिवार से खिन्न हो गया ।

अद्य ये स्वान्तिके दृष्टाः प्रातः खानान्तिके श्रुताः ।
दार्ढ्यं कुत्रापि नो प्रापुः सारसा इव सेवकाः ॥ १५३ ॥

१५३ आज जो अपने पास दिखायी दिये, प्राय खान के समीप सुने गये, इस प्रकार सारस सदृश सेवक, कही भी स्थिर नहीं हुये ।

हृद्गदो वर्ण्यते यस्मै तादृगाश्वासभाजनम् ।
तत्कालं सेवको भक्तो दृष्टः कोऽपि न भूभुजा ॥ १५४ ॥

१५४ हृदय रोग का जिससे वर्णन किया जाता, ऐसा आश्वासन देनेवाला, कोई भक्त सेवक, उस समय राजा को नही दिखायी दिया ।

यन्नोक्तं यच्च नो दृष्टं यच्छ्रुतं वा कदाचन ।
निर्यन्त्रणो जनः प्रोचे प्रत्यहं राजमन्दिरे ॥ १५५ ॥

१५५ 'जैसा कभी कहा नहीं गया, देखा अथवा सुना नहीं गया,'—इस प्रकार अनियन्त्रित जन राजमन्दिर में कहते थे ।

स्वभ्रातृकलहैकाग्रस्तत्तत्पैशुन्यकर्मणा ।
बहामखानोऽनर्थानां कर्णो मूलमिवाभवत् ॥ १५६ ॥

१५६ उन-उन पैशुन्यपूर्ण कार्यों से, अपने भाइयों के कलह से, एकाग्र बहराम खान कर्ण[1] के समान, अनर्थों का मूल था ।

स्निग्धोऽयमित्यवगते यदि काष्ठखण्डे
दत्तप्रदीपपदवीपरिदीपिताशे ।
किं स ज्वलन्नपि करोति चिरं प्रकाशं
दोषं न कं वितनुते निजकज्जलौघैः ॥ १५७ ॥

१५७ स्निग्ध है, यह ज्ञात होने पर, काष्ठ खण्ड को दीपक की पदवी देकर, दिशाओं के प्रकाशित किये जाने पर, क्या वह जलने पर भी अधिक प्रकाश करता है ? और अपने कज्जल पुंजों से कौन-सा दोष नहीं फैलाता ?

प्राप्तस्त्राणाय राज्ञोऽयमित्याशा यन्निवेशिता ।
अभूदादमखानः स वित्राणोऽप्यात्मरक्षणे ॥ १५८ ॥

१५८ 'राजा की रक्षा के लिये वह आया है'—इस प्रकार की जो आशा हुई, वह रक्षा-रहित, आदम खान आत्मरक्षा में भी समर्थ नहीं हुआ ।

पाद-टिप्पणी

१५६ (१) कर्ण : महारथी कर्ण की तुलना श्रीवर बहराम खाँ से करता है । कर्ण यद्यपि दानी था परन्तु महाभारत में उसका जो चरित्र-चित्रण किया गया है, उससे प्रकट होता है कि दुर्योधन को एकमात्र कर्ण की वीरता तथा निष्ठा पर ही गर्व था । कर्ण की वीरता को अपनी शक्ति मानकर दुर्योधन ने सबकी उपेक्षा की थी । कर्ण यदि न होता, तो उनके अनर्थों का सृजनकारक दुर्योधन शायद अपने कार्यों से विरत ही रहता । महाभारत युद्ध में भी भीष्म, द्रोणाचार्य आदि कौरवों की ओर से रहते हुए भी सहानुभूति पाण्डवों से रखते थे । परन्तु कर्ण ठोस पत्थर की दीवाल की तरह अडिग दुर्योधन के साथ अन्त तक लगा रहा । द्र० : १ : १६६, १ : ७ : १४० ।

पाद-टिप्पणी

१५७. 'दत्त'. पाठ—बम्बई ।

भ्रात्रा मम जिघांसुर्मां वहामो द्वैधनिष्ठुरः ।
अहमेकोऽबलस्तन्मे गतिः कान्या त्वया विना ॥ १५९ ॥

१५९ 'भाई के साथ द्वेष निष्ठुर, बहराम खां मुझे मार डालना चाहता है। मैं अकेला एवं निर्बल हूँ, इसलिये तुम्हारे (राजा) बिना मेरे लिये कौन दूसरी गति है ?

नास्त्यस्मान्मे स्वजीवाशा तत् स्वात्मा रक्ष्यतां विभो ।
त्वयि जीवति राज्यस्थे भयं मम न विद्यते ॥ १६० ॥

१६० 'इससे अपने जीवन की आशा नहीं है। अत हे ! स्वामी !! अपनी रक्षा कीजिये, तुम्हारे राज्य पर स्थित रहकर, जीवित रहते मुझे भय नहीं है।

कुर्वन्त्यन्ये तदास्कन्दमद्यान्योन्यरणोद्यताः ।
इत्यादिवार्तां शृण्वन् स बभूव भयविह्वलः ॥ १६१ ॥

१६१ 'आज एक दूसरे को लड़ाने के लिये उद्यत, अन्य लोग आक्रमण कर रहे हैं।' इस प्रकार का समाचार सुनकर, वह भयभीत हो गया।

इत्थमादमखानेन कदाचिज्ज्ञापितो नृपः ।
ऊचे तं नास्ति मे लोभो राज्ये वा निजजीविते ॥ १६२ ॥

१६२ इसी समय इस प्रकार आदम खान के कहने पर, राजा ने उससे कहा—'राज्य अथवा अपने प्राण के रहने से मुझे लोभ नहीं है।

गच्छ कापुरुषात्र त्वं विघ्नार्थं किमिहागतः ।
इत्थं निर्भर्त्सितः पित्रा कुत्रदीनपुरीं गतः ।
अनुजास्कन्दभीतोऽभूत् स्वरक्षणकृतक्षणः ॥ १६३ ॥

१६३. ' हे ! कायर पुरुष !! जाओ अपनी रक्षा करो। विघ्न के लिये क्यों यहाँ आये हो ?' इस प्रकार पिता द्वारा निर्भर्त्सित होकर, कुत्रदीनपुर[1] (आदम खान) चला गया और अपनी रक्षा हेतु सचेष्ट होकर, अनुज के आक्रमण से भयभीत रहने लगा।

पाद-टिप्पणी :

१५९. कलकत्ता एवं बम्बई के शब्द 'विभामुंभ्' अर्थ की दृष्टि से कर्ता का विशेषण होता है। उसे 'विभासु' होना चाहिए।

पाद-टिप्पणी

'कुद्द' के लिए 'कुत्र' पाठ मिलता है।

१६३. (१) कुत्रदीनपुर कुतुबुद्दीनपुर। 'आदम खाँ ने अपने बाप से इजाजत लेकर अपने भाइयों से अलग-अलग रहकर कुतुबुद्दीनपुर में अकामत अख्तियार किया (पीर हसन० १८५)।

सुल्तान ने आदम खाँ को कायर कहकर और सहायता करने से इनकार कर दिया। आदम कुतुबुद्दीनपुर चला गया और सावधानी से रहने लगा (म्युनिख पाण्डु० ७६ बी०)।

फिरिश्ता लिखता है—राज्य की अवस्था बिगड़ती देखकर अमीरों ने गुप्तरूप से सन्देश भेजकर

लब्धेऽमुष्मिन् भवति हि सुख सर्वदैवेति बुद्धया
य सहर्तुं रिपुकृतभियो रक्षणीयोऽवभाति ।
तत् तन्त्रस्थो यदि भवति स स्वात्मरक्षास्वशक्तो
भाण्डत्रासादिव तुरगत प्रत्युतोपद्रव स्यात् ॥ १६४ ॥

१६४ इसके प्राप्त होने पर निश्चय ही सदैव सुख होगा इस बुद्धि स शत्रुकृत भय दूर करने के लिये जो रक्षणीय प्रतीत हो रहा है अपनी रक्षा म असक्त वह यदि तन्त्रस्थ (शासनारूढ) होता है तो उसी प्रकार उपद्रव उठ खडा होगा, जैसे भाण्ड द्वारा त्रस्त अश्व से ।

पित्रास्मदर्थमानीतो ज्येष्ठो द्विष्टो भयाय नौ ।
इति क्रुद्धौ सुतौ श्रुत्वा चकितः स नृपोऽभवत् ॥ १६५ ॥

१६५ 'पिता द्वारा लाया गया, द्वेषी ज्येष्ठ (पुत्र) हम दोनो के भय के लिये है'—इसके कारण दोनो पुत्रो को क्रुद्ध हुआ सुनकर राजा चकित हो गया ।

राजा च राजपुत्राश्च तदमात्यपुरोगमाः ।
अन्योन्याशङ्किताः सर्वे न निद्रामुपलेभिरे ॥ १६६ ॥

१६६ राजा और उसके मन्त्रियो द्वारा अग्रसारित सब राजपुत्र परस्पर आशङ्कित होकर, निद्रा नही प्राप्त किये ।

भोगोपचार सत्यज्य तत्काल तेपु सेवकाः ।
यत्तज्जिह्वोपकारेणारञ्जयन् स्वामिनो निजान् ॥ १६७ ॥

१६७ उस समय सेवक उनके (राजा राजपुत्रो) प्रति भोगोपचार त्याग कर, केवल जिह्वोपकार द्वारा, अपने स्वामी का रजन कर रहे थे ।

कर्तव्यमादिशत् किंचिद्यत् स भृत्यान् क्षणान्तरे ।
अवोचत् कृतकर्तव्यान् किमुक्त न स्मराम्यहम् ॥ १६८ ॥

१६८ वह जो कुछ करने के लिये भृत्यो को आदेश देता, (पुन) क्षणभर पश्चात कार्य कर लेने पर, उनसे कहता—मैंने क्या कहा स्मरण नही' ।

स्वहस्ताक्षरसम्पन्नां त्यक्त्वा रीतिं पुरातनीम् ।
ज्ञात्वा प्रकृतिवैगुण्य चक्रे तन्त्र स मन्त्रिसात् ॥ १६९ ॥

१६९ उसने अपने हस्ताक्षर[१] से सम्पन्न प्राचीन रीति त्याग कर और प्रकृति वैगुण्य[२] (अपने दोष) को जानकर, शासन को मन्त्रियो के हाथ कर दिया ।

आदम खाँ को काश्मीर बुलाया । आदम खाँ राज धानी में पहुँचा । सुल्तान के यहाँ गया परन्तु सुल्तान ने उसे क्षमा करना अस्वीकार कर दिया (४७३) ।' द्र० १ ३ ८२-८५, १ ७ १९७ ३ १९२ ४ १४५ ।

पाद टिप्पणी

'सदनमिष्त पाठ–बम्बई ।

१६९ (१) हस्ताक्षर सुल्तान राज्यादेशों

यैरस्मत्सदने क्षिप्तः सोऽयं वैरानलः खलैः ।
तच्छमाय कृतोपेक्षा तैस्तैरुभयवेतनैः ॥ १७० ॥

१७० 'जिन दुष्टो ने हमारे घर मे यह वैराग्नि लगाई उन दोनो ओर से वेतनभोगी, लोगो ने ही, उसके समन के लिये उपेक्षा की ।

मद्वर्धितास्ते नश्यन्तु मन्त्रिणस्तनयाश्च मे ।
ये मन्नाशेन तुष्यन्ति राज्यलुब्धा जिघांसवः ॥ १७१ ॥

१७१ 'मेरे द्वारा वर्द्धित, मेरे वे मन्त्री एव पुत्र नष्ट' हो जाय, जो कि राज्य-लोभी तथा हत्या के लिये इच्छुक हैं और मेरे नाश से ही सन्तुष्ट होते हैं ।'

इत्युद्विग्नो महीपालः श्वसन् जपपरायणः ।
प्राप्तदुःखोऽशपत् सर्वं यास्यति स्मृतिशेषताम् ॥ १७२ ॥

१७२ इस प्रकार उद्विग्न एव दु खी राजा जप-परायण' होकर, श्वास लेते हुये, शाप दिया—'उनकी स्मृति मात्र शेष रहेगी ।'

स्वामी विरक्तस्तत्पुत्रा मिथो वैरपरायणाः ।
किमुज्जीव विधेयं नः कष्टमापतितं महत् ॥ १७३ ॥

१७३. स्वामी विरक्त है, उसके पुत्र परस्पर बैर मे तत्पर हैं—'हे ! जीव !! हमलोग क्या करें ? महान कष्ट आ पड़ा है ।'

तथा महत्वपूर्ण कागजों पर स्वय हस्ताक्षर समझ कर करता था । उसका स्वास्थ गिर गया था । वह अपना मन पूर्णतया शासन कार्यों में पुत्रो के विद्रोह के कारण नही लगा सकता था । मनःस्थिति बिगड जाने से उसने मन्त्रियो को यह कार्य-भार दे दिया था । इसका दूसरा भाव यह भी हो सकता है कि सुल्तान इतना अस्वस्थ था कि वह हस्ताक्षर करने में असमर्थ था । सम्भव है दुर्बलता के कारण उसका हाथ काँपता रहा होगा और वह हस्ताक्षर नही कर पाता था । अतएव यह कार्य-भार भी मन्त्रियों को सौंप दिया ।

(२) प्रकृति वैगुण्य · अस्वस्थता ।

पाद-टिप्पणी

१७१. (१) नष्ट : आइने अकबरी में अबुल फजल ने जैनुल आबदीन की भविष्यवाणी का उल्लेख किया है—उसने कहा था कि चक जाति के राजकाल में काश्मीरियो के हाथ से राज्य निकल कर हिन्दुस्तान के सुल्तानों के हाथों में चला जायगा । बहुत दिनो के बाद यह बात पूरी हुई थी (पृष्ठ ४३९) ।

पाद-टिप्पणी

१७२ (१) जपपरायण जैनुल आबदीन तसबीह या माला फेरता था । जप करता था । मृत्यु काल में भी उसके ओष्ट जप में हिलते थे द्रष्टव्य० १ ७ · २१६ ।

पाद-टिप्पणी :

१७३ उक्त श्लोक श्रीकण्ठ कौल सस्करण में श्लोक सख्या १७२ का प्रथम दो पाद है ।

इत्थं पौरजनः सर्वश्चुक्रोशातितरां तदा ।
यवनव्रतमासाप्तौ त्यक्तमांसाशनो नृपः ॥ १७४ ॥

१७४ इस प्रकार उस समय सब पुरवासी रोने लगे। यवनो (मुसलमानो) के व्रत (रमजान) का महीना आने पर नृप ने मास[1] अशन त्याग दिया।

संदध्यौ च कुपुत्रोऽयं यैरानीतो दिगन्तरात् ।
तैः स्वात्मरक्षिभिः सर्वं राज्यं मे बत नाशितम् ॥ १७५ ॥

१७५ और विचार किया—लोग दिगन्तर से कुपुत्र को लाये हैं, केवल अपनी रक्षा करनेवाले ये लोग दुःख है कि मेरा सम्पूर्ण राज्य नष्ट कर दिया।

एकतः सबलौ पुत्रौ नगरे मिलितौ मिथः ।
एकतः पुत्र एकाकी तन्निष्ठा मन्त्रिणः शठाः ॥ १७६ ॥

१७६ एक तरफ, नगर म सबल दोनो पुत्र परस्पर मिल गये हैं, और एक तरफ, एकाकी पुत्र एवं उसके आश्रित मन्त्री शठ हैं।

पुत्रा युद्धं करिष्यन्ति कष्टमापतितं महत् ।
किं तु दूये पुरी सेयं पाल्या कुलवधूरिव ॥ १७७ ॥

१७७ 'पुत्र युद्ध करेंगे। महान कष्ट आ पड़ा है। किन्तु दुःखी हूँ कि यह पुरी कुलवधू तुल्य पालित है—

मयि जीवति नश्येच्चेत् किं कार्यं जीवितेन मे ।
भक्ताः शक्ता गता भृत्याः किं पृच्छामि करोमि किम् ॥ १७८ ॥

१७८ 'यदि मेरे जीवित रहते, (यह) नष्ट हो जाय, तो मेरे इस जीवन से क्या लाभ ? भक्त एवं शक्त (समर्थ) भृत्य चले गये, क्या पूछूँ और क्या करूँ ?'

पाद टिप्पणी

१७४ उक्त श्लोक श्रीकण्ठ कौल संस्करण के १७२वें तृतीय पद तथा १७३वें का प्रथम पद है। श्लोक संख्या १७५ उक्त संस्करण के अन्तिम दो पदों का योग है।

(१) मांसत्याग: जैनुल आबदीन की प्रवृत्ति उसके जीवन के अन्तिम चरण में सात्विक हो गयी थी। पुत्रों के कारण, उसे जगत से वितृष्णा एवं वैराग्य हो गया था। नैराश्य ने उसे घेर लिया था। निराशा में केवल भगवान की ही एक आशा आस्तिकों को रहती है अतएव सुल्तान धर्म की ओर अधिकाधिक झुकता गया और प्राणि हिंसा से विरत हो गया।

आइने अकबरी में उल्लेख है कि सुल्तान मांस नहीं खाता था (पृष्ठ ४३९)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख मिलता है—'रमजान के मास में सुल्तान मांस नहीं खाता था (पृष्ठ ४३९-६५७)।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री में वर्णन किया गया है—उसने शिकार खेलना वर्जित कर दिया था। रमजान के मास में मांस बिल्कुल नहीं खाता था (३ : २८२)।

पाद टिप्पणी

१७५ (१) दिगन्तर : द्रष्टव्य टिप्पणी : १ : १ : ३९, १ : ३ : ११३, १ : ३ : ७६, १ : ७ : १७७।

इत्यादिचिन्तासंतापजाताधिव्याधिबाधितः ।
विमुक्तराज्यनिर्बन्धः स निःस्पन्द इवाभवत् ॥ १७९ ॥

१७९. इस प्रकार चिन्ता सन्ताप से उत्पन्न आधि-व्याधि पीड़ित, वह (राजा) राज्याग्रह त्याग कर, निःस्पन्द सदृश हो गया।

सबालवृद्धं नगरं क्षुभ्यत् तत्तत्कुवार्तया।
सोऽभूदब्धिमिवोद्वृत्तं समास्थापयितुं क्षमः ॥ १८० ॥

१८०. उमड़े सागर के समान तत् तत् कुवार्ता से बाल-वृद्ध सहित क्षुभित होते नगर[1] को वह (राजा) सम्यक् रूप से व्यवस्थित करने में समर्थ नहीं हुआ।

भोक्तव्यं यन्मया भुक्तं किं भोज्येऽद्य नय द्रुतम्।
आनीतभोज्यमन्येद्युः शिवभट्टं क्रुधाब्रवीत् ॥ १८१ ॥

१८१. 'मुझे जो भोजन करना था, वह कर लिया, शीघ्र ले जाओ'—इस प्रकार दूसरे दिन भोजन लेकर आये हुये, शिवभट्ट से क्रोधपूर्वक (राजा ने) कहा।

अतिचिन्ताकुलो राजा छायायामप्यविश्रमन्।
दुग्धं सून् सचिवान् श्रुत्वा श्रद्दधे न स्वजीवितम् ॥ १८२ ॥

१८२. अति चिन्ताकुल राजा छाया में भी विश्राम न करते हुये तथा मन्त्रियों को भी द्रोह के लिये इच्छुक सुनकर, अपने जीवन पर भी श्रद्धा नहीं किया।

गतसंविदिव स्थित्वा दिनानि कतिचिन्निजैः।
स पृष्टोऽप्युत्तरं राजा न कस्मा अप्युदैरयत् ॥ १८३ ॥

१८३. कुछ दिनों राजा चेतनरहित तुल्य स्थित रहा और आत्मीय जनों के पूछने पर भी किसी का उत्तर नहीं देता था।

पृष्टः प्रकृतिभिः कार्यं सभाप्यानर्थकं वचः।
रुजार्त इव शय्यायां स सुष्वापैकदालसः ॥ १८४ ॥

१८४. एक समय मन्त्रियों द्वारा कार्य पूछने पर, निरर्थक बात कह कर, वह राजा रोग पीड़ित सदृश, शय्या पर सो गया।

नाविदंस्तद्रुजो हेतुं लक्षणं वा चिकित्सकाः।
जानेऽवाच्यां शुचं हर्तुं बभूवानशनव्रती ॥ १८५ ॥

१८५. चिकित्सक उसके रोग का हेतु तथा लक्षण नहीं जान सके, मानो अकथनीय शोक को दूर करने के लिये, वह अनशनव्रती हो गया।

पाद-टिप्पणी

'उद्वृत्तम्' पाठ-बम्बई।

१८० (१) नगर श्रीनगर, द्र० २ जं० रा० २९ ११०, ४ १९४ ३४२। श्रीदत्त ने भी समर्थ नहीं हुआ, अनुवाद किया है।

अत्युन्नतान् सुफलदान् विततोच्चशाखान्
ख्यातान् द्विजप्रियतया शुभमार्गसंस्थान् ।
धाता निपातयति सर्वजनोपयोग्यान्
पृथ्वीधरांस्तरुवरानिव दुष्टवातः ॥ १८६ ॥

१८६ तरुवरों के सदृश, अत्युन्नत, फलप्रद, वितता (विस्तृत) एवं उन्नत शाखाओं से युक्त, द्विजप्रियता के कारण ख्यात, शुभ मार्ग पर स्थित, सर्वजनोपयोगी, पृथ्वीधरों को, दुष्ट वायु समान, विधाता नष्ट कर देता है।

अत्रान्तरे त्रयः पुत्रा दोषा इव महोल्वणाः ।
धातुवद् दूषयामासुर्देशे प्रकृतिसप्तकम् ॥ १८७ ॥

१८७ इसी समय दोष के समान अत्युग्र, तीनों पुत्रों ने धातु[1] सदृश, सप्त प्रकृति[2] युक्त देश में दोष उत्पन्न कर दिया।

मूकप्रायं नृपं तादृगवस्थं द्रष्टुमन्वहम् ।
सशङ्कास्तमुपाजग्मू राजपुत्रा भटोल्वणाः ॥ १८८ ॥

१८८ उस अवस्था में, मूकप्राय राजा को देखने के लिये, सशंकित एवं भटोल्वण (उग्र-भट युक्त) राजपुत्र[1] (राजपूत) प्रतिदिन आते थे।

राजान्तरङ्गास्तत्पुत्रभीत्यै तादृग्दशं नृपम् ।
द्वाराग्रे स्थापयामासुः सर्वदर्शनदित्सया ॥ १८९ ॥

१८९ राजा के अन्तरंग लोगों ने सबको दर्शन देने की इच्छा से तथा उसके पुत्रों के भय हेतु, उस दशा में स्थित, राजा को द्वार पर रख दिया।

स्वस्तिवादध्वनिं श्रुत्वा सबाह्याभ्यन्तरा जनाः ।
द्वितीयेन्दुमिवाद्राक्षुः सानन्दा दर्शनागताः ॥ १९० ॥

१९० स्वस्ति वादनध्वनि सुनकर, दर्शन[1] हेतु आगत, बाह्य एवं आभ्यान्तर के सब लोग, आनन्दपूर्वक द्वितीया के चन्द्रमा सदृश (राजा को) देखे।

पाद टिप्पणी

१८७ (१) धातु द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ ७ : ६६, ११०, ४ ३६२।

(२) सप्तप्रकृति देश किंवा राज्य के सात अंग माने गये हैं—१ स्वामी, २ अमात्य, ३ जनपद या राष्ट्र, ४. दुर्ग (राजधानी), ५ कोश, ६ दण्ड (सेना) तथा ७ मित्र (मनु० ७ १५६, अर्थशास्त्र० ६ २, शुक्र० १ ६१–६२, २ ७०-७३)।

पाद-टिप्पणी

१८८ (१) राजपुत्र श्रीदत्त ने 'राजपुत्र' का अनुवाद 'राजपूत' किया है। यह गलत है। काश्मीर उपत्यका में राजपूत जाति नहीं थी। यदि कोई था भी तो वह अपवाद मात्र था।

पाद-टिप्पणी

१९० (१) दर्शन . साक्षात्कार, मुलाकात या देखने से तात्पर्य है।

श्रुत्वा बहामखानोऽथ चकितोऽन्तिकमागतः ।
गत्वरं लक्षणैर्ज्ञात्वा भूप भ्रातेऽब्रवीदिति ॥ १९१ ॥

१९१ यह सुनकर, चकित बहराम खान (राजा के पास) आया और लक्षणो से राजा को मरणासन्न जानकर, भाई से इस प्रकार कहा—

जीवत्यस्मत्पिता नैव मिथ्यैवोत्थाप्यते विटैः ।
द्वाराग्रात् पतितो भूमौ मूकप्रायो विचेतनः ॥ १९२ ॥

१९ द्वार के अग्रभाग स भूमि पर गिर, मूकप्राय एव चेतना रहित[1] हमार पिता नही जीवित है। विट लोग[2] मिथ्या ही उठा रह हैं—

तबक्कात अकबरी में उल्लेख ह— जब सुल्तान पूणत शक्तिहीन हो गया, तब भी अमीर लोग फितना के भय स सुल्तान क पुत्रों का उस दमन क लिए न आने दत थ। कभी-कभी व सुल्तान को उच्च स्थान पर वह कष्ट की अवस्था म बैठात थ और नक्कार बजवात थ कि सुल्तान स्वस्थ हो गया (४४५ = ६७०)।

तबक्कात अकबरी के एक पाण्डुलिपि म फितना नही है परन्तु दूसरी में है। 'फितना का अथ यहा अशान्ति किया है। द्र० २ ९२, १२८।

पाद टिप्पणी

१९१ भूप' पाठ–बम्बई।

पाद टिप्पणी

१९२ (१) चेतना रहित तबक्कात अकबरी में उल्लेख है—'अन्त में सुल्तान का रोग अब बहुत बढ गया एक दिन और एक रात्रि वह अचत रहा (४४५ = ६७१)।'

फिरिश्ता का वणन कुछ भिन्न है। उसके अनुसार आदम खाँ ने अपने सिपाहियों का नगर के बाहर रख दिया ताकि हाजी खाँ तथा अन्य शत्रुओ की सेना पर दृष्टि रखी जाय तथा स्वय रात्रि सुल्तान के दरबार में व्यतीत किया। हसन खाँ कछी ने भी अमीरो से हाजी खाँ के प्रति वफादारी की प्रतिज्ञा ले लिया था।

(२) विट विट का शाब्दिक अथ कामुक, लम्पट एव वेश्यागामी तथा धूर्त होता है। 'कुट्टनीमतम तथा साहित्यदर्पण में उसक लक्षण दिये गय हैं। वश्योपचार म प्रवीण कुशल मधुरभाषी कविता म दक्ष ऊहापोह में चतुर तथा वाग्मी होता है। शब्दाडम्बर म लोगो का मोहित कर दता है (साहित्यदपण २४ १०४)।

क्षेमेन्द्र ने दर्पदलन के उपदश सख्या पाँच में विट का वणन किया है। विट परदारानुरागी होता है। वह वश्याओं, कुलटाओ तथा कुट्टनियों के निवास स्थान की यात्रा करता रहता है। वह अपनी मूछें मुरेरता रहता है। वह अपन घुघुराल बालों को मस्तक पर सजाता है। वह भडकीला तथा फैशनाबुल परिधान पहनता है। उसका मुख ताम्बूल क रोमन्थन से चलता रहता है। वह मुख में पान भर स्फुट शब्दों का उच्चारण करता है। बालत समय उसकी दन्तपक्तियाँ दिखाई पड जाती है। वह वश्याश्रय में सुप्त्यास्थानों में अपनी वेष भूषा क कारण लक्षित हो जाता है। अपने माता को फटे-पुरान कपडों में रखता है। पूछन पर कहता है कि वह पनिहारिन है। किसी क्षस क घर में कुछ ही समय रहन पर ही एक कौआ की तरह बोलता चला जाता ह। उसकी बोल चाल अजीब ढग की होती है।

क्षमेन्द्र म २८ श्लोको में विट का सजीव चित्रण किया है।

तदुत्तिष्ठ वयं यामः ससंनाहा नृपाङ्गनम् ।
हरामस्तत्तुरंगादि बद्ध्वा दुष्टांश्च मन्त्रिणः ॥ १९३ ॥

१९३ 'अतएव वर्म युक्त होकर, हम लोग नृपागण म चलें और दुष्ट मन्त्रियों को बाँध कर, तुरग आदि का हरण कर लें—

नौसेतुबन्धं छेत्स्यामस्तेन नश्यति तेऽग्रजः ।
श्रुत्वेति सोऽप्यधान्नैव वक्तु युक्तं ममाग्रतः ॥ १९४ ॥

१९४ 'नाव सेतुबन्ध को काट दें, उससे तुम्हारा अग्रज नष्ट हो जायगा।' यह सुनकर, उस (हाजी खान) ने कहा—'मेरे समक्ष यह कहना उचित नही है—

स्वप्नेऽप्यनिष्टं यस्याहं नेच्छामि स्वामिनः पितुः ।
तच्छ्रुत्वैकां निशां यावत् तदग्रे सोऽनयच्छुचा ॥ १९५ ॥

१९५ 'स्वप्न मे भी मैं स्वामी पिता का अनिष्ट नही चाहता हूँ।' यह सुनकर, उसने एक रात्रि शोकपूर्वक उसके आगे व्यतीत किया ।

तावन्मुमूर्षु तं श्रुत्वा पितृराज्यजिहीर्षया ।
आदमखानः श्रीजैननगरं सबलोऽप्यगात् ॥ १९६ ॥

१९६ तब तक उसे मरणमन्न सुनकर, पिता का राज हरण करने की इच्छा से, आदम खान जैननगर' गया ।

भटसंनाहसामग्रीं प्रापय्य पथि गोपिताम् ।
अवसत् स निशामेकां राजधान्यन्तरालये ॥ १९७ ॥

१९७ भटो के सामग्री' को मार्ग मे छिपाकर, वह एक रात राजधानी के अन्दर, गृह मे व्यतीत किया ।

पाद-टिप्पणी

१९६ (१) जैननगर द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ५ : ४ ।

मोहिबुल हसन ने लिखा है कि आदम खाँ नौशहर सेना के साथ गया कि राज्य सिंहासन पर अधिकार कर ले । नौशहर का वह थोनगर का ही एक भाग मानते है (पृष्ठ ८०, ८४, ८८, ९३) ।

तवक्काते अक्बरी में उल्लेख है—एक रात्रि में आदम खाँ कुतुबुद्दीनपुर से अकेला सुल्तान को देखने के लिए आया और सेना को नगर क बाहर छोड़ दिया। ताकि वह हाजी खाँ और शत्रुओ से सचत रहे (४४५ = ६७१) ।

द्र० १ : ५ : ४, ३ : ७ : ९८, १९७, १९९, ३८०, ४ : १२० ।

पाद टिप्पणी

गोपिकम् पाठ—बम्बई ।

१९७ (१) सन्नाह सामग्री । युद्ध की सामग्री या युद्धसज्जा या युद्ध की तैयारी । प्रथम विदेशी शासक रिंचन ने अस्त्रों को इसी प्रकार बालू में छिपाकर, व्याल आदि अपने शत्रुओं को मार

तावद्धसनकोशेशः स्वार्थान्धो मोहयन् परान् ।
गृहीतदिव्यः श्रीहाज्यखानपक्षं समाश्रयत् ॥ १९८ ॥

१९८ तब तक स्वार्थान्ध कोशेश हसन दूसरो को धोखा देते हुये, सपथ ग्रहण कर, हाजी खान के पक्ष का आश्रय लिया ।

अथ निष्कासितोऽन्येद्युः सचिवैः सबलोऽग्रजः ।
कुद्रदीनपुरं गत्वा धिया भाग्यश्रियोज्झितः ॥ १९९ ॥

१९९ दूसरे दिन मन्त्रियो द्वारा निष्कासित, सेना सहित अग्रज (आदम खान) कुद्रदीनपुर[२] जाकर, बुद्धि एवं भाग्यश्री से रहित हो गया ।

ज्येष्ठोऽप्यभूत् कुशलधीरपि भृत्ययुक्तः
शूरोऽप्यनन्यसदृशोद्यमधैर्ययुक्तः ।
प्राप्ते क्षणे किमपि साधु न कर्म कुर्यात्
पुण्यैर्विना न हि भवन्ति समीहितार्थाः ॥ २०० ॥

२०० कुशल बुद्धि भृत्य सहित, शूर, तथा अनुपम, उद्यम एवं धैर्य से युक्त, ज्येष्ठ वह (आदम खान) समय आने पर, कोई अच्छा कार्य नही कर सका । निश्चय ही, पुण्य के बिना अभिलाषायें पूर्ण नही होती ।

डाला था परन्तु जीवन भय से काश्मीर की ओर भाग आया । काश्मीर में वह रामचन्द्र को पराजित एवं नष्ट कर लहर पर अधिकार करने के लिए शस्त्रों को छिपा कर, नगर में भेजता रहा । अवसर आते ही, वह रामचन्द्र की हत्या कर काश्मीर का राजा बन गया । आदम खाँ ने उसी नीति का अनुकरण किया परन्तु अपनी अनिश्चित एवं संशयात्मक बुद्धि के कारण सफल नही हो सका (जोन० रा० : १५१, १६७) ।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–बम्बई ।

१९८ (१) शपथ : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'संयोग से उसी रात्रि में हसन कच्छी ने जो कि प्रतिष्ठित अमीर था, सुल्तान के दीवानखाने में हाजी खाँ के लिए अमीरो से बैअत (शपथ) ले ली (४४५ = ६७१) ।

पाद-टिप्पणी :

'पुरम्' पाठ–बम्बई ।

१९९ (१) दूसरे दिन तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'दूसरे दिन अमीरों ने आदम खाँ को किसी बहाने से काश्मीर (श्रीनगर) से निकाल कर हाजी खाँ को शीघ्रतगति शीघ्र बुलवाया' (४४५ = ६७१) ।

(२) कुद्दीनपुर द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ३ : ८० । फिरिश्ता लिखता है—आदम खाँ अपनी उपस्थिति का राजधानी में लाभ उठाकर षड्यन्त्र अपने भाई के विरुद्ध करने लगा कि उसे पुनः युवराज स्वीकार कर लिया जाय किन्तु वह अमीरों को अपने पक्ष में नही कर सका क्योंकि अमीरों ने स्पष्ट कह दिया कि बिना सुल्तान के अनुमति के वे लोग उसकी बात नही मान सकते (४७४) । फिरिश्ता राजा के मृत्यु का वर्णन कर पुन करता है—सुल्तान की मृत्यु के पूर्व कनिष्ठ पुत्र बहराम खाँ अपने अग्रज आदम खाँ के ऊपर इतना हावी हो गया कि वह सबसे परित्यक्त जानकर कुतुबुद्दीनपुर चला गया । जहाँ सुल्तान की सेनाएँ हाजी खाँ और

स चेत्तन्निशि हत्वैकमहरिष्यत् तुरङ्गमान् ।
अलभिष्यद् ध्रुवं राज्यं बुद्धिः कर्मानुसारिणी ॥ २०१ ॥

२०१ यदि वह उसी रात्रि एक को मार कर, तुरगों को हर लेता, तो निश्चय ही, राज्य प्राप्त करता। (ठीक ही है) बुद्धि कर्मा(भाग्य)नुसारिणी होती है।

अत्रान्तरे हाज्यखानः कोशेशानुजचोदितः ।
राजधान्यङ्गनं गत्वा तुरङ्गाद्यहरत् पितुः ॥ २०२ ॥

२०२ इसी बीच कोशेश के अनुज द्वारा प्रेरित, हाज्य खान (हाजी) राजधानी के प्रांगण में जाकर, पिता के तुरंगादि का हर लिया।

यद्वार्तया विनिर्धैर्या येऽभवन् सुतसेवकाः ।
विविशुस्ते ससंनाहाः समदाः कालपर्ययात् ॥ २०३ ॥

२०३. जिसकी वार्ता मात्र से ही जो सुत एवं सेवक धैर्यरहित हो गये थे, वे समय परिवर्तन से, वर्मयुक्त तथा गर्वीले होकर, प्रवेश किये।

अभिमन्युप्रतीहारमुखा निन्द्यं यदब्रुवन् ।
तदुत्थिप्लवे तत्फलं तैरचिरेणानुभूयते ॥ २०४ ॥

२०४ अभिमन्यु प्रतिहारादि[1] जो निन्दनीय बात कहे थे, व उस उपद्रव में उसका फल शीघ्र प्राप्त किये।

तद्दिने हाज्यखानः स सबलो बहिरास्थितः ।
नाशकज्जनकं द्रष्टुं सोत्कोऽपि द्रोहशङ्कया ॥ २०५ ॥

२०५ उस दिन सेना सहित बाहर हाजी खान उत्कण्ठित होने पर भी, द्रोह की शंका से पिता को नहीं देख सका।

बहराम खाँ के नेतृत्व में प्रायः उन पर आक्रमण किया करती थी। द्र० १ : ३ : ८२–८५, १ : ७ : ९२।

पाद-टिप्पणी

२०१ 'अभिलप्स्यद ध्रुवम्' । पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

२०२. (१) तुरगादि : तबकाते अकबरी में उल्लेख है—'हाजी खाँ अमीरों के बुलवाने पर आया और उसने सुल्तान की अस्तबाल के समस्त घोड़ों (तुरगो) पर अधिकार जमा लिया और उसके पास बहुत बड़ी सेना एकत्र हो गयी किन्तु वह उपद्रव के भय और विरोधियों के विश्वासघात के कारण महल के भीतर न गया' (४४५ = ६७१)।

पाद टिप्पणी

२०४ (१) प्रतिहार : पहरा। द्रष्टव्य टिप्पणी १ : १ : ८८, १५१, ३ : ४६३, ४ : १६७, २६२। कल्हण के वर्णन से प्रकट होता है कि वे इतने शक्तिशाली होते थे कि राजा को सिंहासन पर बैठा और उतार सकते थे (रा० ५ : १२८, ३५५)। राजा से मिलाने तथा दूतों को राजा के सामने उपस्थित करने का काम प्रतिहारों का था।

तद्वार्ताकर्णनाद्भीतो निराशः सपरिच्छदः ।
आदमखानो वित्राणो विपुलाटाध्वना ययौ ॥ २०६ ॥

२०६ उस वार्ता को सुनने से भीत एवं निराश अनुचर सहित वित्राण (रक्षा रहित) आदम खान विपुलाटा[1] मार्ग से चला गया।

स तारवलमार्गेण गच्छन्निजजनावृतः ।
अन्वागतानुजभ्रातृवीरलोकक्षयं व्यधात् ॥ २०७ ॥

२०७ अपने जनो से आवृत होकर, तारवल[1] मार्ग से जाते हुये, उसने पीछे से आये अनुज, के मित्र एवं वीरो का विनाश कर दिया।

पाद-टिप्पणी

२०६ (१) विपुलाटा = विपालटा = विच-लारी = बनिहाल दर्रे के पादमूल म विपलटा का क्षेत्र है। यह खशों का स्थान माना गया है। द्रष्टव्य रा० ८ : ६८४, ६९७, १०७४, ११३१, १६६२ तथा १७२०)। श्री स्तीन ने इसे विचलारी नदी की उपत्यका माना है (रा० १ ३१७, ८ . १७७)। यह उपत्यका परगना दिवसर के दक्षिण है। बनिहाल जिला का पानी विचलारी नदी बहाकर ले जाती है। वह मोहू तथा बनिहाल स्रोतस्विनिया से मिलकर विचलारी नदी बनती है। पहले वह पूर्व-दक्षिण दिशा में बहती है—तत्पश्चात् उसमें पोंगल तथा परिस्तान स्रोत-स्विनियाँ इसके वाम तट पर मिलती हैं। वह पश्चिम की ओर बहने लगती है। एक सकीर्ण उपत्यका में बहती रामबन के ६ मील पश्चिम चनाब नदी में मिल जाती है।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'आदम खाँ ने जब यह समाचार सुने तो वह भय के कारण मावेल के मार्ग से हिन्दुस्तान की ओर चल दिया उसने बहुत से सेवक उससे पृथक हो गये (४४५ = ६७१)।

फिरिश्ता लिखता है—'बाध्य होकर आदम खाँ भागने के लिए मजबूर हो गया। वह बूदरल का माग पकड कर हिन्दुस्तान की ओर चला गया (४७८)।'

तवक्काते अकबरी के एक पाण्डुलिपि में 'मावल' तथा 'मावेल' दूसरी पाण्डुलिपि तथा लीथो सस्करण में 'नल्वल' लिखा है। फिरिश्ता बारहमूला से जाना लिखता है। हिदायत हुसन न 'मावेल' लिखा है।

पाद-टिप्पणी

२०७ (१) तारबल यह एक दर्रा, सकट या पास है। पर्वतीय क्षेत्र में है। तारवल से मार्ग विपालटा की ओर जाता था। तवक्काते अकबरी में नाम मावल दिया गया है (४४५ = ६७१)।

पीर हसन ने लिखा है कि 'बारहमूला के रास्ते हिन्दुस्तान का इरादा किया। उसके नौकर उससे बददिल होकर उससे जुदा हो गये। हाजी खाँ के सिपह-सालार जैन लारिस ने सिपाहियों की एक जमाअत के साथ तेजी के साथ उसका तअक्कुब (पीछा) किया। मगर आदम खाँ के हाथों से बमय अजीजों और भाइयों के मारा गया (पीर हसन १८६)।' फिरिश्ता ने बद्रल नाम तारवल का दिया है। तवक्काते अकबरी, फिरिश्ता तथा श्रीवर तीनों एक ही स्थान का भिन्न-भिन्न नाम दिये हैं।

अभिमन्युप्रतीहारमुख्याः शौर्यममानुषम् ।
दृष्ट्वैवादमखानस्य सान्वर्थाभिधमूचिरे ॥ २०८ ॥

२०८ अभिमन्यु[1] प्रतीहार प्रमुख लोगों ने आदम खान के अमानवीय शौर्य देखकर, उसके नाम को सफल कहा।

यावान् सुय्यपुरे तेन कृतो लोकक्षयः क्रुधा ।
तावानेव कृतस्तत्र सङ्कटे गिरिगह्वरे ॥ २०९ ॥

२०९ उसने क्रोध से सुय्यपुर में लोगों का जितना विनाश किया था, उतना ही उस संकीर्ण गिरि गह्वर में भी किया।

तावद्धस्मनखानोऽपि राजपुत्रो गुणोज्ज्वलः ।
तूर्णं पर्णोत्समुल्लङ्घ्य कश्मीरान्तरमाययौ ॥ २१० ॥

२१० तब तक गुणोज्ज्वल राजपुत्र हस्सन खान भी पर्णोत्स[1] लाँघ कर शीघ्र ही काश्मीर में आ गया।

पाद-टिप्पणी

२०८ (१) अभिमन्यु : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'जैन बद्र जो हाजी खाँ का विश्वस्त अमीर था। आदम खाँ का पीछा करने के लिए गया। आदम खाँ उसस वीरता से साथ युद्ध करते हुए, उसके बहुत से भाइयों तथा सम्बन्धियों की हत्या करके वहाँ से निकल भागा (४४५-४४६ = ६७२)।'

तबक्काते अकबरी में नाम 'इब्न बद्र' लिखा है। लीथो संस्करण में 'ऐन बदर' लिखा है।

फिरिश्ता ने 'जैनन्दारिक' लिखा है। यह नाम कर्नल ब्रिगस, रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री में नहीं दिया गया है। द्र० : २ : १९६, ३ : १०३, १२५।

पाद-टिप्पणी :

२०९ 'सङ्कटे' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

२१० (१) पर्णोत्स : पुंछ = 'हसन खाँ बिन हाजी खाँ पुंछ से आकर बाप से मिल गया (पीर हसन : १८६)।

'हसन जो पुंछ का राज्यपाल या शासक था। अपने पिता की सहायता करने के लिए चल पड़ा। इससे हाजी खाँ की स्थिति और सुदृढ़ हो गयी (म्युनिख पाण्डु० ७७ ए०)।'

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'हाजी खाँ का पुत्र हसन खाँ जो कि पंजे (पुंछ) में था। अपने पिता के पास आया और उसके कार्यों को अत्यधिक रौनक प्राप्त हो गयी (४४६-६७२)।'

फिरिश्ता लिखता है—हाजी खाँ का दल और अधिक शक्तिशाली, उसके पुत्र हसन खाँ के आने के कारण हो गया (४७४)।

द्र० : १ : १ : ६७, १ : ३ : ११०; १ : ७ : ८०, २०८, २ : ६८, २०२, ४ : १४४, ६०७।

ग्रीष्मोष्मशोषिततनुर्विरसश्चिरं य-
श्छायोज्झितो मरुतरुः पथिकैर्निरस्तः ।
वर्षाप्तसेकमहिमा जनतापशान्त्यै
सेव्यः स एव बत पत्रविचित्रशोभः ॥ २११ ॥

२११. ग्रीष्म की उष्मा से शोषित शरीर तथा विरस चिरकाल तक छाया रहित पथिकों द्वारा परित्यक्त मरुतरु वर्षाकाल में सेक से पुनः महिमा (महत्त्व) प्राप्त कर, पत्रों से विचित्र शोभायुक्त हो जाता है, और आश्चर्य है, वही लोगों के लिये ताप शान्ति हेतु सेव्य हो जाता है।

सदृशैवावहन्मध्ये या द्वयोस्तटयोरिव ।
एकपार्श्वगता सर्वा तदाभूद्राज्यनिम्नगा ॥ २१२ ॥

२१२. तट सदृश दोनो के मध्य, जो समान रूप से बह रही थी, वह सम्पूर्ण राज्य नदी, उस समय एक का आश्रय ले ली (एक के पास चली गयी)।

इत्थं भ्रातृद्वयस्थित्या विजयावजयक्रमः ।
अन्यथा कल्पितः सर्वैरन्यथाभूद्विधेर्वशात् ॥ २१३ ॥

२१३. इस प्रकार दोनो भाइयो की स्थिति से सब लोगो द्वारा अन्यथा कल्पित जय-पराजय का क्रम विधिवश (कुछ) अन्यथा (ही) हो गया।

पुत्रः स्यान्नु कदेति शोचति पिता जातेतिहर्षाकुल-
स्तद्वृद्ध्यै यततेऽन्वहं विधिशतैश्चिन्तास्तदीया वहन् ।
वृद्धो विघ्नमिव स्वकं स जनकं जानाति लोभान्वित-
स्तद्वित्ताप्तिधिया मरिष्यति कदेत्यन्तः सदा चिन्तयन् ॥ २१४ ॥

२१४ पिता सोचता है, पुत्र कब होगा ? और उत्पन्न होने पर, हर्षित होता है, पुत्र की चिन्ता करते हुये, सैकड़ो उपायों से उसकी वृद्धि के लिये प्रतिदिन प्रयत्न करता है। प्रवृद्ध होकर, लोभान्वित वह, अपने पिता को विघ्न सदृश जानता है तथा पिता की धनप्राप्ति की बुद्धि से 'कब मरेगा' यह अन्तश्चिन्तन करता है।

अस्मिन्नवसरे राजा कियद्भिः सेवकैर्वृतः ।
श्रुतमश्रुतवत् कर्तुं स निश्चिन्त इवाभवत् ॥ २१५ ॥

२१५. इस अवसर पर कुछ सेवकों सहित वह राजा सुने को अनसुना सदृश करने के लिये निश्चिन्त-सा हो गया।

पाद-टिप्पणी

२११. 'पत्र' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

२१४. 'स्यान्नु' पाठ–बम्बई।

दर्शितास्वास्थ्यवाग्बन्धस्त्यक्तपेयाद्युपक्रमः ।
नृपेन्द्रो विरुचिः क्षीणकलचन्द्र इवाभवत् ॥ २१६ ॥

२१६ अस्वस्थता के कारण मौनावलम्बन प्रदर्शित करके तथा पेयादि का उपक्रम त्याग कर राजा क्षीण कलावाले चन्द्रमा के समान रुचि[1] (कान्ति) हीन हो गया।

प्रजाभाग्यविपर्यासात् सर्वायासाय विच्छविः ।
कल्पान्तरविवत्सोऽस्तं गन्तुं प्रावर्ततातुरः ॥ २१७ ॥

२१७ प्रजा भाग्य विपर्यय[1] के कारण सब लोगों का कष्ट देने के लिये, छविहीन होकर आतुर राजा कल्पान्तर के सूर्य सदृश अस्त होने लगा।

कम्पितौष्ठपुटज्ञातमन्त्रपाठः कवेर्दिने ।
द्वादश्यां ज्येष्ठमासस्य मध्याह्ने जीवितं जहौ ॥ २१८ ॥

२१८ कम्पित ओष्ठपुट में जिसका मन्त्रपाठ ज्ञात हो रहा था वह ज्येष्ठ मास के द्वादशी तिथि शुक्रवार के दिन मध्याह्न में प्राण त्याग[1] किया।

पाद टिप्पणी

कलचन्द्र पाठ–बम्बई।

२१६ (१) रुचिहीन : श्रीवर राजा की मृत्यु आसन्न है, इसके लक्षणों का अगले श्लोकों में वर्णन करता है। कान्तिहीन एवं किसी बात में रुचि किंवा वैराग्य भाव आसन्न मृत्यु के लक्षण हैं। वायु मारकण्डेय आदि पुराणों में मृत्यु के संकेत की लम्बी तालिका मिलती है (वायु० १९ : १–२ मार्कण्डेय० ४३ : १–३३)। वायुपुराण के अनुसार यदि कानों के छिद्र उंगलियों से बन्द कर लिये जायें और किसी प्रकार की आवाज न सुनायी पड़े या नेत्रों में प्रकाश न दिखायी पड़े तो आसन्न मृत्यु समझना चाहिए। शास्त्रों के अनुसार अरुन्धती ध्रुवतारा, पूर्णचन्द्र एवं दूसरों की आँखों में अपनी छाया दृष्टिगोचर न हो तो उनका जीवनकाल एक वर्ष माना गया है। चन्द्रमण्डल में जिन्हें छिद्र दिखाई पड़ता है उनका जीवनकाल ६ मास होता है। सूर्यमण्डल में छिद्र तथा समीप की सुगन्धित वस्तुओं में शव का गन्ध जिन्हें मिलता है उनका जीवन केवल ७ दिन होता है। आसन्न मृत्यु का लक्षण कान एवं नाक का वक्र हो जाना, नेत्र एवं दाँतों का रंग बदल जाना, संज्ञाशून्यता, शरीरोष्णता का अभाव, कपाल से धूम निकलना आदि है। यदि स्वप्न में गधा देखे तो उसका मरण निश्चय समझना चाहिए। यदि स्वप्न में वृद्ध कुमारी स्त्री को देखा जाय तो उस भय रोग मृत्यु का लक्षण मानना चाहिए। त्रिशूल देखने पर मृत्यु परिलक्षित होती है।

पाद टिप्पणी

२१७ (१) प्रजा भाग्य विपर्यय : द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ३ : १०५।

पाद टिप्पणी

२१८ (१) मन्त्रपाठ : पर्शियन इतिहासकारों का मत है कि सुल्तान कलमा पढ़ रहा था। मृत्यु के समय प्रथा है कि मुल्ला अथवा घर के लोग व्यक्ति के समीप बैठकर कलमा पढ़ते हैं। बहोश होने पर जोर से कान में कलमा कहने और पढ़ने के लिए कहते हैं। मृत्यु मुख व्यक्ति कलमा पढ़ने का प्रयास करता है। उसके ओठ हिलते दिखायी पड़ते हैं। इस समय मृत्यु मुख व्यक्ति को चित्त लिटा देते हैं। सिर उत्तर तथा पद दक्षिण रहता है।

प्राणप्रयाणसमये नृपतिः स मयेक्षितः ।
सर्वाङ्गनिर्यत्सौभाग्यभाग्यावृतमुखच्छविः ॥ २१९ ॥

२१९ प्राण प्रयाण के समय उस राजा को मैंने देखा, उसकी मुख की कान्ति सभी अंग से निकलते सौभाग्य समृद्धि से आवृत थी।

जाने तद्वदने लक्ष्मीसदने स्वेदसन्ततिः ।
निर्यद्भाग्यतरङ्गिण्याः प्रवाह इव दिद्युते ॥ २२० ॥

२२० मालूम पड़ता है लक्ष्मी सदन उसके बदन पर स्वेद परम्परा निकलती भाग्य तरंगिणी के प्रवाह सदृश शोभित हो रही थी।

तज्जीवरत्नहरणाज्जातभीतिरिव ध्रुवम् ।
प्राणवायुर्हरन्नायुः क्षणं तूर्णगतिं व्यधात् ॥ २२१ ॥

२२१ निश्चय ही उसके जीवनरूपी रत्न का हरण करने से भीत तुल्य, प्राणवायु आयु का हरण करते हुये क्षणमात्र के लिये गति[1] तेज कर दी।

तबकात अकबरी में मृत्यु का समय नहीं दिया गया है। फिरिश्ता लिखता है कि हिजरी सन ८७७ के अन्त में सुल्तान की मृत्यु हुई थी। उसकी आयु उस समय ६० वर्ष थी। कर्नल ब्रिग्स मृत्युकाल हिजरी ८७७ = सन १७७२ ई० देते हैं। मुस्लिम हिस्ट्री में मृत्युकाल सन १४७० के नवम्बर दिसम्बर में दिया गया है (२८४)।

हैदर दुघलात लिखता है कि जैनुल आबदीन ने ५० वर्ष शासन किया था (तारीख रशीदी ४३३)। अबुल फजल तथा निजामुद्दीन के अनुसार सुल्तान ने ५२ वर्ष राज्य किया था और मृत्यु हिजरी ८७७ = सन १४७२ ई० में हुई थी। (आइन० जारेट ३७९ तबकात ३ ४४६।)

श्रीवर स्वयं मृत्यु समय उपस्थित था। अतएव उसका दिया समय ही ठीक है। बहारिस्तान शाही श्रीवर का समर्थन करता है। पाण्डु० फो० ५८ ए०।

(२) प्राण त्याग शुक्रवार को मरना ईसाई तथा मुसलिम धर्म के अनुसार अच्छा मानते हैं। संसार के महान व्यक्तियों की मृत्यु प्रायः शुक्रवार को हुई है।

पाद टिप्पणी

प्रथमपंक्ति के लिये वेद सदन का पाठ वदन मदन किया गया है।

२२० (१) स्वेद परम्परा शरीर की गर्मी निकल रही थी। गर्मी किंवा ऊष्मा समाप्त होने पर मरणासन्न व्यक्ति शीताक्रान्त हो जाता है। शरीर में पसीना छूटने लगता है। यह अन्तिम लक्षण है। मनुष्य इस अवस्था में मृत्यु के कुछ घण्टे पूर्व ही रहता है।

पाद टिप्पणी

२२१ (१) गति ऊर्ध्व स्वासा या गति से तात्पर्य है। मृत्यु के समय ऊर्ध्व स्वांसा चलने लगती लगता है। स्वांसा की गति ऊपर की ओर हो जाती है। स्वांस में, थापजब भी, निकल्नी, है। एक और छाती जल्दी-जल्दी फूलती और पचकती है। ऊर्ध्व स्वांसा मृत्यु का अन्तिम लक्षण है। ऊपर को चढ़ती हुई अथवा उलटी स्वांस टूटने के पश्चात प्राण शरीर त्याग देता है। वायु का सम्बन्ध अपानवायु से छिन्न हो जाता है। स्वांस की यह गति ऊपर होती कण्ठ तक आ जाती है। कण्ठावरोध होकर प्राणवायु की गति समाप्त होकर प्राणी मृत हो जाता है।

प्राणान्ते विगलत्सूर्यसोमनेत्रजलच्छलात् ।
निरगान्नरदेवस्य प्रजास्नेहरसो ध्रुवम् ॥ २२२ ॥

२२२ प्राणन्त होने पर विगलित सूर्य चन्द्ररूप नेत्र के जल के व्याज से निश्चय ही राजा का प्रजा-स्नेह रस निसित हुआ।

द्वापञ्चाशतमब्दान् स राज्यं कृत्वा सुखप्रदम् ।
षट्चत्वारिंशवर्षेऽगाद्दिवं श्रीजैनभूपतिः ॥ २२३ ॥

२२३ वह जैन भृपति ५२[1] वर्ष सुखपूर्वक राज्य करके ४६[2] वे वर्ष स्वर्ग प्रयाण किया।

कर्णीरथशवप्रोद्यच्छत्रचामरकैतवात् ।
शुचेव पतितौ नूनं सूर्याचन्द्रमसौ दिवः ॥ २२४ ॥

२२४ करणी-रथ[1] स्थित शव पर, चलते छत्र-चामर[2] के व्याज से, मानो शोक के ही कारण, सूर्य एवं चन्द्रमा आकाश से निपतित हो गये थे।

पाद टिप्पणी

२२२ (१) नेत्र जल मार्कण्डेयपुराण के अनुसार नेत्र से जल अचानक निकलने पर मनुष्य को मरणासन्न समझ लेना चाहिए। मृत्यु उसकी लीला किसी समय समाप्त कर सकती है (मा० ४३ १-३३, ४० १-३३)।

पाद टिप्पणी

२२३ (१) बावन वर्ष पीर हसन के अनुसार मृत्यु के समय सुल्तान की उम्र उनहत्तर साल थी। उसने इक्कावन वर्ष, दो मास तथा तीन दिन राज्य किया था (पृष्ठ १८६)। तवक्काते अकबरी में राज्यकाल ५२ वर्ष दिया गया है (४४६ = ६७२)। फिरिश्ता राज्यकाल लगभग ५२ वर्ष देता है (४७४)।

(२) छियालीस वर्ष सप्तर्षि ४५४६ = सन् १४७० ई० = संवत् १५२७ विक्रमी = शक १३९२ = कलि गताब्द ४५७१ वर्ष। तवक्काते अकबरी में मृत्यु का काल नहीं दिया है। फिरिश्ता लिखता है कि सुल्तान हिजरी ८७७ में मर गया।

यदि श्रीवर की गणना ठीक मान ली जाय तो सुल्तान का जन्मकाल सन् १४०१ ई०, राज्यप्राप्ति-काल १४१८ ई० एवं मृत्युकाल १४७० ई० ठहरता है।

पाद-टिप्पणी

२२४ (१) करणी रथ = शिविका। कल्हण ने करणी-रथ का उल्लेख (रा० ४ ४०७, ५ २१९) में किया है। करणी-रथ शिविका के अर्थ में यहाँ प्रयोग किया है। काश्मीर में पालकी को 'कत्त' कहते हैं। कत्त मैं समझता हूँ कि करणी का अपभ्रंश है। हैदरशाह के मृत्यु प्रसंग में शव का शिविका में रखा जाना श्रीवर वर्णन करता है (२ २०८) किन्तु श्लोक (२ २०९) में शव को मंजूषिका से उतरने का उल्लेख करता है। श्रीवर ने मंजूषिका ताबूत के अर्थ में प्रयोग किया है। श्रीवर मृत्यु के समय उपस्थित था परन्तु प्राणान्त के पश्चात वह शव ताबूत में रखने का वर्णन करने लगता है। शव के स्नानादि का वर्णन नहीं करता। मुसलिम परम्परा के अनुसार मृत्यु के पश्चात शव को नहलाते हैं। भारत में बैर की पत्ती पानी में उबाल दी जाती है। उसी पानी से स्नान कराया जाता है। अरब में ठण्डे जल में बैर की

तत्कालं मन्त्रिणो भृत्या दासा जनपदाश्च ये ।
रुदितास्रुस्रुतिव्याजान्निवापाञ्जलिमक्षिपन् ॥ २२५ ॥

२२५. उस समय मन्त्री, भृत्य, दास एवं जनपद निवासी, रोने के रुदिताश्रु प्रवाह के व्याज से, मानो विनयाञ्जलि दिये ।

राज्य षण्णवते वर्षे ज्येष्ठे मास्यग्रहीन्नृपः ।
उत्तरायणकालान्त स्तेनैवान्तर्धिमासदत् ॥ २२६ ॥

२२६. राजा ने ९६[1] वर्ष के उत्तरायण[2] काल के अन्त ज्येष्ठ मास मे राज्य प्राप्त किया और उसी मास के साथ अर्न्ताहित हुआ ।

पत्ती पानी में घोलकर गाज पैदा करते हैं । उसी से नहलाया जाता है । कहीं-कहीं कपूर का गुलाब या केवडाजल छिडकते हैं । मुख तथा जोडों पर कपूर मल देते अथवा रखते हैं ।

कल्हण ने राजा शकरवर्मा के शव को करणी रथ में रखकर काश्मीर में लाने का वर्णन किया है (रा० ५ २१९) ।

करणी-रथ का तात्पर्य अरथी या शवयात्रा के लिए अरथी आदि पर तैयार किया गया, रथानुरूप सजावट करते है । आज भी जहाँ अरथी को सजाकर ले जाते है, उसे रथ शब्द से ही अरथी की जगह सम्बोधन करते है । पजाब के खत्री लोग सजी अरथी को विमान कहते हैं ।

शिविका अर्थात पालकी का प्रयोग राजाओ का शव ले जाने के लिये अवतक काशी में किया जाता है । मैंने अपनी आँखो से देखा है कि काशीराज प्रभुनारायण सिंह का शव नन्देश्वर पैलेस से मणिकर्णिका स्मशान तक पालकी अर्थात शिविका पर ही गया था। काशीलाभ करनेवाले कितने ही राजाओं का शव शिविका पर ले आते हुए देखा हूं । शिविका बनी-बनायी होती हूं । तावूत भी बना-बनाया होता हैं परन्तु विमान, अरथी एव रथ बनाया जाता हैं ।

(२) छत्र चामर जनाजा का उल्लेख श्रीवर करता हूं। काश्मीर के शाहमीर वशीय सुल्तानों ने प्राचीन परम्परायें मुसलिमकरण नीति के होते हुए भी अपनायी थी। छत्र एव चामर राजाओं का पुरातन चिह्न है। मुसलिम बादशाहो ने यह प्रथा भारत में स्वीकार कर लिया था। पाण्डु के दाहकर्म के समय शिविका में शव ले जाया गया और उस पर छत्र और चमर थे (स्त्रीपर्व० २३ ३९-४२) । भीष्म पितामह के दाहकर्म का वर्णन महाभारत में किया गया है । शव के ऊपर छत्र एव चामर लगे थे (अनुशासन० १६९ १०-१९) ।

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई ।

२२६ (१) वर्ष सप्तर्षि ४४९६ = सन् १४२० ई० = विक्रमी १४७७ = शक १३४२ ई० ।

(२) उत्तरायण सूर्य की मकर रेखा से उत्तर कर्क रेखा की ओर गति । ६ मास का समय जिसके मध्य सूर्य मकर रेखा से चलकर निरन्तर उत्तर की ओर बढता रहता है। मृत्यु किस समय होती है इसके विषय में अनेक धारणायें है। गीता तथा अन्य ग्रन्थो में उल्लेख मिलता है । कल्पतरु मोक्षकाण्ड तथा शान्तिपर्व २९८ २३ में लिखा है कि जो उत्तरायण में मरता है वह पुण्यशाली है। यह धारणा उपनिषद पर आधारित है—अस्तु चाहे उसकी अन्त्येष्टि की जाय या नही, वह प्रकाश को प्राप्त करता है। प्रकाश से दिन, दिन से चन्द्रमा का शुक्लपक्ष, उसमें उत्तरायण ६

अतीतगणितैकोनसप्तत्यब्दायुषं नृपम् ।
वदनावगतश्रीमत्कृष्णकूर्चकचच्छटम् ॥ २२७ ॥

२२७ उनहत्तरवें[1] वर्ष की आयुवाले और मुख पर कृष्ण वर्ण दाढ़ी[2] एवं बालों से शोभित उस नृप को—

शवीभूतं शिवीभूतं शिबिकायां शवाजिरम् ।
रुदन्तो मन्त्रिणो निन्युश्छत्रचामरराजितम् ॥ २२८ ॥

२२८ जो कि शव एवं शिव हो गया था। रोते मन्त्री छत्र-चामर से शोभित करके, शिविका[1] में शवाजिर[2] (कब्रिस्तान) ले गये।

मास, उससे वर्ष, वर्ष से सूर्य, सूर्य से चन्द्र एवं चन्द्र से विद्युत की प्राप्ति होती है। अमानव उसे ब्रह्म की तरफ ले जाता है। यह देवमार्ग है, जिससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है। इस मार्ग से जानेवालों का पुनर्जन्म नही होता (छान्दोग्योपनिषद : ४ : १५ : ५-६)। भगवद्गीता में भी कहा गया है—'हे अर्जुन ! जिस काल में शरीर को त्याग कर, गये हुए योगीजन पीछे न आनेवाली गति को और पीछे आनेवाली गति को भी प्राप्त होते है, उस काल अर्थात मार्ग को कहूँगा। उन दो प्रकार के मार्गों में से जिस मार्ग में ज्योतिर्मय अग्नि अभिमानी देवता है और दिन का अभिमानी देवता है, ब्रह्मवेत्ता और उत्तरायण ६ महीनो का अभिमानी देवता है, उस मार्ग में मर कर गये हुए, ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। उत्तरायण देवयान तथा दक्षिणायन पितृयान सनातन माने गये है (८ : २३-२६)।

भीष्म पितामह उत्तरायण में प्राण त्यागने के लिए शरशय्या पर पड़े रहे। सूर्य की गति ६ मास उत्तरायण एवं ६ मास दक्षिणायन रहती है। दिसम्बर २३ से जून २३ तक उत्तरायण तथा २४ जून से २२ दिसम्बर तक सूर्य दक्षिणायन रहता है। दक्षिणायन में मरनेवाला, व्यक्ति है, धूम और धूम से रात्रि, रात्रि से कृष्णपक्ष, उससे दक्षिणायन के ६ मास, उससे पितृलोक, उससे आकाश तत्पश्चात चन्द्रलोक जाते है। वहाँ कर्मफलों का भोग कर उसी मार्ग से पुनः लौट आते है। जैनुल आबदीन इसी उत्तरायण मार्ग से गमन कर स्वर्ग प्राप्त किया था।

पाद-टिप्पणी

'कूर्च' = पाठ–बम्बई।

२२७ (१) उनहत्तर वर्ष : जैनुल आबदीन ने ५२ वर्ष राज्य किया था। इस प्रकार उसका जन्मकाल सन् १४०१ ई० ठहरता है। फिरिश्ता भी सुल्तान की मृत्यु समय की आयु ६९ वर्ष देता है (४७४)।

(२) दाढ़ी : सुल्तान अन्य तात्कालीन मुसलिम सुल्तानों के समान दाढ़ी रखता था। मैंने अबतक जितने प्रसिद्ध सुल्तानों की तस्वीरें देखी है। उनमें अकबर एवं जहाँगीर ही दाढ़ीविहीन दिखायी दिये। दाढ़ीविहीन सुल्तान होना, अपवाद ही माना जायगा।

पाद-टिप्पणी :

२२८ (१) शिविका : राजाओं का शव शिविका में रख कर, श्मशान ले जाने की पुरानी परम्परा है। दशरथ का शव शिविका में रखकर श्मशान ले जाया गया था (रामा० : अयोध्या : ७६ : १३)। रावण का शव भी शिविका में ले जाया गया था। प्राचीन धारणा है कि मृत होने पर शव शिव स्वरूप किंवा व्यक्ति महादेव हो जाता है द्र० १ : ५ : ६०; २ : २०८।

हैदरशाह का भी शव शिविका में ले जाया

यत्र सुप्ता इवैकत्र भान्ति पूर्वे महीभुजः ।
भर्तृप्रेम्णा धरण्येव निहिता हृदयान्तरे ॥ २२९ ॥

२२९ जहाँ पर, पूर्ववर्ती राजा सुप्त सदृश, एकत्र शोभित हो रहे थे, स्वामिप्रेम के कारण धरणी ही, मानो हृदयान्तर में (उन्हें) निहत कर लिया है।

रुदत्पौरजनप्रोद्यत्तारोदननिःस्वनैः ।
बभूवुस्तच्छुचेवारं साक्रन्दमुखरा दिशः ॥ २३० ॥

२३० रोते पुरवासियों के कारण उत्पन्न तीव्र रोदन के ध्वनि से, मानो अत्यधिक शोक के कारण, दिशाएं हा आक्रन्दन से मुखरित हो उठीं ।

क्व प्रयासि प्रजास्त्यक्त्वा हा देव नरजीवित ।
इत्यस्मादपरः शब्दो नाश्रावि नगरान्तरे ॥ २३१ ॥

२३१ 'हा ! हे ! देव !! हे ! नरप्राण !! प्रजाओं को त्यागकर कहाँ जा रहे हो' ? इसके अतिरिक्त नगर में दूसरा शब्द सुनायी नहीं दिया।

तत्तदाक्रन्दितैः शश्वत्कर्णसंजातसंस्तवाः ।
शून्येऽप्यशृण्वल्लोकानामाक्रन्दितमथाकृत् ॥ २३२ ॥

२३२ तत् तत् आक्रन्दनों से, लोगों का कान पूर्ण हो जाने के कारण, शून्य में भी वे लोगों का अनेकश आक्रन्दन सुनते थे।

कर्णीरथाद्थोत्क्षिप्य पितुः पार्श्वे नरेश्वरम् ।
कृत्वा पटैकसवीतं भूगर्भाभ्यन्तरे न्यधु ॥ २३३ ॥

२३३. नरेश्वर को कर्णीरथ से उठाकर तथा एक वस्त्र[1] में परिवेष्ठित कर, पिता के पास भू-गर्भ[2] में रख दिया।

गया था (जैन० २ २०८)। हिन्दुओं का शव भी शिविका में ले जाने का उल्लेख श्रीवर ने किया है (जैन १ ५ ६०)।

(२) शवाजिर काश्मीर के मजारे सलातीन, अर्थात् कब्रिस्तान से तात्पर्य है। द्र० २ ८५, ८९, ३ : ३५५।

पाद-टिप्पणी

'प्रेम्णा' पाठ-बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२३० 'तार' पाठ-बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२३३ (१) एक वस्त्र साधारणतया शव को स्नान कराने के पश्चात एक तहमद, एक कुरता, दो चादर और एक सरबन्द से शव को आच्छादित कर देते हैं। अरब में तीन चादर में लपटते हैं। काश्मीर की यह लौकिक परम्परा प्रतीत होती है कि शव को मिट्टी देने के पूर्व एक वस्त्र से परिवेष्ठित करते हैं। मुहम्मद साहब दो महीन वस्त्रों में परिवेष्ठित किये गये थे। तीसरा धारीदार वस्त्र शव पर डाल दिया गया।

हैदरशाह के मृत्यु के पश्चात उसके मिट्टी दिये

नेत्रनालस्रवद्वाष्पधारा स्वाचारकारणात् ।
मुखावलोकनं कृत्वा सर्वे मृन्मुष्टिका जहुः ॥ २३४ ॥

२३४ लोगो के नेत्रनाल से अश्रुधारा चल रही थी। अपने आचार के कारण मुखावलोकन करके, सब लोग मुट्ठी भर मिट्टी[२] डाले।

भूपतिर्भविता नान्यस्त्वत्समो भूरियं गता।
इतीव भावनां चक्रुर्मृन्मुष्टिग्रहणच्छलात् ॥ २३५ ॥

२३५ तुम्हारे समान दूसरा भूपति नहीं होगा, यह पृथ्वी भी चली गयी, मानो यही भावना मुट्ठी भर मिट्टी ग्रहण करने के व्याज से, लोगों ने किया।

जाने के सन्दर्भ में वर्णन करते हुए श्रीवर ने पुनः एक वस्त्र शब्द ही दुहराया है (२ : २०९)।

(२) भूगर्भ : कब्र।

पाद टिप्पणी

२३४ (१) मुखावलोकन : शव को कब्र में रखने के पहले उसका मुख खोल देते हैं। अन्यथा शव का मुख कफन में लिपटा ढँका रहता है। मुख मक्का की तरफ कर दिया जाता है। पैर दक्षिण तथा शिर उत्तर रहता है। शव कब्र में रखने पर मुख पुनः कफन से ढँक दिया जाता है।

(२) मिट्टी : मुसलमानों में प्रथा है कि शव को कब्रिस्तान में रख दिया जाता है। कब्र खोदकर तैयार रहती है या खोदी जाती है। कब्र बगली अथवा सन्दूकी दो प्रकार की होती है। कब्र खोदा जाता है। इतना लम्बा-चौड़ा होता है कि दो आदमी उसमें खड़े हो सकें। तत्पश्चात शव से कुछ लम्बा सन्दूकनुमा चौकोर खोदा जाता है। उसमें रखकर उस पर पत्थर या लकड़ी से ढक देते हैं। ताकि शव को क्षति न पहुँचे और मिट्टी, लकड़ी तथा पत्थर के ऊपर ही पड़ी रह जाय। बगली कबर में कब्र खोदन के पश्चात उत्तर-दक्षिण के किसी दिवाल के अन्दर शव के लम्बाई में कुछ अधिक गुफा जैसा खोदा जाता है। उसमें शव रख दिया जाता है। गुफा का मुख लकड़ी, ईंटा अथवा पत्थर से ढक कर मिट्टी दी जाती है। पैगम्बर मुहम्मद साहब की कब्र बगली थी। उसका मुख कच्ची ईंटों से ढक दिया गया था।

कब्र का मुख पत्थर, लकड़ी या ईंटों से ढकने के पश्चात पत्थर या लकड़ी अथवा ईंटों के जोड़ों को गीली मिट्टी से बन्द कर देते हैं। कच्ची ईंटों का प्रयोग अच्छा माना जाता है। ताकि ऊपर की मिट्टी शव पर जाकर न पड़ जाय। लोग आकर मुट्ठियों या अंजुरियों में मिट्टी लेकर कब्र के अन्दर छोड़ देते हैं। कब्र खोदने से जो मिट्टी ऊपर पड़ी रहती है उसी से तीन मुट्ठी मिट्टी कब्र में डाला जाता है। कहीं पाँच, कहीं तीन, कहीं एक लौकिक प्रथा के अनुसार मिट्टी छोड़ी जाती है। सगे-सम्बन्धी या मित्र जब मुट्ठियों से डाल चुकते हैं, तो कबर से खोदकर निकली मिट्टी जो कबर के चारों ओर पड़ी रहती है। उसे पुनः कब्र में डालकर कब्र भर दिया जाता है। मिट्टी इतनी बगली या सन्दूकी कब्र खोदने के कारण बच जाती है कि स्वतः ऊँची बन जाती है। उसपर जल छिड़का जाता है। कुछ लोग उसपर चादर चढ़ा देते हैं। कब्रों पर चादर चढ़ाने तथा उसके पास लोहबान जलाने का रिवाज है।

जित्वारीन् प्रबलान् रणे क्षितिमिमां वृत्वा घनैः सर्वतो
दत्त्वा कोशमशेषदेशविदिताः कृत्वा पुरीः स्वाभिधाः ।
सप्ताङ्गोर्जितभङ्गिसङ्गिसुभगंकृत्वापि राज्य चिरं
हित्वा सर्वमहो पटैकरचनामन्ते लभन्ते नृपाः ॥ २३६ ॥

२३६ रण मे प्रबल शत्रुओ को जीतकर, इस पृथ्वी को सब ओर से धनपूर्ण कर, कोष देकर, सब देशो मे प्रसिद्ध अपने नाम की पुरी निर्मित कर, सप्तागो से अर्जित एव सुभग राज्य का चिरकाल तक भोग कर, दुःख है कि नृप सब कुछ त्याग कर, अन्त मे केवल एक वस्त्र प्राप्त करते हैं।

स वैरराज्यदावाग्निसन्तप्त इव शीतलाम् ।
तद्गुहान्तरमासाद्य सुखनिद्रामिवाभजत् ॥ २३७ ॥

२३७. वैरपूर्ण राज दावाग्नि से सतप्त सदृश होकर, शीतल उस गुफा (कब्र) मे जाकर, मानो उसने सुख की नीद ली।

मुखं निद्रावृतस्येव दृष्ट्वा सौभाग्यसुन्दरम् ।
हाज्यिखानोऽकरोत् पित्रे मस्तकं स्वमरात्रिकाम् ॥ २३८ ॥

२३८ निद्रित सदृश उसके सोभाग्य सुन्दर भाव को देखकर, हाजी खान ने अपने पिता क लिये अपने मस्तक से आरती की।

अपराद्धं मया तात बहुशः पापबुद्धिना ।
मन्ये तेनैव रुष्टस्त्वमसहायो गतो दिवम् ॥ २३९ ॥

२३९ 'हे ! तात !! मुझ पाप बुद्धि ने बहुत अपराध किया, मानो उसी से रुष्ट होकर, तुम असहाय (अकेले) स्वर्ग चले गये।

शेकन्धरनृपो धन्यो यस्त्वां पश्यति नाकगः ।
धिङ्मां यो वञ्चितो राजन् दर्शनामृतवर्षणैः ॥ २४० ॥

२४० 'हे ! राजन् !! नृप शेकन्धर (सिकन्दर) धन्य है, जो स्वर्ग जाकर, तुम्हे देख रहा है। मुझे धिक्कार है, जो दर्शनामृत वर्षणो से वचित रहा।

विहृतं क्वापि नो तात मां विना स्वोत्सवक्षणे ।
वदाद्य कथमेकाकी भजसे स्वर्गसंपदः ॥ २४१ ॥

२४१. 'हे ! तात !! अपने उत्सव के क्षण मे भी कही मेरे बिना क्रीडा नही की, बोलो ! आज कैसे एकाकी (अकेले) स्वर्ग सम्पत्तियाँ भोगोगे ?

पाद-टिप्पणी :
२३७ 'तदगुहा' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी
२४१ 'स्वो' पाठ–बम्बई।

यस्त्वं कोमलशय्यासु नागा निद्रां गणावृतः ।
स कथं भूगणस्यान्तस्तिष्ठस्येकः सशर्करे ॥ २४२ ॥

२४२ 'जो तुम गणावृत[1] होकर, कोमल शय्या पर निद्रा नहीं प्राप्त करते थे, वही तुम अकेले भूमि के ककरीले[2] मध्य भाग में कैसे स्थित हो ?

प्रतिमुच्य भवन्तं मे प्राप्तस्य स्वगृहं न कः ।
अशपन्मास्तु मेलापो भूयो वामिति कोपितः ॥ २४३ ॥

२४३. 'आपको छोड़कर, अपने घर पहुँचने पर, मुझको क्रुद्ध होकर, किसने यह शाप दिया कि इन दोनों का पुनर्मिलन न हो ?

औन्निद्रयं कारितोऽस्माभिः कुपुत्रैः सततं भवान् ।
अद्यैवावसरं प्राप्य दीर्घनिद्रां करोषि किम् ॥ २४४ ॥

२४४ 'हम कुपुत्रों ने निरन्तर आपको उनिद्र कर दिया था। क्या आज ही अवसर पाकर निद्रा ले रहे हो ?

ज्वलिताभूत् तनुर्नित्यं सततोदितया यया ।
साद्य किं चलिता राजश्चिन्ता ते मानसान्तराम् ॥ २४५ ॥

२४५ 'निरन्तर उत्पन्न जिसने नित्य शरीर को जलाया, हे ! राजन् ! क्या वह चिन्ता तुम्हारे मन से चली गयी ?

चित्रे वाप्यथ संकल्पे पश्यामि वदनाम्बुजम् ।
शृणोमि ताः कथाः कुत्र तात ते बहुपातकी ॥ २४६ ॥

२४६ 'हे तात ! चित्र में अथवा संकल्प में तुम्हारे पदाम्बुज को देखता हूँ, परन्तु बहु-पातकी मैं, तुम्हारी उन कथाओं को कहाँ सुनता हूँ ?

राज्यं विपद् दिनं रात्रिः सद्यानं पितृकाननम् ।
जीवनं मरणं नाथ त्वां विना मम सांप्रतम् ॥ २४७ ॥

२४७ 'हे नाथ ! तुम्हारे बिना इस समय मेरे लिये राज्य विपत्ति दिन-रात्रि, सुन्दर उद्यान पितृ कानन[1] (कब्रिस्तान) तथा जीवन मरण हो गया है।

पाद-टिप्पणी

२४२. (१) गणावृत गणों, पारषदों या लोगों से घिर रहने से तात्पर्य है।

(२) ककरीला ककरीली मिट्टी से तात्पर्य है।

पाद-टिप्पणी

२४७ (१) पितृ कानन श्रीवर ने कब्रिस्तान का श्लोक में शवाजिर लिखा है। यहाँ वह कब्रिस्तान की संज्ञा पितरों के कानन से दिया है। क्योंकि अनेक पितरों की कब्रें कब्रिस्तान में थीं।

कुपितो वा प्रसन्नो वा कुतोऽप्यागत्य तात मे ।
दर्शनं देहि नो सोढुं क्षमो विरहवैशसम् ॥ २४८ ॥

२४८ हे तात ! कुपित अथवा प्रसन्न होकर, कहीं से आकर दर्शन दो, विरह पीडा सहने में समर्थ नहीं हूँ।

विहाय क्व नु मां तात गतः पादैकसेवकम् ।
द्युतिं न लभते पद्मकोरको भास्करं विना ॥ २४९ ॥

२४९ हे तात ! पाद मात्र के सेवक मुझे त्याग कर, कहाँ गये ? सूर्य के बिना कमल कोरक (कली) कान्ति नहीं प्राप्त करता।'

किं रुष्टोऽसि महीपते त्वमधुना दासोऽस्मि सेवापरो
मौनं मा भज देहि वाक्यमधुनाप्येकं ममात्यादरात् ।
नो जीवामि विना त्वयेति विलपन् कुर्वन् भुजारात्रिकां
माक्रन्दं रुदितं चकार सुचिरं दृष्ट्वा मुखं भूपतेः ॥ २५० ॥

२५० राजा के मुख को देखकर, 'हे महीपति ! क्या रुष्ट हो ? मैं इस समय भी सेवा-परायण दास हूँ। मौन मत हो, अब भी मुझे प्रेम से एक बात कहो— तुम्हारे बिना नहीं जीवित रहूँगा' इस प्रकार बिलखते हुए बहुत देर तक चिल्लाकर, रुदन किया।

इति प्रलापमुखरं हाज्यखानं शुचार्दितम् ।
राजधानीं ततो निन्युर्दिनान्ते मन्त्रिणो बलात् ॥ २५१ ॥

२५१ शोक-पीडित विलाप करते हाजी खान को सायंकाल[1] मन्त्री बलात् वहाँ से राजधानी ले गये।

पितुर्लोकान्तरस्थस्य प्रीत्यर्थं तत्क्षणं सुतः ।
सालोरग्राममात्मीयं न्यधात् तत्र शवाजिरे ॥ २५२ ॥

२५२ परलोक स्थित पिता को प्रीति हेतु तत्क्षण पुत्र (हाजी खान) ने उस शवाजिर (कब्रिस्तान) में ही अपना सालोर[1] ग्राम—

उनमें अनेक सुल्तान तथा राजवंशीय पुरुष चिर निद्रा ले रहे थे। वहीं उनका बगीचा था। उसमें श्रीवर ने यहाँ अच्छी दिया है। मैंने यह स्थान देखा है। यहाँ अब भी कुछ वृक्ष लगे हैं। मुसलमान कब्रिस्तान तथा आस-पास वृक्ष लगा देते हैं। पूर्वीय उत्तर प्रदेश में कब्रिस्तान में बेर या मौमरी का पेड़ प्रायः लगाया जाता है। अमीर लोग बाग लगवाते हैं। उसी में कब्रें बनायी जाती हैं।

पाद टिप्पणी

२५१ (१) सायंकाल : प्रतीत होता है कि सुल्तान को मध्यान्तर मिट्टी दी गयी थी और मृतक संस्कार सायंकाल तक समाप्त हो चुके थे।

पाद टिप्पणी

२५२ (१) सालोर : का पाठ भेद 'मालोर' भी मिलता है। यदि मालोर मान लिया जाय तो

ग्रीष्मपानीयदानेन तृप्त्यर्थं तत्प्रदायिनाम् ।
बहूनां प्रददौ क्षोणीमक्षय्यां धर्मसात्कृताम् ॥ २५३ ॥

२५३ ग्रीष्म ऋतु में जलदान द्वारा तृप्ति के लिये, न्यास कर दिया, तथा बहुत से जल प्रदाताओं को सदैव के लिये, धर्म हेतु भूमि प्रदान की।

राज्ञानेन विना शून्यां नास्मि क्ष्मामीक्षितुं क्षमः ।
इतीव दुःखात् तत्कालं स्वमब्धौ रविरक्षिपत् ॥ २५४ ॥

२५४ इस राजा के बिना, शून्य पृथ्वी को देखने में समर्थ नहीं हूँ, मानो इसी दुःख से तत्काल रवि स्वयं को सागर में डाल दिये।

सन्ध्याभ्रशाटीमुत्सृज्य खेदनार्थमिवेशितुः ।
शुचेव विस्तृतं चक्रे तमःकचचयं क्षितिः ॥ २५५ ॥

२५५ राजा के शोक के कारण ही मानो, पृथ्वी सन्ध्याकालीन अभ्र शाटी (साड़ी) त्यागकर, अन्धकार रूप केशपाश बिखरा दिये।

आशाप्रकाशके वन्द्यदर्शने गुणिबान्धवे ।
परलोकं गते तस्मिन् मण्डले प्रोद्भूत् तमः ॥ २५६ ॥

२५६ आशा[1] प्रकाशवन्द्य दर्शन, गुणी बान्धव[2], उसके (राजा-सूर्य) चले जाने पर, उस मण्डल में अन्धकार छा गया।

तद्दिने रन्धनाभावाद् गृहधूमविवर्जिता ।
शोकमूका निरुच्छ्वासा निर्जीवेवाभवत् पुरी ॥ २५७ ॥

२५७ उस दिन रन्धन[1] के अभाव में गृह धूम से रहित, शोक से मूक, स्वामि-रहित, पुरी निर्जीव सदृश हो गयी।

यह स्थान चन्द्रभागा नदी के वाम तट पर है। लिदरखोल के संगम के दूसरी तरफ है। इस पर और अनुसन्धान की अपेक्षा है।

पाद-टिप्पणी

२५४ 'शून्या' पाठ–बम्बई।

पाद टिप्पणी

'प्रकाशके' पाठ–बम्बई।

२५६ (१) आशा पद में यह शब्द श्लिष्ट है। आशा का एक अर्थ दिशा है। सूर्य दिशा को प्रकाशित करता है। राजा जनता की आशा पूर्ण करता है।

(२) गुणी शब्द श्लिष्ट है। गुणियों का (राजा) आदर करता है। गुण का अर्थ कमल है। उसका बान्धव सूर्य है।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

२५७ (१) रन्धन द्र० बहारिस्तान शाही पाण्डु० . फो० . ५७ बी०, तारीख० आजम पाण्डु० : ४०।

शवागारोपरि शिला स्फाटिकीं रचनोज्ज्वलाम् ।
दीर्घां सर्वोन्नतां राज्ञो मूर्तिं परिणतामिव ॥ २५८ ॥

२५८ शवागार के ऊपर रचना से सुन्दर, दीर्घ एवं स्फटिक शिला[1] राजा की परिणत मूर्ति सदृश लग रही थी।

घनोत्कण्ठदिदृक्षाप्तरुदल्लोकाश्रुबिन्दुभिः ।
यत्र मुक्ताफलैः पूजा लसतीवोपरि प्रभोः ॥ २५९ ॥

२५९ अत्यधिक उत्कण्ठावश दर्शन की इच्छा के कारण रोते हुए, लोगों के अश्रुबिन्दु-रूप मुक्ताफलों से, जहाँ पर प्रभु के ऊपर मानो पूजा शोभित हो रही थी।

पाद टिप्पणी

२५८ (१) शिला : कब्र के ऊपर मूर्धा की तरफ लौह मजार (एक पत्थर) जिस पर मृतक का नामादि लिखा रहता है, उसे खतबा कहते हैं। उसे गाड़ देते हैं। उस पर दीपक रखने के लिए ताखा बना रहता है।

भूमि में गाड़ना समेटिक (शामी) प्रथा है। यहूदियों तथा उनकी पुरातन बाइबिल के अनुसार गाड़ना धार्मिक संस्कार है। कब्र में व्यक्ति कयामत अर्थात् प्रलय अथवा भगवान द्वारा पाप-पुण्य निर्णय के दिन उठेगा। पत्थरों या लकड़ियों पर किसी प्रकार की आकृति बनाना या उन्हें किसी पुण्यकार्य के प्रतीक स्वरूप गढ़ना परम्परा, संस्कार एवं सम्प्रदाय के विरुद्ध है। मैंने अपनी इसराइल यात्रा में देखा कि यहूदियों के कब्र पर एक अनगढ़ा खण्डित शिलाखण्ड गाड़ देते हैं। उससे कब्र की पहचान हो जाती है। तथापि जेरूसलम में मैंने महान् डेविड (दाऊद) तथा सुलेमान की पक्की बनी हुई कब्र देखा है। यहूदी लोग पत्थर या प्लास्टर के ताबूत में रखकर शव गाड़ने लगे थे। इस प्रकार के ताबूत या बक्स इसराइल के अनेक संग्रहालयों में रखे मिलेंगे। उनमें रत्न, द्रव्य आदि रखते थे। कब्र खोदकर धन निकालने वालों की एक गोल बन गयी थी। अनेक ताबूतों पर लोग लिख देते थे कि उसमें किसी प्रकार का धन नहीं है। अतएव उसे शान्ति से पड़े रहने दिया जाय।

मुसलमानों में कच्ची कब्र की मान्यता है। अमीर, नवाब, बादशाह अपना अधिक धन मजार बनाने में खर्च करते हैं। मुसलिम विधान के अनुसार शिला रखना आवश्यक नहीं है। कब्र की पहचान के लिये एक पत्थर लगा दिया जाता है। ताकि कुटुम्बीगण कब्र को पहचान कर फातिहा पढ़ें और *मृतात्मा के लिये दुआ माँगें। शिला लगाना पुण्य* कार्य नहीं है। उसका लगाना आवश्यक नहीं है। कहीं-कहीं लकड़ी भी मुसलिम देशों में पहचान के लिये लगा दी जाती है। जहाँ पत्थर का अभाव *होता है।*

सुल्तान जैनुल आबदीन के कब्र मजार सलातीन में कोई अभिलेख इस समय नहीं है। यदि वह शिलाखण्ड मिल जाता तो जैनुल आबदीन के मृत्यु के समय के विषय में विवाद मिट जाता।

राजतरंगिणी संग्रह में राज्यकाल ५० वर्ष दिया गया है। डाक्टर सूफी मृत्युकाल सन् १४७० ई०, वेंकटाचालम सन् १४७४ ई०, दिल्ली सल्तनत तथा कम्प्रि० हिस्ट्री में सन् १४७० ई० दिया गया है। (द्र० राजतरंगिणी संग्रह श्लोक ९९ पृष्ठ २४७ लेखक भाष्य।)

पौराः शुक्रदिने भान्ति यत्रान्तःप्रतिबिम्बिताः ।
राज्ञेव निकटं नीताः कुतूहलतयात्मनः ॥ २६० ॥

२६० शुक्रवार[1] के दिन जिस स्फटिक शिला में प्रतिबिम्बित होकर पुरवासी सुशोभित होते हैं, राजा मानो उन्हें कुतूहलवश अपने निकट ले आये ।

कवाटविकटं वक्षो मुखं पूर्णेन्दुसुन्दरम् ।
शुकवद्दीर्घनासाग्रं नेत्रे कमलकोमले ॥ २६१ ॥

२६१ कवाट सदृश विकट वक्षस्थल, पूर्णेन्दु सुन्दर मुख शुकवत् लम्बी नासिका कमल कोमल नेत्र —

भ्रूलेखे लोमशे भालं प्रभालम्भितलक्षणम् ।
सा बुद्धिस्ते गुणास्ताश्च राज्यकार्यावधानताः ॥ २६२ ॥

२६२ रोमपूर्ण भ्रूलेखाय प्रभा से सुलक्षण भाल वह बुद्धि, व गुण राज्यकार्य में वे सावधानियाँ—

स्मारं स्मारं जनः सर्वो राज्ञः पुर इव स्थितः ।
पर्यन्तनीरसासारं संसारं निन्दते न कः ॥ २६३ ॥

२६३ राजा के समक्ष स्थित सदृश होकर, सब लोग बार-बार स्मरण किये और अन्त में नीरस एवं निस्तत्व संसार की निन्दा किसने नहीं की ?

ज्योत्स्ना पूर्णसुधाकरस्य कुसुमोत्कर्षो वसन्तस्य यत्
सौभाग्यं शरदि प्रसन्ननभसो नार्या नवं यौवनम् ।
राज्ये चैव विवेकिनो नरपतेर्यद्वै सर्वसौख्यप्रदं
धाता तत् कुरुते स्थिरं यदि जने स्वर्गार्जने न स्पृहा ॥ २६४ ॥

२६४ पूर्ण चन्द्रमा की ज्योत्स्ना, वसन्त का कुसुमोत्कर्ष, शरद के निर्मलाकाश का सौन्दर्य, नारी का नवयौवन तथा राज्य में विवेकी राजा का सबको सुख प्रदान करना, (उन्हें) यदि विधाता व्यक्ति में स्थिर कर दे, तो स्वर्ग जाने की प्रति स्पृहा लोगों में न रह जाय ।

पाद टिप्पणी

२६० (१) शुक्रवार = जुमा । मुसलमान लोग जुमा को पवित्र दिन और उस दिन मृत्यु होना अच्छा मानते हैं । पैगम्बर मुहम्मद साहब का देहान्त सोमवार को हुआ था । शुक्रवार का मरना शुभ है । यह मुस्लिम शास्त्रीय परम्परा नहीं केवल एक मान्यता मात्र है । इससे यह भी प्रकट होता है कि शुक्रवार के दिन सुल्तान के कब्र पर आदर प्रकट करने अथवा सुल्तान प्रेमी मुसलमान फातिहा पढ़ने जाते थे ।

पाद टिप्पणी

२६१ (१) रूप वर्णन श्रीवर जैनुल आबदीन के स्वरूप का वर्णन करता है । जोनराज तथा अन्य परशियन इतिहासकारों ने सुल्तान के रूप का वर्णन नहीं किया है । श्रीवर के वर्णन से जैनुल आबदीन के रंग रूप की कल्पना की जा सकती है ।

पाद टिप्पणी

२६२ लम्भित् पाठ–बम्बई ।

बाल्ये पित्रा वियोगो वरसचिवभियो भ्रातृभृत्यैर्विरोधः
प्राप्ते राज्ये प्रवासो बहिरथ समरोऽप्यग्रजेनातिकष्टः ।
धात्रेयेभ्योऽथ चिन्ता तदनु निजसुतैर्यावदायुश्च बाधा
संसारे सर्वदासुसुतिकृति भविनां नित्यदुःखां स्थितिं धिक् ॥ २६५ ॥

२६५ बालकाल मे पिता से वियोग, श्रेष्ठ सचिवो से भय, भाइयो एव भृत्यों से विरोध, राज्य प्राप्त होने पर, बाहर प्रवास, भाई के साथ अति कष्टप्रद समर, (युद्ध) धात्रीपुत्रो से चिन्ता, उसके पश्चात् अपने पुत्रो से जीवनभर बाधा—नित्य दु खप्रद स्थिति को धिक्कार है।

नूनं जातकयोगेन पुत्रेभ्यो दुःखमन्वभूत् ।
अभूदस्य सुतस्थाने भौमो यत् पापवीक्षितः ॥ २६६ ॥

२६६ निश्चय ही जातकयोग[1] के कारण, पुत्रो से दुखी हुआ क्योंकि उसके सुतस्थान मे पापदृष्ट भौम[2] था।

पाद-टिप्पणी

२६६. (१) जातक योग मानव का फल बतानेवाला शास्त्र जातक कहलाता है। जातक शास्त्र में पचम स्थान के द्वारा पुत्र का विचार होता है। पापग्रह पुत्र की हानि एव शुभग्रह पुत्र की प्राप्ति कराते हैं। पचम स्थान में मगल होने पर पुत्र की हानि करता है। पापदृष्ट होने पर पुत्र नाशक होता है। जिसका सन्तान दुर्बल होता है, उसके पुत्रो की हानि होती है अथवा पुत्रों द्वारा विविध प्रकार का कष्ट होता है। ज्योतिष के अनुसार योग २८ होते हैं। फलित ज्योतिष का एक भेद है। जिसके अनुसार कुण्डली देखकर फल कहा जाता है।

(२) पाप दृष्टि भौम इसे मगल ग्रह कहते हैं। यह रक्त वर्ण है। पृथ्वी के अर्धव्यास ४२०० मील से कुछ बडा है। सूर्य से लगभग १४ करोड मील की दूरी पर स्थित है। पन्द्रह मील प्रति सेकेण्ड के वेग से चलता है। एक दशमलव ८८ वर्ष में सूर्य की परिक्रमा करता है। इसका घूर्णन काल चौबीस घण्टा सैंतीस मिनट है। सूर्य की परिक्रमा ६८७ दिनों में पूर्ण करता है। पृथ्वी के दिन से उसका दिन आधा घण्टा बड़ा होता है। मगल ग्रह के दो लघु उपग्रह हैं। उनका व्यास क्रम से चालीस तथा दस मील है। चन्द्रमा से आकार में दूना है। पृथ्वी एव मगल का घूर्णन काल लगभग समान है। पृथ्वी तथा मगल दोनो ग्रहो पर रात्रि तथा दिन की लम्बाई एक तरह की होती है। मगल पर ऋतु परिवर्तन होता है। पृथ्वी के ऋतुओ के प्राय समान होती है। भौतिक स्थिति पृथ्वी के समान है। मगल ग्रह का रंग लाल है। भूमि का पुत्र पुराणो की मान्यता के अनुसार माना जाता है अतएव नाम भौम पड़ा है। पुराणो के अनुसार यह ग्रह पुरुष है। जाति क्षत्रिय है। सामवेदी है। भारद्वाज मुनि का पुत्र है। इसकी चार भुजायें है। उनमें शक्ति, वट, अभय तथा गदा है। पित्त प्रकृति है। युवा है। क्रूर एव वनचारी है। रक्त वर्ण समस्त पदार्थों का स्वामी है। अधिष्ठात् देव कार्तिकेय है। अवंति देश का अधिपति माना गया है। कुछ अगहीन है। इस वर्ष मगल पर मनुष्यो द्वारा चालित यान पहुँच चुका है।

सप्तम तथा आठवें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मित्र के घर को देखता है, तो शुभ तथा अन्य का अशुभ होता है। सूर्य, चन्द्रमा एव बृहस्पति मित्र हैं। बुध शत्रु हैं। शुक्र एव शनी सम हैं।

पण्डिताः कवयस्तस्य वाचाला येऽभवन् सदा ।
त एव तं विना दृष्टाः पौषे मूकाः पिका इव ॥ २६७ ॥

२६७ उसके जो पण्डित एवं कवि सदा वाचाल रहते थे, वे ही उस राजा के बिना पौष मास में पिक[1] सदृश मूक देखे गये ।

याभूत् सरस्वतीनेत्रनिभा विकसिता सदा ।
ग्रन्थ्या सङ्कुचिता साभूद् बुधपुस्तकसंततिः ॥ २६८ ॥

२६८ सरस्वती के नेत्र सदृश जो सदा विकसित रहती थी, वह बुध (विद्वान) पुस्तकों की परम्परा संकुचित हो गयी ।

तर्कव्याकरणादीनां शास्त्राणां ये श्रमं व्यधुः ।
ते राजरञ्जनायालं देशभाषाश्रमं व्यधुः ॥ २६९ ॥

२६९ जिन लोगों ने तर्क, व्याकरण आदि शास्त्रों में श्रम किया था, वे लोग राजा की प्रसन्नता के लिये देश भाषा में प्रचुर श्रम किये ।

राज्ञा ये बहुमानिता गृहसुखश्रीमण्डिताः पण्डिताः
शास्त्राभ्यासमहर्निशं व्यदधुर्ग्रन्थार्जनाद्युत्सुकाः ।
पृष्टाः किं पठितेति ते प्रतिजगुः श्रीजैनभूपे गते
कुत्र व्याकरणं क्व तर्ककलहः कुत्रापि काव्यश्रमः ॥ २७० ॥

२७० राजा द्वारा बहुत सम्मानित गृहसुखश्री से मण्डित, जो पण्डित अहर्निश शास्त्राभ्यास करते थे और ग्रन्थार्जन आदि के प्रति उत्सुक रहते थे, पूछे जाने पर वे कह जाते थे—'श्री जैनुल आबदीन के चले जाने पर, कहाँ व्याकरण, कहाँ तर्क-विवाद और कहाँ साहित्य में श्रम ?'

पाद-टिप्पणी

२६७ (१) पिक : कोयल, कोकिल । मीमांसा भाष्यकार शबरस्वामी ने पिक शब्द को म्लेच्छ भाषा से गृहीत बताया है । पिक-बान्धव की संज्ञा वसन्त ऋतु तथा पिकबन्धु आम का वृक्ष माना गया है । आम में मंजरी वसन्त ऋतु में लगती है । शीतकाल में पिक की वाणी नहीं सुनाई पड़ती परन्तु कुसुमाकर के आगमन के साथ वह कुसुमों में बैठा कूजन लगती है—कुसुम शरासन शासन बन्दिनि पिक निकरे भज भावम्—गीतगोविन्द ११ ।

पाद-टिप्पणी

२६८ (१) बुध शब्द श्लिष्ट है । अर्थ बुद्ध तथा विद्वान है । दूसरा अर्थ भगवान बुद्ध है । यह अर्थ लगाने पर बौद्धों की पुस्तकों की परम्परा लुप्त हो गयी, यह अर्थ हो जायगा । श्रीदत्त ने बुद्ध का अर्थ विद्वान लगाया है ।

योऽभूत् सर्वकलानिधिः शुभविधिर्दाताभिगम्यो गुणी
काव्यज्ञो बहुभाषया गुणिरतः कारुण्यपुण्याकुलः ।
सोऽयं हन्त समीक्ष्यतेऽवनितले धिक् पापिनोऽस्मान् शठान्
ये जीवन्ति शुचा न यान्ति विपिनं संसारतृष्णाजिताः ॥ २७१ ॥

२७१ जो सब कलानिधि, शुभ विधि दाता, धीगम्य, गुणी, सब भाषाओ का काव्यज्ञ, गुणियो मे रत एव कारुण्यपूर्ण था, दु ख है, वह पृथ्वी तल पर पडा देखा जा रहा है। शठ हम पापियो को धिक्कार है, जो ससार के तृष्णा मे पड कर, जीवित हैं और शोक से वन नही चले जा रहे हैं।

हारेणेव विनाङ्गनाकुचतटी शास्त्रेण हीनेव धीः
सूर्येणेव विना प्रफुल्लनलिनी तारुण्यहीना तनुः ।
चन्द्रेणेव विना यथैव रजनी पत्या विना भामिनी
येनैकेन विना नृपेण न बभौ कश्मीरराज्यस्थितिः ॥ २७२ ॥

२७२ हार के बिना अगना की कुचतटी, शास्त्र से हीन बुद्धि, सूर्य के बिना प्रफुल्ल नलिनी, तारुण्य-रहित तनु (शरीर), चन्द्रमा के बिना रात्रि तथा पति के बिना भामिनी (स्त्री) सदृश, केवल उस राजा के बिना कश्मीर राज्य की स्थिति शोभित नही हुयी।

श्रीमत्तर्कादिविद्याभ्यसनरसलसद्गर्वसर्वप्रवीण-
प्रेक्षोद्यद्दानमानोचितविचितयशोभूषिताशेषदेहः ।
श्रीजैनोल्लाभदेनो नरपतितिलकः सर्वशास्त्रप्रवीणः
कश्मीरान् योजयित्वा दिवमपि स गतो योजनायेव नष्टाम् ॥ २७३ ॥

२७३ तर्क आदि विद्याभ्यास रस से शोभित, स्वाभिमानवाले सब विषयो मे प्रवीण, लोगो को देखकर, उचित दान-मान के द्वारा प्राप्त यश से भूषित शरीर एव सर्व शास्त्रो में प्रवीण, नर-पति-तिलक, जैनुल आबदीन काश्मीर को सगठित करके, नष्ट स्वर्ग को भी योजित करने के लिये ही गया है।

इत्यादि सन्ततं सन्तो वदन्तोऽत्यन्तचिन्तया ।
नितान्ततान्तहृदया विश्रान्तिं नाभजन्त ते ॥ २७४ ॥

२७४. उस प्रकार निरन्तर कहते हुये, अत्यन्त चिन्ता से नितान्त सतप्त हृदय सज्जन लोग विश्रान्ति (सुख) नही प्राप्त किये।

पाद-टिप्पणी -

२७१ 'ञ्छठा' के स्थान पर 'ञ्शठान' पाठ—बम्बई।

दृष्टो रम्यश्चिरमुपवने वंशवाटो जनैर्यो
नानावर्णैर्नवतृणगणैर्भूषितो भूरिपत्रः ।
तत्रान्योन्याहननजननात् तादृगम्युत्थितोऽग्नि-
र्येनैकान्तादुपवनगतं सर्वमेव प्रनष्टम् ॥ २७५ ॥

२७५. लोगो ने उपवन में चिरकाल तक नाना वर्ण के नवीन तृण गणो से भूषित, प्रचुर पत्र युक्त जिस वंश-पुंज को देखा था, वहाँ परस्पर संघर्ष से ऐसी अग्नि उठी, जिससे एक ओर से उपवनगत, वह सब नष्ट हो गया।

या कारकसभा भव्याऽभवच्छ्रीजैनभूपतेः ।
वर्षेणैकेन तच्छापात् सर्वा स्वप्नोपमाभवत् ॥ २७६ ॥

२७६ श्री जैन भूपति की जो 'भव्य कारक सभा'[1] थी, वह सब एक ही वर्ष में उसके शाप से स्वप्नवत् हो गयी।

क्षुब्धे राज्यमहाम्भोधौ भूपप्रमयवायुना ।
तत्तत्सेवकरत्नौघः शतैकीयोऽवशिष्यत ॥ २७७ ॥

२७७ राजा की मृत्यु-रूपी वायु से, उस राज्य-रूप महासागर के, क्षुब्ध हो जाने पर, तत्-तत् सेवक-रत्नो का समूह, सैकडो मे एक शेष रहा।

प्रभवति उव यावत् स्वप्रभुः सौख्यदाता
विदधति खलु तावत् सेवकास्तस्य मानम् ।
इह वसति वसन्तो यावदेव स्वनन्तो
मधुकरपिकभेकास्तावदेवाद्रियन्ते ॥ २७८ ॥

२७८ जब तक सौख्यदाता अपना स्वामी समर्थ रहता है, तब तक वे सेवक, उसका मान करते हैं, क्योंकि जब तक, वसन्त रहता है, तब तक ही शब्दायमान मधुकर, पिक एवं भेक[1] (मेढक) समादृत होते हैं।

पाद-टिप्पणी

२७५ 'न्याहनन जननात' पाठ–बम्बई।

पाद टिप्पणी

२७६ (१) सभा दरबार। द्र० १ ७ १०५, १ : ७ : २७४, ३ १६।

पाट-टिप्पणी

२७७ 'शिष्यत' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२७८ (१) भेक : मेढकों की ध्वनि। 'पङ्के निमग्ने करिणि भेको भवति मूर्धक ।'

केचिदप्यवशिष्टा ये सेवकास्तस्य भूपतेः ।
तेऽप्यनन्तरविज्ञानात् तृणतुल्योपमां गताः ॥ २७९ ॥

२७९ उस राजा के जो कुछ सेवक अवशिष्ट रहे, वे भी विना अन्तर के देखे, जाने के कारण, तिल एवं तूल (रुई) सदृश हो गये ।

इति पण्डितश्रीवरविरचितायां जैनराजतरङ्गिण्यां जैनशाहिवर्णनं नाम प्रथमस्तरङ्गः ॥ १ ॥

इस प्रकार पण्डित श्रीवर विरचित जैनराजतरंगिणी जैनशाहि वर्णन नामक प्रथम तरंग समाप्त हुआ ।

पाद-टिप्पणी

२७९ बम्बई संस्करण का उक्त श्लोक क्रम-संख्या २७९, श्रीकण्ठ कौल के २७७ तथा कलकत्ता की ८०५वीं पंक्ति है। बम्बई संस्करण में ८०५ श्लोक हैं। कलकत्ता संस्करण में ८०६ पंक्तियाँ क्षितिपाठों सहित हैं। श्रीकण्ठ कौल संस्करण प्रथम तरंग में ८०२ श्लोक हैं। कलकत्ता संस्करण के श्लोकों की संख्या नहीं दी गयी है। पंक्तियों की संख्या है। कुछ विद्वानों ने पंक्तियों को श्लोक मान कर गलतियाँ की हैं। बम्बई संस्करण में प्रत्येक श्लोकों की क्रमसंख्या अलग-अलग है।

कलकत्ता में प्रथम तरंग के प्रथम से सप्तम सर्ग के अन्तिम श्लोकों की गणना एक साथ की गयी है। बम्बई तथा श्रीकण्ठ कौल संस्करण में प्रत्येक सर्ग की संख्या अलग-अलग दी गयी है।

पाद-टिप्पणी

उक्त सर्ग में कलकत्ता एवं बम्बई संस्करण के अनुसार २७९ श्लोक एवं श्रीकण्ठ कौल के अनुसार २७७ श्लोक हैं। श्लोकों में वास्तव में अन्तर नहीं है। श्रीकण्ठ कौल ने चार श्लोकों को तीन पंक्तियों में लिया है। कलकत्ता तथा बम्बई में वे दस पंक्तियों में लिखे गये हैं। इस प्रकार श्रीकौल की चार पंक्तियों के २ और श्लोक हो जाते हैं। अतः दो बढ जाने के कारण प्रस्तुत संख्या २७९ हो गयी है।

रघुनाथ सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री बच्कूनाथ सिंह जन्मस्थान पंचक्रोशी अन्तर्गत वरुणा तीर स्थिति ग्राम खेवली, रामेश्वर स्थान समीप तथा निवासी मुहल्ला चौहट्टा (औरंगाबाद) वाराणसी नगर (उत्तर प्रदेश) भारतवर्ष ने श्रीवर कृत जैनराजतरंगिणी प्रथम तरंग का भाष्य एवं अनुवाद लिखकर समाप्त किया। सन् १९७६ ई० = संवत २०३३ विक्रमी, शक० १८९८, कलि गताब्द ५०७७, फसली १३८३–१३८४, हिजरी० १३९६–१३९७, बंगला संवत् १३८२–१३८३ = लौकिक या सप्तर्षि संवत् ५०५२।



द्वितीयस्तरंगः

द्वितीय तरंग

मगलाचरण

वन्दे विश्वमय देव सर्ववाङ्मन्त्रनायकम् ।
यदशवर्णनस्तुत्या तत्पूजाफलभाड् न कः ॥ १ ॥

१ समस्त वाक् मन्त्र के नायक विश्वमय उस देव की वन्दना करता हूँ, जिसके अश मात्र वर्णन स्तुति से, उसके पूजा का फलभागी कौन नही होगा ?

पादो दक्षिण एप यच्छति पद यत्रैव नाटयेच्छया
तत्रैवेच्छति नाम वामचरणः सञ्चारसस्कारतः ।
इत्थ मण्डलमण्डिता समपदां चारीं नरीनर्ति यः
सन्ध्यायां स सदा ददातु सुखितां देवोऽर्धनारीश्वरः ॥ २ ॥

२ यह दक्षिण पाद नर्तन इच्छा स जहाँ पर आधार देता है वही पर, सचार सस्कारवश वाम चरण पग देना चाहता है, इस प्रकार सन्ध्या समय, जो मण्डलाकार शोभित श्रम पदकारि नृत्य करते हैं, वह भगवान अर्धनारीश्वर सुखभाव प्रदान करें।

हैदर शाह (हाजी खा) सन् १४७०-१४७२ ई०)

अथ हैदरशाहाख्यां ख्यापयन् मुद्रिकार्पणैः ।
हाज्यखानोऽग्रहीद् राज्य स ज्यैष्ठप्रतिपद्दिने ॥ ३ ॥

३ मुद्रावण[1] द्वारा 'हैदरशाह' नाम प्रख्यात करते हुये, उस हाज्यि खान ने ज्येष्ठ प्रतिपद के दिन[2] राज्य ग्रहण किया ।

पाद टिप्पणी

१ (१) मगलाचरण प्रत्यक तरग का आरम्भ कल्हण एवं शुक ने मगलाचरण स किया है। जोनराज की तरगिणी केवल एक तरग है। उसमें भी प्रारम्भ में वन्दना की गयी है। प्राचीन काव्य प्रणयन की शैली है कि कवि इष्टदेव का स्मरण करता है। कल्हण आदि सभी राजतरगिणी कारा ने अधनारीश्वर की वन्दना की है। श्रीवर उसी परम्परा का निर्वाह करता है।

पाद टिप्पणी

(२) पाठ–बम्बई।

पाद टिप्पणी

३ (१) मुद्रावण हैदरशाह नाम से सील-मुहर जारी करना अभिप्रेत है। यह राज्यप्राप्ति का

अर्घ्यार्घो दक्षिणानन्दी तत्तत्सुकृतसूचकः ।
वभावर्थिजनानन्दी स राज्यग्रहणोत्सवः ॥ ४ ॥

४ वह राज्य ग्रहण उत्सव[1] उत्तम जनों के लिये सम्मानप्रद, दक्षिणा द्वारा आनन्दकर, तत् तत् सुकृतों का सूचक, याचक जनों के लिये आनन्ददायक, सुशोभित हुआ।

प्रथम लक्षण है। साथ ही साथ नवीन राजा अपने सील-मुहर से अपने नाम का खुतवा पढ़ने का आदेश जारी करता था।

(२) हैदरशाह मुसलिम राजा प्रायः अपना नाम राज्यप्राप्ति पश्चात तथा अभिषेक किंवा गद्दी पर बैठने के समय नाम बदल लेते थे। वह प्रथा भारत में भी सुदूर प्राचीन काल से प्रचलित है। कुछ राजा अश्वमेध सम्पादन के समय भी नाम बदल लेते थे। कुमारगुप्त प्रथम ने अपना नाम महेन्द्र रख लिया था। राज्याभिषेक के समय राजा जब अपना नाम बदलता था, तो उस संस्कार को भी प्राचीन काल में अभिषेक कहा जाता था।

(३) ज्येष्ठ प्रतिपद राज्य ग्रहण काल श्रीवर ने सप्तर्षि वर्ष ४५४६ = ज्येष्ठ प्रतिपदा = श्रीदत्त कलि० ४५७१ = शक० १३९२ = विक्रमी० १५२७ = सन् १४७० ई०, राज्यकाल १ वर्ष, १० दिन = पीर हसन ने विक्रमी० १५३१ = हिजरी ८७९, राज्यकाल १ वर्ष, २ मास दिया है। मोहिबुल हसन ने सन् १४७० ई०, तारीख रशीदी में रोजस ने सन् १४६९ ई० = हिजरी ८७४ दिया है। आर० के० परमू न सन् १४७० ई०, कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया भाग ३, श्रीदत्त, डॉ० सूफी, कम्प्रिहेन्सिव न सन् १४७० ई० = हिजरी० ८७५ तथा दिल्ली सल्तनत (विद्या भवन) में भी सन् १४७० ई० दिया गया है। वेंकटाचालम ने सन् १४७४ ई०, आइने अकबरी, तवक्काते अकबरी तथा फिरिश्ता ने राज्यकाल १ वर्ष, २ मास दिया है (आइने० ४२४)। राजतरंगिणी संग्रह में राज्यकाल २ वर्ष दिया गया है।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—हाजी खाँ अपने पिता के उपरान्त तीन दिन में सुल्तान हैदर-शाह की उपाधि धारण कारण करके, सिकन्दरपुर में जो नोहत्ता शहर (नवशहर) के नाम से प्रसिद्ध है, अपने पिता की प्रथानुसार सिंहासनारूढ हुआ। (४४६-६७२)।

फिरिश्ता लिखता है—हाजी खाँ बिना किसी विरोध के सिंहासनारूढ हुआ (४७४)।

समसामयिक घटनाएँ—सन् १४७० ई० में बहमनी राज्य ने विजयनगरम् राज्य पर आक्रमण कर ले लिया। उड़ीसा में पुरुषोत्तम (१४६७-१४९७ ई०), आसाम में अहोम वंशीय सुमेन पाल (१४३९-१४८८ ई०), सालुव नरसिंह ने उदयगिर विजय (सन् १४२८-१४८० ई०) किया। मेवाड़ में उदय राजा था। विजयनगरम् का राजा संगम वंशीय विरूपाक्ष था।

हुसेन शरकी जामा मसजिद जौनपुर का निर्माण कराया। रुकनुद्दीन बरबक बंगाल का सुल्तान इस समय था। सन् १४७० ई० में कुतुबशाह ने कच्छ तथा सिन्ध पर आक्रमण किया। पश्चिमी गुजरात में मुस्तफाबाद आबाद किया। महमूद बुगरा गुजरात ने गिरनार पर अधिकार किया और युदास्मा सरदार को इसलाम कबूल करने पर मजबूर किया। थिहतुर का आवा बरमा में, श्रीलंका में श्री भुवनेकबाहु द्वितीय राज्य तथा मालवा म गयासुद्दीन का राज्य था। सन् १४७१ ई० मे मुहम्मद बुगरा गुजरात ने सिन्ध पर आक्रमण किया। सन् १४७२ ई० में बहलोल लोदी मुलतान के हुसेन शाह लंगा के विरुद्ध सैनिक अभियान किया। पेगू बरमा में धम्मजेदी ने राज्य प्राप्त किया।

पाद-टिप्पणी

४. (१) उत्सव . राज्यारोहण उत्सव में करद

राज्याभिषेक

शुद्धांशुकान्वितै राजवल्लभैः सुखशालिभिः ।
बभौ शेकन्धरपुरी पूर्णा द्यौरिव तारकैः ॥ ५ ॥

५ शुभ्र वस्त्र युक्त एवं सुखी राजा वल्लभ-जनों से पूर्ण, सेकन्धरपुरी[1] तारकाओं[2] से आकाश सदृश सुशोभित हो रही थी।

राजधान्यङ्गने हैमं सिंहासनमशिश्रियत् ।
अतितीक्ष्णो नवो राजा मेरोस्तटमिवांशुमान् ॥ ६ ॥

६ राजधानी के प्रांगण में स्वर्ण रूप सिंहासनमय, अति तीक्ष्ण नवीन राजा, उसी प्रकार आरूढ हुआ, जिस प्रकार मेरु के तट पर सूर्य।

बभतुर्भूपतेरग्रे स्थितौ तस्यानुजात्मजौ ।
इन्दोः पुरस्तादुद्यन्ताविव शुक्रबृहस्पती ॥ ७ ॥

७ राजा के समक्ष स्थित उसके अनुज[1] एवं आत्मज[2] चन्द्रमा[3] के सम्मुख उदित होते, शुक्र[4] एवं बृहस्पति[5] सदृश शोभित हो रहे थे।

राजाज्ञा का भेंट तथा राज्य के अधिकारियों को मूल्यवान वस्तुएँ दी गयी (म्युनिख पाण्डु० ७७ बी०)।

पाद-टिप्पणी :

५ (१) सकन्धरपुरी : सिकन्दरपुरी = श्रीनगर। परशियन इतिहासकारों ने सिकन्दरपुरी में ही राज्याभिषेक की चर्चा की है। सिकन्दरपुरी में राज्याभिषेक सम्पन्न किया गया (फिरिश्ता : ४७५)।

(२) तारिका : उत्सव में श्रीनगर में दीपमालिका लगायी गयी थी। वह तारा मण्डल सदृश लग रही थी। राज्य ग्रहण आदि उत्सवों पर आज भी दीपमालिका सजायी जाती है। आजकल पन्द्रह अगस्त तथा २६ जनवरी को दिल्ली विजली से खूब सजायी जाती है।

तबक्काते अकबरी के नोट में लिखा है कि सिकन्दरपुरी का उल्लेख राजतरंगिणी में नहीं है। यह भ्रामक है (६७२ नोट = ५)। तबक्काते अकबरी में लिखा गया है। 'सिकन्दरपुरी जो नौशहर के नाम से प्रसिद्ध है (४४६ = ६७२-६७३)। द्र० २ ४२, ३ ७, २००।

पाद-टिप्पणी :

६ (१) स्वर्ण सिंहासन : हसन खाँ के प्रसंग में श्रीवर ने एक स्थान पर केवल सिंहासन (३ : ८) तथा दूसरे स्थान पर रजत आसन (४ : ६) का उल्लेख किया है।

तबक्कात अकबरी में उल्लेख है—उसके भाई बहराम खाँ तथा उसके पुत्र हसन खाँ ने सुल्तान के सर पर ताज रखा (४४६ = ६७३)।

पाद टिप्पणी :

७ (१) अनुज : बहराम खाँ।

(२) आत्मज : हसन।

(३) चन्द्रगुरु : ज्योतिष शास्त्र में चन्द्रमा-गुरु के योग से गुरुचान्द्री योग और चन्द्र-शुक्र के योग से शुभ योग होता है, यदि ये तीनों एक साथ हो जाँय तो अति उत्तम होते हैं। अतएव यहाँ उत्तम राजा का लक्षण, चन्द्र एवं गुरु-शुक्र के उपमा द्वारा वर्णित है।

(४) बृहस्पति : शुक्र एवं मंगल के अतिरिक्त

राज्ञो हस्सनकोशेशस्तद्राज्यतिलकं ददौ ।
सौवर्णं पुष्पपूजाढ्यं यदृच्छाविहितव्ययः ॥ ८ ॥

८ स्वेच्छानुसार व्यय करके, कोशेश हस्सन[1] ने राजा को सुन्दर, पुष्प पूजा से समृद्ध, राजतिलक[2] किया ।

वृहस्पति ग्रह सबसे अधिक कान्तिमान है। सौर मण्डल में सूर्य के अतिरिक्त सबसे बड़ा है। इसका आकार इतना बड़ा है कि १४१० पृथ्वी का आकार इसमें समा सकता है। इसका विषुवत व्यास ८८७०० मील है। ध्रुवीय व्यास ८२९०० मील है। ध्रुवों पर यह चपटा है। दीर्घ वृत्ताकार लगता है। यह सूर्य की परिक्रमा ११ ८६ वर्षों में करता है। यह नव घण्टा ५० मिनट में असाधारण वेग से घूर्णन करता है। अतएव वायु मण्डल अत्यन्त क्षुब्ध रहता है। वृहस्पति के अभी तक १२ उपग्रहों का पता लग सका है। कुछ उपग्रह बुध ग्रह के बराबर है। इन बारह उपग्रहों में चार उपग्रह वृहस्पति के चारों ओर विपरीत दिशा में चलते हैं। शनि तथा मंगल के मध्य वृहस्पति की स्थिति है। वृहस्पति से सूर्य ४८ करोड ३२ लाख मील दूर है। सौर मण्डल का यह पाँचवाँ ग्रह है। यह ग्रह स्वयं प्रकाशमान नहीं है। सूर्य के प्रकाश से केवल चमकता है। इसका तल पृथ्वीतल के समान ठोस नहीं है। यह बालग्रह कहा जाता है। इस पृथ्वी की अवस्था पहुँचने में काफी समय लगेगा।

वैदिक साहित्य में बुद्धि, प्रज्ञा एवं यज्ञ का अधिष्ठाता माना जाता है। इसका नाम 'सदसस्पति' 'ज्येष्ठराज' एवं 'गणपति' दिया गया है। (ऋ० १ १८ ६–७, २ २३ १)। वृहदारण्यक उपनिषद् में वाणीपति (बृ० १ ३ २०–२१) तथा मैत्रायणी संहिता एवं शतपथब्राह्मण में वाचस्पति कहा गया है (मै० स० २ ६, श० ब्रा० १४ ४ १)। उच्चतम आकाश के महान प्रकाश से वृहस्पति का जन्म हुआ है। जन्म प्राप्त करते ही, इसने महान् तेजस्वी शक्ति एवं गर्जन द्वारा अन्धकार दूर कर दिया (ऋ० ४ ५०, १० ६८)। इसे सप्तमुख, सप्तरश्मि, सुन्दर जिह्वा, तीक्ष्ण सींगों वाला, नील पृष्ठ तथा शत पक्षोंवाला वर्णित किया गया है (ऋ० ४ ५०, १ १९०, १० १५५, ५ ४३, ■ ९७)। यह स्वर्ण वर्ण है। उज्ज्वल, विशुद्ध एवं स्पष्ट वाणी बोलनेवाला है (ऋ० ३ ६२, ५ ४३, ७ ९७)। वृहस्पति ग्रह ब्रह्मणस्पति कहा गया है। इसके रथ को अरुणिम अश्व खींचते हैं (ऋ० १० १०३, २ २३)। एक पारिवारिक पुरोहित है (ऋ० २ २४)। वृहस्पति देवगुरु माने जाते हैं।

वृहस्पति के पत्नी का नाम धेना है (गो० ब्रा० २ ९)। धेना का अर्थ वाणी है। जुहू नामक इसकी दूसरी पत्नी भी है।

पुराणों की मान्यता के अनुसार, सौर मण्डल में स्थित वृहस्पति नक्षत्र यही है। इसकी पत्नी का नाम तारा था। सोम ने तारा का अपहरण किया था (वायु० ९० २८–४३, ब्रह्म० ९ १९–३२, उद्योग० ११५ १३)।

पाद टिप्पणी

द्वितीय पद के प्रथम चरण का पाठ सदिग्ध है।

८ (१) हस्सन फारसी इतिहासकारों ने नाम हसन कच्छी दिया है। उसके वतन के कारण नाम पडा था। वह काश्मीर में कंछ से आया था। कंछ या कछ क्षेत्र मकरान से लगा हुआ है। क्रम से बहराम तथा हस्सन ने ताज सिर पर रखा तत्पश्चात हस्सन ने राजतिलक एवं माल्यार्पण किया।

(२) राजतिलक सुल्तानों का राज्याभिषेक हिन्दू तथा मुसलिम रीति दोनों तरहों से होता रहा है (जैन० ३ १२)। श्रीवर यह स्पष्ट लिखता है कि तिलक हस्सन कोशेश ने किया था। कालान्तर में हस्सन को सुल्तान ने धोखा से दरबार में बुलवाकर अपने सम्मुख ही हत्या करवा दिया था (२ ७७–८५)।

स हाज्यहैदरनृपो घनकालोर्जितप्रभः ।
धाराधर इव धरां दधार धरणीधरः ॥ ९ ॥

९. घन काल से प्रवृद्ध, प्रभाशाली मेघ सदृश, वह धरणीधर हाजी हैदर ने धरा को धारण किया ।

सोऽनुजं स्वसमं भूमिनायकः सुक्षिते रसात् ।
बहामखानं नाग्रामदेशे तं स्वामिनं व्यधात् ॥ १० ॥

१० उस भूमि-नायक ने प्रमवश, अपने समान अनुज, उस बहराम खान को सुक्षित[1] (सुन्दर भूमि) नाग्राम[2] देश का स्वामी बना दिया ।

क्रमराज्येक्षिकादेशे स्वामिनं स्वसुतं व्यधात् ।
चिरान्निजसुतप्राप्त्या यौवराज्यसुखादपि ।
पितृशोकाहतोऽप्यन्तर्विश्रान्तिमभजन्नृपः ॥ ११ ॥

११ अपने पुत्र को क्रमराज[1] एवं दक्षिका[2] देश का स्वामी बना दिया । चिरकाल पश्चात् अपने पुत्र की प्राप्ति से पितृ शोक के कारण दुखी नृपति ने युवराज[3] सुख से भी अधिक अन्तः शान्ति प्राप्ति की ।

हिन्दू राजाओं के समान मुसलिम सुलतान भी अभिषेक के समय हवन करते थे । शाहुल इसलाम तथा मन्त्रीगण राजा को तिलक लगाते थे । सुवर्ण तथा पुष्प देते थे (माहिबुल पृष्ठ २४०) ।

हैदरशाह की पत्नी का नाम गुल खातून था । वह हिन्दू रीति रिवाज मानती थी ।

फिरिश्ता के अनुसार अनुज बैराम खान ने ज्येष्ठ भ्राता हाजी खान का हैदर नाम से राज्याभिषेक किया (४७५) ।

पाद टिप्पणी

बम्बई तथा कलकत्ता संस्करण का उक्त श्लोक १०वां है ।

१० (१) बहराम खाँ : पीर हसन लिखता है कि सुलतान ने उसे अपना वजीर बनाया (पृ० १८७) ।

(२) सुक्षित : श्रीदत्त ने शब्द को नाम वाचक माना है । इसका अर्थ यहाँ सुन्दर भूमि किया गया है ।

(३) नाग्राम : वर्तमान नागाम है । यह स्थान चाप के उत्तर है । नागाम परगना, कामराज अर्थात् क्रमराज में है । स्टीन ने इसे नाग्राम कोट तथा नाग्राम राष्ट्र लिखा है (१ : १४१, १८१, २ : ४) । नाग्राम की जागीर समय-समय पर भिन्न भिन्न व्यक्तियों को सुलतानों ने दिया है । (म्युनिख पाण्डु० ७७ बी०) ।

तवक्कात अकबरी में उल्लेख है—बहराम खाँ को नाकाम (नाग्राम) नामक जागीर प्रदान कर दी (४४६) ।

पुरानी फारसी लिपि में काफ और गाफ एक तरह से लिखा जाता था । अतएव नाग्राम को नाकाम पढ या लिख देना आश्चर्य की बात नहीं है । फिरिश्ता ने भी 'नाकाम' ही लिखा है कि अनुज बहराम खाँ को नाकाम (नाग्राम) की जागीर दी गयी (४७५) ।

नाग्राम ग्राम दूधगंग के दक्षिण तट से कुछ दूर श्रीनगर से ११ मील पर स्थित है । श्रीनगर से चरार शरीफ जानेवाली सड़क पर है । मजेठ मूल जो बादामी रंग रंगने के काम में आता है यहाँ मिलता है । स्थानीय भाषा में इसे लतो कहते है ।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

११. कलकत्ता संस्करण में प्रथम पद 'क्रमराज्य

तस्माद् विहितसेवास्तुदेशाधीशत्वराजिताः ।
प्रसादमतुल प्राप् रावत्रलवकादयः ॥ १२ ॥

१२ सेवा द्वारा देशाधीशत्व को प्राप्ति से सुशोभित रावत्र[1], लवकादि (लोलकादि) उससे अतुल प्रसाद प्राप्त किये ।

अन्येऽप्युच्चावचान् ग्रामान् सेवका नवभूपतेः ।
पूर्वसेवानुसारेण प्रसाद प्रतिपेदिरे ॥ १३ ॥

१३ अन्य भी सेवक नवीन राजा से पूर्व सेवा के अनुसार, उससे ऊँचे-नीचे गाँवो के प्रसाद रूप मे प्राप्त किये ।

राजा राजपुरीसिन्धुपत्यादीन् दर्शनागतान् ।
प्रत्यमुञ्चदलकृत्य पार्थिवोचितया श्रिया ॥ १४ ॥

१४ राजा ने दर्शनागत राजपुरी[1], सिन्धुपति[2] आदि[3] राजाओ को राजोचित श्री से अलकृत[4] कर मुक्त किया ।

व्याघात' नही है । श्लोक केवल दो पदो का नही है । बम्बई म तीन पद है ।

(१) क्रमराज्य कामराज । द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ४०, २ १९१, ३ २१, ६५ ८६ । (म्युनिख पाण्डु० ७७ बी०) ।

(२) इक्षिका नाग्राम किंवा नागाम परगना में पछगोम है । श्रीनगर अचल तक विस्तृत है । इसके मध्य में दामोदर उड़ अथवा दामदर उड़ स्थित है इस समय येच परगना में है । स्तीन का मत है कि यह येच परगना में है (स्तीन रा० २ ४७५) । द्र० ३ २५ ।

(३) युवराज वलीअहद । द्रष्टव्य टिप्पणी १ २ ५ (म्युनिख पाण्डु० ७७ बी०) ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'किमराज (कामराज) की विलायत हसन खाँ को जागीर में दे दी गयी और उसे अपना अमीरुल उमरा तथा वलीअहद (युवराज) नियुक्त कर दिया (४४६–६७३) । पीर हसन भी यही लिखता है (१८७) ।

फिरिश्ता ने उल्लेख किया है—सुल्तान ने पहला काम यह किया कि अपने पुत्र को अमीरुल उमरा का खिताब दिया । उसे अपना वलीअहद तथा जीवन पर्यन्त के लिए गुजरज की जागीर दिया (४७५) । क्रमराज को गुजरज लिखा गया है क्योंकि पुरानी फारसी में काफ और गाफ एक तरह से लिखे जाते थ । अनुवादकों ने नाम का अनुवाद करने में इसीलिए गल्ती किये है । यदि गाफ को काफ पढा जाय तो कजराज होता है । यह कमराज का अपभ्रंश है । द्र० १ २ ५, १ ३ ११७, २ १७९, ३ २, ६ ४ २१ ।

पाद टिप्पणी

१२ (१) रावत्र द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ८६ ४ ३३९ ।

पाद टिप्पणी

१४ (१) राजपुरी राजोरी । द्र० १ १ ९१, १०७, १ ३ ४०, १ ३ ८० ।

(२) सिन्धुपति फिरिश्ता के अनुसार यह नाम निजामुद्दीन होना चाहिए । वह २८ दिसम्बर सन १४६१ ई० को राजगद्दी पर बैठा और ३२ वर्ष शासन किया (४२९) ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है कि ४८ वर्ष शासन किया था ।

सौवर्णकर्तरीवन्धसुन्दरा नृपमन्दिरे ।
ननन्दुर्मन्त्रिसामन्तसेनापतिपुरोगमाः ॥ १५ ॥

१५ राज प्रासाद में सुवर्ण कटारी (कर्तरी) बन्द से शोभित मन्त्री, सामन्त, सेनापति, पुरोगामी (प्रधान-अग्रगामी) लोग आनन्दित होते थे।

पितृशोकार्पितानर्घपट्टांशुकविभूषणाः ।
विचेरुः सेवकास्तस्य तदन्तिकगताः सदा ॥ १६ ॥

१६ पितृ शोक के कारण प्रदान किये गये, बहुमूल्य पट्टांशुक से विभूषित, उसके सेवक सदैव उसके निकट विचरण करते थे।

आसीद्राजा च सततं प्रकामं दोषनिष्क्रियः ।
स्वपक्षपालने सक्तः सन्ध्याक्षण इवोडुपः ॥ १७ ॥

राजा की नीति

१७ दोषनिष्क्रिय राजा सन्ध्याकाल में चन्द्रमा के समान निरन्तर अपने पक्ष पालन में ही अति सलग्न रहता था।

पक्षपातीक्षणापत्यप्रतिपालनतत्परः ।
लोभक्रोधविरक्तात्मा मोहान्धक्षपणक्षमः ॥ १८ ॥

१८ पक्षपातपूर्वक सन्तान के पालन में तत्पर, लोभ क्रोध से विरक्त, मोहान्धकार दूर करने में समर्थ—

सैदनासिरपुत्रो यः स सेर्ज़ाहस्सनाभिधः ।
अहो तत्पितृवत् पूज्यो बहुरूपादिराष्ट्रभाक् ॥ १९ ॥

१९ सैय्यिद नासिर का पुत्र सैय्या हस्सन बहुरूप[1] आदि राष्ट्रों का अधिपति था। आश्चर्य है! वह अपने पिता के समान पूज्य था।

उत्सवादिसदाचारसत्कारेषु सभान्तरे ।
त एव प्रथमं मान्यास्तद्राज्ये सर्वदाभवन् ॥ २० ॥

२० उसके राज्य में, सभा में, उत्सव आदि में, सदाचार में, सत्कारों में, वे लोग ही सर्वदा, प्रथम मान्य होते थे।

---

(३) आदि : फिरिश्ता लिखता है—बहुत से राजा जो उसके राज्याभिषेक उत्सव में सिकन्दरपुरी में आये थे—उन्हें भेंट देकर विदा किया (४७१)।

(४) अल्कृत : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—विभिन्न स्थान के राजाओं ने जो सवेदना तथा बधाई हेतु आये थे, उन्हें घोड़े तथा खिल्अत देकर सम्मानित किया (४४६-६७३)।

पाद-टिप्पणी :

१९ (१) बहुरूप : बीरू परगना का प्राचीन नाम बहुरूप है। कुलू जिला के पश्चिम पीरपंजाल पर्वतमाला की दिशा में बहुरूप परगना का क्षेत्र था। बहुरूप नामक एक नाग भी है। उसी नाग के नाम पर परगना का नाम पड़ा है। यह नाग बीरू ग्राम में है। विशेष द्रष्टव्य टिप्पणी जोन० २५२ लेखक। द्र० ४ ६३५।

पाद-टिप्पणी

२० द्वितीय पद के प्रथम एवं द्वितीय चरण का सन्दिग्ध है।

एतान्यक्षाश्रयान्मद्वद्भाव्ययं बलवानिति ।
मेर्जाहस्सनपुत्र्याः स पाणिं पुत्रमजिग्रहत् ॥ २१ ॥

२१ 'इसके पक्ष का आश्रय लने से मेरे समान यह भी बलवान हो जायगा'—अत उसने पुत्र का मिर्जा हस्सन की पुत्री से पाणिग्रहण[1] करा दिया।

हत्वा ज्यंमरमार्गेशात्स ज्यहाङ्गिरमार्गपे[1]
बाङ्गिल प्रददौ राजा तद्गुणाकृष्टमानसः ॥ २२ ॥

२२ उस राजा ने वाङ्गिल[1] को ज्यशर[2] मार्गेश से लेकर, गुणो से आकृष्ट होकर, ज्यहाँगीर मार्गपति को प्रदान किया।

चक्रे कृतापकाराणामप्यनुग्रहमेव सः ।
प्रणम्य सिंहः पूर्वं हि हन्ति दन्तिगण ततः ॥ २३ ॥

२३. उसने अपकार करनेवालो पर भी अनुग्रह किया, सिंह पहले प्रणाम करके ही पश्चात् हस्ति समूह का हनन[1] करता है।

गूढभावो महीपालस्तत्तच्चेष्टां चरैर्विदन् ।
तदा हस्सनकोशेशं संमान्याधिकृतं व्यधात् ॥ २४ ॥

२४ उस समय राजा ने भावो को गुप्त रखकर, गुप्तचरो द्वारा तत्-तत् चेष्टा को जानते हुये, कोशेश हस्सन को सम्मान्य अधिकारी बना दिया।

प्रतापतापितारातिश्छन्नकोपो महीपतिः ।
भस्मान्तरगतो वह्निरिवासीत् परमृत्युदः ॥ २५ ॥

२५ भस्म मध्यगत अग्नि सदृश, राजा प्रताप से शत्रुओ को तापित कर, कोप को प्रच्छन्न रखकर, शत्रुओ के लिये मृत्युपद हुआ।

पाद-टिप्पणी

२१ (१) पाणिग्रहण मुसलमानो में पाणि ग्रहण नही होता। विवाह अर्थ में पाणिग्रहण शब्द का प्रयोग किया गया है।

पाद-टिप्पणी :

पाठ शात्स—बम्बई

२२ (१) वाङ्गिल इसका प्राचीन नाम भागिल है। पारसपोर अर्थात् परिहासपुर कछार के पश्चात वागिल जिला पडता है। फिरूजपर और पाटन के मध्य है। क्षेमेन्द्र ने इसे काश्मीर को २७ विषयो अर्थात् परगनों में रखा है। आइने अकबरी में इसे बकाल लिखा गया है। द्रष्टव्य टिप्पणी : ३ ३८०, ४५८, ४ १०७, ३४८, ६१४।

(२) ज्यशर=जसरत श्री. जोनराज ने शाहमीर वंश के द्वितीय सुल्तान जमशेद का नाम ज्यसर दिया है (जोन० श्लोक ३१६–३३८)। यह फारसी नाम जमशेद का संस्कृत रूप है।

पाद-टिप्पणी

२३. (१) हनन श्रीवर सिंह के व्याज से राजा को कपटी कहता है। छल से राजा ने अनेक वधादि अपने समय में करवाया था।

काश्चित् सन्नभयान् कांश्चित् सधाय प्रतिपालयन् ।
कांश्चिदुन्मूलयन् नीत्या नानावृत्तिरभून्नृपः ॥ २६ ॥

२६ नृपति नीति से, कुछ लोगो का भय दूर करते हुये कुछ लोगो को सन्धि कर, प्रतिपालन करते एव कुछ लोगो का उन्मूलन करते हुये नाना प्रकार का व्यवहार किया ।

प्रसादकृत् स भृत्यानामभूद् वैश्रवणोपमः ।
मनागप्यपराधेन बभूवान्तकसंनिभः ॥ २७ ॥

२७ कुवेर सदृश यह राजा भृत्यो पर अनुग्रह[1] किया और थोडे ही अपराध से यमराज[2] सदृश सिद्ध हुआ ।

पयःपिङ्सुतामात्यफिर्यडामरकादयः ।
विचार्यासहनं कोपे बभूवुर्भृतयन्त्रणाः ॥ २८ ॥

२८ सुत, आमात्य, फिर्य डामर आदि उसके अत्युग्र क्रोध का विचार कर, भीतर ही भीतर दु खी होने लगे ।

सामाजिक स्थिति

चौरा जाराश्च रिपवो भृत्या दुर्णयकारिणः ।
अह्नीव जम्बुकाश्चेरुस्तद्राज्ये भयविह्वलाः ॥ २९ ॥

२९ दिन म शृगाल[1] सदृश, उसके राज्य म चोर जार[2], रिपु, दुर्नयकारी भृत्य, भय विह्वल होकर, विचरण करते थे ।

पाद टिप्पणी

२७ (१) अनुग्रह तबकात अकबरी उसके आचरण के सम्बन्ध में लिखती है— वह स्वाभाविक रूप से दानी था । किन्तु उसके हृदय म प्रतिकार की भावनायें थी (४४६ = ६७३) ।

(२) यमराज धमराज । द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ २३ ।

पाद टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

प्रथम पद के प्रथम चरण का पाठ सदिग्ध है ।

२८ (१) फिर्य डामर द्रष्टव्य टिप्पणी श्लोक १ १ ९४, २ ७२, ३ ५४, ६८, १९७ ३३५ ३५४, ४१७ ।

पाद टिप्पणी

२९ (१) शृगाल दिन म शृगाल भय से किसी गुफा या झाडी में छिपा रहता है । बाहर नही निकलता किन्तु रात्रि होते ही आवाज करते बाहर शिकार की खोज में निकलते है । सुल्तान का राज्य शासन कमजोर हो गया था । शृगालों के समान जो आततायी दिन में लोकलज्जा एव दण्डभय से नही निकलते थे, वे भी स्वतन्त्र निर्भय विचरण करने लगे थे । दिनदहाडे चोरी आदि होने लगी थी ।

(२) जार उपपति=प्रेमी = आशिक ।

श्रीजैननृपतौ शान्ते मूर्धारूढशिलोपमे ।
अबाधन्त पुनर्लोकं व्याला इव नियोगिनः ॥ ३० ॥

३० शिरोभाग की ओर निहित शिला सदृश, जैन नृपति के शान्त हो जाने पर, व्यालो के समान नियोगी[1] (अधिकारी) पुन लोक को पीडित करने लगे ।

विशुद्धपक्षो रुचिरञ्जिताशः
कलाकलापो विबुधोपजीव्यः ।
पूर्णेन्दुनानेन समोऽस्ति कोऽन्यः
कलङ्क एको यदि नास्य दोपः ॥ ३१ ॥

३१ विशुद्ध यशशाली, रुचि से दिशाओ को रंजित करता, कला-कलाप युक्त एव विबुधोपजीव्य, इस पूर्णचन्द्र के समान, हमारा कौन है, यदि इसमें एक कलक दोष न हो ।

श्रुत्वास्मद्दूषणाः सोऽयं सर्वान् हन्तीति कद्धियाः ।
ऐक्यं पुरप्रवेशार्थं मिथस्तद्दूषका व्यधुः ॥ ३२ ॥

३२. 'हमलोगो के दोषो को सुनकर, वह सब लोगो का वध कर देगा, इस कुत्सित बुद्धि से, उसके दूषक[1] लोग पुर मे प्रवेश हेतु परस्पर एकता कर लिये ।

पाद-टिप्पणी

३० नियोगी तहसीलदार, एक अधिकारी, कार्यनिर्वाहक । तिलगू भाषाभाषी प्रदेश में नियोगी ब्राह्मणों की एक जाति है । वे पूर्वकाल में राज्य-भृत्त, सेवक किंवा अधिकारी थे । कालान्तर में वंशानुगत कार्य करते रहने के कारण नियोगी उनके कुल का नाम पड गया । नियोगी कोई गोत्र या जाति नहीं है । यह एक पदगौरव हिन्दू राज्यकाल में था । अब तक चला आता है, जैसे काश्मीर में ब्राह्मणों मे कुछ वंश खजाची, सराफ आदि कहे जाते हैं । उक्त कर्म करने के कारण नाम प्राप्त किये है । द्र० १ : ६ : १३६ ।

फरिश्ता लिखता—मुल्तान को बाद के कामों से जनता को निराशा हुई, जिसकी आशा वह किये हुये थी । वह बुरे कामों में लग गया और अपने मन्त्रियों तथा अधिकारियों को जनता पर अन्याय तथा दमन करने की छूट दे दिया (४७५) । द्र० ३ ३०, क० रा० ६ ८ ।

पाद-टिप्पणी

३१ उक्त श्लोक का भावार्थ होगा—'इन गुणो से युक्त राजा भी है, परन्तु इसमें भी दोष है । विशुद्ध पक्षवाले लोगों की आशाओं को प्रकाशित करनेवाला कला-कलापो से युक्त विद्वानों के लिए उपजीव्य इस राजा के समान दूसरा कौन है यदि इसमें भी एक कलक दोष न होता ।'

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई ।

३२. (१) दूषक : भ्रष्टाचारी, निंदक, दूषित करनेवाला, कुपथगामी करनेवाला, पापी ।

पूर्ण नापित का प्रभाव

कुकृत्यप्रेरकः पापश्चान्यायोत्कोचहारकः ।
प्रियोऽभवद्धिशाकीर्ती राज्ञो रिक्तेतराभिधः ॥ ३३ ॥

३३ कुकृत्य-प्रेरक, पापी, अन्यायपूर्वक उत्कोच (घूस) ग्रहणकर्ता, पूर्ण[1] नामक नापित राजा का प्रिय हुआ ।

कामीव व्यसनं नित्यमुपालब्धोऽपि भूभुजा ।
य त्यक्तु नाशकद्राजा सस्तवाद्धृदयङ्गमम् ॥ ३४ ॥

३४ राजा द्वारा नित्य उपालम्भ प्राप्त करने पर भी, जिस प्रकार व्यसन को नही त्यागता है, उसी प्रकार अति परिचयवश राजा, उस हृदयगम नापित का त्याग नही कर सका ।

सचितार्थः प्रजायासैर्मुद्रादानादिकर्मभिः ।
आसीत् स्वकार्यकुशलः ख्यातो धूर्तः स नापितः ॥ ३५ ॥

३५ मुद्रा आदि कर्मों द्वारा प्रजापीडनपूर्वक धन सचित करनेवाला, प्रख्यात धूर्त वह नापित अपने कर्म मे परम कुशल था ।

रुद्ध चित्तेन काठिन्य माधुर्यं जिह्वया धृतम् ।
शठस्य यस्य सततं लोकोद्वेजनकारकम् ॥ ३६ ॥

३६ जिस सठ का चित्त द्वारा रुद्ध काठिन्य, जिह्वा द्वारा धृत माधुर्य, निरन्तर लोगो को उद्वेजित करनेवाला हुआ ।

येनाधिकाराद् देशेऽस्मिन् प्रजाः कुकर्मभिः कृताः ।
दुःखिता रक्षिताः पूर्वं पुत्रवच्छ्रीमहीभुजा ॥ ३७ ॥

३७ अधिकार के कारण इस देश मे कुकर्मों द्वारा, उन प्रजाओ को जिसने दुःखी किया, जिनको राजा ने पहले पुत्रवत् रक्षित किया था ।

पाद टिप्पणी

३३ (१) रिक्तेतर पूण = लोली या लूली । श्रीदत्त न 'रिक्तर' को नामवाचक शब्द माना है । उनका मत है कि यही व्यक्ति बाद में पूण नाम से सम्बोधित *किया गया है* (२ १८६) । श्रीकण्ठ कौल ने इसे नामवाचक शब्द नही माना है । हसनशाह के समय में इसकी हत्या कर दी गयी थी । पीर हसन ने नाम लोली लिखा है । अन्य फारसी इतिहासकारो ने भी लोलो दिया है (पीर हसन १८८) ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख मिलता है—उसने बोली (लूली) नामक एक नाई को अपना विश्वासपात्र बना लिया था और जो कुछ भी वह कहता था उसके अनुसार आचरण करता था (४४७ = ६७३) ।

फिरिश्ता नाम 'बूजी' देता है, वह लिखता है—'उसने नापित बूजी से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर लिया था । वह जनता और सुल्तान के बीच माध्यम था । वह जनता से खूब घूस काम करवाने के ब्याज से लेता था (४७५) ।' द्र० २ . ५२, १२२, ३ १४८ ।

मेरभोखारनामापि बुद्धिमान् प्रथितो भुवि ।
नितरामपकोपाग्ने राज्ञः साचिव्यमादधे ॥ ३८ ॥

३८ पृथ्वी पर प्रसिद्ध बुद्धिमान मेरभोखार[1] नितान्त कोपाग्नि-रहित, राजा का सचिव हुआ।

वात्सल्याद् विहितो राज्ञा स चुटगणनापतिः ।
समस्तकार्यस्थानेभ्यो भुङ्क्ते राजोपजीविकाम् ॥ ३९ ॥

३९ राजा के द्वारा वात्सल्य के कारण गणनापति[1] बनाया गया। चुट[2] समस्त कार्य स्थानो से राजा की जीविका का उपभोग करता था।

यो वर्षणैकनिरतः शिखिहर्षहेतुः
सदर्शितातुलफलः कृतकर्षणेषु ।
जातोऽपि यः प्रतिदिनं हृतसर्वतापः
सोऽप्य घनस्तुदति दुःसहवज्रपातैः ॥ ४० ॥

४० केवल वर्षण के लिये रत मयूरो को प्रसन्नता हेतु, कृषको के लिये अतुल फलप्रद, जो मेघ उत्पन्न होकर, प्रतिदिन सब लोगो का ताप हरण करता है, वही दुःसह वज्रपात करके, पीडित भी करता है।

दुर्मन्त्रिप्रेरितो राजा व्यधान्मदविचेतनः ।
प्रजाभाग्यविपर्यासाद् विवेकविगुणाः क्रियाः ॥ ४१ ॥

४१ दुष्ट मन्त्रियो द्वारा प्रेरित तथा मद से चेतना रहित, राजा ने प्रजाओं के भाग्य विपर्यास[1] के कारण अविवेकपूर्ण कार्यो को किया।

पाद टिप्पणी

३८ (१) मीरे भोखार मीर इफ्तखार या इफ्तिकार का संस्कृत रूप है परन्तु व्याकरण में संस्कृत के स्थान पर फारसी का अनुकरण किया गया है। एक मत है कि नाम मीरखार है। हमारे मत से मीर इफ्तखार नाम ठीक है। पुनः उल्लेख २ : ३१७ में मिलता है। श्रीदत्त ने 'मर भोखार' नाम दिया है।

पाद टिप्पणी :

'सचुट' पाठ—बम्बई।

३९ (१) गणनापति हिसाब किताब रखने वाला अधिकारी था। गणनापतिका को काश्मीरी में 'गनतवरर' कहते हैं। हिन्दी में बही-खाता कहा जाता है। अंग्रेजी में एकाउण्ट बुक कहते हैं। क्षेमेन्द्र ने गणना स्थान मण्डप का उल्लेख किया है। गणना स्थान आधुनिक ट्रेजरी आफिसों के समान थे। उनका स्थान तथा कार्यालय अलग होता था, उसे गणना मण्डप कहते थे। द्रष्टव्य टिप्पणी जोन० श्लोक १२८।

(२) चुट इसका पुनः उल्लेख नही मिलता।

पाद टिप्पणी

४१ (१) भाग्य विपर्यास द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ३ : १०५, १ : ७ : २१५ तथा कल्हण०

सेकन्धरपुरीपार्श्वस्वनिर्माणचिकीर्षया ।
अमृतोपवने प्रांशुतरुच्छेदनमादिशत् ॥ ४२ ॥

४२ सेकन्धर[1] पुरी के समीप अपना निर्माण करने की इच्छा से, अमृत[2] उपवन में उन्नत वृक्षों को काटने का आदेश दिया।

छिन्नांस्तान् पुष्पितान् वृक्षान् समीक्ष्यैतत्समुत्थिताः।
तच्छुचेव व्यधुस्तत्र रोलम्बा रोदनध्वनिम् ॥ ४३ ॥

४३ पुष्पित उन वृक्षों को छिन्न देखकर, उनसे उड़े भ्रमर, मानो शोक के कारण रोदन ध्वनि कर रहे थे।

तन्निर्माणग्रहोऽन्येषां न केषां प्रत्यभाद्धृदि।
अग्रे दिनपतेर्दीपप्रकाशनरसोपमः ॥ ४४ ॥

४४ सूर्य के समक्ष दीप प्रकाशन रस सदृश, उसके निर्माण का आग्रह, दूसरे लोगों के हृदय को अच्छा नहीं लगा।

तद् ब्रूमः क्षीव एवैष करोतीति विनिश्चितम्।
स्वाहितापक्रियाहेतोर्घूणित स नृप व्यधात् ॥ ४५ ॥

४५ निश्चित रूप से अतएव मैं कह रहा हूँ कि यह (मदमत्त) नापित ही सब कर रहा है, अपने अपकारियों के अपकार हेतु, उसने राजा को भ्रान्त कर दिया था।

पूर्ण नापित का क्रूर कर्म

बहूनामथ लोकानां नापितोऽवयवच्छिदाम्।
भूपालादाप्तनिर्देशः क्षीवतोऽपि तथाकरोत् ॥ ४६ ॥

४६. मदमत्त भी राजा से निर्देश प्राप्त कर, नापित[1] ने बहुत से लोगों के अवयवों का छेदन[2] करा दिया।

---

१ १९८, तृ० १ ११९, २ ७८, ८८, १४४।

पाद टिप्पणी

४२ (१) सेकन्धरपुरी। श्रीनगर। द्र० : २ : ५, ३, ७, २०० ।

(२) अमृत उपवन - श्रीनगर के समीप कहीं था। पुनः उल्लेख नहीं मिलता।

पाठ-टिप्पणी :

४४ 'दीप' पाठ—बम्बई।

पाठ-टिप्पणी

४५ घूर्णित' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी

४६ (१) नापित नाई, हज्जाम, नाऊ, बाल बनानेवाला। मुसलिम या तुर्की नाऊ था। पूर्ण = पुन्न। द्रष्टव्य जैन० २ ५२, १२२, ३ १४८।

(२) छेदन अंगभंग। म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है कि सुल्तान प्रतिहिंसक था। थोड़े से भी अपराध के लिए कठोर दण्ड देता था (७३ बी०)।

नापितो निर्घृणः पापी क्रोधी क्रकचपाटितान् ।
पैतृकांष्ठक्कुरादींश्च कारयामास भूपतेः ॥ ४७ ॥

४७ निर्दयी, पापी एवं क्रोधी उस नापित ने राजा के पैतृक (पिता सम्बन्धी) ठक्कुरादि[1] को आरा से चिरवा दिया।

चलितानग्रजभ्रातुः स्वावनायान्तिकं पथि ।
रुद्ध्वा शूलेऽधिरोप्यान्यान् पञ्चषानप्यघातयत् ॥ ४८ ॥

४८. अपनी रक्षा के लिये ज्येष्ठ भ्राता के पास जाते हुये, मार्ग में रोक कर, पाँच-छ: को शूली[1] पर चढ़ा कर मरवा डाला।

जीवन्तो गणरात्रं ते स्वकुटुम्बोक्तवेदनाः ।
पौरैः सास्रुजलैर्दृष्टाः शूलपृष्ठे पुरान्तरे ॥ ४९ ॥

४९ आँखों में आँसू भरे पुरवासी, नगर में शूली पर कई रात जीवित रहते, उन लोगों को देखे, जो अपने कुटुम्बियों के प्रति, वेदना प्रकट कर रहे थे।

वैदूर्यभिषजं ज्ञात्वा दूषकं परपक्षगम् ।
अमुञ्चद् बन्धनात् कृत्तभुजनासौष्ठपल्लवम् ॥ ५० ॥

५० वैदूर्य[1] भिषग को दूषक एवं पर पक्षगामी जानकर, हाथ, नाक[2] और ओष्ठ-पल्लव काटकर, बन्धन मुक्त किया।

पाद-टिप्पणी

४७ (१) ठक्कुर : द्रष्टव्य १ : १ : ४४, ३ : ४६३, ४ : १०४, ३९३।

पाद-टिप्पणी

'अघातयत' पाठ—बम्बई।

४८ (१) शूल : यह क्रूर प्रथा समस्त विश्व में प्राचीन काल में प्रचलित थी। स्थानभेद के कारण शूल अर्थात् शूली पर चढ़ाने की क्रिया में अन्तर था। दण्डित एक नुकीले लौहदण्ड पर बैठा दिया जाता था। दण्डित के सिर पर मुगरा से आघात किया जाता था। नोंकदार लौहदण्ड गुदा स्थान से घुसता सिर की ओर चलता था। दण्डित व्यक्ति ऊर्ध्व से अधोभाग की ओर उसी प्रकार सरकता था, जिस प्रकार माला का दाना सुई में ऊपर जाकर नीचे की ओर आता है। यह अत्यन्त क्रूर प्रथा थी। अब बन्द हो गयी है।

पाद-टिप्पणी

४९ (१) शूल : सुदूर प्राचीन काल काश्मीर में शूल पर, आरोपित करने की प्रथा प्रचलित रही है।

पाद-टिप्पणी

५० (१) वैदूर्य : इस व्यक्ति का कहीं और उल्लेख नहीं मिलता। नाम का पाठ वैडूर्य भी मिलता है। परन्तु वैदूर्य नाम ठीक है। वैदूर्य एक प्रकार की नीलम मणि है।

(२) नाक : हाथ, पैर, नाक, कान कटवाना मुस्लिम काल में साधारण प्रथा थी। ओठ कटवाना नयी बात थी। इससे घोर क्रूरता प्रकट होती है।

तथैव नोनदेवादीन् शिखजादादिसंयुतान् ।
पञ्चषानकरोत् कृत्तजिह्वानासैकहस्तकान् ॥ ५१ ॥

५१ उसी प्रकार शिखजादा[1], नोनदेव[2] आदि पाँच-छः जनों का जीभ, नाक, एवं एक हाथ कटवा दिया।

विरुद्धावयवच्छेदशूलारोपणकर्मणा ।
स पूर्णनापितः पापी बभूव नरशौनिकः ॥ ५२ ॥

५२ विरुद्ध अवयव छेदन एवं शूल[1] रोपण कर्म से वह पापी पूर्ण[2] नापित नर शवनिक (कसाई) हो गया था।

आचार्यपुत्रो जय्याख्यस्तथा भीमाभिधो द्विजः ।
छिन्नाङ्गौ स्म यथाशक्तौ वितस्तायां समाज्झताम् ॥ ५३ ॥

५३ आचार्य-पुत्र जज्ज[1] (जय) तथा भीम[2] नामक द्विज, जिनके अंग छिन्न कर दिये गये थे, संघर्ष में असमर्थ होने पर, अपने को वितस्ता में डाल दिये।

पाद-टिप्पणी

५१ (१) शिख : द्रष्टव्य टिप्पणी १ : ३ : ९८, १०२, १०३।

(२) नोन : यह नाम ब्राह्मण तथा व्यापारी दोनों का मिलता है (रा० : ६ : ११,८ : १३२८)। श्रीवर ने इसका उल्लेख केवल इसी स्थान पर किया है। इस नाम का उल्लेख जोनराज ने भी किया है (जोन० : ८०२ : ८०३, ८०५)।

पाद-टिप्पणी

५२ (१) शूल : द्रष्टव्य टिप्पणी : २ : ४८।

(२) पूर्ण : पूर्ण नाई था। श्रीदत्त ने उसका नाम रिक्तेतर (पृष्ठ १८६) दिया है। नोट में लिखा है कि उसे बाद में पूर्ण कहा गया है। म्युनिख पाण्डुलिपि में उसे पूनी तथा निजामुद्दीन एवं फिरिश्ता में उसका नाम लूली लिखा है। अरबी लिपि में यदि पूनी लिखा जाय तो वह भ्रम से लूली पढ़ लिया जा सकता है। उसने भयंकर अत्याचार हैदरशाह पर हावी होकर, कराया था। उसे पढ़कर रोमांच हो जाता है (२ : ३४, ४६, १२३, ३ : १४८)।

सुल्तान हसनशाह (सन् १४७२–१४८४ ई०) के समय मल्लेकआद के साथ राज विरोधी षड्यन्त्र के कारण बन्दी बनाया गया। उसका सर्वस्व हरण कर लिया गया। कारागार में यातना सहता, बहुत दिनों तक बन्दी था। उसकी हत्या कर दी गयी (जैन० : २ : १२२, ३ : १४८)।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में नाम 'लूली' दिया गया है (३ : २८४)।

पाद-टिप्पणी

५३ (१) छिन्नांग : हाथ, पैर आदि काट कर उनका अंग-भंग कर दिया था।

(२) जज्ज : यह हिन्दू नाम है। एक जज्ज जयापीड का साला था। जज्ज काश्मीर का राजा हुआ था (क० : ४ : ४६)। उक्त जज्ज ब्राह्मण था। आचार्य ब्राह्मण ही होते थे।

(३) भीम : ब्राह्मणों पर अत्याचार आरम्भ हुआ था। उसके दोनों ही द्विज शिकार बन गये थे।

मद्यलीलाव्यसनतस्तद्राज्ये बाह्यदेशवत् ।
आसीन्मार्द्वीकवद्गौडी देशेऽत्र प्रचुरा सुरा ॥ ५४ ॥

५४ मद्य लीला व्यसन के कारण, बाह्य देशो के समान, उस राज्य मे भी अगूर के समान गुड से बने सुरा का प्राचुय हो गया था ।

तन्मद्यरसिके राज्ञि सर्वभोगपराङ्मुखे ।
खण्डादीक्षुविकारास्ते सुलभा न गुडोऽभवत् ॥ ५५ ॥

५५ सर्वभोग परामुख राजा के उस मद्य के प्रति रसिक हो जाने पर, खाड आदि ईख के विकार सुलभ नही रह गये, गुड (शीरा-शराब) हो गये ।

खुज्याब्दुल्कादिर्यस्यान्तेवासी गीतगुणाम्बुधेः ।
मल्लाडोदकनामासीद् तन्त्रीवाद्यगुरुर्नृपे ॥ ५६ ॥

५६ गीत-गुणों का सागर, खुज्याब्दुल कादिर[1] का अन्तेवासी[2] मल्लाडोदक[3] राजा का वीणा[4] वादन का गुरु था ।

कूर्मवीणादिवाद्यानां प्राप्यास्माद् गीतकौशलम् ।
आजीवं क्षणमप्यासीन्न तन्त्रीवादनं विना ॥ ५७ ॥

५७ इससे कूर्म वीणादि[1] वाद्यो का गीत-कौशल प्राप्त कर, जीवन पर्यन्त (वह) तन्त्री-वादन के विना क्षण भर नही रहा ।

पाद-टिप्पणी

५४ (१) बाह्य देश द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ : १२४, २ १९१ ।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

५६ (१) अब्दुल कादिर खुज्या शब्द ख्वाजा है। पूरा नाम ख्वाजा अब्दुल कादिर है। ख्वाजा का अर्थ स्वामी, मालिक आदि होता है ।

(२) अन्तेवासी शिष्य, गुरु के साथ रहनेवाला ।

(३) मल्लाडोदक दोदक = डोडक, मल्ला शब्द मुल्ला है। डोदक शब्द दाऊद है। मुसलिम नाम मुल्ला दाऊद है। ख्वाजा अब्दुल कादिर का शिष्य था ।

(४) वीणा कूर्म वीणा का १ ४ ३२ तथा केवल वीणा का उल्लेख यहाँ किया गया है। दोनों के वादक भिन्न व्यक्ति थे। कूर्म वीणा का वादक मुल्ला जाद था। केवल वीणा का वादक ख्वाजा अब्दुल कादिर का शिष्य मुल्ला डोदक अर्थात दाऊद था ।

खुरासान से एक सगीतज्ञ मुल्ला उदी भी आये थे। श्रीवर ने उसका उल्लेख नही किया है (म्युनिख पाण्डु० ७१ ए०)। मुल्ला 'उदी' को ही श्रीवर ने मुल्ला डोदक लिखा है। यह अनुसन्धान का विषय है।

पाद-टिप्पणी

५७ (१) कूर्म वीणा इसे कच्छपी वीणा कहते है। इसका दण्ड १८ अगुल का होता है। ऊपर का सिरा झुका होता है। दण्ड पर २४ सारिकाएँ (परदे) होती है। वे प्राय पीतल की होती हैं। ऊपर की ओर एक बोल तुम्बा दण्ड में लगा

तन्त्रीवादविशेषज्ञो राजा व्यञ्जनधातुभिः ।
स्वयं वादननिष्णातो वैणिकानप्यशिक्षयत् ॥ ५८ ॥

५८ व्यञ्जन धातुओं द्वारा तन्त्री[1] वाद्य विशेषज्ञ तथा वादन मे प्रवीण, राजा स्वय वीणा-वादकों को भी शिक्षा देता था।

रबाबवाद्यरचनैर्बहोलाद्यैश्च गायनैः ।
राज्ञः प्रसादात् किं नाप्त तत्तत्कनकवर्षिणः ॥ ५९ ॥

५९ रबाब[1] वाद्य के रचनाकर्ता बहलोल आदि गायकों ने तत् तत् प्रकार से कनकवर्षी[2] राजा की कृपा से क्या नहीं प्राप्त किये ?

रहता है। नीचे की ओर काष्ठ का कच्छप (कूर्म) के पीठ के आकार का एक टुकड़ा होता है। उसका भीतरी हिस्सा खोखला होता है। इसके ऊपरी भाग-पर घुड़च होती है। जिस पर से दण्ड पर चिपकायी हुई, सारिकाओं के ऊपर से तार फैलाये होते हैं। इस वीणा में प्राय सात तार होता है। इसमें से चार तार सारिकाओं के ऊपर से आते हैं और तीन तार बगल में होती हैं। ऊपर के चार तारों में से दो लोहे की होती है और दो पीतल की। बगल की तीन तारें लोहे की होती है। तारें खूटियों में बँधी होती हैं। इस वीणा के नीचे वाले भाग की पीठ कछुए के पीठ जैसी होती है। इसलिये इसे कच्छपी वीणा कहते है।

पाद-टिप्पणी

५८ (१) तन्त्रीवाद तन धातु से तन्त्री शब्द बना है। तन्त्री अर्थात तार, बाल, बिल्ली की आँत, लोहा, धातु का बना होता है। उनके आधार पर बना वाद्य तन्त्रीवाद्य कहा जाता है। वीणा रबाब, सितार, सारगी आदि की गणना तन्त्रीवाद्य में होती है।

अरबी में तन्त्रीवाद्य को अल ऊद कहते हैं। अरबी में 'ऊद' का अर्थ सुगन्धित लकड़ी होता है। अंग्रेजी में लकड़ी का 'ऊद' कहते हैं। यही शब्द अल ऊद अपभ्रंश रूप में ल्यूट बन गया। अरबी ऊद ३ से ५ तार होते हैं।

पाद-टिप्पणी

५९ (१) रबाब : एक मत है कि ईरानी वाद्य है। मुसलिम काल में इस वाद्य का प्रवेश भारत तथा काश्मीर में हुआ था। परन्तु तानसेन से शताब्दी पूर्व श्रीवर स्पष्ट लिखता है कि इसकी रचना बहलोल आदि की है। रबाब का विकास एवं निर्माण काश्मीर में हुआ था। तानसेन ने इस वाद्य को अपनाया था। उसके वंशजों का यह प्रिय वाद्य रहा है। इसके वादन द्वारा उन्होंने मुसलिम दरबारों में प्रश्रय पाया था।

रबाब सारंगी के समान बाजा है। काश्मीर के रबाबिया आज भी प्रसिद्ध है। सारंगी और रबाब में अन्तर यह है कि रबाब का पेट सारंगी की अपेक्षा लम्बा होता है। सारंगी से ड्योढ़ा गहरा होता है। पेट के ऊपर का दण्ड सारंगी से पतला होता है। इसमें दो घुड़च होती है। एक पेट के मध्य में और दूसरी दण्ड के आरम्भ में। रबाब में ताँत के सात तार लगे होते हैं। जिसमें सात स्वरों म, रे, ग, म, प द, नी की स्थापना की जाती हैं। इसे जवा और कमान दोनों से बजाया जाता है। आइने अकबरी में छ तार के रबाब का उल्लेख मिलता है।

तबकाते अकबरी में उल्लेख है कि सुल्तान जब प्रसन्न होता था तो रबाब और वीणा तथा अन्य वाद्य-यन्त्र सुवर्ण के बनवाये तथा उनमें रत्न जड़े गये

शौचालयस्थैः सुरतालयस्थै-
भूतैरिवान्तश्छलनप्रवीणैः ।
वशीकृतो यः पिशुनैर्नरेशो
बिभेति तस्मान्ननु को न मर्त्यः ॥ ६० ॥

६०- भूत सदृश शौचलायस्थ, सुरतालयस्थ[1] एवं अन्तस्थ छलना में प्रवीण, पिशुनों द्वारा जो राजा वशीकृत हो गया था, उससे कौन मनुष्य नहीं डरता ?

रहःस्थितं नृपं जातु पिशुनः पूर्णनापितः ।
अपृच्छत् प्रेरितोऽमात्यैश्चिकीर्षां पूर्वमन्त्रिषु ॥ ६१ ॥

६१ आमात्यों से प्रेरित होकर, पिशुन[1] पूर्ण किसी समय एकान्त स्थित, राजा से पूर्व मन्त्रियों के ऊपर किये जानेवाले व्यवहार के विषय में पूछा—

भवत्पक्षविनाशो यैः कृतस्त्वत्पितृमन्त्रिभिः ।
प्राप्तराज्येन भवता त एव प्रबलीकृताः ॥ ६२ ॥

६२ 'जिन तुम्हारे पिता के मन्त्रियों ने आपके पक्ष का विनाश किया, राज्य प्राप्त कर, आपने उन्हें ही प्रबल बना दिया—

अमी हस्सनकोशेशमुख्यास्त्वदनुजादृताः ।
सोऽपि धूर्तो धिया तत्तद्वशीकारसमुद्यतः ॥ ६३ ॥

६३ 'वे हस्सन कोशेश प्रमुख लोग तुम्हारे अनुज[1] (बहराम खान) द्वारा समादृत हो रहे हैं, और वह धूर्त भी तत्-तत् लोगों को वश में करने के लिये उद्यत हैं—

असमर्थशरीरस्त्वं भ्रात्रर्पितभरः सदा ।
तत्ते सपुत्रभृत्यस्य न नाशो भविता चिरात् ॥ ६४ ॥

६४ 'असमर्थ शरीर तुम सर्वदा भाई[1] (बहराम खां) के ऊपर भार डाल देते हो, अतः पुत्र, भृत्य सहित तुम्हारा शीघ्र नाश करेगा।'

(६५७-६५८)। फिरिश्ता ने वीणा के स्थान पर तम्बूर लिखा है। रोजर्स ने रबाब तथा तम्बूर या वीणा किसी का उल्लेख नहीं किया है।

(२) कनकवर्षी द्रष्टव्य टिप्पणी जैन० १ ४ ५२।

पाद-टिप्पणी

'न' पाठ—बम्बई।

६० (१) सुरतालय कामगृह।

पाद-टिप्पणी

६१ (१) पिशुन पूर्ण नापित चुगुलखोर था। वह राजा के पास रहने का लाभ उठाकर लोगों की शिकायत करता था। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—बोली (पूर्ण) लोगों से घूस लेता था और जिसका वह विरोधी हो जाता था उससे वह सुल्तान को रुष्ट करा देता था (६७३)। लोली का नाम एक पाण्डुलिपि तथा फिरिश्ता के लीथो प्रति

श्रुत्वेत्यवोचन्मत्पुत्रः सत्यं मदनुजाऽप्रियः ।
किं तु ब्रवीमि येनायं रक्ष्यते कुटिलाशयः ॥ ६५ ॥

६५ यह सुनकर, राजा ने कहा—'क्या सचमुच मेरा पुत्र मेरे भाई को अप्रिय है ?' किन्तु वह कहता हूँ, जिसके कारण इस कुटिल-हृदय (भाई) की रक्षा हो रही है—

उग्रो मदनुजस्तीक्ष्णो मत्पदाक्रान्तिसुद्यतः ।
अनेन क्रष्टुमिच्छामि कण्टकेनेव कण्टकम् ॥ ६६ ॥

६६ 'मेरा अनुज उग्र, तीक्ष्ण तथा मुझे पददलित करने के लिये प्रयत्नशील है, अतएव काँटे से काँटा निकालना चाहता हूँ।

कार्यापेक्षावशादेतं रक्षामि न तु गौरवात् ।
श्रुत्वेति द्वित्रान् महतो व्यधाज्ज्ञातचिकीर्षितान् ॥ ६७ ॥

६७ 'कार्य की अपेक्षावश इसकी रक्षा कर रहा हूँ न कि गौरववश।' यह सुनकर, उस (पूर्ण) ने दो-तीन बड़े लोगों को राजा की इच्छा ज्ञात करायी।

आदम खाँ का कश्मीर अभियान

अत्रान्तरेऽग्रजो राज्ञो मद्रदेशाद् बलान्वितः ।
भ्रातृराज्यजिहीर्षायै पर्णोत्सं प्राप दर्पितः ॥ ६८ ॥

६८ इसी बीच सेना सहित, गर्वीला राजा का (बड़ा) भाई[1], मद्र देश से भाई का राज्य हरण करने की इच्छा से पर्णोत्स[2] पहुँचा।

तच्छ्रुत्वा नृपतिः क्रुद्धस्तान् समानीय पैतृकान् ।
अवोचत् किं नु कर्तव्य ते तमित्यूचुरुत्तरम् ॥ ६९ ॥

६९ यह सुनकर, क्रुद्ध राजा ने उन पैतृकों[1] को बुलाया और उनसे कहा—'क्या करना चाहिये ?' उन लोगों ने उसको यह उत्तर दिया—

में 'लूली' लिखा है। रोजर्स ने उसे लूलू लिखा है (जे० ए० एस० बी० ५४ १०७)। कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (२८४) में लूली नाम लिखा है।

पाद-टिप्पणी

६६ (१) कण्टकनेव कण्टकम् काँटा से काँटा निकालना। कण्टक शोधनम् चाणक्य का प्रसिद्ध वाक्य है। उसका अर्थ है राज्य के कण्टकों को दण्डादि द्वारा दूर करना। 'पादलग्न करस्थेन कण्टकेनेव कण्टकम्।' चाणक्य शतक २२।

पाद-टिप्पणी

६८ (१) भाई : आदम खाँन। तबकाते अकबरी में उल्लेख है—इसके पूर्व आदम खाँ अत्यधिक सेना एकत्र करके सुल्तान से युद्ध करने के लिये जम्मू की विलायत में पहुँचा (६७४)।

(२) पर्णोत्स पूछ। द्र० १ ३ ११०, १ ७ ८०, २०८, २ २०२, ४ १४४, ६०७।

पाद-टिप्पणी

६९ (१) पैतृक : पिता के सम्बन्धियों, पिता के प्रिय-पात्रों, कुल-क्रमागतो आदि से अर्थ अभिप्रेत है।

तटिकासेतुबन्धं तं छेत्तुं यामोऽस्य तिष्ठतः ।
अन्यथा दुःसहः प्राप्तस्तदाज्ञा दीयतां विभो ॥ ७० ॥

७० 'उसके वहीं रहते नौका सेतुबन्ध को काटने के लिये हम जा रहे हैं। अन्यथा वह दु सह· पहुँच जायगा। अतएव हे प्रभु ! आज्ञा दीजिये।'

श्रुत्वेति कातरं वाक्यं तेषां दुर्लक्ष्यचेष्टितः ।
तत्पक्षपातिनो ज्ञात्वा तथेति प्रत्यपद्यत ॥ ७१ ॥

७१ दुर्लक्ष्य चेष्टा करके, राजा ने उनके इस कातर वाक्य को सुनकर, और (उन्हें) उस (भाई) का पक्षपाती जानकर, कहा—'ऐसा ही हो'—(स्वीकृति दिया)।

प्रतिमुच्य नृपस्तान् स रात्राविस्यब्रवीन्निजान् ।
आनीय फिर्यडारादीन् मन्त्रिणः कार्यनिष्ठुरान् ॥ ७२ ॥

७२. उस राजा ने उन्हें मुक्त (विदा) कर, फिर्य डारादि[1] कार्य निष्ठुर अपने मन्त्रियों को बुलवाकर, इस प्रकार कहा—

इयं हस्सनकोपेशचक्रिका यत् समागतः ।
एतद्वधेन नष्टः स्यादन्यथाभ्यन्तरं विशेत् ॥ ७३ ॥

७३ 'यह हस्सन कोशेश का षड्यन्त्र है, जो कि वह आया है, इसके वध से वह स्वयं नष्ट हो जायगा, अन्यथा वह अन्दर प्रवेश करेगा।

तत्प्रातरेते हन्तव्या युक्त्यानीयेति तान्नृपः ।
छन्नकोपः सेवकान् स्वानकरोत् कृतसंविदः ॥ ७४ ॥

७४. 'अत प्रात युक्तिपूर्वक लाकर, इनका वध करना चाहिए' अपने क्रोध को छिपा कर, राजा ने अपने उन सेवकों को मन्त्रणा दी।

पाद-टिप्पणी

७२ (१) डार डार = डर = दर = फिर्य डामर। द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ९४। डामर शब्द का अपभ्रंश डर या दर एवं डार है। यह मूलत ब्राह्मण थे। हिन्दू ब्राह्मण 'धर' या अंग्रेजी में डी०एच० ए० आर० लिखते हैं और मुसलिम 'डार' अंग्रेजी में डी० ए० आर० लिखते हैं। यह भेद हिन्दू-मुसलमान काश्मीरियों के पहचान के लिए कर दिया गया है। आज भी मुसलमान डार तथा हिन्दू दर काफी संख्या में हैं और उनमें यह नाम प्रचलित है।

डामर वर्ग का प्रचुर उल्लेख कल्हण, जोनराज ने किया है। दर कृषक सम्पन्न वर्ग था। काश्मीरी शिव उपासक होते हैं। शिव कथित एक तन्त्र डामर है। इसके [illegible] भेद—योग डामर, शिव डामर, दुर्ग डामर, सारस्वत डामर, ब्रह्म डामर तथा गन्धर्व डामर होते हैं। डामर का अर्थ आडम्बर, ठाटबाट, चमत्कार, क्षेत्रपाल तथा भैरवों में एक है। इसका अर्थ मिश्रित तथा संकर जाति भी होता है।

राज्ञा प्रातः समाहूय विसृष्टानुचरा गृहात् ।
सर्वे हस्सनकोपेशमुख्यास्तूर्णं समाययुः ॥ ७५ ॥

७५ राजा ने प्रातःकाल उनको लाने के लिये अनुचरों को भेजा और शीघ्र ही गृह से हस्सन कोशेश प्रमुख सब लोग आ गये।

कम्पते तुरगस्त्रस्तो ज्ञातवृत्त इवाचलः ।
ताडनैर्बहुशः सास्रुः प्राप कष्टान्नृपाङ्गनम् ॥ ७६ ॥

७६ जिस प्रकार वृत्तान्त जानने के कारण अश्व[1] काँपता, त्रस्त एवं अचल हो जाता है तथा बहुत ताडित करने से आँख में आँसू भरकर बड़े कष्ट से नृप प्रांगण में पहुँचता है—

महार्हास्तरणस्थांस्तान् राजकर्तव्यताकुलान् ।
कोपेशहस्सनमेरकाकादीन् पञ्चषान्नृपः ॥ ७७ ॥

७७ बहुमूल्य आस्तरण पर स्थित तथा राज कार्य जानने के लिये आकुल उस कोशेश हस्सन, मेर काक[1] आदि पाँच छः लोगों को राजा ने—

पाद टिप्पणी

'सास्रु' पाठ–बम्बई।

७६ (१) अश्व : मेरे पास भी एक घोड़ा था। मेरे घर घोड़ा और हाथी रखने की परम्परा चली आती थी। हाथी और घोड़ा दोनों जमीन्दारी उन्मूलन के पश्चात् निकाल दिया। जमीन्दारी निकल जाने के पश्चात् आर्थिक संकट आ गया। अतएव वह बेंच दिया। घोड़े का महत्त्व मोटर कारों के पूर्व था। सन् १९२० ई० तक सामाजिक जीवन में कुलीनता की निशानी के अतिरिक्त वाहन का मुख्य साधन था। सवारी और एक्का तथा गाड़ी में जोतनेवाले घोड़ों को विशेष रूप से आवश्यकतानुरूप शिक्षा दी जाती थी। अरब के सौदागर मेरे बाल्यकाल तक घोड़ा बेचने काशी आते थे। काशीराज की सेना के साथ अंग्रेजों की सेना भी छावनी बनारस कैण्ट में थी। व्यापारियों के लिए काशी अच्छा व्यापारिक केन्द्र था।

अश्वों के विषय में नाना प्रकार की किम्वदन्तियाँ उन दिनों प्रचलित थीं। श्रीवर के समय वह किम्वदन्ती काश्मीर में भी प्रचलित थी। अश्व अपना मृत्यु जान जाता है। उसकी मुद्रा, उसकी गति, उसके पैर की टाप, उसके हिनहिनाने, चलते-चलते रुक जाने, गन्तव्य मार्ग में सहसा लौट पड़ने, ठोकर खाने, आँसू बहने आदि से भविष्य का शकुन निकलता था। रणस्थल में जाते समय यदि अश्व के आँखों में आँसू बहता है, ठिठकता चलता है, हठात् खड़ा हो जाता है, अनायास काँपने लगता है तो उसका फल पराजय, मृत्यु आदि अपशकुन होता। मुसलमानों में कहावत प्रचलित थी कि यदि जिन अर्थात् भूत सामने होता है तो घोड़ा हिनहिनाता है, वह जिनों के मार्ग से कतरा कर निकल जाता है। इस कुसंस्कार के कारण पूर्वकाल में कुलीनवर्गीय व्यक्ति दिन तथा मुख्यतः रात्रि में सवारी जिन एवं भूतबाधा से बचने के लिए करते थे। अंग्रेजी तथा भारतीय भाषा में अश्व विज्ञान, अश्व चिकित्सा आदि ग्रन्थ प्रचुर संख्या में मिलते हैं। जहाँ मृत्यु या आहत होने की शंका अश्वारूढ़ की होती है वहाँ वह जाने में डरता है। जबरदस्ती अश्वारोही उस ओर उसे ले जाता है। श्रीवर इसी का वर्णन उक्त श्लोक में करता है।

पाद टिप्पणी

७७ (१) काक : काश्मीरी ब्राह्मणों की एक उपजाति है। सारस्वत ब्राह्मण हैं। वर्तमान काल

हत्याकाण्ड :

भृत्यैः संजयरमेराद्यै राजप्तैर्मण्डपान्तरे ।
छलाद्विश्वासमुत्पाद्य राजधान्यन्तरेऽवधीत् ॥ ७८ ॥

७८ आदेश देकर सजर, मेर आदि भृत्यो द्वारा राजधानी मे मण्डप के बीच विश्वास उत्पन्न कर छल से वध[1] करा दिया ।

किं द्रोह इति यावत् स कोशेशोऽभ्युत्थितोऽब्रवीत् ।
द्रुघणैकप्रहारेण तावत् प्राणैर्व्ययुज्यत ॥ ७९ ॥

७९ जब तक, उठ कर, कोशेश ने 'क्या द्रोह है'—कहा तबतक, कुल्हाडी[1] (द्रुघण) के एक प्रहार से प्राण त्याग दिया ।

में ब्राह्मण गुरु, कारकुन तथा बोहरू वर्ग में प्राय विभाजित है । काक ब्राह्मण कारकुन वर्ग में आते है । मुसलमान और हिन्दू दोनो ही काक अपने नामों के साथ लिखते है । जो काक ब्राह्मण मुसलमान हो गये थे, उन्होंने अपनी पदवी नही छोडी । मीर काक भी इसी प्रकार काक ब्राह्मण वंश का मूलत हुआ, तबलीग के कारण वह स्वय अथवा उसके साथी मुसलमान हो गये होंगे ।

पाद-टिप्पणी

'सजर' पाठ—बम्बई ।

७८ (१) वध इस हत्याकाण्ड की तुलना नैपाल में रानी लक्ष्मीदेवी के समय राणा जगबहादुर द्वारा हुई कोट हत्याकाण्ड का स्मरण दिलाती है (द्र० आप्रत नैपाल) ।

म्युनिख पाण्डु० ७८ ए० में उल्लेख मिलता है कि हसन आदि पर राजा को सन्देह हो गया था कि वह बडे भाई आदम खाँ से मिला था । उन्हे तथा उन लोगों को बुलाकर, जो उसका विरोध उसके पिता के समय में किये, वध करा दिया ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—हसन कच्छी को जिसने सबसे अधिक उसकी बैअत के लिए प्रबन्ध किया था, लूली नाई की चुगली के कारण हत्या करा दी (४४७ = ६७४) । नाम लीथो तथा पाण्डुलिपि में 'वरकछी' लिखा है ।

फिरिश्ता लिखता है—हुसन कच्छी जो राजा का एक अधिकारी था और जिसने हाजी खाँ को राजसिंहासन प्राप्त कराने में प्रसिद्धि प्राप्त की थी, उसका वध सुल्तान ने लूली नापित की प्रेरणा पर करा दिया (४७५-४७६) । फिरिश्ता के लीथो संस्करण मे नाम हुसन खाँ कच्छी लिखा है ।

पीर हसन लिखता है—और हसन खाँ कच्छी की जिसने सबसे पहले सुल्तान की बैअत की थी लोली हज्जाम के चुगलखोरी से मक्तूल हुआ । (१८८)

सजर का ज्यसर, पाठ मिलता है । यदि यह पाठ मान लिया जाय तो 'जमशेद' नाम होगा । शाहमीर वंश के द्वितीय सुल्तान 'जमशेद' का नाम जोनराज ने ज्यसर लिखा है । संस्कृत में जमशेद का रूप ज्यसर बन गया था ।

पाद-टिप्पणी

७९. (१) द्रुघण परशु, कुल्हाडी ।

शस्त्राघातैर्मुमूर्षुः सन्नुत्थितो मेरकाककः ।
राज्ञ एवाशिषः कुर्वन् पुनः परशुना हतः ॥ ८० ॥

८० शस्त्राघातो से मुमूर्ष होकर, भी मेर काक[1] उठा और राजा को आशीर्वाद देते हुये, पुन परशु द्वारा मार डाला गया ।

लिखन्नह्मदमेराख्यः स विद्याव्यसनी गुणी ।
हतो जनमनःकान्तो ययौ कस्य न शोच्यताम् ॥ ८१ ॥

८१ विद्या-व्यसनी गुणी एव जन मनोरम, अहमद को लिखते हुये मार डाला गया । उसके लिये किसने शोक नही किया ?

जीवता मनसा चैक्यं तेषा नित्यमभूद्यथा ।
शस्त्रकृत्ततनूद्गच्छच्छोणितैक्यमभूत् तथा ॥ ८२ ॥

८२ जिस प्रकार जीवित उन लोगो म नित्य मानसिक एकता थी, उसी प्रकार शस्त्रो से कटे शरीर से निकलते, रक्त म भी एकता हो गयी ।

वर्णकम्बलपृष्ठस्था जीवन्तस्ते यथाभवन् ।
निद्राणा इव ते तत्र मृता अपि तथेक्षिताः ॥ ८३ ॥

८३ जीवित रहते, जिस प्रकार वे लोग रंगीन कम्बल[1] पर स्थित रहते थे, उसी प्रकार मरने पर भी, वे इस प्रकार दिखायी दिये, मानो व शयन कर रहे हैं ।

क्षणमात्रात् तथा शस्त्रैर्मरणं राजवेश्मनि ।
अनन्यसुलभं तत्र तेषां श्लाघार्हतामगात् ॥ ८४ ॥

८४ क्षणभर म इस प्रकार शस्त्रो द्वारा राजगृह म उन लोगा का अनन्य सुलभ मरण भी प्रशसनीय हो गया ।

न वित्तं न च दारास्ते न भृत्या न शवाजिरम् ।
तेषां तथा प्रमीतानां ययावन्तोपकारिताम् ॥ ८५ ॥

८५ उस प्रकार मृत उन लोगा के लिये, अन्त म न वित्त न स्त्रियाँ और न शवाजिर उपकारी हुये ।

पाद टिप्पणी ।

८० (१) मेर मीर काक । द्रष्टव्य टिप्पणी २ ७ ।

पाद टिप्पणी

८३ (१) वर्ण कम्बल रंगीन कम्बल । श्रीवर के वर्णन से प्रतीत होता है मन्त्रीगण अपनी मन्त्रणा रंगीन कम्बल अथवा कालीन या गद्दा पर बैठकर करते थ । उन दिनों टेबुल-कुरसी पर बैठकर मन्त्रिमण्डल की बैठक करने का रिवाज नही थी । सब कामकाज बैठकर किया जाता था । साधारण कम्बल से रंगीन कम्बल विशिष्ट होता था यह मन्त्रियों के बैठने की विशिष्टता की ओर सकेत करता है ।

पाद टिप्पणी

८५ (१) शवाजिर मजार, कब्र । श्रीवर

निजपरिभवभीत्या बन्धवो यान्ति दूरं
त्यजति च निजपत्नी का कथा सेवकानाम् ।
प्रतिदिनमृणहेतोस्ताडनं बन्धनं वा
भवति हि यमभङ्गाद् राजभङ्गोऽतिकष्टः ॥ ८६ ॥

८६ निज परिभव की भीति से, बन्धु दूर चले जाते हैं, अपनी पत्नी भी त्याग देती है, सेवको की बात ही क्या ? ऋण के लिये प्रतिदिन ताडन एव बन्धन किया जाता है, इस प्रकार निश्चय ही यम भग (दण्ड) की अपेक्षा राजभग[1] (दण्ड) अति कष्टप्रद होता है ।

स्फुलिङ्गालिङ्गनात् क्रुद्धकृष्णसर्पोपसर्पणात् ।
मकराकरपाताच्च कष्टं नृपतिसेवनम् ॥ ८७ ॥

८७ दहकते अग्नि का आलिगन, क्रुद्ध कृष्णसर्प के समीप गमन तथा समुद्र मे पतन की अपेक्षा, नृपति का सेवन, अधिक कष्टप्रद होता है ।

प्रद्युम्नगिरिपादान्ते चण्डालैर्निश्यनाथवत् ।
इष्टिकाभिस्ततो नीत्वा भूगर्तेषु निवेशिताः ॥ ८८ ॥

८८ अनाथ सदृश, उन लोगो को चाण्डालो ने रात्रि मे वहाँ से ले जाकर, प्रद्युम्नगिरि[1] के पादमूल मे, भू गर्त (कब्र) मे, निवशित कर, इष्टिष्का[2] से ढँक दिया ।

दाह-संस्कार का पक्षपाती था और गाडने की निन्दा किया है । श्लोक ९१ में वैश्रवण भट्टादि जिन्होंने अपने जीवन में अपने लिए कब्र निर्माण कराया था, उनकी मृत्यु पर वे काम न आये । वे जहाँ मरे, वहीं गाड दिये गये । किसी ने मृतात्मा की भावनाओ का आदर कर, उन्हे उनके कबरो में सुलाकर उनकी अन्तिम इच्छा पूर्ति नही की । काल किसी की चिन्ता नही करता ।

द्र० १ ७ २२६, २ ८५, ८९, ३ ३५५ ।

पाद टिप्पणी

८६ (१) *राजभग श्रीवर ने व्यवहारिक* कठोर सत्य लिखा है । भारत में राज्यों के विलय होने, उनकी प्रीवीपर्स बन्द तथा सभी राजकोय सम्मान वापस ले लेने पर, उनकी जो विपन्नावस्था हुई, वह वर्णनातीत है । उन्ही के यहाँ के पले नौकर, चाकर, उन्ही से वृत्ति प्राप्तकर पढे बुद्धिजीवी तथा अन्य मुखापेक्षी लोगो ने इस बुरी तरह से आँखें फेर ली कि उनके भी आनेपर उठकर खडे भी नही होते थे । ठीक से उन्हें नमस्कार या उनके किये नमस्कार का उत्तर भी नही देते थे । हिन्दुस्तान की आजादी के पश्चात् ससद तथा विधान मण्डलो के सदस्य जिस सम्मान तथा राजकीय भोग का उपयोग करते है, वे ही चुनाव हारने पर, अथवा पुन वहाँ के सदस्य न रहने पर, उनके यहाँ जो नित्य हाजरी देते थे, वे उलटकर फटकते भी नही । मैं भी पन्द्रह वर्ष तक पालियामेण्ट तथा तीन वर्ष तक उदयपुर हिन्दुस्तान जिंक सरकारी कारखाने का अध्यक्ष था । वहाँ से हटने पर किसी ने स्मरण भी नही किया । यदि मैं सरस्वती का उपासक न होता तो समय काटना कठिन था । यही कारण है कि पद से हटने पर कितनो ही का बौद्धिक सन्तुलन बिगड जाता है । उनकी अवस्था दयनीय हो जाती है । उस समय अपमान एव उपेक्षा के कारण मर जाना अच्छा अनुभव होने लगता है ।

पाद-टिप्पणी

'इष्टिका' पाठ–बम्बई ।

८८ (१) प्रद्युम्नगिर . शारिका पर्वत अथवा

कुर्वन्ति मौसुलजनाः स्वशवाजिरार्थं
यत्नं सदैव बहुकारुषु दत्तवित्ताः ।
नो चिन्तयन्ति परमेश्वरमन्तरेण
जानाति को मम कदा मरणं कथं स्यात् ॥ ८९ ॥

८९. मुसलमान लोग अपने शवाजिर (कब्र) के लिये बहुत से शिल्पियों को धन देकर, सदैव यत्न करते हैं, यह नहीं सोचते कि परमेश्वर के अतिरिक्त कौन जानता है, मेरी कहाँ पर और कैसे मृत्यु होगी ?

यः स्वायुषोऽवधिमवैति स्वदेहनिष्ठं
यस्यान्तको भवति मित्रतयातिवश्यः ।
युज्येत तं प्रति शवाजिरकर्म कर्तुं
म्लेच्छेषु दुर्व्यसनमात्रमिदं मतं मे ॥ ९० ॥

९०. जो अपने देह में स्थित, आयु की अवधि जानता है, और मित्रता के कारण अन्तक जिसके आधीन होता है, उसी के लिये शवाजिर कर्म करना उचित है, (अन्यथा) म्लेच्छों का यह दुर्व्यसन मात्र है। यह मेरा मत है।

हरि या हारी पर्वत भी कहते हैं। हारी का अर्थ काश्मीरी में पक्षी होता है। यहाँ पर आजकल निरंजननाथ संस्कृत पाठशाला है।

इस पर्वत के पादमूल में बहुत कब्रिस्तान आज भी हैं किन्तु आबादी बढ़ने और भूमि की कमी के कारण वे स्वतः लुप्त हो रहे हैं।

(२) इष्टिका : इष्टिका का पाठभेद यदि इष्टिका मान लिया जाय तो अर्थ होगा कि कब्र में रखकर ईंटों से ढक दिया। यदि उसका अर्थ शिविका मान लिया जाय तो ताबूत में ले जाकर उसे कब्र में रख दिया। बगली कबर होने पर उसके खुले स्थान को शव रखने के पश्चात् ईंटों या पत्थरों से बन्द कर देते हैं। यहाँ अभिप्राय मिट्टी की ईंटों से है।

पाद-टिप्पणी

८९. (१) शवाजिर : मजार। श्रीवर दाह तथा गाड़ने के सम्बन्ध में अपना स्वतन्त्र मत प्रकट करता है। वह गाड़ने की अपेक्षा दाह करना अच्छा मानता है। वह इस श्लोक के पश्चात् अपना तर्क उपस्थित करता है। प्रतिष्ठित अथवा धनी मुसलमान अपने जीवन काल में अपने लिये कब्र या मजार बनवाते हैं। उस पर यथेष्ट व्यय भी करते हैं। किन्तु भाग्य उन्हें वहीं गड़ने के लिये लायेगा कहना कठिन है। इसका ज्वलन्त उदाहरण इलाहाबाद का खुसरो बाग है। जहाँ एक भव्य इमारत खड़ी है। परन्तु गड़नेवाला उसमें गाड़ा नहीं जा सका। बिना वास्तविक कब्र के वह इमारत आज भी खड़ी है। हिमायूँ का मकबरा मुगलों ने अपने वंश के गाड़ने के लिए बनवाया था ताकि हिमायूँ के कुटुम्बी मरने के पश्चात् भी उसके समीप ही गड़ पड़े रहें। मैं समझता हूँ कि मुगल वंश के सैकड़ों से अधिक व्यक्ति दारा शिकोह सहित वहाँ गड़े हैं। परन्तु कितने ही वहाँ न गड़कर हिन्दुस्तान के भिन्न भागों में उपेक्षित मिट्टी के ढेरों के नीचे पड़े हैं। औरंगजेब अर्ध शताब्दी राज्य करने पर भी दिल्ली से हजारों मील दूर खुलदाबाद में दफन है और खुली कब्र की उपेक्षा तथा भग्नावस्था देख कर सर-सालार जंग ने उसे संगमरमर का बनवा कर, उसे रक्षित किया था।

पाद टिप्पणी

९०. 'अवैति' 'निष्ठम्' पाठ—बम्बई।

ते वैश्रवणभट्टाद्याः कृत्वापि स्वशवाजिरम् ।
अन्ते यत्र मृता ग्रामे भुवि तत्रैव शायिताः ॥ ९१ ॥

९१ वैश्रवण, भट्टादि अपने लिये शवाजिर[1] निर्माण करके, अन्त में, ग्राम में, जहाँ मरे, वहीं भूमि में सुला दिये गये ।

एक एको भुवो हस्तशतमात्रावृतौ रतः ।
पराप्रवेशदो यत्नात् प्राकृतो लज्जते न किम् ॥ ९२ ॥

९२ प्रत्येक सामान्य जन सैकड़ों हाथ भूमि घेरने (आवृत) में रत रहता है, और दूसरे का प्रवेश यत्नपूर्वक नहीं होने देता, क्या उसे लज्जा नहीं आती ?

श्रुतं यच्छास्त्रतः सूक्ष्मशिलाश्चेच्छवभूतले ।
स्थाप्यन्ते तत् सुखं तस्मिन् परलोकगते भवेत् ॥ ९३ ॥

९३ (मुसलिम) शास्त्रों में सुना गया है कि यदि शव भूतल पर छोटी शिलायें[1] स्थापित कर दी जाय, तो उसके परलोक जाने पर सुख होता है ।

पाद टिप्पणी

९१ (१) वैश्रवण, भट्टादि मुसलिम हो जाने पर भी पूर्व संस्कृत हिन्दू नाम, उन्होंने परिवर्तित नहीं किया था । इण्डोनेशिया तथा मलेशिया में हिन्दुओं से मुसलमान हुए, शताब्दियाँ बीत गयी, परन्तु वहाँ लोग पुरातन संस्कृत नाम रखते हैं । अरबी और ईरानी मुसलिम नाम के स्थान पर स्थानीय नाम रखते हैं, जैसे सुकार्णो आदि । केवल भारत ही अपवाद है, जहाँ हिन्दू धर्म परिवर्तन के साथ, नाम भी बदल कर शुद्ध अरबी या फारसी नाम रखा जाता है । द्र० ३ ५०१, ५११ ।

पाद-टिप्पणी

९२ (१) आवृत भारत में प्रथा थी और है कि लोग अपने कुटुम्ब के लिए कब्रिस्तान बनवाते थे । यह चहारदिवारी से वेष्ठित घेरा लम्बा-चौड़ा होता है । कभी-कभी एक बगीचा में एक ही कब्र बनाकर उसके चारों ओर भूमि छोड़ देते थे । कुटुम्बी जन अपने हड़ावर में गाड़े जाते हैं । इस प्रकार के प्राकार वेष्ठित चहारदिवारी बनाने में लोग अपनी प्रतिष्ठा तथा अर्थक्षमता के अनुसार बड़ा से बड़ा हाता बनवा कर, भूमि का उपयोग व्यय कर देते हैं । उसमें दूसरे मुर्दों का गाड़ना रोक देते हैं । काशी में बादशाह का बगीचा नगर के प्रायः मध्य में वर्तमान मुहल्ला में है वह बावन बीघा से भी बड़ा है । मेरे बाल्यावस्था में मौलसरी के वृक्षों से भरा था । वही बाग अब सरकार ने आवासीय गृहों के प्लाट में बदल दिया है । वहाँ आधुनिक कालोनी बन गयी है । शताब्दियों तक वह बगीचा जंगली पादपों से भरा अनुपयोगी पड़ा था ।

पाद-टिप्पणी

९३ (१) शिला ऐसी कोई धार्मिक मान्यता नहीं है । कब्र पर शिलाखण्ड कब्र की पहचान के लिए लगा दिया जाता है । शिला लगाना भी धार्मिक कृत्य नहीं है । कब्र के उत्तर ओर अर्थात् जहाँ शव का सिर होता है, वहाँ एक ऊँचा स्तम्भ गाड़ देते हैं । शव की पहचान के लिए ईसाई तथा यहूदी भी शिला गाड़ते हैं । ईसाई उसे क्रास का रूप देते हैं । उस पर दिवंगत व्यक्ति का नाम, जन्म, मृत्युकाल तथा बाइबिल का एकाध पद उद्धृत कर खुदवा दिया जाता है । उसे अंग्रेजी में 'ग्रेवस्टान'

अहो लोभस्य माहात्म्यं जीवद्वद् यन्मृता अपि ।
शवाजिरापदेशेन कुर्वन्त्यावरणं भुवः ॥ ९४ ॥

९४ अहो ! आश्चर्य है !! इस लोभ के माहात्म्य पर, जो कि जीवित की तरह मृत भी शवाजिर के व्याज से भूमि का आवरण (घेराव) करते हैं।

महान्तो हन्त कुर्वन्तु कृतयत्नाः शवाजिरम् ।
तन्निर्माणेन जीवन्ति कियन्तोऽपि बुभुक्षिताः ॥ ९५ ॥

९५ हन्त ! प्रयत्नपूर्वक महान लोग शव प्रांगण का निर्माण करें क्योंकि उसके निर्माण से कितने ही भूखे लोग जीवित होते हैं (जीविका चलती है)।

वन्द्योऽन्यदर्शनाचारो हस्तमात्रे भुवस्तले ।
दग्धा यत् कोटिशो नित्यं सावकाशं तथैव तत् ॥ ९६ ॥

९६ अन्य (हिन्दू) दर्शन[1] का आचरण ही श्रेष्ठ है, जो कि हस्त मात्र भूतल पर, नित्य करोड़ों दग्ध होते हैं तथापि वह उसी प्रकार खाली रहता है।

कहते हैं। यहूदी लोग अनगढ़ पत्थर जो प्रायः टूटी शक्ल का होता है, लगाते हैं। उस पर भी नामादि लिखा रहता है। मुसलमान कब्रों के स्तम्भ पर भी नाम आदि लिखा रहता है। उसमें एक ताख महराब के आकार का खोद दिया जाता है। उसमें चिराग रखा जाता है। कुछ लोग पत्थर पर पवित्र कुरान की आयत अथवा सुभाषित अपनी रचना खुदवा देते हैं।

गत शताब्दियों की कब्रें ईसाइयों की वर्तमान हैं। लगभग तीन शताब्दियों के कब्रिस्तान ब्रिटिश शासन होने के कारण सुरक्षित अवस्था में हैं। उनमें अंग्रेज तथा धर्म परिवर्तित ईसाई गाड़े जाते हैं। प्रत्येक ईसाई सम्प्रदाय का कब्रिस्तान अलग है। इसी प्रकार सैनिकों तथा सिविलियन यूरोपियन तथा भारतीय ईसाइयों का कब्रिस्तान है। गत शताब्दी के पूर्वकालीन कब्रों पर सुन्दर कलाकृतियाँ पाषाणमयी बनी हैं। उन पर क्रास नगण्य बना है। परन्तु नाम ग्राम संक्षिप्त परिचय एवं बाइबिल का वचन लिखा मिलता है। इस शताब्दी में ईसाई कब्रों के रूप में परिवर्तन हो गया है। शिरोभाग पर क्रास बनाना एक शैली हो गयी है। इसमें ईसाई मुसलमान तथा अन्य जाति के कब्रों में स्पष्ट भेद प्रकट होता है। वे सुविधापूर्वक पहचान में आ जाते हैं।

यहूदी भी कब्र बनाते हैं परन्तु वह कब्र के शिरोभाग में नाम ग्राम परिचय अंकित टूटा या अनगढ़ पत्थर लगाते हैं। यहूदी तथा ईसाइयों के कब्र में भेद प्रकट हो जाता है। मुसलिम कब्रिस्तान प्रायः उपेक्षित टूटी-फूटी अवस्था में मिलते हैं। उन पर बेर या मौलसरी का वृक्ष लगाते हैं।

पाद टिप्पणी

९५ कुर्वन्तु पाठ—बम्बई।

पाद टिप्पणी

९६ (१) दर्शन : दर्शन शब्द वर्तमान प्रचलित शब्द धर्म, मत, मजहब या दीन के अर्थ में राजतरंगिणीकारों ने प्रयोग किया है। हिन्दू धर्म के अनुसार शव का दाह करना श्रेयस्कर माना गया है। विश्व में अन्त्येष्टि के अनेक प्रकार प्रचलित थे और हैं। दाह, समाधि या गाड़ना, जल प्रवाह, मुक्त छोड़ देना, गुफाओं में सुरक्षित रखना अथवा ममी रूप में रक्षित रखना। दाहप्रथा, हिन्दुओं

इत्याद्यनुचिता निन्दा प्रस्तावाद्विहितात्र यत् ।
क्षन्तव्या मौसुलैर्यस्मात् कविवाचो निरर्गलाः ॥ ९७ ॥

९७ इस प्रकार प्रसंगवश, यहाँ जो अनुचित निन्दा की है, मुसलमान लोग, उसे क्षमा करेंगे, क्योकि कवि की वाणी निरकुश होती है।

कृपण निन्दा

ये राजवैभवमवाप्य निपीड्य लोकं
कुर्वन्ति संचयमतो न च दानभोगौ ।
अत्युत्कटाघभरतत्फललब्धदुःखा-
स्ते कोशरक्षणनिभाद् वितरन्ति राज्ञः ॥ ९८ ॥

९८. जो लोग राज्य वैभव प्राप्त कर, लोक को पीड़ित कर, धन सचय करते हैं, दान एव भोग नही करते, वे लोग अत्युत्कट पाप भार से, उसके फलस्वरूप, महान क्लेश प्राप्त कर, कोशरक्षण के व्याज से राजा को दे देते हैं।

और बौद्ध में सुदूर प्राचीन काल मे प्रचलित है। यहूदी, ईसाई तथा मुसलमान गाड देते है। पारसी शव को खुला छोड देते है, ताकि पक्षी उन्हें खा जायँ। मिश्र के लोग ममी बना कर पिरामीड में रखते थे। मैंने जेरूसलम में देखा है कि बाइविल वर्णित जजो का शव लम्बी गुफा में रखा जाता था। इसी प्रकार बडे-बडे पत्थर के बक्सो मे शव को गुफा में रख दिया जाता था। मैंने अपनी इसराइल की यात्रा में इस प्रकार की बड़ी लम्बी गुफा देखा है जहाँ अलंकृत पाषाण बक्सों में शव रखा जाता था। बक्स के ऊपर नाम एव ग्रामादि परिचय खोद दिया जाता था। सन्यासियो तथा सर्पदश से मृत, विष खाकर तथा माता की बीमारी में मरे, व्यक्तियो का जलप्रवाह किया जाता है। मैंने अपने पिता के तीनों मामा जिन्हें मैं भी मामा कहता था। काशी में ज्येष्ठ तथा कनिष्ठ का सस्कार किया तथा मझले मामा की इच्छानुसार उनका जलप्रवाह किया था। जलप्रवाह की प्रक्रिया है कि शव को पत्थर के टाँका में बन्द कर जलधारा में छोड दिया जाता है। टाँका में एक गोल छेद बना दिया जाता है। उसी से प्रवेश कर जलीय जन्तु शव को खा जाते थे। प्राचीन रोम में शवदाह सम्मान्य समझते थे। केवल आत्महत्या या हत्यारों का शव गाडा जाता था। ईसाई, मुसलमान आदि विश्वास करते है कि 'मृत का भौतिक शरीरोत्थान होगा।' जजमेंट तथा कयामत के समय वे अपनी कब्रो से उठेंगे। धार्मिक अन्धविश्वास के कारण ईसाई एव मुसलमान शवदाह की ओर आकृष्ट नही हुए। सन् १९०९ ई० में क्रिमेशन एक्ट ब्रिटेन में पास किया गया। उसके द्वारा शवदाह की अनुमति दी गयी। गत वर्ष आस्ट्रेलिया में हिन्दुओ को शवदाह की आज्ञा नही दी गयी थी। पाश्चात्य देशों मे बिजली तथा तेल से शवदाह की प्रथा जोर पकडती जा रही है। आदि पुराण में उल्लेख मिलता है कि मग लोग गाडे जाते थे। दरद एव लुब्धक लोग सम्बन्धियो के शवो को वृक्ष पर रखकर चल देते थे। महाभारत काल में भी यह प्रथा थी, जहाँ सकेत किया गया है कि पाण्डव अपने अस्त्र-शस्त्रों को वृक्ष पर शव को तरह टाँग दिये थे ताकि कोई शव समझ कर, उन्हें प्राप्त न कर सके। श्रीवर आधुनिक वैज्ञानिकों के समान शवदाह के पक्ष में तर्क उपस्थित करता है।

पाद-टिप्पणी :

९८. 'लब्ध' पाठ-बम्बई।

द्रव्यं गृहतुरंगादि तेषां तद्राजसादगात् ।
तत्कुटुम्बैर्निरालम्बैर्नाप्ताप्येका वराटिका ॥ ९९ ॥

९९. उनका गृह, तुरग, आदि द्रव्य, नृपाधीन हो गया और निरालम्ब उनके कुटुम्बियो ने एक कौडी भी नही प्राप्त की।

कोशेशसंचितं स्वर्णपूर्णं रूप्यकभाजनम् ।
दृष्ट्वा धिक्कृत्य कृपणं थूत्कारं नृपतिर्व्यधात् ॥ १०० ॥

१०० कोशेश द्वारा संचित, स्वर्णपूर्ण रजतपात्र देखकर, उस कृपण को धिक्कार कर, राजा ने थूत्कार किया।

तत्पक्षान् वह्मरागादीन् हृतसर्वस्वसंचयान् ।
कारायामक्षिपद्राजा मुक्त्वैकं सैदहोस्सनम् ॥ १०१ ॥

१०१ राजा ने उसके पक्ष के बह्मरागादि जनो का सर्वस्व संचय अपहृत कर, एक सैद होस्सन के अतिरिक्त सबको कारा मे डाल दिया।

अन्ये पित्रपराधेन तस्माद् भृगुसुतोपमात् ।
क्षत्रिया इव ते सर्वे नाशं प्रापुः पुरातनाः ॥ १०२ ॥

१०२ पिता के अपराध के कारण परशुराम[१] सदृश, उस नृपति द्वारा क्षत्रियो[२] के समान, अन्य पुरातन लोग नष्ट कर दिये गये।

पाद टिप्पणी

९९ 'गृह तुरगादि' पाठ–बम्बई।

पाद टिप्पणी

१०० 'थूत्कार' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी

१०१ (१) वह्मराग श्रीदत्त ने इस नामवाचक शब्द मानते हुए बहमराग शब्द माना है (पृष्ठ १९३)। श्रीकण्ठ कौल ने इस नामवाचक शब्द माना है। इस शब्द का सम्बन्ध किसी राग से नही है।

पाद टिप्पणी

१०२ (१) परशुराम नालमत पुराण परशुराम को भगवान् का अवतार मानता है। महर्षि जमदग्नि के पाँचवें कनिष्ठ पुत्र परशुराम थे। माता का नाम रेणुका था। क्षत्रियों का इक्कीस बार संहार किया था। भार्गववंशीय थे। पश्चिम भारत में भार्गववंशीय ब्राह्मण हैहय राजाओं के पुरोहित थे। त्रेतायुग मे उत्पन्न हुए थे। त्रेता तथा द्वापर के सन्धिकाल में उनका अवतार हुआ। अट्ठारहों पुराणों मे उन्हें अवतार माना गया है (आदि० २ ३)। जमदग्नि का आश्रम नर्मदा तट पर था (ब्रह्मा० ३ २३ २६)। जमदग्नि एक समय रेणुका पर कुपित हो गये। परशुराम को माता की हत्या करने के लिए कहा। परशुराम ने अविलम्ब उसका पालन किया (वन० ११६ १४)। जमदग्नि प्रसन्न हुए। रेणुका पुनः जीवित हो गयी। परशुराम को इच्छामृत्यु का वर दिया (विष्णु धर्म० १ ३६ ११)। परशुराम ने हैहय राजा कार्तवीर्य का युद्ध में उसके शतपुत्रो के साथ वध किया (ब्रह्मा० ३ ३९ ११९, शान्ति० ४९

४१)। क्षत्री हत्या के कारण जमदग्नि ने प्रायश्चित हेतु बारह वर्षों तक तपस्या करने की आज्ञा दिया (ब्रह्मा० ३ ४४)। परशुराम तपस्या कर लौटे तो उन्हें मालूम हुआ कि जब उनके पिता समाधि में थे, उसी समय उनका वध कर दिया। जमदग्नि आश्रम में पहुँचते ही, रेणुका ने छाती इक्कीस बार पीट कर, पति की हत्या का वृतान्त सुनाया। परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रिय विहीन भूमि करने की प्रतिज्ञा किया। भगवान् दत्तात्रेय के आदेशानुसार पिता का अन्तिम सस्कार किया। रेणुका देवी सती हो गयी। शोक विह्वल परशुराम ने माता-पिता को पुकारा। माता पिता प्रत्यक्ष उपस्थित हो गये। उस स्थान का नाम 'मातृतीर्थ' पड़ा। यह महाराष्ट्र का मशहूर स्थान है। गाथा है कि परशुराम ने चौदह कोटि क्षत्रियों का सहार किया था। उसने मूर्धाभिषिक्त, बारह सहस्त्र राजाओं का मस्तक छिन्न किया था। परशुराम की हत्या से केवल आठ क्षत्रिय राजा बच सके थे। वे हैं, हैहय राजवीति होत्र, पौरवराज, रिभवान, अयोध्याराज सर्वकर्मन, मगधराज, बृहद्रथ, अगराज चित्ररथ, शिवीराज गोपालि, प्रतर्दन पुत्र वत्स, एव मरुत्त। परशुराम जयन्ती वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन रात्रि के प्रथम प्रहर में होता है। समारोह अधिकतया दक्षिण में होता है (द्र० ४ : २६)।

(२) क्षत्रिय मनु ने लिखा है—'ब्राह्मण क्षत्रियों वैश्यस्त्रयो वर्ण द्विजातय' (१० ४) मनु ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र चार वर्ण माना है। क्षत्रिय वर्ग का मुख्य कार्य शासन तथा सैनिक कर्म द्वारा देश की रक्षा तथा उसके लिये उत्सर्ग करना था। वेदाध्ययन प्रजापालन, दान, यज्ञादि करते हुए, विषय-वासना से दूर रहना, उनका कर्तव्य माना गया है। वशिष्ठ ने क्षत्रियों के लिये अध्ययन, शस्त्राभ्यास, प्रजापालन कर्तव्य बताया है। प्रजापति के बाहु से क्षत्रियों की उत्पत्ति हुई है। वेदों में वर्णित क्षत्रिय तथा पुराण-वर्णित वंशों में अन्तर है। पुराणों में सूर्य एव सोम दो मुख्य वश माने गये हैं। तत्पश्चात् अग्नि आदि वर्णों की उत्पत्ति हुई। क्षत्रिय वर्ण के लोग प्राय ठाकुर कहे जाते हैं।

काश्मीर के प्राय सभी क्षत्रिय मुसलमान हो गये हैं। वे ठक्कुर, पदर, मिया राजपूत आदि कहे जाते हैं। काश्मीर में हिन्दू केवल ब्राह्मण रह गये हैं। डोगरा राजकाल में कुछ डोगरा क्षत्रिय काश्मीर में आ गये थे। इस समय जो भी कुछ क्षत्रिय काश्मीर में हैं, वे बाह्यदेशीय हैं। मिया राजपूत मुख्यतया देवसर तहसील में पाये जाते हैं।

मुझे यह देखकर, आश्चर्य हुआ कि होशियारपुर पजाब में भी कुछ क्षत्री लोग अपने नाम के साथ मिया लिखते हैं। होशियारपुर में एक मुकदमे के सम्बन्ध में गया था। मुझे मालूम हुआ कि वहाँ के बार एशोशियेशन के सभापति जो प्रतिष्ठित वकील मिया ठाकुर मेहरचन्द एडवोकेट थे। मैंने उन्हें अपना वकील बनाया। उनके यहाँ प्राय सायंकाल प्रतिष्ठित लोगों का जमघट होता था। हिमाचल प्रदेश तथा तराई इलाके के सम्पन्न परिवार के लोग एकत्रित होते थे। वहीं मुझे हिमालय अचल के क्षत्रियों का ज्ञान हुआ। मियाँ मेहरचन्द जी स्वय पहाड़ी क्षेत्र के निवासी थे। प्रतिष्ठित वश के थे। उनके पिता चाहते थे कि वे खेती करते परन्तु उन्होंने वकालत पेशा स्वीकार किया। वहीं पर मुझे मालूम हुआ कि पर्वतीय अचल के प्रतिष्ठित क्षत्री कुल के लोग अपने नाम के साथ मिया लिखते थे। मिया शब्द गौरव का द्योतक था। होशियारपुर की कचहरी में भी वकीलों को मिया जी शब्द से सम्बोधन करते थे। क्षत्रियों ने मिया शब्द कुलीनता तथा उच्च कुल क प्रतीक स्वरूप अपना लिया था, जैसे बगाल में बगालियों तथा बिहार में भूमिहारों का एक वर्ग अपने नामके साथ 'सा' शब्द का प्रयोग करता है।

यासीत् पितुः सभा योग्या तत्तत्कार्यविशारदा ।
स्मृतपूर्वापकारेण तेन सर्वावसादिता ॥ १०३ ॥

१०३. तत् तत् कार्यों में विशारद एवं योग्य पिता की जो सभा[1] थी, राजा ने अपकार का स्मरण कर, सब समाप्त कर दिया।

अन्तरङ्गान् हुमेभादीन् पञ्चषानधिकादरैः ।
अरक्षत् प्राक्तनं स्मृत्वा प्रेम सेवां च पैतृकीम् ॥ १०४ ॥

१०४ पुरातन प्रेम, पिता की सेवा का स्मरण कर, हुमेभ[1] (हबीब) आदि पाँच-छः अन्तरंग लोगों की अति आदरपूर्वक रक्षा की।

आदम खाँ का प्रत्यावर्तन

आदमखानः पर्णोत्से श्रुत्वा कोशेशनाशनम् ।
स्वनामान्वर्थतां बिभ्रद्ययौ भीतो यथागतम् ॥ १०५ ॥

१०५ आदम खान ने पर्णोत्स[1] में कोशेश (हस्सन) का नाश सुनकर, अपने नाम[2] को सार्थक करते हुए, जैसे आया था वैसे चला गया।[3]

बहामखानो वित्राणस्तद्वधाच्छङ्कितो भृशम् ।
गृहमेत्य नृपेणाश्वासितः कार्यावलोकिना ॥ १०६ ॥

१०६ अरक्षित बह्राम खान, (बहराम खाँ) उस (हस्सन) के वध से अति शंकित हो गया। घर आने पर, कार्यावलोकी राजा ने (उसे) आश्वासित किया।

पाद-टिप्पणी

१०३ (१) सभा दरबार।

पाद-टिप्पणी

१०५ (१) पर्णोत्स पूंछ।

(२) नाम श्रीदत्त ने अर्थ लगाया है 'आदमी खून' (पृ० १९४)।

(३) पीर हसन लिखता है—दूसरी तरफ आदम खाँ एक बड़ा भारी लश्कर जमाकर के मुल्क पर कब्जा करने की गरज से जम्मू पहुँच चुका था। उसने जब हसन खाँ की कतल का वाकया सुना तो जंग का इरादा फसख (?) करके मुलक दरराज जम्मू की रफाकत में मुगलों की जंग के लिये गया जो उन दिनों उस इलाका में आये हुये थे (पृष्ठ १८८)।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'जब उसे अमीरों के हत्या के समाचार ज्ञात हुए तो वह लौटकर जम्मू चला गया (४४७ = ६७४)।'

पाद-टिप्पणी

१०६. 'वित्राण' पाठ—बम्बई।

आदम खा की मृत्यु

> अस्मिन्नवसरे मद्रमण्डले सुभटक्षयः ।
> अभून्माणिक्यदेवस्य तुरुष्कैः सह सयुगे ॥ १०७ ॥

१०७ इसी अवसर पर, मद्र मण्डल म तुरुष्कों[1] के साथ युद्ध करते हुये, माणिक्यदेव[2] के वीरो का विनाश हुआ ।

> मातुलेन सम यातो योद्धुं तत्रैव सगरे ।
> आदमखानः स प्रापच्छरभिन्नमुखः क्षयम् ॥ १०८ ॥

१०८ युद्ध हेतु इस सग्राम म मातुल के साथ आदम खान[2] गया था और वह मुख पर हुये, वाण[3] प्रहार के कारण मर गया ।

> केऽप्यूचुः म निजैरेव हतस्तत्र भयाश्रितैः ।
> केऽपि व्रणशलाकाग्राकृष्टिमर्मविदारणात् ॥ १०९ ॥

१०९ कुछ लोग कहते हैं कि वह अपने भयग्रस्त आश्रितो द्वारा मार डाला गया और कुछ लोग कहते हैं कि शलाका को खींचने से मर्मस्थल विदीर्ण हो जाने के कारण मर गया ।

पाद टिप्पणी

१०७ (१) तुरुष्क यहाँ मुगलों से फारसी इतिहासकारों का तात्पर्य है ।

(२) माणिक्यदेव फिरिश्ता जम्मू के राजा माणिक्यदेव का उल्लेख नही करता । केवल लिखता है—'आदम खाँ हिन्दुस्तान स जम्मू लौटने पर राजा को काश्मीर का राज्य प्राप्त करन क लिए प्रेरित किया । राजा न उसको सहायता करने का वचन दिया किन्तु उसी समय मुगलों के एक दल न जम्मू पर आक्रमण कर दिया (४७६) ।' फिरिश्ता राजा का नाम 'मुन्कदेव' या 'मालिकदेव' लिखता है । कर्नल ब्रिग्स, राजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में नाम नही दिया गया है ।

पाद-टिप्पणी

१०८ (१) मातुल : माणिक्यदेव ।

(२) आदम खाँ तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—आदम खाँ जम्मू क राजा माणिक्यदेव के साथ मुगलों स जो उस क्षेत्र में आये हुए थे, युद्ध करने के लिए पहुँचा । उसके मुख पर एक बाण लगा और उसकी मृत्यु हो गयी (४४७ = ६७४) ।

(३) वाण पीर हसन लिखता है—वहाँ पर एक तीर उसके मुँह पर लगा और मर गया (पृ० १८८) ।

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है—हैदरशाह के पास समाचार पहुँचा कि आदम खाँ अपने मामा जम्मू के राजा माणिक्यदेव के साथ तुर्कों के विरुद्ध लड़ता हुआ मार डाला गया (म्युनिख पाण्डु० ७८ ए०) ।

फिरिश्ता लिखता है—आदम खाँ एक बाण लगने के द्वारा मर गया जो कि उसके मुख में घुसकर खोपड़ी में धँस गया था (४७६) ।

पाद-टिप्पणी

१०९. (१) शलाका श्रीदत्त ने शलाका का अर्थ बर्छा (लान्स) लगाया है । शलाका का अर्थ बाण-भाग तथा नेजा भी हुआ है ।

श्रुतत्मरणो राजा दूतैरत्यन्तदुःखितः ।
तद्देशाच्छवमानीय जननीसंनिधौ न्यधात् ॥ ११० ॥

११० दूतों से उसका मरण[1] सुनकर, राजा अत्यन्त दुःखी हुआ और उस देश से शव लाकर, माता[2] के सन्निधि में रख दिया।

ज्येष्ठोऽपि शौर्यनिलयोऽपि बलान्वितोऽपि
प्राप्तोऽपि जन्मभुवमाप्तधनप्रपञ्चः ।
नैवाप राज्यमुचितं स कृतप्रयत्नो
भाग्यैर्विना न हि भवन्ति समीहितार्थाः ॥ १११ ॥

१११ ज्येष्ठ शौर्य एवं सेना युक्त होकर भी तथा जन्मभूमि को प्राप्त करके भी, धन प्रपंच प्राप्त कर लिया, किन्तु प्रयत्न करने पर भी, वह समुचित रूप से राज्य नहीं प्राप्त कर सका। निश्चय ही, भाग्य के बिना वाञ्छित अर्थ की सिद्धि नहीं होती—

अथवा पितृशापः स तस्यापि फलितोऽभवत् ।
यदाप्तोऽपि निजं देशं परदेशे क्षयं गतः ॥ ११२ ॥

११२ अथवा वह पिता का शाप[1] ही उसके लिये फलित हुआ, जो अपने देश में आने पर भी, परदेश में मरा।

पाद-टिप्पणी

११० (१) मरण : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान मृत्यु का समाचार सुन कर बहुत दुःखी हुआ और उसने आदेश दिया कि उसके शरीर को रणक्षेत्र से लाकर उसके पिता के मकबरे के निकट दफन कर दिया जाय (४४७ = ६७४)।

फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान के राजा की मृत्यु का समाचार सुना तो उसने भाई का शव काश्मीर मँगवाया और उसे पिता के समीप दफन करवा दिया।

श्रीवर ने माता के समीप और तवक्काते अकबरी तथा फिरिश्ता ने लिखा है कि पिता के समीप दफन कर दिया गया।

(२) माता : पीर हसन लिखता है—उसकी (लाश) काश्मीर में मँगवा कर, मुहल्ला सहियायार मुतसिल नवाकदल में दफन करवा दी।

म्युनिख में भी यह कथा लिखी गयी है—जैसे ही हैदरशाह के पास समाचार पहुँचा कि आदम खाँ दिवंगत हो गया है, उसने ज्येष्ठ भ्राता की लाश जम्मू से मँगा कर, सुल्तान जैनुल आबदीन की कब्र के पास गड़वा दिया (पाण्डु० . ७८ ए०)। तबकाते अकबरी : ३ : ४७७।

पाद-टिप्पणी

१११ - उक्त श्लोक का भाव श्लोक १ : ७ : १९८ तुल्य है।

पाद-टिप्पणी

११२ (१) शाप : द्रष्टव्य : १ : ७ : ९५, ९६ तथा १ : ७ : ११७।

अपशकुन

अत्रान्तरे महोत्पाता दिव्यभौमान्तरिक्षगाः ।
अहंपूर्विकयेवापुर्नृपतेर्जनकम्पदाः ॥ ११३ ॥

११३ इसी बीच लोगों को कम्पित करनेवाले आकाश, भूमि एवं अन्तरिक्ष (वायु) मे उत्पन्न महान उत्पात स्पर्धापूर्वक राजा को दिखाई दिये ।

तथाहि प्रथमं राज्ञि पुष्पलीलाचिकीर्षया ।
गते मडवराज्योर्वीं भूमिकम्पोऽभवन्महान् ॥ ११४ ॥

११४ पुष्पलीला[1] करने की इच्छा से, राजा के मडवराज जाने पर, महान् भूकम्प[2] हुआ ।

अस्मत्कर्तृजनः कोऽपि सुखी नैवाधुना स्थितः ।
इतीव देशे तत्काल चकम्पुर्जनवद्गृहाः ॥ ११५ ॥

११५ हम लोगो का कोई निर्माता अब सुखी नही रहेगा इसीलिये माना देश मे उस समय मनुष्य की तरह घर कांपने लगे ।

उदभूत् पूर्वदिक्पुच्छः केतुर्नभसि विस्तृतः ।
पूर्वं बहामखानेन दृष्टोऽरिष्टस्य सूचकः ॥ ११६ ॥

११६ पूर्व दिशा की ओर आकाश मे अनिष्टसूचक, विस्तृत पुच्छ केतु (पुच्छल तारा) उदित हुआ । बहराम खान ने उसे पहले देखा ।

पाद-टिप्पणी :

'अन्तरिक्ष' पाठ–बम्बई ।

११३ (१) *भौमा* द्रष्टव्य टिप्पणी १ : २६४ ।

पाद-टिप्पणी

११४ (१) पुष्पलीला द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० १ ४ २ ।

(२) भूकम्प महाभारत काल उपस्थित होने पर इसी प्रकार के अपशकुनों का वर्णन किया गया है । श्रीवर उन्ही का अनुकरण करता कुछ का उल्लेख करता है—

अभीक्ष्ण कम्पते भूमिरर्क राहुस्तथैति च ।
भीष्म० ३ ११ ।

महाभूता भूमि कम्पे चत्वार सागरा पृथक् ।
भीष्म० ३ ३८ ।

पाद टिप्पणी

११६ (१) केतु महाभारत काल में केतु का उदय हुआ था । इसका विशद वर्णन महाभारत (भीष्मपर्व ३ १३–१७) में मिलता है । श्रीवर ने कुछ ही अपशकुनों का उल्लेख किया है । (द्रष्टव्य पाद टिप्पणी १ १ १७४) । धूमकेतु केतुओं में सर्वप्रथम है (वायु० ५३ १११) । केतु के उदय काल से पन्द्रह दिन के अन्दर शुभ या अशुभ फल निकलता है ।

तुलसीदास ने लिखा है

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डेराहू ।
लूक ना असनि केतु नहि राहू ॥

स दूरविस्तृतः पुच्छः कालकुन्तोपमो दिने ।
स्फुरन् प्रतीचीं प्रत्याशां तस्यैव ददृशे जनैः ॥ ११७ ॥

११७ उसका दूर तक विस्तृत काल कुन्त[1] सदृश उस पूँछ को, दिन में भी पश्चिम दिशा की ओर स्फुरित होते हुये, लोगों ने देखा।

युग्मसूर्वडवा राजमन्दुरान्तर्गताभवत् ।
देशात् क्रष्टुं ददौ राजा यां भिया यवनक्षये ॥ ११८ ॥

११८ राजा के अस्तबल में युगल बच्चा पैदा करनेवाली एक घोड़ी थी। यवनों का क्षय होने पर, राजा ने देश से निकालने के लिये दे दिया।

सिंहादयो दिने चेरुर्वन्याः श्रीनगरान्तरे ।
बिडालपोतं सुषुवे शुनी च प्रसवक्षणे ॥ ११९ ॥

११९ दिन में श्रीनगर के अन्दर सिंहादि[1] वन्य पशु विचरण करने लगे और प्रसव के समय एक कुतिया[2] ने बिडाल का बच्चा पैदा किया।

निष्फलो यः सदानन्दीतरुः स सफलोऽभवत् ।
उपराजगृहं मूलाद् दाडिमीकुसुमोद्गमः ॥ १२० ॥

१२० फल न देनेवाला सदानन्दी[1] वृक्ष फल युक्त हो गया। राजगृह के समीप जड़ से अनार[2] वृक्ष में कुसुमोद्गम हुआ।

पाद-टिप्पणी

११७ (१) कुन्त : श्रीदत्त ने कुन्त का अर्थ 'लान्स' अर्थात् भाला बर्छा किया है। कुन्त बर्छा है। गीतगोविन्द में कुन्त की उपमा दी गयी है— 'विरहि निकृन्तन कुन्त मुखाकृति केतकि दन्तुरिताशे'। कल्हण ने कुन्त शब्द भाला या बर्छा के अर्थ में प्रयोग किया है (रा० ४ : ३०१)।

तुलसीदास ने कुन्त का इसी अर्थ में प्रयोग किया है :

कुवलय विपिन कुन्त बन सरिसा।
वारिद तपत तेल जनु बरिसा ॥

अनेकार्थ पृष्ठ १२३ में उल्लेख है :

कुत सलिल औ कुत कुस, कुत अनल नभ बाल।
कुत कंद्रत कवि कमल सो, कुत जु सग कराल ॥

पाद-टिप्पणी

११९ (१) सिंहादि : निर्भय हिंस्र पशु सिंहादि वन्य पशु स्वतन्त्रतापूर्वक नगर में विचरण करते थे यह नागरिकों तथा राज्य की अतीव दुर्बलता का द्योतक है क्योंकि उन्हें भय स मारता नहीं था।

(२) कुतिया : भीष्मपर्व महाभारत में इसी प्रकार का उल्लेख मिलता है—

गोवत्स वडवासूते श्वा शृगालं महीपते ।
कुक्कुरान् करभाश्चैव शुकाश्चाशुभवादिनः ॥ ३ : ६

घोड़ी गाय के बच्चे को जन्म देती है, कुतिया शृगाल उत्पन्न करती है, हथिनी कुत्तों का जन्म देती है, और शुक भी अशुभसूचक वाणी बोलते है।

पाद-टिप्पणी

१२०. (१) सदानन्दी : वृक्ष फल नहीं देता।

सुमनोवाटशाटान्तर्भवं शोणितवर्षणम् ।
इति दृष्ट्वा जनः सर्वः क्षते क्षारमिवान्वभूत् ॥ १२१ ॥

१२१ सुमनोवाट में शाटी (वस्त्र) पर रुधिर[2] की वर्षा हुई, इसे देखकर लोगों ने कटे पर नमक छिडकने जैसा दुःख प्रकट किया।

हिन्दुओं का उत्पीडन

अत्रान्तरे वमन्सैदखानगाहादिपीडनम् ।
हिन्दुका विदधुः पूर्णनापितोद्वलितक्रुधा ॥ १२२ ॥

१२२ इसी बीच पूर्ण[1] नापित द्वारा वर्धित क्रोध के कारण, हिन्दू सैय्यिद खानकाह्[2] आदि को पीडित (नष्ट) किये।

तच्छ्रुत्वा यवनाः सर्वे गत्वा क्रुद्धा नृपान्तिकम् ।
चुक्रुशुर्येन राजापि द्विजपीडनमादिशत् ॥ १२३ ॥

१२३. यह सुनकर, क्रुद्ध सब यवन राजा के पास गये और क्रन्दन किये, जिसके कारण राजा ने भी द्विजो का पीडित[1] करने का आदेश दे दिया।

महाभारत में असमय फल-फूल वृक्षों में होना अशुभ को द्योतक है—

अनार्तवं पुष्पफलं दर्शयन्ति वनद्रुमा ।
भीष्म ३ १

(२) अनार यह लौकिक अपशकुन से सम्बन्ध रखता है। काश्मीर में अनार बहुत होता है। जम्मू-श्रीनगर मार्ग पर सडक के किनारो पर अनार के जगल लगे मिलते है। जगल में असमय फल-फूल लगना, अपशकुन महाभारत ने माना है। उसी का अनुकरण कर अनार का जड से फूलना श्रीवर लिखता है। अनार के फल एव फूल टहनियों में लगते हैं न कि जड में। अनार का फूल लाल होता है। फूल रग तथा दवा बनाने के काम में आता है। पश्चिम हिमालय एव सुलेमान की पहाडियों में अनार आपसे-आप उगता है।

पाद-टिप्पणी :

१२१. (१) सुमनोवाट श्रीदत्त ने सुमनोवाट को नामवाचक शब्द नही माना है। उसका अनुवाद बगीचा किया है परन्तु श्रीकण्ठ कौल ने इसे नामवाचक शब्द माना है। स्थान का पता अनुसन्धान का विषय है।

(२) शोणित वर्षा : महाभारत में यही बात कही गयी है—

अशोभिता दिश सर्वा या सुवर्ण सन्तत ।
उत्पात मेघा रौद्राश्च रात्रौ वर्षन्ति शोणितम् ॥
भीष्म ३ · २९

पाद-टिप्पणी :

१२२ (१) पूर्ण . द्रष्टव्य . २ : ५२ तथा ३ : १४८।

(२) सैयद खानगाह . खानकाह सैयद। श्री मोहिबुल हसन का मत है कि यह स्थान खानकाहे मुअल्ला है। खानकाह शब्द फारसी है। फकीरों और साधुओं के निवास के लिये निर्माण कराया जाता है।

पाद-टिप्पणी :

१२३ (१) पीडन : पीर हसन लिखता है—फिरका हनूद (हिन्दू) को निहायत सख्त तकलीफें दीं। इसमे उन्होंने बाज मसजिदों और नयी कबरों को जिन्हें सुलतान सिकन्दर ने मशाला मुल्कों के

अजरामरवृद्धादीन् ब्राह्मणान् सेवकानपि ।
तत्कोपेनाकरोद् राजा निकृत्तभुजनासिकान् ॥ १२४ ॥

१२४ इस क्रोध से राजा ने अजर[1] अमर, वृद्ध आदि सेवक ब्राह्मणों का भी हाथ-नाक कटवा दिया ।

त्यक्तस्वजातिवेशास्तद्दिनेषु ब्राह्मणादयः ।
न भट्टोऽहं न भट्टोऽहमित्यूचुर्भट्टलुण्ठने ॥ १२५ ॥

१२५ उन दिनों में भट्टों के लूटे जाने पर अपना जातीय वेश त्याग कर, ब्राह्मण आदि 'मैं भट्ट नहीं हूँ, मैं भट्ट नहीं हूँ'[1]—इस प्रकार कहने लगे ।

मूर्ति लोठन

बहुरातकमुख्या ये पुरे सन्तीष्टदेवताः ।
तन्मूर्तिलोठनं राजा म्लेच्छप्रेरणयादिशत् ॥ १२६ ॥

१२६ म्लेच्छों की प्रेरणा से राजा ने पुर के जो बहुस्नातक[1] प्रमुख इष्टदेव थे, उनकी मूर्ति तोड़ने का आदेश दिया ।

दत्ता भूर्जैनभूपेन येषां गुणपरीक्षया ।
तेभ्यस्तां निर्निमित्तेनाप्यहरन्नधिकारिणः ॥ १२७ ॥

१२७ गुण परीक्षा के कारण, जिन लोगों को जैन राजा ने भूमि दी थी, उनसे उसे अधिकारियों ने अकारण ही अपहृत कर लिया ।

पत्थर मन्दिरों से बनाया था आग लगा दी । इससे सुल्तान का गुस्सा और भी भड़क गया और बाज मरकरदा हिन्दुओं को मौत के घाट उतार दिया और बाज को दरया में डुबा दिया और बाज के हाँथ-पाँव कटवा दिये (पीर हसन १८८) ।

पाद टिप्पणी

१२४ (१) अजर, अमर, वृद्ध ब्राह्मण सेवक राजा के थे । वृद्ध नाम महत्वपूर्ण है । वृद्ध धर्मावलम्बी कुछ शेष रह गये थे अथवा बुद्ध पूजा शिव एवं विष्णु पूजा के साथ इस समय तक प्रचलित रहा था ।

पाद टिप्पणी

१२५ (१) भट्ट नहीं हूँ 'न भट्टोहम् न भट्टोहम ।

पाद टिप्पणी

१२६ (१) बहुस्नातक श्रीनगर में सातवें पुल के अधोभाग में बहुस्नातकेश्वर भैरव का मन्दिर था । स्नातकेश्वर का काश्मीरी उच्चारण के अनुसार अन्त में 'क' लगाकर स्नातक बना दिया गया है । श्रीवर का तात्पर्य इसी मन्दिर से है । भैरव के मन्दिर आज भी हैं । इसी के समीप ज्वाला देवी का मन्दिर भी है । वहाँ मेला लगता था । काश्मीरी ब्राह्मण वहाँ आया करते हैं ।

स माहिसफरो मासः प्रसिद्धो म्लेच्छदर्शने ।
सर्वदर्शनविघ्नाय न केषां भयकार्यभूत् ॥ १२८ ॥

१२८ म्लेच्छ दर्शन[1] मे प्रसिद्ध, वह माहे सफर मास[2], सभी दर्शनो के विघ्न के कारण, किन लोगो के लिये भयकारी नही हुआ ?

राजा का दोष

भूपं नित्यमदोन्मत्तं स्वतन्त्र मन्त्रिमण्डलम् ।
उत्कोचहारिणः सर्वानन्तरङ्गांस्तरङ्गितान् ॥ १२९ ॥

१ ९ नित्य मदोन्मत्त राजा, स्वतन्त्र मन्त्रिमण्डल, उत्कोच(घूस)ग्राही सब अन्तरग जनो तथा—

दर्शिताबलपीडार्तिपण्डितानवलोक्य च ।
स्मृतश्रीजैनभूपालगुणमालस्तदा जनः ॥ १३० ॥

१३० अबलाओ को पीडित करने मे पाण्डित्य दिखानेवाल लोगो को देखकर, जैन राजा के गुण-राशि का स्मरण कर उस समय लोग—

देशे सरुदिताक्रन्द शुशोचात्यन्तदुःखितः ।
सर्वधूद्धचिरारूढोऽग्रस्तोऽदृष्टपराभवः ॥ १३१ ॥

१३१ देश मे अत्यन्त दु खी होकर, रोदन-आक्रन्दन पूर्वक शोकान्वित हुये, चिरकाल से पदारूढ सबलोगो मे वृद्ध कभी पीडा एव पराभव को न देखनेवाला—सब कार्यों के भेद का ज्ञाता, यह राजा कब नष्ट होगा, उसके पुत्र से धन की आशा स जो दुष्ट इस प्रकार कहते थे—

पाद-टिप्पणी

१२८ (१) म्लेच्छ दर्शन मुसलिम धम। द्रष्टव्य टिप्पणी : २ ९६ ।

(२) माहे सफर मास इस्लामी दूसरा चन्द्रमास, जो मुहर्रम मास के पश्चात पडता है। सफ़र शब्द अरबी है ।

पाद-टिप्पणी

१२९ 'स्व' पाठ-बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

१३० उक्त श्लोक श्री कण्ठ कौल के श्लोक सख्या १२९ का तृतीय तथा १३० का प्रथम पद होता है। कलकत्ता तथा बम्बई दोनो सस्करणों का श्लोक सख्या १३० है।

पाद टिप्पणी

१३१ 'दृष्ट' पाठ-बम्बई ।

उक्त श्लोक श्रीकण्ठ कौल सस्करण के श्लोक सख्या १३० का द्वितीय तथा श्लोक सख्या १३१ का प्रथम पद है। कलकत्ता तथा बम्बई दोनों सस्करणों का श्लोक सख्या १३१ है।

सर्वकार्यान्तरज्ञोऽयं क्षयं याति कदा नृपः ।
इति येऽप्यवदन् दुष्टास्तत्सुता विभवार्थिनः ॥ १३२ ॥

१३२ 'सब कार्यों के भेद का ज्ञाता, यह राजा कब नष्ट होगा', इस प्रकार उसके वैभवाकांक्षी एवं दुष्ट पुत्र कहते थे ।

पारसीभाषया काव्ये यदूचे दूषणा विशाम् ।
स शापः फलितो देशे श्रीमज्जैनमहीपतेः ॥ १३३ ॥

१३३ फारसी[1] भाषा के काव्य में प्रजाओं के दोष के लिये, जो कहा गया है वह शाप, (दण्ड) श्रीमद् जैन राजा के देश[2] में फलित हुआ ।

सेवकाः कितवप्राया भुक्तप्रेष्या नियोगिनः ।
तच्छापादिव कालेन प्राप्तात्यन्तनिपीडनाः ॥ १३४ ॥

१३४ धूर्त प्राय चिरकालिक भृत्य, नियोगी[2], सेवक, समय पर उसके शाप से ही मानो अत्यन्त पीड़ित हुए ।

किमस्मद्रक्षको दैवहतो वृद्धो महीपतिः ।
इत्यादि साश्रुसाक्रन्दाः शुशुचुस्तेऽपि पार्थिवम् ॥ १३५ ॥

१३५ 'क्या हमलोगों के रक्षक वृद्ध राजा को दैव ने मार डाला'—इस प्रकार आँसू गिराते, आक्रन्दन करते, वे लोग भी राजा के लिये शोक करने लगे ।

स्वल्पोऽपि राज्यकालोऽभून्नवायामैः सुदुःसहः ।
निदाघरात्रिसंदृष्टदीर्घदुःस्वप्नसंनिभः ॥ १३६ ॥

१३६ गर्मी की रात्रि में देखे गये, लम्बे स्वप्न के सदृश, थोड़े समय का भी राज्यकाल, नवीन विस्तार के कारण दुःसह हो गया ।

पाद टिप्पणी

१३२ उक्त श्लोक श्रीकण्ठ कौल संस्करण के श्लोक संख्या १३१ का द्वितीय तथा तृतीय पद है। कलकत्ता तथा बम्बई दोनों संस्करणों का श्लोक संख्या १३२ है ।

पाद-टिप्पणी

१३४ (१) कितव धूर्त, झूठा, कपटी ।

(२) नियोगी कर्मसचिव, एक पदाधिकारी, बंगालियों की एक जाति । कश्मीर में यह पद वहसील्दार का था (द्र० क्षेमेन्द्र नर्ममाला) । द्र० २ ३०, ३ ३०, क०रा० ६ ८ ।

पाद टिप्पणी

१३५ 'साश्रु' पाठ—बम्बई ।

पाद टिप्पणी

१३६ (१) निदाघ गर्मी = ग्रीष्म ऋतु । निदाघ अर्थात् गर्मी की रात्रि छोटी होती है। परन्तु उस छोटी रात्रि में देखा गया स्वप्न लम्बा होता है । इसी प्रकार कष्ट का काल यद्यपि राज्यकाल में छोटा होता है परन्तु पीड़ा के कारण वह लम्बा प्रतीत होता है ।

लोत्रराशिगृहद्रव्यहरणैः परपीडनैः ।
तुतुषुस्तस्य भृत्यौघाः कौशिकास्तिमिरैरिव ॥ १३७ ॥

१३७ लूट की धनराशि, गृह के धन हरण तथा परपीडन से, उसके भृत्य समूह अन्धकार से उल्लू के समान प्रसन्न हो रहे थे।

शय्यारूढो मधुक्षीवः प्रजाकार्यपराङ्मुखः ।
सर्वं दिनं निशायान्तः स्वपार्श्वपरिवर्तनैः ॥ १३८ ॥

१३८ मदमत्त तथा प्रजा कार्य से परामुख, वह (राजा) शय्या पर पड़ा, करवटें बदलते हुये, दिन-रात व्यतीत करता।

कुलालगायनोद्गीत गीतं शृण्वन् दिवानिशम् ।
गुणिभ्यो राजयोग्येभ्यो नादाद् दर्शनमात्रकम् ॥ १३९ ॥

१३९ वह (राजा) रात-दिन कुलाल गायकों के गीत को सुनता था और गुणी राज योग्य जनों को दर्शन मात्र नहीं देता था।

शाहाभदेनराज्ये या सपन्नातिमनोहरा ।
लक्ष्मीपुरे राजधानी तां पुप्लोषोदितः शिखी ॥ १४० ॥

१४० शाहाभदेन के राज्य में, लक्ष्मीपुर' में, जो सम्पन्न एवं अति मनोहर राजधानी (राजभवन) थी, उसे उदित अग्नि ने भस्म कर दिया।

या बलाढ्यमठस्थाने वेश्माली विपुलाभवत् ।
सापि दग्धा समं तत्र तत्तत्पौरजनश्रिया ॥ १४१ ॥

१४१ बलाढ्य' स्थान पर, जो विशाल वेश्मावली थी, वह भी पुरवासियों के सम्पत्ति के साथ भस्म हो गयी।

पाद-टिप्पणी

१३९ (१) कुलाल प्रतीत होता है कोई कुम्भकार गायक था। उसका नाम कहीं नहीं दिया गया है—ब्रह्मायेन कुलाल वन्नियमतो ब्रह्माण्ड भाण्डोदरे (भर्तृ० २ ९५)।

पाद-टिप्पणी

१४०. (१) लक्ष्मीपुर शहाबुद्दीन (सन् १३५५–१३७३ ई०) चौथे सुल्तान की रानी का नाम लक्ष्मी था। शारिका पौलमूल में शहाबुद्दीन ने अपनी रानी के नाम पर लक्ष्मीपुर बसाया था (म्युनिख पाण्डु० : ५६)। श्री बजाज का मत है कि जहाँ यह नगर आबाद किया गया था उसे आजकल देवियागन कहते हैं (डाटर्स आफ वितस्ता. १४१)। द्र० : टिप्पणी जोन० ४१०. लेखक।

पाद-टिप्पणी.

१४१ (१) बलाढ्य वर्तमान बलन्दियर मुहल्ला श्रीनगर है। पुराने छठें पुल के पास है। दिदमर के ऊपर है। द्र० टिप्पणी' जोन० : श्लोक ८२ लेखक—द्र० ३ १३९।

इत्याद्युपद्रवान् देशे दृष्ट्वा वास्तव्यनाशकान् ।
एतन्नाशाद् भवेद् विघ्नशान्तिरित्यवदज्जनः ॥ १४२ ॥

१४२. इस प्रकार देश में निवासियों के नाशक उपद्रवों को देखकर, लोगों ने यह कहा— 'इस (राजा) के नाश से विघ्न शान्त होगा।'

राजा पञ्चगृहावासं स्वं ज्वलन्तं समीक्ष्य च ।
हर्म्यमारुह्य संतुष्टः पानलीलां व्यगाहत ॥ १४३ ॥

१४३. राजा, राजप्रासाद पर आरूढ होकर, अपने आवास के पाँच गृहों का अग्निदाह[1] देखकर, सन्तुष्ट होकर, पानलीला (मद्यपान) करने लगा।

राजपुत्र का बाह्य अभियान

अस्मिन्नवसरे नैयधिषणः पिशुनैरितः ।
यात्रार्थं सबलं पुत्रं बहिर्देशे व्यसर्जयत् ॥ १४४ ॥

१४४ इसी अवसर पर पिशुनों द्वारा प्रेरित होकर, उस मूढ ने सेना सहित पुत्र को यात्रा (अभियान) हेतु बाहर देश भेजा।

यत्सैन्यं वीक्ष्य दैन्यं ते ययुर्बाह्यमहीभुजः ।
प्रदीप्तं रविरश्म्योघं दिवसे तारका इव ॥ १४५ ॥

१४५. जिसके सैन्य को देखकर, बाहर के राजाओं की उसी प्रकार दयनीय दशा हो गयी, जिस प्रकार प्रदीप्त सूर्य किरणों को देखकर, दिन में तारे।

पूर्वं राजपुरीराजो जयसिंहो नृपात्मजम् ।
स्वसारं च स्वसारं च दत्त्वा तोषयति स्म तम् ॥ १४६ ॥

१४६ पहले राजपुरी[1] के राजा जयसिंह[2] ने अपना बहुमूल्य धन तथा अपनी भगिनी को देकर, उस राजपुत्र को प्रसन्न किया।

पाद-टिप्पणी

१४३ (१) अग्निदाह रोम के सम्राट नीरो के विषय में कहावत कही जाती है कि जब रोम जल रहा था, तो वह जलते रोम को देखकर, प्रसन्न होता, वीणा पर गाने लगा। हैदरशाह संगीतज्ञ होकर नीरो की तरह गाया नहीं, प्रसन्नतापूर्वक मद्यपान करने लगा।

पाद-टिप्पणी

१४४ (१) नैयधिषण श्रीदत्त (पृ० १९७) ने इस नामवाचक शब्द मानकर अनुवाद किया है परन्तु श्री कण्ठ कौल ने इसे नामवाचक शब्द नहीं माना है।

पाद-टिप्पणी :

१४५. ब्रिग्स तथा रोजर्स ने फिरिश्ता का अनुकरण किया है। फिरिश्ता के अनुसार आदम खाँ का पुत्र फतहशाह बाहर विजय कर रहा था, किन्तु कैम्ब्रिज हिस्ट्री ने तवक्काते अकबरी का अनुकरण करते हुए लिखा है कि हसन खाँ सुल्तान का पुत्र पंजाब में विजय कर रहा था (२८४)।

पाद-टिप्पणी

१४६ (१) राजपुरी राजोरी।

कालीधारामसिलतामिव वीक्ष्य तदाश्रिताम् ।
कम्पं के नात्र देशस्थाः प्रापुस्तद्भयतो जनाः ॥ १४७ ॥

१४७. उन लोगो से युक्त, कालिधारा[1] को असि-लता सदृश देखकर, उसके भय से इस देश के कौन लोग कम्पित नही हुए ?

सेना दीन्नारकोटीयाः शिश्रियुस्तां भयच्छिदे ।
वलिभिर्मङ्गलादेवीमिवोन्नतभुवि स्थिताम् ॥ १४८ ॥

१४८ भय दूर करने के लिये दीनारकोट[1] की सेनाएँ उसका आश्रय उसी प्रकार ग्रहण कर ली जिस प्रकार भय दूर करने के लिये वलियो के द्वारा उन्नत भूपर स्थित मगला[2] देवी का आश्रय लें।

मद्रगक्खरचिम्भशा राजहंसास्तमाययुः ।
सरोवरमिव प्रोद्यच्छुक्लपक्षा विनिर्मलम् ॥ १४९ ॥

१४९. मद्र[1] गक्खर[2] एव चिम्ह (चिम्भ)[3] देश के राजा लोग, उसके पास उसी प्रकार आये, जिस प्रकार शुक्ल पक्ष वाले हस निर्मल सरोवर के समीप।

---

(२) जयसिंह राजौरी अर्थात् राजपुरी की उक्त महिला का उल्लेख श्रीवर ने (जैन० ३ २००) किया है। वहाँ उसे राजपुरी राजवशीय तथा नाम जयमाला दिया है (३ २००)।

पाद-टिप्पणी

'देश' 'प्रापु ' पाठ–बम्बई।

१४७ (१) कालीधारा यह किलदार स्थान है। किलदार शब्द कालीधारा का अपभ्रश है। आज भी कालीधारा द्वारा काश्मीर में आने का मार्ग है। कालीधारा पर्वतीय स्थान है।

द्र० शुक० १३७।

पाद-टिप्पणी :

१४८ (१) दिन्नारकोट अनुसन्धान अपेक्षित है।

(२) मगला देवी नौशेरा के पास एक छोटा किला है। यह एक खडी चट्टानें पहाडी पर बना है। इसका प्रवेश या वहाँ पहुँचना कठिन है। यह उस समय का निर्माण है, जब प्रत्येक क्षेत्र का अलग-अलग शासक होता था और अपनी रक्षा के लिए किला बना लेता था।

पाद-टिप्पणी

'चिम्भ' पाठ–बम्बई।

१४९ (१) मद्र फारसी इतिहासकारो ने मद्र को जम्मू लिखा है। काश्मीर साहित्य में मद्र को काश्मीर की दक्षिणी सीमा पर माना गया है। सतलज तथा सिन्धु नदी की अन्तर्द्रोणी को वाहीक कहते थे। उशीनर, मद्र तथा त्रिगर्त उसमें सम्मिलित था। वाहीक तथा गान्धार दोनो देशों के सम्मिलित रूप की सज्ञा उदीच्य थी। जनरल कनिंघम के अनुसार मद्र देश व्यास एव झेलम के बीच का प्रदेश है (द्र० जोन० ७१४)।

(२) गक्खड पखली अचल का समीपस्थ भूखण्ड।

(३) चिम्भ राजपूतो का एक उपजाति है। चिम्भ देश। द्रष्टव्य १ १ . ४७ तथा १ १ १६७।

राजवृत्तान्तरोधेन स्वपदार्थोपपादकैः ।
मातुलैरपि तस्याग्रे सुल्हणैः कल्हणायितम् ॥ १५० ॥

१५० राजवृत्त के अनुरोध से, अपने पदार्थ (कार्य) को सिद्ध करनेवाले मातुल सुल्हणों[1] ने भी, उसके समक्ष कल्हण[2] जैसा आचरण किया ।

कौमारोद्धंसिकं वीक्ष्य कटकालंकृता अपि ।
अभूवन् धैर्यरहिता माहिला महिला इव ॥ १५१ ॥

१५१ इस कौमार[1] ध्वन्सी को देखकर, *कटकालकृत (सैन्य सहित) होनेपर भी, वे माहिल*[2] लोग महिलाओं के समान धैर्य रहित हो गये ।

बद्धपङ्क्तिस्तरन्ती सा ज्यलमेस्तन्नदीतटात् ।
तत्सेना रामबद्धाब्धिसेतुकौतुकमातनोत् ॥ १५२ ॥

१५२ उस नदी तट से (झेलम को) पक्तिबद्ध होकर, पार करती हुई, उसकी सेना राम द्वारा बाँधे गये सेतु का कौतुक पैदा की ।

पाद-टिप्पणी

१५० (१) सुल्हण काश्मीर में प्रचलित हिन्दू नाम था । श्री कण्ठ कौल नाम मल्हण माना है । पूर्वकालीन मल्हण राजा दुर्लभवर्द्धन का पुत्र था (रा० ४ ४) । मल्हणपुर राजा जयापीड ने बसाया था । यह वर्तमान ग्राम मलुर या मलरो है । मल्हण स्वामी का मन्दिर दुलभवर्धन के पुत्र ने निर्माण कराया था (रा० ४ ४) । उसके अल्प अवस्था में ही मृत्यु हो गयी थी । वह राज्य नहीं कर सका था । उसका भाई दुर्लभक राजा हुआ था । माता का नाम अनगलेखा था ।

श्रीदत्त ने भी सुल्हण ही मान कर अनुवाद किया है । कलकत्ता एवं दुर्गा प्रसाद दोनों ही सुल्हण नाम मानते हैं । अतएव सुल्हण ही मानकर अनुवाद किया गया है । सुल्हण राजा सुस्सल का अनुयायी था, यह नाम प्रचलित था । सुस्सल का राज्यकाल सन् ११११ से ११२० तथा ११२१ से ११२८ है । हैदरशाह द्वितीय तरंग के राजा का काल सन् १४७०-१४७२ ई० है । दोनों सुल्हणों के समय में ३४४ वर्षों का अन्तर है । अतएव सुल्हण प्रतीत होता है, प्राचीन सुल्हणवंशीय व्यक्ति, कल्हणवंशजों के समान थे । मल्हण के नाम से वंश चलने की सम्भावना नहीं मालूम होती क्योंकि वह राज्यवंश का ज्येष्ठ पुत्र था । अल्पायु में दिवगत हुआ था । सल्हण नाम ही यहाँ ठीक प्रतीत होता है ।

(२) कल्हण द्रष्टव्य रा० भाग १ 'कल्हण' पृष्ठ १-४९ ।

पाद-टिप्पणी

१५१ (१) कौमार श्रीदत्त ने कौमार को नामवाचक शब्द माना है और अनुवाद 'कुमार टाउन' किया है । श्रीकण्ठ कौल ने नामवाचक शब्द नहीं माना है ।

भावार्थ 'कौमार नगर को नष्ट करनेवाले राजपुत्र को देखकर सेना सहित होने पर भी माहिल लोग उसी प्रकार धैर्यरहित हो गये जिस प्रकार कौमारध्वन्सी को देखकर माहिल ।' कौमारध्वन्सी का अर्थ है कुमारियों का चरित्र भ्रष्ट करनेवाला ।

(२) माहिल माझी = हाजी । यह शब्द पद्य में अधिक प्रयुक्त किया जाता है ।

पाद टिप्पणी

१५२ (१) ज्यलम प्रथमवार वितस्ता का नाम यहाँ ज्यलम अर्थात् झेलम लिखा गया है ।

कुटीपाटीश्वरीप्राप्तं तत्सैन्यं दैन्यवर्जितम् ।
नारायणोदरोद्गच्छद्विश्वलोकभ्रमं व्यधात् ॥ १५३ ॥

१५३. उत्साह सहित उसकी सेना कुटी पाटीश्वरी[1] पहुँचकर, नारायण के उदर से निकलते, विश्व लोक का भ्रम उत्पन्न कर दिया।

संप्लुष्टे भोगपालानां पुरे मद्राचितान्यपि ।
सुचिरं धूमितान्यासन् गृहाणि हृदयानि च ॥ १५४ ॥

१५४ भोगपालो[1] का नगर जला दिये जाने पर, मद्रो से युक्त, उनके गृह एव हृदय चिरकाल तक धूमिल रहे।

उन्नादहृदसंसङ्कुलतुरङ्गतरङ्गिता ।
वाल्येश्वरगिरेः पादमूल प्रापास्य वाहिनी ॥ १५५ ॥

१५५ उन्नत नाद करते ह्रद (बडा सर) सदृश उसके तुरङ्गो से तरङ्गित, उसकी वाहिनी (सेना) बाल्येश्वरगिरि के पादमूल (निकट) मे पहुच गयी।

श्रीदत्त ने स्पष्टतया ज्यालमी को नदी झेलम नही माना है। बम्बई सस्करण में ज्यलेम पाठ मिलता है। ज्यलेम, ज्यलम या ज्यली का अपभ्रश झेलम है।

पाद-टिप्पणी :

१५३ (१) कुटी पाटीश्वर : निश्चित स्थान के लिए अनुसन्धान की आवश्यकता है।

पाद-टिप्पणी

'हृदयान' पाठ—बम्बई।

१५४ (१) भोगपाल हर्षचरित में भोगपति अथवा भोगक शब्द मिलता है। उसका अर्थ राज्य का अधिकारी माना गया है। वह कृषि उत्पादन में राज्य का भाग वसूल करता था। भोगपति का अर्थ ईनामदार या जागीरदार किया गया है। भोग एक क्षेत्र इकाई भी होती है। उनके अधिकारी को भोग्यपति या भोगपाल कहते थे। द्रष्टव्य : मिताक्षरा० : १ ३२०।

पाद-टिप्पणी

१५५. (१) उन्नाद श्रीदत्त ने उन्नाद को नामवाचक शब्द माना है परन्तु श्री कण्ठ कौल ने उसे नही माना है। उन्नाद का शाब्दिक अर्थ हल्ला तथा कलरव होता है।

उन्नाद शब्द श्लिष्ट है। उत्कर्ष, उठाना, ऊपर ले जाना तथा जोरसे नाद या ध्वनि अथवा चिल्लाना होता है। सरोवर में बाढ़ आती है, तो उसके बाढ़ की ध्वनि होती है। लहरों की ध्वनि होती है। वह गरजन लगता है। उसी प्रकार घोड़ो के हिनहिनाने से, जोर की आवाज या चिल्लाहट होने लगती है। अतएव यह शब्द यहाँ दत्त के अनुसार नामवाचक नही है।

(२) वाल्येश्वर कल्हण ने बालनेश्वर एक लिंग का वर्णन (रा० : ८ २४३०) किया है। परन्तु नही कहा जा सकता कि वाल्येश्वर एव बालनेश्वर भिन्न-भिन्न है अथवा एक ही। श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि यह पर्वतीय स्थान था।

तदीयकटकोदीपस्तत्तुरङ्गतरङ्गितः ।
त तमेव नत चक्रे येन येन पथाव्रहत् ॥ १५६ ॥

१५६ अश्वो से तरंगित उसका कटक रूप उदीप (बाढ़), जिस-जिस पथ से गया, उसे उसे विनत कर दिया।

निस्तृण भूतल तत्तु निष्पानीया जलाशयाः ।
निरिन्धनान्यरण्यानि तत्सैन्ये चलितेऽभवन् ॥ १५७ ॥

१५७ उसकी सेना के चलने स वह भूतल तृणरहित, जलाशय जलरहित तथा अरण्य ईंधनरहित हो गये।

सोऽह समान्य राज्ञास्मै दत्तस्तत्सभयेऽन्वहम् ।
कुर्वन् बृहत्कथाख्यानमभूव धृतपुस्तकः ॥ १५८ ॥

१५८ राजा ने आदर करके, मुझको (श्रीवर को) उस (राजकुमार हसन) को प्रदान किया और मैं प्रतिदिन पुस्तक लेकर, बृहत्कथा[१] का आख्यान सुनाता था।

करदीकृतभूपालः स षण्मासकृतस्थितिः ।
अभवच्चैत्रमासान्ते कश्मीरागमनोत्सुकः ॥ १५९ ॥

१५९ वह राजाओ को करप्रद बनाकर तथा ६ मास तक स्थित रहकर, चैत्र मास के अन्त म काश्मीर गमन के लिये, उत्सुक हो गया।

तावद् बभ्राम बहामखानो दामनिरर्गलः ।
आक्रान्तमन्त्रिसामन्तो ज्ञात्वा व्यसनिनं नृपम् ॥ १६० ॥

१६० तब तक बहराम[१] खान राजा को व्यसनी जानकर, मन्त्रियो एव सामन्तो को आक्रान्त कर, निरंकुश भ्रमण करता रहा।

पाद टिप्पणी

१५८ (१) बृहद्कथा द्रष्टव्य टिप्पणी १ ५ ८६।

पाद टिप्पणी

१६० (१) बहराम खां पीर हसन लिखता है—'उमरावों ने खुफिया तौर पर बहराम खाँ के साथ मिलकर चाहा कि उसे बादशाह बना दें (पीर हसन पृष्ठ १८८)। म्युनिख पाण्डुलिपि (७८ बी०) में उल्लेख मिलता है कि बहराम खाँ राजा तथा मन्त्रियों का विश्वास प्राप्त कर, अपनी शक्ति बढ़ाने लगा। हैदरशाह के गिरते स्वास्थ्य को देखकर, वह राज्य के सामन्तों से मिलकर राज्यप्राप्ति का षड्यन्त्र करने लगा। यह सुनकर हसन जल्दी-जल्दी श्रीनगर ससैन्य पहुँच गया।' तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उन्ही दिनों में सदा मदिरापान के कारण सुलतान बड कठिन रोग में ग्रस्त हो गया। अमीरों ने गुप्त रूप से षड्यन्त्र किया और बहराम खाँ से मिलकर उसे सिंहासनारूढ करना चाहा (४४७-६७४)।' श्रीवर ने किसी प्रकार के षड्यन्त्र का उल्लेख नहीं किया है।

फिरिश्ता ने भी लिखा है—'सुल्तान के लज्जा-

अथ संततपानेन क्षीणदेहबलच्छविः ।
स वातशोणितव्याधिबाधितोऽभून्महीपतिः ॥ १६१ ॥

१६१ निरन्तर पान करने से राजा का देह, बल एवं छवि क्षीण हो गयी थी और वह वात[1] और शोणित[2] रोग से ग्रसित हो गया था ।

प्राप्तो हस्सनखानः स पूर्णचन्द्र इवोदितः ।
तान् दुष्टमन्त्रिणः पद्मानिव संकुचितान् व्यधात् ॥ १६२ ॥

१६२ (उसी दिन) उदित पूर्णचन्द्र के समान हस्सन खाँन[1] आ गया । उसने उन दुष्ट मन्त्रियों को कमल के समान सकुचित कर दिया ।

किं नैतेन समानीतो बद्ध्वा पिरुजगख्खरः ।
इति रोष सुते राजा पिशुनप्रेरितोऽग्रहीत् ॥ १६३ ॥

१६३ 'पिरुज' गख्खड[2] को बान्ध कर, यह क्यों नहीं लाया,' इस प्रकार पिशुनों द्वारा प्रेरित होकर, राजपुत्र के प्रति क्रोधित हो गया ।

जनक कार्यों को देखकर अमीरों ने सुल्तान के कनिष्ठ भ्राता बहराम को सूचित किया कि सुल्तान को राज्यच्युत करने में वे लोग उसकी सहायता करेंगे (४७६)।

पाद-टिप्पणी :

१६१. (१) वात वायुविकार ।

(२) शोणित रक्तविकार ।

पाद-टिप्पणी

१६२ (१) हस्सन फिरिश्ता ने हसन तथा फतेह को एक में मिला दिया है । उससे भ्रम उत्पन्न होता है । फिरिश्ता लिखता है—फतह खाँ जो आदम खाँ का लड़का था, अपने भाग्य की परीक्षा हेतु काश्मीर में प्रवेश किया । वह राजधानी में इस व्याज से आया कि वह सुल्तान के कदमों में लूट-पाट का सामान समर्पित करना चाहता है। जिसे उसने समीपवर्ती राज्यों से प्राप्त किया है ।

पाद-टिप्पणी :

१६३. (१) पिरुज फिरोज ।

(२) गख्खड गक्खर जाति है । जसरत गक्कर नाम से प्रसिद्ध था । जसरथ के कारण जैनुल आबदीन ने राज्य प्राप्त किया था । जैनुल आबदीन ने जसरत गक्कर की सहायता दिल्ली के सुल्तान के विरुद्ध युद्ध किया था (राइज आफ मुहम्मदन पावर इन इण्डिया ब्रिग्गस पृष्ठ : ३०३, ३०६, ३१३; सन् १९६६ ई०) ।

गक्खर जाति ने काश्मीर के राजनीतिक इतिहास को प्रभावित किया है । जैनुल आबदीन ने गक्खरों की सहायता से राज्य पाया था । उसके वंशजों का भी सम्पर्क गक्खरों से बना रहा । हैदरशाह के समय में उसके पुत्र हसन ने गक्खरों का दमन किया था । सुल्तान शमसुद्दीन (सन् १५३७-१५४० ई०) के समय काजीचक गक्खरों की सहायता से काश्मीर में प्रवेश किया था (बहारिस्तान शाही पाण्डु० . ७७ ए०) । गक्खरों का उल्लेख सुल्तान नाजुकशाह (सन् १५४०-१५५२ ई०) के सन्दर्भ में पुनः मिलता है । हैबत खाँ नियाजी जिसको गक्खर अधिक शरण नहीं दे सकते थे, सन् १५५२ ई० में काश्मीर की तरफ बढने लगा था । सम्राट अकबर राज्यप्राप्ति के पश्चात अबुल माली को लाहौर में बन्दी बनाकर रखा परन्तु वह भाग कर गक्खरों के क्षेत्र में चला गया । वहाँ कमाल खाँ गक्खर ने

पश्चिमाशागतं श्रुत्वा तमपूर्वार्कसंनिभम् ।
बहामखानो मन्देहो मन्देह इव सोऽभवत् ॥ १६४ ॥

१६४ पूर्व दिशा रहित, सूर्य सदृश, उस पश्चिम दिशा में आया सुनकर, मन्दबुद्धि वह बहराम खाँन मन्देह[1] सदृश हो गया।

प्राप्ते सुतेऽन्तिकं सोऽभून्न तदत्यधिकादरः ।
प्रत्यासन्नविनाशानां धीर्भीत्येव पलायते ॥ १६५ ॥

१६५ पुत्र[1] के निकट आने पर, (राजा) उसके प्रति अधिक आदर प्रकट नहीं किया, जिनका विनाश निकट होता है, उनकी बुद्धि भय से मानो पलायित हो जाती है।

अत्यभ्यर्थनया मन्त्रिसामन्तानां महीपतिः ।
यात्रागताय पुत्राय ददौ दर्शनमात्रकम् ॥ १६६ ॥

१६६ मन्त्रियों एवं सामन्तों के अति अभ्यर्थना पर, राजा ने यात्रा से आये, अपने पुत्र को केवल दर्शन दिया।

उसे कारागार में डाल दिया, जहाँ से वह भाग कर नौशेरा पहुँच गया। गक्खरों का देश काश्मीर के पश्चिमी-दक्षिणी सीमान्त पर मुसलिम इतिहासकारों के लेखों से प्रकट होता है।

आइने अकबरी में गक्खरों का क्षेत्र पसली अचल के दक्षिण माना गया है (पृ० ४४२)।

पाद-टिप्पणी

'तमपूर्वाक' पाठ-बम्बई।

१६४ (१) मन्देह द्रष्टव्य टिप्पणी २ १६३।

पाद-टिप्पणी

'अन्तिक' पाठ-बम्बई।

१६५. (१) पुत्र म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है। हसन बिना सुल्तान की आज्ञा से लौट आया था अतएव बहराम खाँ तथा मन्त्रियों ने राजा का कान भर दिया कि वह राज्य प्राप्ति करने के लिए आया है। सुल्तान यह सुनकर पुत्र का विरोधी हो गया (म्युनिख : पाण्डु० ७८ बी०)।

यही बात फिरिश्ता तथा तवक्काते अकबरी में फतहशाह के सम्बन्ध में लिखी गयी है। फिरिश्ता लिखता है—'दरबार में बिना सुल्तान की आज्ञा के उपस्थित होने पर कुछ दरबारियों ने सुल्तान का कान भर दिया और सुल्तान ने उससे मिलने से इनकार करने के साथ ही किसी भी रूप में उसे राजकीय सेवा में लेना अस्वीकार कर दिया (४७६)।'

तवक्काते अकबरी में भी यही घटना दी गयी है—'जब यह समाचार फतह खाँ को जिसने हिन्दुस्तान में अत्यधिक किलों पर विजय प्राप्त की थी और अपार धन-सम्पत्ति एकत्र की थी, पहुँचे तो वह एक भारी सेना लेकर शीघ्रातिशीघ्र काश्मीर पहुँचा। किन्तु वह आज्ञा के बिना आया था, अतः साथियों ने उसकी ओर से बातें बनाकर, सुल्तान हैदर को उससे रुष्ट कर दिया। सुल्तान ने उस कोरनिश (अभिवादन) की अनुमति न दी और उसकी किसी भी सेवा की ओर ध्यान न दिया (४४७)।'

फिरिश्ता तथा तवक्काते अकबरी का स्रोत एक ही है अतएव एक ही बात और नाम की गल्ती दोनों में हो गयी है अन्यथा घटनाएँ ठीक हैं। केवल फतह के स्थान पर हसन नाम होने से श्रीवर के वर्णन से घटना मिल जाती है।

नूनं स्वानुजभीतोऽभूत्तत्कालं सोऽन्यथा कथम् ।
परिधानादिसत्कारं न्यूनमेवाकरोत् सुते ॥ १६७ ॥

१६७ निश्चय ही वह अपने भाई से डर गया था, अन्यथा परिधान आदि द्वारा पुत्र का थोडा ही सत्कार' क्यो करता ?

यद्धामो बाधते नूनं मत्पुत्रमिति शङ्कितः ।
स तस्मिश्छन्नकोपाग्निः शमीतरुरिवाभवत् ॥ १६८ ॥

१६८ निश्चय ही बह्राम मेरे पुत्र को बाधित करता है, इस प्रकार शकित होकर, वह राजा उसके प्रति कोपाग्नि प्रच्छन्नकर, शमी' वृक्ष सदृश हो गया ।

पानार्थं राजधान्यग्रं तस्मिन्नवसरे नृपः ।
आरुरोह सम भृत्यैर्मृत्युनेव प्रचोदितः ॥ १६९ ॥

१६९. उसी अवसर पर मानो मृत्यु से प्रेरित होकर, राजा भृत्यो के साथ मद्यपान करने के लिये, राजप्रासाद पर चढा ।

तत्र पुष्करसौधान्तर्लीलया काचमण्डपे ।
धावन् पपात नासाग्रस्रवदस्रविसंस्थुलः ॥ १७० ॥

१७० वहाँ पुष्कर सौध के अन्दर काँच' मण्डप में लीलापूर्वक दौड़ते हुये, गिर पड़ा और नाक से बहते रुधिर से, वह विक्षुब्ध हो गया ।

पाद-टिप्पणी

'न्यून' पाठ—बम्बई ।

१६७ (१) सत्कार सुल्तान विजयी पुत्र से रुष्ट हो गया था । उसने मुलाकात करने से इनकार कर दिया । परन्तु सेनानायकों के कहने से पुत्र को दर्शन मात्र की आज्ञा दी थी । हसन ने सीमावर्ती राजाओ का जो दमन किया था, उसकी प्रशसा न कर सुल्तान ने पुत्र का साधारण खिलअत दी (म्युनिख पाण्डु० ७८ बी०, तवक्काते अक्बरी ४४७ = ६७५) ।

पाद-टिप्पणी

१६८ (१) शमी एक वृक्ष है । इसकी लकडी को परस्पर रगडने से अग्नि उत्पन्न हो जाती है ।

'अग्निगर्भा शमीमिव' (शकुन्तला ४ २) । द्रष्टव्य मनु० ८ २४७, याज्ञ० : १ ३०२ । शमी की पूजा की जाती है । विजयदशमी के दिन शमी की पूजा, परिक्रमा आदि कर उसकी पत्ती पगडी या शिर पर रखते है ।

पाद-टिप्पणी

'दस' 'स्थलु' पाठ—बम्बई ।

१७० (१) काँच मण्डप शीशमहल । राजप्रासाद का वह भाग या कमरा जहाँ चारो ओर शीशा है अथवा दिवालों, खिडकियों पर शीशे लगे रहते है । यदि शीशमहल का सस्कृत रूप काँच मण्डप श्रीवर ने किया है तो शीशमहल राजप्रासाद के अन्त पुर का एक कक्ष होगा ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'एक दिन सुल्तान एकान्त में मदिरापान में व्यस्त था । उसी मस्ती की अवस्था में उसका पाँव काँपा और वह गिर पडा और उसकी मृत्यु हो गयी (४४७ = ६७५) ।'

कक्षाक्षिप्तभुजैर्भृत्यैर्नीतः शयनमण्डपम् ।
ध्वस्तच्छाय इवादर्शः समूर्छञ् शयनेऽपतत् ॥ १७१ ॥

१७१ भृत्य उसकी कांख में हाथ डालकर, शयन मण्डप में ले गये, नष्ट छाया दर्पण तुल्य वह शयन पर पड़ गया।

भिषजोऽस्याप्तमन्याप्तान् कोऽपि योगी चिकित्सकः।
विषोत्कटौषधस्तस्य यतते स्म कृतव्यथः ॥ १७२ ॥

१७२ कोई योगी चिकित्सक उसके विश्वस्त लोगों की बात न मानकर विष से उग्र प्रभाव-वाले औषध का प्रयोग से, उसे व्यथितकर प्रयास (यत्न) कर रहा था।

तस्यौषधप्रयोगेण प्राप्तदाहो दिवानिशम् ।
काङ्क्षति स्म स्वमरणं क्षणमात्रं न जीवनम् ॥ १७३ ॥

१७३ उसके औषध प्रयोग से, उसे दिन-रात दाह[1] होने लगा, जिससे वह क्षणभर, जीवन की नहीं अपितु अपना मरण चाह रहा था।

राजधान्यन्तरे राजसुतः स्वजनकान्तिके ।
आयुक्ताह्लादसंयुक्तस्तद्दिनेषु स्थितिं व्यधात् ॥ १७४ ॥

१७४ राजधानी में उन दिनों राजपुत्र आयुक्त[1] अह्लाद के साथ अपने पिता के समीप रहने लगा।

फिरिश्ता लिखता है— एक दिन शाम को सुल्तान अपने राजप्रासाद के अलिंद पर पानोत्सव कर रहा था, उसने बहुत मदिरा पी ली थी। नीचे उतरने की कोशिश में उसका पाँव फिसल गया और बहुत ऊँचाई से गिरने के कारण मर गया।

पीर हसन लिखता है— एक दिन बादशाह गच दार दीवानखाना में शराब के पीने में मशगूल था कि मस्ती की हालत में उसका पाँव फिसल गया और जमीन पर गिरते ही उसने जान दे दी (१८८)।

पाद टिप्पणी

१७२ (१) योगी चिकित्सक झाड-फूंक मन्त्रादि जप कर, आराम करनेवाले लोग जिन्हें ओझा कहते हैं। श्लोक २०२ में बाँध मण्डप में वैताल लगने की बात श्रीवर जनश्रुति के आधार पर करता है—नाराज होने पर भूत जिन या वैताल लोगों को लग जाते हैं। नाना प्रकार व्याधि उत्पन्न हो जाती है। उसकी दवा न कर भूत का प्रभाव समझ कर झाड़ने फूंकने, ओझा या भूत उतारनेवाले योगी अथवा फकीर को बुलाया जाता है जो अपनी मन्त्रशक्ति से भूत-बाधा दूर करने का दावा करते हैं।

पाद टिप्पणी

१७३ (१) दाह गरमी लगना। पेट में आग जलने जैसा अनुभव होना।

पाद टिप्पणी

१७४ (१) आयुक्त शाब्दिक अर्थ एक अधिकारी होता है। पाणिनि (२ ३४०) में इसका अर्थ सेवक तथा अधिकारी के रूप में किया है। आयुक्तक एवं आयुक्त शब्द समानार्थक मान गये हैं। आयुक्तक शब्द कामसूत्र (५ ५ ५) तथा कामन्दक (५ ८२) में प्रयोग किया गया है। विजय स्कन्दवर्मा के अनुदान (ई० आई ११ २५०) पहाड़पुर फलक गुप्त सम्वत १५९,

मुमूर्षौ पितरि ज्ञात्वा महतो दर्शनागतान् ।
तन्निर्गमनिरोधाय द्वारधान्यां भटान् न्यधात् ॥ १७५ ॥

१७५ पिता के मरणासन्न होने पर, बहुत लोगों को दर्शन हेतु आया जानकर, उनका निर्गम रोकने के लिये, द्वार पर भटों (सैनिकों) को नियुक्त कर दिया।

स्वालयस्थोऽनुजो राज्ञो भयहर्षाप्तसंभ्रमः ।
कणानिव रवेस्तीक्ष्णांश्चरान् संचारयन्नभूत् ॥ १७६ ॥

१७६ अपने घर पर स्थित, राजा का अनुज (बहराम खाँ) भय एवं हर्ष से भ्रान्त (संभ्रमयुक्त) होकर, सूर्य के किरणों के समान तीक्ष्णों का संचार कर दिया।

तत्काल राजलक्ष्मीः सा पितृव्यभ्रातृपुत्रयोः ।
द्वयोरासीत् समारूढा चित्ते संशयभागिव ॥ १७७ ॥

१७७ उस समय चित्त में समान बुद्धि सदृश राजलक्ष्मी चाचा (बहराम खाँ) एवं भतीजा (हसन) मध्य स्थित रही।

होय सिंह के वल्लभी सम्वत् १८३ के फलक (ई० आई० ११ १७), धारसेन द्वितीय के वल्लभी सम्वत् २५२ के फलक (आई० ए० १५ १८७), तथा मानुषा फलक गुप्तसम्वत् २५२ में उल्लेख मिलता है (ई० आई० ११ ८३)। जिले के अधिकारी तथा उनके सबडिवीजन के प्रशासक को भी आयुक्त या आयुक्तक कहते थे (हर्षचरित)। आयुक्त का उल्लेख कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी किया गया है। वहाँ भी उसका अर्थ लघु अधिकारी के रूप में वर्णन किया गया है। समुद्रगुप्त प्रयाग के स्तम्भ लेख में आयुक्त पुरुष का उल्लेख किया गया है।

आजकल आयुक्त शब्द कमिश्नर के लिये प्रयोग किया जाता है।

युक्त एवं युक्तक शब्द समानार्थक माने गये है। युक्त एक कर्मचारी था। उसका क्या कार्य था, ठीक पता नहीं चलता किन्तु वह परिषद (मन्त्रिमण्डल) से सीधा आदेश ग्रहण करता था। अशोक के गिरनार शिलालेख में इसका उल्लेख मिलता है। कौटिल्य ने भी इसका उल्लेख किया है (२ ५, ९)। युक्तक शब्द काम्बे गोविन्द चतुर्थ शक सम्वत् ८५२, के फलक तथा कृष्ण तृतीय के करहद फलक शक ८८० में मिलता है (इ० आई० ७ २६, २९, तथा इ० आई० ४ २३८, २८९)।

पाद-टिप्पणी

१७६ (१) तीक्ष्ण : कौटिल्य ने, गुप्तचरों या चरों का वर्गीकरण किया है, उसमें तीक्ष्ण को भी रखा है। तीक्ष्ण वे गुप्तचर होते थे, जो जीवन से इतने निराश होते हैं कि धन के लिये हाथी से भी लड़ जाते थे। शाह्मीर ने भी कोटा रानी की हत्या का भार तीक्ष्णों को दिया था (जोन० : ३०६)। तीक्ष्ण उन गुप्तचरों के लिये भी प्रयोग किया गया है जो वध कार्य करते थे (जोन० : ५१७)। द्रष्टव्य टिप्पणी जोन० ३०६ तथा ५१७। (कौटिल्य : अर्थ १ १२)। बहराम खाँ ने तीक्ष्णों को सुलतान हैदरशाह को मारने के लिये लगा दी थी। श्रीवर के वचन से यही निष्कर्ष निकलता है।

कल्हण ने भी तीक्ष्ण शब्द का प्रयोग वधिकों के लिये किया है। तीक्ष्ण गुप्तचर के साथ ही बड़े साहसी होते थे और चुपचाप हत्या कर देते थे (रा० ४ ३२३)।

पाद-टिप्पणी :

१७७ "राज" पाठ-बम्बई।

अत्रान्तरेऽह्मदायुक्तः समन्त्र्य सचिवैः सह ।
बह्रामखानमागत्य युक्तमित्यब्रवीद् वचः ॥ १७८ ॥

१७८ आयुक्त अह्लाद[1] ने इसी बीच, सचिवों के साथ मन्त्रणा करके, बह्राम खाँन म आकर, यह उचित बात कही—

उत्तराधिकार एव बहराम खान

स्वामिहैंदरशाहोऽद्य समर्प्य स्ववयस्त्वयि ।
सुगृहीताभिधो भ्राता प्रयातः कीर्तिशेषताम् ॥ १७९ ॥

१७९ 'सुगृहीतनामा भ्राता हैदरशाह अपना आयु तुम्हें समर्पित कर, आज दिवगत[1] हो गये—

ज्येष्ठोऽधुनावशिष्टस्तद्भवान् भज नृपासनम् ।
स्वयं हस्सनखानाय यौवराज्यं प्रदीयताम् ॥ १८० ॥

१८० 'अब ज्येष्ठ बचे आप स्वयं नृपासन ग्रहण करें, और हस्सन खाँन को युवराज[1] पद प्रदान करें—

त्वत्पित्रा महतो यत्नाद् रक्षिता चकिता सती ।
सेयं त्वयाद्य नगरी पाल्या कुलवधूरिव ॥ १८१ ॥

१८१ 'तुम्हारे पिता द्वारा महान प्रयत्न से रक्षित, इस नगरी को जो कि चकित है, सती कुलवधू के समान अब तुम पालित करो—

किमन्यत् पुरलुण्टाकाः काका इव बलिप्रियाः ।
यथागतं प्रयान्त्वेते कुशब्दा मलिनत्विषः ॥ १८२ ॥

१८२ 'दूसरा क्या कहें ? काक सदृश बलिप्रिय, कुत्सित शब्द एवं मलिन कान्ति युक्त, ये पुर को लूटनेवाले यथागत लौट जाँय।'

पाद टिप्पणी

१७८ (१) अह्लाद : अहमद यैतू नाम फारसी इतिहासकारों ने दिया है। आयुक्त का अपभ्रंश यैतू मालूम पड़ता है।

पाद टिप्पणी

१७९ (१) दिवगत : फिरिश्ता के अनुसार १४ मास शासन करने के पश्चात् हिजरी ८७८ = सन् १४७३ ई० में सुल्तान की मृत्यु हो गयी।

तवक्काते अकबरी में राज्यकाल एक वर्ष, दो मास दिया है परन्तु मृत्युकाल का समय नहीं दिया है (४४७ = ६७५)।

नवादरुल अखबार (पाण्डु० ४९ बी०) में राज्यकाल १ वर्ष १० मास तथा मृत्युकाल १३ अप्रैल सन् १४७२ ई० दिया गया है। वह अपने पिता के समीप दफन किया गया।

हैदरशाह के मृत्युकाल का तवक्काते अकबरी तथा फिरिश्ता से कुछ पता नहीं चलता। किन्तु प्राप्त प्रमाणों के आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि सुल्तान की मृत्यु सन् १४७३ ई० = ८७८ हिजरी में हुई थी।

पाद-टिप्पणी

१८० (१) युवराज : द्रष्टव्य पाद टिप्पणी १ २ ५।

वहराम खाँ की दुर्बुद्धि

श्रुत्वेति भाषितं तस्य कोपरूक्षाक्षरोऽब्रवीत् ।
सुस्निग्धो जनकस्त्यक्तस्तादृक्कल्पद्रुमोपमः ॥ १८३ ॥

१८३ उस प्रकार उसकी बात सुनकर, क्रोधपूर्वक रुख शब्दो मे बोला—'सुस्निग्ध तथा कल्पद्रुमोपम पिता को त्याग दिया—

सदैवादमखानः स बाधितस्तदुपाधिभिः ।
परलोकमनालोच्य स्वार्थं संत्यज्य दूरतः ॥ १८४ ॥

१८४ 'आदम खाँन उसके उपद्रवो स सदैव पीडित रहा, परलोक का विना विचार किय तथा स्वार्थ को दूर त्यागकर—

अस्वस्थः स यथा भ्राता सेवितः सतत मया ।
जानात्येव न को राज्य यथा तस्य मयार्जितम् ॥ १८५ ॥

१८५ 'अस्वस्थ उस भाई की निरन्तर मैंने जैसी सेवा की है, उस प्रकार मैंने उसका राज्य जैसे प्राप्त किया, उसे कौन नही जानता ?

कोऽयं मद्भ्रातृपुत्रोऽद्य वद कैवास्य योग्यता ।
अस्मिन् मत्पैतृके राज्ये योग्यो मदपरस्तु कः ॥ १८६ ॥

१८६. 'बोलो ! आज यह कौन मेरा भ्रातृपुत्र है ? अथवा उसकी क्या योग्यता है ? मेरे इस पैतृक राज्य के लिये मेरे अतिरिक्त दूसरा कौन योग्य है ?

स कनीयानहं ज्येष्ठो वयसा च गुणेन च ।
पृथिव्यां वीरभोग्यायां साम्नः कोऽवसरोऽधुना ॥ १८७ ॥

१८७ 'वह आयु एव गुण से वह छोटा और मैं ज्येष्ठ हूँ किन्तु वीरभोग्या वसुन्धरा में आज साम[1] का कौन अवसर है ?'

पाद-टिप्पणी

१८७ (१) साम सुलह = सन्धि = साम, दाम, दण्ड भेद, शत्रु पर विजय पाने के लिये उपाय चतुष्टय माने गये हैं । मनु केवल दो उपाय साम एव दण्ड मानते हैं (मनु ८ । १००–१०९, याज्ञवल्क्य ' १ ३४५, मत्स्य० २२२ २-३, सभा० ५ २१, ६७, अर्थ० २ १० ७४) । साम उपाय का अभिप्राय है कि शत्रु को प्रसन्न एव सन्तोष देकर मधुर एव आकर्षक प्रिय बातो से मोहित तथा खुश कर अपन पक्ष में मिला अथवा अपने अनुकूल काम निकाल लिया जाय । नीति वाक्यामृत में साम के चार प्रकार बताये है । परन्तु साधारणत साम के पाँच प्रकार माने जाते है । (१) परस्पर अच्छे व्यवहार की चर्चा । (२) पराजितों के गुण एव कम की प्रशसा । (३) पारस्परिक सम्बन्धों की घोषणा । (४) भविष्य क शुभ प्रतिफलों की घोषणा । (५) मैं आपका हूँ आपकी सेवा में प्रस्तुत हूँ ।

इत्याद्यनुचितं यत्तच्चोक्त्वा तं प्रत्यमोचयत् ।
यैः स ग्रथितकन्थोऽभूद् राज्यार्थे कृतभावनैः ।
अप्राप्यैतांस्तथा मत्वा निराशः समपद्यत ॥ १८८ ॥

१८८. इस प्रकार जो अनुचित था, उसे कहकर, उसे मुक्त किया। राज्य प्राप्ति हेतु जिन लोगो ने उसे उत्साहित किया था, उन्हे न पाकर तथा उस परिस्थिति को जानकर (वह) निराश हो गया।

प्रत्यासन्ने नाशे रुद्धजलौघस्य बद्धमूलस्य ।
कुपथात् प्रसरत्यादौ धृतिरिव सेतोर्मतिर्जन्तोः ॥ १८९ ॥

१८९ नाश प्रत्यासन्न होने पर, रुद्ध जल समूह वाले तथा बद्धमूल सेतु के धृति[1] (ठहराव) सदृश प्राणी की बुद्धि प्रारम्भ में कुपथ की ओर चलने लगती है।

युक्तमायुक्तवाक्यं चेदग्रहीष्यन्नयान्वितः ।
तुरगाद्यर्जितं सर्वमदास्यच्चेत् स्वयं गतः ॥ १९० ॥

१९० यदि नीति युक्त होकर, वह आयुक्त की उचित बात मान लेता तथा यदि स्वयं जाकर, तुरग आदि अर्जित सब कुछ ग्रहण कर लेता—

अथवाप्तं तमेकं चेदहनिष्यद्बलोन्नतः ।
कोशं हर्तुमयास्यच्चेत् स्थितं पितृपुरान्तरे ॥ १९१ ॥

१९१. अथवा यदि प्रबल वह एकाकी आये, उसे मार डालता या पितृपुर में स्थित कोश हरण करने के लिये चला जाता—

अथवा बाह्यदेशं चेदगमिष्यत् तदध्वना ।
निवृत्तः क्रमराज्ये चेदाक्रमिष्यच्छनैर्महीम् ॥ १९२ ॥

१९२ अथवा यदि बाह्य देश चला जाता और उसी मार्ग से लौटकर, यदि धीरे से, क्रमराज्य को भूमि पर, आक्रमण कर देता—

पाद-टिप्पणी :

"स" पाठ–बम्बई।

१८८ उक्त श्लोक श्री कण्ठ कौल संस्करण के तृपदीप श्लोक संख्या १८६ का प्रथम तथा द्वितीय पद है। कलकत्ता तथा बम्बई संस्करणों का १८७वाँ श्लोक है।

पाद-टिप्पणी

१९२ (१) बाह्य देश द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ १२४।

(२) क्रमराज्य कमराज या कामराज। द्रष्टव्य टिप्पणी १ १ ४०।

क्रमाप्तमकलस्यास्य किमु नश्येद् विलम्वतः ।
मान्द्यालिशमृत्योक्तया युक्तवाक्याविनिश्चयात् ॥ १९३ ॥

१९३ क्रम से सब कुछ प्राप्त करने का अधिकारी, वह क्यो नष्ट होता, जो कि विलम्ब एव अवोध, मूढ भृत्यो के कथन से युक्त, वाक्य का निश्चय न करने के कारण हुआ।

अनभिज्ञतया तेन वत किं किं न हारितम् ।
नास्मत्कोऽपि चिर भोक्ष्यत्यतितीक्ष्णतया धिया ॥ १९४ ॥

१९४ दु ख है अनभिज्ञता के कारण उसने कौन-कौन-सी हानि नहीं उठायी ? हमारा कोई ऐसा नही है, जो कि तीव्र बुद्धि से चिरकाल राज्य का भोग करेगा।

वरमज्ञे सुते राज्ञो राज्यं दत्त्वास्ति नः सुखम् ।
इत्येकमेवं सबोध्य वलिनं नृपवल्लभम् ॥ १९५ ॥

१९५ 'राजा के अज्ञ पुत्र को राज देकर, हम लोगो का सुखी होना अच्छा है,' इस प्रकार बली एव राज्य-प्रिय (मन्त्री आदि) को सम्बोधित करके—

आयुक्ताक्षदमल्लेकः संमन्त्र्य सचिवैः सह ।
चक्रे संभावनां राज्यनिश्चये राजसूनवे ॥ १९६ ॥

१९६. तथा सचिवो के साथ मन्त्रणा करके, आयुक्त अह्लाद मल्लिक ने राजपुत्र को राज देने की सम्भावना पर विचार किया—

गत्वास्कन्दं प्रदास्यामि बहाममिति दर्पतः ।
अभिमन्युप्रतीहारो निश्चिकायाभिषेणनम् ॥ १९७ ॥

१९७ 'आक्रमण कर, बह्राम का मर्दन कर दूँगा', इस दर्प से अभिमन्यु प्रतिहार[1] अभियान का निश्चय किया।

अथ स्वच्छन्दवार्ता म श्रुत्वा तूर्णं सुतान्वितः ।
बहामखानो वित्राणो निरगान्नगरान्तरात् ॥ १९८ ॥

१९८ इस प्रकार स्वच्छन्द वार्ता को सुनकर, पुत्र सहित बह्राम[1] खान बिना रक्षक के शीघ्र नगर से निकल गया।

पाद टिप्पणी

१९७ (१) अभिमन्यु प्रतिहार द्रष्टव्य १ : १ : १२८, ३ १०३, १२९।

पाद-टिप्पणी

१९८. (१) बहराम खा फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान का चाचा बहराम खाँ घबडा कर, काश्मीर त्याग कर हिन्दुस्तान चला गया (४७७)।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—बहराम खा अपने पुत्र सहित काश्मीर म निकल कर, हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुआ और समस्त सैनिक उससे पृथक हो गये (४४८)।

दृष्ट्वा महार्घमणिमौक्तिकविद्रुमौघान्
रत्नाकरं श्रयति लुब्धमतिः स एकः ।
तत्तन्महाभयकरान् मकरांस्तदीयान्
वीर्येण यः शमयितुं गतभीः समर्थः ॥ १९९ ॥

१९९. बहुमूल्य मणि मौक्तिक एवं विद्रुम समूहों को देखकर, लुब्ध मति वह एक व्यक्ति रत्नाकर का आश्रय लेता है, जो कि निर्भय होकर, पराक्रम से उसके महाभयकारी मकरों को शान्त करने में सफल होता है।

श्रुत्वा स्वभ्रातृपुत्रस्य चरितं चित्रमत्र सः ।
वित्रासितबलः पुत्रयुतो द्वाराध्वनाचलत् ॥ २०० ॥

२०० अपने भ्रातृ-पुत्र के विचित्र चरित्र को सुनकर, जिसकी सेना त्रस्त हो गयी थी, वह पुत्र सहित, द्वार[1] मार्ग से चला गया।

यथैवादमखानस्य निष्कासनमयं व्यधात् ।
तथैवास्याभवद् रात्रौ न चिरेण फलत्यघः ॥ २०१ ॥

२०१ इसने जिस प्रकार रात्रि में आदम खाँन का निष्कासन[1] किया था, उसी प्रकार इसका भी हुआ। पाप का फल शीघ्र ही मिल जाता है।

हैदरशाह की मृत्यु

राज्यं स दशमासाब्दं कृत्वा मासि च माधवे ।
वर्षेऽष्टचत्वारिंशेऽगाद् दिवं श्रीपञ्चमीदिने ॥ २०२ ॥

२०२ वह (हैदरशाह) एक वर्ष १० मास राज्य करके ४८वें वर्ष[1] वैशाख मास की श्री पंचमी[2] के दिन दिवंगत हुआ।

पाद-टिप्पणी

'द्वारा' पाठ—बम्बई।

२०० (१) द्वार दर्रा = पास = संकट।

पाद-टिप्पणी

२०१ (१) निष्कासन श्रीवर ने आदम खाँन के रात्रि में निष्कासन का उल्लेख किया है (१ ७ १९७)।

पाद-टिप्पणी

२०२ (१) वर्ष सप्तर्षि ४५४८ = सन् १४७२ ई० = विक्रमी १५२९ = शक १३९४ = कलिगताब्द ४५७३ वर्ष।

मोहिबुल हसन मृत्यु काल १३ अप्रैल सन १४७२ ई० राज्य काल १ वर्ष १० मास और पीर हसन राज्य काल १ वर्ष २ मास देता है।

तवारीखे असवार के अनुसार सुलतान की मृत्यु अप्रैल १३ सन् १४७२ ई० में हुई थी।

(२) श्रीपंचमी वसन्त पंचमी = माघ शुक्ल पंचमी को श्रीपंचमी कहते हैं। यह दिन बहुत शुभ माना जाता है। नवीन कार्य आरम्भ करने के लिये मंगलकारी है।

वेतालोऽवसदुद्दण्डस्तम्भमण्डितमण्डपे ।
तेनैवोच्चण्डकोपेन खण्डितःक्रियया नृपः ॥ २०३ ॥

२०३ इस प्रकार कुछ लोग कहते हैं—'उन्नत स्तम्भवाले मण्डप में वैताल' रहता था, उग्र क्रोध करके, उसी ने अपनी कृया से राजा को खण्डित किया।'

इत्यूचुः केऽपि केऽप्यूचुर्योगिनोऽशस्तहस्ततः ।
न्यस्तोत्कटौषधैर्ध्वस्तरुचिरस्तमगान्नृपः ॥ २०४ ॥

२०४ और कुछ लोग कहते हैं—'योगी के यश रहित हाथ से रखे गये, कटु औषधियों से राजा की कान्ति समाप्त हो गयी और वह मर गया।'

केचिद् भ्रात्रैव दुष्टेन कैवल्यात् सुतवर्जिते ।
भूपतेर्दुश्चिकित्सार्थं कारिता भिषजस्त्वराम् ॥ २०५ ॥

२०५ कुछ लोग कहते हैं—'दुष्ट भ्राता ने ही पुत्र के न रहने पर, एकान्त होने के कारण, राजा की बुरी चिकित्सा करने के लिये, वैद्यों से शीघ्रता करायी।

दिव्य मौसुलवेदेन कृत्वाश्वस्ततया तया ।
बहिः श्यौटालदेशादौ हत्वा द्रोहेण पार्थिवान् ॥ २०६ ॥

२०६ 'बाहर के श्यौटाल'देशादि में मौसल वेद (कुरान) के सपथ द्वारा अस्वस्थ कर भी द्रोह से राजाओं को मार कर तथा—

येभ्यश्च राज्यतिलकं सिंहासनगतोऽग्रहीत् ।
पित्र्यांस्तान् सचिवान् हत्वा प्रमीत इति केचन ॥ २०७ ॥

२०७ 'सिंहासना रूढ होने पर, जिन लागो स राज्यतिलक प्राप्त किया, पित्ता के उन सचिवो को मार कर, मर गया।'—ऐसा कुछ लोग कहते हैं।

पादटिप्पणी

२०३ (१) वैताल पिशाचो का एक वग है। रुद्र गणों में वैताल सम्मिलित है। रणभूमि में उपस्थित रहते हैं। वहाँ मानव का रक्तपान एव मास भक्षण करते है (भा० २ १० ३९)। प्रेत का एक प्रकार भी वैताल कहा जाता है, जो शव पर अधिकार कर लेता है। भूत तो वश में हो सकता है परन्तु वैताल वश में नहीं किया जा सकता।

पाद-टिप्पणी

२०५ (१) बहराम खा यह कहानी की बहराम खाँ ने भाई सुल्तान को वन्दी बना लिया तथा उसे विष दिलवा दिया था, गलत है।

पाद-टिप्पणी

२०६ 'श्यौटाल' पाठ—बम्बई।

(१) श्यौटाल सम्भव है, श्यालकोट अथवा शाक्ल के लिए यह शब्द प्रयोग किया गया है। इसके विषय में निश्चयपूवक कुछ लिखना कठिन है। श्रीदत्त ने श्यौटाल को स्थान वाचक शब्द माना है।

पाद-टिप्पणी

२०७ 'हत्वा' पाठ—बम्बई।

नूनं स पितृशापेन तत्तत्पापेन दूषितः ।
हिमौघ इव तापेन विलयं प्रापदञ्जसा ॥ २०८ ॥

२०८ निश्चय ही पितृ शाप एवं तत् तत् पाप से दूषित, वह जल्दी में ही ताप से हिम-पुञ्ज के समान विलय को प्राप्त हुआ।

हैदर की अन्त्येष्टि

निष्कण्टकं पुरं ज्ञात्वा निःशङ्को नृपनन्दनः ।
जनकं शिविकारूढं स निनाय शवाजिरम् ॥ २०९ ॥

२०९ नगर को निष्कण्टक जानकर, निःशंक वह राजपुत्र शिविकारूढ पिता को शवाजिर में ले गया।

मञ्जूषिकान्तरान्नीत्वा स पटैकावृतं शवम् ।
पितुः पादतले तत्र भूगर्भेऽभ्यन्तरेऽक्षिपत् ॥ २१० ॥

२१० एक वस्त्र[1] से आच्छादित, उस शव को मंजूषिका से निकाल कर, वहाँ (उसके) पिता[2] के चरण के समीप भूगर्भ[3] (कब्र) में डाल दिया।

सर्वे मृन्मुष्टिकामात्रमेतदेवेति शंसिनः ।
मुखावलोकनं कृत्वा तस्मिन् मृन्मुष्टिका जहुः ॥ २११ ॥

२११ सब लोगों ने उसे मिट्टी मात्र जानकर, उसका मुखावलोकन[1] किया और उस पर मुट्ठी भर मिट्टी[2] डाली।

गर्तं तत्र समापूर्य शिलां मध्योन्नतां न्यधुः ।
कठिनोऽयमभूद् युद्धे जनानित्येव सूचितुम् ॥ २१२ ॥

२१२ वहाँ गर्त (कब्र) को भर कर, एक मध्योन्नत शिला स्थापित कर दिये। लोगों को यह सूचित करने के लिये कि युद्ध में यह कठोर था।

पादटिप्पणी

२०९ (१) शिविका : द्रष्टव्य टिप्पणियाँ १ : ५ : ६०, १ : ७ : २२६।

पाद टिप्पणी

२१० (१) एक वस्त्र : श्रीवर ने जैनुल आबदीन के प्रसंग में भी वर्णन किया है कि एक वस्त्र से परिवेष्ठित कर, पिता के समीप भूगर्भ में डाल दिया (१ : ७ : २३१)। एक वस्त्र अर्थात् केवल कफन मात्र में लपेट कर, उस कब्र में रखा गया था। उस पर अन्य कोई वस्त्रादि नहीं रखे थे।

(२) पिता : पिता के पास उसे मिट्टी दी गयी (तवाकतुल अखबार : पाण्डु० ४९ बी०)।

(३) भूगर्त : जैनुल आबदीन के प्रसंग में श्रीवर ने भूगर्भ शब्द का प्रयोग किया है। यहाँ वह गर्त का प्रयोग करता है। दोनों को कब्र के अर्थ में लिखा है।

पाद टिप्पणी

२११ (१) मुखावलोकन : द्रष्टव्य टिप्पणी : १ : ७ : २३४।

(२) मिट्टी : द्रष्टव्य टिप्पणी : १ : ७ : २३४।

पाद टिप्पणी

२१२ 'सूचितुम्' पाठ—बम्बई।

अरुदन् सेवकास्तस्य कृतवक्षोविदारणाः ।
स्मृत्वा स्वामिप्रसादानां मुखरीकृतदिङ्मुखाः ॥ २१३ ॥

२१३ उसके सेवक स्वामी के अनुग्रहों का स्मरण करके, वक्षस्थल पीटकर, रुदन कर रहे थे, जिससे दिशायें मुखरित हो रही थी।

तद्राज्यं स्वल्पकालीनः प्रसादसुभगोर्जितम् ।
अविन्दन् सेवकास्तस्य स्वप्नस्वर्गाप्तिसन्निभम् ॥ २१४ ॥

२१४ उसके सेवक स्वल्पकालीन उसके राज्य को, जो प्रसन्नता एवं सौभाग्य से पूर्ण था, स्वप्न मे स्वर्ग प्राप्ति के समान माना।

हैदरशाह कवि, गीतकार एवं दार्शनिक

पारिसीभाषया हिन्दुस्थानवाचा च भूपतिः ।
काव्यं गीतं व्यधाद् येन प्रशंसन्ति न के जनाः ॥ २१५ ॥

२१५ राजा ने पारिसी[1] एवं हिन्दुस्थानी[2] भाषा मे गीत-काव्य[3] की रचना की थी, जिससे कौन लोग उसकी प्रशंसा नही कर रहे थे ?

पुराणधर्मशास्त्राणि मोक्षोपायादिसंहिताः ।
शृण्वतो भूपतेरासीद् यामिनीषु प्रजागरः ॥ २१६ ॥

२१६ पुराण[1], धर्मशास्त्रों[2] को तथा मोक्षोपाय[3] आदि संहिताओं को सुनते हुये, राजा रातों में जागता रहता था।

पाद-टिप्पणी

२१५ (१) पारसी फारसी । द्र० २ १३३ ।

(२) हिन्दुस्तान-वाचा हिन्दी ।

(३) काव्य-गीत पुस्तक अप्राप्य है। इस श्लोक से प्रकट होता है कि सुल्तान कवि था। वह संस्कृत, फारसी, हिन्दी तथा काश्मीरी भाषा जानता था। फारसी और हिन्दी में गीत-काव्य लिखने का अर्थ यही होता है कि उसे दोनों ही भाषा पर अधिकार था।

पाद-टिप्पणी

२१६ (१) पुराण = नीलमतपुराण। प्रायः काश्मीर इतिहासकारों ने नीलमतपुराण के अर्थ में ही पुराण शब्द का प्रयोग किया है, यद्यपि पुराण में प्रचलित सभी पुराणों का समावेश हो जाता है।

(२) धर्मशास्त्र धर्मशास्त्र में हिन्दू तथा मुसलिम दोनों धार्मिक ग्रन्थों का समावेश मानना चाहिए।

(३) मोक्षोपाय आध्यात्मिक ग्रन्थ, जिनमें मुक्ति या मोक्ष का वर्णन होता है—योगवाशिष्ठ, रामायण (द्र० . १ . ७ : १३१, १३९)।

दोषाकुलाः परगृहाशुभपाकदा ये
घूकादयो दिनपतेरुदयं द्विषन्ति ।
तस्मिन् समुद्यति महारुचिरप्रकाशे-
निष्टा भ्रमन्ति विपिनेषु गुहाप्तदुःखाः ॥ २१७ ॥

२१७ रात्रि के लिये आकुल, दूसरे के गृहो के लिये अशुभ परिणाम देनेवाले, उल्लू आदि सूर्य के उदय से द्वेष करते हैं। अति रुचिर प्रकाशशाली, उस (सूर्य) के उदित होने पर, अनिष्टकारी (वे) गुफाओ म दुःख प्राप्त कर विपिनो मे घूमते हैं।[1]

दुष्टान् मेरेप्तकारादीन् ज्ञात्वानिष्टान् विशिष्टधीः।
खानोऽन्येद्यु: सदुःखोऽपि कारागारान्तरे न्यधात् ॥ २१८ ॥

२१८. विशिष्ट बुद्धिशाली खान[1] दुखित होने पर भी, दूसरे दिन मेरेप्तकार[2] आदि को अनिष्टकारी जानकर, कारागार[3] मे कर दिया।

निर्वर्त्यान्त्यक्रियां सर्वां स पितुर्व्ययशालिनीम् ।
राज्याभिषेकसभारं चक्रे षोडशभिर्दिनैः ॥ २१९ ॥

२१९. उसने प्रचुर व्ययपूर्वक पिता की अन्तिम क्रिया सम्पन्न कर, सोलह[1] दिनो मे राज्याभिषेक का सामान सग्रहीत किया।

घूकादयो नभसि सन्ति पराप्रशस्ता-
स्तावत् प्रदोपसमयाप्तसुखप्रचाराः ।
आशाप्रकाशविपदो विलसत्प्रकाशो
भास्वान्न यावदुदयं कुरुते सुचण्डः ॥ २२० ॥

२२० रात्रि के समय सुखपूर्वक विचरण करनेवाले अप्रशस्त उलूक आदि पक्षि आकाश मे तब तक रहते हैं, जब तक प्रकाश से दिशाओ को स्वच्छ करनेवाला सुन्दर प्रकाशयुक्त प्रचण्ड सूर्य उदित नही होता।

पाद-टिप्पणी

२१७ (१) म्युनिख (पाण्डुलिपि ७७ बी०) में उल्लेख मिलता है कि सुल्तान यद्यपि बडा उदार, दानी तथा दरबारियों को जागीर देने में रुचि रखता था किन्तु वह क्षमाशील स्वभाव का व्यक्ति नही था। वह कठोर दण्ड सामान्य अपराधों के लिए देता था।

पाद टिप्पणी.

२१८. (१) खान हसन शाह

(२) मेरेप्तकार : मीर इफ्तकार।

(३) कारागार फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान ने अपने सब विरोधियों को कैद कर दिया (४७७)।

पाद-टिप्पणी

२१९ (१) सोलह दिन मुसलमान धर्म के अनुसार सोलह दिन तक शोक का काल नही माना जाता। मान्यता केवल तीन दिन की है। लोकाचार के अनुसार काल में भिन्नता हो जाती है।

पाद-टिप्पणी

२२०. "प्रचारा." पाठ—बम्बई।

इति जैनराजतरङ्गिण्यां पण्डितश्रीवरविरचिताया हैदरशाहराज्यवृत्तान्तवर्णन नाम द्वितीयस्तरङ्ग: ।

पण्डित श्रीवर विरचित जैनराजतरंगिणी मे हाजी हैदरशाह के राज्य-वृतान्त वर्णन नामक द्वितीय तरग समाप्त हुआ ।

कलकत्ता तथा बम्बई दोनो सस्करणों में श्लोक सख्या २२० है। श्रीकण्ठ कौल सस्करण में सख्या २१९ है। उसमें श्लोक सख्या १२९ तथा १३० तीन पदों के श्लोक हैं। बम्बई एव कलकत्ता में वे दो पदो के हैं। अतएव एक पद बढ़ जाने से २१९ के स्थान पर सख्या २२० हो गयी है।

रघुनाथ सिंह, पुत्र स्वर्गीय वटुकनाथ सिंह, जन्मस्थान पचकोशी अन्तर्गत वरुणातीर, स्थित ग्राम खेवली, रामेश्वर स्थान समीप तथा निवासी मुहल्ला धीहट्टा (औरगाबाद) वाराणसी नगर, उत्तर प्रदेश, भारतवर्ष ने श्रीवर कृत जैनराजतरगिणी के द्वितीय तरग का भाष्य एव अनुवाद लिखकर समाप्त किया। सन् १९७६ ई० = स० २०३३ विक्रमी = शक० १८९८ = कलि-गताब्द ५०७७ = लौकिक या सप्तर्षि सवत् ५०५२ = हिजरी सन् १३९६-१३९७ = फसली सवत् १३८३-१३८४ = बग सवत १३८२-१३८४।



लेखक की रचनाएँ

राजतरंगिणी :

कल्हण : प्रथम खण्ड (द्वितीय संस्करण)
द्वितीय खण्ड
तृतीय खण्ड
चतुर्थ खण्ड (यन्त्रस्थ)

जोनराज राजतरंगिणी
शुक राजतरंगिणी
अज्ञात राजतरंगिणीसंग्रह
श्रीवर : जैन राजतरंगिणी (प्रथम भाग)
श्रीवर जैन राजतरंगिणी (द्वितीय भाग)
लेखक कृत राजतरंगिणी (पंचम संस्कृत) परिकल्पित

काश्मीर कीर्ति कलश
काश्मीर कीर्ति शिखर
काश्मीर कीर्ति शेष (यन्त्रस्थ)

राजनीति :

(१) धर्मनिरपेक्ष राज्य
(२) आधुनिक राजनीति का क ख ग (अप्राप्य)
(३) जागृत नेपाल
(४) जवाहरलाल नेहरू का महाप्रस्थान

धर्म :

(१) ऋग्वेद कथा (अप्राप्य)
(२) बुद्ध कथा (अप्राप्य)
(३) रामायण कथा (अप्राप्य)
(४) योगवाशिष्ठ कथा
(५) विश्व के धर्म प्रवर्तक
(६) सर्वधर्म समभाव (अप्राप्य)

पर्यटन :

(१) आर्याना
(२) आस्ट्रेलिया
(३) दक्षिण पूर्व एशिया

कहानी :

(१) भिखारिणी (अप्राप्य)

उपन्यास :

(१) इन्द्रजाल (द्वितीय संस्करण)
(२) संस्कार (,, ,,)
(३) मैं (अप्राप्य)
(४) कहाँ ,,
(५) एक कोना ,,
(६) चोरा ,,
(७) लावारिस ,,

अंग्रेजी :

टुवर्डस फ्रीडम (अप्राप्य)
कनसिडर (,,)

यन्त्रस्थ :

(१) वर्ल्ड क्रोनोलोजी, एनशिएण्ट
(२) वर्ल्ड क्रोनोलोजी, क्लासिकल एव डार्क एज
(३) वर्ल्ड क्रोनोलोजी, मिडीवल
(४) वर्ल्ड क्रोनोलोजी, माडर्न